Wm.
B83-RAS.
14/1

श्रीः ।

रसरत्नाकरः ।

सिद्धनित्यनाथप्रणीतः ।

समस्त रसग्रन्थानांशिरोभूषणम् ।

माथुरवैश्यवंशीयायुर्वेदोद्धारक शालिग्राम कृतःभाषाटीकाविभूषितःसंशोधितश्च ।

खेमराज श्रीकृष्णदास इत्यनेन

मुम्बय्यां

स्वकीये "श्रीवेङ्कटेश्वर" मुद्रणालये

मुद्रयित्वा प्रकाशितः ।

ज्येष्ठ संवत् १९५४, शके १८१९.

श्रीः ।

भूमिका ।

प्रिय मित्रवर ! यह तो आपको भली भाँति विदित होगा ? कि यह संसार अनेक प्रकारकी विद्याओंका पूर्ण भाण्डागार है, परन्तु आयुर्वेद विद्या ईश्वर ने महा अद्भुत और तत्काल चमत्कार दिखानेवाली बनाई है, ऐसा कौन अज्ञानी मूर्ख होगा जिसको इस विद्यासे काम न पड़ता होगा, विचार करके देखा जाय तो कैसाही ज्ञानी ध्यानी, राजा महाराजा, योगी वियोगी क्योंनहो, परन्तु इससंसारमें रहकर दोचार वार प्रत्येक पुरुषको इस वैद्यक विद्याके जाननेवाले वैद्योंसे अवश्यही काम पड़ता है, क्योंकि यह शरीर आतङ्क भवन है, और इसकी मूल पृथ्वी, पावक, पुष्कर, पानी और पवन है, इनहीं पाँचो तत्त्वों से यह देह रचा गयाहै, उन तत्त्वों को वैद्य लोग भली भाँति जानते हैं, ऐसे वैद्योंका सदैव तन मन धन से आदर सत्कार करना चाहिये, क्योंकि वही इस देहके उपकार कर्त्ता और कष्टहर्त्ता हैं, जिनकी कृपादृष्टिसे यह शरीर सदा स्वस्थ रहता है, फिर उनकी समान प्राणदान देने वाला और कौन है ? इस कारण आयुर्वेद विद्या सर्वोत्तम है ॥

इस विद्याके अनन्त भेद हैं, परन्तु इसमें चार प्रधान हैं, कोष, निदान, निघण्टु और चिकित्सा, उस चिकित्सामें भी चार प्रकारके भेद हैं, दैवी, आसुरी, मानुषी, और सिद्धि ॥

रसेनकथितोवैद्यो, मानुषोमूलकादिभिः ॥
अधमःशस्त्रदाहाभ्यां, सिद्धवैद्यस्तुमान्त्रिकः ॥ १ ॥

अर्थ-रसोंके आश्रय से जो वैद्य लोग चिकित्सा करते हैं, वह देव वैद्य हैं। जो काष्ठादिक औषधियों से उपाय करते हैं, वह मानुष्य चिकित्सक हैं । जो शस्त्र से अथवा दाहसे प्रयत्न करते हैं, वह अधम भिषक् हैं । और जो यंत्र मंत्र से उपचार करते हैं, वह सिद्ध अगदंकार कहलाते हैं । इन सब प्रमाणों से यह रसायनविद्या (रस बनाने की विधि) सर्वोत्तम और तत्काल फल देने वाली है, इसी लिये इसका नाम दैवी चिकित्सा रक्खा है ॥

रसविद्यापराविद्या, त्रिलोक्येऽपिचदुर्लभा ॥
भुक्तिमुक्तिकरीयस्मात्, तस्मात्ज्ञेयागुणान्वितैः १ ॥

अर्थ-रस विद्या अत्यन्त श्रेष्ठ है, और तीनों लोकमें दुर्लभ है, तथा भुक्ति (भोग) और मुक्ति (मोक्ष) पदार्थ की देने वालीहै, इस कारण इस सर्व गुण युक्त रसविद्या को अवश्य सीखना चाहिये । क्योंकि आयुर्वेदमें रसायन विद्याही मुख्यहै ॥

साध्येषुभेषजंसर्वं, मीरितंतत्त्ववेदिना ॥
असाध्येष्वपिदात्तव्यो, रसोऽतःश्रेष्ठमुच्यते ॥ १ ॥

अर्थ-तत्त्वके जानने वाले वैद्यों ने साध्य रोगों के लिये अनेक औषधि कही है, असाध्य रोगोंके लिये एक औषधि भी नहीं कही, वहां यही कहा (औषधंजाह्नवी तोयंवैद्योनारायणोहरिः) परन्तु रस उन असाध्य रोगों में भी तत्काल फल देता है, इसकारण रस सम्पूर्ण औषधियों से उत्तम है, क्योंकि यह रसायन विद्या शिवजीने बड़े उत्साहसे निर्माण कीहै ॥

कोई वैद्यवर प्रश्न करै कि रसायन विद्या शिव प्रणीत कैसे है ? सो उसका वृत्तान्त लिखते हैं ॥

महोदय ! जब ब्रह्मा ने सृष्टि रची और चार वेद अपने हृदय कमल से प्रगट किये, तो विचार किया कि इस संसारमें मनुष्य अनेक प्रकारके रोगों से महा दुःखी होंगे, उनका हाहाकार शब्द मुझसे न सुना जायगा यह समझकर ब्रह्माजीने चारों वेदोंको मथकर आयुर्वेदोत्पन्न किया, उस आयुर्वेद को जगत् हितकारी सर्व रुजहारी जान, महा विद्वान् सकल गुण निधान दक्ष प्रजापति को अष्टांग सहित आयुर्वेद पढ़ाया, इसके उपरान्त दक्ष प्रजापति ने सूर्य्य के अंश, परम चतुर, देवताओं में श्रेष्ठ अश्विनीकुमारों को परमोदार समझकर आयुर्वेद का उपदेश किया, उन अश्विनीकुमारों ने सम्पूर्ण वैद्यों को विद्वान् बनानेके लिये अपनी रची हुई अश्विनीकुमार संहिता का सब संसार में प्रचार किया ॥

जब अश्विनीकुमार की संसार में अधिक प्रतिष्ठा हुई और सब देवता विचार करने लगे, तब अश्विनीकुमारकी यह अद्भुत दशा देख, वीरभद्रके चित्तमें अत्यन्त उत्साह उत्पन्न हुआ कि किसी प्रकार आयुर्वेद पढ़ना चाहिये, जो संसार में मेरी भी प्रतिष्ठा और सत्कार इसी प्रकार हो, यह विचार शिवजीसे आज्ञा ले, वीरभद्र ब्रह्मा जीके समीप गये, दण्डवत् प्रणाम करके बोले कि हे प्रजापते ! मेरी इच्छा आयुर्वेद के पठनकी है, अनुग्रह करके मुझको आयुर्वेदका उपदेश कीजिये, क्योंकि आजकल पृथ्वी पर प्राणियों को महाभयंकर रोगों ने ग्रस रक्खा है, उनके दूर करनेका कोई उत्तम उपाय बताइये ? ब्रह्मा ने कहा कि हे गणोत्तम ! यह आयुर्वेद विद्या सौम्य पुरुषोंके पढ़नेके लिये है, और आप चञ्चल बुद्धि हैं, आपसे इस विद्याका साधन न होगा, यह बिद्या स्थिर बुद्धिवाले को पढ़ानी चाहिये, दूसरे यह विद्या मैं दक्ष को संकल्प कर चुका हूँ, इस लिये यह विद्या मैं तुमको नहीं पढ़ा सक्ता, ब्रह्माके रुक्ष वचन सुन वीरभद्र के चित्तमें अत्यन्त क्रोध बढ़ा, शरीर से अग्निकी लपटें निकलने

लगीं, नेत्र लाल लाल होगये, तब महा कुपित होकर बोला कि अरे चतुरानन ! यह अच्छा नहीं किया जो मेरा निरादर किया, इस निरादरताका फल तत्काल ले, यह कह उसी समय ब्रह्माका शिर त्रिशूल से छेदन किया, फिर दक्षकी सभामें जा दक्ष और जितने दक्षके अध्यक्ष थे सबको विध्वंस कर अपना क्रोध शान्त किया, अश्विनीकुमारों ने यह समाचार सुन तुरन्त जाकर ब्रह्माका शिर जोड़ दिया, और दक्षकी सभामें जाकर दक्ष सहित सबको अच्छा किया, अश्विनीकुमारका यह अद्भुत कौतुक देख सब देवता चकित रह गये, वीरभद्र भी अत्यन्त लज्जित हो शिवके समीप आया और सब वृत्तान्त आद्योपान्त कह सुनाया फिर हाथ जोड़कर बोला कि हे नाथ ! आप आयुर्वेद का कोई ऐसा अपूर्व ग्रन्थ बनावो जो सर्वोत्तम और तत्काल फल दायक हो ॥

भूतानुकम्पाप्रवणोमहेशःश्मशानवासी जगदादिनाथः।
स्ववीर्य्ययुक्ता गदयोगरत्नैःकीर्णानितंत्राणि बहूनिचक्रे ॥

अर्थ-सम्पूर्ण सृष्टिके आदिदेव, पितृवन विहारी, परम दयालु भूतेश्वर शिवजीने स्वप्रकाशित अनेकतंत्र और पारदादिकरसग्रन्थ रोगोंके समूहोंको दूर करनेके लिये निर्माण किये ॥

रसग्रन्थेषु तंत्रेषु धातुशोधनमारणे।
विवृत्तेच विशेषेण, रसराजस्य संस्कृतिः ॥ १ ॥

अर्थ-उन रसग्रन्थों में और तंत्र ग्रन्थोंमें धातुओंका जारण मारण और विशेष करके पारेके संस्कारकी अनेकविधि कही और वह ग्रन्थ वीरभद्रको पढ़ाये। जोजो ग्रन्थ शिवजीने निर्माण कियेहैं उन ग्रन्थोंके नाम लिखतेहैं ॥

रसमंगल-महादेव कृत,	महारसायन विधि-महादेव कृत,
रसेन्द्रसंहिता-महादेव कृत	रुद्रतंत्र-महादेव कृत
रसार्णव-महादेव कृत	

जब इन ग्रन्थोंको वीरभद्रने पढ़ा तो अनेक प्रकारके रस बनाये कि जिनसे संसारके लोगोंका दुःख दूरहो, उनमेंसे कुछ कुछ रसोंके नाम भी लिखते हैं ॥

अमृतार्णव, ऐश्वर्य्यभास्कर, अमृतेश्वर, कामेश्वर, ताँवेश्वर, पञ्चानन, नीलकण्ठ, वज्रेश्वर, प्रचण्डभैरव, भूतभैरव, त्रिनेत्र, नागेश्वर, वङ्गेश्वर, मृत्युञ्जय, उदयभास्कर, चन्द्रोदय, प्राणेश्वर, चन्द्रामृत, अग्निकुमार, वसन्तकुसुमाकर, राजमृगाङ्क, महामृगाङ्क, कालान्तक, लोकेश्वर, कामधेनुरस, मकरध्वज, सर्वाङ्गसुन्दर, महालक्ष्मीविलास, विजयभैरवरस, भूतांकुश, सोमेश्वर, नाराचरस, उड्डाम्बररस, भस्मसूत्र, सूर्य्यावर्त्त, चिन्तामणि, गुञ्जाभद्ररस, हरिशंकररस, पञ्चवक्ररस, पाषाणभेदरस, सूर्य्योदय, सर्वतोभद्रादिकरसोंका संसारमें प्रचार हुआ और काष्ठादिक औषधियोंकी अपेक्षा रसोंको तत्काल फलदायक समझा, तोलमेंभी रसको सौगुणाकमदेखा, सहस्रोंमनुष्यों को कालके गालसे निकाललिया, और उनकी यथायोग्य प्रतिपालकी तब तो रसका

आश्चर्यमय प्रभाव देख सब वैद्य इसीको बर्तावमें लाने लगे, और कालभी घबराया कि यह क्या माया है भेद नहीं पाया जाता ? जहां मैं अपना जाल डालताहूं वहां यह चाण्डाल मेरी दाल नहीं गलनेदेता, इसका गुण रामबाणकी समान है, बाल वृद्ध सब इससे प्रसन्न हैं, क्योंकि सहत अथवा पानके रसमें दोचार चावल घोल घालकर देतेही शरीरसे बालबालका रोग निकाललेता है, जब इसप्रकार रसका प्रचार संसारमें फैला तो बड़े बड़े वैद्योंनेभी रसके ग्रन्थोंका निर्माण करना आरम्भ किया, उन ग्रन्थोंका और उनके रचयिता वैद्योंका नाम नीचे लिखते हैं ॥

तंत्रराज–जावलकृत	ताम्रवन–मुण्डीकृत
दत्तात्रेय संहिता–दत्तात्रेयकृत	दत्तात्रेयतंत्र–दत्तात्रेयकृत
दिव्यरसेन्द्रसार–धनपतिकृत	नागार्जुनतंत्र–नागार्जुनकृत
बालतंत्र–कल्याण भट्टकृत	कुमारतंत्र–लङ्केशकृत
योगमाला–योगसिद्धकृत	रसकङ्काली–कङ्कालीकृत
रसकल्पलता–काशीरामकृत	रसकौमुदी–माधवकरकृत
रसचन्द्रिका–नीलाम्बर पुरोहितकृत	रसप्रकाश सुधाकर–यशोधरकृत
रसेन्द्रचिन्तामणि–रामचन्द्रकृत	रसेन्द्रचूडामणि–सोमदेवकृत
रसाधिकार–हरिहरकृत	रसभैषज्यावलि–सूर्यकविकृत
रसदीपिका–आनन्दअनुभवकृत	रसरत्नावलि–कविचन्द्राजकृत
रसमञ्जरी–सिद्धकालीनाथकृत	रसदीप–सिद्धप्राणनाथकृत
रसदर्प्पण–त्रिमल्लभट्टकृत	रसगोविन्द–गोविन्दकृत
रसयोगमुक्तावली–नरहरिभट्टकृत	रसविश्वदर्प्पण–हरिहरकृत
रसरत्न–श्रीनाथकृत	रसरत्नाकर–चक्रपाणिकृत
रसरत्नमाला–सिद्धनित्य नाथकृत	रसरत्नाकर–सिद्धनित्य नाथकृत
रसरत्नाकर–सिद्धदेवाचार्य्यकृत	रसरत्नाकर–चक्रपाणिकृत
रसरत्नावलि–गुरुदत्त सिद्धकृत	रसरत्नसमुच्चय–शंकरजीकृत
रसराजलक्ष्मी–रामेश्वर भट्टकृत	रसानन्दकौतुक– नरवाहनकृत
रससंग्रह–सिद्धान्ताच्युतकृत	रससार–गोविन्दाचार्य्यकृत
रससारसंग्रह–पण्डित गंगाधरकृत	रससारतिलक–रसेन्द्रतिलक योगीकृत
रसराजसुधानिधि–ब्रजराजशुक्ल कृत	रसहृदय–गोविन्दा चार्य्यकृत
रसहेमनूकपाली–हेमनूकपालीकृत	रसामृत–जयदेवकृत
रसामृत–कयदेवकृत	रसेन्द्रकल्पद्रुम–राजकृष्णभट्ट कृत
रसेन्द्रसारसंग्रह–गोपालभट्ट कृत	रसराजमार्त्तण्ड–भोजराजकृत
रसराजमृगाङ्क–भोजदेवकृत	सिद्धतंत्र–केशवदेवकृत
योगरत्नाकर–केशवदेवकृत	योगमाला–योगसिद्धकृत
भिषक्चित्तोत्सव–हंसराजकृत	योगासन–वररुचिकृत
नवरत्नधातुविवाह–बलभद्रकृत	योगामृत–गोपालदासकृत

कामरत्नतंत्र-सिद्धनित्यनाथ कृत	कामरत्नतंत्र-श्रीनाथभट्ट कृत
नागार्जुनीय-सिद्धनागार्जुनकृत	योगसुधानिधि-वन्दी मिश्रकृत
पञ्चसायक-कविशेखर ज्योतिरीश्वरकृत	रसकषायवैद्यक-वैद्यराजकृत
रसराजशिरोमणि-परशुरामकृत	रसराजशिरोमणि-रेवणकृत
रससङ्केतकलिका-चामुण्डकृत	रसविद्यारत्न-शिवनन्दन गोस्वामीकृत
कौतुकचिन्तामणि-प्रतापरुद्रदेव कृत	गोरक्षसंहिता-गोरक्षनाथकृत
रसेन्द्रशूरप्रभाव-शूरसेनकृत	आयुर्वेदरसशास्त्र-माधवकृत
आयुर्वेदरसायन-भोजराजकृत	आयुर्वेदसर्वस्व-भोजराजकृत
सन्निपातकलिका-शम्भुनाथकृत	रसराजशंकर-शंकरजीकृत
क्षेमकौतूहल-क्षेमराजकृत	चिकित्सामृत-गणेशजीकृत
सन्निपातकलिका-रुद्रनाथकृत	रसचन्द्रोदय-चन्द्रसेनकृत
महारसाङ्कुश-रसाङ्कुशकृत	रसराजमहोदधि-कपालीकृत
रससारामृत-रामसेनकृत	रससर्वेश्वर-वासुदेवकृत
रसवारिधि-माण्डवकृत	रसेन्द्रभैरव-भैरवकृत
मण्डूकब्राह्मी कल्प-ब्रह्माचार्य्यकृत	मन्थानभैरव-भैरवकृत
काकचण्डेश्वरीतंत्र-काकचण्डेश्वरकृत	रसेन्द्रभास्कर-सिद्धभास्करकृत
रसेन्द्रचिन्तामणि-ढुंढनाथकृत	रसेन्द्रभाण्डागार-रसेन्द्रकृत
रससंजीविनी-हरीश्वरकृत	

जब ऐसे ऐसे उत्तम ग्रन्थ बड़े बड़े विद्वान् कवियोंने निर्माणकिये तब सब जगत्में रसका प्रचार फैल गया और वैद्यलोग रसों को मुख्य समझकर रसोंहीं से सब काम लेने लगे, सब रोगियों की और वैद्योंकी जिह्वा पर रसहीरस बस गया, यह चर्चा सहस्रों वर्ष तक रहा, जब दैवयोग से इस भारतवर्षके बुरे दिन आये, यवनों ने हिन्दोस्थान पैर चढ़ाई की, उस समय पृथ्वीराज का राज्य था। कई बार तो पृथ्वीराजसे हार मान भाग भाग गये, निदान एकबार धोखा देकर पृथ्वीराज को पकड़लिया और उसकी आँखोंमें विषकी सलाई फिरवाकर उसको अन्धा करदिया, जब पृथ्वीराजकी पराजय हुई और हिन्दोस्थान पर मुसलमानों का डंका बजा, तो हमारी परम प्रिय, सिद्ध प्रयोजनीय आयुर्वेदीय चिकित्साओंकी और रसों की जैसी उन्नति हुई थी वैसेही अवनति हुई, जिन ग्रन्थों को पण्डितों ने एक एक अक्षर करके बड़े परिश्रमसे लिखा था, उन ग्रन्थों को यवनों ने छार कर करके यमुनाके जलमें बहा दिया और जो औषधियाँ कण्ठाग्रथीं उनके बल से रोगियों का उपचार करतेरहे, जब वे वैद्यलोग मृत्युको प्राप्त हुए तो उनके बाल बच्चे ठेठ मूर्ख रहगये; क्योंकि ग्रन्थ तो प्रथमहीं लुट लुटा गये थे लिखना पढ़ना कैसे हो सक्ता? इस कारण आयुर्वेदका विचार और प्रचार सम्पूर्ण छूट गया, जिनको किञ्चितमात्र भी स्मरण था वह अपने आपको धन्वन्तरि की समान मानने

लगे और सब क्रिया कर्म त्याग अभिमानकी आगमें जलने लगे, यहां तक आलस्य ने घेरा कि रोगियों के घरों का फेरा करना भी छोड़दिया, रसोंके बनाने की सम्पूर्ण विधि भूलगये, रस पारिजात, रस पद्मचन्द्रिका, रस भस्म विधि, रसराजहंस, रसरहस्य, रससुधाकर, रससिद्धान्त सागर, तंत्रोद्धार, इन ग्रन्थों का तो केवल नामहींनाम रहगया वैद्य लोगों को यह भी ध्यान न रहा कि यह कैसे ग्रन्थ थे, इनमें कौन कौनसे रसग्रन्थ थे, इनमें कितने श्लोकोंकी संख्या थी और कौन कौन कवि उनके कर्त्ता थे, यह सब परिपाटीही हिन्दोस्थान से उठ गई, जब वैद्योंहीं ने औषधि करनी छोंडदी तो पंसारी विचारे क्यों न भूलते , सब जानते हैं कि मूलही के आधीन पत्र और फल फूल हैं, जब वैद्योंका सूर्य्यास्त हुआ और मुसलमानों की मुस्तरी (बृहस्पति) चमकी, सब दिल्ली विद्याविहीन हो गई, तब यूनानी हकीम हिकमत करने लगे, जहां तहां उनहीं के शफाखाने खुल गये, बीमार लोग उनहीं में आने जाने लगे, उनहीं हकीमों काआदर सत्कार होने लगा, गावजबाँ, गुलेवनुफशः, रेशः खतमी, मगजकद्दू, उस्केकद्रस, शर्वतनीलोफर, शर्वतउन्नाब, शर्वतअंजबार, शर्वतवर्द, शर्वतवजूरी, शर्वतखसखास, अर्कवादियान, अर्कमकोह, अर्कगुलाब, अर्ककेवड़ा, माजून जवारिश जालीनूस, माजूनऊद, तरह तरह की माजूने बनाने लगे शीशियोंमें कारूरे आने लगे, उनहीं को देख देखकर रोगोंकी परीक्षा करने लगे, बीमारों को नुस्खे लिखने लगे, अत्तारों से चहारुमठहराने लगे अत्तारभी अर्कोंमें पानी और गुलकन्दमें गुड़, मिलाने लगे, हरेक तरह बीमारों के लूटने का ढंग लगा दिया, जो कोई उन हकीमोंको अपने घर बुलाता मानो अपनी जानको झाड़ू लगाता, जाते ही चार रुपैये भेंट के लेने, आठआने पालकी के कहारोंको दिलवाने, चार आने नौकर के लिये बतलाने. कमसे कम चार छः आने का नुस्खा, जब बीमार पर यह मारपड़ी तो चार दिनके जीने वाले को एक दिनभी दुशवार हो गया, इसी प्रकार जब उनका सब लूट लिया और वर्तन भांडे तक बिकवादिये तो भी उन निर्दई हकीमों को दया न आतीथी, जब ऐसा अन्याय करने लगे और अपने आपको सबसे बडा समझने लगे, जहाँ जायँ वहाँ चहार तुख्म, मगजबादाम, शर्वतउन्नाबही की प्रशंसा करैं, घर घर और दूकान दूकान यूनानीही दवाइयों की चर्चा थी, सबकी जबानसे तिमर हिन्दी औरनीलोफर ही निकलता था ।

धन्य है उस जगदाधार निर्विकार परमात्माको, एक दिन तो वह था कि घर घर मिश्रानी ही वैद्यक का चर्चा था, आज एक दिन वह है प्रत्येक मनुष्यके मुखसे स्वप्नमें भी अर्क गुलाब और गिले अरमनी ही की प्रशंसा सुननेमें आती है देखिये थोड़े ही दिनोंमें क्यासे क्या होगया, हाय ! जहाँ रस और आसव बनतेथे वहाँ अर्क और माजूमें बनने लगीं, जिन रोगियों को वैद्य लोग दो रत्ती नाराच अथवा पांच विन्दु घृतविन्दुसे विरेचन कराते थे, उसके बदलेमें चार तोले अमल-

तास, दो तोले तुरंजवीन, छः मासे सौंफ, छः मासे गुलसुर्ख, छः माखे गावजबाँ, छः मासे हड़की बकली, छः मासे निसोत, छः मासे सनाय, दश दाने आलू बुखारे, दश दाने मुनक्का, तीन तोले इमली, चार तोले गुलकन्द, दो तोले खमीरा बनुफशः पाव भर अर्क बादियान, पाव भर अर्क मकोह, पाव भर गुलाब, जब यह तीन पाव घुला हुआ रबदड़ा रोगीके मुखके सन्मुख आया, उसीसमय रोगीके प्राण सूख गये, अमल तासकी बास, सनायकी कषाय, हड़की दुर्गन्ध आतेही कहने लगा कि हे परमेश्वर! ऐसी औषधि पीनेसे तो हमारे प्राणहीं ले ले तो अच्छा है, जब उनके विलाप भारतवासी वैद्योंकी सन्तानसे न सुनेगये तो सबने परस्पर मिलकर सम्मति की और देश देशान्तरों में जाकर बड़े परिश्रमसे अनुसरण कर कराके रसों के ग्रन्थ लाये और फिर उन भिषकपुत्रोंने अधिक परिश्रम करके वैद्यक विद्यापढ़ी और रस रूपी भण्डार खोल डाले और कहने लगे कि हमारी औषधियों के सामने इनहकीमोंकी औषधि किञ्चितमात्रभी फल दायक नहीं है तो भी यह मिथ्याभिमानी हमारे सन्मुख हमारे आयुर्वेदकी निन्दा करते हैं अब इनको नीचा दिखाना चाहिये, जो यह बारम्बार अहंकार न करें, और हारमान अभिमान छोड़ दें, यह विचार उन में से पांच चार वैद्य पुत्रोंने मिल औषधालय खोला और रोगियों को रस देना आरम्भ किया, तब तो यूनानी और ईरानी जो बड़े बड़े अभिमानी और लासानी हकीम थे सब कहानी भूल गये, अत्तारों से चहारुमखानी और झूठी बातें बनानी तो सौ कोस गई उनको जान बचानी कठिन होगई और जो अत्तार पानीके दाम उठाते थे पैसे की दवाके आठ आने बतलाते थे और तबीबों के घर बैठे चहारुम हिस्सा पान छाली पहुंचाते थे वह मिसरानी वैद्योंके सामने सब गञ्झे जाते रहे। यूनानी हकीमों के अन्याय रसों के दर्शन करतेही जहां तहां गुप्त होगये, और घर घर रसोंहीं का चर्चा होने लगा, जो बर्षों के जीर्णज्वर वाले थे उनके ज्वर रसों के खातेही जाते रहे, मिसरानीवैद्यों के भाग्यखुले और उनके सुयश मार्तण्ड खण्ड खण्ड में प्रकाश करने लगा, जो अत्तार पानी के दाम उठाते थे उनकी तो नानी मरगई और सब घमण्ड खण्ड खण्ड होगया, जबसे इस देशमें परम सुखदानी विकटोरियामहारानी का राज्य हुआ तबसे गवर्नमेण्ट की ओर से आयुर्वेद के पढ़ाने के लिये आयुर्वेदीय पाठशालायें बनाकर आयुर्वेद पढ़ाना आरम्भ किया, और देश देशान्तरोंसे औषधियों कीलता, द्रुम, वेलि मँगामँगा कर औषधालयों के निकट बाग लगादिये कि विद्यार्थी लोग रातदिन देखा करें, उनहीं बागों में रसभवन बनाये जिनमें अनेक प्रकार के यंत्र और उनकी क्रिया के सिखाने वाले वैद्यलोग उनमें नौकर रखदिये, विद्यार्थियों को इतना उपकार किया कि लेखनी बारम्बार विचार करतीहै कि क्या लिखूँ निदान हारमान मनमारकर असमर्थ हो रहजाती है, जब आयुर्वेदीयरसों के ग्रन्थ बहुत छपने लगे और वैद्यलोग अपने अपने नाम के नवीन ग्रन्थ भी निर्माण करने लगे, ऐसा श्रेष्ठ समय देख, वैश्यबंश उजागर, सर्वगुण आगर, गोब्राह्मणहित-

कारी, सत्यव्रतधारी, पूर्ण सुखरासी मुम्बई पत्तन निवासी-सेठ खेमराज श्रीकृष्णदास ने बड़े उत्साहके साथ रसाभिलाषी चातकोंकी तृषा बुझानेके लिये स्वातिवर्षा रूपी रस-ग्रन्थों को सहस्रों रुपैया व्ययकरके देश देशान्तरों से मँगाया और उन्हीं रसग्रन्थों में अपना तन मन धन समर्प्पण कर दिया, कि जिससे संसार में सुन्दर रस बनारहै, यहविचार कवियों से उनके भाषा तिलक कराये, कि जिनसे जगत्का उपकारहो फिर उनको अपने निज यंत्रालयमें छापकर प्रसिद्ध किया, उसीअवसरमें मेरे पास कृपापत्र भेजा कि रसरत्नाकरकी भाषाटीका लिखो कि जिससे सर्व साधारण का उपकार हो, और रोगीजनों को उपयोगी हो, भाषा ऐसी सरल और मनोहर हो जो प्रत्येकमनुष्य के मनको मोहितकर ले, सेठजीका कृपापत्र देख मेरे चित्तमें बड़ा उत्साह बढ़ा, और उनकी आज्ञानुसार रसरत्नाकर का अनुवाद करना आरम्भ किया जब परमेश्वर की कृपा से यह टीका पूर्ण हुई तो उसका नाम " रसप्रदीपिका " रक्खा और वैद्यजनों के उपकारार्थ इस ग्रन्थको श्रीमान् सर्व गुण निधान वैश्यवंशा-वतंस पूर्णयशागार परमोदार, कविजन हितकारी सर्व विद्या विहारी, मुम्बई पत्तन निवासी हरि पद विश्वासी श्रीमान् सेठ खेमराज श्रीकृष्णदासजीको पूर्ण गुण ग्राम सर्वसुलक्षणधाम जानकर मैंने यह रसरत्नाकर रस प्रदीपिका टीका सहित सम-र्प्पण किया, उनको कोटि कोटि धन्यवाद है कि जिन्होंने अपना धन व्यय करके मेरे रचे हुए अनेक ग्रन्थ और यह रसरत्नाकर सटीक अपने जगत्प्रसिद्ध "श्रीवेंकटेश्वर" यंत्रालय में मुद्रित करके मुझको कृतार्थ किया, सब सज्जनों से मेरी यह प्रार्थना है कि इस रसरत्नाकर के रसप्रदीपिका तिलकको देखकर मेरा परिश्रम सफल करैं, और जहाँ कहीं अशुद्धि देखें तो क्षमाकरैं, तो मुझपर कृपादृष्टि करके सूचित करैं, अबकी आवृत्तिमें शुद्ध कर दिया जायगा मैं अपनी रचित संकलित और अनुवादित पुस्तकों का भी सूचीपत्र विद्यानुरागियोंके निमित्त लिखे देता हूं कि, स्मरण रहै ॥

शालिग्राम निघण्टु भूषण।

भाषाटीका सहित, वैद्यगण ! इसमें प्रत्येक औषधिके संस्कृत अनेक नाम, फिर हिन्दी, बँगला, मराठी, गुजराती, तैलङ्गी, कर्णाटकी, तामिली, औत्कली, द्राविड़ी, ब्राह्मी, लुसाई, दक्षिणी, सिन्धी, अंग्रेजी, लैटिन, फारसी, अरबी, पञ्जाबी, तुर्की और यूनानी इत्यादि और भी भाषा लिखी हैं, उसके पश्चात् अनेक मतान्तरों से गुणागुण लक्षण, आकृति, उत्पत्ति और विवर्णादि लिखाहै, इसप्रकार इसके पच्चीस २५ वर्गहैं, कर्पूरादि वर्ग इस ग्रन्थमें प्रथम लिखाहै, इस कारण इस ग्रन्थका नाम कर्पूरादि निघण्टु भी है, अन्त में परिशिष्ट भाग भी लिखाहै, उसमें अनेक यूनानी और अंग्रेजी औषधियें पूर्वोक्तरीतिसे लिखी हैं,और औषधियोंके चित्र भी दिये हैं, हमको पूर्ण विश्वास है कि जो विषय इस ग्रन्थमें हैं वह और ग्रन्थोंमें न होंगे, और अन्य ग्रन्थोंके सम्पूर्ण विषय इसमें विद्यमान हैं, यह ग्रन्थ १४०० पृष्ठमें पूर्ण हुआ है, इस ग्रन्थके बनाने में

अनेक निघण्टु, कोष और संहितादि पुस्तकों से सहायता लीगई है, प्रमाण के लिये श्लोकके अन्तमें ग्रन्थका नाम भी लिख दिया है मूल्य ८) रुपये हैं ॥

शालिग्रामौषधिशब्दसागर।

भाषाटीका सहित, इसमें अकारादि क्रमसे वैद्यक के सम्पूर्ण शब्द संस्कृतमें लिखे हैं, फिर उनकी व्याख्या और हिन्दी भाषामें उनका अर्थ भी लिखाहै, ऐसा उत्तम कोष आज तक दूसरा कहीं नहीं छपा मूल्य २) रुपये हैं ॥

राजवल्लभ निघण्टु।

भाषाटीकासहित, यह ग्रन्थ अत्यन्त प्राचीन है, इसमें छः परिच्छेद हैं, पहिले में प्रभात कालके, दूसरे में दुपहरसे पहिलेके तीसरेमें दुपहरके, चौथेमें तीसरे पहरके, पाँचवेंमें रात्रिमें होने वाले कार्य और छठेमें सम्पूर्ण औषधियोंके गुण लिखे हैं, यह ग्रन्थ भी आज कल अपने रंग ढंगका निराला है और बहुतसी आयुर्वेदीय पाठशालाओंमें पढ़ाया जाता है। मूल्य १॥) रुपैया है ॥

अर्कप्रकाश।

भाषाटीकासहित (श्रीमन्महाराजाधिराज लङ्केश्वर रावणाचार्य्य प्रणीत) इस ग्रन्थमें महात्मा रावणाचार्य्यने सबप्रकार की औषधियों के अर्क निकालने की विधि और सम्पूर्ण रोगोंमें केवल अर्क ही प्रधान समझकर उसही से चिकित्सा करना लिखा है। मूल्य १) रुपैया है।

राजनिघण्टु।

भाषाटीकासमेत, यह निघण्टु श्रीमान् कश्मीराधिपति पण्डित नरहरि महाराज का निर्माण किया हुआ है, इस निघण्टुको सम्पूर्ण निघण्टुओं का शिरमौर समझ रक्खा है, वैद्य लोगोंने इसकी बड़ी प्रशंसाकी है, निघण्टुओंमें इस प्रकारका और दूसरा निघण्टु नहीं है, इसमें सब औषधियों के नाम, लक्षण, गुण और कई भाषा लिखी हैं, तथा अनेक नवीन औषधि और उनका वर्णन भी अच्छी रीतिसे लिखा है, यहग्रन्थ छप रहा है शीघ्र तय्यार होगा। मूल्य

धन्वन्तरि।

भाषाटीकासमेत, इस ग्रन्थमें सम्पूर्ण रोगोंका निदान, लक्षण, सम्प्राप्ति, पूर्वरूप, पश्चात् चिकित्सा लिखी है, फिर रसायन और वाजीकरण, उसके उपरान्त रसशोधन मारण और अन्तमें सर्व रोगोंका पथ्यापथ्य विचार लिखा है, छपता है शीघ्र तय्यार होगा ॥

वोपदेवशतक-वैद्यक।

भाषानुवादसहित, इस ग्रन्थमें अनेकवार परीक्षित चूर्ण, गुटिका, अवलेह,

तेल, घृत और क्राथ, उतम ललित सौ १०० श्लोकों में भिषक्‌शिरोमणि वोपदेवने निर्माण किये हैं । मूल्य ।=) छः आने हैं ।

द्रव्यगुणशतक ।

भाषाटीकासहित, इस छोटे से निघण्टुमें श्रीमान् पण्डित त्रिमल्लभट्टने सम्पूर्ण औषधियों के गुण १०० केवल सौही मनोहर श्लोकोंमें वर्णन किये हैं, जो काम चार रुपये की पुस्तक देतीहै वह काम यह चार आनेकी पुस्तक देतीहै।मूल्य ।) आने हैं ॥

भारत भैषज्यभास्कर ।

भाषाटीकासहित, इस ग्रन्थमें अकारादि क्रमसे सम्पूर्ण आयुर्वेदको भर दिया है, प्रत्येक शब्दका लिङ्ग व्याख्या अर्थ लिखा गया है, तथा मुख्य शब्द का पूरा विवरण लिखा है, एवं सर्व औषधियों के अनेक संस्कृत नाम, अनेक देशों की भाषा, गुण, लक्षण, भेद, जाति, आकृति, प्रयोग, विवरण, और सम्पूर्ण रोगोंका अनेक निदानों से निदान और उनकी विस्तारपूर्वक व्याख्या लिखी है, सब प्रकारके शस्त्र और यंत्रोंका भी वर्णन लिखा है, एवम् सब प्रकारकी औषधियों को छोड़कर द्रव्योंका वर्णन, पञ्चभूत शारीरक, अष्टविधि परीक्षित, कर्मविपाक, गर्भाधान, धात्रीविद्या, कामशास्त्र, सबप्रकारके जवि जन्तुओंका वर्णन, सब प्रकारकी तोल का वृत्तान्त, रसशोधन, मारणविधि, दिनचर्य्या, रात्रिचर्य्या, ऋतुचर्य्या, रसायन,बाजीकरण, पथ्यापथ्य, सम्पूर्ण औषधियों के अनुपान, परिभाषा, ग्रह बिचारादि और सर्व औषधि, शस्त्र, यंत्र, शारीरक, जीव जन्तुओंके चित्र यथा क्रमसे दिये गये हैं, प्रत्येक शब्द और प्रत्येक श्लोकके अन्तमें जिस ग्रन्थका शब्दहै उसग्रन्थका नामभी प्रमाणके लिये लिख दिया गया है, तथा अनेकार्थ शब्द विशेष करके लिखेगये हैं, इस ग्रन्थ की सहायताके लिये अनेक निदान, संहिता, निघण्टु, संग्रह, कोष, कामशास्त्र, धर्म्मशास्त्र और व्याकरणादि ग्रन्थ सञ्चय किये थे, यह ग्रन्थ शीघ्र छापा जायगा मूल्य छपने पर नियत किया जायगा ।

वङ्गसेन ।

भाषाटीकासहित छपकर शीघ्र तैय्यार होगा ॥

वैद्यकौस्तुभ ।

भाषानुवादसहित छपता है ॥

कल्पलता ।

भाषातिलक सहित छप रहा है ॥

शुकसागर ।

अर्थात् श्री मद्भागवत बारह स्कन्धकी भाषा, यह पुस्तक अत्यन्त मनरंजन और भय भंजन है, और सरल हिन्दी भाषामें लिखी गई है, स्थल स्थल पर दोहे,

कवित्त, चौपाई, छन्द, भजन और सवैये आदिभी डाले गये हैं, शंका समाधानभी उचित स्थानोंपर कियाहै, और उपयोगी दृष्टान्त भी उत्तमोत्तम स्थलोंपर लगाये गये हैं, इस पुस्तकको मुक्तिकी मूल समझना चाहिये, अक्षर भी इतने मोटे हैं, कि जिनके पढने से नेत्रोंकी ज्योति अधिक होती है, तोलमें भी पक्की दशसेर है मूल्य १२) रुपये हैं। बारीक अक्षरों वालीके ५) रुपये हैं।

सुदामाचरित्र।

अत्यन्त ललित भाषा दोहे, चौपाई, छन्दोंमें लिखी गई है। मूल्य ≈) आने हैं।

मयूरध्वज नाटक।

यह नाटक भक्तिका भण्डार और सब प्रकार, रौद्र, वीर, करुणा और सत्यतासे परिपूर्ण, सुन्दर सरल भाषा, बीच बीचमें दोहे, चौपाई, कवित्तों से जटित, गुणियोंके देखने योग्य है। मूल्य ॥) आठ आने हैं॥

माधवनल कामकन्दला नाटक।

इस नाटकमें कामकन्दला वेश्या और माधवनल ब्राह्मण का अपूर्वरीति से पूर्ण प्रेम झलकाया है, इसकी भाषा परम मनोहर और अत्यन्त सरल है और बीच बीच में दोहे, चौपाई, कवित्त इसरीतिसे लगाये हैं मानोरत्न जड़ दिये हैं ॥ मूल्य ।॥) बारह आने हैं॥

लावण्यवती सुदर्शन नाटक।

इस नाटकमें राजकुमारी लावण्यवती और राजकुमार सुदर्शन का पूर्ण प्रेम दर्शाया है और प्रेमही प्रेममें दोनोंने अपने प्राण त्याग दिये, इसमें ऐसा करुणारस भरा है जिसका वृत्तान्त लिखते लेखनीके आंशूधारा प्रवाह चले जाते हैं, ऐसा कौन पुरुष निर्दई और कठोर चित्त होगा जो इस नाटकको पढकर एक वार न रोवेगा, जब इस वियोगान्त नाटकको देखकर पत्थर पिघल जाते हैं तो मनुष्यों की क्या सामर्थ्य है जो नेत्रों से पानी न बहावै। मूल्य ।॥) बारह आने हैं।

अभिमन्यु बध नाटक।

यह ऐसा मनोहर और चित्त आकर्षण नाटक है कि आज तक न सुना होगा न देखा होगा, एक तो रसीली कविता, दूसरे महाभारत का युद्ध, पढतेही चित्त परमोहनी सी डाल देता है और यही जी चाहता है कि इसको बिना पूरा किये कोई काम न करैं, जिन्होंने हरिश्चन्द्र नाटक पढ़ा है उनको तो अवश्यही एक वार पढ़ना चाहिये, सुन्दर सरलभाषा, अत्यन्त स्पष्ट अक्षर, रंगीन जिल्द, मूल्य १) एकरुपैयाहै॥

श्रीः ।

अथ रसरत्नाकरकी अनुक्रमणिका ।

इति वाजीकरणाधिकारस्समाप्तः।

इति श्रीरसरत्नाकरकी अनुक्रमणिका समाप्ता॥

इति

रसरत्नाकरकी

अनुक्रमणिका समाप्ता ।

श्रीः।

अथ

रसरत्नाकर।

भाषाटीकासमेत।

॥ श्रीत्रैलोक्यपतयेनमः ॥

विश्वेशंसज्जनानन्दंपार्वतीवल्लभंशिवम्।
भूतिभूषितसर्वांगंदेवदेवंजगत्पतिम् ॥ १ ॥
रसग्रन्थप्रवक्तारंलोकानांहितकाम्यया।
वन्देहंदेवदेवेशंभक्तानामभयप्रदम् ॥ २ ॥
शालिग्रामेणवैश्येनलोकोपकृतयेखलु।
रसरत्नाकरस्येयंभाषाटीकाविरच्यते ॥ ३ ॥
नानाग्रन्थान्समालोच्यनित्यनाथेनधीमता।
रसरत्नाकरोग्रन्थोरचितोलोकहेतवे ॥ ४ ॥
अस्मिन्महारसाःप्रोक्तास्तत्कालगुणदायकाः।
अज्ञानांखलुदुर्बोधाविदुषांचसुखावहाः ॥ ५ ॥
सर्वेषामुपकारायभिषजांतुविशेषतः॥
मर्त्यानांव्याधिनाशायकुर्वेव्याख्यांमनोरमाम् ॥ ६ ॥

स्वर्गापवर्गविस्फारौभुवनस्योदयेयथा।
भवरोगहरौवन्देचण्डिकाचन्द्रशेखरौ ॥ १ ॥

अर्थ-स्वर्ग और अपवर्ग (मोक्ष) के देनेवाले, संसारकी उत्पत्तिमें भवरोगके नाशक, ऐसे चण्डिका (पार्वती) और चन्द्रशेखरको मैं ग्रन्थकार नमस्कार करताहूं ॥ १ ॥

रससाधनोपायः ।

रसोपरसलोहानांतैलमूलफलैःसह ।
असाध्यंप्रत्ययोपेतंकथ्यतेरससाधनम् ॥ २ ॥
वैद्यानांयशसेऽर्थायव्याधितानांहितायच ।
वादिनांकौतुकार्थायवृद्धानांदेहसिद्धये ॥ ३ ॥
मन्त्रिणांमंत्रसिंद्धयर्थंविविधाश्चर्यकारणम् ।
पंचखण्डमिदंशास्त्रंसाधकानांहितंप्रियम् ॥ ४ ॥
रसखण्डेतुवैद्यानांव्याधितानांरसेन्द्रके ।
वादिनांवादखण्डेचवृद्धानाञ्चरसायने ॥ ५ ॥
मंत्रिणांमंत्रखण्डेचरससिद्धिःप्रजायते ।
सुतरांनास्तिसंदेहस्तत्तत्खण्डविलोकिनाम् ॥ ६ ॥

अर्थ-तेल,मूल और फलोंके साथ रस,उपरस लोहादिकका जो असाध्य रूप रससाधनहै उसको विश्वासयुक्त कहताहूं ॥ २ ॥ वैद्योंके यश और अर्थ के निमित्त, रोगियोंके हितके लिये, वादि मनुष्योंके कौतुकके लिये, वृद्धपुरुषोंके देहकी सिद्धिके लिये ॥ ३ ॥ और मंत्रियोंके मंत्रसिद्धिके लिये अनेकप्रकारके आश्चर्योंका हेतु और साधकोंको हितकारक तथा प्रिय ऐसा पाँच खंड संयुक्त यह "रसरत्नाकर" है सो जानना॥४॥ तहाँ रसखण्डमें वैद्योंको, रसेन्द्रखण्डमें रोगियोंको, वादखण्डमें वादियोंको, रसायनखण्डमें वृद्धोंको और मंत्रखण्डमें मंत्रिजनोंको रस सिद्धि प्राप्त होगी; इस प्रकार जानकर इन पाँच खण्डोंके देखनेवालोंको निःसन्देह रससिद्धि प्राप्त होजायगी; इस प्रकार जानकर इन पाँच खण्डोंके देखनेवालोंको निःसन्देह रससिद्धि प्राप्तहोजायगी ॥ ५ ॥ ६ ॥

हतादिपारदगुणाः ।

हतोहन्तिजरामृत्यूमूर्छितोव्याधिघातकः ।
धत्तेचखेगतिंबन्द्धःकोन्यःसूतात्कृपाकरः ॥ ७ ॥
जरामरणदारिद्र्यरोगनाशकरोमृतः ।

मूर्छितोहरतेव्याधीन्रसोदेहेचरन्नपि ॥ ८ ॥
मोहयेद्यःपरान्बद्धोजीवयेच्चमृतःपरान् ।
मूर्छितोबोधयेदन्यांस्तंसूतंकोनसेवते ॥ ९ ॥
आयुर्द्रविणमारोग्यंवह्निमेधामहद्बलम् ।
रूपयौवनलावण्यंरसोपासनयाभवेत् ॥ १० ॥
मारयेज्जारितंसूतंगंधकेनैवमूर्च्छयेत् ।
बद्धःस्याद्द्रुतिसत्वाभ्यांरसस्यैवंत्रिधागतिः ॥ ११ ॥
दोषहीनोरसोब्रह्मामूर्छितस्तुजनार्द्दनः ।
मारितोरुद्ररूपःस्याद्बद्धःसाक्षान्महेश्वरः ॥ १२ ॥
वेधकोदेहलोहाभ्यांसूतोदेवि ! सदाशिवः ।
दर्शनाद्रसराजस्यब्रह्महत्यांव्यपोहति ॥ १३ ॥
स्पर्शनान्नाशयेद्देवि ! गोहत्यांनात्रसंशयः ।
किंपुनर्भक्षणाद्देवि ! प्राप्यतेपरमंपदम् ॥ १४ ॥
अल्पमात्रोपयोगित्वादरुचेरप्रसङ्गतः ।
क्षिप्रमारोग्यदायित्वाद्भेषजेभ्योरसोऽधिकः ॥ १५ ॥

अर्थ–माराहुआ पारा अर्थात् पारेकी भस्म-जरा (बुढापा) और मृत्युनाशकहै । मूर्छित पारा व्याधिनाशकहै । और बद्धपारा आकाशमें गमन करनेकी शक्तिकोदेवै है, ऐसे जान पारेसे अधिक कृपाकरनेवाला और कौनहै? शरीरमें विचरतीहुई पारेकी भस्म जरा, मरण, दरिद्रता और रोगनाश करैहै।तथा मूर्छित पाराभी रोगोंके समूहको नाशकरैहै॥८॥ जो पारा बद्ध होनेपर मोहको उत्पन्नकरै,भस्म होनेपर प्राणोंकी रक्षाकरै, और मूर्छित होनेपर बोधको उत्पन्न करताहै; ऐसे पारेकी कौन सेवा नहीं करै? अर्थात् सब मनुष्योंके सेवने योग्यहै ॥ ९ ॥ पारेकी उपासना करनेसे आयु,धन, आरोग्यता, जठराग्नि, मेधा, अत्यन्तबल, रूप, यौवन और लावण्यता उत्पन्न होतीहै ॥ १० ॥ जारित पारेको गंधकके द्वारा मारित, मूर्छित, द्रावण और वीर्ययुक्त, बद्धकरना चाहिये, पारेकी यह तीन गति जाननी ॥ ११ ॥ दोषहीन अर्थात् शुद्ध पारा साक्षात् ब्रह्माहै,

मूर्छित पारा जनार्द्दन (विष्णु) है, मारित पारा रुद्ररूपहै औ पारा साक्षात् महेश्वर (शंकर) जानना॥१२॥ महादेवजी कहते हेदेवि! देह और लोहवेधी पारा सबकालमें शिवरूपहै । और इस दर्शनकरनेसे ब्रह्महत्या दूरहोतीहै ॥ १३ ॥ तथा हेदेवि! इसके करनेसे गोहत्याका पाप दूर होजाताहै इसमें संशय नहींहै । और भक्षण करनेसे हेदेवि ! परम पद अर्थात् मोक्ष प्राप्त होतीहै ॥ १४ ॥ अल्प मात्राका उपयोगी होनेसे तथा रुचिके अनुसार देनेसे और शी आरोग्यता देनेसे पारेको और औषधियोंकी अपेक्षा अधिक गु वाला कहाहै ॥ १५ ॥

यदुक्तंशम्भुनापूर्वंरसखण्डेरसार्णवे ।
रसस्यवन्दनार्थंचदीपिकारसमंगले ॥ १६ ॥
व्याधितानांहितार्थायप्रोक्तंनागार्जुनेनयत् ।
उक्तंचर्पटसिद्धेनस्वगर्वेकाकपालिके ॥ १७ ॥
अनेकरसशास्त्रेषुसंहितास्वागमेषुच ।
यदुक्तंवाग्भटेतन्त्रेसुश्रुतेवैद्यसागरे ॥ १८ ॥
अन्यैश्चबहुभिःसिद्धैर्यदुक्तञ्चविलोक्यतत् ।
तत्रयद्यदसाध्यंस्याद्यद्यदुर्लभमौषधम् ॥ १९ ॥
तत्तत्सर्वंपरित्यज्यसारभूतंसमुद्धृतम् ।
क्वचिच्छास्त्रेक्रियानास्तिक्रमसंख्यानचक्वचित् ॥ २० ॥
मात्रायुक्तिःक्वचिन्नास्तिसम्प्रदायोनचक्वचित् ।
तेनसिद्धिर्नतत्रास्तिरसेवाथरसायने ॥ २१ ॥
वैद्येवादेप्रयोगेचतस्माद्यत्नोमयाकृतः ।
यद्यद्गुरुमुखाज्ज्ञातंस्वानुभूतंचयन्मया ॥ २२ ॥
तत्तल्लोकहितार्थायप्रकटीक्रियतेऽधुना ॥

अर्थ–पूर्व कालमें महादेवने रसार्णवग्रन्थके रसखण्डमें जो तथा रसमंगल ग्रंथमें रसकी वन्दनाके अर्थमें जो दीपिका कहीहै ॥ १६ ॥

गियोंके हितके लिये नागार्जुनमुनिने जो कहाहै, स्वर्गवैद्य क
ालिक ग्रंथमें चर्पट सिद्धने जो कहाहै ॥ १७ ॥ तथा अनेक रस शास्त्र
ंहिता, आगम, वाग्भट, तन्त्र, सुश्रुत और वैद्यसागर ग्रंथमें जो कहा
है ॥ १८ ॥ तथा अन्यान्य अनेक सिद्धोंकरके जो विषय कहा गया है
उस सबको मैं देखकर उसमें जो असाध्य और दुर्लभ औषधि हैं ॥१९॥
उन सबको त्यागकर सारभूत विषय इस ग्रन्थमें समुद्धृत करताहूं।
किसी शास्त्रमें क्रिया नहींहै, किसी शास्त्रमें क्रमसंख्या नहीं ॥ २० ॥
किसी शास्त्रमें मात्रायुक्ति नहीं और किसी शास्त्रमें सम्प्रदाय नहींहै
इस कारण उन शास्त्रोंके द्वारा कुछभी सिद्ध नहीं होतीहै । इससे मैंने
रस, रसायन, वैद्य, वाद और प्रयोग विषयमें यत्न किया है। मैंने जो
जो विषय गुरुके मुखसे श्रवण और अपने ज्ञानसे अनुभव किये हैं,
वह सर्व विषय मुझ करके लोकके हितके लिये इस ग्रन्थमें प्रकट किये
जाते हैं ॥ २१ ॥ २२ ॥

श्रीमान्सूतनृपोददातिविलसल्लक्ष्मींवपुःशाश्वतम् ।
स्वानांप्रीतिकरीमचंचलमनोमातेवपुंसांयथा ॥
नान्योनास्तिशरीरनाशकगदप्रध्वंसकारीततः ।
कार्यंनित्यमहोत्सवैःप्रथमतःसूताद्वपुःसाधनम् ॥ २३ ॥
साक्षादक्षयदायकोभुविनृणांपंचत्वमुच्चैःकुतो ।
मूर्च्छांमूर्च्छितविग्रहोगदहृतांहन्त्युच्चकैःप्राणिनाम् ॥
बद्धंप्राप्यसुरासुरेन्द्रचरितांतांतांगतिंप्रापयेत् ।
सोऽयंपातुपरोपकारचतुरःश्रीसूतराजोजगत् ॥ २४ ॥

अर्थ-पारा माताकी समान प्रीति करनेवाला तथा लक्ष्मी, सुन्दर
शरीर और अचल मनको देने वाला है। पारेकी समान शरीरनाशक
रोगको हरनेवाली और कोईभी औषधि नहींहै, इसकारण नित्य प्रति
महोत्सवसंयुक्त मनुष्योंको पारेका सेवनकर शरीरका साधन करना
चाहिये ॥ २३ ॥ यह पृथिवीमें मनुष्योंको साक्षात् अक्षय दायक और
पंचत्वनाशक है। मूर्छित पारा प्राणियोंकी मूर्छाको हरनेवाला है । बद्ध

पारा सुर और असुरेन्द्रचरित गति देवै है । सो इस पारेकी सम परोपकारी जगामें और कौनहै ? ॥ २४ ॥

योगमुक्तावल्यामिमौ ।

यदन्यत्रतदत्रास्तियदत्रास्तिनतत्क्वचित् ।
रसरत्नाकरःसोऽयंनित्यनाथेननिर्मितः ॥ २५ ॥
ततःकुर्यात्प्रयत्नेनरससंस्कारमुत्तमम् ।
अविज्ञायचशास्त्रार्थंप्रयोगकुशलोभिषक् ॥
यमएवसविज्ञेयोमर्त्यानांमृत्युरूपधृक् ॥ २६ ॥

अर्थ-ऐसा योगमुक्तावली ग्रन्थमें कहाहै कि नित्यनाथकृत इस रसरत्नाकर ग्रन्थमें अन्यान्य ग्रन्थोंके सर्व विषय हैं किन्तु इसमें जो विषय हैं वह विषय अन्य किसी ग्रन्थमें नहीं है ॥ २५ ॥ अतएव इसके द्वारा यत्नके साथ उत्तम प्रकारसे रससंस्कार करना।जो मनुष्य शास्त्रार्थ नहीं जानते और रसका प्रयोग करतेहैं उनको मृत्युरूपधारी यम समान जानना ॥ २६ ॥

दीपिका ।

नागोवङ्गोमलोवह्निश्चांचल्यञ्चविषंगिरिः ।
असह्याग्निर्महादोषानिषिद्धाःपारदेस्थिताः ॥ २७ ॥
जाड्यंगण्डस्तनौनागात्कुष्ठंवंगाद्रुजामलात् ।
वह्नेर्दाहोबीजनाशश्चांचल्यान्मरणंविषात् ॥ २८ ॥
गिरिस्फोटोह्यसह्याग्नेर्दोषान्मोहोपजायते ।
दोषहीनोयदासूतस्तदामृत्युजरापहः ॥ २९ ॥
साक्षादमृतमप्येषदोषयुक्तोरसोविषम् ।
तस्माद्दोषविशुद्ध्यर्थंरसशुद्धिर्विधीयते ॥ ३० ॥

अर्थ-नाग, वंग, मल, अग्नि, चांचल्य, विष, गिरि और असह्याग्नि यह निषिद्ध महादोष पारेमें रहतेहैं ॥ २७ ॥ तहाँ नागदोषसे शरीरकी जड़ता, वंगदोषसे कुष्ठरोग, मलदोषसे अनेक प्रकारके रोग, अग्निके

दोषसे दाह, चांचल्यदोषसे वीर्यका नाश, विषदोषसे मरण ॥ २८ ॥ गिरिदोषसे स्फोटक और असह्याग्निदोषसे मोह उत्पन्न होताहै। दोषहीन पारा मृत्यु और जरानाशक है ॥ २९ ॥ साक्षात् अमृतसमान भी पारा दोषयुक्त होनेपर विषकी समान होताहै, इसकारण दोषोंको दूरकरनेके लिये रसशुद्धी कहीजातीहै ॥ ३० ॥

रसोग्राह्यःसुनक्षत्रेपलानांशतमात्रकम् ।
पंचाशत्पंचविंशद्वाद्वादशंचैकमेववा ॥ ३१ ॥
पलादूनंनकर्त्तव्यंरससंस्कारमुत्तमम् ।
अघोरेणचमंत्रेणससंस्कारंसपूजनम् ॥ ३२ ॥
ओंअघोरेभ्योऽथघोरेभ्योघोरघोरतरेभ्यः ।
सर्वतःसर्वसर्वेभ्योनमस्तेरुद्ररूपेभ्यः ॥ ३३ ॥

इति श्रीपार्वतीपुत्रनित्यनाथसिद्धविरचिते रसरत्नाकरे रसखण्डे रसपीठिकानाम प्रथमोपदेशः ॥ १ ॥

अर्थ-शुभनक्षत्रमें १०० सौ, ५० पंचास, २५ पच्चीस, १२ बारह अथवा १ एकपल प्रमाण पारा लेवै, किन्तु एकपलसे कम कभी नहींलेवै, क्योंकि १ एकपलसे न्यून पारा उत्तम प्रकारसै शुद्ध नहीं होसक्ताहै। रस संस्कारके समय अघोर मंत्रसे पारेकी पूजाकरै ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ (ओं अघोरेभ्योऽथघोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः। सर्वतः सर्वसर्वेभ्यो नमस्ते रुद्ररूपेभ्यः) ॥ ३३ ॥

इति श्रीरसरत्नाकरे रसखण्डे रसप्रदीपिकानामभाषाटीकायां भिषक्शालिग्रामवैश्यकृतायांरसपीठिकानाम प्रथमोपदेशःसमाप्तः ॥ १ ॥

निःसारंवीक्ष्यविश्वंगदविकलवपुर्व्याप्तमेवातितप्तम् ।
भूयःकारुण्यसिन्धोःसकलगुणनिधेःसूतराजस्ययुक्तिम् ॥
दृष्ट्वासूतस्यशास्त्राण्यवहितमनसाप्राणिनामिष्टसिद्ध्यै ।
शृण्वन्तूच्चैर्मयोक्तंसुविपुलमतयोभोगिकेन्द्रानरेन्द्राः ॥ १ ॥

अर्थ-संसारके प्राणियोंको रोगोंसे विकलशरीर, निःसार और अत्यन्त संतप्त देखकर करुणानिधान सकलगुणोंकी खान सूतराज अर्थात् पारेकी युक्ति कहताहूँ । पारदके शास्त्रको अवलोकन कर प्राणियोंकी इष्टसिद्धिके लिये हे नरेन्द्रों मेरे कहे हुएको ऊँचेसे सुनो ॥ १ ॥

योगमुक्तावल्याम् ।

यावत्सूतंनशुद्धंनचमृतमथनोमूर्च्छितंगंधबंधम् ।
नोवज्रंमारितंवानचगगनवधोनोपसूताश्चशुद्धाः ॥
स्वर्णाद्यंसर्वलोहंविषमपिनमृतंतैलपातोनयावत् ।
तावद्वैद्यःक्वसिद्धोभवतिवसुभुजांमंडलेश्लाघ्ययोग्यः॥२॥

अर्थ-जबतक पारेको शुद्ध, मूर्च्छित और बद्ध नहींकरसकै तथा जबतक हीरेको मार नसकै, तैसेही जबतक अभ्रकको नहींमारसकै, तथा जबतक उपरसोंको शुद्धनहीं करसकै, तथा जबतक स्वर्णादि सब लोहोंको और विषको न मारसकै तथा जबतक तैलपात नहीं करसकै तबतक वैद्य सिद्ध और राजमंडलमें प्रशंसाके योग्य नहीं होताहै ॥ २ ॥

अथातःसंप्रवक्ष्यामिदोषाष्टकनिवारणम् ।
इष्टकारजनीचूर्णैःषोडशांशैरसस्यतु ॥ ३ ॥
मर्दयेत्तप्तखल्लेतंजम्बीरोत्थद्रवैर्दिनम् ।
खल्वंलोहमयंवाथपाषाणाश्ममथापिवा ॥ ४ ॥
कांजिकैःक्षालयेत्सूतंनागदोषस्यशान्तये ।
विशालांकोलचूर्णेनवंगदोषंविनाशयेत् ॥ ५ ॥
राजवृक्षोमलंहन्तिचित्रकंहन्तिदूषणम् ।
चांचल्यंकृष्णधत्तूरैस्त्रैफलैर्विषनाशनम् ॥ ६ ॥
कटुत्रयंगिरिंहन्तिअसह्याग्निंत्रिकंटकैः ।
प्रतिदोषंकलांशेनतत्रचूर्णंसकन्यकम् ॥ ७ ॥
सुवस्त्रगालितंसूतंखल्वेक्षिप्त्वायथाक्रमम् ।
प्रत्येकंप्रत्यहंयत्नात्सप्तरात्रंविमर्दयेत् ॥ ८ ॥

उद्धृत्योष्णारनालेनमृद्भाण्डेक्षालयेत्सुधीः ।
सर्वदोषविनिर्मुक्तःसप्तकंचुकवर्जितः ॥ ९ ॥
जायतेशुद्धसूतोऽयंयुज्यतेवैद्यकर्मणि ।
अजाशकृत्तुषाग्निंचक्षालयित्वाभुविक्षिपेत् ॥
तस्योपरिस्थितंखल्वंपूर्वोक्तंमर्दयेद्रसम् ॥१०॥

अर्थ–अब पारेके आठ दोषोंका निवारण कहते हैं। पारेसे सोलमा भाग ईंट और हलदीका चूरन मिलाकर ॥ ३ ॥ लोहे अथवा पाषाणके तप्त खरलमें एक दिन जम्भीरी नींबूके रसके द्वारा मर्दन करै ॥ ४॥ फिर कांजीसे धोलेवै पारेका नागदोष दूर होजायगा । तथा पारेका वंग दोष इन्द्रायन और अंकोलके द्वारा ॥ ५ ॥ मलदोष अमलतासके द्वारा अग्निदोष लालचीतेके द्वारा, चांचल्यदोष कालेधतूरेके द्वारा, विषदोष त्रिफलेके द्वारा ॥ ६ ॥ गिरिदोष त्रिकुटेके द्वारा और असह्याग्निदोष गोखुरोंके द्वारा दूर होताहै । प्रतिदोष दूर करनेके लिये पारेका सोलहमा भाग पूर्वोक्त चूर्ण गेरै और घीकारके रसमें घोटै फिर वस्त्रमें छान लेवै, फिर खरलमें डाल रोज रोज खरल करै, इस प्रकार प्रति दोष दूर करनेके लिये एक एक चूर्णके साथ पारेको सात सात दिन मर्दन करना चाहिये और मर्दनके बाद मट्टीके बासनमें गरम कांजीसे धोवै, इस प्रकार करनेसे पारा सर्व दोषोंसे मुक्त, सप्तकंचुकीरहित और शुद्ध होजाता है । यह पारा सर्व कार्यमें योजना चाहिये । (तप्तखरल) बकरीकी विष्ठा और भूसी इनकी आग बनाके धरतीमें गड्ढा खोदकर उस आगको गड्ढेमें धर देवै उसके ऊपर खरल धर देवै, उसको तप्त खरल कहते हैं उसमें पारेको मर्दन करना चाहिये ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥

अथान्यमतम् ।

श्रीखंडंदेवदारुंचकाकतुंडीजयाद्रवैः ।
कर्कोटीमूषलीकन्याद्रवंदत्त्वाविमर्दयेत् ॥
दिनैकंपातनायंत्रेशुद्धंचविनियोजयेत् ॥ ११ ॥

अर्थ–और किसीके मतसे– सफेदचन्दन, देवदारु, कौआठोडी, जैती, ककोडा, मुसली और घीकुवार इन प्रत्येकके रसमें एक दिन मर्दनकर फिर पातनायंत्रमें पातन करै तो पारा शुद्ध होजाता है ॥ ११ ॥

अन्यशास्त्रमतम् ।

कुमार्याश्चनिशाचूर्णैर्दिनंसूतंविमर्दयेत् ।
पातयेत्पातनायंत्रेसम्यक्शुद्धोभवेद्रसः ॥ १२ ॥

अर्थ–घीकुवारका रस और हलदीके चूरणके साथ पारेको एकदिन मर्दन कर फिर पातना यंत्रमें पातन करै पारा शुद्ध होजाता है ॥ १२ ॥

अथ हिंगुलोत्थोयथा ।

पारिभद्ररसैःपेष्यंहिंगुलंयाममात्रकम् ।
जम्बीराणांद्रवैर्वाथपात्यंपातालयंत्रके ॥ १३ ॥
तंसूतंयोजयेद्योगेसप्तकंचुकवर्जितम् ।
इत्येवंशुद्धयःख्यातायथेष्टकंप्रकारयेत् ॥ १४ ॥

अर्थ–पारिभद्र (फरहद) के रसमें अथवा जम्बीरी नींबूके रसमें एक प्रहर सिंगरफको खरलकर फिर पातालयंत्रके द्वारा पातन करनेसे पारा शुद्ध निकलता है सप्तकांचलियोंसे रहित ऐसे पारेका सर्व कर्मोंमें प्रयोग करना चाहिये,इसप्रकार यह पारेकी शुद्धि कही । जौनसी अच्छी लगे वही करनी चाहिये ॥ १३ ॥ १४ ॥

इति रसशोधन ।

अथैता मूलिकावक्ष्येशुद्धसूतस्यमारणे ।
ब्रह्मदण्डीमेघनादाचित्रकंतृणमुस्तिका ॥ १५ ॥
वज्रवल्लीबलाशुण्ठीकटुतुम्ब्यर्द्धचन्द्रिका ।
विषमुष्ट्यर्कलाक्षाश्चगोक्षुरःकाकतुण्डिका ॥ १६ ॥
कन्याचंडालिनीकन्दंसर्पाक्षीशरपुंखिका ।
वस्तारक्ताग्निर्गुण्डीलज्जालीदेवदालिका ॥ १७ ॥

जातीजयन्तीवाराहीभूंकदम्बंकुरण्टकम् ।
कोषातकीनीरकणालांगलीसहदेविका: ॥ १८ ॥
चक्रमर्दोऽमृताकन्दंकाकमाचीरविप्रिया ।
विष्णुक्रान्ताहस्तिशुण्ठीस्नुक्पयोभृंगराट्पटु: ॥ १९ ॥
इत्येतामूलिका:ख्यातायोज्या:पारदमारका: ।
एता:समस्ताव्यस्तावादेयाह्यष्टादशाधिका: ॥ २० ॥

अर्थ-अथानन्तर शुद्ध पारेको मारनेके लिये मूलिका कहतेहैं-ब्रह्मदण्डी, [च]ौलाई, चीता, मोथा, ॥ १५ ॥ वज्रवल्ली, खिरैटी, सोंठ, कडवीतौंबी, [क]ालानिसोत, कुचला, आक, लाख, गोखरू, कौआठोडी ॥ १६ ॥ [घ]ीकुवार, चण्डालकन्द, सर्पाक्षी, शरफोंका, बकरियावेल, रक्ताग्र, [स]म्हालु, लज्जावंती, देवदाली ॥ १७ ॥ जाई, जयन्ती, वाराहीकन्द, [भ]ूमिकदम्ब, नीलिकटसरैया, कडवीतोरई, सुगंधवाला, पीपल, कलिहारी, सहदेई ॥ १८ ॥ चकवड़, गिलोय, जमीकन्द, मकोय, सूर्य-[म]ुखी, कोयल,हाथी शुण्डी, थूहरका दूध, भांगरा और पित्तपापडा॥१९॥ [य]ह सर्व पारेके मारनेवाली मूलिका हैं। यह सर्व व इनमेंसे कुछेक पारेके [म]ारनेके लिये प्रयोग कीजाती है ॥ २० ॥

अप्रसूतगवांमूत्रेपेषयेद्रक्तमूलिका: ।
तद्द्रवै:शोधितंसूतंतुल्यंगंधकसंयुतम् ॥ २१ ॥
तप्तखल्वेचतुर्याममविच्छिन्नंविमर्दयेत् ।
तत्पिण्डंपातयेद्यन्त्रेत्रिंशद्वट्टमहापुटे ॥ २२ ॥
एवंदशपुटैर्माय्यंमर्द्यंपात्यंपुन:पुन: ।
तदुद्धृत्यपुनर्मर्द्यंवज्रमूषान्तरेक्षिपेत् ॥ २३ ॥
भूधराख्यपुटेपश्चाद्दशधाभस्मतांव्रजेत् ।
द्रवैर्द्रवै:पुनर्मर्द्यंसिद्धोऽयंभस्मसूतक: ॥ २४ ॥
मूलिकामारित:सूतोजारणक्रमवर्जित: ।
नक्रमेदेहलोहाभ्यांरोगहर्त्ताभवेद्ध्रुवम् ॥ २५ ॥

अर्थ-अप्रसूता गाय अर्थात् वछिया या उसरियाके मूत्रमें लज्जावंतीको पीसे उस पिसीहुई लज्जावंतीसे पारेको शुद्धकरै, फिर पारेमें बराबरका गंधक मिलाकर ॥ २१ ॥ चारप्रहरतक तप्तखरलमें मर्द्दनकरै, फिर गोला बना यंत्रमें रख तीस अंगुलोंसे बनाये महापुटमें पचावै॥२२॥ इसप्रकार दशपुटदेवै और खरल तथा पातन बराबर करताजाय, फि पारेको लेकर वज्रमूषामें धर भूधरपुटके द्वारा दशवार पचायकर भस्म करलेवै,वारंवार उपरोक्त औषधियोंके द्वारा खरल करता जाय इस प्रकार पारेकी भस्म अर्थात् पारा सिद्धहो जाताहै ॥ २४ ॥ इसप्रकार पूर्वोक्त औषधियोंसे मारण किया हुआ यह पारा जारणक्रमसे वर्जित, देह औ लोहेको न उलंघनेवाला और रोगोंको हरनेवाला होजाताहै ॥ २५ ॥

रसंगंधकतैलेनद्विगुणेनविमर्द्दयेत् ।
दिनैकंवाथसर्पाक्षीविष्णुक्रान्ताह्वभृंगजैः ॥ २६ ॥
त्र्यहंविमर्द्दयेद्द्रावैस्त्रिंशद्धस्तमहापुटे ।
इत्येवमष्टधापाच्यंरसोभस्मीभवेद्ध्रुवम् ॥ २७ ॥

अर्थ-पारेको द्विगुने गंधकके तेलमे एकदिन; अथवा सर्पाक्षी, कोयल और भांगरेके रसमें तीन दिन खरल कर तीस अंगुलोंसे बनायेहुये महापुटमें पकावै, इसप्रकार आठवार पकानेसे पारेकी निश्चय भस्म होजातीहै ॥ २६ ॥ २७ ॥

श्वेताङ्कोटजटावारिसूतंमर्द्यंदिनत्रयम् ।
पुटयेद्भूधरेयंत्रेमूषायांभस्मतांव्रजेत् ॥ २८ ॥
देवदालीहरिक्रान्तामारनालेनपेषयेत् ।
सप्तधासूतकंतेनकुर्यान्मर्दितमुत्थितम् ॥ २९ ॥
नसूतंखर्परेकुर्याद्दत्वादत्वाचतुर्द्रवम् ।
चुल्ल्योपरिपचेद्वन्हौभस्मस्यादरुणोपमम् ॥ ३० ॥
कोष्ठोदुम्बरजैःक्षीरैःसिताहिंगुविभावयेत् ।
सप्तवारंप्रयत्नेनशोध्यंपेष्यंपुनःपुनः ॥ ३१ ॥
कोष्ठोदुम्बरपंचांगैःकषायंषोडशांशकम् ।

हृत्वातेनपुनर्मर्द्यंहिंगुवंगंरसेश्वरम् ॥ ३२ ॥
क्षिप्त्वानिरुद्ध्यमूषायांभूधराख्येपुटेपचेत् ।
अष्टधाम्रियतेसूतोदेयंहिंगुपुटेपुटे ॥ ३३ ॥

र्थ–कोयल और अंकोलकी जड़के रसमें पारेको तीन दिन खरल करै र मूषामें रख भूधरयंत्रके द्वारा फूंक देवै तौ पारेकी निश्चयभस्म जावै ॥ २८ ॥ देवदाली और नीली कोयलको काँजीमें सातवार सिकर रस बनाले उस रसमें पारेको खरलकरै ॥ २९ ॥ फिर पारेको ढ़ाईमें डाल पूर्वोक्त चौगुना रस मिलाकै चूलेपै चढ़ाकर अग्नि जला-वै तौ पारेकी भस्म होकर लाल होजायगा ॥ ३० ॥ कठूमरके दूधमें ग और हींगको सात भावनादेवै फिर यत्नसहित सुखावै और खरल रै ॥ ३१ ॥ फिर कठूमरके पंचांगोंका षोड़शांश कषाय बना उसमें फिर वंग और हींग तथा पारेको खरल करै ॥ ३२ ॥ पीछे मूषामें रस मुखको बंदकर भूधरयंत्रके द्वारा आठ पुट देवै और प्रतिपुटमें हींग तारहै तौ पारेकी भस्म होजातीहै ॥ ३३ ॥

अपामार्गस्यबीजानितथैरण्डस्यचूर्णयेत् ।
तच्चूर्णपारदेदेयंमूषायामवरोधयेत् ॥ ३४ ॥
रुद्ध्वालघुपुटेपश्चाच्चतुर्भिर्भस्मतांव्रजेत् ।
कटुतुम्ब्युद्भवेकन्देगर्भेनारीपयःसुवै ॥ ३५ ॥
सप्तधाम्रियतेसूतःस्वेदयेद्ग्रामयाग्निना ।
अंकोलस्यजटातोयैःपिष्ट्वाखल्वेविमर्दयेत् ॥ ३६ ॥
सूतंगंधकसंयुक्तंदिनान्तेतंनिरोधयेत् ।
पुटयेद्भूधरेयंत्रेदिनान्तेतत्समुद्धरेत् ॥ ३७ ॥
धान्याभ्रंसूतकंतुल्यंमर्दयेन्मारकद्रवैः ।
दिनैकंतेनकल्केनवस्त्रेपिष्ट्वाचवर्त्तिकाम् ॥ ३८ ॥
विलिप्यतैलैर्वर्त्तिन्तामेरण्डोत्थैःपुनःपुनः ।
प्रज्वाल्यतद्धृतंभाण्डेग्राहयेत्पतितामधः ॥ ३९ ॥
कृष्णभस्मभवेत्तच्चपुनर्मर्द्यंत्रियामकैः ।

दिनैकंतत्पचेद्यंत्रेकच्छपाख्येनसंशयः ॥ ४० ॥
मृतःसूतोभवेत्सद्यस्तत्तद्योगेषुयोजयेत् ।
द्विपलंशुद्धसूतन्तुसूतार्द्धंशुद्धगंधकम् ॥ ४१ ॥
मर्द्दयेन्मारकद्रावैर्दिनमेकंनिरन्तरम् ।
वद्धातुभूधरेयंत्रेदिनैकंमारयेत्पुटात् ॥ ४२ ॥

अर्थ–चिरचिटके बीज और अंडके बीजोंका चूरन पारेमें मिला मूषामे रख मुख बन्दकर ॥ ३४ ॥ चार लघुपुट देनेसे पारेकी भस्म होजातीहै कडवीतोंवीके कंदमें गड्ढाकर उसके बीचमें स्त्रीका दूध और पारे रखकर ॥ ३५ ॥ सातवार उपलोंकी अग्निसे पकावै तौ पारेकी भस्म होजावै । अंकोलकी जड़के रसमें गंधकयुक्त पारेको खरलमें पीसकर मर्दन करै फिर उसको संध्याके समय मूषामें डाल फिर भूधर यंत्रमें पचावै, फिर पारेकी बराबर धान्याभ्रक लेकर पारेको मारनेवाले द्रव्योंके रसमें एकदिनतक मर्दन करै फिर पूर्वोक्त द्रव्योंके कल्कके साथ उक्त पारेके वस्त्रपै लेपकर सुखावै, पीछे बत्तीबना अंडीके तेलमें भिजो लेवै पीछे उन बत्तियोंको एक बरतनमें अग्निके द्वारा जला देवै, तिसके उपरान्त बरतनमें जो कृष्ण वर्ण भस्म बनकर लगजाय उस भस्मको लेकर हलदीके रसमें खरल करै पीछे एक दिन कच्छप यंत्रमें पचानेसे तत्काल पारेकी भस्म होजाती है और वह भस्म सर्व रोगोंमें प्रयोग करने योग्य है । आठ तोले शुद्ध पारा और चार तोले शुद्ध गंधक इनको एकत्रकर पारेके मारनेवाले द्रव्योंके रसमें एक दिन खरल करकै पुटके द्वारा एक दिन भूधर यंत्रमें पचावै तो पारेकी भस्म होजातीहै ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥

अथरसमारणे वज्रमूषामाह ।

तुषदग्धस्यभागौद्वौएकंवल्मीकमृत्तिका ।
लोहकिट्टस्यभागैकंश्वेतपाषाणभागकम् ॥ ४३ ॥
नरकेशसमंकिंचिच्छागीक्षीरेणपेषयेत् ।
यामद्वयंदृढंमर्द्यंतेनमूषान्धसंपुटात् ॥ ४४ ॥
शोषयित्वाथसंलिप्त्वातत्कल्कैःसंनिरुध्यच ।

वज्रमूषासमाख्यातासम्यक्पारदमारिका ॥ ४५ ॥
श्वेतंपीतंतथारक्तंकृष्णश्चेतिचतुर्विधम् ।
लक्षणंभस्मसूतस्यश्रेष्ठंस्यादुत्तरोत्तरम् ॥ ४६ ॥

इति श्रीपार्वतीपुत्रनित्यनाथसिद्धविरचिते रसरत्नाकरे रस-
खण्डे रसशोधनमारणाधिकारोनामद्वितीयोपदेशः ॥२॥

अर्थ-भूसीकीराख दोभाग, वाँबीकी मट्टी एकभाग, लोहेका मैल एकभाग सफेद पत्थर एकभाग और सबकी बराबर मनुष्यके केश लेकर कुछेक बकरीके दूधमें पीसै, फिर दोप्रहर पर्यन्त दृढ़ मर्दनकर मूषा संपुट बनाके सुखादे और उपरोक्त कल्कसे लेपन करै और उपरोक्त कल्कसे मुखकोभी बंदकरै, इसप्रकार वज्रमूषा बनताहै और इसमें उत्तम प्रकारसे पारेकी भस्म होजातीहै। पारेकी भस्म सफेद, पीत, लाल और कृष्ण, इनमें दोसै चार प्रकारकीहै इनमें उत्तरोत्तर श्रेष्ठ-जाननी अर्थात् सफेदसे पीली, पीलीसे लाल, और लालसें काली, श्रेष्ठहै ॥ ४३ । ४४ । ४५ । ४६ ॥

इति श्रीरसरत्नाकरे रसखण्डे रसप्रदीपिकानामभाषाटीकायां भिषक्
शालिग्रामकृतायांरसशोधनमारणाधिकारनाम द्वितीयो-
पदेशः समाप्तः ॥ २ ॥

अथातोजारणात्पूर्वंबीजंमारणमुच्यते ।
अजीर्णंचाप्यबीजंचसूतकंयस्तुमारयेत् ॥ १ ॥
ब्रह्महासदुराचारोममद्रोहीमहेश्वरि ।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेनजारितंमारयेद्रसम् ॥ २ ॥
संस्थाप्यगोमयंभूमौपक्वमूषांततोपरि ।
तन्मध्येकटुतुम्ब्युत्थंतैलंदत्वारसंक्षिपेत् ॥ ३ ॥
काकमाचीरसंदेयंतैलतुल्यंततःपुनः ।
गन्धकंव्रीहिमात्रंचक्षिप्त्वातंचनिरोधयेत् ॥ ४ ॥

तत्पृष्ठेपावकंदेयंपूर्णेवावह्निखर्परम् ।
स्वांगशीतलतांज्ञात्वाजीर्णेतैलेचगंधकम् ॥ ५ ॥
काकमाचीद्रवंचाग्नौदत्वादत्वाचजारयेत् ।
मूषाधोगोमयंचात्रदत्वाचोर्द्ध्वंचपावकम् ॥ ६ ॥
षड्गुणंगंधकंजार्यंसूतस्यैवंमुखंभवेत् ।
तंसूतंमर्दयेन्नीरैर्जंन्नीरोत्थैःपुनःपुनः ॥ ७ ॥
चतुःषष्ट्यंशकैःपूर्वैर्द्वात्रिंशांशंततःपुनः ।
षोडशांशंशुद्धहेमपत्रंसूतेषुनिक्षिपेत् ॥ ८ ॥
शिखिपित्तेनसंपिष्टंतैलैश्चसर्षपोद्भवैः ।
लिप्त्वाहेमक्षिपेत्सूतंयामंजम्बीरजैर्द्रवैः ॥ ९ ॥
मर्द्यंतंपूर्ववत्पच्यान्मूषायांजम्बिरद्रवैः ।
पूरयेद्रोधयेच्चाग्निंदत्वायत्नेनजारयेत् ॥ १० ॥
ग्रासेग्रासेचतन्मर्द्यंजम्बीराणांद्रवैर्दृढम् ।
मूलिकालवणंगंधमभावेपित्ततैलयोः ॥ ११ ॥
पिष्ट्वाजम्बीरनीरेणहेमपत्रंप्रलेपयेत् ।
इत्येवंजारणाकार्याततःसूतञ्चमारयेत् ॥ १२ ॥
अथवानिर्मुखंसूतंविडयोगेनमारयेत् ।
विडमत्रप्रवक्ष्यामिसाधयेद्भिषजांवरः ॥ १३ ॥

अर्थ–अथानंतर जारणपूर्वक और बीजसहित पारेका मारण कहतेहैं– महादेव बोले कि हेदेवि ! जो मनुष्य अजीर्ण (जारणरहित) और अबीज पारेकी भस्म करताहै वह मनुष्य ब्रह्मघाती, दुराचारी और मेरा द्रोही होताहै, इसकारण अत्यंत यत्नकर जारित पारेको मारना चाहिये। भूमिपै गोवरको रख उसके ऊपर पकमूषा स्थापनकरै उसमें कड़वी तोंबीका तेल और पारा तथा तेलकी समान मकोयका रस और व्रीहि प्रमाण गंधकका चूरनडाल मूषाके मुखको बंदकरदेवै उसके ऊपर अग्नि जलावै, जब स्वयं शीतल होजाय तब पुराने तेलमें गंधक और मकोयका रस बारबार डालकर जारणकरै, उपरोक्त मूषाके तलै गोवर

रखै और ऊपर अग्नि जलादेवै वा अग्निसे भरेहुए पात्रको रखदेवै, छैगुने गंधकका जारणकरै, इसप्रकार पारेके मुख उत्पन्न होताहै, फिर उक्त पारेको जम्बीरी नीबूके रसमें वारवार खरलकर पीछै चौसठमें भाग शुद्धसुवर्णके पत्र मिलाकर पारेको खरलकरै, फिर सोलहमें भाग शुद्ध सुवर्णके पत्र मिलाकर पारेको खरलकरै, फिर मयूरके पित्त और सरसोंके तेलमें सुवर्णको पीस पारेके ऊपर लेपकरै,फिर एकप्रहर पर्यन्त जम्बीरी नीबुओंके रसमें मर्द्दन करकै मूषामें रखकर पूर्ववत् यंत्रके द्वारा पकावै, और ग्रास ग्रासमें जम्बीरके रसमें दृढ़ मर्द्दन करताजाय। मयूरके पित्त और तेलके अभावमें मूलिका, लवण और गंधक लेना चाहिये। फिर जम्बीरीके रसमें मर्द्दनकर सुवर्णके पत्रोंपै लेपकरै; इसप्रकार जारण-कार्य संयुक्त करकै पीछै पारेको भस्म करै;अथवा निर्मुख पारेको विडके संयोगसे मारना चाहिये। अब विड़को कहतेहैं और यह विड़ वैद्योंको सिद्ध करना चाहिये॥१॥२॥३॥४॥५॥६॥७॥८॥९॥१०॥११॥१२॥१३॥

शंखचूर्णरविक्षीरैश्चातपेभावयेद्दिनम्।
तद्वज्जम्बीरजैर्द्रावैर्दिनैकंधूमसारकम्॥ १४॥
सुवर्चलमजामूत्रैःक्काथयंयामचतुष्टयम्।
कण्टकारीश्वसंक्काथ्यादिनैकंनरमूत्रकैः॥ १५॥
साजीक्षारतिन्तिड़ीकंकाशीशश्चाशिलाजतुम्।
जम्बीरोत्थैर्द्रवैर्भाव्यंपृथग्यामचतुष्टयम्॥ १६॥
जैपालबीजंत्वग्घीनंमूलकानांद्रवैर्दिनम्।
सैन्धवंटङ्कणंगुंजाशिग्रुमूलद्रवैर्दिनम्॥ १७॥
एतत्सर्वसमांशन्तुमर्द्यंजम्बीरजैर्द्रवैः।
तद्गोलंरक्षयेद्यत्नाद्विडोऽयंवाडवानलः॥
अनेनमर्द्दयेत्सूतंग्रासतैतप्तखल्वके॥ १८॥

अर्थ–शंखके चूनेको एकदिन आकके दूधमें और वज्रखारको एक-दिन जम्बीरी नीबुओंके रसमें भावना देवै॥ १४॥ फिर कालेनोनको बकरीके मूत्रमें चार प्रहर और कटेरीको मनुष्यके मूत्रमें एकदिन औटा-लेवै॥ १५॥ फिर सज्जी, इमलीका खार, कसीस, और शिलाजीत,

इनको अलग अलग चार प्रहरतक जम्बीरी नीबुके रसमें भावनादेवे १६ और जमालगोटेके बीजोंकी छालसे अलग करके एकदिन मूलीके रसमें खरलकरै, सैंधानोनको एकदिन चौंटलीकी जड़के रसमें और सुहागेको एकदिन सोजिनके जड़के रसमें खरल करलेवै । पीछे इनसबिको बराबरलेकर जम्बीरी नीबुके रसमें खरलकरकै ॥ १७ ॥ गोलाबनालेवै, इसको विड़ कहतेहैं इस विड़के साथ पारेको तप्तखरलमें मर्द्दन करै॥ १८॥

स्वर्णाभ्रसर्वलोहानियथेष्टानिचजारयेत् ।
मारयेत्पूर्वयोगेनमारणंचात्रकथ्यते ॥ १९ ॥
कुम्भींसमूलामुद्धृत्यगोमूत्रेणसुपेषयेत् ।
तद्द्रवैर्मर्दयेत्सूतंदिनैकंकान्तसंपुटे ॥ २० ॥
लिप्त्वानियमकादेयाऊर्द्ध्वञ्चाधस्तदन्वयेत् ।
मृद्वग्निनादिनैकन्तुपचेच्चुल्यांमृतोभवेत् ॥ २१ ॥
गोघृतंगंधकंसूतंपिष्ट्वापिण्डींप्रकल्पयेत् ।
कुमारीदलमध्यस्थंकृत्वामूत्रेणवेष्टयेत् ॥ २२ ॥
तंकान्तसंपुटंरुद्धात्रिभिर्लघुपुटैःपचेत् ।
ततोध्मातेभवेद्धस्मचान्धमूषेक्षयंध्रुवम् ॥ २३ ॥
शाकवृक्षस्यपक्कानिफलान्यादायशोधयेत् ।
पेषयेद्द्रविदुग्धेनतेनमूषांप्रलेपयेत् ॥ २४ ॥
आदिप्रसूतगोर्जातजरायुश्चूर्णपूरितः ।
तन्मध्येसूतकंरुद्धाध्मातोभस्मत्वमाप्नुयात् ॥ २५ ॥
कर्कोटींकाकमाचींचकंचुकींकटुतुम्बिकाम् ।
काकजंघाकाकतुण्डीकाकिनीकाकमंजरीः ॥ २६ ॥
पिष्ट्वैतान्वज्रमूषास्तैर्लेपंकृत्वारसंक्षिपेत् ।
मर्दितंदिनमेकन्तुतैरेवाद्रोत्थितैरसैः ॥ २७ ॥
रुद्धाथभूधरेपच्यादष्टवारंपुनःपुनः ।
मर्दयेल्लिप्तमूषास्तांरुद्धाध्मातोमृतोभवेत् ॥ २८ ॥

अर्थ—फिर सोना, अभ्रक, और सर्वप्रकारके लोह, इन सबको यथेष्ट प्रमाण जारण करके पूर्वोक्तयोगके द्वारा अथवा निम्नोक्तप्रकारसे मारण करै ॥ १९ ॥ मूलसहित जलकुम्भीको उखाडकर गोमूत्रमें पीसे, फिर इसी रसमें एक दिन पारेको खरलकर पीछे कान्तसंपुटमें रख लेप करकै निम्नलिखित सर्पाक्षीआदि पारेको बांधनेवाली औषधी उसके चारों ओर देकर एकदिनतक चूले पै रख मृदुअग्निके द्वारा पकानेसे पारेकी भस्म होजाती है ॥ २० ॥ २१ ॥ गायका घी, गंधक और पारा इनको एकत्र पीसकर पिण्डा बनाकै घीकुवारके पत्तोंके वीचमें रखकर मूत्रसे बांधै, फिर कान्तसंपुटरख अवरोधकरके तीन लघुपुट देकै पचावै, पीछे अंधमूषामें रखकै अग्निको धोंकनेसे पारेकी भस्म होजातीहै ॥ २२ ॥ २३ ॥ शाकवृक्षके पके हुए फलोंको शोधकर आकके दूधमें पीसकरकै मूषाको लीपलेवै, पीछे पहिलीवार व्याहीहुई गायकी जरायु (जेर) के चूर्णसे मूषाको भर उसमें पारेको रख संपुटितदे मुख बंदकर आगमें रख धोंकनेसे भस्म होजाती है ॥ २४ ॥ २५ ॥ ककोडा, मकोय, कंचुकी, कड्वीतोंबी, काकजंघा, कौआठोडी, चोंटली और काकमंजरी (काकनासा) इन सबको बारीक पीस वज्रमूषाके भीतर लेप करकै उसमें पारेको डालकर रखदेवै, किन्तु पहिले पारेको अदरखके रसमें खरल करै पीछे रोधनकर भूधरयंत्रके द्वारा वारंवार इसीप्रकार आठबेर पचावै, फिर लिपटेहुए द्रव्यको मूषामेंसे खुरचकर खरलकरके फिर मूषामें रख मूषाके मुखको बंदकर आगवाल धोंकनेसे पारेकी भस्म होजातीहै ॥
॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥

रसोनियामकैर्मार्योहठंयामचतुष्टयम् ।
द्विगुणैर्गन्धतैलैश्चपचेन्मृद्वग्निनाशनैः ॥ २९ ॥
यावत्खोटोभवेत्तत्तद्रोधयेल्लोहसंपुटे ।
हरीतकींजलेपिष्ट्वालोहकिट्टेनमूषिकाम् ॥ ३० ॥
कृत्वातन्मध्यतःक्षिप्त्वासंपुटंचान्धयेत्पुनः ।
तस्योर्द्ध्वेस्रावकाकारंत्हत्वानागंद्रुतंक्षिपेत् ॥ ३१ ॥
कठिनेनधमेत्तावद्यावन्नागोद्रुतोभवेत् ।

नधमेच्चपुनस्तावद्यावत्कठिनतांव्रजेत् ॥ ३२ ॥
एवंपुनःपुनर्ध्मातस्त्रियामैर्म्रियतेरसः ।
नियामकास्ततोवंगसूतस्यमारकर्मणि ॥ ३३ ॥

अर्थ–निम्नलिखित नियामकद्रव्य, और दुगुनेगंधक तथा तेलके साथ चारप्रहर मर्दनकर मृदुअग्निसे पारेको धीरै धीरै पचावे ॥ २९॥ जबखोट अर्थात् जमजावै,तब लोहेके सम्पुटमें रख मुख बंदकरदेवै, फिर हरड़ोंको जलमें पीसकर उसमें लोहेकी कीट मिलाके मूषाबनालेवै ॥ ३० ॥ उसके बीचमें उक्तपारेको रख आगदेवै और तिसके उपरान्त उसके ऊपरके भागमें कृष्णवर्ण लेपनद्रव्यादि फैलाकर शीघ्रही उसके ऊपर रांगको छोडै,जबतक रांग गलकर फिर कठिन न होजावै तबतक आंच देतारहै ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ इसप्रकार वारंवार तीनप्रहर पर्यन्त अग्नि धोकनेसे पारा भस्मरूप होता है । अब निम्नोक्त सर्पाक्षीआदि नियामक द्रव्य बंग और पारेके मारणकर्म्ममें कहे जाते हैं ॥ ३३ ॥

सर्पाक्षीक्षीरिणीवन्ध्यामत्स्याक्षीशरपुंखिका ।
काकजंघाशिखिशिखाब्रह्मदण्डचाखुपर्णिका ॥ ३४ ॥
वर्षाभूकंचुकीमूर्वापटूकोत्पलचिंचिका ।
शतावरीवज्रलतावज्रकन्दात्रिकर्णिका ॥ ३५ ॥
मण्डूकपर्णीपाटलीचित्रकोग्रीष्मसुन्दरः ।
काकमाचीमहाराष्ट्रीहरिद्रातिलकर्णिका ॥ ३६ ॥
श्वेतार्कशिग्रुधत्तूरमृगदूर्वाहरीतकी ।
गुडूचीमूषलीपुंखाभृंगराड्रक्ताचित्रकम् ॥ ३७ ॥
तगरंशूरणंमुण्डीमलंकापोतकाकिलम् ।
सैन्धवंश्वेतवर्षाभूसाम्बरंहिंगुमाक्षिकम् ॥ ३८ ॥
विष्णुक्रान्तासोमवल्लीव्रणघ्नीयक्षलोचनम् ।
व्याघ्रपादीहंसपादीवृश्चिकालीकुरण्टकम् ॥ ३९ ॥
स्वयम्भूकुसुमंकुञ्चीहस्तिशुण्डीन्द्रवारुणी ।

बीजान्यहस्करस्यापिसर्वत्रैतेनियामकाः ॥ ४० ॥
एताःसमस्ताव्यस्तावादेयाह्यष्टदशाधिकाः ।
मारणेमूर्च्छनेबन्धेरसस्यैतानियोजयेत् ॥ ४१ ॥

अर्थ-सर्पाक्षी (गंडिनी) खिरनी, वाँलककोड़ा, मछेली, शरपुंखा, काकजंघा (मसी) मयूरशिखा, ब्रह्मदण्डी, मूषापर्णी, ॥ ३४ ॥ पुनर्नवा, कंचुकी (औषधिविशेष) मूर्वा (चुरनहार), पित्तपापडा, कमल, इमली, शतावर, हडसंघारी, वज्रकन्दा, त्रिकर्णिका (गोखरू) ॥ ३५॥ ब्रह्ममाण्डुकी, कठपाढल, चीता, ग्रीष्मसुन्दर, मकोय, जलपीपल, हलदी, तिलकर्णिका (तिलकन्द) ॥ ३६ ॥ सफेदआक, सैजिना, धतूरा, मृगदूर्वा (इन्द्रायण) हरड़, गिलोय, मूषली, नील, भाँगरा, लालचीता, ॥ ३७ ॥ तगर, जिमीकन्द, गोरखमुण्डी, कठूमर, करंज, तालमखाना, सैंधानोन,विषखपरा,सामरनोन,हींग,मधु,॥३८॥कोयल, सोमवल्ली, विकङ्कत, हंसपदी, वृश्चिकाली, पियावांसा ॥ ३९ ॥ शिवलिंगीका फूल, कलौंजी, हाथीशुण्डी, इन्द्रायन और आकके बीज; इन सबको नियामकगण कहते हैं । यह सर्वद्रव्य पारेके मारनेमें, मूर्च्छितकरनेमें और बद्धकरनेमें व्यवहारमें लायेजाते हैं ॥ ४० ॥ ४१ ॥

अप्रसूतगवांमूत्रैःपिष्ट्वापूर्वनियामकाः ।
तद्द्रवैमर्दयेत्सूतंयथापूर्वोदितंक्रमात् ॥ ४२ ॥
इत्येवंजारणंप्रोक्तंमारणंपरिकीर्त्तितम् ।
परीक्षामारितेसूतेकर्त्तव्याचयथोदिता ॥ ४३ ॥
अधस्तुषाग्निनातप्तोह्यक्षीणास्तिष्ठतेयदा ।
तदाभस्मविजानीयाच्चुल्ल्यांयामंनिरीक्षयेत् ॥ ४४ ॥
मूलिकामारितंसूतंसर्वयोगेषुयोजयेत् ।
जारितोमारितःसूतोजरादारिद्र्यरोगनुत् ॥ ४५ ॥
मूर्च्छितोव्याधिनाशायबद्धःसर्वत्रयोजयेत् ॥ ४६ ॥

इतिश्रीपार्वतीपुत्रनित्यनाथसिद्धविरचिते रसरत्नाकरे रसखंडे मारणाधिकारो नाम तृतीयोपदेशः ॥ ३ ॥

अर्थ-अप्रसूतागाय (बाछिया) के मूत्रमें उपरोक्त नियामक औषधियोंको पीसकर पूर्वोक्त अनुक्रमसे उसके द्वारा पारेको मर्दन करकै पीछै जारण और मारण करै। पारेकी निश्चय भस्म हुईहै या नहीं इससन्देहको दूर करनेके लिये पारेकी परीक्षा करै, भूसीकी अग्निके ऊपर पारेकी भस्मको धरै, जो वह भस्म एक प्रहरमें कम न होवै तौ उसको उत्तम भस्म जाननी। अथवा चूलेपै आगबाल उसपै तवा रख उसके ऊपर पारेकी भस्म एकप्रहर पर्यन्त धरी रहनेदेवै, जो वह भस्म उडेनहीं तो जानो कि पारा मरगयाहै। मूलिका अर्थात् नियामकद्रव्योंसे माराहुआ पारा सर्वरोगोंमें देना चाहिये। प्रथम पारेको जारणकर पीछै मारै। माराहुआ पारा जरा और दरिद्रता नाशकहै। मूर्च्छित पारेको रोगके दूरकरनेके लिये और और बद्धपारेको सर्वत्र देना चाहिये॥ ४२॥ ४३॥ ४४॥ ४५॥ ४६॥

इति श्रीरसरत्नाकरे रसखण्डे रसप्रदीपिकानामभाषाटीकायां भिषक्शालिग्रामवैश्यकृतमारणाधिकारनामकस्तृतीयोपदेशः समाप्तः।

अथातःशुद्धसूतस्यमूर्च्छनाविधिरुच्यते।
मेघनादोवचाहिंगुशूरणैर्मर्दयेद्रसम्॥ १॥
नष्टपिष्टन्तुतद्गोलंहिंगुनावेष्टयेद्बहिः।
पचेल्लवणयन्त्रस्थंदिनैकंचण्डवह्निना॥ २॥
ऊर्द्ध्वलग्नंसमादायदृढवस्त्रेणबन्धयेत्।
ऊर्ध्वाधोगंधकंतुल्यंदत्त्वासौम्यानलेपचेत्॥ ३॥
जीर्णेगंधेपुनर्देयंषड्भिर्वारैःसमंसमम्।
षड्गुणेगंधकंजीर्णेमूर्च्छितोरोगहाभवेत्॥ ४॥

अर्थ-अनंतर शुद्धपारेकी मूर्च्छाविधि कहतेहैं। चौलाई, वच, हींग, और जिमीकन्द इनके रसमें पारेको मर्दन करकै गोला बनालेवै, जब वह गोला सूखजावै तब उसकेऊपर हींगसे लेपकरदेवै, फिर लवणयंत्रके द्वारा प्रचण्डअग्निसे एकदिन पचावै, पीछै ऊपरके लगे हुए द्रव्यको लेकर गाढ़वस्त्रमें बाँधदेवै फिर नीचै और ऊपर समान भाग गंधकका चूर्णदेकर मृदुअग्निसे पचावै, जीर्ण गंधकहोजानेपर

वारवार गंधकदेतारहै,इसप्रकारछैवार गंधकका जारण होनेसे पारा मूर्च्छित होजाताहै, यह पारा सर्वरोगनाशकहै ॥१।२।३।४॥

गंधकंमधुसारञ्चशुद्धसूतसमंसमम्।
यामैकंपाचयेत्खल्वेकाचकुप्यांनिवेशयेत्॥ ५॥
रुद्ध्वाद्वादशयामन्तंवालुकायन्त्रगंपचेत्।
स्फोटयेत्स्वांगशीतंतंतदूर्द्धगंधकंत्यजेत्॥ ६॥
अधस्तंरसमादायसर्वरोगेषुयोजयेत्।
शुद्धसूतंद्विधागंधंसूतार्द्धंसैन्धवंक्षिपेत्॥ ७॥
द्रवैःसितजयन्त्याश्चमर्द्दयेद्दिवसत्रयम्।
कृत्वागोलञ्चसंशोष्यक्षिप्त्वामूषांनिरुन्धयेत्॥ ८॥
शोषयित्वाधमेत्किंचित्सुतप्तांतांजलेक्षिपेत्।
तस्माद्रसंसमुद्धृत्यत्रिकण्टरसभावितम्॥ ९॥
योजयेत्सर्वरोगेषुधमेद्वाभूधरेपचेत्।
रसार्द्धंगंधकंमर्द्यंघृतैर्युक्तन्तुगोलकम्॥ १०॥
कृत्वातंबन्धयेद्वस्त्रेदोलायंत्रगतंपचेत्।
गोमूत्रान्तकृतंयामंनरमूत्रैर्दिनत्रयम्॥ ११॥
शोषयेच्चपुनर्वस्त्रेबद्ध्वावेष्टयंसदादृढम्।
शुष्कंनिरुन्ध्यमूषायांततस्तुषाग्निनापचेत्॥ १२॥
ऊर्ध्वभागमधःकृत्वाअधोभागंचऊर्ध्वगम्।
इत्यादिपरिवर्त्तैनस्वेदयेद्दिवसत्रयम्॥ १३॥
पश्चादुद्धृत्यतंसूतंयोगवाहंरुजापहम्॥ १४॥

अर्थ-गंधक, मोम और शुद्धपारा, यह सर्व समानभाग लेकर एक प्रहर पर्यन्त खरलमें खरलकरकै एक काँचकी शीशीमें रख डेढ़दिन वालुकायंत्रमें पकावै फिर शीतल होनेपर शीशीको फोड़ ऊपरके गंधकको छोड़ नीचैके पारेको ग्रहणकर सर्वरोगोंमें प्रयोगकरै। दोभाग पारा चारभाग गंधक और एकभाग सैंधानोन, इन सबको तीनदिन

श्वेतजयन्तीके रसमें मर्द्दनकर गोला बनालेवै, उसगोलेको सुखाकर मूषामें रख रोधनकरै, फिर सुखाकर कुछेक फूँके फिर गरमकर जलमें छोडे, शीतल होनेपर उसमेंसे पारेको निकालकर कटेरी, बडीकटेरी और गोखरूके रसमें भावना देकर भूधरयंत्रमें पकाले. इसको सबयोगोंमें योजना चाहिये । एकभाग गंधक और दोभाग पारा, इनदोनोंको घृतमें मर्द्दन करके गोला बनालेवै, उसगोलेको वस्त्रमें बाँधकर दोलायंत्रमें पचाले, फिर उसको एकप्रहर गोमूत्रमें और तीनदिन नरमूत्रमें खरल करकै सुखालेवै, फिर वस्त्रमें बाँधकर मूषामें रखकै तुषाग्निसे पकाले, तदनंतर नीचेके भागको ऊपरकी ओर और ऊपरके भागको नीचेकी ओर करै, इसप्रकार परिवर्त्तन करकै तीनदिन पर्यन्त स्वेदनकरै, फिर पारेको ग्रहण करै, वह पारा योगवाही और सर्वरोग नाशक जानना ।५।६। ।७।८।९।१०।११।१२।१३।१४॥

सद्योजातस्यबालस्यविष्ठापालाशबीजकम् ।
चण्डालीरुधिरंसूतंसूतपादंचटंकणम् ॥ १५ ॥
जयन्त्यामर्द्दयेद्द्रावैर्दिनैकंतन्तुगोलकम् ।
पेषयेत्सहदेव्याथलेपयेत्ताम्रसंपुटम् ॥ १६ ॥
तन्मध्येगोलकंक्षिप्त्वाद्वियामंस्वेदयेल्लघु ।
वालुकायंत्रमध्येतुसमुद्धृत्यततःपुनः ॥ १७ ॥
चित्रकैःसहदेव्याचगंधकैर्लेपयेद्बहिः ।
संपुटंबन्धयेद्वस्त्रेमृदालेप्यचशोषयेत् ॥ १८ ॥
तंरुद्ध्वाअन्धमूषायांध्मातेसंपुटमाहरेत् ।
सूक्ष्मचूर्णंहरेद्रोगान्योगवाहोमहारसः ॥ १९ ॥
संपुटंसूततुल्यंस्याच्छास्त्रदृष्टेनकर्म्मणा ॥ २० ॥

अर्थ-तत्कालके उत्पन्नहुए बालककी विष्ठा, ढाकके बीज, चण्डालीकारुधिर, पारा और पारेसे चौथाभाग सुहागा इनसबको एकत्र करके जयन्तीके रसमें एकदिन खरलकरै, फिर उसका गोला बनालेवै, फिर सहदेईको पीस उसके रससे ताम्रसंपुटमें लेपकरकै तिसके बीचमें गोलारख वालुकायंत्रमें दोप्रहर पर्यंत अग्निदेवै, तदनंतर चीता, सहदेवी

और गंधकका बाहर लेप करै; फिर संपुटको वस्त्रमें बांधकर मट्टीके गारे-का लेप कर सुखादेवै, फिर उस संपुटको अंधमूषामें रख धोंकके पकावै, फिर पारेको निकाल उसका सूक्ष्म चूर्णकर सब रोगोंमें व्यव-हार करै। शास्त्रके मतसे संपुट पारेके समान होना चाहिये ॥ १५॥ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥

धत्तूरकद्रवैर्मर्द्यंदिनंगंधंससूतकम् ।
अन्धमूषेदिनंस्वेद्यंभूधरेमूर्च्छितोभवेत् ॥ २१ ॥
कृत्वाषडंगुलांमूषांसुपक्कांमृन्मयींदृढाम् ।
मूषागर्भंविलेप्याथमुलैर्बहुलपत्रकैः ॥ २२ ॥
तन्मध्येसूतकंक्षिप्त्वामूषापूर्यांतुतद्द्रवैः ।
रुद्ध्वासलवणैर्यन्त्रैश्चुल्ल्यांदीप्ताग्निनापचेत् ॥ २३ ॥
सप्ताहान्तेसमुद्धृत्ययवमात्रंज्वरापहम् ।
काशीशंसैन्धवंसूतंतुल्यंतुल्यंविमर्दयेत् ॥ २४ ॥
काशीशस्यास्यभागेनदातव्याफुलतुरिका।
स्तोकंस्तोकंक्षिपेत्खल्वेत्रययामञ्चमूर्च्छयेत् ॥ २५ ॥
प्रत्येकंशतनिष्कंस्यादूनंनैवाधिकंभवेत् ।
स्थालीसंपुटयंत्रेणादिनंचंडाग्निनापचेत् ॥ २६ ॥
ऊर्द्धलग्नंततश्चुल्ल्यांमूर्च्छितंचाहरेत्सुतम् ।
कुरण्टकरसैर्भाव्यमातपेमर्दयेद्रसम् ॥ २७ ॥
लताकरंजपत्रैर्वाअंगुष्ठेनविमर्दयेत् ।
दिनैकंमूर्च्छितःसम्यक्सर्वरोगेषुयोजयेत् ॥ २८ ॥
अथसूतस्यशुद्धस्यमूर्च्छितस्याप्ययंविधिः ।
सूततुल्यंघृतंजीर्णंद्वाभ्यांतुल्यंचगंधकम् ॥ २९ ॥
रविक्षीरैर्दिनंमर्द्यंमंधायित्वातुभूधरे ।
पुटकेनभवेत्सिद्धोरसोहैरण्यगर्भकः ॥ ३० ॥

अर्थ–समानभाग गंधक और पारेको लेकर धतूरेके रसमें एक दिन खरल करै फिर अन्धमूषामें डाल भूधरयंत्रके द्वारा पचानेसे पारा मूर्च्छित होजाताहै । छै अंगुल प्रमाण उत्तममट्टीकी मूषा (घडिया) बनाकर अग्निमें पका तैय्यार करले, उस मूषाके मध्यभागको लालसैंजिनेके और मूलीके पत्तोंके रससे लेप देवै, फिर मूषामें पारेको डाल सैंजिनेके रससे मूषाको भर मुखको बंदकर चूलेपै धर सातदिन दीप्ताग्निद्वारा लवणयंत्रमें पकावै, फिर संपुटमेंसे निकाल जौकी बराबर देनेसे यह पारा सबप्रकारके ज्वरोंको हरता है । हीराकासीस सैंधानोन, फुल्वतुरिका और पारा, यह प्रत्येक दोसै दोसै तोले लेकर सबको एकत्र करके तीन प्रहर पर्यन्त खरल करै, फिर स्थाली संपुटयंत्रमें प्रचण्डअग्निसे पकावै, फिर यंत्रके ऊपरके पात्रमें उड़कै लगेहुए पदार्थ छुटालेवै, इस प्रकार पारा मूर्छित होताहै । सूर्यकी धूपमें कटसरैयाके रसमें पारेको भावना देकर मर्दन करै, अथवा करंजुवाके पत्तोंके रसमें अंगूठेसे मर्द्दन करै, इसप्रकार एकदिन भलेप्रकार मूर्च्छित किये हुए पारेको सर्व रोगोंमें देना चाहिये । एक भाग पारा एक भाग पुरानाघी, और दो भाग गंधक, इन सबको एकत्र करके आकके दूधमें एक दिन खरल करै, फिर घड़ियामें डाल भूधरयंत्रमें पुटपाक करैतो हैरण्यगर्भरस सिद्ध होजाता है ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥

इति मूर्च्छनाधिकारः ।

अथ रसबंधनं यथा ।

कटुतुम्ब्युद्भवेकन्देवंध्यायाःक्षीरकन्दके ।
अपक्केकंसमादायतद्गर्भेपिण्डकाततः ॥ ३१ ॥
दशनिष्कंशुद्धसूतंनिष्कैकंशुद्धगंधकम् ।
स्तोकंस्तोकंक्षिपेद्गन्धंपाषाणेतुचकुट्टयेत् ॥ ३२ ॥
याममात्रेभवेत्पिण्डीरसकन्देविनिक्षिपेत् ।
अधोर्ध्वेभस्मवैक्रान्तंदत्त्वानिष्कार्द्धमात्रकम् ॥ ३३ ॥
ततःकन्दस्यमज्जाभिर्मुखंबद्धामृदादृढम् ।
लिप्तामंगुलमानेनसर्वतःशोष्यगोलकम् ॥ ३४ ॥

पाचयेद्भूधरेयन्त्रेतथोद्धृत्यपुनःपचेत् ।
ऊर्द्ध्वंभागमधःकुर्यादित्येवंपरिवर्तयेत् ॥ ३५ ॥
क्रमेणचालयेदूर्द्ध्वंबहिर्युग्मोत्पलैःपचेत् ।
ततोभिन्नस्तुसंग्राह्योबद्धःस्याद्दाडिमोपमम् ।।
नाम्नावैक्रान्तबद्धोऽयंसर्वरोगेषुयोजयेत् ॥ ३६ ॥

अर्थ–कडवीतोंबीका कन्द, वा बाँझककोडोकाकन्द अथवा विदारी कन्दकेबीचमें २० वीसतोले शुद्धपारा और दोतोले शुद्धगंधक देकर पत्थरके ऊपर होले होले एकप्रहर पर्यन्त कूटे,फिर उसका गोला बनाले, उस गोलेको लाल प्याजके भीतर फिर नीचेको और ऊपर एक तोला वैक्रान्तमणिकी भस्म देवै, फिर पूर्वोक्तकन्दकी मज्जासे उसके मुखको बंदकर मट्टीके गारेका एक अंगुल ऊंचा लेपकर सुखादेवै, फिर भूधर-यंत्रमें पकावै, फिर पकाकर निकाललेवै और फिर इसी प्रकारसे पकावै, फिर उसके ऊर्द्ध्वभागको नीचै और नीचैके भागको ऊपर करै इस प्रकार क्रमसे परिवर्त्तन करकै दो उपलोंकी अग्निके द्वारा पकावै, इस प्रकार करनेसे पारा अनारकी समान बद्ध होजाताहै और इसको वैक्रान्तबद्ध कहते हैं, यह सर्वरोगोंमें देना चाहिये ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥

अथवा गन्धपि[illegible]

[illegible]रीनांवस्त्रेबद्धातुगन्धकम ।
तुल्यंदत्त्वानिरुन्ध्याथसंपुटेलोहजहृढे ॥ ३७ ॥
पुटयेद्भूधरेतावद्यावज्जीर्यतिगन्धकम् ।
एवंपुनःपुनर्देयंयावद्गन्धस्तुषड्गुणम् ॥ ३८ ॥
इत्येवंगंधकेबद्धःसूतःस्यात्सर्वरोगजित् ।
मूषाजम्बीरविस्तारादैर्घ्येणषोडशांगुला ॥ ३९ ॥
अपक्वासुदृढाकार्यासिकताभाण्डमध्यगा ।
त्रिभागंवालुकालग्नापादांशेनबहिःस्थिता ॥ ४० ॥
पलैकंचूर्णितंगंधंमूषामध्येविनिक्षिपेत् ।
शुद्धसूतंसमंपश्चात्क्षिपेद्गन्धपलंततः ॥ ४१ ॥

भाण्डमारोपयेच्चुल्ल्यांमूषामाच्छाद्ययत्नतः ।
मन्दाग्निनापचेत्तावद्यावन्निर्धूमतांव्रजेत् ॥ ४२ ॥
गन्धधूमेगतेपूर्याकाकमाचीद्रवैस्तुसा ।
द्रवेजीर्णेपुनःपूर्यानागवल्लीदलद्रवैः ॥ ४३ ॥
यावज्जीर्यतितद्गन्धंकाकमाच्यादिभिःपुनः ।
दत्त्वादत्त्वापचेत्तद्वद्धत्तूरादिक्रमाद्रसम् ॥४४ ॥
भित्त्वामूषांसमादायज्वरव्याधिहरोरसः ।
योजयेद्गन्धबद्धोऽयंयोगवाहेषुसर्वतः ॥ ४५ ॥

अर्थ-अथवा समानभाग पारा और गंधकको वस्त्रमें दृढ़ बाँध पोटली-बना लोहके सम्पुटमें रख भूधरयंत्रमें पचावै, जबतक गंधक जीर्णहो तबतक वारंवार गंधक देवै,और जारणकरै इसप्रकारछैगुने गंधकको जारण करनेसे गंधकबद्ध पारा बनताहै, यह पारा सर्वरोगनाशकहै । जम्बीरी नीबूके समान चौड़ी, सोलह अंगुल लम्बी कच्ची और दृढ़ ऐसी घडिया बनावै, उसको रेतेसे भरेहुए बरतनमें धरदेवै और उसके भीतर तीन भाग रेता लगरह हो, एक भाग रेता बाहिर लगाहो, उस घडियामें प्रथम आठतोले गंधकका चूरन, और आठतोले शुद्धपारा तथा तिसके ऊपर आठतोले गंधकका चूरणडाले, फिर बरतनको चूलेपै धर मूषाको यत्नपूर्वक दृढकर जबतक धुआँ न निकले तबतक मृदुअग्निसे पकावै, जब गन्धकका धुआँ निकलजाय तब मकोयके रससे मूषाको भरदेवै, फिर जब मकोयका रसभी जल जावै, तब पानोंके रससे मूषाको भरदेवै, जब पकनेसे पानोंका रसभी जल जावै तब धतूरेका रस मूषामें भरदेवै और फिर जब धतूरेका रसभी जलजावै तब फिर मकोयादिके रसोंसे मूषाको भरता रहे, इसप्रकार क्रमसे वारंवार धतूरे-आदिके रससे भरकर पचावै फिर पकनेपर मूषाको तोड़ उसमेंसे पारेको ग्रहण करै, यह गंधबद्धपारा ज्वरादि सर्वरोगोंको नाश करै है और सर्वकार्योंमें देनाचाहिये ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥

कज्जलाभोयदासूतोविहायघनचापलम् ।
मूर्च्छितःसतदाज्ञेयोरसविज्ञानविन्नरैः ॥ ४६ ॥

माधुर्यगौरवोपेतस्तेजसाभास्करोपमः।
वह्निमध्येयदातिष्ठेत्तदावृक्षस्यलक्षणम्॥ ४७ ॥

अर्थ-जब पारा कज्जलकीसमान होजावै, घन अर्थात् भारीपन और चपलताको छोड देवै तब वह मूर्च्छित कहा जाता है । यह मूर्छित पारा मधुरता और गौरवतायुक्त, सूर्यकीसमान तेजस्वी और अग्निमें रखनेसे वृक्षके लक्षणोंको करनेवाला होता है ॥ ४६ ॥ ४७ ॥

दीपिका।

सजयतिरसराजोमृत्युशंकापहारी।
सकलगुणनिधानःकायकल्पाधिकारी।
वलिपलितविनाशंसेवनाद्वीर्यवृद्धिं
स्थिरमपिकुरुतेयःकामिनीनांप्रसंगे ॥ ४८ ॥
इत्येतेमारिताःसूतामूर्च्छिताबद्धमागताः।
प्रत्येकंयोगवाहःस्यात्तत्तद्योगेषुयोजयेत् ॥ ४९ ॥
मारितंदेहसिद्ध्यर्थंमूर्च्छितंव्याधिनाशनम्।
रसभस्मक्वचिद्रोगेदेहार्थेमूर्च्छितंक्वचित् ॥५०॥
बद्धंद्वाभ्यांप्रयुंजीतशास्त्रदृष्टेनकर्म्मणा।
दन्तेशृंगेऽथवावंशेरक्षयेत्साधितंरसम् ॥ ५१ ॥
पारदंक्रिमिकुष्ठघ्नंबल्यमायुष्यदृष्टिदम्।
सेवनात्सर्वरोगघ्नंरुच्यंगुरुकषायकम्॥ ५२ ॥
सूतेगुणानांशतकोटिवज्रे।
चाभ्रेसहस्रंकनकेशतैकम्॥
तारेगुणाशीतितदर्द्धकान्ते।
तीक्ष्णेचतुःषष्टिरवौतदर्द्धम् ॥ ५३ ॥
रसादिभिर्याक्रियतेचिकित्सा ।
दैवीतिसद्भिःपरिकीर्त्तितासा ॥

सामानुषीमंत्रहृताशिफाद्यैः ।
साराक्षसीशस्त्रकृतादिभिर्या ॥ ५४ ॥

इति श्रीपार्वतीपुत्रनित्यनाथसिद्धविरचिते रसरत्नाकरे रसखण्डे चतुर्थोपदेशः ॥ ४ ॥

अर्थ–मूर्च्छितपारा–मृत्युनाशक, सकलगुणजनक, कल्पकालपर्यन्त कायकी रक्षाकरनेवाला, वलि (शरीरमेंवलपडने) पलित (विनासमयही वालोंका श्वेतहोजाना) विनाशक, वीर्यवर्द्धक और स्त्रीसंगमें वीर्यको स्थिरकरनेवालाहै ॥४८॥ मारित, मूर्च्छित और बद्ध, यह तीनों पारे योगवाह कहें;इनको अनेक प्रकारके योगोंमें योजना चाहिये।॥४९॥ तहाँ मारित पारा देहकी सिद्धिके लिये और मूर्च्छित पारा रोगोंको दूरकरनेके लिये सेवनकरना चाहिये। और कहीं पारेकी भस्म रोगोंको नाश करनेके लिये और कहीं मूर्च्छित पारा देहकी सिद्धिके लिये प्रयोग करा जाता है ॥५०॥ और बद्धपारा रोगोंको हरनेके और देहकी सिद्धि इनदोनोंके लिये दिया जाता है। सिद्ध कियेहुए पारेको हाथीआदिके दांतोंमें, भैंसआदिके सींगोंमें अथवा वांसके भीतर रखना चाहिये. पारेको सेवन करनेसे कृमिरोग और कुष्ठरोग नष्ट होतेहैं; बल और आयुकी वृद्धि होतीहै, दृष्टिको बढानेवाला, रुचिकारक, भारी, कषेला और सर्वरोगनाशक है ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ पारेमें सौकरोड़ गुणहैं,हीरे और अभ्रकमें हजारगुण हैं, सुवर्णमें सौ गुणहैं, चान्दीमें ८० अस्सी, कांत लोहमें चालीस, तीक्ष्ण लोहमें चौसठ, और तांबेमें बत्तीस गुण रहतेहैं ॥ ५३ ॥ रसादिकके द्वारा जो चिकित्सा करी जाती है उसको दैवी, मंत्रमूलादिकके द्वारा जो चिकित्सा करी जातीहै उसको मानुषी और शस्त्रादिकके द्वारा जो चिकित्सा करी जाती है उसको राक्षसी चिकित्सा कहतेहैं ॥ ५४ ॥

इति श्रीरसरत्नाकरे रसखण्डे प्रदीपिकाभाषाटीकायां भिषक्-शालिग्रामवैश्यकृतचतुर्थोपदेशः समाप्तः ।

अथातउपरसशोधनमारणमाह ।

गंधकंवज्रवैक्रान्तंवज्राभंतालकंशिला ।

खर्परंशिखितुत्थंचविमलाहेममाक्षिकम् ॥ १ ॥
कौषिकंकान्तपाषाणंवराटीमथहिंगुलम् ।
कंकुष्ठंशंखभूनागंटंकणंचशिलाजतु ॥ २ ॥
एतेउपरसाःशोध्यामार्याद्राव्याःपुटेक्कचित् ॥ ३ ॥

अर्थ-गंधक, हीरा, वैक्रान्त, सफेदअभ्रक, हरताल, मैनशिल, खपरिया, नीलाथोथा, रूपामाखी, सोनामाखी, गूगल, कांतपाषाण, कौड़ी, सिंगरफ, कंकुष्ठ, शंख, भूनाग, सुहागा और शिलाजीत, इनसबको उपरस कहतेहैं। इनको शोधन, मारण और द्रावण करना ॥१।२।३॥

अथ गंधकमारणमाह।

अपक्कगंधंकुरुतेऽतिकुष्ठं
तापंभ्रमंपित्तरुजाङ्करोति।
रूपंसुखंवीर्यबलंचहन्ति
तस्मात्सुशुद्धंविधियोजनीयम् ॥ ४ ॥

अर्थ-अशुद्धगंधक- कुष्ठ, ताप, भ्रम, पित्तरोग, इनको उत्पन्नकरैहै। तथा रूप, सुख, वीर्य और बलको हरैहै। इसकारण गंधकको शुद्धकरकै सेवनकरना चाहिये ॥ ४ ॥

अथ गंधकशुद्धिः।

साज्यंभाण्डेपयःक्षिप्त्वामुखंवस्त्रेणबंधयेत् ।
तत्पृष्ठेचूर्णितंगंधंक्षिप्त्वास्रावेणशोधयेत् ॥ ५ ॥
भाण्डंनिक्षिप्यभूम्यन्तेऊर्ध्वंदेयंपुटंलघु ।
ततःक्षीरेद्रुतंगंधंशुद्धंयोगेषुयोजयेत् ॥ ६ ॥
अथवार्कस्नुहीक्षीरैर्वस्त्रंलेप्यश्चसप्तधा ।
गंधकंनवनीतेनपिष्ट्वावस्त्रंप्रलेपयेत् ॥ ७ ॥
तद्वर्ह्निज्वालितादेशेदत्त्वाधार्याह्यधोमुखा ।
तैलंपतेदधोभांडेग्राह्यंयोगेषुयोजयेत् ॥ ८ ॥

शुद्धोगन्धोहरेद्रोगान्कुष्ठमृत्युज्वरादिकान् ।
अग्निकारीमहानुष्णोवीर्यवृद्धिंकरोतिच ॥ ९ ॥

अर्थ–घृतसंयुक्तदूधको एक पात्रमें करलेवै, उस पात्रके मुखको कपडेसे बन्द करदेवै, फिर उस कपडेपै गंधकका चूरन रख,उसपै सरैया रखदेवै फिर पृथ्वीमें गढ्ढा खोद उसगढ्ढेमें बरतनको रखदेवै, ऊपर लघु पुट देनेसे गंधक झरकर दूधमें गिरे; इसप्रकार गंधककी शुद्धि होती है । यह शुद्धगंधक सर्वयोगोंमें देना चाहिये । अथवा आकका दूध और सेहुण्डका दूध इन दोनों दूधोंमें वस्त्रको लेपितकर फिर गंधकको माखनमें पीस, उक्तवस्त्रको सातवार लेपे,फिर उसकी बत्ती बनालेवै, फिर उनबत्तीयोंमें अग्निलगा नीचैको मुखकरदेवै, उनजलतीहुई बत्तीयोंसे गिरते हुये तेलकी बूँदोंको पात्रमें लेताजावै, पात्रमें तेलके जमजानेपर शुद्धगंधक बनजाताहै, इह गंधक सर्व योगोंमें योजना चाहिये । शुद्ध गंधक–कुष्ठ,मृत्यु और ज्वरादिक रोगोंको हरैहै, अग्निजनक, अत्यन्तगरम और वीर्यवर्धकहै ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥

अथ वज्रमारणमाह ।

व्याघ्रीकन्दयुतंवज्रंदोलायंत्रेणपाचितम् ।
सप्ताहात्कोद्रवक्काथेकौलत्थेविमलंभवेत् ॥ १० ॥
त्रिसप्तकृत्वस्तत्तप्तंखरमूत्रेणसेचयेत् ।
षड्गुणैस्तालकंपिष्ट्वातद्गोलेकुलिशंक्षिपेत् ॥ ११ ॥
प्रध्मातंवाजिमूत्रेणसिक्तंपूर्वोदितक्रमैः ।
भस्मीभवतितद्वज्रंवज्रवत्कुरुतेतनुम् ॥ १२ ॥
ऊर्णासुशृंगंपरिपिष्यपिण्ड-
मेतस्यमध्येतुनिधायवज्रम् ।
पिण्डेऽथवाधायचवज्रवल्याः
पुटत्रयंतस्यरसेविदध्यात् ॥ १३ ॥
मृत्युरेवंभवेदस्यवज्राख्यस्यनसंशयः ॥ १४ ॥

अर्थ–व्याघ्रीकन्दके साथ हीरेको दोलायंत्रमें पकाके सातदिन कोदोंके काथमें और कुलथीके काथमें भिजोवै, फिर इक्कीसवार आगमें गरमकरकै इक्कीसवार गधेके मूत्रमें बुझावै तौ हीरा भस्मरूप होजायगा. हीरेसे छैगुनी हरतालले उसका गोलाबना उस गोलेमें हीरेको रख दोलायंत्रमें पकावै और घोडेके मूत्रमें बुझालवै, फिर अग्निमें गरमकर पूर्वोक्त कोद्रवादिके काथमें भिजोवै, इसप्रकार करनेसे हीरेकीउत्तम भस्म बनजाती है और इस भस्मको सेवन करनेसे शरीर वज्रकीसमान होजाता है। मेढ़ासिंगीको पीस उसका गोलाबना उसमें हीरेको रखकर अथवा हडसंघारीके गोलेमें हीरेको रखकर उनके रसमें तीनपुटदे, दोलायंत्रमें पकावै; इसप्रकार हीरेकी निःसन्देह भस्म होजाती है ॥ १४॥

विशेषमाह।

अशुद्धवज्रमायुर्घ्नंपीडाकुष्ठंकरोतिच ।
पाण्डुतापगुरुत्वंचतस्माच्छुद्धन्तुमारयेत् ॥ १५ ॥
श्वेतरक्तपीतकृष्णाद्विजाद्यावज्रजातयः ।
रसायनेभवेद्विप्रःश्वेतःसिद्धिप्रदायकः ॥ १६ ॥
क्षात्रियोमृत्युजिद्रक्तोवलीपलितरोगहा ।
द्रवकारीभवेद्वैश्यःपीतोदेहस्यदाहकृत् ॥ १७ ॥
कृष्णःशूद्रोरुजांहन्तिवयस्थैर्यंकरोतिच ।
पुंस्त्रीनपुंसकाश्चैतेलक्षणेनतुलक्षयेत् ॥ १८ ॥
वृत्ताःफलकसंपूर्णातेजस्वान्ताबृहद्भवाः ।
पुरुषास्तेसमाख्यातारेखाबिन्दुविवर्जिताः ॥ १९ ॥
रेखाबिन्दुसमायुक्ताःषट्कोणास्तास्त्रियःस्मृताः ।
त्रिकोणापत्तनादीर्घाविज्ञेयास्तानपुंसकाः ॥ २० ॥
पूर्वपूर्वमिमेशस्ताःपुरुषाबलवत्तराः ।
शरीरकान्तिजनकाभोगदावज्रयोषितः ॥ २१ ॥
नपुंसकास्त्वल्पवीर्याःकामकाःसत्त्ववर्जिताः ।

स्त्रीतुस्त्रीणांप्रदातव्याक्लीबंक्लीबेतथैवच ॥ २२ ॥
सर्वेषांसर्वदायोज्याःपुरुषाबलवत्तराः ॥ २३ ॥

अर्थ-अशुद्धहीरा-आयुनाशक,तथा पीडा, कोढ़, पाण्डु, दाह और भारीपन, इनको उत्पन्न करैहै, इसकारण प्रथम शोधकर फिर मारना चाहिये ॥ १५ ॥ सफेद,लाल, पीत और कृष्ण, यह चारों प्रकारके हीरे क्रमसे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रजातिके जानने । अर्थात् सफेदरंगका हीरा ब्राह्मण,लालरंगका हीरा क्षत्रिय,पीलेरंगका हीरा वैश्य और कालेरंगका हीरा शूद्र जानना। रसायनकर्ममें सफेदरंगका ब्राह्मण हीरा लियाजाताहै और यह सिद्धिदायकहै ॥ १६ ॥ लालरंगका क्षत्रिय हीरा- मृत्यु और वलीपलितनाशकहै । पीलेरंगका वैश्यहीरा- द्रव्यजनक और देहको दृढ़ करैहै ॥ १७ ॥ और कालेरंगका शूद्रहीरा- रोगोंको हरनेवाला और अवस्थाको स्थापन करनेवालाहै । अबहीरेके स्त्री,पुरुष और नपुंसक, इन तीन लक्षणोंको कहतेहैं ॥ १८ ॥ जोहीरा- गोलाकार, गट्टेदार, कान्तियुक्त, बड़ेआकारवाला, और रेखा तथा बिन्दुओंसे रहितहो उसको पुरुष जानना ॥ १९ ॥ जोहीरा रेखा और बिन्दुसहितहो, और षट्कोनवालाहो, उसको स्त्री जानना । तीन- कोनवाला,और लंबाहो,उसको नपुंसकहीरा कहतेहैं॥२०॥यह तीनोंप्रकारके हीरे पूर्वानुक्रमसे उत्तम जानने,अर्थात् नपुंसकहीरेसे स्त्रीहीरा और स्त्री हीरेसे पुरुषहीरा उत्तमहै ।पुरुषहीरा-अत्यंतबलकारक, और कान्तिजनक है । स्त्रीहीरा भोगदायकहै । और नपुंसक हीरा- अल्पवीर्यवाला, कामक और सत्ववर्जितहै । स्त्रीहीरा स्त्रियोंको, नपुंसकहीरा नपुंसकोंको, और पुरुषहीरा सब मनुष्योंको सर्वकालमें सेवनकरना चाहिये॥२१॥२२॥२३॥

गृहीत्वातुशुभंवज्रंव्याघ्रीकन्दोदरेक्षिपेत् ।
महिषीविष्टयालेप्यंकरीषाग्नौविपाचयेत्॥ २४ ॥
निशायान्तुचतुर्यामंनिशान्तेवाश्वमूत्रके ।
सेचयेत्तानिप्रत्येकंसप्तरात्रेणशुध्यति ॥ २५ ॥
मेघनादाशमीश्यामाशृंगीमदनकोद्रवम् ।
कुलत्थंवेतसंचाथअगस्त्यंसिन्धुवारकाः ॥ २६ ॥

एतेषांसज्जलैःक्काथैर्वज्रंजम्बीरमध्यगम् ।
दोलायन्त्रेत्र्यहंपाच्यमेवंवज्रंविशुद्धये ॥ २७ ॥
कुलत्थकोद्रवक्काथेदोलायंत्रेविपाचयेत् ।
व्याघ्रीकन्दमतंवज्रंसप्ताहाच्छुद्धिमिच्छति ॥ २८ ॥
व्याघ्रीकन्दगतंवज्रंमृदालिप्तंपुटेपचेत् ।
अहोरात्रात्समुद्धृत्यहयमूत्रेणसेचयेत् ॥ २९ ॥
वज्रीक्षीरेणवासिंचेदेवंशुद्धश्चमारयेत् ॥ ३० ॥

अर्थ–उत्तमहीरेकोलेकर व्याघ्रीकंदके बीचमें रख भैंसके गोबरका लेप-कर अन्यउपलोंकी आगसे रात्रिमें चारप्रहर पका रात्रिके अन्तमें घोडेके मूत्रमें बुझालेवे, इसप्रकार सातरात्रि पकानेसे हीरा शुद्ध होजाताहै । जम्बीरी नीबूके बीचमें हीरेकोरख दोलायंत्रमें पकाकर चौलाई, शमी, करियावासौंऊ, काकड़ाशिंगी, मैनफल, कोदों, कुलथी, वैंत, अगस्तिया, और सह्यालुके क्काथमें बुझालेतो हीरा शुद्ध होजावे । कटेरीके कन्दके बीचमें हीरेको रख फिर कुलथी और कोदोंके क्काथमें दोलायंत्रके द्वारा सातदिन पकानेसे हीरा शुद्ध होजाता है । कटेरीकन्दमें हीरेको स्थापित-कर मट्टीके गारेसे लेपकर गजपुटमें एकरात्रिपर्यन्त पचा फिर घोडेके मूत्रमें अथवा सेहुंडके दूधमें सेवनकरनेसे हीरा शुद्ध होजाता है. इस प्रकार हीरेको प्रथम शुद्धकर पीछे मारना ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥

विप्रजात्यादिवज्राणांमारणंकथ्यतेपुनः ।
अश्वत्थबदरीझिण्टीमाक्षिकंकर्कटास्थिच ॥ ३१ ॥
तुल्यंस्नुहीपयःपिष्ट्वावज्रंतद्गोलकेक्षिपेत् ।
रुद्धागजपुटेपच्याद्विप्रजातिर्मृतोभवेत् ॥ ३२ ॥
करवीरंमेषशृंगंबदरञ्चउदुम्बरम् ।
अर्कदुग्धंसमंपिष्ट्वाविप्रवन्मारयेन्नृपम् ॥ ३३ ॥
बलांचातिबलांगंधंपेषयेत्कच्छयास्थिच ।
एतैर्वावारुणीदुग्धैर्म्रियतेवैश्योविप्रवत् ॥ ३४ ॥

शूरणंलशुनंशंखंसमंपेष्यंमनःशिला ।
वटक्षीरेणमूषान्तर्विप्रवच्छूद्रमारणम् ॥ ३५ ॥
स्त्रियस्तेषांम्रियन्तेचतत्तदौषधयोगतः ।
नपुंसकमृतिस्तेषांचतुर्णामौषधैःसमम् ॥ ३६ ॥

अर्थ-अब ब्राह्मणजाति आदिके हीरोंका मारण कहतेहैं- पीपल, वेरी, कटसरैया, सोनामाखी, केकडेकी हड्डी और थूहरकादूध, इन सबको समान भागलेकर खरलकरै फिर उसका गोलाबनाकर उसमें ब्राह्मणजातिका हीरा रख गजपुटमें पचानेसे हीरेकी भस्म होजातीहै। कनेर, मेढाशिंगी, वेर और गूलर, इन सबको समानभाग लेकर आकके दूधमें खरलकर गोलाबनालेवै, उस गोलेमें क्षत्रियहीरेको रख गजपुटमें पकानेसे हीरेकी भस्म होजाती है। खिरैटी, कंघी, गंधक और कछुवेकी हड्डी इन सबको समान भागलेकर इन्द्रायनके दूधमें खरलकर गोलाबनालेवै उसगोलेमें वैश्यहीरेको रख गजपुटमें पचानेसे भस्म होजातीहै। जमीकन्द, लशुन, शंख और मैनसिल, इनसबको समान भागलेकर बड़के दूधमें पीसकर खरल करै, फिर उसका गोलाबनाकर उसगोलेमें शूद्रहीरेको रख गजपुटमें पचानेसे हीरेकी भस्म होजातीहै। स्त्रीजातिका हीरा उन्हीं उन्हीं औषधोंके योगसे और नपुंसकजातिका हीरा चारों प्रकारकी औषधोंसे माराजाताहै ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥

अथसमुदायेनवज्रमारणमाह.

द्विवर्षरूढकापासैमूलंकान्तमुखैःसह ।
नारीस्तन्येनसंपिष्यपिष्ट्वाध्मातंसुतंभवेत् ॥ ३७ ॥
मेषशृंगभुजंगास्थिकूर्मपृष्ठाम्लवेतसैः ।
गजदन्तसमंपिष्ट्वावज्रीदुग्धेनगोलकम् ॥ ३८ ॥
कृत्वातन्मध्यगंवज्रंम्रियतेधमनेनच ।
त्रिवर्षनागवंध्यास्तुकापासस्याथमूलिका ॥ ३९ ॥
पिष्ट्वातन्मध्यगंवज्रंकृत्वामूषांनिरोधयेत् ।

पचेद्गजपुटेतद्धिम्रियतेसप्तधापुटैः ॥ ४० ॥
मत्कुणानान्तुरक्तेनसप्तधातपशोषितम् ।
कुलिशंभावितंतद्वच्चूर्णितापिमनःशिलाः ॥ ४१ ॥
लिप्त्वाचबदरीपत्रैर्वेष्टयित्वापुटेपचेत् ।
पुनर्लेप्यंपुनःपाच्यंसप्तधाम्रियतेऽपिच ॥ ४२ ॥
वज्रंमहानदीशुक्तौक्षिप्रंभाव्यंमुहुर्मुहुः ।
स्नुह्यर्कोन्मत्तकन्यानांद्रवेणैकेनचाह्निकम् ॥ ४३ ॥
कृष्णकर्कटमांसेनपिष्टितंवेष्टयेद्बहिः ।
भूनागस्यमृदासम्यग्ध्मातेभस्मत्वमाप्नुयात् ॥ ४४ ॥
रक्तोत्पलस्यमूलैश्चमेघनादस्यकुड्मलैः ।
पिण्डितैर्वेष्टितंध्मातंवज्रंभस्मभवत्यलम् ॥ ४५ ॥
वज्रमायुर्बलंरूपंदेहसौख्यंकरोतिच ।
सेवितोहन्तिरोगांश्चमृतोवज्रोनसंशयः ॥ ४६ ॥

अर्थ–दोवर्षकी कपासकी जड़, और घीकुवार इनदोनोंको स्त्रीके दूधमें पीस गोला बना उसगोलेमें हीरेको रख आगजलानेसे हीरा मरजाताहै। मेढ़ाके सींग,सांपकीहड्डी, कछुएकी पींठ,हाथीके दांत, और अमलवेंत यह सबसमान भाग लेकर सेहुंडके दूधमें बारीक पीस गोला बनालेवै, उसगोलेके बीचमें हीरेको रख अग्नि जलानेसे हीरा मरजाताहै। तीनबरसकी नागदमन वा कपासकी जड़को पीसकर गोलाबना, उसगोलेमें हीरेको रख गजपुटमें सातबार पचानेसे हीरेकी भस्म होजातीहै। मच्छरोंके रुधिरमें हीरेको सातवार भिगोकर धूपमें सुखादेवै, फिर मैनशिलका चूरणकर उसके ऊपर लेपकर बेरीकेपत्तोंसे बाँधदेवे, फिर सातवार गजपुटमें पकानेसे हीरेकी भस्म होजातीहै। बड़ी नदीमें उत्पन्नहुई, सीप उसमें थूहरका दूध, आकका, धतूरेका रस और घीकुवारका रस, इनोंमें हीरेको एकदिन पर्यन्त वारंवार भिजावै, फिर ककेड़ाको चीर मांस निकाल उसमांसकी पिट्ठीसे लेपकरै फिर उसके ऊपर गिडोयाकी मट्टीछिड़ादेवै, फिर अग्निमें पचानेसे हीरेकी भस्म होजातीहै। लालकमलकी जड़ और चौलाईके शाककी वालको पी-

सकर गोलाबनालेवै, उसगोलेमें हीरेको रख अग्निदेनेसे हीरेकी भस्म होजातीहै । हीरेकी भस्म–आयु, बल, रूप, देह और सुखकी वृद्धि करैहै और सर्वप्रकारके रोगोंका नाश करैहै इसमें संदेह नहींहै ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ॥३९॥४०॥४१॥४२॥४३॥४४॥४५॥४६॥

अथवैक्रान्तशोधनमारणमाह ।

वैक्रान्तंवज्रवच्छोध्यंनीलंवालोहितञ्चवा ।
हयमूत्रेणतत्सेव्यंतप्तंतप्तंत्रिसप्तधा ॥ ४७ ॥
ततश्चोत्तरवारुण्यापंचाङ्गेगोलकेक्षिपेत् ।
रुद्ध्वामूषापुटेपच्यादुद्धृत्यगोलकेपुनः ॥ ४८ ॥
क्षिप्त्वारुद्ध्वापचेदेवंसप्तधाभस्मतांव्रजेत् ।
भस्मीभूतञ्चवैक्रांतंवज्रस्थानेनियोजयेत् ॥ ४९ ॥

इति श्रीपार्वतीपुत्रनित्यनाथसिद्धविरचिते रसरत्नाकरे रसखण्डे वज्रवैक्रान्तशोधनमारणोनाम पंचमोपदेशः ॥ ५ ॥

अर्थ–नीलेरंगकी अथवा लाल रंगकी वैक्रान्तमणिको हीरेकी समान शोधनाचाहिये । फिर वैक्रान्तको अग्निमें गरम कर घोडेके मूत्रमें इक्की सबार बुझावै,इसके उपरान्त बडीइन्द्रायणके पत्ते, मूल,छाल,फल और फूल पीसकर गोला बनालेवै, उसगोलेमें वैक्रान्त रख मूषापुटमें पकावै. इसप्रकार सातवार पकानेसे वैक्रान्तकी भस्म होजातीहै । वैक्रान्तकी भस्म हीरेके अभावमें प्रयोग करना चाहिये ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥

इति श्रीरसरत्नाकरे रसखंडे रसप्रदीपिकानामभाषाटीकायां भिषक्-शालिग्रामवैश्यकृतवज्रवैक्रान्तशोधनमारणंनाम पंचमोपदेशः ॥ ५ ॥

अथाभ्रशोधनमारणमाह ।

अशुद्धाभ्रंनिहन्त्यायुर्वर्द्धयेन्मारुतंकफम् ।
अहतंछेदयेद्देहंमन्दाग्निक्रिमिदायकम् ॥ १ ॥
कृष्णंपीतंसितंरक्तंयोज्यंयोगेरसायने ।
पिनाकदर्दुरंनागंवज्रञ्चेतिचतुर्विधम् ॥ २ ॥

पिनाकाद्यास्त्रयोवर्ज्यावज्रंयत्नात्समाहरेत् ।
मुंचत्यग्नौविनिक्षिप्तेपिनाकोदलसंचयम् ॥ ३ ॥
अज्ञानाद्भक्षणन्तस्यमहाकुष्ठप्रदायकम् ।
दर्दुरोनिहितोह्यग्नौकुरुतेदार्दुरध्वानिम् ॥ ४ ॥
नागश्चाग्निगतःशब्दंफूत्कारंचविमुंचति ।
सचदेहगतोनित्यंव्याधिंकुर्याद्भगन्दरम् ॥ ५ ॥
वज्राभ्रकंवह्निसंस्थंनकिंचिद्विकृतिंव्रजेत् ।
तस्माद्वज्राभ्रकंयोज्यंव्याधिवार्द्धक्यमृत्युजित् ॥ ६ ॥

अर्थ-अशुद्धअभ्रक-आयुनाशक, तथा वात और कफवर्द्धक है । और विनामारा अभ्रक-देहनाशक तथा मंदाग्नि और कृमिरोगको उत्पन्न करैहै ॥ १ ॥ काला, पीला, सफेद, लाल, इनरंगोंके भेदोंसे अभ्रक चार प्रकारकाहै, और यह रसायनयोगमें प्रयोग करना चाहिये तथा पिनाक, दर्दुर, नाग और वज्र इन भेदोंसे अभ्रक चारप्रकारकाहै और इनमें पिनाकादि तीन अभ्रक त्यागनेचाहिये और वज्रअभ्रकलेना चाहिये ॥ (अथ पिनाकअभ्रकका लक्षण) ॥ जिस अभ्रकको अग्निमें डालनेसे बहुतले परत होजाय उसको पिनाकअभ्रक जानना । इस अभ्रकको जो मनुष्य अज्ञानसे भक्षण करलेते हैं उनके महाकुष्ठरोग उत्पन्न होताहै ॥ (अथ दर्दुरअभ्रकलक्षण) ॥ दर्दुरअभ्रकको अग्निमें डालनेसे दर्दुर अर्थात् मेंडककैसा शब्द करता है ॥ (अथ नागअभ्रकका लक्षण) ॥ नागअभ्रकको अग्निमें डालते ही सर्पकी समान फुंकार करताहै, और इसको जो प्राणी विनाविचारे भक्षण करलेतेहैं, उनके भगन्दर रोग उत्पन्न होताहै ॥ (अथ वज्र भ्रकका लक्षण) ॥ वज्राभ्रक अग्निमें डालनेसे कुछभी विकारको नहीं प्राप्त होताहै, इसकारण वज्राभ्रक लेना चाहिये और यह व्याधि, बुढापा तथा मृत्युनाशकहै ॥ २ ॥ ३ ॥ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥

धमेद्वज्राभ्रकंवह्नौततःक्षीरेनिषेचयेत् ।
भिन्नपत्रंतुतंकृत्वामेघनादद्रवाम्लयोः ॥ ७ ॥
भावयेदष्टयामन्तन्धान्याभ्रंकारयेत्सुधीः ।

अथवाभ्रस्यभागौद्वौटंकश्चैकंजलैःसह ॥ ८ ॥
द्विदिनंस्थापयेत्पात्रेसूक्ष्मंकृत्वाप्रपेषयेत् ।
बद्धाधान्ययुतंवस्त्रेमर्द्दयेत्कांजिकैःसह ॥ ९ ॥
अधोयद्गालितंसूक्ष्मशुद्धंधान्याभ्रकंभवेत् ॥ १० ॥

अर्थ-वज्राभ्रकको लेकर अग्निमें तपावे, फिर दूधमें बुझावे फिर इसके अलग अलग परत करले, पीछे चौलाईके रसमें और कांजीमें आठ प्रहर भावना देकर धान्याभ्रक बनालेवै । अथवा दोभाग वज्राभ्रक और एकभाग सुहागा, जलमें भिजोकर अत्यंत बारीक पीसलेवै, फिर धान्योंके साथ वस्त्रमें बाँधकर काँजीके साथ मर्द्दन करै, फिर छानलेवै उसको धान्याभ्रक कहते हैं ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥

अथ शुद्धस्यमारणमाह ।

पुनर्नवामेघनादद्रवैर्धान्याभ्रकंदिनम् ।
मर्द्यंगजपुटेपच्यात्पुनश्चिंचाथशूरणैः ॥ ११ ॥
द्रवैर्मुस्तभवैर्मर्द्यंपृथग्देयंपुटत्रयम् ।
एवमर्कदलैर्वेष्टंदेयंवामोचसंपुटे ॥ १२ ॥
निश्चन्द्रंजायतेह्यभ्रंयथादोषेषुयोजयेत् ।
गोघृतैस्त्रिफलाक्काथैःपक्त्वाचपूर्ववत्पचेत् ॥ १३ ॥
पंचविंशत्पुटैरेवंकासमर्द्याद्रवैःपचेत् ।
देयंपुटत्रयंक्षीरैर्मर्द्दयेच्चपुटेपुटे ॥ १४ ॥
निश्चन्द्रंजायतेह्यभ्रंजरामृत्युरुजापहम् ।
धान्याभ्रकस्यभागैकंद्वौभागौटंकणस्यतु ॥ १५ ॥
पिष्ट्वातदन्धमूषायांरुद्ध्वातीव्राग्निनापचेत् ।
स्वभावशीतलंचूर्णंसर्वरोगेषुयोजयेत् ॥ १६ ॥

अर्थ-धान्याभ्रकको एकदिन पुनर्नवा और चौलाईके रसमें मर्द्दनकर गजपुटमें पचावे, फिर उसको इमली, जमीकंद और नागरमोथेके रसमें अलग अलग तीनवार पुटपाककर आकके पत्तोंमें लपेट मोचसंपुटमें

पचानेसे निश्चन्द्रअभ्रक बनजाता है और वह सर्व रोगोंमें देना चाहिये। धान्याभ्रकको नागरमोथेके रसमें मर्दनकर पाँचवार पुटपाक करै, फिर गायके घी और त्रिफलाके काढमें पकाकर पचीसबार पुटपाक करै, फिर कसोंदीके रसमें मर्दन करकै पचीसबार पुटपाककरै, फिर इसको दूधमें मर्द्दन करकै तीनवार पुटपाककरै, इस प्रकार करनेसे निश्चन्द्र-अभ्रक होजाता है; और यह जरा, मृत्यु और रोगनाशक है ॥ धान्याभ्रक एकभाग और सुहागा दोभाग इन दोनोंको एकत्रपीसकर अंध-मूषामें रख मूषाका मुख बंदकर तीव्राग्निसे पचावै, जब स्वयंशीतल होजाय तब उस चूर्णको ग्रहणकरै। यह चूर्ण-सर्वरोगोंमें देना चाहिये ॥ ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥

धान्याभ्रकमम्लापिष्टंपुटेतप्तेऽम्लसेचनम् ।
तत्पिष्ट्वाधारयेत्खल्वेभाव्यमम्लारनालकैः ॥ १७ ॥
तप्तंतप्तंचारनालैःपाच्यंशोध्यंपुनःपुनः ।
पुटेवाधमनेपाच्यंविंशद्वारंपुनःपुनः ॥ १८ ॥
तप्तन्तप्तंक्षिपेद्दुग्धेपिष्ट्वाथशोषयेत्पुनः ।
दुग्धतप्तंपुटंपच्यात्तप्तंदुग्धेनसेचयेत् ॥ १९ ॥
एवंत्रिसप्तवाराणिशोष्यंपेष्यंपुटेपचेत् ।
पेषयित्वापचेत्स्थाल्यांलौहदार्व्याविचालयेत् ॥ २० ॥
दुग्धस्थंचततोदुग्धैःपुटेपच्यात्पुनःपुनः ।
एवंसप्तदिनंपच्याद्दिवाचैकंपुटंनिशि ॥ २१ ॥
तण्डुलीवज्रवल्लीचतालमूलीपुनर्नवा ।
चाङ्गेरीमरिचंचैवबलायाःपयसासह ॥ २२ ॥
एभिश्चपेषयेच्चाभ्रंप्रत्येकंतत्त्र्यहंत्र्यहम् ।
स्थित्वातप्तेपुटेपश्चात्प्रत्येकेनपुनःपुनः ॥ २३ ॥
पिष्ट्वापुनःपुटेघृष्टंकज्जलाभंमृतंभवेत् ॥ २४ ॥

अर्थ-धान्याभ्रकको काँजीमें पीस पुटपाककरै, जब गरमहोजावै तव काँजीमें बुझावै, फिर खरलमें डाल बारीक पीस अम्लरस और

काँजीमें भिगोवै,फिर पुटपाककर जब गरमहोजावै तब काँजीमें बुझावै, ऐसे बारंबार काँजीमें बुझावै और पुट वा धमनद्वारा पकावै। इसप्रकार वीसबार पकाकर फिर दूधमें पीस पुटपाककर दूधमें बुझावै। इसप्रकार इक्कीस बार करै फिर पीस कढ़ाईमें डालकर पकावै, और लोहकी करछीसे चलाताजावै,फिर दूधके साथ एक पुट दिनमें और एक रात्रिमें ऐसे सात दिन पर्यन्त पकावै, तदनंतर चौंलाई हड़संघारी, मुसली, पुनर्नवा,चाँगेरी,कालीमिर्च और खिरैटी तथा दूध,इन सबके साथ अलग अलग अभ्रकको तीन तीन दिन खरल करै और हरेक मर्दनके साथ पुट देताजावै, अर्थात् जितनीबार खरल करै उतनीहीबार पुटपाककरै। इसप्रकार करनेसे अभ्रककी निश्चय कज्जलकी समान भस्म बनजातीहै ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥

धान्याभ्रकस्यशुद्धस्यदशांशंमरिचंक्षिपेत्।
पेषयेदम्लवर्गेणचाम्लेभाव्यंदिनत्रयम् ॥ २५ ॥
तंशुष्कंसंपुटेधान्यंखदिराङ्गारकैर्दृढम्।
ऊर्द्धपात्रंनिरूप्याथसेचयेदम्लकेनतम् ॥ २६ ॥
अगस्त्यशिग्रुवर्षाभूमूलैस्तं पत्रजैरसैः।
पिष्ट्वाभ्रंसेचयेत्तेनपड्वान्याम्लरसेनच ॥२७॥
सितामध्वाज्यगोक्षीरैर्दध्नाम्लंपेष्यमभ्रकम्।
मत्स्याक्ष्याःकरवीरायाद्रवैःपिष्ट्वात्रिधापचेत् ॥ २८ ॥
ततोगजपुटेपाच्यंनिश्चन्द्रंजायतेऽभ्रकम्।
धान्याभ्रकंद्रवैर्मर्द्यमत्स्याक्षीतुलसीद्रवैः ॥ २९ ॥
मूलजैःकोकिलाक्षस्यकुमारीश्वेतदूर्वयोः।
व्याघ्रीकन्दपुनर्नव्यादिनमेतैर्विमर्दयेत् ॥ ३० ॥
कुंजराख्यैःपुटैःसप्तपिष्ट्वापिष्ट्वापचेत्पुनः।
तद्वत्पंचामृतैःपाच्यंपिष्ट्वापिष्ट्वातुसप्तधा ॥ ३१ ॥
एवंनिश्चन्द्रतांयातिसर्वरोगेषुयोजयेत् ॥ ३२ ॥

अर्थ–धान्याभ्रकसे दशमा भाग मिरचोंका चूरन मिला अम्लवर्गके रसमें खरलकर तीनदिनपर्यन्त कांजीमें भिगोवै, फिर सूखने पर सम्पुटमें रख खैरके अंगारोंकी प्रचंड अग्निसे पचावै और उसके ऊपर पात्ररख अम्लरससे सींचता जावै, फिर अगस्तिया, सैजिना, और पुनर्नवा इनकी जड़ तथा पत्तोंके रसमें पीसके पकावै, फिर काँजीमें भिगोलेवै, फिर मिश्री, मधु, घृत,दूध और दहीके साथ पीसकर एकवार मछेछीके रसमें खरलकर, और एकवार कनेरके रसमें खरलकर, तीन वार पुट देकर पचावै,फिर गजपुटमें फूँकदेवै तौ अभ्रककी निश्चन्द्र और उत्तम भस्म बनजातीहै । मछेछी, तुलसी, तालमखानेकी जड, घी-कुवार, सफेददूब, व्याघ्रीकंद और पुनर्नवा;इनसबके रसमें धान्याभ्रकको एकदिन खरलकरै, फिर गजपुटमें सातवार पकावै,इसीप्रकार पंचामृत-में खरल करकै सातवार गजपुटमें पकावै तौ अभ्रककी निश्चन्द्रभस्म होजातीहै, और इसका सर्वरोगोंमें प्रयोग करना योग्यहै ॥ २५॥ २६ ॥ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

धान्याभ्रंटंकणंतुल्यंगोमूत्रैस्तुलसीदलैः ।
वाकुच्याःशूरणैरल्पैर्दिनंपिष्ट्वापुटेपचेत् ॥ ३३ ॥
जयन्त्याश्चद्रवैःपश्चान्मर्द्यंमर्द्यंत्रिधापुटेत् ।
चतुर्गजपुटेनैवंनिश्चन्द्रंसर्वरोगजित् ॥ ३४ ॥
धान्याभ्रकंरविक्षीरैरविमूलद्रवैश्चवा ।
मर्द्यंमर्द्यंपुटेपश्चात्सप्तधाम्रियतेध्रुवम् ॥ ३५ ॥
धान्याभ्रकंतुषाम्लाम्लैरातपेस्थापयेद्दिनम् ।
यामंमर्द्यंचतुर्गोलंरुद्ध्वागजपुटेपचेत् ॥ ३६ ॥
एवंगोक्षीरमध्यस्थंस्थाप्यंमर्द्यंपुटेपचेत् ।
एवंकार्पासतोयेनस्थाप्यंपेष्यंपुटेपचेत् ॥ ३७ ॥
ततोम्लैश्चैवकार्पासैर्गवांक्षीरैःपुनःपुनः ।
घर्मपाकंमर्दनंचपुटञ्चैवमनुक्रमात् ॥ ३८ ॥
एकविंशत्पुटेप्राप्तेमृतोभवतिनिश्चितम् ॥ ३९ ॥

अर्थ–धान्याभ्रक और सुहागा समानभाग लेकर गोमूत्र, तुलसीपत्र, वापची और जमीकंदके रसमें एकदिन खरलकर गजपुटमें पकावै, फिर जयन्तीके रसमें खरलकर तीनबार पुटमें पकावै, इसप्रकार चार-बार गजपुट देनेसे अभ्रककी निश्चन्द्रभस्म बनजातीहै और यह सर्वरोग-नाशकहै ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ धान्याभ्रकको आकके दूधमें अथवा आककी जड़के रसमें खरलकर पुटदेताजावै,इसबार सातबार पुटदेनेसे अभ्रककी भस्म होजातीहै ॥ ३५ ॥ धान्याभ्रकको जोकी काँजी और अम्लरसमें डाल एकदिन धूपमें धरदेवै, फिर चारप्रहर खरलकर गोलाबनालेवै, उसगोलेको संपुटमें रख गजपुटमें पचावै, इसीप्रकार गायके दूधमें डाल खरलकर गजपुटमें पचावै,इसीप्रकार कपासकी जडके रसमें डाल खरलकर गजपुटमें पचावै, फिर अम्लरसमें, गायके दूधमें तथा कपास-की जडके रसमें स्थापनकर वारंवार सूर्यकी धूपमें धर, मर्द्दनकर गज-पुटमें पकाता जाय, इसप्रकार इक्कीस पुट देनेसे अभ्रक निश्चय मरजा-ताहै ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥

सर्वेषांघातिताभ्राणाममृतीकरणंशृणु ।
त्रिफलोत्थकषायस्यपलान्यादायषोडश ॥ ४० ॥
गोमूत्रस्यपलान्यष्टौमृताभ्रस्यपलान्दश ।
एकीकृत्यलौहपात्रेपाचयेत्मृदुवह्निना ॥ ४१ ॥
द्रवेजीर्णेसमादायसर्वरोगेषुयोजयेत् ।
अनुपानंविनाह्यभ्रंजरामृत्युरुजापहम् ॥ ४२ ॥
योजयेदनुपानैर्वातत्तद्रोगहरंक्षणात् ।
मृतंचाभ्रंहरेद्रोगाञ्जरामृत्युमनेकधा ॥ ४३ ॥
सेवितादेहदार्ढ्यञ्चरूपंवीर्यंविवर्द्धयेत् ॥ ४४ ॥

इति श्रीपार्वतीपुत्रनित्यनाथसिद्धविरचिते रसरत्नाकरे
रसखंडे अभ्रमारणंनामषष्ठोपदेशः ॥ ६ ॥

अर्थ–अबसर्वप्रकारके मृताभ्रकोंका अमृतीकरण कहतेहैं– त्रिफलाका क्वाथ चौंसठतोले, गोमूत्र बत्तीसतोले, और मृताभ्रक चालीसतोले; इन

सबको एकत्रकरके लोहेके पात्रमें मृदु अग्निसे पकावै, जब द्रवहीन होजाय तब लेकर सर्वरोगोंमें प्रयोगकरै । विना अनुपानकेही यह अभ्रक- जरा, मृत्यु और रोगोंका नाश करताहै । और अनुपानोंके साथ इसका सेवन करनेसे क्षणभरमें सर्वप्रकारके रोग दूरहोजातेहैं । मारितअभ्रक अर्थात् अभ्रककी भस्म ज्वरादिरोग, जरा और मृत्युनाशकहै, देहको दृढ़ करनेवाली, तथा रूप और वीर्यको बढ़ानेवालीहै ॥४०॥४१॥४२॥४३॥४४॥

इति श्रीरसरत्नाकरे रसखण्डे रसप्रदीपिकानामभाषाटीकायां भिषक्शालिग्रामवैश्यकृतआभ्रमारणंनाम षष्ठोपदेशः ॥ ६ ॥

अथ तालकशुद्धिमाह ।

अशुद्धतालमायुघ्नंकफमारुतमेहकृत् ।
तापशेफाङ्गसंकोचंकुरुतेतेनशोधयेत् ॥ १ ॥
तालकंकणशःकृत्वादशांशेनचटंकणम् ।
जम्बीराणांद्रवैःक्षाल्यंकांजिकैःक्षालयेत्पुनः ॥ २ ॥
वस्त्रैश्चतुर्गुणैर्बद्ध्वादोलायंत्रेदिनंपचेत् ।
संयुक्तेचारनालेनादिनंकूष्माण्डजैरसैः ॥ ३ ॥
तिलतैलैःपचेद्यामंयामश्चत्रिफलाजलैः ।
त्रिवारंतालकंभाव्यंपिष्ट्वामूत्रैश्चकांजिकैः ॥ ४ ॥
तत्फलैर्दशभिर्देयंरुद्ध्वापुटंचपेषयेत् ।
एवंद्वादशधापाच्यंशुद्धंयोगेषुयोजयेत् ॥ ५ ॥
तालकंपोटलीबद्धंसप्ताहंकांजिकेपचेत् ।
दोलायंत्रेणयामैकंततःकूष्माण्डजैरसैः ॥ ६ ॥
तिलतैलेपचेद्यामंयामश्चात्रिफलाजलैः ।
एवंयंत्रेचतुर्यामंपाच्यंशुद्धयातितालकम् ॥ ७ ॥
तालकोहरतेरोगान्कुष्ठमृत्युज्वरापहः ।
शोधितःशान्तिवीर्यंचकुरुतेवायुवर्द्धनम् ॥ ८ ॥

अर्थ–अशुद्धहरताल,– आयुनाशक, तथा कफ,वात, प्रमेह, दाह, लिंग-संकोच और अंगसंकोचको उत्पन्नकरैहै । इसकारण हरतालको शुद्ध करना चाहिये ॥ १ ॥ हरितालके छोटे छोटे कण करकै उसमें दशमा भाग सुहागा मिलालेवै, फिर उसको जम्भीरी नीबुओंके रसमें एकवार और कांजीमें एकवार धोकर चौगुनेवस्त्रमें बाँध दोलायंत्रमें एकदिन पचावै, फिर कांजीमें पीसकै एकदिन पेठेके रसमें, एकप्रहर तिलोंके तेलमें और एकप्रहर त्रिफलाके काढ़ेमें पकाकर गोमूत्र और कांजीमें तीनवार भावना देवै फिर त्रिफलाके काढेमें दशवार भावना देकर संपु-टमें रख मुख बंदकर पुट देवै, इसप्रकार बारह पुट देनेसै हरिताल शुद्ध होजातीहै। और यह सर्व योगोंमें योजनी चाहिये ॥२॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ हरितालको पोटलीमें बाँध कांजीमें सातदिन दोलायंत्रके द्वारा पकावै। इसप्रकार पेठेके रसमें एकप्रहर, तिलोंके तेलमें एकप्रहर और त्रिफलाके काढेमें एकप्रहर दोलायंत्रके द्वारा पचावै, इसप्रकार चारप्रहर दोलायं-त्रमें पचानेसे हरिताल शुद्ध होजाता है ॥ ६ ॥ ७ ॥ शुद्धहरिताल–मृत्यु, कुष्ठ और ज्वरादि रोग नाशक है; तथा शांत, वीर्य और वायु-वर्द्धकहै ॥ ८ ॥

अथ शिलाशुद्धिमाह ।

अश्मरीमूत्रहृद्रोगमशुद्धाकुरुतेशिला ।
मन्दाग्निमलबंधंचशुद्धासर्वरुजापहा ॥ ९ ॥
अजामूत्रेत्र्यहंपाच्यादोलायंत्रेमनःशिला ।
सप्तधातैरजापित्तैर्घर्मेभाव्यांविशुद्धये ॥ १० ॥
जयन्तीभृंगराजोत्थरक्तागस्त्यरसैःशिला ।
दोलायंत्रेदिनंपाच्यांयामंछागस्यमूत्रके ॥ ११ ॥
क्षारयेदारनालेनसर्वरोगेषुयोजयेत् ॥ १२ ॥

अर्थ–अशुद्धमनशिल–अश्मरी(पथरीरोग), मूत्ररोग, हृदयरोग, मंदाग्नि और मलबद्धताको उत्पन्न करैहै और शुद्धमनशिल सर्वरोगनाशक है ॥ ९ ॥ मनशिलको बकरीके मूत्रमें दोलायंत्रके द्वारा तीन बार पकावै, फिर बकरीके पित्तकी धूपमें सात भावना देवै, इसप्रकार करनेसे मनशिल शुद्ध होजाता है ॥ १० ॥ मनशिलको एकदिन दोलायंत्रमें–जयंती,

भांगरा और अगस्तियाके पत्तोंके रसमें तथा एक प्रहर बकरेके मूत्रमें पचाकर काँजीसे धोलेवै, ऐसे मनशिल शुद्ध होजाती है और इसका सर्व रोगोंमें प्रयोगकरना चाहिये ॥ ११ ॥ १२ ॥

अथ खर्परशुद्धिः ।

नरमूत्रैश्चगोमूत्रैःसप्ताहंरसकंपचेत् ।
दोलायंत्रेणसम्यक्तच्छुद्धंयोगेषुयोजयेत् ॥ १३ ॥

अर्थ-नरमूत्र और गोमूत्रमें दोलायंत्रके द्वारा सातदिन पकानेसे खपरिया शुद्ध होजाती है ॥ १३ ॥

अथ तुत्थकशुद्धिमाह ।

विष्ठयामर्दयेत्खल्वेमार्जारककपोतयोः ।
दशांशंटंकणंदद्यात्पाच्यंमृद्वग्निनाततः ॥ १४ ॥
पुटंदध्नापुटंक्षौद्रैर्देयंतुत्थविशुद्धये ॥ १५ ॥

अर्थ-बिलावकी विष्ठा और कबूतरकी विष्ठाके साथ नीलेथोथेको खरल कर, फिर उसमें दशमाभाग सुहागा मिला मृदु अग्निसे पकावै, फिर एकवार दहीमें भिजो पुटदेकर और एकवार मधुमें भिजो पुट देनेसे नीला थोथा शुद्ध होजाता है ॥ १४ ॥ १५ ॥

अथ विमलाशुद्धिः ।

विमलात्रिविधापाच्यारम्भातोयेनसंयुता ।
अम्लवेतसधान्याम्लमेषीमूत्रेणपेषयेत् ॥ १६ ॥
दोलायंत्रेचतुर्यामंशुद्धिरेषामहोत्तमा ।
कर्कटीमेषशृंग्युत्थद्रवैर्जम्बीरजैर्द्रवैः ॥ १७ ॥
भावयेदातपेतीव्रेविमलाशुध्यतिध्रुवम् ॥ १८ ॥

अर्थ-रूपामाखीको केलेके जलमें तीनवार पकाकर अमलबैंत,कांजी और भेडके मूत्रमें पीसलेवै फिर दोलायंत्रमें चारप्रहर पकावैतौ शुद्ध होजातीहै॥काकडाशिंगी,मेढ़ाशिंगी और जम्भीरी नीबु इन सबके रसमें रूपामाखीको तेज धूपमें भावनादेनेसे शुद्ध होजाती है ॥१६॥१७॥१८॥

अथ माक्षिकशुद्धिः ।

मंदाग्निबलहानिंचव्रणविष्टम्भनेत्ररुक् ।
कुरुतेमाक्षिकोमृत्युमशुद्धोनात्रसंशयः ॥ १९ ॥
माक्षिकंनरमूत्रेणक्वाथयेत्कोद्रवैर्द्रवैः ।
वेतसेनाम्लवर्गेणटंकणेनकटुत्रिकैः ॥ २० ॥
दोलायंत्रेदिनंपाच्यंशूरणस्यैवमध्यगम् ।
दिनंरम्भाद्रवैःपच्यात्तद्धृत्वापेषयेद्घृतैः ॥२१॥
एरण्डतैलसंयुक्तंपुटेपश्चाद्विशुद्धये ।
माक्षिकस्यत्रयोभागाभागैकंसैन्धवस्यच ॥ २२ ॥
मातुलुंगद्रवैर्वाथजम्बीरोत्थद्रवैःपचेत् ।
लोहपात्रेपचेत्तावद्यावत्पात्रंसुलोहितम् ॥ २३ ॥
ताम्रवर्णमयोयातितावच्छुध्यातिमाक्षिकम् ।
अगस्तिपुष्पनिर्यासैःशिग्रुमूलंविघर्षयेत् ॥ २४ ॥
द्रवैःपाषाणभेद्याश्चपश्चादेभिश्चमाक्षिकम् ।
तद्वटीचान्धमूषायांविशद्भिरुपलैःपचेत् ॥ २५ ॥
पुनःपिष्ट्वाथरुन्ध्याच्चपुटेषड्भिर्विशुध्यति ॥ २६ ॥
मेघनादपाषाणभेदींपिष्ट्वाततिपण्डमध्येमा-
क्षिकंकाणशःकृत्वानिक्षिपेत् । तद्गोलकंवस्त्रे
बद्ध्वादोलायंत्रेकुलत्थक्वाथेदिनमेकंपचेत् ।
एतच्छुद्धलोहानांयुक्तस्थानेमारणेयोज्यम् ॥ २७ ॥
भंगेसुवर्णसंकाशोमनाक्कृष्णंबहिश्छविः ।
बृहद्वर्णइतिख्यातोमाक्षिकश्रेष्ठउच्यते ॥ २८ ॥

अर्थ-अशुद्धसोनामाखी-मंदाग्नि, बलहानि, व्रण, विष्टम्भ, नेत्ररोग और मृत्युको करतीहै ॥ १९ ॥ सोनामाखीको मनुष्यकेमूत्रमें पकाके जमीकंदकेभीतर रखदेवै, फिर कोदों, अमलवैंत, अमलवर्ग, सुहागा और

त्रिकुटु (सौंठ,मिरच, पीपल) ; इनसबके क्काथके साथ एकदिन दोला-यंत्रमें पकाके फिर एकदिन केलेके जलमें पकाकर, फिर घीमें पीसकर अंडके तेलमें मिलाकर पुटपाक करनेसे सोनामाखी शुद्ध होजातीहै। तीनभागसोनामाखी और एकभागसैंधानोन इनको बिजोरेके रसमें अथवा जम्भीरी नींबुके रसमें डालकर लोहेके पात्रमें पचावे, जब लोहेका पात्र लाल होजावै और सोनामाखी तांबेकी रंगकी होजावे, तब शुद्ध होजाती है। अगस्तके फूलोंका गोंद, सैजिनेकी जड और पाखानभेदका रस इनमें सोनामाखीको खरलकर गोला बनालेवे, उस गोलेको अंधमूषामें रख वीस उपलोंके द्वारा पकाकर, फिर पूर्ववत् पीसकै सम्पुटमें रख मुखबंदकर छैवार पुट देनेसे सोनामाखी शुद्ध होजाती है। चौलाई और पाखानभेदको पीसकर गोलाबनालेवै, उस गोलेमें चूरणकीहुई सोनामाखी रख गोलेको वस्त्रमें बाँध कुलथीके क्काथमें दोलायंत्रकेद्वारा एकदिन पकावै तौ सोनामाखी शुद्ध होजाती है ॥ (अथ परीक्षा) जो माखी तोडनेमें भीतरसे सुवर्णकी समान प्रकाशवाली हो और ऊपरसे किंचित् काली दीखै, तथा गहरे रंगवाली हो ऐसी सोनामाखी श्रेष्ठ होती है ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥२३॥२४॥२५॥ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥

अथोपरसानां समुदायेन शुद्धिमाह।

व्यापयत्यङ्गमङ्गानितैलबिन्दुमिवाम्भसि।
नविनाशोधनंसर्वेधातवःप्रबलादयः ॥ २९ ॥
रोगोपशमकर्त्तारःशोधनंतेनरक्ष्यते ॥ ३० ॥
प्रवालानांस्त्रीदुग्धेनभावनापश्चा-
द्घंण्डिकामध्येस्थापयित्वानिरुध्यो-
परिशरावकंदत्त्वालेपयेत्।
वह्निसंदीपनंकृत्वाप्रहरद्वयेनविद्रुमांम्रियते ॥ ३१ ॥
कुलत्थस्यपचेद्द्रोणंवारिद्रोणेनबुद्धिमान्।
तेनपादावशेषेणक्काथेष्टौमणयःशिला ॥ ३२ ॥
आतपेत्रिदिनंशुष्कंक्काथसिक्तंपुनःपुनः।

मुक्ताचूर्णंसमादायकरकाम्बुविभावितम् ॥ ३३ ॥
आतपेत्रिदिनंभाव्यंचूर्णितंमृत्युमाप्नुयात् ॥ ३४ ॥

(अत्रवर्षोपलंकरका ।)

अर्थ–जैसे जलमें तेलकी बूंद गेरनेसे फैलजाताहै तैसेही विनाशोधित प्रवालादिक धातु देहमें फैल रोगोंको शांति नहीं करती हैं इसकारण उनको शोधना चाहिये । मूँगेको स्त्रीके दूधमें भावना देकर हाँडीमें रखै सरैयासे ढ़क मट्टीके गारेका लेपकरै; फिर दोप्रहर अग्निदेवै तौ मूंगेकी भस्म होजातीहै । आठसेर कुलथीको ३२ बत्तीस सेर जलमें पकावै जब चौथाभाग जल शेषरहै तब उसमें वैदूर्यादि आठ प्रकारकी मणि और मैनशिलको बुझाकर वारंवार धूपमें सुखावै तौ मणि और मुक्ता शुद्ध होजाते हैं । मोतियोंके चूर्णको ओलोंके पानीमें डालके धूपमें तीनवार भावना देवेतौ मोतीकी भस्म होजाती है ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥

शंखनीलांजनञ्चैवपूर्ववच्छोधयेद्दिने ।
गोमूत्रैस्त्रिफलाक्काथैर्भृंगराजद्रवैर्जतुम् ॥ ३५ ॥
मर्दयेदायसेपात्रेदिनाच्छुद्धिःशिलाजतोः ।
मेषीक्षारेणदरदमम्लवर्गैश्चभावितम् ॥ ३६ ॥
सप्तवारंप्रयत्नेनशुद्धिमायातिनिश्चितम् ।
सूर्यावर्त्तवज्रकन्दंकदलीदेवदालिका ॥ ३७ ॥
शिग्रुकोषातकीवन्ध्याकाकमाचीचवायसी ।
आसामेकरसेनैवत्रिक्षारैर्लवणैर्युतम् ॥ ३८ ॥
भावयेदम्लवर्गेणादिनमेकंप्रयत्नतः ।
सौवीरंकान्तपाषाणंशुद्धभूनागमृत्तिका ॥ ३९ ॥
शंखोनीलाञ्जनञ्चैवसर्वेउपरसाश्चये ।
पृथग्भाव्यंविधानेनशुद्धिंयान्तिदिनेदिने ॥ ४० ॥
ततःपच्यास्तुतद्द्रावैर्दोलायंत्रेदिनंसुधीः ।

शुध्यन्तेनात्रसंदेहःसर्वेषुपरमाश्रमी ॥ ४१ ॥
मुंचंतिद्रुतसत्वांश्चमतंसाधारणंस्मृतम् ॥ ४२ ॥

अर्थ-शंख और सुरमेको मोतियोंकी समान एकदिनमें शोधना चाहिये। शिलाजीतको लोहेके पात्रमें डाल उसमें गोमूत्र, त्रिफलाका काथ और भांगरेका रस मिलाकर एकदिन खरलकरै तौ शिलाजीत शुद्ध होजाताहै। सिंग्रफको भेडकेदूध और अम्लवर्गमें सातवार भावना देनेसे शुद्ध होजाताहै। सूर्यावर्त्त (हुलहुल), वज्रकन्द, केला, सोनैया, कड़वीतोरई, वनककोड़ा, मकोय और काकादनी इनमेंसे किसीएकके रसमें जवाखार, सज्जी, सुहागा, पंचलवण और अम्लवर्ग मिलाले उससे एक एक दिनमें पृथक् पृथक् भावना देवैतो सुर्मा, कांतपाषाण, शुद्धभूनागमृत्तिका, शंख और कालासुर्मा आदिसर्व उपरस शुद्ध होजातेहैं। फिर इन पूर्वोक्त औषधियोंके रसमें दोलायंत्रके द्वारा पकानेसे एकदिनमें उपरोक्त सर्वप्रकारके उपरस शुद्ध होजातेहैं और सर्व सतको छोड़नेवाले होजातेहैं, यह साधारण मतहै ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥

अथ सत्वपातनमारणमाह।

गुग्गुलुंटंगणंलाक्षामज्जासर्जरसंपुनः।
ऊर्णागुंजाक्षेत्रमीनमस्थीनिशशकस्यच ॥ ४३ ॥
गुडमध्वाज्यपिण्याकंतुत्थंपेष्यमजाजलैः।
सर्वतुल्यंचधान्याभ्रंभूनागमृत्तिकापिच ॥ ४४ ॥
कान्तपाषाणचूर्णंश्चकाठिन्युपरसाश्चये।
मेलयेन्माहिषैःपंचदध्यादिगोमयान्तिकैः ॥ ४५ ॥
दृढंमर्धवटींकुर्यात्कर्षमात्रन्तुशोषयेत्।
गोष्ठीयंत्रेधमेद्गाढमंगारैश्चचिरोद्भवैः ॥ ४६ ॥
त्रिवारंधमनादेवंसत्वंपततिनिर्मलम्।
असाध्यान्मोचयेत्सत्वान्मृत्तिकादेश्चकाकथा ॥ ४७ ॥
लाक्षाआज्यांतिलाःशिग्रुटंगणंलवणंगुडम्।

तालकार्द्धेनसंयोज्यच्छिद्रमूषांनिरोधयेत् ॥ ४८ ॥
पुटेपातालयंत्रेणसत्वंपततिनिश्चितम् ।
तालकंचूर्णयित्वातुछागीक्षीरेणभावयेत् ॥ ४९ ॥
वारत्रयंततोविह्निमूलंपिष्ट्वातुमिश्रितम् ।
कृत्वाचगुडकंशुष्कंसत्वंग्राह्यञ्चपूर्ववत् ॥ ५० ॥

अर्थ–गूगल, सुहागा, लाखकीमींग, राल, ऊन, चोटली, खेतकी मछली, खरगोसकी हड्डी, गुड़, मधु, घृत, खल और तूतिया, इनसबको समानभाग लेकर बकरीके मूत्रमें पीसलेवै, तदनंतर इन सब औषधियोंकी समान धान्याभ्रक, गेसेकीभट्टी, कान्तपाषाण और सेलखडी आदि उपरस ले एकत्रकर भैंसके पंचामृतमें दृढ़मर्द्दनकर दोतोलेभरकी गोलीबनाकर धूपमें सुखादेवै, फिर पुराने कोयलोंकी आगसे गोष्ठीयंत्रमें तीनवार पकानेसे निर्मलसत्व पतित होताहै। इसके द्वारा असाध्य उपरसोंकाभी सत्त निकलजायहै, और मृत्तिका आदिकीतौ क्या कथा ? ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ लाख, घी, तिल, सैजिना, सुहागा, सैंधानोन और गुड यह सब समानभाग और इनसे आधाभाग हरिताल लेकर सबको एकत्रकर छिद्रमूषामें रख पातालयंत्रके द्वारा पकानेसे निश्चय सत्व पतित होताहै। हरितालके चूर्णको बकरीके दूधमें तीनवार भावनादेवै फिर पाढकी जडको पीस चूरनबना उस चूरनको हरितालमें मिला वडी बनालेवै, उस वडियोंको सुखाकर पूर्ववत् अग्निमें जलानेसे सत्व पतित होताहै ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥

अन्यमतम् ।

तालकंमर्द्दयेद्दुग्धैःसर्पाक्षीवाथमूलकैः ।
पूर्ववद्राहयेत्सत्वंछिद्रमूषांनिरुध्यच ॥५१॥
तालवच्चाशिलासत्वंग्राह्यंतैरेवचौषधैः ।
तुल्येनटङ्कणेनैवध्मान्तंसत्वंचतुर्थकम् ॥ ५२ ॥
गोक्षीरैश्चतुत्थक्षीरैर्भाव्यमेरण्डतैलकैः ।
माक्षिकंदिनमेकन्तुमर्द्दितंवटकीकृतम् ॥ ५३ ॥

अभ्रवद्धमनेकत्वंसम्यगस्याप्ययंविधिः ।
जयन्तीत्रिफलाचूर्णंहारिद्रागुडटंगणम् ॥ ५४ ॥
पादांशंटंगणस्येदंपिष्ट्वामूषांविलेपयेत् ।
नालिकासंपुटंबद्ध्वाशोषयेदातपेखरे ॥ ५५ ॥
ग्राह्यंपातालयंत्रेचसत्वंध्मातंपुटेनच ॥ ५६ ॥

इति श्रीपार्वतीपुत्रनित्यनाथसिद्धविरचिते रसरत्नाकरेरसखण्डे सर्वोपरसानांसत्वपातनं नाम सप्तमोपदेशः ॥ ७ ॥

अर्थ-हरितालको दूध अथवा सर्पाक्षीकी जडके रसमें मर्द्दनकर छिद्र-मूषामें रख पूर्ववत् पातालयंत्रमें पकानेसे सत्व निकलताहै ॥ ५१ ॥ पूर्वोक्त हरितालकी औषधी और समान भाग सुहागेको मनशिलके साथ मर्द्दनकर हरितालकी समान पाक करनेसे मनशिलका सत्त्व पतित होता है ॥ ५२ ॥ सोनामाखीको गायके दूधमें तुतियाके रसमें और अंडके तेलमें भावनादे, फिर एकदिन खरलकर वड़ी बना अभ्रकवत् पातालयंत्रमें पकानेसे सत्व पतित होताहै । जैती, त्रिफला, हलदी, गुड़ और सुहागा,इनसबका चूरनकर और उस चूरनसे चौगुना सुहागा मिलाव बारीक पीस तिसके द्वारा मूषाका मध्यभाग लेप नलिकासम्पुटमें बद्ध-कर तेजधूपमें सुखा पातालयंत्रके द्वारा पकानेसे सब उपरसोंका सत्व पतित होताहै ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥

इति श्रीरसरत्नाकरे रसखंडे रसप्रदीपिका नाम भाषाटीकायां भिषक्शालि-ग्रामवैश्यकृतसर्वोपरससत्वपातनं नाम सप्तमोपदेशः समाप्तः ॥ ७ ॥

अथ सर्वलौहानांशोधनमारणमाह ।

स्वर्णतारंताम्रनागंवंगंकान्तंचतीक्ष्णकम् ।
मुण्डान्तमष्टधालौहंकाश्यारंघोषकंत्रिधा ॥ १ ॥
उपलौहाःसमाख्यातामण्डुरोलौहकिट्टकम् ।
एतेद्वादशधाशोध्यामार्याद्राव्याःपुटादिषु ॥ २ ॥

तैलेतक्रेगवां मूत्रेह्यारनालेकुलत्थकैः ।
क्रमात्प्राप्तंतथाततंद्रावेद्रावेतुसप्तधा ॥ ३ ॥
स्वर्णादिलौहपात्राणांशुद्धिरेषाप्रकीर्तिता ।
हेम्नःपादंमृतंसूतंपिष्टमम्लेनकेनचित् ॥ ४ ॥
पत्रेलिप्त्वापुटेपच्यादष्टाभिर्म्रियतेध्रुवम् ।
शुद्धानांसर्वलौहानांमारणेरीतिरिद्दशी ॥ ५ ॥

अर्थ--सोना, रूपा, ताबाँ, सीसा, राँग, कान्तलौह, तीक्ष्णलोह(ईसपात) और मुण्डलोह, पीतल तथा काँसी ऐसे लोहा दश प्रकारके है, मण्डूर और लोहेकी कीट ऐसे उपलोहा दोप्रकारके है, और सर्व मिलकर यह बारहहै, यह सर्वशोधन,मारण और पुटमें द्रावण करने चाहियेतिल, तक्र, गोमूत्र, काँजी और कुलथीके काढ़ेमें स्वर्णादि बारह लोहोकों क्रमसे सातसातबार बुझाता जाय, इसप्रकार स्वर्णादि लोहे शुद्ध होजातेहैं सोनेमें चौथाभाग माराहुआ पारा मिलाकर काँजीमें खरलकरै, फिर उससे सुवर्णादिकोंके पत्रोंपै लेपकर गजपुटमें पकावै, इसप्रकार आठ-वार पुट देनेसे सर्वप्रकारके लोहे मरजातेहैं । सर्वप्रकारके शुद्धलोहोंके मारनेकी एही रीतिहै ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥

अथ स्वर्णशोधनमाह ।

सौख्यंवीर्यंबलंहन्तिनानारोगंकरोतिच ।
अशुद्धंनसूतंस्वर्णंतस्माच्छुद्धंतुमारयेत् ॥ ६ ॥
वल्मीकमृत्तिकाधूम्रगैरिकंचेष्टकापुटे ।
इत्याद्यामृत्तिकाःपंचजम्बीरैरारनालकैः ॥ ७ ॥
पिष्ट्वालेप्यंस्वर्णपत्रंश्रेष्ठंपुटेनशुध्यति ।
भावयेन्मातुलुंगाम्लैस्त्रिदिनंपंचमृत्तिकाः ॥ ८ ॥
सैन्धवंभूमिभस्मापिस्वर्णंशुध्यतिपूर्ववत् ॥ ९ ॥
नागैःसुवर्णरजतश्चताप्यै-
र्गन्धेनताम्रंशिलयाचनागम् ।

तालेनवंगंत्रिविधंचलोहं
नारीपयोहन्तिचहिंगुलेन ॥ १० ॥

अर्थ-अशुद्धसुवर्णकीभस्म सेवनकरनेसे-सुख, वीर्य, और बलका नाश होताहै, तथा नानाप्रकारके रोग उत्पन्न होतेहैं, इसकारण प्रथम सुवर्णको शोध पीछे मारणा चाहिये । बँबँईकी मट्टी धूम्रगेरु, और ईंट आदिक पाँचप्रकारकी मट्टियोंको जम्भीरी नीबुको रस और काँजीमें खरलकर उसके द्वारा स्वर्णोंके पत्तोंपै लेपकर पुटपाक करनेसे सुवर्ण भले-प्रकारसे शुद्ध होजाताहै । पाँचप्रकारकी मट्टी,सैंधानोंन और भूमिभस्म-को विजोरेके रस और काँजीमें तीनदिन पर्यन्त भावनादे पश्चात् खरलकर फिर उसकेद्वारा स्वर्ण के पत्रोंपर लेपकर स्वर्णको पुटमें पकानेसे शुद्धहोजाताहै । राँगके द्वारा सुवर्ण, सोनामाखीके द्वारा रूपा, गंधकके द्वारा ताँबाँ, मैनशिलके द्वारा सीसा, हरितालके साथ वंग, स्त्रीके दूधके और सिंग्रफके साथ तीनोंप्रकारके लोहे मरजातेहैं । ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥

माक्षिकंनागचूर्णञ्चपिष्टमर्करसेनतु ।
हेमपत्रंपुटेनैवम्रियतेक्षणमात्रतः ॥ ११ ॥
स्वर्णार्द्धंपारदंदत्त्वाकुर्याद्यत्नेनपीठिकाम् ।
दत्त्वोर्द्धाधोनागचूर्णंपुटनान्म्रियतेध्रुवम् ।
नागचूर्णंशिलावज्रीक्षीरेणपरियोजितम् ।
तेनालिप्यसुवर्णस्यकल्कश्चाम्रियतेपुटात् ॥ १३ ॥
मृतंनागंस्नुहीक्षीरैरथवाम्लेनकेनचित् ।
पिष्ट्वालेप्यंस्वर्णपत्रंरुद्ध्वागजपुटेपचेत् ॥ १४ ॥
आदायपेषयेदम्लैर्मृन्नागंचाष्टमांशकम् ।
बद्ध्वागजपुटेपच्यात्पूर्वनागयुतंयुतम् ॥ १५ ॥
एवंपुनःपुनःपच्यादष्टधाम्रियतेध्रुवम् ।
शुद्धसूतसमंगंधंमाक्षिकंचमहाम्लकैः ॥ १६ ॥

अष्टाभिश्चपुटैर्हेम्नोम्रियतेपूर्ववत्क्रियाम् ।
शुद्धसूतंसमंस्वर्णंखल्वेकुर्याच्चगोलकम् ॥ १७ ॥
अधोर्ध्वेगंधकंदत्त्वासर्वतुल्यंनिरुध्यच ।
त्रिंशद्वनोपलैर्देयंपुटान्येवंचतुर्द्दश ॥ १८ ॥
निरुत्थंजायतेभस्मगंधंदेयंपुटेपुटे ।
स्वर्णस्यद्विगुणंसूतं याममम्लेनमर्द्दयेत् ॥ १९ ॥
अधोर्द्धंमाक्षिकंपिष्ट्वामूषायांस्वर्णतुल्यकम् ।
तत्पृष्ठेमर्दितंहेमतत्पृष्ठेहेममाक्षिकम् ॥ २० ॥
देयंस्वर्णसमंतच्चपृष्ठेगंधंचतत्समम् ।
षड्वारंचूर्णितंदत्त्वारुद्ध्वामूषांधमेद्दृढम् ॥ २१ ॥
स्वभावशीतलंग्राह्यंतद्भस्मभागपंचकम् ।
टंगणंश्वेतकाचञ्चभागैकञ्चप्रयोजयेत् ॥ २२ ॥
त्रितयंमधुनाज्येनमिलितंगोलकीकृतम् ।
धान्याभ्रकस्यभागैकमधश्चोर्द्धञ्चदापयेत् ॥ २३ ॥
निरुध्यतद्धमेद्गाढंमूषायांघटिकाद्वयम् ।
निरुत्थंजायतेभस्मतत्तद्योगेषुयोजयेत् ॥ २४ ॥
शुद्धमाक्षिकभागैकंभागंचावोटमाक्षिकम् ।
त्रिभागंसूतकंक्षिप्त्वात्रयमम्लेनमर्द्दयेत् ॥ २५ ॥
तद्गोलंपातालयंत्रेतदायामत्रयंपचेत् ।
इत्थंवम्रियतेस्वर्णंनिरुत्थंनात्रसंशयः ॥ २६ ॥
तथैवचराजवृक्षभल्लातैष्टङ्कणेनच ।
लिप्त्वास्वर्णस्यपत्राणिरुद्ध्वागजपुटेपचेत् ॥ २७ ॥
तैर्द्रवैश्चपुनःपिष्ट्वाम्रियतेसप्तधापुटे ।
हेममारभ्यतोलैकंमासैकंशुद्धनागकम् ॥ २८ ॥
लिप्त्वादेयन्तुतंचूर्णंतच्छुद्धैर्गन्धमाक्षिकैः ।

अम्लेनमर्दयेद्यामंरुद्ध्वालघुपुटेपचेत् ॥ २९ ॥
गंधंपुनःपुनर्देयंम्रियतेदशभिःपुटैः ।
सुवर्णञ्चभवेच्छीतंतिक्तंस्निग्धंहिमंगुरु ॥ ३० ॥
बुद्धिविद्यास्मृतिकरंविषहारिरसायनम् ॥ ३१ ॥

अर्थ-सोनामाखी और वंगका चूरन आकके रसमें खरल करै, उसके द्वारा स्वर्णके पत्रोंके पुटमें पकानेसे सोनेकी तत्काल भस्म होजातीहै ॥ ॥ ११ एकभाग पारा और दोभाग सोना लेकर दोनोंको बारीक पीस पिट्ठीबना उसके ऊपर और नीचे वंगका चूरन रख गजपुटमें पचानेसे सोनेकी भस्म होजातीहै ॥ १२ ॥ राँगके चूर्ण और मैनशिलको थूहरके दूधमें खरलकर कल्क बनाले उसकल्कसे सुवर्णके पत्रोंको लेपकर पुटपाक करनेसे सोनेकी भस्म होजातीहै ॥ १३ ॥ जारितवंगको थूहरके दूधमें अथवा काँजीमें खरलकर कल्क बना उसकल्कके द्वारा सुवर्णके पत्रोंपै लेपकर सम्पुटमें रख गजपुटमें पकानेसे सोनेकी भस्म होजातीहै॥१४॥ सुवर्णसे आठमा भाग गेसेकी मृत्तिकाले अम्लरसमें खरलकर गजपुटमें पकावै, इसप्रकार आठपुट देनेसे सुवर्ण मरजाताहै ॥ शुद्धपारा,शुद्धगंधक और सोनामाखीको समानभागलेकर नीबूके रसमें खरलकरै फिर आठवार गजपुटमें पकानेसे सोना मरजाताहै ॥ शुद्धपारा और सोना समानभाग लेकर खरलमें खरलकर गोला बनालेवै,फिर गोलेकी बराबर गंधकका चूरन गोलेके नीचेधर गोलेको मूषामेंरख ३० उपलोंके द्वारा चौदहवार पुटदेनेसे स्वर्णकीभस्म बनजातीहै और हरेक पुटमें गंधकका चूरन देता जाय॥एकभाग सुवर्ण और दोभागपारा इनदोनोंको एकप्रहर काँजीमें खरल करै, फिर सुवर्णकी बराबर सोनामाखीको पीसकर मूषामें ऊपर औरनीचे धर उसकेऊपर सोनेको और सोनेके ऊपर सोनामाखी-का और सोनामाखीके ऊपर गंधका चूरन धरै इस प्रकार छैवार चूर्ण रख मूषाको बंदकर तेज अग्निसे पचावै, जब स्वयंशीतल होजावै तब उस भस्मको पांच भागलेवै और सुहागा तथा सफेद कांच एक एक भाग लेवै पश्चात् इनको मधु और घीके साथ खरलकर गोला बनालेवै, तदनंतर धान्याभ्रक एक भाग लेकर मूषामें रखदेवै, उसके ऊपर गोला धर फिर उसके ऊपर धान्याभ्रकधर मूषाके मुखको बंदकर दोघड़ी पर्यंत तेज अग्निके द्वारा पकावै तौ उत्तम भस्म बनजाय और यह भस्म सर्वयोगोंमें

प्रयोगकरनी योग्य है ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ शुद्धसोनामाखी एकभाग, कच्ची सोनामाखी दोभाग और पारातीनभागले कांजीमें मर्दनकर गोला बनालेवै, उस गोलेको स्वर्णके पत्रोंपै लेपकर तीन प्रहर पातालयंत्रमें पकावैतौ निःसन्देह सोनेकी भस्म बनजातीहै ॥ २५ ॥ २६ ॥ अमलतास, भिलावा और सुहागा इनसबको एकत्र खरल करै, उसको सुवर्णके पत्रोंपै लेपकरे पश्चात् सम्पुटमें रख सातवार गजपुटमें पकावै तौ सुवर्णकी भस्म बन जातीहै । एकतोला सोना, एकमासा वंग, एकमासा गंधक और एकमासा सोनामाखीको ले काँजीमें एकप्रहरपर्यन्त खरलकर सम्पुटमें रख दशवार लघुपुटमें पकानेसे सुवर्णकी भस्म बनजातीहै और हरेकपुटमें गंधक देताजावै । सोनेकी भस्म- शीतल, कड़वी, चिकनी, शीतवीर्य, भारी तथा बुद्धि, विद्या और स्मरणशक्तिको बढानेवाली है, एवं विषविनाशक और रसायन है ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥

अथ तारशोधनमारणमाह ।

आयुःशुक्रबलंहन्तिरोगंवंगंकरोतिच ।
अशुद्धममृतंतारंशुद्धमार्यमतोबुधैः ॥ ३२ ॥
नागेनटंगणेनैवद्रवितंशुद्धिमिच्छति ।
माक्षिकंगंधकंचैवमर्कक्षीरेणमर्दयेत् ॥ ३३ ॥
तेनलिप्तंरूप्यपत्रंपुटेनाम्रियतेध्रुवम् ।
तारंत्रिवारंनिक्षिप्तंतैलेज्योतिष्मतीभवेत् ॥ ३४ ॥
स्नुक्क्षीरैःपेषयेत्ताम्रंतारपत्राणिलेपयेत् ।
रुद्धाजगपुटेपच्यात्पूर्वोक्तैःपेषयेत्पुनः ॥ ३५ ॥
भूधात्रीमाक्षिकंतुल्यंपिप्पलीसैन्धवाम्लकैः ।
लिप्त्वातारस्यपत्राणिरुद्धासप्तपुटेपचेत् ॥ ३६ ॥
द्रवैःपुनःपुनःपिष्ट्वाम्रियतेनात्रसंशयः ।
तारपत्रैस्त्रिभिर्भागोभागैकंशुद्धमाक्षिकम् ॥ ३७ ॥
मर्द्यंजम्बीरजैर्द्रावैस्तारपत्राणिलेपयेत् ।

शोषयेद्रन्धयेत्तच्चत्रिंशद्वनोपलैःपचेत् ॥ ३८ ॥
चतुर्दशपुटेनैवंनिरुत्थंम्रियतेध्रुवम् ।
रौप्यपत्रचतुर्भागाद्भागैकंमृतवंगकम् ॥ ३९ ॥
अथवागंधतालेनलेप्यंजम्बीरपेषितम् ।
रुद्ध्वात्रिःपुटैःपच्यात्पंचविंशद्वनोपलैः ॥ ४० ॥
म्रियतेनात्रसंदेहोगन्धोदेयःपुटेपुटे ।
रसगंधौसमौकृत्वाकाकतुंडस्यमूलकम् ॥ ४१ ॥
मर्दयेन्महिषीक्षीरैःपिष्ट्वातंक्षालयेज्जलैः ।
हरिद्रागोलकेक्षिप्त्वागोलंहयपुरीषके ॥ ४२ ॥
क्षिप्त्वादिनैकविंशन्तंतद्गोलमुद्धरेत्पुनः ।
तत्पिष्ट्वातारपत्राणिलेप्यान्यम्लेनकेनचित् ॥ ४३ ॥
पुटैर्विंशतिभिर्भस्मजायतेनात्रसंशयः ।
भस्मनाचाम्लपिष्टेनमेलयेत्तालकंपुटैः ॥ ४४ ॥
जायतेतद्विधानेनसर्वरोगापहारकम् ॥ ४५ ॥

अर्थ–अशुद्ध और अमारितरूपा–शुक्रनाशक, बलविनाशक, आयुविनाशक, और रोगोंको उत्पन्नकरनेवालाहै, इस कारण रूपेको प्रथम शोध पछि मारना चाहिये ॥ ३२ ॥ रूपा, वंग और सुहागेके साथ गलानेसे शुद्ध होजाता है । सोनामाखी और गंधकको आकके दूधमें खरलकरै; उसखरलकिये हुए द्रव्यसे चाँदीके पत्रोंपै लेपकर गजपुटमें पकानेसे चाँदीकी भस्म होजातीहै। रूपेको गलाकर मालकाँगनीके तेलमें तीनवार बुझालेवै, फिर थूहरके दूधमें ताँबेको खरलकर तिसके द्वारा रूपाके पत्रोंपर लेपकर संपुटमें स्थापनकर गजपुटमें पचावै,तदनंतर पूर्ववत् फिर भुईआँवला, सोनामाखी, पीपल, सैंधानोन और काँजीको एकत्र पीसकर तिस पिसेहुए द्रव्यके द्वारा चाँदी(रूपा)के पत्रोंपै लेपकर सम्पुटमें रख गजपुटमें पचावै इसप्रकार सातपुटदेनेसे चाँदीकी भस्म होजाती है।तीनभागचाँदीके पत्र और एक भाग शुद्धसोनामाखी लेवै सोनामाखीको जम्भीरी नीबुओंके रसमें खरलकर उसके द्वारा चाँदीके

पत्रोंपै लेपकर धूपमें सुखादेवै, फिर तीस उपलोंकी अग्निके द्वारा चौदह पुट देनेसे निःसंदेह चांदीकी भस्म होजातीहै । चार भाग चांदीके पत्र और एकभाग वंगकी भस्म लेवै, फिर वंगकी भस्मको अथवा हरिताल और गंधकको जम्भीरी नीबुओंके रसमें खरलकर चांदीके पत्रोंपै लेपकरै, फिर सम्पुटमें रख पचीसउपलोंकी अग्निके द्वारा हरेकपुटमें गंधक देकर तीनवार पुटपाक करै तौ निःसन्देह रूपेकी भस्म होजायगी। पारा, गंधक औरको आठोड़ीकी जड़समान भागले भैंसके दूधमें पीस पानीसे धोडालै, फिर हलदीके गोलेमें और घोडेकी लीदके गोलेमें इक्कीसदिन रखे,फिर उसमेंसे निकाल काँजीमें पीसके चाँदीके पत्रोंपर लेपकरै, फिर वीसवार पुटमें पकावैतौ रूपेकी भस्म होजातीहै । और इसी भस्मको हरिताल तथा काँजीके साथ पीसकर पुटपाक करनेसे सर्व रोगोंको हरनेवाली भस्म बनजातीहै ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥३६॥३७॥३८॥३९॥४०॥४१ ॥ ॥४२॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥

अथ ताम्रशोधनमारणमाह ।

अपक्वताम्रमायुर्घ्नंकान्तिघ्नंसर्वधातुहा ।
वान्तिमूर्च्छाभ्रमोत्क्लेशंनानारुक्कुष्ठशूलकृत् ॥ ४६ ॥
स्नुह्यर्कक्षीरलवणकांजिकैस्ताम्रपत्रकम् ।
लिप्त्वाप्रताप्यनिर्गुण्डीरसैःसिंच्यात्पुनःपुनः ॥ ४७ ॥
वारद्वादशदाहत्वंलेपनात्ताम्रसिंचनात् ।
खटिखालवणंतक्रैरारनालैश्चपेषयेत् ॥ ४८ ॥
तेनलिप्त्वाताम्रपत्रंतप्तंतप्तंनिषेचयेत् ।
षड्वारमम्लपिष्टेननिर्गुण्ड्याशुविशुद्धये ॥ ४९ ॥
गोमूत्रेणपचेत्ताम्रपत्रंयामंदृढाग्निना ।
शुध्यतेनात्रसंदेहोमारणंकथ्यतेऽधुना ॥ ५० ॥
गंधेनताम्रतुल्येनह्यम्लपिष्टेनलेपयेत् ।
कण्टकवेधिकृतंपत्रंसिद्धायित्वापुटेपचेत् ॥ ५१ ॥
उद्धृत्यचूर्णयेत्तास्मिन्पादांशंगंधकंक्षिपेत् ।
जम्भीरैरारनालैर्वामृगदूर्वाथवाद्रवैः ॥ ५२ ॥

पिष्ट्वापिष्ट्वापचेत्तद्वत्सगंधंचचतुष्पुटे ।
मातुलुंगरसैःपिष्ट्वापुटमेकंप्रदापयेत् ॥ ५३ ॥
अनेनैवविधानेनताम्रपत्रंभवेद्ध्रुवम् ।
ताम्रस्यद्विगुणंसूतंजम्बीराम्लेनमर्द्दयेत् ॥ ५४ ॥
सितशर्करयाप्येवंपुटत्रयेमृतंभवेत् ।
पाषाणभेदीमत्स्याक्षीद्रवैर्द्विगुणगंधकैः ॥ ५५ ॥
ताम्रस्यलेपयेत्पत्रंरुद्ध्वागजपुटेपचेत् ।
सप्तांशेनपुनर्गन्धंदत्वाद्रावैश्चपेषयेत् ॥ ५६ ॥
एवंसप्तपुटेपक्वंताम्रभस्मभवेद्ध्रुवम् ।
ताम्रस्यद्विगुणंसूतंजम्बीराम्लेनमर्द्दयेत् ॥ ५७ ॥
आदौमूषान्तरेक्षिप्त्वाधत्तूरस्यतुपत्रकम् ।
तत्पृष्ठेताम्रतुल्यन्तुगंधकंचूर्णितंक्षिपेत् ॥ ५८ ॥
तत्पृष्ठेमर्द्दितंताम्रंपूर्वंतुल्यन्तुगंधकम् ।
आच्छाद्यंधत्तूरपत्रेरुद्ध्वागजपुटेपचेत् ॥ ५९ ॥
स्वांगशीतन्तुतच्चूर्णंभस्मीभवतिनिश्चितम् ।
किंचिद्गन्धेनचाम्लेनक्षालयेत्ताम्रपत्रकम् ॥ ६० ॥
तेनगंधेनसूतेनताम्रपत्रंप्रलेपयेत् ।
गंधेनपुटितंपश्चान्म्रियतेनात्रसंशयः ॥ ६१ ॥
ताम्राद्विगुणगंधेनचाम्लपिष्टेनतत्पुनः ।
क्षिप्त्वाह्यधोर्द्धभागेनदेयापिष्टाम्लकैर्बुधः ॥ ६२ ॥
ततपिण्डंभांडगर्भेतुरुद्ध्वाचुल्ल्यांविपाचयेत् ।
यामैकंतीव्रपाकेनभस्मीभवतिनिश्चितम् ॥ ६३ ॥
सूतमेकंद्विधागंधंयामंकृत्वाविमार्द्दितम् ।
द्वयोस्तुल्यंताम्रपत्रंस्थाल्यांगर्भेनिधापयेत् ॥ ६४ ॥
सम्यग्लवणयंत्रस्थंपार्श्वेभस्मनिधापयेत् ।

चतुर्यामंपचेच्चुल्ह्यांपात्रपृष्ठेसगोमयम् ॥ ६५ ॥
जलंपुनःपुनर्देयंस्वाङ्गशैत्यंविचूर्णयेत् ।
म्रियतेनात्रसंदेहःसर्वरोगेषुयोजयेत् ॥ ६६ ॥
नानाविधंमतंताम्रंशुद्धचर्थंभागपंचकम् ।
भागैकंश्वेतकाचश्चभागपंचैकटंगणम् ॥ ६७ ॥
मूषायांमिश्रितंकृत्वाभागैकंताम्रपत्रकम् ।
ऊर्द्धंदत्त्वानिरुध्याथध्मातेर्ग्राह्यंसुशीतलम् ॥ ६८ ॥
निर्दोषन्तुभवेत्ताम्रंसर्वरोगहरंभवेत् ।
अथवामारितंताम्रमम्लेनैकेनमर्दयेत् ॥ ६९ ॥
तद्गोलंशूरणस्यान्तेरुद्धारुद्धातुलेपयेत् ।
शुष्कंगजपुटेपच्यात्सर्वदोषहरोभवेत् ॥ ७० ॥
वान्तिभ्रान्तिविरेकश्चनकरोतिकदाचन ।
ताम्रंतीक्ष्णोष्णंमधुरंकषायंशीतलंसरम् ॥ ७१ ॥
कफपित्तक्षयपांडुकुष्ठघ्नश्चरसायनम् ।
परिणामशूलमर्शांसिमंदाग्निश्चविनाशयेत् ॥ ७२ ॥

अर्थ–कच्चाताँबा– आयु, कान्ति और सर्वधातुओंका नाश करैहै, तथा वमन,मूर्च्छा,भ्रम,उत्क्लेश,अनेकप्रकारके रोग,कुष्ठ और शूलको उत्पन्न करैहै॥४६॥थूहरकादूध, आककादूध,सैंधानोन और काँजीके साथ ताँबेके पत्रोंको लेपकर अग्निमें तपा बारहवार सह्मालूके रसमें बुझालेवै, फिर खड़िया और सैंधानोनको तक्र और काँजीमें पीसकर उसको ताँबेकेपत्रों- पै लेपकर वारंवार आगमें तपाकर छैवार काँजी एवं सह्मालूके रसमें बुझावै, इसप्रकार करनेसे ताँबा शुद्ध होजाताहै।ताँबेके पत्र गोमूत्रमें मिलाकर तेज अग्निमें एकप्रहर पचानेसे ताँबा शुद्ध होजाताहै॥अब ताँबेका मारण वर्णन करते हैं ॥४६ ॥४७॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ताँबेकी बराबर गन्धकले काँजीमें खरलकर उसको उन ताँबेके पत्रोंपर लपेटै फिर उस कंटकवेधी ताँबेके पत्रोंको गजपुटमें पचावै, फिर उसको महीनपीस चूरण करले, इसके उपरान्त उसमें चौथाभाग गंधक मिला जम्भीरी नींबू काँजी और इन्द्रा

यनकी जडके रसमें अलग अलग पीसकर गंधक मिला चार पुट दे और बिजोरे नीबूके रसमें पीसकर एक पुटदे इसप्रकार पुटपाक करनेसे ताँबेकी भस्म होजाती है, एकभाग ताँबा और दोभागपारा, इनको जम्भीरीके रसमें खरलकर खाँडमिला, तीनवार पुटपाक करनेसे ताँबेकी भस्म होजातीहै, पाषाणभेद, ब्राह्मीघासका रस और दुगना गंधक इन सबको खरलकरकै ताँबेके पत्रोंपर लपेटै; फिर उनको संपुटमें रख गजपुटमें पचावै, फिर उसमें सातवाँ भाग गंधकमिला उपरोक्त औषधियोंके रसमें खरल करै, फिर सातवार पुटपाक करनेसे ताँबेकी राख होजातीहै, ताँबेसे दूनाभागपारा लेकर नीबूकेरसमें खरल करै, फिर उसको मूषासम्पुटमें रख, ऊपरसे धतूरेकेपत्ते रख, तिसके ऊपर ताँबेकी समान गंधक रख, उसपर मर्द्दन कियाहुआ ताँबा स्थापित कर, तिसकेऊपर ताँबेकीसमान गंधक रख, धतूरेके पत्तोंसे ढककर गजपुटमें पचावै, स्वांगशीतलहोनेपर चूर्णकरले तौ ताँबेकी भस्म बनजाती है ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ किंचित् गंधक और काँजीके द्वारा ताँबेके पत्रोंको क्षालनकर, फिर उसी गंधक और पारेसे उपरोक्त ताँबेके पत्रोंको लेपकर गंधकके साथ गजपुटमें पचानेसे ताँबेकी भस्म होजातीहै । ताँबेसे दुगुना गंधक लेकर काँजीमें पीसलेवै, फिर तिसको ताँबेके नीचे तथा ऊपर रख हाँडीमें स्थापनकर और उसहाँडीका मुख बंदकर चूलेपै चढ़ा तीव्राग्निके द्वारा एकप्रहर पचानेसे ताँबेकी भस्म होजातीहै । एकभाग पारा और दोभाग गन्धक इनदोनोंको एकप्रहर मर्द्दनकर, फिर इनदोनोंके समान भाग ताँबेके पत्र ले एक स्थालीके बीचमें धर, भलेप्रकारसे लवणयंत्रमें स्थापनकर, दोनों पसलियोंपै राखधर चारप्रहर पर्यन्त चूलेपै चढ़ाकर पचावै और उसकी पीठपै गोवर रख वारंवार जलदेताजाय, फिर स्वांगशीतल होनेपर चूर्णकरले, इसप्रकारकरनेसे ताँबेकी भस्म होजातीहै; और यह ताँबेकी भस्म सर्वरोगोंमें प्रयोग करनी योग्यहै; अनेकप्रकारसे शुद्धकिया हुआ ताँबा पाँचभाग, श्वेतकाँच एक भाग, सुहागा पाँचभाग और ताँबेके पत्र एकभाग, इनसबको एकत्र मिला मूषामें रख मूषाको बंदकर पुटपाक करै, जब शीतल होजाय तौ ग्रहण करले, इसप्रकार निर्दोष और सर्वरोगोंको हरनेवाली भस्म होजातीहै । ताँबेकी भस्मको काँजीमें पीस गोलाबनाले, उसगोलेको

जमीकंदके बीचमें धर गजपुटमें पचानेसे सर्वरोगोंको हरनेवाली भस्म होजातीहै । ताँबेकीभस्म-वमन, भ्रम और विरेचनको कभीभी नहीं करतीहै । तथा तीक्ष्ण, गरम, मधुर, कषेली, शीतल, मेदक और कफ, पित्त, क्षय, पांडु, कुष्ठ, परिणामशूल, बवासीर और मंदाग्निको नष्ट करै है और रसायन तथा सारकहै ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२ ॥

अथ नागशोधनमाह ।

पाकहीनौ नागवंगौ कुष्ठगुल्मरुजाकरौ ।
मेहपाण्डूदरवातकफमृत्युकरौ किल ॥ ७३ ॥
निर्गुण्डीमूलचूर्णेन मार्कदुग्धेन लेपयेत् ।
नागपत्रन्तुतंशुष्कंद्रावयित्वानिषेचयेत् ॥ ७४ ॥
निर्गुण्डीद्रवमध्येतुततःपत्रन्तुकारयेत् ।
लिप्त्वाभाव्यंपुनःसेच्यंसप्तवारंविशुद्धये ॥ ७५ ॥
निशातुम्बुरुबीजानिकोकिलाक्षंकुठारिकाम् ।
गौरीफलाम्लिकाचण्डीक्षुद्राब्राह्मीसजीरकम् ॥७६॥
यथालाभेनभस्मैकंवज्रीक्षारेणभावयेत् ।
तन्मध्येभावितंनागंशुद्धेसेकन्तुसप्तधा ॥ ७७ ॥
अश्वत्थचिंचात्वग्भस्मनागस्यचतुरंशतः ।
क्षिप्त्वाचुल्ल्यांपचेत्पात्रेचालयेल्लोहचट्टके ॥ ७८ ॥
यावद्भस्मभवेत्तच्चभस्मतुल्यंमनःशिलाम् ।
जम्बीरैरारनालैर्वापिष्ट्वारुद्धापुटेपचेत् ॥ ७९ ॥
स्वांगशीतंपुनःपिष्ट्वाविंशत्यंशैःशिलाम्लकैः ।
एवंषड्भिःपुटेपाकोनागस्यापिनिरुत्थितः ॥ ८० ॥
अथवानागपत्राणिचूर्णलिप्तानिखर्परे ।
अत्यग्नौपाचयेद्यामंतद्भस्माचित्रकद्रवैः ॥ ८१ ॥
भर्जयेल्लोहजे पात्रे चालयमर्जुनदण्डकैः ।

यामषोडशपर्यन्तं द्रवं देयं पुनः पुनः ॥ ८२ ॥
दण्डेन मर्दयेत् क्वाथ्यमुद्धृत्य चित्रकद्रवैः।
गोलयित्वानिरुध्याथषट्पुटेमारयेल्लघु ॥ ८३ ॥
चिंचाक्षभिक्षुभल्लातबलावज्रलताभवैः।
अपामार्गार्जुनाश्वत्थभस्मभिर्भजयेद्दृढम् ॥ ८४ ॥
लोहपात्रेतुसप्ताहंतुल्यंभस्मानिचाशुच ॥
दण्डेपलाशकेचैवम्रियतेनात्रसंशयः ॥ ८५ ॥
पिष्ट्वागस्तिचभूनागंलिप्त्वापादंविशोधयेत्।
तद्भाण्डेद्रावयेद्यामंदृढेभाण्डेविनिक्षिपेत् ॥ ८६ ॥
वासाचिंचिटयोःक्षीरंवासादलेविघट्टयेत्।
यामैकंपाचयेच्चुल्ल्यांसमुद्धृत्यविमिश्रयेत् ॥ ८७ ॥
तच्चूर्णन्तुशिलाताप्यैर्वासकक्षारसंयुतैः।
तच्चतुल्यं पूर्वनागाविंशदेकपुटेपचेत् ॥ ८८ ॥
द्विपुटंचिंचिटाक्षारैर्देयंवासारसैःसह।
नागःसिन्दूरवर्णाभोम्रियतेसर्वकार्यकृत् ॥ ८९ ॥
कुलटामाक्षिकश्चैवसमभागन्तुकारयेत्।
अर्कपर्णेनतत्पिष्ट्वाशीसपत्राणिमारयेत् ॥ ९० ॥
सतिक्तमधुरो नागोमृतोभवतिभस्मसात्।
आयुष्कीर्त्तिवीर्यवृद्धिंकरोतिसेवनात्सदा ॥ ९१ ॥

अर्थ–कच्चाशीशा और वंग–कुष्ठ,गुल्म,प्रमेह, पाण्डु, उदररोग,वात,कफ और मृत्युको करतेहैं, सम्हालूकी जड़के चूर्णको भाँगरेके रसमें खरलकरके शीशोंके पत्रोंपै लेपकरकै सुखादे, फिर उनपत्रोंको अग्निमें तपाकर सम्हालूके रसमें बुझादेवै; इसप्रकार सातवार अग्निमें तपाकर सम्हालूके रसमें बुझानेसे शीशा शुद्ध होजाताहै। हलदी, तौंबीके बीज, तालमखाना, कुठारिका, कुलथी, इमली, असवण, छोटीब्रह्मी और जीरा,

इनसबकी भस्मकर थूहरके दूधमें भावनादे, उसमें शीशेको गर्म करकै सात भावनादे, इसप्रकार सातभावना देनेसे शीशा शुद्ध होजाताहै पीतल और इमलीकी राख चौगुना शीशामिला पात्रमें रख चूल्हेपर धरकर पचावै, और लोहेकी करछीसे चलातारहै, भस्महोनेपर भस्मकी बराबर मैनशिल मिलाकर जम्भीरि नीबु अथवा काँजीमें पीसकर संपुटमें रख गजपुटमें पकावै, स्वाँगशीतल होनेपर वीसवाँ भाग मैनशिल और काँजीमें खरलकर छैवार गजपुटमें पकानेसे शीशेकी भस्म हो जातीहै. शीशेके पत्रोंको चूनेसे लेपकर मट्टीकी कढ़ाईमें एकप्रहरपर्यन्त पकाकर भस्म करले, उसभस्मको चीतेके रसमें डाल लोहे कीकढ़ाईमें सोलहप्रहरतक पचावै और अर्जुनवृक्षके दंडेसे सहज सहज चलातारहै, फिर चीतेके रसमें खरलकर गोला बना छैपुट देनेसे शीशा मरजाताहै। इमली, बहेड़ा, ईख, भिलावा, खिरैंटी, अस्थिसंहार, चिरचिटा, अर्जुन और पीपलवृक्ष, इन सबकी भस्मसे शीशेको भून लोहेके पात्रमें रख, ढ़ाकके सोटेसे घोटनेसे शीशेकी भस्म होजाती है। अगस्तियेके पत्तोंको पीस शीशेके ऊपर चौथाभाग लेपकरै, फिर सुखाकर पात्रमें रख अग्निसे एक प्रहर द्रावणकर दृढ़ पात्रमें रखदे, फिर अडूसा और चिंचोटक तृणकेखारको बाँसेके पत्तोंपर लपेटकर एक प्रहर चूल्हेपर चढ़ाकर पचावै, तदनन्तर उक्तचूर्णको मैनशिल, रूपामाखी, और अडूसेके खारमें मिलाकर इक्कीस पुटमें पकावै। फिर चिंचोटकतृणका खार और अडूसेका रस इनकी दो पुट देनेसे शीशेकी सिंदूरकी समान भस्म होजातीहै और यह भस्म सबकार्योंको सिद्धकरनेवालीहै. मैनशिल और सोनामाखी समानभागलेकर आकके पत्तोंमें खरलकरकै शीशेके पत्रोंपै लेपकरनेसे शीशेकी भस्म होजातीहै. शीशेकीभस्म–कड़वी, मधुर तथा आयु, कीर्त्ति और वीर्यवर्द्धकहै ॥७३॥ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३॥ ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ ९० ॥ ९१ ॥

अथ वंगमारणमाह।

माक्षिकंहरितालञ्चपलाशस्वरसेनच।
हृतकल्केनसंलिप्यवंगपत्राणिमारयेत् ॥ ९२ ॥

नागवच्छोधयेद्वंगंतद्वद्दशश्वत्थचिंचयोः ।
तद्भस्महरितालंचतुल्यमम्लेनकेनचित् ॥ ९३ ॥
पालाशोत्थद्रवैर्वाथगोलयित्वान्धयेत्पुटे ।
उद्धृत्यदशमांशेनतालेनसहमर्दयेत् ॥ ९४ ॥
पूर्वद्रावैःसहालोड्यरुद्ध्वागजपुटेपचेत् ।
एवंविंशत्पुटेपक्त्वामृतंभवतिभस्मसात् ९५ ॥
वंगपादेनसूतेनवंगपत्राणिलेपयेत् ।
चिंचावृक्षस्यसंगृह्यचान्तश्छन्नश्चतण्डुलैः ॥ ९६ ॥
पिष्ट्वाततिपण्डमध्येतुवंगपत्राणिमिश्रयेत् ।
शिरीषरजनीचूर्णैःकुमार्याःशुभगोलकम् ॥ ९७ ॥
सूतलिप्तंवंगपत्रंगोलकेसमलेपितम् ।
रुद्ध्वागजपुटेपक्वंपूर्वसंख्यामृतोभवेत् ॥ ९८ ॥
अक्षभल्लातकंतोयैःपिष्ट्वातानिविलेपयेत् ।
ततास्तिलखलीमध्येक्षिप्त्वारुद्ध्वापुटेपचेत् ॥ ९९ ॥
गजाख्यंजायतेभस्मचत्वारिंशातिवंगकम् ।
सतिक्तलवणंवंगंपाण्डुघ्नंक्रिमिमेहाजित् ॥ १०० ॥
लेखनंपित्तलंकिंचित्सर्वदेहभयापहम् ॥ १०१ ॥

इति श्रीपार्वतीपुत्रनित्यनाथसिद्धविरचिते रसरत्नाकरे रसखण्डे स्वर्णादिवंगांतानां मारणंनामाष्टमोपदेशः ॥ ८ ॥

अर्थ-सोनामाखी और हरितालको ढाकके पत्तोंके रसमें खरलकर कल्क बनाले उस कल्कके द्वारा वंगके पत्रोंपै लेपकरे, फिर गजपुटमें पकानेसे वंगकी भस्म होजातीहै,वंगको सीसेकी समान शोधना चाहिये। पीपल और इमलीका खार तथा हरिताल इन सबको नीबूके रसमें खरल करै अथवा ढाकके पत्तोंके रसमें खरलकर गोला बनावै, फिर पुटपाककर दशमाभाग हरिताल मिला उपरोक्तद्रावमें पीस सम्पुटमें

रख गजपुटमें पचावै; इस प्रकार वीस पुट देनेसे वंगकी भस्म होजातीहै॥ चौथाभाग पारा लेकर वंगके पत्रोंपै लेपकरे, फिर इमलीके बीजोंको चावलोंके साथ बारीक पीस गोला बनालेवै, उस गोलेमें वंगके पत्रोंको रखै फिर सिरसके बीज, हलदी और घिकुवारके पट्टेका चूरण मिला संपुटमें रख गजपुटमें पचावै, इसप्रकार वीसपुटदेनेसे राँगकी भस्म होजातीहै। बहेड़ा और भिलावा इनको जलमें पीसकर वंगके पत्रोंपै लेपकरै, फिर उनको तिलकी खलमें रख गजपुटमें पकावै, इसप्रकार चालीस पुटदेनेसे वंगकी भस्म होजातीहै ॥ वंगकी भस्म–कड़वी, नमकीन, लेखन, पित्तजनक तथा पाण्डु, प्रमेह, कृमि और सर्व रोगनाशकहै ॥९२॥९३॥९४॥९५॥९६॥९७॥९८॥९९॥१००॥ १०१ ॥

इति श्रीशालिग्रामवैश्यकृतरसरत्नाकरे रसखण्डे रसप्रदीपिकानामभाषाटीकायां स्वर्णादिमारणंनाम अष्टमोपदेशःसमाप्तः ॥

अथ कान्तलौहशोधनमारणमाह ।

अशुद्धममृतंलौहमायुर्हानिरुजाकरम् ॥
हृत्पीडाश्चतृषाजाड्यंतस्माच्छुद्धंचमारयेत् ॥ १ ॥
पात्रेयस्मिन्प्रसरतिनचेत्तैलबिन्दुर्विसृष्टः ।
हिंगुर्गन्धंविसृजतिनिजंतिक्ततांनिम्बकश्च ॥
पाकेदग्धंभवतिशिखराकारतानैवभूमौ ।
कान्तंलौहंतदिदमुदितंलक्षणोक्तंनचान्यत् ॥ २ ॥
कान्तंमृदुतरंताक्षररुक्माभंतिमिरंकरम् ।
स्वादुर्यतोभवेन्निम्बकल्कोरात्रिर्निवेशितः ॥ ३ ॥
कान्तंतदुत्तमंयच्चरूप्येनावर्त्तितंमिलेत् ।
सर्वरोगहरंत्वेतत्सर्वकुष्ठहरंपरम् ॥ ४ ॥

अर्थ–अशुद्ध और कच्चालोहा–आयुनाशक, रोग, हृदयरोग, पीड़ा, तृषा और जड़ताको उत्पन्नकरैहै, इसकारण इसको प्रथम शोध फिर मारना चाहिये ॥ १ ॥ जिसके पात्रमें तेलकी बूँदे डालनेसे फैले नहीं,

और जिसके पात्रमें हींग रखी हुई अपनी गंधको छोडदेवै, जिसके पात्रमें नीमका रस रखनेसे कड़वेपनको त्यागदेवै और जिसकेपात्रमें दूध औटानेसे दूध शिखरके आकार ऊँचा होजावै, परन्तु पृथ्वीमें नहीं गिरे उसको कान्तलोहा कहतेहैं ॥ २ ॥ जो कान्तलोहा अत्यन्त मृदु (नरम), चाँदी और सुवर्णकी कान्तिवालाहो, तथा जिसके वरतनमें रात्रिको नीमका कल्क रखनेसे प्रातःकाल मीठा होजाय और जो रूपासे आवर्तित हो, वह कान्तलोहा उत्तम होताहै । कान्तलोहेकी भस्म सर्व प्रकारके कुष्ठ और सर्व प्रकारके रोगनाशकहै ॥ ३ ॥ ४ ॥

छागशशरक्तसंलिप्तंत्रिवारंचाग्नितापितम् ।
कान्तादिमुण्डपर्यन्तंसर्वरोगहरंपरम् ॥ ५ ॥
त्रिफलाष्टगुणैस्तोयैस्त्रिफलाषोडशंपलम् ।
तत्क्वाथेपादशेषेतुलौहस्यपलपंचकम् ॥ ६ ॥
कृत्वापत्राणितप्तानिसप्तवाराणिसेचयेत् ।
एवंप्रलीयतेदोषोगिरिजोलौहसम्भवः ॥ ७ ॥
त्रिविधंलौहचूर्णंवागोमूत्रैःषड्गुणैःपचेत् ।
प्रक्षालयेदारनालेशोष्यंशुद्धिमवाप्नुयात् ॥ ८ ॥
रक्तमालाहंसपादीगोजिह्वात्रिफलामृता ।
गोपालीतुम्बुरुर्दन्तीतुल्यगोमूत्रपेषितम् ॥ ९ ॥
अस्मिन्मध्येलौहपत्रंतप्तंतप्तंद्विसप्तधा ।
सेचयेत्कान्तमुण्डान्तंसर्वदोषापनुत्तये ॥ १० ॥
सर्वेष्वौषधकल्पानांलोहकल्पंप्रशस्यते ।
तस्मात्सर्वंप्रयत्नेनलौहमादौविमारयेत् ॥ ११ ॥
अयःपंचपलादूर्द्ध्वंयावत्पलत्रयोदशात् ।
आदौमंत्रस्ततःकर्मयथाकर्त्तव्यमुच्यते ॥ १२ ॥

ओं अमृतोद्भवोद्भवाय स्वाहा ।

इति मर्द्दनमंत्रः ।

ओं अमृतोद्भवायहुँस्वाहा ।

ओंनमश्चण्डवज्रपाणयेमहायक्षासनाधिपत-
येसुरुसुरुस्वाहा यक्षविद्याबलायस्वाहा ॥

इति बलिदानमन्त्रः ।

अर्थ-बकरेका रुधिर और खरगोसके रुधिरका तीनवार लोहेपै लेपकर तीनवार अग्निमें तपावै तौ कान्तादिमुण्डपर्यन्त सर्वप्रकारके लोहे सर्व प्रकारके रोगोंको हरनेवाले होजातेहैं । सोलहपल त्रिफलाको आठगुने जलमें क्काथ करैं, जब जलकर चौथाभाग शेषरहै तौ पाँचपल लोहेके पत्र अग्निमें तपाकर उस क्काथमें सातवार बुझावै, इसप्रकार करनेसे लोहेका गिरिजदोष दूर होजाताहै । तीनों प्रकारके लोहे के चूर्ण छैगुने गोमूत्रमें पकाकर काँजीमें धोनेसे लोहा शुद्ध होजाताहै । रक्तमाला (कन्दविशेष), हंसपदी, गोभी, त्रिफला, गिलोय, गोपालककड़ी, कड़वी तौंबी और दन्ती, इनसबको बराबर लेकर बराबरके गोमूत्रमें पीसे, फिर लोहेके पत्रोंको अग्निमें चौदह-वार तपाकर इसमें चौदहवार बुझावै, इसप्रकारकरनेसे कांतादि लोहोंके सर्व दोष दूर होजातेहैं । सर्व प्रकारके औषधकल्पोंमें लोहकल्प श्रेष्ठहै, इसकारण सर्वयत्नोंसे प्रथम लोहेको मारना चाहिये । पाँच पलसे तेरह पलपर्यन्त लोहेको लेकर "ओं अमृतोद्भवोद्भवायस्वाहा" इसमंत्रको पढ़कर मर्दनकरै "ओं अमृतोद्भवाय विद्याबलायस्वाहा" इसमंत्रसे बलिदानकरै ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥

हिंगुलस्यपलान्पंचनारीस्तन्येनपेषयेत् ।
तेनलोहस्यपत्राणिलेपयेत्पलपंचकम् ॥ १३ ॥
रुद्ध्वागजपुटेपच्यात्कषायैस्त्रैफलैःपुनः ।
जम्बीरैरारनालैर्वाविंशत्यंशेनहिंगुलम् ॥ १४ ॥
पिष्ट्वारुद्ध्वापुटेल्लोहंतथैवंपाचयेत्पुनः ।
चत्वारिंशत्पुटैरेवंकान्तंतीक्ष्णञ्चमुंडकम् ॥ १५ ॥
म्रियतेनात्रसन्देहोदत्त्वादत्त्वाचहिंगुलम् ।

अर्जुनस्यत्वचापेष्याकांजिकेनातिलोहिता ॥ १६ ॥
तन्मध्येलोहचूर्णञ्चकांस्यपात्रेविनिक्षिपेत् ।
दिनैकंभावयेद्घर्मेद्रवैःपूर्यपुनःपुनः ॥ १७ ॥
अर्जुनैःसारनालैर्वात्रिविधंमारयेदयः ।
दन्तीपत्रंद्रवंयच्चलौहचूर्णविलोडयेत् ॥ १८ ॥
दिनैकंधारयेद्घर्मेद्रवंदेयंपुनःपुनः ।
रुद्ध्वारात्रौपुटेपच्यादेभिर्द्रावैश्वभावयेत् ॥ १९ ॥
एवमष्टदिनंकुर्यात्रिविधंम्रियतेह्ययः ।
चिंचापत्रनिभंकुर्यात्रिविधंलोहपत्रकम् ॥ २० ॥
मृत्पात्रस्थंक्षिपेद्घर्मेदन्त्याद्रावैःप्रपूरयेत् ।
पत्रंपुनःपुनस्तावद्यावज्ज्वरतिवैत्वयः ॥ २१ ॥
म्रियतेतीव्रघर्मेणचूर्णीकृत्यनियोजयेत् ।
कान्तंतीक्ष्णंतथामुण्डचूर्णमत्स्याक्षजैर्द्रवैः ॥ २२ ॥
आतपेत्रिदिनंभाव्यंद्विदिनंचित्रकद्रवैः ।
त्रिकण्टकद्रवैस्त्र्यहंसहदेव्याद्रवैस्त्र्यहम् ॥ २३ ॥
गोमूत्रैस्त्रिफलाक्वाथेभावयेच्चत्र्यहंत्र्यहम् ।
धातक्याश्चततोमर्द्यक्रमादेयंपुटंपुटम् ॥ २४ ॥
रुद्ध्वागजपुटेनैवंमृतंयोगेषुयोजयेत् ।
द्रवैःकुरंटपत्रोत्थैर्लोहचूर्णविमर्दयेत् ॥ २५ ॥
दिनैकमातपेतीव्रेद्रवैर्मर्द्यत्रिकण्टकैः ।
वन्ध्याभृंगीपुनर्नव्यागोमूत्रैश्चदिनंपुनः ॥ २६ ॥
गोमूत्रैस्त्रिफलाक्वाथ्यातत्कषायेणभावयेत् ॥
त्रिसप्ताहंप्रयत्नेनदिनैकंमर्दयेत्ततः ॥ २७ ॥
रुद्ध्वागजपुटेपच्यादिदंक्वाथेनमर्दयेत् ।
दिवामर्द्यपुटंरात्रावेकविंशद्दिनानिवै ॥ २८ ॥

एकविंशद्दिनेनैवम्रियतेत्रिविधंह्ययः ।
माक्षिकंचशिलाह्यम्लैर्हरिद्रामरिचानिच ॥ २९ ॥
पिष्ट्वामर्द्यलोहपत्रंतप्ततप्तंनिषेचयेत् ।
सप्तधात्रिफलाक्काथेजलेनक्षालयेत्पुनः ॥ ३० ॥
कुट्टयेल्लोहदण्डेनपेषयेत्रिफलाजलैः ।
षोडशांशेनलोहस्यदातव्यंमाक्षिकंशिला ॥ ३१ ॥
अम्लेनलोडितंरुद्धागजान्धकपुटेपचेत् ।
निरुत्थंजायतेभस्मकान्तंतीक्ष्णादिमुंडकम् ॥ ३२ ॥
तिन्दुफलस्यमज्जाभिर्लिप्त्वास्थाप्यातपेखरे ।
धारयेत्कांस्यपात्रस्थंदिनैकेनपुटत्यलम् ॥ ३३ ॥
लेप्यंपुनःपुनःकुर्याद्दिनान्तान्तंप्रलेपयेत् ।
त्रिफलाक्काथसंयुक्तंदिनैकेनमृतम्भवेत् ॥ ३४ ॥
स्थाल्यांवालोहपात्रेवालौहदार्व्याविलोडयेत् ।
पाचयेत्रिफलाक्काथेदिनैकंलोहचूर्णकम् ॥ ३५ ॥
ततिपडंत्रिफलातोयैःपिष्ट्वारुद्धापुटेपचेत् ।
षोडशांशेनमूषायांनिर्वातेहर्निशंपचेत् ॥ ३६ ॥
एवंत्रिधाप्रकर्त्तव्यंस्थालीपाकंपुटान्तरम् ।
भृंग्याद्रावंतालमूलीहस्तीकर्णस्यमूलकम् ॥ ३७ ॥
शतावरीविदार्याश्चमूलक्काथेचत्रैफले ।
पिष्ट्वातत्पूर्ववत्स्थाल्यांपाच्यंपेष्यंपुटेत्रिधा ॥ ३८ ॥
ततःपुनर्नवातोयैर्दशमूलकषायकैः ।
बृहत्याश्चकषायैर्वाबीजपूरस्यतोयतः ॥ ३९ ॥
ब्रह्मबीजस्तथाशिग्रुक्काथेगोपयसापिवा ।
प्रत्येकेनप्रपेष्यादौपूर्वगर्भेपुटेपचेत् ॥ ४० ॥
भावयेत्तुद्रवेणैवपुटान्तेयाममात्रकम् ।

प्रत्येकेनक्रमादेवपिष्टापुटैश्चभावयेत् ॥ ४१ ॥
म्रियतेनात्रसंदेहःकान्तंतीक्ष्णंचमुण्डम् ।
सर्वमेतत्स्मृतंलौहंध्मातव्यंमित्रपंचकैः ॥
यद्येवंस्यान्निरुत्थानंसेव्यंवारितरंभवेत् ॥ ४२ ॥

अर्थ–पाँचपल अर्थात् वीसतोले सिंग्रफको स्त्रीके दूधमें खरलकरै, उससे पाँचपल लोहेके पत्र लपेटकर सम्पुटमें रख गजपुटमें पचावै, फिर वीसभाग सिंग्रफको त्रिफलेके काढ़ेमें, जम्भीरी नीबुओंके रसमें अथवा काँजीमें पीसे, इससे पूर्वोक्तलोहेको लेपकर संपुटमें रख गजपुटमें पकावै, इसप्रकार चालीस पुट देनेसे कान्तादि तीनोंप्रकारके लोहोंकी भस्म होजातीहै, और हरएकपुटमें सिंग्रफ देताजावै। अर्जुनवृक्षकी छालको काँजीमें पीस उसमें लोहेका चूरनडाल काँसीकेपात्रमें करकै एकदिन धूपमें धरकर अर्जुन तथा काँजीके रसमें वारंवार भावनादेवै, फिर शरावसंपुटमें रख गजपुटमें पचानेसे लोहे मरजातेहैं। दन्तीके पत्तोंके रसमें लोहेका चूरन खरलकर तीनदिन धूपमें रखे जब लोहा मरजाय तब शरावसंपुटमें रख गजपुटमें पचावै, इसप्रकार आठदिनपर्यन्त करनेसे लोहे मरजातेहैं। इमलीके पत्तोंकी समान लोहेके पतले पत्रकर मट्टीके वरतनमें धर दंतीका रस मिलाकर धूपमें रख वारंवार भावनादेवै, इसप्रकार तेज धूपमें रखनेसे लोहा मरजाताहै इसका चूरन करकै काममें लाना चाहिये। कान्तलोह, तीक्ष्णलोह और मुण्डलौहका चूरन कर मछेछीके रसमें तीन दिन भिजोके धूपमें रखै फिर चीतेके रसमें दोदिन भिजो धूपमेंधरै; फिर कटाई, कटेरी और गोखरूके रसमें तीन दिन भिजो धूपमें धरे, फिर सहदेईके रसमें तीन दिन भिजो धूपमें रखे, फिर गोमूत्रमें तीनदिन भिजो धूपमें धरै, तदनन्तर त्रिफलेके काढ़ेमें तीनदिन भिजो धूपमें धरै, फिर धायके फूलोंके रसमें खरलकर शरावसंपुटमें रख गजपुटमें पचावै, इसप्रकार अनेकपुटदेनेसे तीनों प्रकारके लोहे मरजातेहै, इनकी भस्म सर्वकर्म्मोंमें प्रयोग करनी चाहिये। लोहेके चूरणको कटसरैयाके रसमें मर्दनकरै फिर कटाई, कटेरी और गोखरूके रसमें धूपमें धरकै खरलकरै फिर बांझखखसा, भृंगी, पुनर्नवा और गोमूत्रमें एकदिन भावना देकर फिर गोमूत्रमें त्रिफलेको औटाकर काढाबना उसमें भावना देकर फिर इक्कीस

वार मर्दनकर शरावसंपुटमें रख गज पुटमें पचावै, फिर एकदिन त्रिफलेके काढ़ेमें भावनादेकर खरलकरै, इस प्रकार दिनमें तौ खरल करै और रात्रिमें पुट देताजाय, इस प्रकार इक्कीस दिन पर्यन्त करनेसे तीनों प्रकारके लोहे मरजातेहैं । सोनामाखी, मैनशिल, हलदी और मिरच, इन सबको नीबूके रसमें खरलकर तिसके द्वारा लोहेके पत्रोंपै लेपकरै, फिर अग्निमें तपाके त्रिफलेके काढ़ेमें बुझाताजाय, इस प्रकार सातवार बुझाकर पानीसे धोवै, फिर लोहेके दंडेसे कूटकर त्रिफलेके रसमें खरल करै, फिर लोहेसे सोलहमाभाग सोनामाखी और मनशिल मिला नीबूके रसमें मर्दनकर अंधमूषामें रख मुख बंदकर गजपुटमें पचानेसे तीनों प्रकारके लोहोंकी भस्म होजातीहै । तेंदूकी मींगसे लोहेके पत्रोंको लेपकर काँसीके बरतनमें धर धूपमें सुखावै, फिर एकदिन पुटपाककरै फिर इसीप्रकार वारंवार तेंदूकी मींगसे लेपकर पुटपाक करके त्रिफलेके काढ़ेमें मिलानेसे एकदिनमें लोहेकी भस्म होजातीहै । लोहेके चूरको कढ़ाई अथवा लोहेके बासनमें डाल त्रिफलेके काढ़ेमें पकावै, और लोहेकी करछीसे चलाताजाय, फिर उसका गोलाबनाकर उसगोलेको त्रिफलेके काढेमें खरलकर सुखादे, फिर शरावसंपुटमें रख गजपुटमें पचावै, और इसका सोलहवाँ भाग मूषामें रख रात्रिदिनमें तीनवार स्थालीपाक करै, फिर भृंगीकारस, मूषली, हस्तिकर्णपलाशकीजड़, शतावर, विदारीकंद, और त्रिफलेके काढ़ेमें खरलकर पूर्ववत् तीनवार स्थालीपाककरै, फिर पुनर्नवेके रसमें, दशमूलके काढ़ेमें, बृहतीके काढ़ेमें, विजोरे नीबूके रसमें, ढाकके बीजोंके क्वाथमें, सैंजिनेके काढेमें और गोमूत्रमें पीसपीसकर एकदिन पुटद्वारा स्थालीपाक करनेसे कान्तादितीनोंप्रकारके लोहोंकी भस्म होजातीहै । सर्वप्रकारके मृतलोहोंको मित्रपंचकेसाथ अग्निमें फूँकनेसे पानीपै पैरनेवाली सुन्दरभस्म होजातीहै ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ॥ ४१ ॥ ४२ ॥

मतान्तरम् ।

मध्वाज्यंमृतलौहञ्चसरूप्यंसंपुटेक्षिपेत् ।
रुद्ध्वाध्माप्यतुसंग्राह्यंरूप्यञ्चपूर्वमानकम् ॥ ४३ ॥

तदालोहंमृतंविद्यादमृतंमारयेत्पुनः ॥ ४४ ॥

अर्थ—सहत, घृत और मृतलोहेको रूपाके सम्पुटमें रख मुख बन्दकर अग्नि जलानेसे लोहेकी भस्म होजातीहै, यदि एकवारमें भस्म न हो तौ फिर पुटपाक करै ॥ ४३ ॥ ४४ ॥

अथ शोधनमाह ।

गंधकंतुमृतंलोहंतुल्यंखल्वेविमर्दयेत् ।
दिनैकंकन्यकाद्रावैरुद्धागजपुटेपचेत् ॥ ४५ ॥
इत्येवंसर्वलोहानांकर्त्तव्योऽयंनिरुत्थितः ॥ ४६ ॥

अर्थ—गंधक और मृतलोहेको खरलमें डालकर एक दिन घीकुवारके रसमें मर्दनकरै, फिर उसका गोलाबना उस गोलेको सम्पुटमें रख गजपुटमें पचावै, इस प्रकार करनेसे सर्वप्रकारके लोहे शुद्ध होजातेहै ॥४४॥

अथ सिद्धमते लौहमारणमाह ।

शुद्धसूतंद्विधागंधंकृत्वाखल्वेतुकज्जलीम् ।
द्वयोःसमंलोहचूर्णमर्दयेत्कन्यकाद्रवैः ॥ ४७ ॥
यामद्वयात्समुद्धृत्यतद्गोलंताम्रपात्रके ।
आच्छाद्यैरण्डपत्रैश्चयामार्द्धेनोष्णतांव्रजेत् ॥ ४८ ॥
धान्यराशौन्यसेत्पश्चात्रिदिनान्तेसमुद्धरेत् ।
संपिष्यगालयेद्वस्त्रेसद्योवारितरंभवेत् ॥ ४९ ॥
कान्तंतीक्ष्णंतथामुंडंनिरुत्थंजायतेमृतम् ।
स्वर्णादीन्मारयेदेवंचूर्णीकृत्यतुलोहवत् ॥ ५० ॥
सिद्धयोगमिदंख्यातंसिद्धानांसंमुखागतम् ।
अन्नभूतमायसाद्यंसर्वरोगज्वरापहम् ॥५१ ॥
त्रिफलारससंयुक्तंसर्वरोगेषुयोजयेत् ॥ ५२ ॥
मृतानिलोहानिवशीभवन्ति
निघ्नंतियुक्त्याह्यखिलामयानि ।

अभ्यासयोगाद्दृढयोगसिद्धं
कुर्वन्तिरुङ्मृत्युजराविनाशनम् ॥ ५३ ॥

अर्थ—एकभाग शुद्धपारा और दोभाग गंधकको मर्दन कर कज्जली बनावै, फिर इनदोनोंकी समान लोहेका चूरन मिश्रितकर दोप्रहर घीकुवारके रसमें खरलकरकै गोला बनावै, फिर उस गोलेको ताँबेके पात्रमें रख उसके ऊपर अंडके पत्तोंको ढ़क जब वह गरम होजाय तब धानोंके ढेरमें तीन दिन रक्खै; फिर उसमेंसे निकाल बारीकपीस कपड़ेमें छान लेवै इसप्रकारकरनेसे जलमें तिरनेवाली लोहेकी भस्म होजातीहै । इसीप्रकार सर्व लोहे और स्वर्णादिकी भस्म होजातीहै । इसको सिद्धयोग कहतेहैं, और यह सिद्धोंके मुखसे सुनाहै । अन्नके कोठेमें रक्खाहुआ आमृतलोहा सर्वप्रकारके ज्वरादि रोगोंको हरैहै । लोहेकी भस्म त्रिफलेके साथ सर्वरोगोंमें देनी चाहिये । सर्वप्रकारके मारे हुए लोहे वशीकरण, और सर्वप्रकारके रोगोंको हरनेवालेहैं, तथा इनको अभ्याससे सदैव सेवन करै तो जरा और मृत्यु तथा रोगोंको हरैहै ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥

अथमृतलोहस्यामृतीकरणमाह ।

तोयाष्टभागशेषेणत्रिफलापलपंचकम् ।
घृतंक्राथस्यतुल्यंस्याच्चूर्णतुल्यंमृतायसम् ॥ ५४ ॥
पाचयेत्ताम्रपात्रेचलौहदार्व्याविचालयेत् ।
मृद्वग्निनापचेत्तावद्यावज्जीर्यतिगंधकम् ॥ ५५ ॥
लौहतुल्याशिवायोज्यासुपक्कमेवतारयेत् ॥
योगवाहमिदंख्यातंमृतलौहंमहामृतम् ॥ ५६ ॥
एवंकान्तस्यतीक्ष्णस्यमुण्डस्यापिविधिक्रमः ।
गुडस्यकुडवेपक्कंलौहभस्मपलान्वितम् ॥ ५७ ॥
कोलप्रमाणंरोगेषुतच्चयोगेनयोजयेत् ।
घृतंतुल्यंमृतंलौहंलौहपात्रेगतंपचेत् ॥ ५८ ॥
जीर्णेघृतंसमादाययोगवाहेषुयोजयेत् ॥ ५९ ॥

ओंअमृतेनभक्षयायनमः। अनेनमनुनालोहंभक्षयेत्।
आयुर्वीर्यंबलंदत्तेपाण्डुमेहादिकुष्ठजित्।
आमवातहरंलोहंवलीपलितनाशनम् ॥ ६० ॥

अर्थ–पाँचपलत्रिफलाको आठभाग जलमें पचावै, जब आठवाँ भाग बाकी रहै तब उसके समान घृत और मृतलोहेका चूरन मिलाकर गंधक के साथ ताँबेके पात्रमें पकावै और लोहेकी करछीसे चलाताजावै, जब-तक गंधक जीर्ण नहो, तबतक मृदुअग्निसे पचावै, फिर लोहेकी समान हरड़ मिलाले, जब भलेप्रकार पकजावै तब उतार लेवै, इसप्रकार मृत लोहा अमृतरूप होजाताहै, और यह योगवाहीहै। इसीप्रकार कान्तलोह, तीक्ष्णलोह और मुण्डलोहकी विधिका क्रम जानना। बत्तीस तोले गुड़को पका उसमें चारतोले लोहेकी भस्म मिला बेरकी बराबर प्रयोग करनेसे सर्वरोगोंको दूर करताहै। घृत और लोहेकी भस्मको बराबर लेकर लोहेके बासनमें पकावै, जब घृत जीर्ण होजाय तब उतारले, यह योगवाही योगोंमें प्रयोगकरना योग्यहै। "ओं अमृते भक्षाय नमः" इसमंत्रको पढ़कर भक्षण करै। लोहेकीभस्म–आयु, वीर्य, और बलको देनेवालीहै, तथा पाण्डु, प्रमेह, कोढ़, आमवात और वलीपलितरोगको हरनेवालीहै ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥

अथोपलोहानांशोधनमारणमाह।

त्रिक्षारंपंचलवणंसप्तधाम्लेनभावयेत्।
कांस्यावघोषपत्राणितिलकल्केनलेपयेत् ॥ ६१ ॥
रुद्ध्वागजपुटेपच्याच्छुद्धिमायान्तिनान्यथा।
ताम्रवन्मारणंतेषांकृत्वासर्वत्रयोजयेत् ॥ ६२ ॥
कांस्यंकषायमुष्णंचलघुरूक्षंचतिक्तकम्।
कफपित्तरुजंहन्तिदृढदेहायुवर्द्धनम् ॥ ६३ ॥
वीतिकाचगलंरूक्षमतिक्तलवणंसरम्।
शोधनंसर्वरोगघ्नंबलवीर्यायुवर्द्धनम् ॥ ६४ ॥

अर्थ-सज्जी, सुहागा, जवाखार, सैंधानोंन, कालानोन, खारी और सांभर इन सबको कांजीमें सातवार भावना देवै, फिर इसमें तिलकल्क मिलाकै;कांसी और पीतलके पत्रोंपै लेपकरै फिर सम्पुटमें रख गजपुटमें पचावैतौ कांसी और पीतल शुद्ध होजावै । इनकी तांबेकी भस्मकर सर्व रोगोंमें देनी चाहिये । कांसीकीभस्म-कषेली, गरम, हलकी, रूखी, कड़वी, कफपित्तरोगनाशक, देहको दृढ़करनेवाली और आयुको बढानेवाली है । पीतलकी भस्म-रूखी, किंचित् कडवी,लवणरसान्वित, सारक, शोधन, तथा बल, वीर्य और आयुको बढ़ानेवाली है ॥ ६१ ॥ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥

अथ मंडूरसंस्कारः ।

अल्पाङ्गारेधमेत्किट्टंलौहजंचगवांजलैः ।
सेचयेदक्षपत्रैश्वसप्तवारंपुनःपुनः ॥ ६५ ॥
मण्डूरोऽयंसमाख्यातःशुद्धंश्लक्ष्णंनियोजयेत् ।
किट्टाच्छतगुणंमुण्डंमुण्डात्तीक्ष्णंशताधिकम् ॥ ६६ ॥
तीक्ष्णाल्लक्षगुणंकान्तंभक्षणात्कुरुतेगुणम् ।
तस्मात्कान्तंसदासेव्यंजरामृत्युहरंपरम् ॥ ६७ ॥

इति श्रीपार्वतीपुत्रनित्यनाथसिद्धविरचिते रसरत्नाकरे रसखंडे कान्तादिकिट्टमारणं नाम नवमोपदेशः ॥ ९ ॥

अर्थ-लोहेकी किट्टको अंगारोंमें तपाके सातवार गोमूत्रमें और सातवार बहेड़ेके पत्तोंके रसमें बुझावै, इसप्रकार करनेसे मण्डुर बन जाताहै । यह शुद्धमंडूर सर्वकर्मोंमें योजना चाहिये । लोहेकी किट्टसे सौगुण मंडुरमें, मण्डूरसे सौगुण अधिक तीक्ष्ण लोहेमें, और तीक्ष्ण-लोहेसे अधिक लक्षगुण कान्तलोहेमेंहैं । यह गुण भक्षणकरनेमेंहैं । इसकारण जरा और मृत्युनाशक कान्तलोहा सदैव सेवनकरना चाहिये ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥

इति श्रीरसरत्नाकरे रसखण्डे रसप्रदीपिकानामभाषाटीकायां भिषक्शालि-ग्रामवैश्यकृतकान्तादिकिट्टमारण नामनवमोपदेशः समाप्तः ॥ ९ ॥

नानाविधानितैलपातनान्याह।

तैलानांपातनंवक्ष्येसूर्यपाकेऽप्यथानले।
यंत्रयोगेनयत्तैलंग्राह्यंयोगेषुयोजयेत् ॥ १ ॥
धत्तूरबीजचूर्णानिवस्त्रपूतानिकारयेत्।
आलिप्यकांस्यपात्रन्तुधारयेदातपेखरे ॥ २ ॥
सुतप्तंवस्त्रपूतंचपातयेत्तैलमाहरेत्।
शिग्रुपुष्करबीजानांबीजस्यमाकुजस्यच ॥ ३ ॥
ग्राह्यंधुत्तूरवत्तैलमेकैकस्यपृथक्पृथक्।
यथाधुस्तुरजंतैलंक्काथाद्धर्मेसमुद्धृतम् ॥ ४ ॥
तथासर्वत्रतैलानिसंग्राह्यान्यौषधान्तरैः।
अंकोटस्यापितैलंस्यात्काकतुण्डचासमूलया ॥ ५ ॥
वाकुचीदेवदाल्याश्चकर्कोटीमूलतोभवेत्।
अपामार्गकषायेणतैलंस्याद्विषतुण्डजम् ॥ ६ ॥
मूलक्काथैःकुमार्यास्तुतैलंजैपालजंभवेत्।
क्काथेनरक्तमार्गस्यवाकुचीतैलमाहरेत् ॥ ७ ॥
क्काथेनचेन्द्रवारुण्यास्तैलमारग्वधंभवेत्।
काकतुण्डचापामार्गोत्थक्काथात्तैलंसमाहरेत् ॥ ८ ॥
बीजानिकटुतुम्ब्याश्चगोमयेनविलोडयेत्।
शुष्कंधान्यतुषैःसार्द्धंकुट्टयेच्चउलूखले ॥ ९ ॥
निस्तुषंतंविचूर्ण्याथ भृंगराजरसैःसह।
मर्दयित्वातपेतैलंगृह्णीयात्पीडनेसति ॥ १० ॥
कृष्णायाःकाकतुण्डयाश्चबीजंचूर्णानिकारयेत्।
कान्तपाषाणचूर्णञ्चएकीकृत्यनिरोधयेत् ॥ ११ ॥
धान्यराशिगतंपक्त्वाउद्धृतेतैलमाहरेत्।

धात्रीफलरसैर्भाव्यंचूर्णपाषाणबीजकम् ॥ १२ ॥
दिनैकंचततोयत्नेतैलंग्राह्यञ्चतैलके ।
गुंजाकरञ्जफलञ्चनरमूत्रेणभावयेत् ॥ १३ ॥
सप्तवारंततोघर्मेलेपयेत्कांस्यभाजनम् ।
उद्धृत्यधारयेद्घर्मेतैलंपततिपीडनात् ॥ १४ ॥
वर्द्धमानारनालेनपिष्ट्वाचूर्णविभावयेत् ।
ज्योतिष्मत्युत्थबीजानिआतपेतैलमाहरेत् ॥ १५ ॥
पुत्रंजीवस्यबीजानांचूर्णमगस्तिबीजजम् ॥
आम्रातवत्प्रकर्त्तव्यंततस्तैलंपृथक्पृथक् ॥ १६ ॥
नारिकेलाम्बुनाभाव्यंबिल्वबीजस्यचूर्णकम् ।
दिनैकंतैलयंत्रेणतैलमाकृष्ययोजयेत् ॥ १७ ॥
निस्तुषांकोलबीजानांसुखंकिंचिद्विघर्षयेत् ।
प्रलेपयेत्कांस्यपात्रेपिष्ट्वाचणकलेपने ॥ १८ ॥
तन्मुखेटंकणंचूर्णंकिञ्चित्किंचित्प्रलेपयेत् ।
धारयेदातपेतीव्रमुखात्तैलंसमाहरेत् ॥ १९ ॥
शमीचूर्णसमंपिष्ट्वाछिद्रभाण्डेनिवेशयेत् ।
छिद्राधःस्थापयेद्भाण्डंछिद्रेकेशंचदापयेत् ॥ २० ॥
जलेनसेचयेद्द्रव्यंछिद्राधोग्राहयेच्चतम् ।
तन्मध्येघृतकेशस्याक्षिपेदूर्द्ध्वंपुटंशनैः ॥ २१ ॥
तत्क्षणाद्द्रवरूपञ्चकेशतैलमिदंभवेत् ।
अपक्वभानुपत्राणांरसमादायभावयेत् ॥ २२ ॥
समस्तंबीजचूर्णञ्चउक्तानुक्तंपृथक्पृथक् ।
आतपेमुच्यतेतैलंसाध्यासाध्यंनसंशयः ॥ २३ ॥
तथैवोत्तरवारुण्याःकषायेणसमाहरेत् ।
तैलंसमस्तबीजानांग्राहयेदातपेखरे ॥ २४ ॥

सर्वबीजास्थिमांसानांशुष्कंपिष्ट्वाह्यनेकधा।
सर्वबीजेषुवातैलंग्राह्यंपातालयन्त्रके ॥ २५ ॥
वंशादिसर्वकाष्ठानांनारिकेलकपालकम्।
तुषधान्यादिबीजानांगर्भयंत्रेणतैलकम् ॥ २६ ॥
ग्राहयेत्सर्वबीजानांतच्चयोगेषुयोजयेत् ॥ २७ ॥

अर्थ–सूर्यकी धूपमें और अग्निके योगसे तेलोंका पातन वर्णन करते हैं, जिस यंत्र (कोलू) के योगसे तेल निकाला जाय वह तेल सब योगोंमें योजना चाहिये ॥ १ ॥ धतूरेके बीजोंको बारीक पीस चूरन करले, उस चूरनको वस्त्रमें छानकर जड़सहित इन्द्रायनके काथमें बिलोवै, फिर इसको कांसीके पात्रपै लेपकर धूपमें धरदेवै, जब गरम होजाय तब वस्त्रमें छानकर तेलको ग्रहण करै। सैंजिनेकबीज, पोहकरमूलके बीज, और भांगरेके बीज, इन सबका तेल अलग अलग धतूरेके बीजोंकी समान निकालै, जिसप्रकार धतूरेके बीजोंको धूपमें धर तेल निकालाहो, उसी प्रकार सर्व औषधियोंका तेल निकालै, मूलसहित कौआठोड़ीके काथके साथ अंकोलका तेल, बाँझककोड़ेकी जड़के द्वारा देवदाली और बापचीका तेल अपामार्ग (चिरचिटा)के काथसे, विषतुण्डीका तेल घीकुवारकी जड़के काथसे, जमालगोटेका तेल लालचिरचिटेके द्वारा, बापचीका तेल इन्द्रायणके काथके द्वारा, अमलतासका तेल और चिरचिटेके काथसे काकजंघाका तेल निकलताहै। कड़वीतौंबीके बीज गोबरमें सानकर सुखावै, फिर धानोंकी भूसीके साथ ओखलीमें कूट तुषरहितकर चूरनकरले, उसचूरनको भाँगरेके रसमें खरलकर धूपमें वस्त्रके द्वारा तेलको ग्रहणकरै। पीपल और कौआठोड़ीके बीजोंको एकत्र पीसकर चूरन करले, फिर उसमें कान्तपाषाणका चूरन मिला पात्रमें रख मुखबंदकर धानोंके ढेरमें धरदेवै, फिर कुछेकदिनोंमें निकालकर तेल निकालै। पाषाणबीजके चूरनको आमलेके रसमें भावनादेकर एकदिन यंत्रमें डाल तेलको ग्रहणकरै। चौटली और करंजके फलोंको बारीक पीसकर चूरन करले उस चूरनको मनुष्यके मूत्रमें सातवार भावनादेकर काँसीके पात्रपै लेपकर धूपमें धर पीडनकरनेसे तेल निकलताहै। अंडके बीज और मालकांगनीके बीजोंको काँजीमें भावना देकर

धूपमें धरनेसे तेल निकलताहै। जियापोता और अगस्तियेके बीजोंकातेल आम्रातकके तेलकी समान निकलताहै। बेलके बीजोंको नारियलके जलमें भावनादे एकदिन तैलयंत्रमें पेल तेल ग्रहणकरना चाहिये। निस्तुषअंकोलके बीजोंका मुख किंचित् घिसकर कांसीके पात्रमें रख तिसपै चनेंकि चूरनका लेपकरै फिर उसके मुखपै कुछ कुछ सुहागेके चूरनका लेपकरै, फिर धूपमें धरनेसे सुखपूर्वक तेल निकलताहै। समीके बीजोंका चूरनकर छिद्रयुक्तभाण्डमें रखै, और उसभाण्डके छिद्रमें बालोंको रखै, और छिद्रके नीचै एकभाण्ड और धरै, उसद्रव्यको जलसे सींचताजाय, जो छिद्रमेंसे निकल दूसरे पात्रमें जावै, उसको लेकर बालोंयुक्तपात्रमें धीरे धीरे पुटदेवै, इसप्रकार पुटपाक करनेसे तत्क्षण जो द्रव्य निकले उसको केशतेल कहतेहैं। सर्व प्रकारके बीजोंका चूरन अलग अलग कच्चे आकके पत्तोंके रसमें भावनादेकर धूपमें धरनेसे निःसन्देह तेल निकलताहै। इन्द्रायनके काथमें सबद्रव्योंके बीजोंको भावना देकर तेज धूपमें धरनेसे तेल निकलताहै। सर्वप्रकारके बीज, अस्थि और मज्जादिको सुखाकर अनेकवार पीस पातालयंत्रके द्वारा तेल निकालना चाहिये। वंशादिसर्वकाष्ठ, नारियलकी खोपरी और तुषधान्यादिके बीज, इनसबका तेल गर्भयंत्रके द्वारा निकालना चाहिये। इसप्रकार सब बीजादिकोंका तेल निकालकर सर्व योगोंमें प्रयोगकरना चाहिये ॥२॥ ३ ॥ ४ ॥ ५॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९॥ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥

अथान्यमूलिकाविधिमाह ।

वत्सनाभंविषंस्वादुदीपनंकफवातजित् ।
त्रिदोषशमनंयोगयुक्तंसुधामयंभवेत् ॥ २८ ॥
बृंहणंबलवीर्यस्यवाडवाग्निशतोपमम् ।
सान्निपातेप्रतीकारेप्रभवःप्रभवोऽस्याहि ॥ २९ ॥
उद्धृतंफलपाकान्तेनवंस्निग्धंघनंगुरु ।
अव्यापकंविषहरंवातातपविशोषितम् ॥ ३० ॥
रक्तसर्षपतैलेनलिप्तवाससिधारयेत् ।

अथवापियथाप्राप्तंविषंगोमूत्रसंयुतम् ॥ ३१ ॥
आतपेत्रिदिनंशुष्कंनिहतंवीर्यधृग्भवेत्।
मृतंसूताभ्रकंलौहंविषञ्चतुल्यवीर्यकम् ॥ ३२ ॥
तस्माद्विषंयोगवाहेयोज्यंयोगेरसायने।
तानिचैवतुमानानिअष्टौषड्वाचतुर्थकान् ॥ ३३ ॥
मात्रात्रयंसमाख्यातमुत्तमाधममध्यमम् ।
दातव्यंसर्वरोगेषुघृताशिनेहिताशिने ॥ ३४ ॥
क्षीराशिनेप्रदातव्यंरसायनवतेनरे।
नक्रोधितेनपित्ताढ्येनक्लीबेराजयक्ष्मणि ॥ ३५ ॥
क्षुत्तृष्णाश्रमकर्माध्वशोषिणेक्षयरोगिणे।
गर्भिणीबालवृद्धेषुनविषंराजमंदिरे ॥ ३६ ॥
नदातव्यंनभोक्तव्यंविसंवादेकदाचन।
आचार्येणतुभोक्तव्यंशिष्यप्रत्ययकारकम् ॥ ३७ ॥
अनेनमंत्रेणमर्दयेद्धूमौनस्थापयेत् ।
अमृतमितिवदेदितिक्रमोऽयम्।
ओं सिद्धिगुरुभ्योनमः। परमगुरुभ्योनमः।
परात्परगुरुभ्योनमः। परमेष्ठिगुरुभ्योनमः।

नवरंजनी कालगंजनी झङ्कारै वेसजव आनिमंत्रे वड़वाग्निकुंडहुंभक्षन्ततोनृजामि नागलोक, उत्थाकालकुट्टं-तथा ऊपाजिना एवघट्टया हिरे विषमाचीहोः जाहिरे विप्रोवटहोः ईश्वर महादेवकी आज्ञायो वा भक्ति गुरुकी शक्ति ॥ वारत्रयंपाठितव्यम्।

ततोद्रव्यान्तरेणमेलकम्। इतिप्रज्ञासरस्वतीमतम्।

अर्थ—वत्सनाभविष (मीठा)—मधुर, अग्निप्रदीपक, कफवातनाशक, त्रिदोषनिवारक और योगमें मिला हुआ अमृतकी समान गुण करने-

वालाहै ॥ २८ ॥ पुष्टिकारक, बलकारक, वीर्यवर्द्धक, १०० वडवाग्निकी समान दीपन और सन्निपातरोगमें विशेष उपकारी है॥२९॥ फलके पकजानेपर ऊखाडा हुआ, नवीन, चिकना, घन, अव्यापक, विषको हरनेवाला, पवन और धूपसे सुखाहुआ ऐसा वत्सनाभ विष ग्रहणकरना चाहिये । लालसरसोंके तेलसे लिप्त किये हुए वस्त्रमें विषको धारण करना चाहिये । अथवा विषको गोमूत्रमें मिलाकर तीन दिन धूपमें सुखावै तौ निस्तेज और वीर्यको धारणकरनेवाला होजाता है ॥

मारा हुआ पारा, अभ्रक, लोहा और विष, यह सब समानवीर्यवालेहैं । इसकारण सर्वप्रकारके योगवाहकयोगोंमें और रसायनयोगोंमें विषप्रयोग करना योग्यहै । इसकी उत्तम मात्रा आठ चावलकी, मध्यम छै चावलकी और अधम ४ चार चावलकी है । घृत और दूध सेवन करनेवाले तथा रसायन मनुष्योंके लिये यह सर्व रोगोंमें हितकारीहै । क्रोधी, पित्तकी प्रकृतिवाला, नपुंसक, राजरोगवाला, क्षुधासें व्याकुल, तृषासे घबड़ाया हुआ, परिश्रमसे और मार्गके चलनेसे थकाहुआ, क्षयरोगवाला, गर्भिणी, बालक और वृद्ध इन सबमनुष्योंको, तथा राजमंदिरमें और विषके वादमें कभीभी विषका सेवन करना, वा कराना तथा देना नहीं चाहिये ॥

शिष्यके निश्चयके लिये गुरुको विषका सेवनकरना चाहिये । अमृतमिति०की शक्ति, इसमंत्रको तीनवार पढ़कर विषको मर्द्दनकरै परन्तु भूमिमें न रक्खै । अन्यद्रव्योंमें मिलावै ॥

सक्तुकंमुस्तकंश्रृंगीवालकंसर्षपाह्वयम् ।
वत्सनाभश्चकूर्म्मश्चश्वेतश्रृंगीतथाष्टमम् ॥ ३८ ॥
इत्यष्टौयोजयेद्योगेकालकूटादिवर्ज्जयेत् ।
कालकूटंमेषश्रृंगीहलहलंचदर्दुरम् ॥ ३९ ॥
कर्कटंमर्कटंग्रन्थिहरिद्रंरक्तश्रृंगकम् ।
केशवंदशमश्चेतिवर्जनीयंभिषग्वरैः ॥ ४० ॥
सक्तुकाद्यान्प्रयुञ्जीतसर्वरोगेरसायने ।
एताद्विषंजातिचतुष्टयंचविचार्ययोज्यंभिषगुत्तमेन ॥४१॥

यथा--विप्रोरक्षतियौवनंनरपतिस्तद्भूतलेपालताम् ।
वैश्यःकुष्ठविनाशनेचकुशलःशूद्रोहरेज्जीवनम् ॥
तस्माच्चापिभिषग्वरेणनिपुणैस्तद्वेदिनाभावयेत् ।
कुर्यादेनततोविषंनृपवरोमृत्युंजयायक्षितौ ॥ ४२ ॥
श्वेतावायादिवापिङ्गामधुराउषरापिवा ।
लोमशाब्रह्मजातिःस्यात्क्षत्रजातिस्तुलोहिता ॥ ४३ ॥
पीतावामधुराकिंचिद्वैश्यजातिस्तुधूसरा ।
कृष्णाशूद्रस्यदृश्येतएतेषांचभिषग्वरैः ॥ ४४ ॥
क्षीरंसंपूर्यभाण्डेपिविषंदत्त्वाविचिन्तयेत् ।
जायतेपियदावर्णंतदाजातिंविनिर्दिशेत् ॥ ४५ ॥
शुक्लंरक्तंतथापीतंकृष्णञ्चेतिचतुर्विधम् ।
ब्रह्मक्षत्रविट्शूद्राणांज्ञातव्योजातिनिर्णयः ॥ ४६ ॥
क्षिप्तंदुग्धेविषंवैद्योजानीयात्क्रमशोयदि ।
श्वेतंरक्तंतथापीतंकृष्णंचोष्णत्वमेवच ॥ ४१ ॥

अर्थ—सक्तुक, मुस्तक, शृंगी, वालक, सर्षपाह्वय, वत्सनाभ, कूर्म और श्वेतशृंगी यह आठप्रकारके विष सर्वयोगोंमें व्यवहारकरने चाहिये। और कालकूटादिविषोंको वर्जना चाहिये। कालकूट, मेषशृंगी, हलाहल, दर्दूर, कर्कट, मरकट, हारिद्र, रक्तशृंगक, ग्रंथि और केशव यह दशप्रकारके विष सर्वयोगोंमें त्यागने चाहिये। शक्तुकादिआठप्रकारके विष सर्वप्रकारके रोगोंमें और रसायनकर्ममें व्यवहारकरने योग्यहैं। यहविष ब्राह्मणादि जातिभेदसे चारप्रकारकेहैं, इसकारण वैद्यको जातियोंका विचारकर विषका व्यवहार करना चाहिये। ब्राह्मणविष यौवनकी रक्षा करैहै, क्षत्रिय विष शरीरको पुष्ट करैहै, वैश्यविष कुष्ठनाशक और शूद्र विष प्राणनाशकहै ॥ जो विष सफेद, पिंगलवर्ण, मधुर, उषर और रोमयुक्तहो उसको ब्राह्मणजातिका जानना। जो विष लालरंगका, पीलेरंगका, और किंचित् मधुरहो उसको क्षत्रिय कहतेहैं। धूसररंगके विषको वैश्य और कालेरंगके विषको शूद्रजातिका जानना। किसीबरतनमें दूधभर

और उसदूधमें विषको डालदेवै, कुछकालके उपरान्त जो दूध सफेद होजाय तौ ब्राह्मण, लाल होजायतौ क्षत्रिय, पीला पड़जायतौ वैश्य और काला होजायतौ शूद्रजातिका विष जानना । दूधमें विष मिलाकर दही जमावै; सफेद, लाल, पीला और काला इनमेंसे जिसरंगका दही जमके होजाय, उसही जातिका विष जानना चाहिये ॥

ग्रन्थान्तरे ।

तुल्येनटंगणेनैवम्रियतेपेषणाद्विषम् ।
विषेषुजंगमाख्येषुविषंनागभवंहितम् ॥ ४८ ॥
इदमेवमहाश्रेष्ठंत्रिदोषक्षपणं क्षणात् ।
दीपनंकुरुतेसद्योवडवाग्निशतोपमम् ॥ ४९ ॥
सन्निपातप्रतीकारेप्रभावःप्रभवोहिसः ॥ ५० ॥

अर्थ–विषके समानभाग सुहागा मिलाकर खरलकरै तौ विष मरजाताहै । जंगमविषोंमें सर्पका विष हितकारीहै, सर्वश्रेष्ठ, त्रिदोष नाशक, दीपन और सौवडवाग्निकी समान जठराग्निको करदेताहै तथा सन्निपातके नाशकरनेमें अत्युत्तम औषधिहै ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥

रसेन्द्रचूडामणौ ।

नागोद्भवंयथाप्राप्तंविषंगोमूत्रसंयुतम् ।
आतपेत्रिदिनंशुष्कंनिहितंवीर्यधृग्भवेत् ॥ ५१ ॥
अतिमात्रंयदाभुङ्क्तेतदाज्यंटंगणंपिबेत् ।
रजनीमेघनादावासर्पाक्षीवाघृतान्विता ॥ ५२ ॥
लिहेद्वामधुसर्पिभ्यांचूर्णितामर्जुनत्वचम् ।
पुत्रंजीवकमज्जांवापिबेद्वानिम्बकद्रवम् ॥ ५३ ॥
एवंविषविधिःख्यातःप्रयोगंचवदाम्यहम् ।
विषंत्रिकटुकंमुस्तंहारिद्रानिंबपत्रकम् ॥ ५४ ॥
विडंगमष्टमंचूर्णंछागमूत्रैःसमंसमम् ।
चणकाभावटीख्यातास्याज्जयायोगवाहिका ॥ ५५ ॥

विषंपाठाश्वगंधाश्वबलातालीशपत्रकम्।
मरिचंपिप्पलीनिम्बमजामूत्रेणतुल्यकम्॥ ५६॥
वटिकापूर्ववत्कार्यावटिकायोगवाहिका।
निद्रांतन्द्रांक्लमंदाहंसफेनंलोमहर्षणम्॥ ५७॥
शोषंचैवातिसारश्चकुरुतेजंगमंविषम्।
स्थावरन्तुज्वरंहिक्कांदन्तहर्षंगलग्रहम्॥ ५८॥
फेनच्छर्द्यरुचिश्वासंमूर्च्छांचकुरुतेविषम्।
नजानातियदामंत्रीविषंभक्षयेच्चिकित्सितम्॥ ५९॥
विषमेवतदादायमज्जत्यम्बुनिधाविव।
तस्माद्यत्नेनसंरक्षेद्राजाविषचिकित्सकम्॥ ६०॥
प्रथमंवह्निखर्परिकायांमनाक्दृष्ट्वावक्ष्यमाण-
मन्त्रेणनिर्विषंविधायगृह्णीयादिति॥

अमृतशुद्धिः।

भगवन् शिवाधिकारिन् विषन्नास्ति।
अनेनएकादशवाराभिमन्त्रितंकुर्यात्॥
चरीधरेविषमाटीहोइ अनेनसप्ताभिमंत्रितंकुर्यात्॥

अर्थ-सर्पके विषको गोमूत्रमें तीनदिन रखनेसे वीर्यवान् होजाताहै। जब विषमात्रासे अधिक भक्षण कियाजाय तब घृतमें सुहागा मिलाकर पीवै, अथवा हलदी, चौलाई, और सर्पाक्षिको घृतमें मिलाकर पीवै, अथवा उपरोक्त तीनों औषधियोंके रसमें सहत और घीयुक्तकर अवलेहकी समान बनाकर चाटै, अथवा अर्जुनकी छालके चुरनको सहत और घृतमें मिलाकर चाटै, तथा जियापोताकी मज्जाको पीसकर सहत और घीमें मिलाकर चाटै, अथवा नीबके रसको पीवै तौ विषके वेगशान्ति होजातेहैं। इसप्रकार विषकी विधि कही। अब विषके प्रयोग कहताहूँ॥

विष, त्रिकुटा, नागरमोथा, हलदी, नीबके पत्ते, और वायविडंग, इनआठ औषधियोंको बकरेकेमूत्रमें खरलकर चनेकी बराबर गोली बनालेवै

इनको योगवाहिका जयावटी कहतेहैं । अथवा यह जयावटी सर्वरोगों-को जीतनेवालीहैं ।

विष, पाढ, गंधक, खिरैटी, तालीसपत्र, मिरच, पीपल, और नीमके पत्ते इनसबको समानभाग लेकर बकरीके मूत्रमें खरलकरकै चनेकी बराबर गोली बनालेवै, यह योगवाहिका वटीहै । जंगमविष–निद्रा, तन्द्रा, क्लम, दाह, फेनयुक्तवमन, लोमहर्षण, शोष, और अतिसाररोगकों उत्पन्न करैहै । स्थावरविष–ज्वर, हिक्का, दन्तहर्ष, गलवेदना, फेनयुक्तवमन, अरुचि, श्वास और मूर्च्छाको उत्पन्न करताहै । और जोमनुष्य विषको भक्षण करै और विषकी चिकित्सा नहीं जानै वह मनुष्य समुद्रमें डूबनें योग्य है । इसकारण बुद्धिमान् प्रथम विषकी चिकित्सा जान तदनन्तर विषके भक्षण करनेकी इच्छाकरै । प्रथम विषको अग्निकेद्वारा कढ़ाईमें डाल पीछै वक्ष्यमाणमंत्रको पढ़कर निर्विषकर ग्रहण करै । (भगवन् इत्यादि) इसमंत्रको ११ वार पढ़कर विषको अभिमंत्रितकरै और (चरी धरे विषमाटी होइ) इसमंत्रको सातवार पढ़कर विषको अभिमंत्रित करना चाहिये ॥

अथपित्तशुद्धिः ।

निम्बद्रवेपित्तंवारत्रयंविभाव्यप्रक्षाल्यसंशोष्यगृह्णीयादिति ।

हेमाद्याःसूर्यसन्तप्ताःस्रवन्तिगिरिधातवः ।
जत्वाभंमृदुमृत्स्नाभंयन्मलंतच्छिलाजतु ॥ ६१ ॥
अनम्लंचाकषायश्चकटुपाकेशिलाजतु ।
नात्युष्णशीतंधातुभ्यश्चतुर्भ्यस्तस्यसम्भवः ॥ ६२ ॥
हेम्नोऽथरजतात्ताम्राद्वरंकालायसादपि ।
मधुरंचसतिक्तंचजपापुष्पनिभंचयत् ॥ ६३ ॥
विपाकेकटुशीतंचतत्सुवर्णस्यनिःसृतम् ।
राजतंकटुकंश्वेतंशीतंस्वादुविपच्यते ॥ ६४ ॥
ताम्राद्बर्हिणकण्ठाभंतीक्ष्णोष्णंपच्यतेकटु ।
यच्चगुग्गुलुसंकाशंसतिक्तंलवणान्वितम् ॥ ६५ ॥
विपाकेकटुशीतंचसर्वश्रेष्ठंतदायसम् ।

गोमूत्रगंधःसर्वेषांसर्वेकर्मसुयौगिकाः ॥ ६६ ॥
रसायनप्रयोगेषुपश्चिमन्तुविशिष्यते ।
यथाक्रमंवातपित्तश्लेष्मपित्तेकफेत्रिषु ॥ ६७ ॥
विशेषेणप्रशस्यन्तेमलाहेमादिधातुजाः ।
लोहःकिट्टायतेवह्नौविधूमंदह्यतेऽम्भसि ॥ ६८ ॥
तृणाद्यग्रेकृतंश्रेष्ठमधोगलतितन्तुवत् ।
(तदेवपरीक्षितस्यशोधनंयथा)
दंशदष्टौषधादिदोषहरणार्थंमेषशृंगंभूर्ज्जपत्रेणधूपयेत् । क्वाथद्रव्यंशिलाजतुसमंचतुर्गुणेनजलंदत्त्वा चतुर्भागावशेषेणभावयेदित्येकःपक्षः वाग्भटस्तु अष्टगुणजलदानेनाष्टावशेषेपूर्ववदुभयथैवव्यवहारः । भद्रशिलाजतुत्रिफलादशमूलउष्णक्वाथेननिक्षिप्यकेवलोष्णोदकेनवास्थितेऊर्द्धीभूतेपद्मपत्रवत् सर्वंग्राह्यंततःशिवागुडिकोक्तक्रमेणभावनांदत्त्वा विशोध्यसालसारादिनाभावयेद्यथा ।
सालयुग्मौकरंजौद्वौखदिरंचन्दनद्वयम् ।
गर्दभाण्डोऽर्जुनश्चेहलोध्रयुग्मधवासनाः ॥ ६९ ॥
शिरीषागुरुकालीयपूगपूतीककर्कटाः ।
सालसारादिरप्येषगणःश्लेष्मगदापहः ॥ ७० ॥
मेहगुल्मार्शकुष्ठादिमेदःपाण्डुरुजापहः ।
एभिर्दिवातपेशोष्यंरात्रौरात्रौचभावयेत् ॥ ७१ ॥
द्रवेणयावताद्रव्यमेकीभूयार्द्रतांव्रजेत् ।
भवेत्प्रमाणंनिर्दिष्टंभिषग्भिर्भावनाविधौ ॥ ७२ ॥
भवेद्द्रव्यंसमंक्वाथ्यंक्वाथंचाष्टावशेषितम् ।
तेनार्द्रसमकृद्द्रव्यंशोषयेत्प्रबलातपे ॥ ७३ ॥

इति शिलाजतुशुद्धिः ।

अर्थ-पित्तको नीमके पत्तोंके रसमें तीनवार भावनादे, पानीमें धोकर सुखालेवै तौ पित्त शुद्ध होजाताहै । सुवर्णादि सर्व पर्वतकी धातु सूर्यकी उष्णतासे तप्तहोके झिरतीहै, उसको शिलाजीत कहतेहैं । लाखकी समान रंगवाला और मृदुमट्टीकी समान कोमल सुवर्णादिकके मैलको शिलाजित कहतेहैं । शिलाजीत-पापनाशक, अल्पकषेला, पचनेमें चर्परा, न अत्यंत गरम और न अत्यंत शीतलहै । सोना, चाँदी, ताँबा, कान्तलोह इन चारप्रकारकी धातुओंसे शिलाजीत उत्पन्न होता है । जो शिलाजीत-मधुर, कड़वा, जवाके फूलकी समान लाल, पचनेमें चर्परा और शीतलहो उसको सुवर्णसे उत्पन्न हुआ जानना । जो शिलाजीत-चर्परा, सफेद,शीतल और पचनेमें मधुर हो उसको चांदीसे उत्पन्न हुआ जानना । जो शिलाजीत-मोरके कंठकी समान कांतिवाला, तीक्ष्ण, उष्ण और पचनेमें चर्परा उसको ताँबेसे और जो शिलाजीत गूगलकी समान रंगवाला, कडवा, नमकीन, पचनेमें चर्परा और शीतलहो उसको लोहेसे उत्पन्न हुआ वा सर्वमें श्रेष्ठ शिलाजीत जानना। सर्वप्रकारके शिलाजीतोंमें गोमूत्रकी गंध आती है और यह सर्वकर्मोंमें प्रयोग करने चाहिये और लोहेसे उत्पन्न हुआ शिलाजीत रसायनकर्ममें विशेषकर लेना चाहिये । पूर्वोक्तस्वर्णादिचारप्रकारके शिलाजीत क्रमसे वातपित्त, श्लेष्मापित्त, कफ और त्रिदोषमें प्रयोग करने चाहिये । जो शिलाजीत अग्निमें डालनेसे लोहेकी किट्टकी समान जलजाय और धुआं न उठे तथा पानीमें तृणके ऊपर रखकर उठानेसे तांतकी समान गलजावै, ऐसा शिलाजीत उत्तम होताहै।अब शिलाजीतकी शुद्धि कहते हैं,-सर्पादिके दंश और अन्यऔषधादिकके संयोगसे उत्पन्न हुए दोषोंको दूर करनेके लिये मेढ़ेके सींगके चूर्णसे और भोजपत्रसे धूप देकर शिलाजीतको शुद्धकरै । क्राथद्रव्य शिलाजीतकी समान लेकर चौगुने अथवा आठगुने जलमें पकावै; जब चौथाभाग अथवा आठमा भाग शेष रहैतौ उसमें शिलाजीतको भावना देवै । उत्तम शिलाजीतको त्रिफला और दशमूलके उष्णक्राथमें अथवा केवल गरमजलमें गेरे जब वह कमलके पत्तोंकीसमान ऊपरको आजावै तब ग्रहण करलेवै, फिर शिवागुटिकाके क्रमसे भावनादेकर शोधनकरै, पश्चात् सालसारादिगणके क्राथमें भावनादेवै । साल, पियासाल, करंज घृतकरंज,

लालचन्दन, सफेदचन्दन, गर्दभाण्ड, अर्जुन, धव, भोजपत्र, लोध, पठानीलोध, असन, सिरस, अगर पीलाचन्दन, सुपारी, पूतीक और काकड़ाशिंगी इन सबको सालसारादि कहतेहैं। यह कफरोग, प्रमेह, गुल्म, बवासीर, कोढ़ और मेद, तथा पांडुरोगनाशकहै। इसके काथमें शिलाजीतको रात्रिमें भावनादेवै, और दिनमें सुखावै, इसप्रकार द्रव वस्तुमें भावनायोग्यपदार्थ मग्नहोकर आर्द्र होताहै उसकी वही भावनाविधि जाननी। क्वाथ्यद्रव्य भावनाद्रव्यकी समान तथा क्वाथ आठमा भागशेष जानना। तिसके द्वारा गीलाकर धूपमें सुखालेवै, इसप्रकार शिलाजीत शुद्ध होजाताहै॥

अथ दग्धहीरकशुद्धिः।

दग्धहीरकंयोज्यंनिक्षिप्याग्नौध्मापयित्वानिर्गुण्डी-
रसेनसप्तवारान्निर्वाप्यप्रक्षाल्यगृह्णीयादिति ॥ ७४ ॥

अर्थ–दग्धहीरेको अग्निमें तपाके सातवार सम्हालूके रसमें भावना देकर धोलेवै तौ दग्धहीरा शुद्ध होजाताहै।

अथगुग्गुलु परीक्षा।

जायन्तेजनपदेवामरुभुविग्रीष्मेऽर्कतापोर्दिताः ।
शीतोष्णेशिशिरेचगुग्गुलुरसंमुञ्चन्तितेपंचधा ॥
हेमाभंमहिषाक्षतुल्यमपरंतत्पद्मरागोपमम् ।
भृंगाभंकुमुदद्युतिश्चविधिनाग्राह्यापरीक्षाततः ॥ ७५ ॥
वह्नौज्वलन्तितपनेविलयंप्रयान्ति
क्लिद्यन्तिकोष्णसलिलेपयसासमानाः ।
ग्राह्याःशुभाःपरिहरेच्चिरकालजातान-
ज्ञातस्फुटखर्परगन्धिकतुल्यवर्णान् ॥ ७६ ॥
स्वादेस्वादुकषायतिक्तकटुकोवीर्येविपाकेकटु
वृष्योमार्गविशोधनेऽतिविशदन्तीक्ष्णोविकारीसरः ।
सायुष्यःसुरदास्त्रिदोषशमनोमेधास्मृतिश्रीकरो
धन्यःपापनिषूदनोऽग्निजननोहृत्कण्ठशोधीपुनः ॥ ७७ ॥

तदेवंपरीक्षितस्यशोधनमाह ।

दशमूलक्काथेउष्णेपूतेगुग्गुलुंपरिक्षिप्यालोड्यच
वस्त्रपूतंविधायचण्डातपेविशोध्यघृतंदत्वापिण्डितम् ॥

इतिगुग्गुलुशुद्धिः ।

अर्थ–जनपदमें तथा मरुदेश (मारवाड) में ग्रीष्मकालके सूर्यकी उष्णतासे तप्त होकर गूगलके वृक्ष, शतोष्ण तथा शिशिरऋतुमें सोनेकी समान कांतियुक्त, महिषाक्ष, पद्मरागमणिकी सदृश, भाँगरेकी समान और कमोदिनीकी कान्तिकी सदृश पाँचप्रकारके रसको छोडतेहैं । जो गूगल अग्निमें डालनेसे जलजाय, धूपमें धरनेसे पिघल जाय, और गरम पानीमें डालनेसे घुलकर दूधकी समान होजाय ऐसा गूगल उत्तम होताहै । इसको ग्रहण करना चाहिये और जो पुरानाहो तथा ; जिसमें दुर्गन्ध आतीहो और अग्निमें रखनेसे जिसकी खीली होजाय ऐसा गूगल त्यागना चाहिये ।

गूगल–मधुर, कषेला, चरपरा, कडवा, वीर्य और विपाकमें चरपरा, वीर्यवर्द्धक, शरीरके मार्गको शोधनेवाला, अतिविशद, तीक्ष्ण विकारों-को हरनेवाला, सारक, आयुको बढ़ानेवाला, स्वरको सुन्दर करनेवाला, त्रिदोषनाशक, मेधाकारक, स्मरणशक्तिको करनेवाला, श्रीजनक, धन्य, पापनाशक, अग्निप्रदीपक, तथा हृदय और कण्ठको शुद्धकरनेवालाहै । दशमूलके काढ़ेको वस्त्रमें छानकर तिसमें गूगलको डाल फिर वस्त्रमें छान तेज धूपमें सुखावै, तदनंतर तिसमें घी मिलाकर गोला बनावै तौ गूगल शुद्धहोजाताहै ॥

अथशंखनाभिशुद्धिमाह ।

शंखनाभिस्तथाम्लेनसप्तवारंविभावयेत् ।
रौद्रेमलादिकंत्यक्काप्रक्षाल्यग्राहयेदिति ॥ ७८ ॥

अर्थ–शंखनाभिको काँजीमें सातवार भावना देकर धूपमें रखदे, फिर उसमेंसे मलादिकको निकाल धोकर ग्रहणकरलेवैतौ शंखना-भि शुद्ध होजायगी ॥ ७८ ॥

अथ वराटीशुद्धिमाह ।

वराटींतक्रचांगेरीजम्बीराणांरसेशुभे ।
प्रक्षिप्यभावयेत्तावद्यावच्छुक्लांनपश्यति ॥ ७९ ॥
पश्चादुद्धृत्यगृह्णीयाद्वराटींशुद्धिमागताम् ॥ ८० ॥

अर्थ-तक्र, चाङ्गेरी, और जम्भीरी नीबूके रसमें कौड़ीको भावना देवै जबतक सफेद नहोवै तबतक भावना देतारहै, फिर सफेद होनेपर ग्रहण करैतौ शुद्ध होजातीहै ॥ ७९ ॥ ८० ॥

अथमुक्ताशुद्धिमाह ।

भौमिकंजलमासाद्यमुक्तांचव्युषितामपि ।
त्यक्त्वामलादिकांताश्चप्रक्षाल्यग्राहयेदिति ॥ ८१ ॥

इतिखण्डं समाप्तम् ।

इतिश्रीपार्वतीपुत्रनित्यनाथसिद्धविरचिते रसरत्नाकरे रसखंडे तैलपातंननाम दशमोपदेशः ॥ १० ॥

अर्थ-मोतियोंको पृथ्वीके जलमें भिजोकर दूसरे दिन मैल आदिको दूरकर पानीसे धोकर ग्रहण करले ॥ ८१ ॥

इति श्रीमदायुर्वेदोद्धारकभिषक्शालिग्रामवैश्यमुरादाबादनिवासिकृतरसरत्नाकरे रसखंडेप्रदीपिकानामभाषाटीकायांतैलपातंननामदशमोपदेशः समाप्तः ॥१०॥

आयुरारोग्यदातारंभववैद्यंजगद्गुरुम् ।
आधिव्याधिहरंवन्देपरंशक्तियुतंशिवम् ॥ १ ॥
आयुर्हिताहितंव्याधेर्निदानंशमनंतथा ।
विद्यतेयत्रधीमद्भिःसआयुर्वेदउच्यते ॥ २ ॥
श्रुतेःपर्यवदातत्वंबहुशोदृष्टकर्मता ।
दाक्ष्यंशौचमितिज्ञेयंवैद्येगुणचतुष्टयम् ॥ ३ ॥
वैद्योव्याध्युपसृष्टश्चभेषजंपरिचारकः ।

एतेपादाश्चिकित्सायाःकर्मसाधनहेतवः ॥ ४ ॥
प्रत्युत्पन्नमतिःश्रीमान्व्यवसायीविशारदः ।
सत्यधर्मपरोयश्चसभिषक्पादउच्यते ॥ ५ ॥
आयुष्मान्सत्यवान्साध्योद्रव्यवान्मित्रवानपि ।
उच्यतेव्याधितःपादोवैद्यवाक्यकृदास्तिकः ॥ ६ ॥
प्रशस्तदेशसम्भूतंप्रशस्तेऽहनिचोद्धृतम् ।
अल्पमात्रंमहावीर्यंगंधवर्णरसान्वितम् ॥ ७ ॥
दोषघ्नमग्लानिकरमविकारिविपर्यये ।
समीक्ष्यकालेदत्तञ्चभेषजंपादउच्यते ॥ ८ ॥
स्निग्धोऽजुगुप्सुर्बलवान्युक्तोव्याधितरक्षणे ।
वैद्यवाक्यकृदातश्चपादःपरिचरःस्मृतः ॥ ९ ॥
मातरंपितरंपुत्रंबान्धवानपिचातुरः ।
अप्येतान्शंकतेनित्यंवैद्येविश्वासमेतिच ॥ १० ॥
कारणंषोडशगुणंसिद्धेःपादचतुष्टयम् ।
विज्ञाताशासितायोक्ताप्रधानंभिषगत्रतु ॥ ११ ॥
पक्तयेकारणंपक्तुर्यथापात्रेन्धनानलाः ।
विजेतुर्विजयेभूमिश्चमूःप्रहरणानिच ॥ १२ ॥
आतुराद्यास्तथापादाःसिद्धेःकारणसंज्ञिताः ।
वैद्यास्यतोचिकित्सायांप्रधानंकारणंभिषक् ॥ १३ ॥
मृत्कुण्डचक्रसूत्राद्याःकुम्भकाराद्दतेयथा ।
नावहान्तिगुणंवैद्याद्दतेपादत्रयन्तथा ॥ १४ ॥
तस्माच्छास्त्रेषुविज्ञातेप्रवृद्धेकर्मदर्शने ।
भिषक्चतुष्टयेउक्तःप्राणाभिशवउच्यते ॥ १५ ॥
हेतौलिंगेप्रशमनेरोगानामपुनर्भवे ।
ज्ञानंचतुर्विधंयस्यसराजार्हाभिषग्वरः ॥ १६ ॥

विद्यावितर्कोविज्ञानंस्मृतिस्तत्परताक्रिया ।
यस्यैतेषड्गुणास्त्वस्यनसाध्यमपिवर्त्तते ॥ १७ ॥
यस्यह्येतेगुणाःसर्वेसन्तिविद्यादयःशुभाः ।
सवैद्यशब्दसंभूतोजनप्राणसुखप्रदः ॥ १८ ॥
भिषग्जितश्चतुष्पादंपादंपादंचतुर्विधः ।
भिषक्प्रधानंपादेभ्योयस्माद्वैद्यश्चतुर्गुणः ॥ १९ ॥
साध्यासाध्यविभागज्ञोज्ञानपूर्वंचिकित्सकः ।
कालेचारभतेकर्मयत्तत्साधयतिध्रुवम् ॥ २० ॥
अल्पविद्यायशोऽग्लानिमपत्रपसंग्रहः ।
प्राप्नुयान्नियतंवैद्योयोऽसाध्यंसमुपाचरेत् २१ ॥
गतिरेकानवत्वञ्चरोगस्योपद्रवेणच ।
दोषश्चैकःसमुत्पत्तौदेहःसर्वौषधक्षमः ॥ २२ ॥
चतुष्पादोपपत्तिश्चसुखसाध्यस्यलक्षणम् ।
भिषजाप्राक्परीक्ष्यैवंविकाराणांसुलक्षणम् ॥ २३ ॥
पंचकर्मसमारंभःकायःसाध्येतुधीमता ।
यस्तुरोगमविज्ञायकर्माण्यारभतेभिषक् ॥ २४ ॥
अप्यौषधविधानज्ञस्तस्यासिद्धिर्यदृच्छया ।
यस्तुरोगविशेषज्ञःसर्वभैषज्यकोविदः ॥ २५ ॥
देशकालप्रमाणज्ञस्तस्यासिद्धिरसंशयः ॥ २६ ॥

इति चरकः ।

अर्थ–आयु और आरोग्यको देनेवाले, संसारके वैद्य, जगत्के गुरु, आधिव्याधिनाशक, सर्वमें श्रेष्ठ, और परमशक्तियुक्त ऐसे श्रीमहादेवको प्रणाम करूँ हूँ ॥ १ ॥ आयुका हिताहित, रोगकानिदान, और व्याधिके शमनका उपाय जिसके द्वारा जानाजाय उसको आयुर्वेद कहते हैं ॥ ॥ २ ॥ श्रुतिज्ञाता (शास्त्रोंका जानना) बहुदृष्टकर्मता (गुरुके समीप बहुतसी वैद्यककी क्रिया देखना,) दक्षता, और पवित्रता, यह चार

गुण वैद्यमें होने चाहिये ॥ ३ ॥ वैद्य, रोगी, औषध और परिचारक यह ४ चिकित्साके उपकरण जानने ॥ ४ ॥ चमत्कारबुद्धिवाला, लक्ष्मीवान्, व्यवसायी, विशारद और सत्यधर्ममें प्रीति करनेवाला· ऐसा वैद्य होना चाहिये ॥ ५ ॥ आयुष्मान्, सत्यवान्, साध्य, द्रव्यवान्, मित्रवान्, वैद्यके वचनोंके अनुसार चलनेवाला और आस्तिक ऐसा रोगी होना चाहिये ॥ ६ ॥ उत्तमदेशमें उत्पन्न हुई, शुभदिनमें उखाड़ी हुई, अल्पमात्र, महावीर्यवान्, गंध, वर्ण और रससंयुक्त, सातदोष नाशक, ग्लानिको नहीं करनेवाली, विकारवर्जित, और यथा समयमें देनी ऐसी औषधि होनी चाहिये ॥ ८ ॥ स्निग्ध, निन्दारहित, बलवान्, रोगीकी रक्षा और सेवाकरनेमें तत्पर, वैद्यके वचनोंके अनुसार चलनेवाला ऐसा परिचारक (सेवक) चिकित्साका पाद कहलाताहै॥९॥माता, पिता, पुत्र और भ्राता, इनके वचनोंमें भी शंका करनेवाला रोगी वैद्यके वचनोंमें शंका नहीं माने अर्थात् वैद्यके वचनोंका विश्वास करै ॥ १० ॥ सिद्धि (चिकित्सा) के षोड़श गुणे पादचतुष्टय कारणहैं, विज्ञाता, शासिता, भोक्ता और प्रधान इनमें प्रधान वैद्यहोता है ॥ ११ ॥ जैसे कि–रसोईकरनेके लिये पात्र इंधन और अग्नि कारण है तथा जैसे विजय लाभके लिये, जय भूमि सैना और अस्त्रादि कारण हैं ॥ १२ ॥ तैसेही रोगी आदि चारपाद सिद्धिके कारण हैं किन्तु चारों पादोंमें प्रधान वैद्यहै । जैसे चाक, मट्टी, डोरा और दण्डा, यह चारोंपात्रबनानेमें कारणहै । परंतु विना कुम्हारके पात्रको उत्पन्न नहीं करसक्तेहैं, तैसेही रोगी, औषध और सेवक यह तीनों पाद विना वैद्यके फलदेनेको समर्थ नहीं होते । इसकारण सबचिकित्साके पादोंमें प्रधान वैद्यहै। वैद्यशास्त्रमें प्रवीण, ज्ञानी और अनेक प्रकारके वैद्यकके कर्मोंको देखे हुयेहों ऐसे वैद्यको वैद्य कहाहै । रोगका हेतु, रोगका लक्षण, रोगकी शान्ति और फिर रोगोंका उत्पन्न होना, यह चार प्रकारका रोगोंके विषयका ज्ञान जिसमें हो उसको राजार्हभिषक् अर्थात् राजवैद्य कहतेहैं ॥ विद्या, तर्क, ज्ञान, स्मृति, तत्परता, और क्रिया, इन छैगुणोंसे युक्त वैद्य सर्वप्रकारके रोगियोंको सुख देनेवाला होता है । चारोंपादोंमें वैद्य प्रधान है ॥ साध्य और असाध्य रोगको जानकर वैद्य चिकित्साकर्ममें प्रवृत्तहोवै तौ निश्चय फलकी प्राप्ति अर्थात् रोगी आराम होजायँगे॥और जो चिकि-

त्सक असाध्यरोगीकी चिकित्सा करताहै । वह सदैव अल्पविद्या, अपयश, ग्लानि, लाजहीनता और असंग्रहको प्राप्त होता है । एकगति, नूतनता, उपद्रवहीनता, एकदोषसे रोगका उत्पन्नहोना रोगीका शरीर सर्वऔषधियोंके सहनेको समर्थ, और चारोंपादोंका होना यह सब रोगके सुखसाध्य लक्षण हैं। बुद्धिमान् चिकित्सक प्रथम विकारोंके लक्षणों को जानकर पश्चात् चिकित्सा करै ॥ जो वैद्य रोग और औषधिको नहीं जानता और चिकित्सा करने लगै तिसको सिद्धिकी प्राप्ति ईश्वराधीन जाननी । रोगोंको जाननेवाला और सर्वप्रकारकी औषधियोंमें प्रवीण और देश तथा कालको जाननेवाला ऐसा वैद्य निःसन्देह सिद्धिको प्राप्त होताहै ॥ ऐसा चरकमें लिखाहै ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥

अथ ज्वरचिकित्सामाह ।

पक्षाभिघातगलगंडगलग्रहाश्च
दण्डापतानकसमीरणशोणिताद्याः ।
इत्यामयाःस्युरपरत्राधिनापहारा-
द्गुर्वङ्गनागमनविप्रवधादिभिर्यैं ॥ २७ ॥
दुष्कर्मभिस्तनुभृतामिहकर्मजास्ते
नोपक्रमेणभिषजामुपयांतिशान्तिम् ।
दानैर्दयाभिरतिथिद्विजदेवतागो-
गुर्वर्चनाप्रणतिभिश्चजपैस्तपोभिः ॥ २८ ॥
इत्युक्तपुण्यनिचयैरुपचीयमाना
प्राक्पापजायदिरुजःप्रशमंप्रयान्ति ॥ २९ ॥
स्वहेतुदुष्टैरनिलादिदोषै-
रुपप्लुतैःखपरितःस्वनद्भिः ।
भवन्तियेप्राणभृतांविकारा-
स्तेदोषजाभेषजसिद्धिसाध्याः ॥ ३० ॥

दानादिभिःकर्मभिरोषधीभिःकर्मक्षयेदोषपरिक्षयेच।
सिध्यन्तियेयत्नवतांकथंचित्तेकर्मदोषप्रभवाविकाराः ३१
निवृत्तोऽपिमहाव्याधिःस्वल्पेनायातिहेतुना।
क्षीणेमंदीकृतेदोषेशेषःसूक्ष्मइवानलः॥ ३२॥
नास्तिरोगोविनादोषैर्यस्मात्कस्माच्चिकित्सकः।
अनुक्तमपिदोषाणांलिंगैर्व्याधिंसमुच्चरेत्॥ ३३॥
वायुरायुर्बलंवायुर्धातावायुःशरीरिणाम्।
वायुर्विश्वमिदंसर्वप्रभुर्वायुश्चकीर्त्तितः॥ ३४॥
सर्वाहिचेष्टावातस्यसप्राणःप्राणिनांस्मृतः।
तेनैवजायतेरोगस्तेनचैवोपशाम्यति॥ ३५॥
पित्तादुष्मोष्मणःपक्तिर्नराणामुपजायते।
पित्तंचैवप्रकुपितंविकारान्कुरुतेबहून्॥ ३६॥
प्राकृतस्तुबलंश्लेष्माविकृतोमलउच्यते।
जाठरोयःस्मृतःकायेसचपाप्मोपादिश्यते॥ ३७॥
एकःप्रकुपितोदोषःसर्वानेवप्रकोपयेत्॥ ३८॥
अंगस्यगौरवमपाटवमन्तराग्ने-
रुत्क्लेदिताचहृदयस्यमुखप्रसेकः।
आलस्यमास्यमधुरत्वमपाककण्डूः
सपाण्डुतानयनयोरितिरोमहर्षः॥ ३९॥
प्रज्ञाप्लुतिर्वमथुवेपथुकाशनिद्रा-
तन्द्रादयश्चुलुचुलायनमुल्बणेच।
स्यादोष्ठकर्णरसनागलतालुमूल-
घ्राणेक्षणश्रवणशष्कुलिकान्तरेषु॥ ४०॥
श्लेष्मोद्भवेभवतिलिंगमिदंविकार-
संसर्गजेषुचगदेषुभवेद्धिदोषः।

जन्तोरिदं पवनपित्तकफप्रकोप-
लिंगाद्विदोषजरुजे प्रविभज्य योज्यम् ॥ ४१ ॥
उद्देशमात्रमपि लक्षणमेतदुक्तं
युक्त्याव्यनक्ति पवनादिगदांतराणाम् ॥ ४२ ॥

अर्थ–पक्षाघात, गलगण्ड, गलग्रह, दण्डापतानक, और वातरक्त आदि रोग चोरी करनेसे, गुरुकी स्त्रीके साथ मैथुन करनेसे, और ब्राह्मणादिको मारनेसे और दुष्टकर्म करनेसे उत्पन्न हुए यह सब केवल चिकित्सा करनेसेही शमन नहीं होते; दान, दया, अतिथिपूजा, ब्राह्मणपूजा, देव पूजा, गौपूजा, और गुरुकीपूजा, और प्रणति तथा जप, तप आदि पुण्यकर्म करनेसे पूर्वोक्तरोग दूर होयँ तौ उनको पापजरोग जानना. अपने कारणोंसे दुषित हुए, शरीरमें फैलेहुए वातादिसे उत्पन्न हुए रोग औषधिके द्वारा शान्त होनेसे वातादिदोषज, तथा दानादिकर्म और औषधके द्वारा दोष और कर्मका नाश होकर शान्त होनेसै कर्मजरोग कहे जातेहैं । क्षिण तथा दोषकी मंदताके होनेपर निवृत्त हुआ रोगभी अल्पकारणसेही फिर उत्पन्न होजाता है, जैसे अग्निका चैंकाभी पवन और ईंधनके संयोगसै चैतन्य होजाताहै, तैसेही और दोषोंके कोप विना रोग नहीं उत्पन्न होताहै, इसकारण चतुरवैद्य प्रथम दोषोंके चिन्होंसे रोगका निदान करै । आयु, स्वरूप और बलरूप और प्राणियोंको जिवानेवाली, समस्तविश्ववायुमय, वायुप्रभुस्वरूप, वायुके द्वाराहि संपूर्ण कार्य सिद्ध होतेहैं तथा प्राणियोंके प्राणरूप इसकारण वायुसै उत्पन्न हुए रोग वायुसे ही शमन होतेहैं । मनुष्योंके देहमें पित्तसै उष्णोष्णक्रिया पकती है और यही पित्त कुपित होनेपर अनेकप्रकारके रोगोंको उत्पन्न करता है । प्राकृत बल कफ कहाजाताहैं और यही विकृत हुआ मल कहाजाताहै, इसलिये मनुष्योंके जो उदरमें मलहै वह पापहै । एक दोषभी कुपित हुआ सब दोषोंको कुपित करदेवैहै, और कुपितकफ प्राणियोंके देहमें अंगका भारीपन, जठराग्निकी मंदता, हृदयमें ग्लानि, मुखसे कफका गिरना, आलस्य, मुखमें मधुरता, अन्नका नहीं पचना, शरीरमें खुजलीका होना, नेत्रोंमें पीलापन, रोमावलीका खड़ाहोना, बुद्धि भ्रष्ट होजानी, वमन, कम्प, खाँसी, निद्रा और

तन्द्राको उत्पन्न करता है, तथा ओष्ठ, जिह्वा, गल, तालूकीजड़, नाक, नेत्र, कान, और कनपटी इन अंगोंमें चुलचुलापनको उत्पन्न करताहै । यह सब लक्षण कफसे उत्पन्न हुए रोगोंमें होते हैं । और दो दोषोंसे उत्पन्न हुए ज्वरादिरोगोंमें दो दोषोंके चिह्न उत्पन्न होते हैं और तीन दोषोंसें उत्पन्न हुए ज्वरादि रोगोंमें तीन दोषोंके चिह्न उत्पन्न होतेहैं । ऐसे उद्देशमात्र लक्षण कहते हैं । सुचिकित्सक युक्तिद्वारा भलेप्रकार वातादिसे उत्पन्न हुए रोगोंका निर्णयकरै ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ॥३१॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ॥ ४१ ॥ ४२ ॥

पित्तंप्रावृषिचीयतेशरदिचप्राप्नोतिकोपंपुनः ।
शान्तियातिहिमेकफस्यतुहिनेसञ्जायतेसंचयः ॥
कोपश्चास्यमधौप्रशान्तिरपिचग्रीष्मेसमीरःपुनः ।
ग्रीष्मेसंचितवातःप्रकुप्यति पयःकालेशरत्तंहरेत् ॥४३॥
वायुःपित्तंकफश्चेतित्रयोदोषाःसमासतः ।
विकृताविकृतादेहंघ्नन्तिसंवर्त्तयन्तिच ॥ ४४ ॥
निसर्गादानविक्षेपैःसोमसूर्यानिलायथा ।
धारयन्तिजगद्देहंकफापित्तानिलास्तथा ॥ ४५ ॥
विभुत्वादाशुकारित्वात्बलित्वादन्यकोपनात् ।
स्वातंत्र्याद्बहुवेगत्वाद्दोषाणांप्रभवोऽनिलः ॥ ४६ ॥
सर्वाहिचेष्टावातेनसप्राणःप्राणिनांमतः ।
पित्तंपङ्गुकफःपंगुःपङ्गवोमलधातवः ॥ ४७ ॥
वायुनायत्रनीयन्तेतत्रवर्षन्तिमेघवत् ।
शरीरेकर्मभिस्तैस्तैःपंचधातेपृथक्पृथक् ॥ ४८ ॥
पक्काशयकटीसक्थिश्रोत्रास्थिस्पर्शनेन्द्रियम् ।
स्थानंवातस्यतत्रापिपक्काधानंविशेषतः ॥ ४९ ॥
स्थानंप्राणस्यमूर्द्धोरःकेचिज्जिह्वास्यनासिका ।

ष्ठीवनंक्षवथूद्गारःश्वासहासादिकर्मच ॥ ५० ॥
उरःस्थानमुदानस्यनासानाभिगलम्भवेत् ।
वाक्प्रवृत्तिश्चजनयेद्बलवर्णस्मृतिक्रियः ॥ ५१ ॥
समानोऽग्निसमीपस्थःकोष्ठेचरतिसर्वतः ।
अन्नंपचतिगृह्णातिविरेचयतिमुंचति ॥ ५२ ॥
अपानोऽपानगःश्रोणिबस्तिमेढ्रोरुगोचरः ।
शुक्रार्त्तवशकृन्मूत्रगर्भनिष्क्रमणक्रियः ॥ ५३ ॥
व्यानोहृदिस्थितःकृत्स्नदेहधारीमहाबलः ।
गतिप्रक्षेपणाक्षेपनिमेषोन्मेषणादिकः ॥ ५४ ॥
प्रायःसर्वाःक्रियास्तस्मिन्प्रतिबद्धाःशरीरिणाम् ॥५५ ॥

अर्थ-पित्त प्रावृट्काल (वर्षाऋतु) में संचित होकर शरद्ऋतुमें कुपित होताहै, और शीतऋतुमें शान्त होताहै। कफ शिशिर ऋतुमें संचित होकर वसन्तऋतुमें कुपित होताहै, और ग्रीष्मऋतुमें शांत होताहै। और वात ग्रीष्मऋतुमें संचित होकर वर्षाऋतुमें कुपित होतीहै,और शरत्कालमें शान्त होतीहै। वात,पित्त और कफ, यह तीनों दोष विकृत होनेसे देहको नष्ट करदेतेहैं, और अपनी प्रकृतिमें स्थित होनेपर शरीरकी रक्षा करतेहैं। जैसे-चन्द्रमा, सूर्य और वायु क्रमसे विसर्ग, आदान और विक्षेपके द्वारा जगत्को धारण कर रहेहैं, तैसे ही कफ, पित्त और वात यह तीनों मनुष्यके शरीरको धारण कर रहेहैं। सामर्थ्य, शीघ्रकारी, बलवान्, अन्यकोपनता, स्वतंत्र, और बहु वेगवाली होनेसे वायु तीनों दोषोंमें प्रधानहै और सर्वप्रकारकी चेष्टा शरीरमें वायुसेही होतीहैं, तथा प्राणियोंके प्राणस्वरूपहै।

पित्त, कफ, मल, धातु, यह सब पंगुकी समान गमनकरनेमें समर्थ नहीहैं इनको वायु जिसस्थानमें लेजातीहै उसी जगह मेघकी समान जातेहैं। वात, पित्त और कफ यह त्रिदोष शरीरमें भिन्न भिन्न कर्मयुक्त पाँचविभागोंमें विभक्तहैं। पक्काशय, कटि, सक्थि, कर्ण, चक्षु और चर्म इनोंमें रहतेहैं, किन्तु पक्काशय इनका प्रधानस्थान जानना।

प्राणवायु-मस्तक, वक्ष, जिह्वा, मुख और नासिकामें रहतीहै, तथा ष्ठीवन, हुचकी, उद्गार, श्वाँस और हास्यादि उसका कर्महै।

उदानवायु-कक्ष, नासा, नाभि, और गलमें रहतीहैं,तथा वाक्य, बल, वर्ण और स्मृति उसका कार्यहै।

समानवायु-जठराग्निके समीपमें वसती हुई कोठेके चारों ओर विचरतीहै। अन्नको पचावै, ग्रहणकरै, विरेचन और त्यागकार्य करैहै।

अपानवायु-गुह्यदेशमें वसतीहुई. नितम्ब, बस्ति, मेढ्र (लिंग) और उरुदेशमें विचरती हुई शुक्र, आर्त्तव, विष्ठा, मूत्र और गर्भको अधोनयन करैहै।

महाबलवान् व्यान वायु-हृदयमें होकर समस्त शरीरमें चलाचलपूर्वक रक्षाकरके गति, प्रक्षेप, आक्षेप, निमेष और उन्मेषादि सर्वकर्मोंको सम्पादनकरतीहै ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९॥५०॥ ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥

पित्तादुष्मोष्मणःपक्तिर्नराणामुपजायते।
पित्तञ्चैवप्रकुपितंविकारान्कुरुतेबहून् ॥ ५६ ॥
दुरुपशंनश्चपित्तस्यस्थानंनाभिर्विशेषतः।
पचत्यन्नंविभजतेसारंकिट्टंपृथक्तथा ॥ ५७ ॥
तत्रस्थमेवपित्तानांशेषाणामप्यनुग्रहम्।
करोतिबलदानेनपाचकंभ्राजकंतथा ॥ ५८ ॥
प्राकृतस्तुबलंश्लेष्माविकृतोमलउच्यते।
उरःकण्ठशिरःक्लोमपर्वाण्यामाशयोरसः ॥ ५९॥
मेदोघ्राणञ्चजिह्वाचकफस्थानमुरःपरम्।
सचापिपंचधोरस्थःश्लेष्मणादिषुकर्मसु ॥ ६० ॥
कफधाम्लाञ्चशेषाणांयत्करोत्यवलंबनम्।
अतोऽवलंबनःश्लेष्मायश्चामाशयसंश्रयः ॥ ६१ ॥
उत्साहोच्छ्वासनिश्वासचेष्टाधातुगतिःसमा।
समोमोक्षोगतिमतांवायोःकर्माविकारजम् ॥ ६२ ॥

दर्शनंपक्तिरूष्माचक्षुत्तृष्णादेहमार्द्दवम्।
प्रभाप्रसादोमेधाचपित्तकर्माविकारजः ॥ ६३ ॥
स्नेहोबन्धःस्थिरत्वंचगौरवंवृषताबलम्।
क्षमाधृतिरलोभश्चकफकर्माविकारजः ॥ ६४ ॥
आममन्नरसंकेचित्केचित्तुमलसंचयम्।
प्रथमंदोषदुष्टञ्चआमइत्यभिधीयते ॥ ॥६५ ॥
अविपक्कंशकृद्दुष्टंदुर्गन्धंबहुपिच्छिलम्।
सादनंसर्वगात्राणामामइत्यभिधीयते ॥ ६६ ॥

अर्थ-उष्णोष्मगुणयुक्तपित्तके द्वारा मनुष्यके शरीरमें अन्नआदि पचते हैं, और यही कुपित होनेपर नानाप्रकारके रोगोंको उत्पन्न करता है, पित्तका स्थान दुस्पर्शन है, और विशेषकरकै पित्त नाभिमेंही रहता है। अन्नको पचाताहै, और अन्नकेसार तथा मैल अलग अलग करदेताहै। पाचक तथा भ्राजक पित्त अन्यान्यपित्तोंको अपना बल देकर सहाय देनेवाले हैं। प्राकृत बल कफ कहाताहै और यही कफ विकृतहुआ मल कहाजाताहै। वक्ष, कण्ठ, मस्तक, क्लोम, पर्वस्थान, आमाशय, रस, मेद, नासिका और जिह्वा यह एक एक कफका स्थानहै। तहाँ वक्ष इन सब स्थानोंमें प्रधानहै। वक्षस्थानोंमें पाँचप्रकारका वसताहुआ कफ शेषरहे कफके स्थानोंमें अवलंबन करताहै। उत्साह, उच्छ्वास, निश्वास, चेष्टा, धातुगति और मोक्ष यह सर्व निर्विकारवायुके कार्यहैं। निर्विकारपित्त-दर्शन, परिपाक, ऊष्मा, क्षुधा, तृष्णा, देहकीमृदुता, कान्ति, प्रसन्नता और मेधाको करता रहताहै। स्नेह, बंध, स्थिरता, गौरव, वृषता, बल, क्षमा, धृति और अलोभ यह सब निर्विकार कफके कार्य हैं। आमको कोई कोई वैद्य अन्नरस और कोई कोई मलसंचय कहते हैं। प्रथम आमको दोषदूषित तथा द्वितीयआमको अपक्क दुर्गन्ध दूषित बहुपिच्छिल सम्पूर्ण शरीरकी अवसन्नताजनक मलको जानना ॥ ५६ ॥ ५७ ॥५८॥ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥

वायुःसामोविबद्धाग्निमान्द्यतंद्रान्त्रकूजनैः।
वेदनाशोफनिस्तोदैःक्रमशोङ्गानिपीडयेत् ॥ ६७ ॥

विचरेद्युगपच्चापिगृह्णातिकुपितोभृशम् ।
स्नेहाद्यैर्वृद्धिमायातिमेघेसूर्योदयेनिशि ॥ ६८ ॥
दुर्गन्धंहरितंश्यामंपीतमम्लंस्थिरंगुरुम् ।
अम्लिकाकण्ठहृद्दाहंसामंपित्तंविनिर्दिशेत् ॥ ६९ ॥
आताम्रंपीतमत्युष्णंरसेकटुकमस्थिरम् ।
पक्कंविबन्धंविज्ञेयंरुचिपाक्तिबलप्रदम् ॥ ७० ॥
आविलस्तन्तुलःस्त्यानःकण्ठदेशेऽव्यवस्थितः ।
सामोबलासोदुर्गन्धःक्षुधोद्गारविघातकृत् ॥ ७१ ॥

अर्थ–सामवायु–विबद्धता, मन्दाग्नि,तन्द्रा, अन्त्रकूजन, वेदना; सूजन, इनसबको उत्पन्नकर क्रमसे अंगोंको पीड़ित करे है, तथा एकसमयही अत्यन्त कुपित होकर देहमें विचरण, ग्रहणादिकार्य करे है, वह स्नेहादि-द्वारा, मेघकाल, सूर्योदय और रात्रिमें वृद्धिको प्राप्त होतीहै । दुर्गन्ध, हरित, श्याम, पीत, अम्ल, स्थिर, गुरु, अम्लिका और कण्ठदाह तथा हृदयमें दाह उत्पन्नकरनेवाले पित्तको सामपित्त कहते हैं। तथा ताँबेके रंगकी समान, पीला अत्यन्तगरम, रसमें चरपरा, अस्थिर, विबन्ध, रुचि, पाक, और बलजनक पित्तको पक्कपित्त कहते हैं । आविल, तंतुल, स्त्यान,कण्ठस्थ,दुर्गन्ध तथा क्षुधा और डकारके दूर करनेवालेको साम कफ कहते हैं ॥६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥

दिवास्वप्नंव्यवायंचव्यायामंशिशिरंजलम् ।
क्रोधप्रवातभोज्यानिकषायांश्वविवर्जयेत् ॥ ७२ ॥
व्यायामाज्ज्वरसंवृद्धिर्व्यायामात्स्तम्भमूर्च्छनम् ।
मरणंपानतःस्नेहाच्छर्दिमूर्च्छामहारुचिः ॥ ७३ ॥
गुर्वन्नभोजनाच्चापिविष्टम्भोदोषकोपनः ।
शीतवारिकषायाश्वदोषविष्टम्भिनोऽहिताः ॥ ७४ ॥
अग्निसादःखरत्वश्चस्रोतसाञ्चाप्रवर्त्तनम् ।
तस्मान्नवज्वरीसर्वान्विषवत्परिवर्जयेत् ॥ ७५ ॥

स्वधातुवैषम्यनिमित्तजाये
विकारसंहारहराःशरीरे ।
नतेपृथक्पित्तकफानिलेभ्य
आगन्तवस्तेतुततोऽवशिष्टाः ॥ ७६ ॥
देशकालवयोवह्निसात्म्यप्रकृतिभेषजम् ।
देहसत्वबलव्याधीन्दृष्ट्वाकर्मसमाचरेत् ॥ ७७ ॥
नाभिरोजोगुदंशुक्रंशोणितंशंखकौतथा ।
मूर्द्धांसकण्ठहृदयंप्राणस्यायतनंदश ॥ ७८ ॥
ज्वरितोहितमश्नीयाद्येनतस्यबलंभवेत् ।
बलमायुर्बलंलक्ष्मीर्बलायत्तंहिजीवनम् ॥ ७९ ॥
बलेप्रतिष्ठितंकर्मतस्माद्रक्षेद्बलंबुधः ।
मनःप्रियंप्रदातव्यंहितंत्यक्तातदिच्छया ॥ ८० ॥
हितमेवप्रदातव्यमहितंव्यपदेशकृत् ।
संशोधयतियद्दोषान्समानुदीरयत्यपि ॥ ८१ ॥
समीकरोतिसंक्रुद्धांस्तत्संशमनमुच्यते ।
तच्चानित्यंप्रयुंजीतस्वास्थ्यंयेनोपपद्यते ॥ ८२ ॥
अजातानांविकाराणामनुत्पोत्तकरंचयत् ।
संचयंचप्रकोपंचप्रशमंकालसंश्रयम् ॥ ८३ ॥
व्यक्तिभेदश्चदोषाणांयोवैवेत्तिसवैभिषक् ॥ ८४ ॥

अर्थ–दिनमें सोना, मैथुन, व्यायाम (कसरत) शीतलजल, क्रोध, पवनका सेवन, भारीअन्न, और कषाय, यह सब नवीनज्वरमें त्यागदेवै; कारण यहहै कि–व्यायाम करनेसे ज्वरकी वृद्धि होतीहै, मैथुन करनेसे स्तम्भ, मूर्च्छा और मरण होताहै, स्नेहपान करनेसे वमन, मूर्च्छा और अरुचि उत्पन्न होतीहै, भारी अन्न सेवन करनेसे विष्टम्भ और दोषोंका कोप होताहै, शीतलजल और कषाय सेवन करनेसे विष्टम्भ दोष, मंदाग्नि, ज्वरका तीक्ष्णवेग, शरीरमें जड़ता और स्रोत बन्द होजातेहैं, इस

कारण नवीनज्वरवाला इनसबको त्याग देवै, अपने धातुओंकी विषमताके निमित्तसे जो शरीरमें विकार उत्पन्न होते है, वह पित्त, कफ, और वातसे पृकक् नहीं होते हैं इनसे अवशिष्ट रहे रोगोंको आगन्तुक रोग कहते हैं। देश, काल, अवस्था, अग्नि, सात्म्य, प्रकृति, देह, सत्व, बल, और व्याधि इन सबको भले प्रकारसे विचार कर वैद्य चिकित्सा करै। नाभि, ओज, गुह्य, शुक्र, रुधिर, कनपटी, मस्तक, कटि, कण्ठ और हृदय यह प्राणोंके रहनेके दश स्थानहैं। ज्वरवाला मनुष्य हितकारकद्रव्योंको सेवन करताहै, जिससे उसके शरीरमें बल बनारहै, क्योंकि बलही आयुहै, बलही लक्ष्मीहै, बलही जीवनहै, और सर्व कार्योंके आधारस्वरूपहै, इसकारण बुद्धिमान्मनुष्य बड़े यत्नोसे बलकी रक्षा करता रहे। जो द्रव्य रोगीको प्रियहो और हितकारकहो, वह द्रव्य रोगीको देवै, किन्तु अहितकारक द्रव्य कभी भी रोगीको नदेवै, जो औषध त्रिदोषको संशोधित करै, समदोषको उदीरण करै और कुपितदोषोंको शान्त करतीहै, उसको संशमन औषधि कहतेहैं। यह नित्यप्राति रोगीको देनी चाहिये, इससे रोगीकि आरोग्यता उत्पन्न होतीहै। जो विकारोंकी उत्पत्तिको नहीं होनेदेवै तथा दोषोंका संचय, प्रकोप, शमन, कालसंश्रय, दोषोंका विभाग इनको जाने वह उत्तम भिषक् कहा जाताहै ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४॥७५॥ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ८४ ॥

अस्थिचर्मनखमांसरोमाणिपृथिवीगुणाः।
शुक्रशोणितमूत्रश्चमज्जामेदःपयोगुणाः ॥ ८५ ॥
तेजसस्तृट्क्षुधानिद्राआलस्यंमैथुनंगुणाः।
प्रसाराकुञ्चनस्तम्भबन्धनश्चावरोधनम् ॥ ८६ ॥
वायोर्गुणाःखस्यकामःक्रोधलोभौसमोहकौ।
रूपश्चेतिपंचपंचपंचानांपरिकीर्तिताः ॥ ८७ ॥
आजानुपादतःपृथ्वीआनाभिजानुतोजलम्।
नाभेराहृदयंतेजआघ्राणहृदयान्मरुत् ॥ ८८ ॥
आमस्तंघ्राणतःस्वर्गमित्येषांस्थानपंचकम् ॥ ८९ ॥

अर्थ–अस्थि, चर्म, नख, मांस और रोम, यह पृथिवीके गुणहैं। शुक्र, रुधिर, मूत्र, मज्जा और मेद यह सब जलके गुण हैं। तृष्णा, क्षुधा, निद्रा, आलस्य और मैथुन यह सब तेजके गुणहैं। प्रसारण, आकुञ्चन, स्तम्भन बंधन और अवरोधन, यह सब वायुके गुणहैं, और काम, क्रोध, लोभ, मोह और रूप, यह सब आकाशके गुणहैं, इस प्रकार पंचभूतोंके यह पांच पांच गुण जानने।

पृथिवी पांवसे लेकर घुटनों पर्यन्त, जल घुटनोंसे लेकर नाभिपर्यंत, अग्नि नाभिसे लेकर हृदयपर्यन्त, वायु हृदयसे लेकर नासिकापर्यन्त, और आकाश नासिकासे लेकर मस्तकपर्यन्त रहताहै। इसप्रकार पाँच तत्वोंके पाँचस्थान शरीरमें कहेहैं ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७॥८८॥८९॥

गुडूचीनागरक्काथंसमभागंविपाचयेत्।
एवञ्चपाचनंकुर्यात्पिबेयुस्तरुणज्वरे ॥ ९० ॥
रोगराट्सर्वभूतानामन्तकृद्दारुणोज्वरः।
तस्माद्विशेषतस्तस्यप्रशान्तौयत्नमाचरेत् ॥ ९१ ॥
देहेन्द्रियमनस्तापीसर्वरोगराजोबली।
ज्वरःप्रधानंरोगाणामुक्तोभगवतापुरा ॥ ९२ ॥
जन्मादौनिधनेचायंभवतीहनसंशयः।
अतःसर्वविकाराणांज्वरोराजाप्रकीर्तितः ॥ ९३ ॥
ज्वरेलंघनमेवादावुपदिष्टमृतेज्वरात्।
क्षयानिलभयक्रोधकामशोकश्रमोद्भवात्।
क्षयोधातुक्षयोयक्ष्माक्षयात् प्रकुपितोऽनिलः।
उष्णंपित्तंयथासामंलंघनेननविपच्यते ॥ ९५ ॥
आमक्षयात्प्रशमितोवायुर्नसहतेक्षणम्।
आमाशयस्थोहत्वाग्निंसामोमार्गान्पिधापयन् ॥ ८६ ॥
निदधातिज्वरंदोषस्तस्माल्लंघनमाचरेत्।
अनवास्थितदोषाग्नेर्लंघनंदोषपाचनम् ॥ ९७ ॥

ज्वरघ्नंदीपनंकांक्षारुचिलाघवकारकम् ।
प्राणाविरोधिनाचैनंलंघनेनोपपादयेत् ॥ ९८ ॥
बलाधिष्ठानमारोग्यंयदर्थोयंक्रियाक्रमः ।
तच्चमारुतक्षुत्तृष्णामुखशोषभ्रमान्विते ॥ ९९ ॥
कार्यंनबालेवृद्धेवानगुर्विण्यांनदुर्बले ।
वातमूत्रपुरीषाणांविसर्गेगात्रलाघवे ॥ १०० ॥
हृदयोद्गारकण्ठस्यशुद्धौतंद्राक्लमेगते ।
स्वेदेजातेरुचौचापिक्षुत्पिपासासहोदये ॥ १०१ ॥
कृतंलंघनमादेश्यंनिर्व्यथेचान्तरात्मनि ।
पर्वभेदोऽङ्गमर्दश्चकासःशोषोमुखस्यच ॥ १०२ ॥
क्षुत्प्रणाशोऽरुचिस्तृष्णादौर्बल्यंश्रोत्रनेत्रयोः ।
मनसःसम्भ्रमोऽभीक्ष्णमूर्द्ध्ववातस्तमोहृदि ॥ १०३ ॥
देहाग्निबलहानिश्चलंघनेऽतिकृतेभवेत् ॥ १०४ ॥

अर्थ–गिलोय और सोंठको समानभाग लेकर काढ़ा बनावै, यहपाचन तरुण ज्वर पीनेसे आमदोषका परिपाक होताहै । ज्वर सबरोगोंका राजा, सर्व प्राणियोंके प्राणोंको हरनेवाला और अत्यंत भयानकहै, इसकारण अनेक यत्नोंसे ज्वरके शान्तहोनेकी चेष्टा करनी चाहिये । ज्वर देह, इन्द्रिय और मनको तपानेवालाहै और सर्वरोगोंका राजा बलवान् तथा सर्व रोगोंमें श्रेष्ठ, ऐसे पूर्वकालमें भगवान्ने कहाहै । प्राणियोंके जन्मकी आदि और मरणसमयमें निश्चय ज्वर उत्पन्न होताहैं, इसकारण सर्वरोगोंका राजा ज्वर कहाहै । क्षय,वात,भय,क्रोध,काम,शोक और श्रम इनसबको छोड़कर अन्यकारणोंसें उत्पन्न हुए ज्वरमें प्रथम लंघन कराने चाहिये । क्षयशब्दका अर्थ यहाँ धातुक्षय और यक्ष्मारोगका है, इस क्षयमें वायु अत्यन्त कुपित होतीहै । उष्ण आमसहित पित्त लंघन करनेसे पकजाताहै, आमके नाश होनेपर वायु शान्त होजातीहै, और रोगी क्षणभरभी क्षुधाको नहीं सहनकर सक्ताहै । आमाशयमें स्थित हुआ सामदोष अग्निको नष्ट करकै स्रोतोंको आच्छादनकर रोगोंको उत्पन्न

करताहै, इसकारण ज्वरमें प्रथम लंघन कराना चाहिये। जिनके वातादि दोष और अग्नि यथास्थलमें अवस्थित नहींहै, उनको लंघन दोषोंको पचानेवाला, ज्वरको हरनेवाला, अग्निप्रदीपक और रुचि तथा देहकी लघुताकारक होताहै। इसप्रकार लंघन करावैकि जिससे मनुष्य निर्बल न होय; क्योंकि बल आरोग्यका प्रधान आश्रयहै, जिसकेलिये यह क्रियाक्रम कहाहै। वात, क्षुधा, तृषा, मुखशोष और भ्रमयुक्तमनुष्य, तथा बालक, वृद्ध, गर्भवती, और दुर्बलमनुष्यको कभीभी लंघन नहीं कराने चाहिये।अधोवात,मूत्र,विष्ठा इन सबके त्यागमें,शरीरकी लघुतामें, हृदय, डकार, कंठ और मुखकी शुद्धि, तन्द्रा, ग्लानि, पसीना, रुचि इनमें क्षुधा और तृषा यह एकवार उत्पन्न होवे इन सबमें लंघन कराना चाहिये और अन्तरात्मा वेदनारहित होनेपर लंघन कराने योग्य है। पर्वभेद, कास, अंगमर्द, मुखशोष, क्षुधानाश, अरुचि, तृष्णा, कर्ण और नेत्रोंकी दुर्बलता, वारवार मनमें भ्रम, अत्यन्तडकार, अंधकारदर्शन, देह, अग्नि और बलहानि यह सब अत्यन्तलंघनकरनेसे उत्पन्न होतेहैं ॥ ९०॥९१॥ ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ ९७ ॥ ९८ ॥९९॥ १०० ॥१०१॥ ॥ १०२ ॥ १०३ ॥ १०४ ॥

सद्योभुक्तस्यवाजातोज्वरेसन्तर्पणोत्थिते।
वमनंवमनार्हस्यशस्तमित्याहवाग्भटः ॥१०५॥
कफप्रधानानुत्क्लिष्टान्दोषानामाशयस्थितान्।
बुद्ध्वाज्वरकरान्कालेवम्यानांवमनैर्हरेत् ॥ १०६ ॥
उत्क्लिष्टानितिउपस्थितवमने
उद्युक्तान्वमनैर्वमनाध्यायोक्तैः ॥ १०७ ॥
अनुपस्थितदोषाणांवमनंतरुणेज्वरे।
हृद्रोगंश्वासमानाहंमोहञ्चकुरुतेभृशम् ॥ १०८ ॥
तृष्यतेसलिलंचोष्णंदद्याद्वातकफज्वरे।
मद्योत्थेपैत्तिकेवाथशीतलंतिक्तकैःशतम् ॥ १०९ ॥
दीपनंपाचनंचैवज्वरघ्नमुभयञ्चयत्।

स्रोतसांशोधनंबल्यंरुचिस्वेदप्रदंशिवम् ॥ ११० ॥
अविरेच्याबालवृद्धश्रान्तभीरुनवज्वराः ।
तथाभ्यामेवयोगाभ्यांकषायंपिप्पलीबलाम् ॥ १११ ॥
शृतशीतांपिबेच्चापित्रिवृच्चूर्णावचूर्णिताम् ।
आमेज्वरेकफेरक्तेएतत्स्रंशनमुच्यते ॥११२ ॥
यवक्षारान्वितोयद्वाक्काथोधान्यपटोलयोः ॥ ११३ ॥

अर्थ–तत्काल भोजनकरनेसे उत्पन्न हुए ज्वरमें और सन्तर्पणसे उत्पन्न हुए ज्वरमें वमन करने योग्य मनुष्यको वमन करानी चाहिये, यह वाग्भट आचार्यका मतहै । कफप्रधान, और अत्यन्त क्लेशकारक अर्थात् जिनसे वमन होनेकोहो, आमाशयमें स्थित ज्वरकारक दोषोंमें वमन-योग्य मनुष्यको वमनकारक औषधिको सेवन करा दोषोंको दूर करै । तरुणज्वरमें निर्दोषमनुष्यको वमन करावै तो हृदयरोग, श्वास, आनाह और मोह उत्पन्न होयहै. ज्वररोगीको तृष्णा होवैतौ कफज्वरमें गरम और पित्तज्वरमें तथा मद्यपानजनकज्वरमें कड़वी औषधियोंके रसके साथ औटे हुए जलको शीतल कर पीनेको देवै, यह दोनों जलकी विधि–अग्निदीपक, पाचक, ज्वरनाशक, स्रोतोविशोधक, बलकारक तथा रुचि और पसीनेको उत्पन्न करैहै । बालक, वृद्ध, श्रान्त, भीरु और नवीनज्वरवाले मनुष्यको कभी भी विरेचन नहीं करावै । कफ, और रक्त-सहित आमज्वरमें पीपल और खरैटीका काढ़ा शीतलकर उसमें निसोतका चूर्ण मिलाकर पीवै, यह स्रंसनहै ॥ १०५ ॥ १०६ ॥ १०७॥१०८॥ १०९ ॥ ११० ॥ १११ ॥ ११२ ॥ ११३ ॥

औषधंहेमरजतमृद्भाजनपरिस्थितम् ।
पिबेत्प्रसन्नवक्त्रस्त्यापीत्वापात्रमधोमुखम् ॥ ११४ ॥
निक्षिप्यचाननेतस्यताम्बूलानुप्रयोजयेत् ।
ॐह्रींह्रींविद्युताननह्नंह्नंफट्स्वाहा ॥ ११५ ॥
एतन्मंत्रंतालुस्थानेचूर्णमृक्षितेलिखित्वादिन-
त्रयंखादितंदेयंज्वरोपशमनंभवति ।

ॐ ब्रह्मरुद्रप्रमुर्मुन्दविष्णुवायुहुताशनाः ।
रक्षन्तुज्वरितंबालंमुञ्चमुञ्चइमंतथा ॥ ११६ ॥
ग्रहेस्वाहा ।
अनेनसर्षपंमंत्रयित्वानिर्मुञ्चयेत् ।
ओं ह्रीं ह्रीं हुं फट् स्वाहा ।
अनेननिर्गुण्डीपत्रचूर्णंधूपंदद्यात् ।
विषमज्वरोनश्यतिडाकिन्यादयोनप्रभवन्ति ।
कृष्णाम्बरदृढाबद्धगुग्गुलूलूकपुच्छजः ॥
धूपश्चातुर्थकंहन्तितमःसूर्योदयेयथा ॥ ११७ ॥
केशराजभृंगराजरसेनवस्त्रंकृष्णंविधाय ।
तेनापिगुग्गुलुपेचकपुच्छपक्षंबद्धाधूपः ॥ ११८ ॥
ब्रह्मात्वमेवविष्णुश्चरुद्रस्त्वंसहदुर्गया ।
आर्तस्यरोगनाशायप्रत्यक्षोभवपावकः ॥ ११९ ॥
अनेनधूपयेत् ।
अगस्त्यपुष्पस्वरसेननस्यं
निहन्तिचातुर्थकमुग्रवीर्यम् ॥ १२० ॥
अगस्त्यपुष्पंवाकसाना ।
कर्मसाधारणंकुर्यात्तृतीयकचतुर्थके ।
प्रायशःसन्निपातेनदृष्टःपंचविधोज्वरः ॥ १२१ ॥
आगन्तोरनुबन्धोहिप्रायशोविषमज्वरः ।
सन्निपातेततोभूयान्नदोषःपरिकीर्त्तितः ॥ १२२ ॥
ज्वराःपंचमयोक्तायेपूर्वंसन्ततकादयः ।
चत्वारःसन्ततंहित्वाज्ञेयास्तेविषमज्वराः ॥ १२३ ॥
इदंग्रंथान्तरे ।

अर्थ-औषधिको सुवर्णके बरतनमें वा चाँदीके बरतनमें, अथवा मट्टीके बरतनमें करकै प्रसन्नमनसे भक्तिपूर्वक पीकर बरतनको उलटा करकै गेर देवै, और फिर पान भक्षण करै। (ओंह्रींह्रीं विद्युतानन हं हं फट्स्वाहा) इस मंत्रको चूरनकी टिकियापै लिख रोगीके तालूपै धर-देवै, इस प्रकार तीनदिन इस मंत्रको लिखकर उस टिकियाको पकाकर खवानेसे ज्वर शान्त होताहै। (ओं ब्रह्मरुद्रप्रभुर्मुन्दविष्णुवायुहुताशनाः। रक्षन्तु ज्वरितं बालं मुञ्च मुञ्च इमं तथा॥ ग्रहेस्वाहा) इस मंत्रसे सरसोंको पढ़कर रोगीके चारों ओर वखेरै, फिर (ओं ह्रीं ह्रीं हुं फट् स्वाहा) इस मंत्रको पढ़कर सम्हालुके पत्तोंके चूर्णकी धूप रोगीके देहमें देवै, इससे विषमज्वर और डाकिनी आदिग्रह दूर होतेहैं।

कालेवस्त्रमें गूगल और उल्लूके पंखको खैंचकर बाँध धूपदेनेसे चातुर्थिक (चौथिया) ज्वर नष्ट होताहै। जैसे सूर्योदयसे अंधकार दूर होताहै। कुकुरभाँगरा और, भाँगरा इनके रसमें वस्त्रको कालाकर उस वस्त्रमें उल्लूके पंख और गूगलको दृढ़ बाँधकर (ब्रह्मात्वमेवविष्णुश्च रुद्रस्त्वंसह दुर्गया। आर्त्तस्य रोगनाशाय प्रत्यक्षो भव पावकः) इसमंत्रको पढ़ धूपदेनेसे अथवा पत्तोंके अगस्तियाके रसका नास देनेसे चातुर्थिक ज्वर नष्ट होताहै। तृतीयक और चातुर्थिकज्वरमें साधारण चिकित्सा करनी चाहिये। विषमज्वरमें प्रायः आगन्तुकज्वरका अनुबन्ध होताहै। संततकादि पाँचप्रकारके ज्वरोंमें त्रिदोषका संस्रव होताहै, और उनमें सन्ततकको छोड़ और चारप्रकारके ज्वरोंको विषमज्वर कहते हैं॥ ११४॥ ११५॥ ११६॥ ११७॥ ११८॥११९॥ १२०॥ १२१॥ ॥ १२२॥ १२३॥

अथरसरत्नाकरोक्तंयथा।

कुर्याद्भूतज्वरेनस्यंव्योषाम्बुतुलसीरसैः।
गोपालपुत्रिकामूलंसहदेवाबलाथवा॥ १२४॥
गलेबद्धाज्वरंहन्तिविष्णुक्रान्ताथकर्णयोः।
सूर्यावर्तस्यमूलन्तुकर्णेभूतज्वरापहम्॥ १२५॥
कर्कटस्यरसेभूतमृदातुतैलकेकृते।
ऐकाहिकंज्वरंहन्तिनस्येनगिरिकर्णिका॥ १२६॥

भूतकर्कटधूपेनसद्यःशीतज्वरंहरेत् ।
काकमाच्याश्चमूलन्तुकर्णेबद्धंनिशिज्वरम् ॥ १२७ ॥
निहन्तिनात्रसंदेहोयथासूर्योदयेतमः ।
श्मशानसहदेव्यावादूर्वायावाथमूलिका ॥ १२८ ॥
सूत्रेणवेष्टिताबद्धाहस्तेसर्वज्वरापहा ।
वृक्षेपुनर्वसौग्राह्यामन्दारस्यचबंधकम् ॥ १२९ ॥
तद्दक्षिणकरेबद्धंशीतज्वरहरंपरम् ।
चन्द्रस्यग्रहणेग्राह्यासर्पाक्ष्यामंत्रिताशिफा ॥ १३० ॥
वामेकरेचतांबद्धाकृष्णसूत्रेज्वरंहरेत् ।
तामेवबन्धयेत्कर्णेकृष्णसूत्रेणदक्षिणे ॥ १३१ ॥
त्र्याहिकन्तुज्वरंहन्तिनात्रकार्याविचारणा ।
ऊर्णनाभस्यजालेनवर्त्तिंकृत्वाप्रयततः ॥ १३२ ॥
क्षालयेत्तिलतैलेनकज्जलंग्राहयेच्छनैः ।
अञ्जयेन्नेत्रयुगलंत्र्याहिकन्तुज्वरंहरेत् ॥ १३३ ॥
श्मशानजातसर्पाक्ष्यारवौमूलंसमुद्धरेत् ।
घृतैःपिष्टाललाटेषुतिलकत्र्याहिकप्रणुत् ॥ १३४ ॥
अपामार्गस्यमूलन्तुपुष्येचातुर्थिकप्रणुत् ।
बृहत्याश्चापिपुष्येणसमुद्धृत्यतुमूलिकाम् ॥ १३५ ॥
धूपाच्चातुर्थकंहन्तिवासावागोपालपुत्रिका ।
श्वेतार्ककरवीरस्यअश्विन्यांमूलमुद्धरेत् ॥ १३६ ॥
तण्डुलोदकपानेनपृथक्चातुर्थनाशनम् ।
त्रिवन्याचामूलन्तुछुछुन्दर्याःसमायुतम् ॥ १३७ ॥
चातुर्थिकंज्वरंहन्तितत्क्षणाद्धूपनाज्ज्वरम् ।
चन्द्रस्यग्रहणेग्राह्यासर्पाक्षायाश्चमूलिका ॥ १३८ ॥

अन्तर्धूमेनसादग्धाच्छागीमूत्रेणचाञ्जनम् ।
चातुर्थिकहराश्रेष्ठासद्यःप्रत्ययकारिका ॥ १३९ ॥

अर्थ-त्रिकुटेके काढ़ेमें तुलसीका रस मिलाकर नास देनेसे भूतज्वर शान्त होताहै। गोपालककड़ी, पियावाँसा वा खिरैंटीकी जड़को गलेमें अथवा अपराजिता वा सूर्यावर्त्तकी जड़को कानमें बाँधनेसे भूतज्वर नष्ट होता है। केकड़ाजन्तुके रसमें तेलको पकाकर नाश लेनेसे, अथवा कोयलीके रसके द्वारा नास लेनेसे एकाहिकज्वर दूर होताहै, केकड़ा जन्तुके मांसके द्वारा धूप देनेसे तत्काल शीतज्वर नास होताहै। और मकोयकी जड़को कानमें बाँधनेसे रात्रिज्वर दूर होताहै। श्मशान-भूमिमें उत्पन्न हुई सहदेवी अथवा दूबकी जडको सूतके द्वारा हाथमें बाँधनेसे सर्व ज्वर नष्ट होतेहैं। पुनर्वसुनक्षत्रमें मंदारकी शिफा लाकर दहिने हाथमें बाँधनेसे शीतज्वर शमन होताहै। चन्द्रग्रहणके समय मंत्र-पाठपूर्वक सर्पाक्षीजडको ले सूतसे बांधे हाथमें बांधनेसे सर्वप्रकारके ज्वर दूर होते हैं,और दाहिने कानपै बांधनेसे तृतीयक ज्वर शान्त होता है। मकडीके जालेकी बत्ती बनाकर तिलके तेलमें भिजो दीपकमें जला कज्जल ग्रहणकरै, फिर इस कज्जलको दोनों नेत्रोंमें लगावै तौ त्र्याहिक ज्वर दूर होजाताहै। रविवारके दिन श्मशानभूमिमें उत्पन्न हुई सर्पा-क्षीकी जडको उखाडलेवै, फिर उसको घीके साथ पीसकर ललाटमें तिलक लगानेसे त्र्याहिकज्वर शांत होताहै। चिरचिटेकी जडको पुष्य नक्षत्रमें उखाडकर हाथपै बांधनेसे चातुर्थिकज्वर नष्ट होताहै। बृहती, कटेरी अथवा गोपालकाकडीकी जडको पुष्यनक्षत्रमें उखाडकर धूप-देनेसे चातुर्थिकज्वर नाश होता है। सफेद आक और कनेरकी जडको अश्विनीनक्षत्रमें उखाडकर चावलोंके जलके साथ पीनेसे चातुर्थिक ज्वर दूर होवै। त्रिशुनीकी जडको छुछुन्दरीके साथ धूप देनेसे चातुर्थिक ज्वर दूर होताहै। चन्द्रग्रहणमें सर्पाक्षीकी जडको उखाडकर इसप्रकार जलावै कि-जिससे उसमें धुआँ न निकले, फिर उसको बकरीके मूत्रमें घिस अंजन लगावै तौ चातुर्थिकज्वर शीघ्रही शांत होजा-ता है ॥ १२४ ॥ १२५ ॥ १२६ ॥ १२७ ॥ १२८ ॥ १२९ ॥ १३० ॥ ॥ १३१ ॥ १३२ ॥ १३३ ॥ १३४ ॥ १३५ ॥ १३६ ॥ १३७ ॥ ॥ १३८ ॥ १३९ ॥

ह्रंह्रींह्रींफः न्द्रूंफट्नमः ।
अनेनउलूकादिसर्वेयोगाअष्टोत्तरशतमंत्रितेन
सिद्धिःऔषधात्पाटनमाह ।
स्वभावारण्यएकान्तेप्रभातेमंत्रयुक्तितः ।
संग्राह्यमौषधंसिद्धंनोचेद्भवतिकाष्ठवत् ॥ १४० ॥
ओंनमस्तेऽमृतसंभवेरसवीर्यविवर्द्धिनि ।
बलमायुश्चमेदेहिपापान्मेजाहिदूरतः ॥ १४१ ॥
येनत्वांखनतेब्रह्मायेनत्वांखनतेभृगुः ।
येनवेन्द्रोऽथवरुणस्तेनत्वामुपचक्रमे ॥ १४२ ॥
तेनाहंखनयिष्यामिमंत्रपूतेनपाणिना ।
ओंआतप्तेतेमात्रियतेतेजोवीर्योऽन्यथाभवेत् ॥ १४३ ॥
अत्रैवतिष्ठकल्याणि ममकार्यकरीभव ।
ममकार्येभूतेसिद्धेततःस्वर्गंगामिष्यसि ॥ १४४ ॥
ओं ह्रींचण्डेन्द्रूंफट्स्वाहा ।
अनेनमंत्रेणनाणुसंयुतमातपेत्रिदिनंशुष्कं
निहितंवीर्यधृग्भवेत् ।
अर्कपृष्पायांसर्वाऔषध्यउत्पाट्यन्ते ।
उत्पाटितेसतिमूलिकायांछेदनबन्धनमाह ।
ओंरक्तेचामुंडेओरुओरुअमुकस्यसर्वज्वरं
कचेवत्वंद्रुंफट्स्वाहा ।
अनेनमंत्रेणमूलिकाछेदनं क्रियते ।
अपरमंत्रेणवेष्टयित्वाउक्तस्थानेबंधयेत् ॥
मण्डूरंदेवदारुश्चनराविष्ठातुकुंकुमम् ।
नरकेशसमायुक्तंधूपंज्वराविनाशनम् ॥ १४५ ॥

उलूकस्यतुपक्षाणिमहिषाक्षन्तुगुग्गुलुम् ।
ज्वरार्त्तंधूपयेत्तेनछादितंकृष्णकम्बलैः ॥ १४६ ॥
इमंमंत्रंपठेद्यस्तुसर्वज्वरंहरेत्परम् ॥ १४७ ॥
ओंनमोभगवतेरुद्रायओंक्षिप्रकारिणिकपालमालिनि
जटिलेदुर्गन्धदीर्घनखश्मश्रुरोमविकटाननधारिणि
ज्वरमैकाहिकंद्व्याहिकंत्र्याहिकंचातुर्थिकंमौहूर्त्तिकं
दिनज्वरंसन्ध्याज्वरंसर्वेषांनराणाम् उत्सादयउत्सा-
दयआरोग्यकरीभगवतीसर्वदेतिस्वाहा ।
अनेनमंत्रेणसर्वंधूपादेयाः ।
मूषिकस्यपुरीषेणतथाचर्मचटस्यतु ।
सर्षपामहिषाक्षश्चमन्त्रैर्धूपोज्वरापहः ॥ १४८ ॥
ओंपित्तज्वरवातज्वरकफज्वराथब्रह्मज्वरमाहेन्द्रज्वरा-
मजातज्वरसह पाताल जा श्रीराम तोहाकारे हऊसि-
द्धिगुरुरूपा ।

अनेनमंत्रेणमार्जयेदिति ।

अथ ज्वरपत्रिका यथा ।

ओंज्वरहृदयज्वरमार्त्तयिष्यामि ।
भोभोज्वरशृणुशृणुहनहनगर्ज्जगर्ज्जैकाहिकं
द्व्याहिकंत्र्याहिकंचातुर्थिकंसाप्ताहिकमर्द्धमासि-
कंनैमिषिकमटपटन्हुंफट्चक्रपाणिराज्ञापयति
ओंधृट्शिवोमुञ्चवाहुंमुञ्चकचंमुञ्चउरुमुञ्च
कटिंमुञ्चजंघांमुञ्चपादंमुञ्चभूम्यांगच्छस्वाहा ।
शृणुशृणुवज्रपाणिराज्ञापयति ।
अमुकस्यज्वरंहनहनहुंफट्स्वाहा ।

एतदलक्तकेनपात्रिकांलिखित्वाचाण्डालप्रोत्सा-
दनंविधायबलिपूर्वकंसवस्त्रंशिरसिबद्धादक्षिण-
स्यांदिशिप्रस्थापयेदिति ॥

ओंह्रींसःअमृतंकुरुअमृतेश्वरभैरवायनमः।
अनेनसप्ताभिमंत्रितंकृत्वासर्वरोगाययोज्यम् ॥
तुल्यांशंचूर्णयेत्खल्वेपिप्पलीहिंगुलंविषम्।
त्रिगुंजंमधुनापेयंवातज्वरविनाशनम् ॥ १४९ ॥
भोजनान्तेज्वरेजातेकुर्यात्पूर्वामिवक्रियाम्।
दिनान्तेदापयेत्पथ्यंसज्वरेविज्वरेऽपिच ॥ १५० ॥
मुस्तपर्पटमेरण्डकषायैर्भस्मसूतकम्।
गुंजमात्रंमूर्च्छितंवादेयंवातज्वरापहम् ॥ १५१ ॥

अर्थ-(ओं ह्रीं ह्रीं फः न्द्रूं फट् नमः) इसमंत्रको एकसौआठवार पढ़नेसे सम्पूर्ण उलूकादियोग सिद्ध होजातेहैं । स्वभावसे अरण्यके एकान्तमें प्रभातके समय जाकर मंत्रयुक्तिके साथ औषधको ग्रहणकरै, इसप्रकार करनेसे सिद्धि होतीहै,नहीं तौ औषधि काठके समान जाननी। 'ओं नमस्तेऽमृतसंभवे' इत्यादि । इस मंत्रको पढ़कर औषधिको उखाड़ लावै, फिर तीन दिन धूपमें सुखानेसे अत्यन्तवीर्यधारक होजा-तीहै । सर्वप्रकारकी औषधि पुष्यार्कनक्षत्रमें उखाड़नी चाहिये । आगै औषधिका मूलच्छेदन और बंध कहते हैं । 'ओं रक्ते चामुण्डे ओरु ओरु अमुकस्य सर्वज्वरं कच्चेवत्वं द्रूं फट् स्वाहा' इसमंत्रको पढ़कर औषधिका मूल छेदन करे और दूसरे मंत्रसे उक्तस्थानमें बाँधै, मण्डूर, देवदारु,नरविष्ठा केशर और मनुष्यके बाल इनसबको एकत्रकरकै धूपदेनेसे अथवा उल्लूके पंख और महिषाक्ष गूगलको काले कम्बलमें बाँधकर धूपदेनेसे सर्वप्रकारके ज्वर दूर होते हैं । 'ओंनमो भगवते रुद्राय' इत्यादि । इस मंत्रको पढ़कर सर्व प्रकारकी धूप देनी चाहिये । चूहे और चिमगादरकी विष्ठा, सरसों और महिषाक्षगूगल, इन सबकी धूप देवैतो सर्व प्रकारके ज्वर दूर होवैं । 'ओं पित्तज्वरवातज्वर

कफज्वराथ ' इत्यादि । इसमंत्रके द्वारा मार्जन करै । ' ओं ज्वर हृदयं ' इत्यादि । इस मंत्रकी लाखसे पत्री लिखकर बलिदानपूर्वक चण्डालप्रोच्छादन विधानकर रोगीके मस्तकमें बाँध दक्षिण दिशामें स्थापनकरनेसे ज्वर दूर होजाताहै । ' ओं ह्रीं सः अमृतं कुरु अमृतेश्वर ' इत्यादि । इस मंत्रसे औषधिको सातवार पढ़कर सबरोगोंमें प्रयोग करनी चाहिये । पीपल, सिंग्रहफ और विष इन सबको समान भाग लेकर खरलसे पीस तीन रत्ती प्रमाण दहीके पानीके साथ सेवन करै तौ वातज्वर नष्ट होय ।भोजनके अन्तमें ज्वर होवै तौ पूर्वोक्तक्रिया करनी चाहिये । ज्वरयुक्त अथवा विनाही ज्वरवाले मनुष्यको दिनान्तमें पथ्य सेवनकरना चाहिये । नागरमोथा, पित्तपापड़ा, और अंड इनका काढ़ा बना उसमें मूर्च्छितपारेकी भस्म एकरत्ती प्रमाण मिलाकर सेवन करनेसे वातज्वर नाश होताहै ॥ १४० ॥ १४१ ॥ १४२ ॥ १४३ ॥ १४४ ॥ १४५ ॥ १४६ ॥ १४७ ॥ ॥ १४८ ॥ १४९ ॥ १५० ॥ १५१ ॥

शुद्धसूतंद्विधागंधंमरिचंटंगणन्तथा ।
चतुस्तुल्यासितायोज्यामत्स्यापित्तेनभावयेत् ॥१५२॥
त्रिदिनंमर्दयेत्तेनरसोऽयश्चन्द्रशेखरः ।
द्विगुञ्जमार्द्रकद्रावैर्देयंशीतोदकंह्यनु ॥ १५३ ॥
ततःपटोलमुद्गञ्चपथ्यंतत्रप्रदापयेत् ।
त्रिदिनात्पित्तश्लेष्मोत्थमत्युग्रंनाशयेज्ज्वरम् ॥१५४॥

अर्थ-शुद्धपारा एकतोला, शुद्धगंधक दोतोले, कालीमिरच एकतोला और सुहागा एकतोला,तथा सबकी बराबर मिश्री मिलाकर मत्स्यपित्तमें भावना देकर तीन दिन खरल करनेपर चन्द्रशेखररस बनजाताहै।अनुपान अदरखके रसके साथ दोगुंजाप्रमाण सेवनकरै, पश्चात् शीतलजल पीवै. पथ्य परवल और मूँगकी दाल देवै। यह चन्द्रशेखररस पित्त और कफसे उत्पन्न हुए ज्वरको तीन दिनमें नष्ट करैहै ॥ १५२ ॥ १५३ ॥ १५४ ॥

त्रिफलामृतलोहश्चभृंगराजंचचूर्णितम् ।
चूर्णमर्जुनपत्रस्यत्रिजातकशिलाजतु ॥ १५५ ॥

त्र्यूषणंतुल्यतुल्यांशंसर्वेषाञ्चसमांशतः ।
क्षौद्रेणवटिकाकार्याकर्षमात्रन्तुभक्षयेत् ॥ १५६ ॥
सर्वज्वरहरःश्रेष्ठोह्यनुपानंप्रकल्पयेत् ॥ १५७ ॥

त्रिफलालोहम् ।

अर्थ-हरड़, बहेडा, आमला, विष, लोहा, भाँगरेके पत्तोंका चूर्ण, दालचीनी, अर्जुनवृक्षके पत्तोंका चूर्ण, इलायची, तेजपात, शिलाजीत, सोंठ, मिरच, पीपल, इन सबको समानभाग लेकर सहतमें गोली बनावै, उन गोलियोंको दो तोले प्रमाण भक्षणकरै, इससे सर्वप्रकारके ज्वर दूर होजातेहैं। इसपै यथायोग्य अनुपान करना चाहिये ॥ १५५ ॥ १५६ ॥ १५७ ॥

मेषाक्षीरेणदरदमम्लवर्गैश्चभावितम् ।
सप्तवारंप्रयत्नेनशुद्धिमायातिनिश्चितम् ॥ १५८ ॥
दरदघनरसानांशुद्धनागाभ्रकाणां
सुभगविडशिलानांसर्वमेकत्रयोज्यम् ।
विपिननृपदलोत्थैःशोषयेन्मर्दयेच्च
दिवसदशसमाप्तौवर्त्तिकाकारणीया ॥ १५९ ॥
गुंजाप्रमाणतोनित्यंभक्षयेदार्द्रकेणवै ।
सर्वशूलविनाशार्थंकफशोथविनाशनम् ॥ १६० ॥
दत्तमात्रंज्वरंहन्तिज्वरारिश्चनिगद्यते ॥ १६१ ॥

ज्वराररिसः ।

अर्थ-सिंग्रफको भेड़के दूधमें सातवार भावनादे, फिर अम्लरसमें सातवार भावनादेवै, इसप्रकार करनेसे सिंग्रफ शुद्ध होजाताहै. ऐसा शोधाहुआ सिंग्रफ, लोहा, पारा, शुद्धसीसा, अभ्रक, सुहागा, विड़लवण और मैनशिल इन सबको समान भाग लेकर अमलतासके पत्तोंके रसमें मर्दन कर सुखावै, इसप्रकार दशदिन मर्दन और सुखाकर रत्तीके प्रमाण गोली बनावै, एकगोली अदरखके रसके साथ खावै, इससे सर्वप्रकारके शूल, कफ, सूजन और यह ज्वराररिस एकहीवार देनेसे ज्वरको दूर करताहै ॥ १५८ ॥ १५९ ॥ १६० ॥ १६१ ॥

सूतार्कगंधचपलाजयपालतिक्ता
पथ्यात्रिवृद्धिषतिन्दुकजंसमांशम् ।
सम्मर्द्यवज्रीपयसामधुनाद्विगुंजं
त्रैलोक्यडम्बरभवोऽभिनवज्वरघ्नः ॥ १६२ ॥

ज्वरांकुशः ।

अर्थ-पारा, ताँबा, गन्धक, सोनामाखी, जमालगोटा, कुटकी, हरड़, निसोथ, और कुचला, इन सबको समान भाग लेकर थूहरके दूधमें खरलकरकै दो रत्ती प्रमाण गोली बनाले, एक गोली सहतके साथ खावै तौ नवीनज्वर दूर होताहै । यह त्रिलोकमें आश्चर्यकारक ज्वरांकुशहै १३२

रसस्याद्विगुणंगंधंगंधतुल्यन्तुटंगणम् ।
रसतुल्यंविषंयोज्यंमरिचंपंचधाविषात् ॥ १६३ ॥
कट्फलंदन्तिबीजञ्चप्रत्येकंशुक्तिसम्मितम् ।
ज्वरांकुशरसोह्येषचूर्णयेद्यामममात्रकम् ॥ १६४ ॥
मासैकेननिहन्त्याशुज्वरंजीर्णंत्रिदोषजम् १६५ ॥

ज्वरांकुशः ।

अर्थ-पारा एकभाग, गंधक दोभाग, सुहागा दोभाग, विष एकभाग, मिरच पाँचभाग, तथा कायफल और जमालगोटा दोदो तोले प्रमाणलेकर चूर्णकरले; इस चूर्णको सेवनकरनेसे एक महीनेमें जीर्णज्वर और सन्निपातज्वर दूर होता है ॥ १६३ ॥ १६४ ॥ १६५ ॥

जयन्तीवाजयापीताविषमज्वरशान्तये ।
चन्दनस्यकषायेणरक्तपित्तज्वरापहा ॥ १६६ ॥

अर्थ-जयन्ती अथवा जया औषधिको पीनेसे विषमज्वर शान्त होताहै । चन्दनके काढ़ेको पीनेसे रक्तपित्तज्वर दूर होता है ॥ १६६ ॥

सूतंगंधंविषंतुल्यंधूर्तबीजंत्रिभिःसमम् ।
चतुर्णाद्विगुणंव्योषंचूर्णंगुंजाद्वयंहितम् ॥ १६७ ॥
जम्बीरकस्यमज्जायामार्द्रकस्यद्रवैर्युतम् ।

ज्वरांकुशोरसोनाम्नाज्वरान्सर्वान्निकृन्तयेत् ॥ १६८ ॥
एकाहिकंद्व्याहिकंचत्र्याहिकंवाचतुर्थकम् ।
विषमश्चत्रिदोषोत्थंहन्तिसद्योनसंशयः ॥ १६९ ॥

महाज्वरांकुशः ।

अर्थ–एकभाग पारा,एकभाग गंधक, एकभाग विष, तीनभाग धतूरेके बीज, और बारहभाग त्रिकुटा, इनसबका चूर्ण बनावै,उस चूर्णको दोगुंजा प्रमाण लेकर जम्भीरी नीबूकी मज्जाके साथ और अदरखके रसके साथ सेवन करै, यह महाज्वरांकुश नामवाला रस,–सर्वप्रकारके ज्वरोंको हरैहै, तथा एकाहिक, द्व्याहिक, त्र्याहिक, चातुर्थिक,विषमज्वर, त्रिदोषज्वर, इनसबको निःसन्देह तत्काल नष्ट करैहै ॥ १६७॥ ॥ १६८ ॥ १६९ ॥

पारदंहिंगुलंताम्रंमाक्षिकंतुत्थमेवच ।
वंगंसूतश्चगंधश्चखर्परश्चमनःशिला ॥ १७० ॥
तालकंघनपाषाणोगैरिकंटंगणन्तथा ।
दन्तीबीजश्चसर्वाणिचूर्णयित्वाविभावयेत् ॥ १७१ ॥
जयन्तीविजयाचिंचातुलसीशालपर्णिका ।
प्रत्येकंचरसंदत्त्वानिर्जलेवाथभूगृहे ॥ १७२ ॥
चणमात्रांवटींकृत्वाछायाशुष्कन्तुकारयेत् ।
महाग्निकारकश्चैवज्वराणांकुलनाशनः ॥ १७३ ॥
द्वन्द्वजंसर्वजंचैवचिरकालसमुद्भवम् ।
एकाहिकंद्व्याहिकंचतथात्रिदिवसंज्वरम् ॥ १७४ ॥
चातुर्थिकंतथात्युग्रंजलदोषसमुद्भवम् ।
सर्वान्ज्वरान्निहन्त्याशुभास्करस्तिमिरंयथा ॥१७५॥
महाज्वरांकुशोनामदेयंगुंजाचतुष्टयम् ॥ १७६ ॥
घनपाषाणमभ्रकम् ।

महाज्वरांकुशः ।

अर्थ-पारा, सिंग्रफ, ताँबा, सोनामाखी, तूतिया, राँग, पारा, गंधक, खपरिया, मैनशिल, हरताल, अभ्रक, गेरू, सुहागा और जमालगोटा, इन सबको समानभाग लेकर चूर्णकरै, फिर उस चूर्णको जयन्ती, भाँग, इमली, तुलसी और शालपर्णी इन सबके निर्जलरसमें अलग अलग भावना देकर चनेकी बराबर गोली बना छायामें सुखादे, यह महाज्वरांकुशरस अत्यन्त अग्निको दीपन करनेवाला, ज्वरोंके कुलको विध्वंस करनेवाला, तथा द्वन्द्वज, त्रिदोषज्वर, जीर्णज्वर, एकाहिकज्वर, द्व्याहिकज्वर, तृतीयज्वर, चातुर्थिकज्वर, अत्युग्रज्वर, जलदोषजज्वर, और सर्वप्रकारके ज्वरोंको दूर करै है, जैसे सूर्य अंधकारको दूर करैहै। इस महाज्वरांकुशकी मात्रा चार गुंजाकी है ॥ १७० ॥ १७१ ॥ १७२ ॥ ॥ १७३ ॥ १७४ ॥ १७५ ॥ १७६ ॥

लाजासक्तुकपथ्यंस्यात्सैन्धवेनाविचूर्णयेत् ।
पचेज्जीर्यत्यविघ्नेनज्वरजिवित्तदाध्रुवम् ॥ १७७ ॥
रक्तपित्तहरत्वेनदाहज्वरकृतेतथा ।
सक्तवःशीतवीर्याःस्युर्लाजामण्डःकफोत्थके ॥ १७८ ॥

तेनादौकेवलानाहितान् ।

पाचनोदीपनोलाजमण्डस्तेनोष्णइष्यते ।
मुस्तपर्पटकोशीरचन्दनोदीच्यनागरैः ॥१७९ ॥
शृतशीतजलंदद्यात्पिपासाज्वरशान्तये ।
शुण्ठीबलाहकोशीरैःपिबेत्तोयंप्रसाधितम् ॥ १८० ॥
दाहशीतज्वरहरंपाचनंचतृषापहम् ॥ १८१ ॥

बलाहकोमुस्तकम् ।

दोषावस्थांसमालोच्यप्रयुक्तःसन्निपातिनः ।
लंघनेदशमूलादिकषायोनाविरुध्यते ॥ १८२ ॥
कषायोऽत्रार्द्धशृतंनवज्वरेमुख्यकषायनिषेधात् ।
मुख्यभेषजसम्बन्धोनिषिद्धस्तरुणज्वरे ॥ १८३ ॥

तोयपेयादिसंस्कारेनिर्दोषस्तेनभेषजम्।
यःकषायैःकषायःस्यात्सवर्ज्यस्तरुणेज्वरे॥ १८४॥
कषायेणाकुलीभूतादोषाजेतुंसुदुस्तराः।
उद्यन्तेचाविमुच्यन्तेकुर्वतेविषमज्वरम्॥ १८५॥
कर्षैकमात्रंततोद्रव्यंसाधयेत्प्रास्थिकेऽम्भसि।
अर्द्धंश्रृतंप्रयोक्तव्यंपानेपेयादिसंविधौ॥ १८६॥
अर्द्धश्रृतमर्द्धावशेषितम्।
वामितंलंघितंकालेयवागूभिरुपाचरेत्।
यथाह्यौषधसिद्धाभिर्मण्डापूर्वाभिरादितः॥ १८७॥
धन्याकपिप्पलीविश्वदशमूलीजलंपिबेत्।
पेयांसर्वज्वरहरांसैन्धवेनावचूर्णिताम्॥ १८८॥
मृद्वीकापिप्पलीमूलचव्यामलकनागरैः।
यवागूःस्यात्रिदोषघ्नीव्याघ्रीदुष्पर्शगोक्षुरैः॥ १८९॥
यावज्ज्वरमृदुभावात्षडहंवाविचक्षणः।
श्वदंष्ट्राकण्टकारीभ्यांसिद्धांज्वरहरांपिबेत्॥ १९०॥
कुलत्थपंचमूलाभ्यांधान्यापिप्पलीनागरैः।
पेयाश्लेष्मज्वरहरासैन्धवेनावचूर्णिता १९१॥

अर्थ–खीलोंके सतुओंमे सैंधानोन मिलाकर ज्वररोगीको सेवन करानेसे हित करैहै, तथा ज्वर, रक्तपित्त और दाहको दूरकरैहै। खीलोंकेसत्तू–शीतवीर्यहैं। खीलोंका मोड़–कफज्वरमें हितकारीहै, पाचक और अग्निप्रदीपकहै, इसकारण कुछ गरमभीहै। नागरमोथा, पित्तपापड़ा, खस, लालचन्दन, सुगंधवाला और सोंठ, इनसबको समानभाग लेकर काढा बनावै,जब ठंडा होजाय तौ पीवै, इससे–तृषा,ज्वरशान्त होजाता है। सोंठ, नागरमोथा, और खस समानभागलेकर काढा बना पीवै तौ दाह, शीतज्वर, और तृषा दूर होतीहै, तथा पाचकहै। सन्निपातज्वरमें दोषोंकी अवस्थाको विचारकर लंघन होनेपर भी दशमूलका

काढ़ा देना चाहिये । तरुणज्वरमें आधा जलजावै तौ क्वाथ देना चाहिये, क्योंकि –तरुणज्वरमें सम्पूर्णलक्षणोंवाला क्वाथ वर्ज्यहै । मुख्य औषधीकाभी देना तरुणज्वरमें निषेधहै । किन्तु तोयपेयादिमें संस्कारितकी हुई औषधी तरुणज्वरमें निषिद्ध नहींहै । तरुणज्वर यथार्थ कषाय वर्ज्यहै, क्योंकि कषायसे त्रिदोष कुपित होकर विषमज्वरको उत्पन्न करतेहैं, इसकारण दोसेर जलमें २ दोतोले औषधिको डालकर, पकावै, जब आधा अर्थात् सेरभर जल शेष रहै तब उतारले,इसको तृषा लगनेपर पीतारहै । वमन और लंघन कराये हुए मनुष्यकों औषधि और मण्डादिसे सिद्ध किया हुआ यवागू देनाचाहिये । धनियां, पीपलामूल, सोंठ, और दशमूल इनसबका पेया बना उसमें सैंधेनोनका चूर्णमिला सेवन करनेसे सर्व प्रकारके ज्वर नष्ट होतेहैं । दाख, पीपलामूल, चव्य, आमला, सोंठ, कटेरी, जवासा और गोखरू इन सबका बनाया हुआ यवागू त्रिदोषनाशक है । और जबतक मृदुज्वर रहै तबतक छै दिन पर्यन्त गोखरू और कटेरीकी यवागू बनाकर पीवै तौ ज्वरनाश होताहै । कुलथी, पंचमूल, धनिया, पीपल और सोंठ इनका यवागू बना तिसमेंसे सैंधेनोनका चूर्णमिलाकर पीनेसे कफज्वरका नाश होताहै ॥ १७७ ॥ ॥ १७८ ॥ १७९ ॥ १८० ॥ १८१ ॥ १८२ ॥ १८३ ॥ १८४ ॥ १८५ ॥ ॥ १८६ ॥ १८७ ॥ १८८ ॥ १८९ ॥ १९० ॥ १९१ ॥

एषाचैवयवागूस्तुसचापित्तेऽप्ययंक्रमः ।
ज्वरापहैःफलरसैर्युक्तंसमधुशर्करम् ॥ १९२ ॥
तत्रमदात्ययादौ ।
द्राक्षादाडिमखर्ज्जूरपियालैःसपरूषकैः ।
तर्पणार्हेषुकर्त्तव्यंतर्पणंज्वरनाशनम् ॥ १९३ ॥
छर्द्यर्दितंतथाक्षीणंविशुद्धंतृष्णयान्वितम् ।
शर्करामधुसंयुक्तंपाययेल्लाजतर्पणम् ॥ १९४ ॥
उपवासश्रमकृतेज्वरेवाताधिकेतथा ।
दीप्ताग्निंभोजयेत्प्राज्ञोनरंमांसरसौदनम् ॥ १९५ ॥
मुद्गयूषौदनश्चापिदेयःकफसमन्विते ।

सएवसितयायुक्तःशीतपित्तज्वरेहितः ॥ १९६ ॥
मुद्गामलकयूषस्तुवातपित्तज्वरेहितः ।
निम्बमूलकयूषस्तुहितःपित्तकफाधिके ॥ १९७ ॥
निम्बपत्रंपटोलञ्चवार्ताकुंकारवेल्लकम् ।
कर्कोटकंपर्पटकंगोजिह्वावालमूलकम् ॥ १९८ ॥
पत्रंगुडूच्याःशाकाद्यैर्ज्वरितायप्रदापयेत् ।
अरुचौमातुलुंगस्यकेशरं साज्यसैन्धवम् ॥ १९९ ॥
धात्रीद्राक्षासितानांवाकल्कमास्येनधारयेत् ।
धारयेत्सर्वथैवनागिलेत् ।
शर्करादाडिमाभ्याञ्चद्राक्षादाडिमयोस्तथा ॥ २०० ॥
तैरस्यधारयेदास्येगण्डूषञ्चयथाहितम् ।
ननक्तंनगुरुप्रायंभुञ्जीततरुणज्वरी॥ २०१ ॥
वातपित्तज्वरेदेयमौषधंपंचमेदिने ।
सप्तमेश्लेष्मपित्तोत्थेतदूर्ध्वंकफवातजे ॥ २०२ ॥
नागरंदेवकाष्ठञ्चधन्याकंबृहतीद्वयम् ।
दद्यात्पाचनकंपूर्वंजरितायज्वरापहम् ॥ २०३ ॥
बिल्वादिपंचमूलस्यक्वाथःस्याद्वातिकेज्वरे ।
पंचमूलीबलारास्नाकुलत्थैःसहपुष्करैः ॥ २०४ ॥
पर्वभेदाशिरःकम्पयुतंहन्यान्मरुज्ज्वरम् ।
गुडूचीशारिवाद्राक्षाशतपुष्पापुनर्नवा ॥
सगुडोयंकषायःस्याद्वातज्वरविनाशनः ॥ २०५ ॥

इतिवाते ।

अर्थ-पित्तज्वरमेंभी उपरोक्तक्रिया करनी चाहिये । ज्वरनाशक फलोंके रसमें मधु और शर्करा मिलाकर पीवै। तथा दाख, अनार, खजूर, चिरोंजी, और फालसा, इनोंके रसमें सहत और चीनी मिलाकर

तर्पण करै, यह तर्पण ज्वरनाशकहै । वमनसे पीड़ित, क्षीण, विबन्ध-रोगी और तृषावान्मनुष्यको खीलोंके मांड़में सहत और चीनी मिलाकर तर्पण बनाकर पिलाना योग्यहै। उपवास तथा परिश्रमसे और उत्पन्न हुए ज्वरमें और वातज्वरमें दीप्ताग्निवाले मनुष्यको मांसरस-संयुक्त, भात भक्षण कराना चाहिये । कफज्वरमें मूँगके यूषके साथ भात सेवन कराना चाहिये । शीत और पित्तज्वरमें मूँगके यूषमें चीनी मिलाकर भातके साथ सेवन कराना चाहिये, वात-पित्तज्वरमें मूंग और आमलेके यूषके साथ भात सेवन कराना चाहिये, नीम और मूलीका यूष पित्तश्लेष्मज्वरमें देना चाहिये । नीमकेपत्ते, पर-वल, वैंगुन, करेला, ककोडा, पित्तपापडा, गोभी, कच्चीमूली और गिलो-यके पत्ते, यह ज्वरवाले मनुष्यको शाककेलिये देने चाहिये । ज्वररोगीको अरुचि होनेपर विजोरेकी केशरके साथ सैंधानोन और घृत अथवा आमला, दाख और चीनी एकत्र मिलाकर सेवन करानी चाहिये ।आमला, दाख और मिश्री इनका कल्क मुखमैं रखनेसै अरुचि दूर होतीहै । इस कल्कको एकसाथ न निगले किन्तु मुखमें रख थोड़ा थोड़ा रस पीता रहै । शर्करा और अनारका रस अथवा दाख और अनार इनका गण्डूष ग्रहण करनेसे ज्वरमें उत्पन्नहुई अरुचि नष्ट होतीहै । तरुणज्वर-वाला रोगी रात्रिमें भोजन और भारीपदार्थ भक्षण नहीं करै । वातपित्त-ज्वरमें पांचमें दिन, पित्तश्लेष्मज्वरमें सातमें दिन और वातकफज्वरमें सातमें दिनके भी पीछे औषधि देनी चाहिये । सोंठ, देवदारु, धनियाँ, बृहती और कटेरी इनका काढाकर ज्वरकी प्रथमअवस्थामें देना चाहिये। यह पाचन ज्वरनाशकहै । बिल्वादिपंचमूलका क्काथ वातज्वरमें देना चाहिये । स्वल्पपंचमूल, खिरैटी, रास्ना, कुलथी और पोहकरमूल इनका काढ़ा, पर्वभेद, और शिरकम्पयुक्तवातज्वरनाशकहै । गिलोय, शारिवा, दाख, सौंफ और पुनर्नवा इनका काढ़ा गुडके साथ पीनेसे वात-ज्वर नाश होताहै ॥ १९२ ॥ १९३ ॥ १९४ ॥ १९५ ॥ १९६ ॥ १९७ ॥ ॥ १९८ ॥ १९९ ॥ २०० ॥ २०१ ॥ २०२ ॥ २०३ ॥ २०४ ॥ २०५ ॥

सक्षौद्रंपाचनंपित्तेतिक्तासेन्द्रयवैःकृतम् ।
पाठेन्द्रयवतिक्ताभिःकटूफलैर्वासशर्करम् ॥ २०६ ॥
क्काथःपित्तज्वरंहन्यादथवापर्पटोद्भवः ।

पटोलयवधन्याकमधुकानांमधुप्लुतः ॥ २०७ ॥
क्वाथःपित्तज्वरंदाहंहन्तितृष्णांचदारुणाम् ॥ २०८ ॥
मधुकंयष्टीमधुः।
एकःपर्पटकःश्रेष्ठःपित्तज्वरविनाशकः।
किंपुनर्यदियुज्येतचन्दनोदीच्यनागरैः ॥ २०९ ॥
घनचन्दनपर्पटकंकटुकं
समृणालपटोलदलंसजलम्।
शृतशीतसितायुतपित्तहरं
ज्वरछर्दितृषारुचिदाहहरम् ॥ २१० ॥
द्राक्षाभयापर्पटकाम्लतिक्ता-
क्वाथंसशम्याकफलंविदध्यात्।
प्रलापमूर्च्छाभ्रमदाहशोष-
तृष्णान्वितेपित्तभवज्वरेतु ॥ २११ ॥
विदारीदाडिमंलोध्रंकपित्थंबीजपूरकम्।
एभिःप्रलिंह्यान्मूर्द्धानंतृड्दाहार्त्तस्यदेहिनः ॥२१२ ॥
करवीरस्यपत्राणिचन्दनंशारिवास्तिलाः।
तृष्णादाहेशिरोलेपआरनालेनपेषितः ॥ २१३ ॥
कालेयचन्दनानन्तायष्टीबदरकांजिकैः।
सघृतःस्याच्छिरोलेपस्तृष्णादाहार्त्तिशान्तये ॥ २१४ ॥
चन्दनोदकशीतेषुदाहार्त्तःसंविशेन्सुखम्।
हिमाम्बुपूर्णसदनेशीतधारागृहेऽपिवा ॥ २१५ ॥
पौष्करेऽम्भासिसामीप्येसुतरव्यंसहआदिशेत् ॥ २१६ ॥
सरःसमीपइत्यर्थः।
हेमशंखप्रवालानांमणीनांमौक्तिकस्यच।
चन्दनोदकपीतानिसंस्पर्शात्तरसाभवेत् ॥ २१७ ॥

हरीतकीप्रियंगुश्चपिप्पलीलोध्रमेवच ।
चव्यंदार्वीहरिद्राचसक्षौद्रंमुखधारणम् ॥ २१८ ॥

इतिपित्ते ।

अर्थ–कुटकी और इन्द्रजौ इनका काढ़ा, सहतके साथ, अथवा पाढ़, इन्द्रजौ, कायफल और कुटकी इनका काढ़ा चीनीके साथ या पित्तपापड़ेका काढ़ा पीनेसे पितज्वर नाश होताहै । कड़वेंपरवल, इन्द्रजौ, धनियाँ और मुलैठी, इनका काढ़ा पीनेसे पित्तज्वर, दाह और तृषा दूर होतीहै । केवल एकही पित्तपापड़ा पित्तज्वरको नाश करसक्ता है, और जो यदि इनमें चन्दन, सुगन्धवाला और सोंठ मिलाके देवै तबतौ क्याही कहनाहै । नागरमोथा, लालचन्दन, पित्तपापड़ा, कुटकी, कमलकीनाल और पटोलपत्र, इनका काढ़ा शीतलकर खाँडके साथ पीनेसे पितज्वर, वमन, तृषा, अरुचि, और दाह दूर होतीहै । दाख, हरड़, पित्तपापड़ा, इमली और कुटकी इनका काढ़ा बना उसमें अमलतासका गूदा मिलाकर पीनेसे प्रलाप, मूर्च्छा, भ्रम, दाह, और तृष्णायुक्तपित्तज्वर नष्ट होताहै । विदारीकन्द, अनार, लोध, कैथ और विजोरेकी केशर इनका कल्क, अथवा कनेरकेपत्ते, चंदन, शारिवा, और तिल इनको काँजीमें पीस शिरपै लेपकरनेसे तृषा और दाह दूर होतीहै । अथवा दारुहलदी, चन्दन, शारिवा, मुलैठी और बेरीके पत्ते इनसबको काँजीमें पीस घी मिला शिरपै लेपकरनेसे तृषा और दाह शान्त होजातीहै । लालचन्दनको शीतलजलमें घिसकर मुखमें धारणकरनेसे दाह दूर होतीहै । शीतलजलसे भरे हुए बागमें, शीतलजलकी धारा पढ़ती होय ऐसे घरमें, और कमलयुक्तसरोवरके समीपमें वास करै, चन्दनोदक पीवै, तथा सोना, शंख, मूँगा, मणि, और मुक्तादि धारण करनेसे दाह दूर होतीहै । हरड़, फूलप्रियंगू, पीपल, लोध, चव्य, दारुहलदी, और हलदी इनसबको सहतमें पीसकर मुखमें धारणकरनेसे दाह दूर होतीहै ॥ २०६ ॥ २०७ ॥ २०८ ॥ २०९ ॥ २१० ॥ २११ ॥ ॥ २१२ ॥ २१३ ॥ २१४ ॥ २१५ ॥ २१६ ॥ २१७ ॥ २१८ ॥

पिप्पलीपिप्पलीमूलंचव्याचित्रकनागरम् ।
मरिचैलाजमोदेन्द्रपाठावेल्लकजीरकम् ॥ २१९ ॥
भार्गीमहानिम्बफलंहिंगुरोहिणीसर्षपम् ।

विडंगातिविषामूर्वाचेत्ययंकीर्त्तितोगणः ॥ २२० ॥
पिप्पल्यादिःकफहरःप्रतिश्यायानिलापहः ।
निहन्याद्दीपनोगुल्मशूलघ्नस्त्वामपाचनः ॥ २२१ ॥
रविगुप्तोविनापाठामुस्तकोऽथचपाटला ।
पठत्यत्रगणेकिन्तुप्रचारोलिखितेनतु ॥ २२२ ॥
अजमोदावनयवानी इन्द्रयवः ।

पिप्पल्यादिगणः।

अर्थ–पीपल, पीपलामूल, चव्य, चीता, सोंठ, मिरच, इलायची, अजमोद, इन्द्रजौ, पाठ, गजपीपल, जीरा, भारंगी, हींग, बकायन, कुटकी, सरसौं, वायविड़ंग, अतीस और मूर्वा, इनसबको पिप्पल्यादि गण कहते हैं। यह पिप्पल्यादिगण–कफ, प्रतिश्याय (जुकाम,) वात, गुल्म और शूलको दूर करैहै। तथा अग्निदीपक और आमपाचक है। इस पिप्पल्यादिगणमें रविगुप्तवैद्यके मतसे पाठको निकाल नागरमोथा पाडर मिलाना चाहिये ॥ २१९ ॥ २२० ॥ २२१ ॥ २२२ ॥

कट्फलंपौष्करंशृंगीकृष्णाचमधुनासह ।
कासश्वासज्वरहरःश्रेष्ठोलेहःकफान्तकृत् ॥ २२३ ॥

चातुर्भद्रावलेहिका।

अर्थ–कायफल, पोहकरमूल, काकड़ाशिंगी, और पीपल इनका चूरण कर उसमें सहत मिला चाटनेसे कफ, श्वास, ज्वर और खाँसी दूर होती है ॥ २२३ ॥

कट्फलंपौष्करंशृंगीमुस्तकंकटुकंशठी ।
सर्वान्पृथग्वासंचूर्ण्यलिह्यान्मध्वार्द्रकेद्रवैः ॥ २२४ ॥
कफानिलारुचिच्छर्दिकाशश्वासरुजापहा ॥ २२५ ॥

कट्फलादि अवलेहिका।

अर्थ–कायफल, पोहकरमूल, काकड़ासिंगी, नागरमोथा, कुटकी और नरकचूर, इनसबको मिला अथवा पृथक् पृथक् चूर्णकर मधु और अदरखके रसकेसाथ चाटनेसे–कफ, वात, अरुचि, वमन और श्वास दूर होताहै ॥ २२४ ॥ २२५ ॥

कासश्वासज्वरच्छर्दिप्लीहपाण्डूदरापहा ।
मधुनापिप्पलीलीढापाचनीदीपनीमता ॥ २२६ ॥
भिनत्तिश्लेष्मसंघातंवायुर्जलधरानिव ॥ २२७ ॥

इति कफजे ।

अर्थ-पीपलको सहतके साथ चाटनेसे-खाँसी, श्वास, ज्वर, वमन, प्लीहा, पाण्डु, और उदररोग नष्ट होते हैं । तथा यह चटनी-पाचन और दीपन है । जैसे पवनसे बादल दूर होजाते हैं उसीप्रकार इससे कफका समूह नष्ट होजाता है ॥ २२६ ॥ २२७ ॥

संसृष्टदोषेषुहितंसंसृष्टमथपाचनम् ।
संसृष्टसंयुक्तंवातहरपित्तहरादिभिः ॥ २२८ ॥
विश्वामृताब्दभूनिम्बैःपंचमूलीसमन्वितैः ।
कृतःकषायोहन्त्याशुवातपित्तोद्भवंज्वरम् । २२९ ॥
पंचमूलीस्वल्पावातपित्तहन्तृत्वात् ॥ २३० ॥

अर्थ-वातपित्त और श्लेष्मपित्तादि मिले हुए दोषोंमें मिलीहुई औषधादि प्रयोग करनी चाहिये । सोंठ, गिलोय, नागरमोथा, चिरायता और स्वल्पपंचमूल, इनका काथ पीनेसे वातपित्तज्वर नष्ट होताहै ॥ २२८ ॥ ॥ २२९ ॥ २३० ॥

पंचांगः ।

गुडूचीपर्पटंमुस्तंकिरातंविश्वभेषजम् ।
वातपित्तज्वरेदेयंपंचभद्रमिदंशुभम् ॥ २३१ ॥
कफपित्तहरोमुद्गःकारवेल्लादिजारसाः ।
नदेयावातपित्तोत्थेज्वरेविष्टम्भकारकाः ॥ २३२ ॥

इतिवातपित्ते ।

अर्थ-गिलोय, पित्तपापड़ा, नागरमोथा, चिरायता और सोंठ, इन सबका काथ पीनेसे वातपित्तज्वर नष्ट होताहै ॥ २३१ ॥ मूँगका यूष कफपित्तनाशक है और करेला आदिका यूष वातपित्तज्वरमें नहीं देना चाहिये । क्योंकि यह विष्टम्भकारकहै ॥ २३२ ॥

गुडूच्यादिः।

गुडूचीनिम्बधन्याकंपद्मकंचन्दनानिच।
एपसर्वज्वरान्हन्तिगुडूच्यादिस्तुदीपनः॥ २३३॥
हृल्लासारोचकच्छर्दिपिपासादाहनाशनः॥ २३४॥

अर्थ–गिलोय, नीम, धनिया, पद्माख और लालचन्दन, इनका काढ़ा सर्वप्रकारके ज्वरोंको दूर करैहै, अग्निप्रदीपकहै॥ २३३॥ तथा हृल्लास, अरुचि, छर्दि, पिपासा और दाहनाशकहै॥ २३४॥

पटोलादिः।

पटोलयवधन्याकमुद्गामलकचन्दनम्।
पैत्तिकेश्लेष्मापित्तोत्थेतृट्छर्दिज्वरदाहनुत्॥ २३५॥

अर्थ–परवल, इन्द्रजौ, धनिया, मूंग, आमला और लालचन्दन, इनका काढ़ा बनाकर पीनेसे–पित्तज्वर, कफपित्तज्वर, तृषा, वमन और दाहसंयुक्तज्वरका नाश होताहै॥ २३५॥

कण्टकार्यादिः।

कण्टकार्य्यमृताभार्ङ्गीनागरेन्द्रयवासकम्।
भूनिम्बंचन्दनंमुस्तंपटोलंकटुरोहिणी॥ १३६॥
कषायंपाययेदेतत्पित्तश्लेष्मज्वरापहम्।
हृल्लासारोचकच्छर्दितृष्णादाहविबन्धनुत्॥ २३७॥

अर्थ–कटेरी, गिलोय, भारंगी, सोंठ, जवासा, चिरायता, लालचन्दन, नागरमोथा, परवल और कुटकी, इनका काढ़ा पित्तश्लेष्मज्वर, हृल्लास, अरुचि, वमन, तृषा दाह और विबन्धनाशकहै॥ २३६॥ २३७॥

चातुर्भद्रम्।

किराततिक्तकंमुस्तंगुडूचीविश्वभेषजम्।
चातुर्भद्रमिदंख्यातंवातश्लेष्मज्वरापहम्॥ २३८॥

अर्थ–चिरायता, नागरमोथा, गिलोय, और सोंठ यह सब मिले हुए चातुर्भद्र कहे जातेहैं। इनका काढ़ा–वातश्लेष्मज्वरनाशकहै॥ २३८॥

पंचकोलम्।

पिप्पलीपिप्पलीमूलचव्यचित्रकनागरम्।

दीपनीयोःस्मृतोवर्गःकफानिलगदापहः ॥ २३९ ॥
पाचनःशीतहारुच्योग्रहणीकण्ठरोगनुत् ॥ २४० ॥

क्काथव्यंजनाभ्याम् ।

अर्थ-पीपल, पीपलामूल, चव्य, चीता और सोंठ इनका काढ़ा-कफवात रोग नाशक, अग्निप्रदीपक, पाचक, शीतनाशक, रुचिकारक तथा संग्रहणी और कंठरोगको दूर करै है ॥ २३९ ॥ २४० ॥

क्षुद्रादिः ।

क्षुद्रामृतापुष्करनागराह्वैः
कृतःकषायःकफमारुतोद्भवे ।
सश्वासकासारुचिपार्श्वरुक्करे
ज्वरेत्रिदोषप्रभवेऽपिशस्यते ॥ २४१ ॥

इतिवातकफे ।

अर्थ-कटेरी, गिलोय, पोहकरमूल और सोंठ इनका क्काथ पीनेसे कफवातज्वर, श्वास, खासी, अरुचि और पसलीकी पीडायुक्त ज्वर दूर होताहै और यह क्षुद्रादिकषाय सन्निपातज्वरमेंभी हितकारीहै ॥२४१॥

अथ सन्निपातचिकित्सामाह ।

अकस्माच्छीतविकृतिरकस्मात्पुरुषोत्तमः ।
अकस्मादिन्द्रियोत्पत्तिःसन्निपाताग्रलक्षणम् ॥ २४२ ॥
गीतनर्तनहास्यादिविकृतेहाप्रवर्त्तनम् ।
चिरात्पाकश्चदोषाणांसन्निपातज्वराकृतिः ॥ २४३ ॥
संगतानिचितादोषाःपातयन्तिकलेवरम् ।
ससन्निपातितायस्मात्सन्निपातःसउच्यते ॥ २४४ ॥

इतिचरकः ।

लंघनंवालुकास्वेदोनस्यंनिष्ठीवनंतथा ।
अवलेहोञ्जनश्चैवप्राक्प्रयोज्यंत्रिदोषजे ॥ २४५ ॥
श्लेष्मनिग्रहमेवादौकुर्याद्व्याधौत्रिदोषजे ।
पश्चाच्छ्लेष्मणिसंक्षीणेशमयेत्पित्तमारुतौ ॥ २४६ ॥

त्रिरात्रंपंचरात्रंवासप्तरात्रमथापिवा ।
लंघनंसन्निपातेषुकुर्यादारोग्यदर्शनात् ॥ २४७ ॥
दोषाणामेवसाशक्तिर्लंघनेयासहिष्णुता ।
नतुदोषक्षयेकश्चित्सहतेलंघनंमहत् ॥ २४८ ॥

अर्थ–अब सन्निपातकी चिकित्सा कहतेहैं। अकस्मात् शीत लगने लगे, अकस्मात् देह भारी होजाय, और अकस्मात् इन्द्रियोंमें अधिक चेष्टा उत्पन्न होजावै, यह सन्निपातके पूर्वलक्षण हैं ॥ २४२ ॥ जिसमें गीत, नृत्य, हास्यादि विकृतक्रिया, पार्श्वपरिवर्त्तन और बहुत कालमें दोषोंका पाकहो, उसको सन्निपातज्वर कहतेहैं ॥ २४३ ॥ संचित तथा बढे हुए त्रिदोष शरीरको पातन करदेते हैं, इसकारण उसको सन्निपात कहतेहैं। ऐसा चरकसंहितामें लिखाहै ॥ २४४ ॥ लंघन, वालुकाखेद, नस्य, निष्ठीवन, अवलेह और अंजन, यह सब सन्निपातमें प्रथम प्रयोग करने चाहिये ॥ २४५ ॥ सन्निपातमें प्रथम कफको दूर करै, जब कफ दूर होजावै तत्पश्चात् पित्त और वायुको दूर करना चाहिये ॥ २४६ ॥ तीनरात्रि या पाँचरात्रि अथवा सातरात्रि या आरोग्य होनेपर्यन्त सन्निपातमें लंघन कराने चाहिये ॥ २४७ ॥ जितने दिनौं तक रोगी लंघन सहसकै उतने दिनोंपर्यन्त दोषोंका बल जानना चाहिये, क्योंकि दोषोंके नाश होनेपर ऐसा कौन मनुष्य है जो लंघनको सहलेवै ? ॥ २४८ ॥

आर्द्रकस्वरसोपेतंसैन्धवंसकटुत्रिकम् ।
आकण्ठंधारयेदास्येनिष्ठीवेच्चपुनःपुनः ॥ २४९ ॥
तेनास्यहृदयाच्छ्लेष्मामन्यापार्श्वशिरोगलात् ॥
निश्चितंकृष्यतेशुष्कोलाघवश्चास्यजायते ॥ २५० ॥
पर्वभेदोज्वरोमूर्च्छाकासश्वासज्वरामयाः ।
मुखाक्षिगौरवंजाड्यमुत्क्लेशश्चोपशाम्यति ॥ २५१ ॥
कवलग्रहःमातुलुंगार्द्रकरसंकोष्णंत्रिलवणान्वितम् ।
अन्यद्वासिद्धिविहितंनस्यंतीक्ष्णंप्रयोजयेत् ॥ २५२ ॥
तेनप्रभिद्यतेश्लेष्माप्रभिन्नश्चप्रसिच्यते ।

शिरोहृदयकण्ठस्यपार्श्वरुक्चोपशाम्यति ॥ २५३ ॥
सैंधवंश्वेत[1]मरिचंसर्षपंकुष्ठमेवच ।
बस्तमूत्रेणपिष्ट्वातुनस्यंतन्द्राविनाशनम् ॥ २५४ ॥

नस्यम् ।

शिरीषबीजगोमूत्रकृष्णामरिचसैंधवैः ।
अंजनंस्यात्प्रबोधायसरसोनशिलावचैः ॥ २५५ ॥
मातुलुंगरसस्तस्यहिंगुशुंठीयुतंमुखे ।
दद्यात्प्रबोधनंतीक्ष्णंकटुतिक्तोपसंहितम् ॥ २५६ ॥
कृतेक्रियावरेचास्मिन्यस्यसंज्ञानजायते ।
पादयोश्चललाटेवादाहंलोहशलाकया ॥ २५७ ॥

अर्थ–सैंधानोन, सोंठ, मिरच, पीपल, इनका चूर्णकर अदरखके रसमें मिला मुखमें रख वारंवार थूकता रहै ॥ २४९ ॥ इसप्रकारकरनेसे हृदयका श्लेष्मा, तथा मन्या, पसली, शिर और गलेका कफ बाहर निकलजाता है, देहमें लघुता आजाती है ॥ २५० ॥ तथा संधियोंमें दर्द, ज्वर, मूर्च्छा, खाँसी, श्वाँस, ज्वरके विकार, मुख और नेत्रोंकी गुरुता, शरीरकी जड़ता और ग्लानि दूर होजातीहै ॥ २५१ ॥ विजौरेका रस और अदरखका रस किंचित् गरम कर उसमें सैंधानोन, और विरियासंचरनोन मिलाके, कुल्ले करनेसे, अथवा तीक्ष्ण नस्य लेनेसे कफ खंडित होकर शरीरसे बाहिर निकलजाताहै और शिर, हृदय, कंठ, मुख, और पसलीकी पीड़ा शान्त होजातीहै ॥ २५२ ॥ २५३ ॥ सैंधानोन, सैजिनेकेबीज, सरसों और कूठ, इनसबको बकरेके मूत्रमें पीसकर नास लेनेसे तन्द्रा दूर होजातीहै ॥ २५४ ॥ सिरसके बीज, पीपल, कालीमिरच, सैंधानोन, लहसुन, मैनशिल और वच, इनसबको गोमूत्रमें पीसकर अंजन बना आँखोंमें लगानेसे मूर्च्छा नष्ट होतीहै ॥ २५५ ॥ बिजौरेके रसमें हींग और सोंठका चूरन मिलाकर मुखमें रखनेसे अथवा तीक्ष्ण, कटु और तिक्तपदार्थ मुखमें रखनेसे मूर्च्छा नष्ट होजाती है ॥ २५६ ॥ यदि उपरोक्त करनेसेभी मूर्च्छा नष्ट

१ श्वेतमरिचं शोभांजनबीजम् ।

अर्थात् संज्ञा न उत्पन्न हो, तब लोहेकी सलाईको अग्निमें तपा रोगी-के दोनो पाँव और ललाटमें दाग देवै ॥ २५७ ॥

किरातंसकणाशृंगीवासंकट्फलपौष्करम् ।
मधुनासन्निपातघ्नोलेहःकार्यःपुनःपुनः ॥ २५८ ॥

इति किराताद्यवलेहः ।

अर्थ–चिरायता, पीपल, काकड़ाशिंगी, विसोंटा, कायफल, और पोह-करमूल, इनसबका चूरण कर सहत मिलाकै चाटनेसे सन्निपात दूरहोताहै.

अष्टांगावलेहिका ।

कट्फलंपौष्करंशृंगीव्योषंयासश्चकारवी ।
विचूर्ण्यलेहयेद्युक्त्याक्षौद्रेणार्द्ररसेनवा ॥ २५९ ॥
अष्टांगाख्यमिदंहन्तिसन्निपातंसुदुर्ज्जयम् ।
प्रमोहश्वासकासांश्चतन्द्राहिक्कागलग्रहान् ॥ २६० ॥
ऊर्द्धगश्लेष्महरणेउष्णेस्वेदादिकर्मणि ।
निरुध्योष्णेमधुत्यक्त्वाकार्य्यैषार्द्रकजे रसैः ॥ २६१ ॥

अर्थ–कायफल, पोहकरमूल, काकडाशिंगी, सोंठ, मिरच, पीपल, जवासा और हिंगुपत्री, इन सबको समानभाग लेकर चूरण बना तिसमें सहत या अदरखका रस मिलाकै चाटनेसे दुर्जयसन्निपात, मोह, श्वास, कास, तन्द्रा, हिक्का और गलग्रह नष्ट होतेहैं ॥ २५९ ॥ २६० ॥

ऊर्द्धगकफ हरनेके लिये तथा उष्ण उष्ण स्वेदादि कर्ममें मधुको त्याग अदरखके रसमें यह अष्टांगावलेहव्यवहार करना चाहिये ॥२६१॥

स्विन्नमामलकंपिष्ट्वाद्राक्षाशुंठीसमन्वितम् ।
मधुनालेहयेन्मूर्च्छाकासश्वासोपशान्तये ॥ २६२ ॥

इतिआमलक्याद्यवलेहः ।

अर्थ–सीजे हुए आमले, दाख और सोंठ इन सबको पीस सहतके साथ चाटनेसे मूर्च्छा, खासी और श्वास शान्त होताहै ॥ २६२ ॥

दशमूलीकषायस्तुपौष्करेणावचूर्णितम् ।
सन्निपातज्वरेदेयंकाशश्वासतृषान्विते ॥ २६३ ॥

अर्थ-दशमूलका क्वाथ पुष्करमूलके चूरनके साथ पनिसे खाँसी, श्वास और तृषायुक्त सन्निपातज्वर नष्ट होताहै ॥ २६३ ॥

दशमूलम् ।

बिल्वस्योनाकगाम्भारीपाटलागणिकारिका ।
दीपनंकफवातघ्नंपंचमूलमिदंमहत् ॥ २६४ ॥
शालपर्णीपृश्निपर्णीबृहतीद्वयगोक्षुरम् ।
वातपित्तहरंवृष्यंकनीयःपंचमूलकम् ॥ २६५ ॥
उभयंदशमूलन्तुसन्निपातज्वरापहम् ।
कासेश्वासेचतन्द्रायांपार्श्वशूलेचशस्यते ॥ २६६ ॥
पिप्पलीचूर्णसंयुक्तंकण्ठहृद्ग्रहनाशनम् ।
विशेषाच्छ्वासकासघ्नंमन्याकर्णाक्षिरोगनुत् ॥ २६७ ॥

अर्थ-बेल, सोनापाठा, कुम्भेर, पाटल और अरणी, इन पाँच मिली हुई औषधियोंको महत् पंचमूल कहते हैं, इनका काढा अग्निप्रदीपक और कफवातनाशकहै ॥ २६४ ॥ शरिवन, पिठवन, कटेरी, बृहती और गोखरू,इनपाँचोंको स्वल्प पंचमूल कहतेहैं, इनका काढ़ा-वातपित्त-नाशक और वीर्यवर्द्धक है ॥ २६५ ॥ यह दोनों बृहत्पंचमूल और स्वल्पपंचमूल मिलके दशमूल कहे जाते हैं।दशमूलका काढ़ा सन्निपातज्वर-नाशकहै, तथा खाँसी, श्वास, तन्द्रा और पसवाड़ेकी पीडाको दूर करै है ॥ २६६ ॥ और इस काढ़ेमें पीपलका चूरन डालकर पीनेसे कण्ठ और हृदयकी पीड़ा, तथा विशेषकरकै श्वास, खाँसी, मन्या, कर्ण और नेत्ररोग दूर होताहै ॥ २६७ ॥

द्वादशांगः ।

दशमूलीकणाधान्यैःपित्तश्लेष्मोद्भवेज्वरे ।
दद्यात्पाचनकंपूर्वमामेस्तब्धेसनागरैः ॥ २६८ ॥

अर्थ-दशमूल, पीपल, और धनिया, इनका काढ़ा पित्तश्लेष्मज्वरमें प्रथम देना चाहिये । तथा स्तब्ध और आमावस्थामें इसकाढेको सोंठके साथ देना चाहिये ॥ २६८ ॥

चतुर्दशांगः ।

चिरज्वरेवातकफोल्बणेवात्रिदोषजेवादशमूलमिश्रः ।

किराततिक्तादिगणःप्रयोज्यःशुद्धार्थिनेवात्रिवृताविमिश्रः २६९

अर्थ-दशमूल, चिरायता, नागरमोथा, गिलोय और सोंठ, इनका काढ़ा जीर्णज्वर, वातकफज्वर, और सन्निपातज्वरनाशकहै, तथा इसमें निसोतका चूर्ण मिलाकर पीवैतौ कोष्ठ शुद्ध होजाताहै ॥ २६९ ॥

पंचदशाङ्गः।

द्विपंचमूलीषड्ग्रन्थातथागृध्रनखीद्वयम्।
कफवातहरःक्काथःसन्निपातहरःपरः ॥ २७० ॥

षडग्रन्थावचा।

अर्थ-दशमूल, वच और दोनोंप्रकारकी वेरीकीछाल, इनकाकाढ़ा कफवातनाशक और सन्निपातनिवारकहै ॥ २७० ॥

दशमूलीशठीशृंगीव्योषंक्काथंपिबेन्नरः।
सान्निपातज्वरंहन्यादित्याहकपिलोमुनिः ॥ २७१ ॥

अर्थ-दशमूल, नरकचूर, काकडाशिंगी, सोंठ, मिरच, पीपल, इनका काढ़ा पीनेसे सन्निपातज्वरनाश होताहै ऐसा कपिलमुनिने कहाहै ॥

षोडशांगः।

त्र्यूषणंदशमूलशठीशृंगीभार्गीछिन्नोद्भवःक्काथः।
पीतःशमयतिसहसाज्वरंचोग्रंसन्निपातभवम् ॥ २७२ ॥

अर्थ-सोंठ, मिरच, पपिल, दशमूल, काकडाशिंगी, भारंगी और गिलोय, इनका काढ़ाकर पीनेसे शीघ्रही सन्निपातज्वर नष्ट होता है।

अष्टादशाङ्गः।

भूनिम्बदारुदशमूलमहौषधाब्द-
तिक्तेन्द्रबीजधनिकेभकणाकषायः ॥
तन्द्राप्रलापकसनारुचिदाहमोह-
श्वासादियुक्तमखिलंज्वरमाशुहन्ति ॥ २७६ ॥

अर्थ-चिरायता, देवदारु, दशमूल, सौंठ नागरमोथा, कुटकी,इन्द्रजौ, धनिया और गजपीपल इनका काथ, तन्द्रा, प्रलाप, खाँसी, अरुचि, दाह, मोह, और श्वासादियुक्त ज्वरनाशक है ॥ २७३ ॥

वातश्लेष्महरोऽष्टादशांगः ।

शठीपुष्करमूलंचव्याघ्रीशृंगीदुरालभा ।
गुडूचीनागरंपाठाकैरातंकटुरोहिणी ॥ २७४ ॥
अष्टादशांगइत्येषसन्निपातज्वरापहः ।
कासहृद्ग्रहपार्श्वार्त्तिश्वासहिक्कावमीहरः ॥ २७५ ॥

अर्थ–नरकचूर, पोहकरमूल, कटेरी, काकडाशिंगी, जवासा, गिलोय नागरमोथा,पाढ, चिरायता और कुटकी इनका काढ़ा पीनेसे सन्निपात-ज्वर, खाँसी, हृदयकीपीडा, पसलीकीवेदना, श्वास, हिचकी और वमन दूर होतीहै ॥ २७४ ॥ २७५ ॥

त्रिवृद्विशालाकटुकात्रिफलारग्वधैःकृतः ।
संस्कारैर्भेदनःक्काथःपेयःसर्वज्वरापहः ॥ २७६ ॥

अर्थ–निसोत, इन्द्रायन, कुटकी, त्रिफला और अमलतास इनका काढ़ाबनाकर पीनेसे सर्वप्रकारके ज्वर दूर होतेहैं, तथा यह काढ़ा भेद-कहै ॥ २७६ ॥

शृंगीभार्ग्यजयाजाजीकणाभूनिम्बपर्पटैः ।
देवदारुवचाकुष्ठयासकट्फलनागरैः ॥ २७७ ॥
मुस्तधन्याकतिक्तेन्द्रशठीपाठाहरेणुभिः ।
हस्तिपिप्पलपपामार्गपिप्पलीमूलचित्रकैः ॥ २७८ ॥
निम्बारग्वधत्रायन्तीविशालासोमराजिभिः ।
विडंगरजनीदार्वीयवानीद्वयसंयुतैः ॥ २७९ ॥
समांशैःसाधितःक्काथोहिंगार्द्रकरसान्वितः ।
अभिन्यासंज्वरंघोरंहन्तितंद्राश्चतत्क्षणात् ॥ २८० ॥
सन्निपातंतथारौद्रंत्रयोदशविधंचतत् ।
कर्णशूलश्चहिक्काश्चमूर्च्छाश्चैवविशेषतः ॥ २८१ ॥

इतिशृंग्यादिः ।

अर्थ–काकड़ाशिंगी, भारंगी, हरड, जीरा, पीपल, चिरायता, पित्त-पापडा, देवदारु, वच, कूट, जवासा, कायफल, सोंठ, ॥ २७७ ॥

नागरमोथा, धनिया, कुटकी, इन्द्रजौ, नरकचूर, पाढ, रेणुका, गजपीपल, चिरचिरा, पीपलामूल, चीता ॥ २७८ ॥ नीम, अमलतास, त्रायमान, इन्द्रायण, वापची, वायविडंग, हलदी, दारुहलदी, अजवायन, अजमोद, ॥ २७९ ॥ इन सबका काढ़ाबना उसमें अदरखका रस और हींग मिलाकर पीनेसे अभिन्यासादि तेरह प्रकारके सन्निपात दूर होतेहैं ॥ २८० ॥ २८१ ॥

कर्णशूलोत्थशोथेतुशस्तंरक्तस्यमोक्षणम् ।
प्रमेहान्कफपित्तघ्नान्नस्यानिकवलग्रहान् ॥ २८२ ॥
लेहांश्चकफवातघ्नान्युञ्ज्याच्चत्रिफलाघृतम् ।
कुलत्थकट्फलेशुण्ठीकालाजाजीसमांशकैः ॥ २८३ ॥
कर्णशोथहरोलेपःसन्निपातज्वरेभृशम् ।
बीजपूरकमूलानिअग्निमन्थंतथैवच ॥ २८४ ॥
सनागरंदेवदारुरास्नाचित्रकपेषितम् ।
प्रलेपनमिदंश्रेष्ठंगलेश्वयथुनाशनम् ॥ २८५ ॥

कर्णशोथे ।

इतिग्रन्थान्तरे ।

अर्थ–सन्निपातरोगके विषय कर्णमूलमें सूजन होयतौ, रुधिर निकलवाना, कफपित्तनाशक प्रलेप करना, नस्य, कुल्हे, कफवातनाशक अवलेह और त्रिफलाघृत प्रयोग करना चाहिये । कुलथी, कायफल, सोंठ और काला जीरा, इनसबको समानभागले पीसकर लेपनकरनेसे कर्णशूलजशोथ नष्ट होताहै । विजीरेकी जड़, अरणी, सोंठ, देवदारु, रायसन और चीता, इनको पीसकर लेप करनेसे गलेकी सूजन दूर होतीहै ॥ २८२ ॥ ॥ २८३ ॥ २८४ ॥ २८५ ॥

रसरत्नाकरोक्तः ।

सन्निपातभैरवोरसः ।

शुद्धसूतंसमंगंधंसूतताम्राभ्रटंगणम् ।
जम्बीरसमध्यस्थंदोलायंत्रेपचेद्दिने ॥ २८६ ॥

सर्पाक्षीविजयाब्राह्मीमीनाक्षीहंसपादिका ।
हस्तिशुण्डीरुद्रजटाधूर्त्तवातारिवायसी ॥ २८७ ॥
दिनैकंमर्द्दयेदेभिर्लोहसंपुटगंपचेत् ।
दिनैकंवालुकायंत्रेसमुद्धृत्याविचूर्णयेत् ॥ २८८ ॥
आमलक्यादिभिर्व्योषजैपालबीजाचित्रकैः ।
समैःसमरसोन्मिश्र्यत्रिगुंजंभक्षयेत्सदा ॥ २८९ ॥
सन्निपातज्वरंहन्तिमुद्गयूषादिकंहितम् ।
क्षौद्रंजातीयुतापेयारसस्त्रिदोषभैरवः ॥ २९० ॥

अर्थ-शुद्धपारा, गंधक, ताँबा अभ्रक, और सुहागा इनसबको समान भागलेकर जंभीरी नीबूके रसमें रखकर एकदिन दोलायंत्रमें पचावै फिर सर्पाक्षी, भाँग, ब्राह्मी, मत्स्याक्षी, हंसपदी, हाथीशुंडा, रुद्रजटा, धतूरा, अंड, और मकोयके रसमें एक दिन मर्दन करकै लोहसंपुटमें रख वालुकायंत्रमें एक दिन पकावै, तदनंतर सम्पुटसे निकाल चूर्णकर आमला, सोंठ, पीपल, मिरच, जमालगोटा और चीतेका रस इसमें मिला तीनगुंजाप्रमाण खानेसे सन्निपातज्वरनाश होताहै । इसपै पथ्य मूंगकायूष, मधु, और आमलेयुक्त पेया पीनी चाहिये ॥२८६॥२८७ ॥ २८८ ॥ २८९ ॥ २९० ॥

सिंहनादोरसः ।

लोहपात्रगतेगन्धेद्राविततत्रनिक्षिपेत् ।
शुद्धंसूतंसमंचाभ्रंव्याघ्रीद्रावंद्वयोःसमम् ॥ २९१ ॥
निर्गुण्ड्याःस्वरसोत्थश्चतुल्यंतुल्यंरसंक्षिपेत् ।
पचेन्मृद्वग्निनातावद्यावच्छुष्कंद्रवद्वयम् ॥ २९२ ॥
विषंपादयुतंचूर्णंसिंहनादोरसोत्तमः ।
गुंजामात्रंप्रदातव्यंसन्निपातज्वरान्तकम् ॥ २९३ ॥
अनुपानंपिबेत्क्काथंकण्टकार्याःसपुष्करम् ।
गुडूचीनागरायुक्तमरुचिश्वासकासजित् ॥ २९४ ॥

अर्थ-लोहेके बरतनमें गंधक डालकर फिर उसमें शुद्धपारा और शुद्ध-अभ्रक समानभाग मिलादेवै, और पारेकीसमान निर्गुण्डीका रस मिलावै; जबतक कटेरी और सम्हालूका रस न सुखजाय तबतक मृदुअग्निसे पचावै, फिर चौथाभाग विष मिलावै, इसप्रकार सिंहनादरस बनताहै। इस रसको एकरत्तीप्रमाण देना चाहिये, इससे सन्निपातज्वरका निः-सन्देह नाश होताहै। अनुपान-कटेरीके काढेमें, गिलोय, पोहकरमूल, और सोंठका चूरण डालकर इस रसके साथ पीवै, इससे अरुचि, श्वास, और कासंयुक्त सन्निपातज्वरका नाश होताहै॥२९१॥२९२॥२९३॥२९४

शुद्धसूतंमृतञ्चाभ्रंशुद्धंतालकताम्रकौ।
हिंगुश्चतुल्यतुल्यांशंमर्दयेत्कटुकद्रवैः॥ २९५॥
वन्ध्यापटोलनिर्गुण्डीशुण्ठीगंधालिचित्रकैः।
धत्तूरलांगलीपाठाभृंगीजम्बीरजद्रवैः॥ २९६॥
त्रिदिनंमर्दयेदेभिश्चूर्णीकृत्यविमिश्रयेत्।
त्रिक्षारसैन्धवंबोलंविषंमधुकमार्कवम्॥ २९७॥
तुल्यंतुल्यंविचूर्ण्याथपूर्वोक्तंचइदंसमम्।
एकीकृत्यभवेत्सद्यःसन्निपातगजांकुशः॥ २९८॥
सन्निपातंनिहन्त्याशुमासमात्रंप्रयोजयेत्॥ २९९॥

इति सन्निपातगजांकुशः।

अर्थ-शुद्धपारा, मृतअभ्रक, शुद्धहरिताल, शुद्धताँबा, और हींग इनसबको समानभागलेकर त्रिकुटेके काथमें मर्द्दन करै, फिर बाँग ककोड़ा, परवल, सम्हालू, हाथीशुंडा, गंधालि (पसरन), चीता, धतूरा, कलिहारी, पाठ, अतीस और जम्भीरी नीबू, इनके रसमें तीन-दिन मर्द्दन करकै फिर जवाखार, सज्जी, सुहागा, सैंधानोन, बोल, विष, महुआ और भांगरा, इन सबका समानभाग चूर्णकर मिलादेवै, इस प्रकार सन्निपातगजांकुश रस तैय्यार होताहै, इसको एकमासाप्रमाण सेवन करनेसे- सन्निपातरोगका नाश होताहै॥ २९५॥ २९६॥ ॥ २९७॥ २९८॥ २९९॥

अथ सन्निपातविध्वंसनोरसः ।

सूतंगंधंसमंशुद्धंतालकंमाक्षिकंतथा ।
मृतताम्राभ्रकंवोलंविषंधूस्तुरबीजकम् ॥ ३०० ॥
त्रिक्षारंरविपत्रंचहिंगुपाठापटोलकम् ।
वन्ध्याभृंगद्रवंशुंठीकन्दंलांगलिकंसमम् ॥ ३०१ ॥
सिन्धुवारद्रवैःसर्वंमर्द्यंजम्बीरजैरपि ।
दिनैकंवटिकाकार्याचणकाभाश्चभक्षयेत् ॥ ३०२ ॥
अत्युग्रंसन्निपातञ्चसर्वोपद्रवसंयुतम् ।
निहन्तिचानुपानेनदशमूलार्कजेनवा ॥ ३०३ ॥
कषायेणनसंदेहःपथ्यंदध्योदनंहितम् ।
रसोविध्वंसनोनामसन्निपातनिकृन्तनः ॥ ३०४ ॥

अर्थ-शुद्धपारा, शुद्धगंधक, शुद्धहारिताल, सोनामाखी, मृततांबा, अभ्रक, बोल, विष, धतूरकेबीज जवाखार, सज्जी, सुहागा, आकके पत्ते, हींग, पाट, पटोल, वनककोडा, भाँगरेका रस, सोंठ और कलिहारी, इनसबको समानभाग लेकर सह्मालू और जम्भीरी नीबुके रसमें एक-दिन मर्दनकर चनेकी सदृश गोली बनावै इन गोलियोंको खानेसे-अनेक उपद्रवों समेत और अत्युग्रसन्निपात नाश होजाता है । इनका अनुपान-दशमूल और आकका काढ़ाहै । पथ्य-दहीके साथ भातहै । यह सन्नि-पातविध्वंसनरस-सन्निपातनाशकहै ॥३००॥३०१॥३०२॥३०३॥३०४॥

अथ पानीयकुमाररसः ।

अनाथनाथोजगदेकनाथ-
स्त्रिलोकनाथःप्रथमःप्रसिद्धः ।
जगादपानीयवटींसुपर्द्धीं
तामेववक्ष्यामिगुरुप्रसादात् ॥ ३०५ ॥
जयार्कस्वरसाचैवनिर्गुण्डीवासकन्तथा ।
वात्यालकंकरंजश्चसूर्यावर्त्तकचित्रकौ ॥ ३०६ ॥

ब्राह्मीचसर्षपंचैवभृंगराजंविनिक्षिपेत् ।
दन्तींचत्रिवृताश्चैवतथारग्वधपत्रकम् ॥ ३०७ ॥
सहदेवामरंभण्डीतथात्रिपुटभण्टिका ।
शाल्मलीपिप्पलीचैवद्रोणपुष्पीचवायसी ॥ ३०८ ॥
गुंजाकिनींकेशराजंतथायोजंनवल्लिकाम् ।
आशारमेतिविख्यातंधत्त्रूरकरसस्तथा ॥ ३०९ ॥
त्रैलोक्यविजयाश्चैवतथाश्वेतापराजिता ।
प्रत्येकंकार्षिकंचैवस्वरसन्तत्रदापयेत् ॥ ३१० ॥
स्नुहीदुग्धमर्कदुग्धंवटदुग्धंतथैवच ।
प्रत्येकंकार्षिकंक्षीरंपुनर्दत्त्वातुमर्दयेत् ॥ ३११ ॥
नूनंसुमर्दितंज्ञात्वायदापिंडत्वमागतम् ।
द्रव्याण्येतानिसंचूर्ण्यवस्त्रपूतंविनिक्षिपेत् ॥ ३१२ ॥
दग्धहीरंचातिविषंकोचिनामाभ्रकंतथा ।
शोधितंपारदंचैवगंधकंविषमाह्वयम् ॥ ३१३ ॥
माक्षिकंशोधितंचैवप्रत्येकंमासकद्वयम् ।
नूनंसुमर्दितंदृष्ट्वाचांगेरीस्वरसेनवा ॥ ३१४ ॥
तथायंभिषजादृष्ट्वातिलमात्रान्तुकारयेत् ।
गुटिकांसुदृढांचैवमतिमान्कुशलोभिषक् ॥ ३१५ ॥
त्रिदोषजेज्वरेवैद्यउक्तोवैद्याविचक्षणः ।
लंघनैर्वालुकास्वेदैःक्रान्तोऽतिदीपदर्शनः ॥ ३१६ ॥
प्रपूज्यकरुणाधानंप्रणम्यनाथसर्पणम् ।
शरावेवारिणाघृष्ट्वाविंशत्येकांपिबेन्नरः ॥ ३१७ ॥
पीत्वातंभेषजंपश्चाद्वस्त्रेवाच्छादयेन्नरः ।
रसशुद्धिषुप्रज्ञत्वाद्द्याद्दारिसुशीतलम् ॥ ३१८ ॥

शरावपरिमितंवारिपातव्यंचपुनःपुनः ।
सन्निपातज्वरंचैवदाहंहन्तिसुदुस्तरम् ॥ ३१९ ॥
कासंश्वासंज्वरंहिक्कांप्रमेहंचाश्मरींतथा ।
कफपित्तकृतश्चैवदाहंहन्तिनसंशयः ॥ ३२० ॥
मूत्रवेगविबन्धेतुपातव्यंक्षीरसंयुतम् ।
पंचतृणकृतंक्काथंपातव्यंचपुनःपुनः ॥ ३२१ ॥
पानीयवटिकाह्येषालोकनाथेननिर्मिता ।
लोकानामुपकारायवटिकाकथितापुरा ॥ ३२२ ॥

इति पानीयकुमाररसः ।

अर्थ-अनाथोंके नाथ, जगत्के नाथ और त्रैलोक्यके नाथ, ऐसे प्रसिद्ध महेश्वरने प्रथम पानीयवटीको कहाहै, सो अब गुरुके प्रसादसे पानीयवटीका वर्णन करताहूं । अरणी, आक, तुलसी, सम्हालु, वासा, खिरैटी, करंज, सूर्यावर्त्त, चीता, ब्राह्मी और सरसों इन सबके चूरनमें दन्ती, निसोत, अमलतासके पत्ते, सहदेवी, अमरभंडी, त्रिपुरभंडी, सेमल, पीपल, गूमा, मकोय, गुंजाकी जड़, कुकुरभाँगरा, मजीठ, आशरमा, धतूरा, भाँग, सफेदकोयल, और नीलीकोयल, इन सबका एकएक तोलाभर रस मिश्रितकर मर्दन करै, फिर थूहरका दूध, आकका दूध और बड़का दूध,यह सब दूध एकएक तोलाभर मिश्रितकर मर्दन करै, जब मर्दन करते करतें पिंडकी तरह गोला बनजाय,तब सुखाकर वस्त्रमें छानलेवै, फिर उसमें हीरेकी भस्म, अतीस कौदीनअभ्रक, शुद्धपारा, गंधक, विष और शुद्धसोनामाखी यह प्रत्येक प्रत्येक दो मासेलेवे, पश्चात् इन सबका चूर्णबना मिलादे, फिर चांगेरीके रसमें मर्दन कर तिलकी समान गोली बनाले, तदनन्तर चतुरवैद्य करुणासागरशिवजीको नमस्कार कर एक सिकोरेमें पानीभर उसमें २१ इक्कीस गोलियोंको घिसकर पिलादेवै, फिर उस रोगीको वस्त्रसे ढकदे, और बत्तीसतोले पानी कईवार करकै पिलादे, इस प्रकारकरनेसे सन्निपातज्वर, उग्रदाह, खाँसी, श्वाँस, ज्वर, हिचकी, प्रमेह, पथरी और कफपित्तसे उत्पन्न दाहको निःसन्देह दूर करैहै । और मूत्रका वेग बन्द होजाय तौ इन गोलियोंको दूधमें घोलकर पीना चाहिये । और ऊपरसे पंचतृण (शाली, ईख,

कुशा, काँस और रामसर) का क्काथ वारंवार पीवै, यह पानीयवटी शंकरने संसारके उपकारके लिये निर्माण कीहै ३०५॥ ३०६ ॥ ३०७ ॥ ॥ ३०८ ॥ ३०९ ॥ ३१० ॥ ३११ ॥ ३१२ ॥ ३१३ ॥ ३१४ ॥ ३१५ ॥ ॥ ३१६ ॥ ३१७ ॥ ३१८ ॥ ३१९ ॥ ३२० ॥ ३२१ ॥ ३२२ ॥

अथ बृहत्कस्तूरीभैरवरसः ।

मृगमदशशिसूर्याधातकीशूकशिंबी
रजतकनकमुक्ताविद्रुमंलोहपाठा ।
क्रिमिरिपुघनविश्वावारितालाभ्रधात्री
रविदलरसपिष्टंकस्तुरीभैरवोऽयम् ॥ ३२३ ॥
कस्तूरीभैरवाख्यातःसर्वज्वरविनाशनः ।
आर्द्रकस्यरसैःपेयोविषमज्वरनाशनः ॥ ३२४ ॥
द्वन्द्वजान्भौतिकान्वापिज्वरान्कामादिसंभवान् ।
अभिचारकृतांश्चैवतथाशत्रुकृतान्पुनः ॥ ३२५ ॥
निहन्याद्भक्षणादेवडाकिन्यादियुतांस्तथा ।
बिल्वचूर्णजीरकाभ्यांमधुनासहपानतः ॥ ३२६ ॥
आमातीसारग्रहणीज्वरातीसारमेवच ।
अग्निर्दीप्तिकरःशान्तःकासरोगनिकृन्तनः ॥ ३२७ ॥
दुर्बलंदुर्ग्रहंवापिनाडीसूक्ष्मकृतंपुनः ।
दीपयेद्भक्षणादेवमेहरोगंहलीमकम् ॥ ३२८ ॥
जीर्णज्वरंनूतनंवाद्वैकालिकसन्ततम् ।
प्रक्षिप्तंभौतिकंवापिहन्तिसर्वान्विशेषतः ॥ ३२९ ॥
हरितंवातरोगंवापाण्डुरोगंगलग्रहम् ।
ऐकाहिकंद्व्याहिकंवात्र्याहिकंचातुराहिकम् ॥ ३३० ॥
पंचाहिकंषष्ठसंस्थंपाक्षिकंमासिकंपुनः ।
सर्वाञ्ज्वरान्निहन्त्याशुभक्षणादार्द्रकद्रवैः ॥ ३३१ ॥

अर्थ–कस्तूरी, कपूर, ताँबा, धायके फूल, रूपा, सोना, मोती, मूंगा, लोहा, पाढ, वायविडंग, नागरमोथा, सोंठ, सुगंधवाला, हरिताल, अभ्रक और आमला, इन सबको आकके पत्तोंके रसमें मर्दनकरनेसे, बृहत्कस्तूरीरस तैय्यार होता है । यह कस्तूरीभैरवनामवाला रस–सर्वज्वरनाशकहै । इसको अदरखके रसके साथ पीनेसे विषमज्वर नाश होताहै, तथा द्वन्द्वजज्वर, भूतज्वर, कामादिसे उत्पन्नहुए ज्वर, अभिचार-कृतज्वर, शत्रुकृतज्वर, और डाकिनी आदि दोषोंयुक्त ज्वर नाश होताहै । वेलगिरी और जीरा इन दोनोंका चूर्णकर सहतमें मिला उसमें कस्तूरीभैरवरस मिलाकर चाटनेसे–आमातीसार, संग्रहणी, ज्वरा-तिसार और खाँसी दूर होतीहै, अग्निदीपन होतीहै, और कासरोग नष्ट होता है । अदरखके साथ भक्षणकरनेसे दुर्बलता, दुर्ग्रह, नाड़ीव्रण, प्रमेह, हलीमक, जीर्णज्वर, नवीनज्वर, द्विकालिकज्वर, सन्ततज्वर, भूतज्वर, वातरोग, पाण्डुरोग, गलग्रह, ऐकाहिक, द्व्याहिक त्र्याहिक, चातुर्थिक, पंचाहिक, षष्ठाहिक, पाक्षिक और मासिक तथा सर्वप्रकारके ज्वरोंको दूर करदेवैहैं ॥ ३२३ ॥ ३२४ ॥ ३२५ ॥ ३२६॥ ॥ ३२७ ॥ ३२८ ॥ ३२९ ॥ ३३० ॥ ३३१ ॥

अथबालरसवटिका ।

श्लक्ष्णपत्राणिताम्राणिअर्कक्षीरेणभावयेत् ।
ततोवज्रपयसिचकांजिकेलवणान्विते ॥ ३३२ ॥
पुटांश्चक्रमशोदत्त्वाद्रावयेत्पंचधापुनः ।
ताम्रंभागंभवेदेकंद्वौभागौगंधकस्यच ॥ ३३३ ॥
माक्षिकस्यार्द्धभागेनपुटेगजपुटेपचेत् ।
म्रियतेनात्रसन्देहःसर्वरोगेषुयोजयेत् ॥ ३३४ ॥
रसस्यगन्धकस्यापिप्रत्येकंमासकद्वयम् ।
भृंगश्चकेशराजश्चग्रीष्मसुन्दरमेवच ॥ ३३५ ॥
मण्डूकपर्णिकाचैवासिन्धुवारस्तथैवच ।
श्वेतापराजितामूलंशालिश्चकालमाविषम् ॥ ३३६ ॥
सूयावर्त्ततथैषाश्चचतुर्म्माषकसम्मितैः ।

प्रत्येकंस्वरसेखल्वेशिलायामवधानतः ॥ ३३७ ॥
लेपयेत्ताम्रगुडिकाघृष्टंतत्कज्जलीयुतम् ।
क्षिप्त्वातच्चाक्षिपेच्चूर्णमासकंस्वर्णमाक्षिकात् ॥ ३३८ ॥
मरिचाचूर्णमासश्चततोघृष्टंपुनःपुनः ।
रायीप्रमाणवटिकाछायाशुष्काविशेषतः ॥ ३३९ ॥
पानीयवटिकासेयंदेयावैद्यविवर्जिते ।
सम्यक्परीक्षिताऽसाध्येसन्निपातेप्रदीयते ॥ ३४० ॥

अर्थ-ताँबेके सूक्ष्मपत्रकर आकके दूधकी भावना देवै, फिर क्रमसे थूहरके दूधमें तथा लवणसंयुक्तकाँजीमें पाँचप्रकार द्रावित करै, इस प्रकार शुद्ध कियाहुआ ताँबा एकभाग, गंधक दोभाग, और सोना-माखी आधाभागलेकर गजपुटमें पचानेसे ताँबेकी भस्म होजातीहै, यह भस्म सर्वयोगोंमें प्रयोगकरनी योग्यहै। दोमासे पारा और दोमासे गन्धक इन दोनोंकी कज्जली बना उस कज्जलीको लेकर भाँगरा, कुकुर-भाँगरा, ग्रीष्मसुन्दर, मण्डूकपर्णी,सम्हालु, सफेदकोपलकी जड़,शालिच-शाक, कालशाक और सूर्यावर्त इन हरेकका चार चार मासे रसले उस रसमें पूर्वोक्त कज्जलीको मिला खरलमें खरलकर फिर उक्त तांबेपै कज्जलीका लेप करै, तत्पश्चात् चूर्णकर एकमासा सोनामाखी और एक मासा कालीमिरचका चूरन मिला वारंवार घिस राईकी बराबर गोली बनाकर छायामें सुखादेवै, यह पानीयवटिका बालकोंके सन्नि-पातमें और असाध्यसन्निपातमें दीजातीहै ॥ ३३२ ॥ ३३३ ॥ ३३४ ॥ ॥ ३३५ ॥ ३३६ ॥ ३३७ ॥ ३३८ ॥ ३३९ ॥ ३४० ॥

अथबालरसः।

शाणंशुद्धस्यसूतस्यगंधकस्यचतत्समम् ।
सुवर्णमाक्षिकस्यापिअर्द्धभागंप्रयोजयेत् ॥ ३४१ ॥
ततःकज्जलिकांकृत्वालौहपात्रेदृढेनवे ।
केशराजस्यभृंगस्यानिर्गुण्ड्याःपत्रसंभवम् ॥ ३४२ ॥
शुभेशिलामयेपात्रेलौहदंडेनमर्दयेत् ।

शुद्धमातपसंयोगाद्गुडिकांकारयेत्ततः ॥ ३४३ ॥
प्रमाणंसर्षपाकारंबालानाञ्चैवयोजयेत् ।
हन्तित्रिदोषजंभूतंज्वरंचैवसुदारुणम् ॥ ३४४ ॥
चिरज्वरञ्चकासंचशूलंसर्वगदन्तथा ।
शिशूनांरोगनाशायरसोऽयंशिवनिर्मितः ॥ ३४५ ॥

अर्थ—चारमासेपारा, चारमासेगंधक, और दोमासे सोनामाखी, इन सबको लेकर लोहेके बरतनमें कज्जली बना फिर कुकुरभाँगरा, भाँगरा, और सम्हालुके पत्तोंकें रसमें लोहेके दण्डसे पत्थरके बर्तनमें मर्द्दन करै, तदनन्तर धूपमें सुखाकै सरसोंकी बराबर गोली बनाले । यहगोली बालकोंको देनी चाहिये, इससें सन्निपातज्वर, भूत-ज्वर, दारुणज्वर, जीर्णज्वर, खाँसी, शूल और सर्वप्रकारके रोग दूर होतेहैं । यह बालरस बालकोंके रोगोंको दूर करनेके लिये शिवजीने निर्माण कियाहै ॥ ३४१ ॥ ३४२ ॥ ३४३ ॥ ३४४ ॥ ३४५ ॥

अथरसशोधनम् ।

त्रिक्षारैःपंचलवणैर्दिनैकंमर्दयेद्रसम् ।
राजिकानागरंहिंगुएभिर्मूषान्तुकारयेत् ॥ ३४६ ॥
मूषान्तर्वर्त्तितंसूतंरुद्ध्वावस्त्रेणबन्धयेत् ।
आरनालेनतत्पाच्यंदोलायंत्रेदिनत्रयम् ॥ ३४७ ॥
आदायमर्दयेत्खल्वेसूततुल्यैर्द्रवैःपृथक् ।
निर्गुण्डीभृंगधत्तूरशताह्वागिरिकर्णजैः ॥३४८॥
मण्डूरीकाकमाचीचकाविकर्णार्द्रकद्रवैः ।
करवीराग्निपाठाभिरेभिर्मर्द्यःक्रमाद्रसः ॥ ३४९ ॥

अर्थ—जवाखार, सज्जी, सुहागा, सैंधानोन, कालानोन, कचियानोन, विडनोन, और सामरनोनके साथ पारेको एक दिन मर्दनकर फिर राई, सोंट, और हींग इनको पीस मूषा बनालेवै, उस मूषामें पारेको रख वस्त्रसे बाँध कांजीमें दोलायंत्रके द्वारा तीनदिन पचावै, तदनन्तर, सम्हालु, भाँगरा, धतूरा, सौंफ, कोयली, मण्डूरी, मकोय, हस्तिकर्ण,

पलाश, अदरख, कनेर, चीता और पाढ़, इनके रसमें पारेको क्रमसे मर्द्दन करैतौ पारा शुद्ध होजाता है ॥ ३४६ ॥ ३४७ ॥ ३४८ ॥ ३४९ ॥

अथ कालाग्निरुद्ररसः ।

मरिचंगंधतुल्यंचक्षिप्त्वापित्तैर्विभावयेत् ।
मायूरमात्स्यवाराहच्छागस्यहषजैरपि ॥ ३५० ॥
समस्तैरथवाव्यस्तैर्दिनैकंभावयेद्रसम् ।
संयोज्यगरलंचापिवटिकांकारयेद्बुधः ॥ ३५१ ॥
रसःकालाग्निरुद्रोऽयंद्विगुंजंभक्षयेत्ततः ।
शर्करालघुतोयंचपाययेत्स्नापयेज्जलैः ॥ ३५२ ॥
दाडिमंचेक्षुदण्डश्चदध्यम्लंपथ्यमाचरेत् ।
सद्योपचारैरन्यैश्चसन्निपातंनिवारयेत् ॥ ३५३ ॥
सकंटांकठिनांजिह्वांकासश्वासातिजिह्मिताम् ।
सद्यःकरोतिसुस्निग्धांपूर्वतारसमन्विताम् ॥ ३५४ ॥
सूतंवाधिरसेवश्चस्वास्तिजिह्वामरोचकम् ।
असाध्यसन्निपातेचरोगिणांपटुतांनयेत् ॥ ३५५ ॥

इति सन्निपाते ।

अर्थ–काली मिरच और गंधकको बराबर लेकर मयूर, मच्छ, सुअर, बकरा, और भैंसा, इनके पित्तमें भावना देवै, तदनन्तर इनसबमें एक वार अथवा अलग अलग पारेको भावना देवै, फिर सबको मिला तिसमें विषमिश्रित कर गोली बनालेवै । इस कालाग्निरुद्ररसकी मात्रा दोरतीकी है । अनुपान–शर्करा, मधु और जलहै । पथ्य शीतलजलसे स्नान, ईख, दधि, और अम्लरसहै । यह सन्निपातको दूर करैहै तथा कण्टकयुक्त और कठोर जीभ इससे चिकनी होजातीहै, और खाँसी, श्वाँस, जिह्वारोग, अरुचि और असाध्यसन्निपातरोग नष्ट होताहै॥३५०॥ ॥ ३५१ ॥ ३५२ ॥ ३५३ ॥ ३५४ ॥ ३५५ ॥

दोषोल्पोहितसंभूतोज्वरोत्सृष्टस्यवापुनः ।
धातुमन्यतमंप्राप्यकरोतिविषमज्वरम् ॥ ३५६ ॥

नमुंचतिज्वरोयस्यपक्षादूर्द्धंशरीरिणः।
मन्दवेगोऽनुबंधश्चसज्वरोजीर्णतांगतः॥ ३५७॥
त्रिसप्ताहव्यतीतन्तुज्वरोयस्त्वणुतांगतः।
प्लीहाग्निसादंकुरुतेसजीर्णज्वरउच्यते॥ ३५८॥
जीर्णज्वरेकफेक्षीणेक्षीरंस्यादमृतोपमम्।
तदेवतरुणेपीतंविषवद्धन्तिमानवम्॥ ३५९॥
चतुर्गुणेनाम्भसावाशृतंज्वरहरंपयः।
धारोष्णंवापयःसद्योवातपित्तज्वरंजयेत्॥ ३६०॥
कासाच्छ्वासाच्छिरःशूलात्पार्श्वशूलात्सपीनसात्।
मुच्यतेज्वरितःपीत्वापंचमूलीशृतंपयः॥ ३६१॥
यःस्यादनियतात्कालाच्छीतोष्णाभ्यांतथैवच।
वेगतश्चापिविषमःसज्वरोविषमःस्मृतः॥ ३६२॥

अर्थ–ज्वरमुक्तमनुष्यके अल्पदोषभी कुपथ्यआहारादिद्वारा कुपित होकर रक्तादि किसी धातुको प्राप्तहो विषमज्वरको उत्पन्न करैहै। जो ज्वर पंद्रह दिनमेंभी न उतरे और मंदवेगयुक्तहो, उसको जीर्णज्वर कहते हैं, अथवा जो ज्वर इक्कीसदिनके पश्चात् मन्दवेगान्वित होकर प्लीहा और अग्निमान्द्यको उत्पन्न करैहै, उसको जीर्णज्वर कहते हैं। जीर्णज्वरमें कफ क्षीण होनेपर दूधका पीना अमृतकी समान गुणदायक है। किन्तु तरुण-ज्वरमें वही दूध विषकी समान अपकारी जानना। चारभाग जलमें एक भाग दूध मिलाकर अग्निमें पकावै जब जल जलकर दूधशेषरहे तब उतार शीतलकर पीवै, इससे जीर्णज्वर नाश होताहै। धारोष्ण अथवा तत्कालका दूध–वातपित्तज्वरनाशकहै। पंचमूलके चूर्णके साथ औटायाहुआ दूध पीनेसे खाँसी, श्वाँस, शिरशूल, पसलीकी पीड़ा, और पीनसरोग दूर होजाताहै। और जो अकालमें शीत तथा उष्णतासे वेगवाला ज्वर उत्पन्न हो, उसको विषमज्वर कहतेहैं॥ ३५६॥ ३५७॥ ॥ ३५८॥ ३५९॥ ३६०॥ ३६१॥ ६६२॥

मुस्तामलकगुडूचीविश्वौषधकंटकारिकाक्काथः।

शीतःसकणाचूर्णःसमधुर्विषमज्वरान्हन्ति ॥ ३६३ ॥

इति मुस्तादिः।

अर्थ-नागरमोथा, आमला, सोंठ, और कटेरी इनका क्काथ शीतलकर मधु और पीपलके चूर्णके साथ सेवनकरनेसे विषमज्वर दूर होता है ॥ ३६३ ॥

अजाजीगुडसंयुक्ताविषमज्वरनाशिनी।
अग्निसादंजयेत्सम्यग्वातरोगांश्चनाशयेत् ॥ ३६४ ॥
रसोऽनकल्कंतिलतैलमिश्रं
योश्नातिनित्यंविषमज्वरार्त्तः।
विमुच्यतेसोऽप्यचिराज्ज्वरेण
वातामयैश्चापिसुघोररूपैः॥ ३६५ ॥
महौषधामृतामुस्तचन्दनोशीरधान्यकैः।
क्काथस्तृतीयकंहन्तिशर्करामधुसंयुतः॥ ३६६ ॥

अर्थ-जीरेको गुड़के साथ सेवन करनेसे विषमज्वर, मन्दाग्नि और वातरोगका नाश होताहै। लसुनको पीस तिलके तेलमें मिलाकर सेवनकरनेसे-विषमज्वर और वातरोग दूर होतेहैं। सोंठ, गिलोय, नागरमोथा, चन्दन, खस और धनिया, इनका काढ़ा चीनी और मधुके साथ सेवनकरनेसे तृतीयकज्वर आरोग्य होताहै ॥ ३६४ ॥ ॥ ३६५ ॥ ३६६ ॥

निदिग्धिकानागरकामृतानां
क्काथंपिबेन्मिश्रितापिप्पलीकम्।
जीर्णज्वरारोचककासशूल-
श्वासाग्निमान्द्यार्दितपीनसेषु ॥ ४६७ ॥

इति निदिग्धिकादिः।

अर्थ-कटेरी, सोंठ और गिलोय,इनके काढ़ेमें पीपलका चूर्ण बुरककर पीनेसे जीर्णज्वर, अरुचि, खाँसी, शूल, श्वास, मन्दाग्नि, अर्दित और पीनसादि रोग दूर होतेहैं ॥ ३६७ ॥

वासाधात्रीस्थिरादारुपथ्यानागरसाधितः ।
सितामधुयुतःक्वाथश्चातुर्थिकनिवारणः ॥ ३६८ ॥
विदारीक्षुरसंसर्पिर्मधुतैलश्शृतंपयः ।
पिबेच्चातुर्थिकश्वासकासवातरुजापहम् ॥ ३६९ ॥

अर्थ-विसोंठा, आमला, शरिवन, देवदारु, हरड, और सोंठ, इनका काढ़ा चीनी और मधुके साथ पीनेसे चातुर्थिकज्वर नाश होताहै ॥ ३६८ विदारीकन्द, ईखका रस, घृत, मधु, और तेल, इनको दूधमें पकाकर पीनेसे चातुर्थिकज्वर, श्वास, खासी, और वातरोग नष्ट होताहै ॥ ३६९॥

पलंकषानिम्बपत्रंवचाकुष्ठंहरतिकी ।
सर्षपाःसयवाःसर्पिर्धूपनंज्वरनाशनम् ॥ ३७० ॥

अष्टांगधूपः ।

अर्थ-गूगल, नीमके पत्ते, वच, कूट, हरड़, सरसौं, जौ और घृत, इनसबको एकत्रकर धूप देनेसे ज्वर आराम होताहै ॥ ३७० ॥

ज्वराःकषायैर्वमनैःपानैर्वालघुभोजनैः ।
रूक्षस्ययेनशाम्यन्तिसर्पिस्तेषांभिषग्जितम् ॥ ३७१ ॥

अर्थ-रूखेमनुष्यके जो ज्वर कषाय, वमन, पाचन और लघुभोजनसे शांत नहीं होवै, तो उसकी घृतके द्वारा वैद्य चिकित्साकरै ॥ ३७१॥

पंचकोलैःससिन्धूत्थैःपालिकैःपयसासमम् ।
सर्पिःप्रस्थंशृतंप्लीहविषमज्वरगुल्मनुत् ॥ ३७२ ॥
अत्रद्रवान्तरानुक्तौक्षीरमेवचतुर्गुणम् ।
द्रवागुरेणयोगेनक्षीरंस्नेहसमंभवेत् ॥ ३७३ ॥

इति क्षीरषट्पलकंघृतम् ।

अर्थ-पंचकोल, और सैंधानोन चार चार तोले और इनसबकी बराबर दूध और चौंसठ तोले घी इनसबको मिलाकर घृत सिद्धकरै । यह घृत विषमज्वर, प्लीहा और गुल्मनाशक है ॥ ३७२ ॥ यहां अन्यवस्तु नहीं पड़तीहै इसकारण दूध चौगुना गेरना चाहिये । और जहां पानीमें क्वाथ करै तौ दूध घृतकेसमान गेरना चाहिये ॥ ३७३ ॥

भिषग्जितंचिकित्सितं भैषज्यमिति ।

पिप्पलीचन्दनंमुस्तमुशीरंकटुरोहिणी।
कलिंगकास्तामलकींशारिवातिविषेस्थिरा ॥ ३७४ ॥
द्राक्षामलकबिल्वानित्रायमाणानिदिग्धिका।
सिद्धमेभिर्घृतंसद्योज्वरंजीर्णंव्यपोहति ॥ ३७५ ॥
क्षयंकासंशिरःशूलंपार्श्वशूलमरोचकम्।
अंगाभितापमग्निश्चविषमंचनियच्छति ॥ ३७६ ॥
पिप्पलाद्यमिदंक्वापितंत्रेक्षीरेणपच्यते।
यत्राधिकरणेनोक्तंगणेस्यात्स्नेहसंविधौ ॥ ३७७ ॥
तत्रैवकल्कनिर्यूहाविष्येतेस्नेहवेदिना।
एतद्वाक्यबलेनैवकल्कसाध्यमिदंघृतम् ॥ ३७८ ॥

इतिपिप्पलाद्यंघृतम्।

अर्थ–पीपल, चन्दन, नागरमोथा, खस,कुटकी, इन्द्रजव, भुईआवला, अनन्तमूल, अतीस, शालपर्णी, दाख, आमला, वेल, त्रायमान, और कटेरी, इन सबको समानभाग लेवै, और यह सर्व तोलमें सेरभरहौ, घृत चारसेर और दूध छै सेरलेवै (और किसीके मतसे दूध बिलकुल नहीं लेवै) फिर इन सबको मिलाकर घृत सिद्ध करै। यह सिद्धकिया हुआ घृत जीर्णज्वरको दूर करैहै और नवीन ज्वरकोभी दूर करैहै, तथा क्षय, खाँसी, शिरशूल, पार्श्वशूल, अरुचि, अंगाभिताप, और विषमाग्निको शमन करैहै। यह पिप्पल्यादिघृत किसीतंत्रमें तौ दूधमें सिद्ध होताहै, और किसीके मतसे नहीं होताहै। और जिस अधिकरणमेंतौ नहीं कहाहोवै और गणमें स्नेहविधिहो, उस जगह स्नेहके जाननेवाले वैद्योंको कल्क और निर्यूह (काढ़ा) समझना चाहिये ॥ ३७४ ॥ ३७५ ॥ ३७६ ॥ ३७७ ॥ ३७८ ॥

दशमूलीरसैःसर्पिःसक्षीरैःपंचकोलकैः।
सक्षारैर्हन्तितात्सिद्धंज्वरकासाग्निमन्दताः ॥ ३७९ ॥
वातपित्तकफव्याधीन्प्लीहानश्चापिपांडुताम्।
क्वाथंचतुर्गुणंकार्यंक्षीरंचसममेवच ॥ ३८० ॥

चतुर्यष्टिपलंक्काथ्यंशरावास्तत्समाजलात् ।
पादशेषःकषायोऽत्रक्षीरंस्नेहसमंभवेत् ॥ ३८१ ॥

इतिदशमूलषट्पलकंघृतम् ।

अर्थ-दशमूलके काढेमें-पीपल, पीपलामूल, चव्य, चीता, और सौंठ, तथा जवाखारका कल्क मिला और घी, दूध, समान भाग मिश्रितकर घृत सिद्धकरै, इसघृतको खानेसे-ज्वर, खाँसी, मन्दाग्नि, वात, कफ, पित्तरोग, प्लीहा, पाण्डुरोग, यहसब दूर होतेहैं ॥ ३७९ ॥ ३८० ॥३८१॥

चन्दनंचित्रकंसिंहीमुस्तकंचसनागरम् ।
काकोलीत्रायमाणाचधात्र्युशीरद्विसारिवे ॥ ३८२ ॥
एतान्यर्द्धपलांशानिसौम्यवारेसमाहरेत् ।
क्षीराढकंसमायुक्तंसर्पिःसार्द्धतुलांपचेत् ॥ ३८३ ॥
चातुर्थिकज्वरेशस्तमुन्मादंविषमज्वरम् ।
द्व्याहिकंश्वासकासौचसर्वापस्मारनाशनम् ॥ ३८४ ॥

इति चन्दनाद्यंघृतम् ।

अर्थ-चन्दन, चीता, कटेरी, नागरमोथा, सोंठ, काकोली, त्रायमाण, आमला, खस, अनन्तमूल और कारियावासाऊ, इनसब औषधियोंको चार चार तोले सोमवारके दिन लेवै, तीनसौछप्पनतोले दूध और दोसौतोले घृत लेवै,इनसबको मिला घृत तैय्यार करै, यहज्वर, चातुर्थिकज्वर, उन्माद, विषमज्वर, द्व्याहिकज्वर, श्वाँस, खाँसी और सर्वप्रकारके अपस्माररोगोंको दूर करैहै ॥ ३८२ ॥ ३८३ ॥ ३८४ ॥

मूर्वालाक्षाहरिद्रेद्वेमंजिष्ठासेन्द्रवारुणी ।
बृहतीसैन्धवंकुष्ठंरास्नामांसीशतावरी ॥ ३८५ ॥
आरनालाढकेनैवतैलप्रस्थंविपाचयेत् ।
तैलमंगारकन्नामसर्वज्वरविनाशनम् ॥ ३८६ ॥

अंगारकोमंगलः ।

इदंलोकेमङ्गलतैलम् ।

इति अंगारकतैलम् ।

अर्थ-मूर्वा, लाख, हलदी, दारुहलदी, मजीठ, कटेरी, सैंधानोन,

कूट, रास्ना, जटामांसी और सतावर, इनसबका कल्क एकसेर, काँजीछै सेर और तिलका तेल चारसेर लेवै फिर तेलको पका लगानेसे सर्व प्रकारके ज्वर दूर होतेहैं ॥ ३८५ ॥ ३८६ ॥

शुक्तारनालंदधिमस्तुतक्रं
फलाम्लभागेनसमंहितैलम् ।
कृष्णादिकल्कैर्मृदुवह्निसिद्ध-
मभ्यंजनंवातकफज्वराणाम् ॥ ३८७ ॥
एकाहिकद्वित्रिचतुर्थकाणां
मासार्द्धमासद्वयमासकानाम् ।
निवारणंतद्विषमज्वराणां
स्नेहादिषट्कट्वरकंमहत्स्यात् ॥ ३८८ ॥
शुक्तंकांजिकम् । दधिमथिततक्रम्मातुलुंगरसः ।

पिप्पल्यादिर्यथा ।

अर्थ–शुक्तकाँजी, दहीकापानी, मट्ठा और बिजोरे नीबुकारस, और इनमेंसे एककी बराबर तेल लेकर पिप्पल्यादि गणके कल्कमें मिलाकर मृदु अग्निसे तैल सिद्धकरै, यहतेल लगानेसे–वातकफज्वर एकाहिक ज्वर, द्व्याहिकज्वर, त्र्याहिकज्वर, चातुर्थिकज्वर, पाक्षिकज्वर, मासिकज्वर, द्विमासिकज्वर, और विषमज्वरादिको दूरकरताहै ॥ ३८७ ॥ ३८८ ॥

लाक्षारसाढकेप्रस्थंतैलस्याविपचेद्भिषक् ।
मस्त्वाढकसमायुक्तंपिष्ट्वाचात्रसमावपेत् ॥ ३८९ ॥
शतपुष्पांहरिद्रांचमूर्वांकुष्ठंहरेणुकाम् ।
कटुकांमधुकंरास्नामश्वगंधांचदारुच ॥ ३९० ॥
मुस्तकंचन्दनञ्चैवपृथगक्षसमानकैः ।
द्रव्यैरेतैस्तुतात्सिद्धमभ्यंगान्मारुतापहम् ॥ ३९१ ॥

विषमाख्यान्ज्वरान्सर्वान्नाशवेवप्रशमंनयेत् ।
कासंचप्रतिश्यायंचकण्डूंदौर्बल्यगौरवम् ॥ ३९२ ॥
त्रिकपृष्ठकटीशूलंगात्राणांस्फुटनंतथा ।
पापालक्ष्मीप्रशमनंसर्वग्रहनिवारणम् ॥ ३९३ ॥
अश्विभ्यांनिर्मितंसम्यक्तैलंलाक्षादिकंमहत् ॥ ३९४
अत्रदोलायंत्रविधानात्षड्गुणजलेनलाक्षामे-
कविंशतिवारान्परिस्राव्यलाक्षारसोग्राह्यइतिवृद्धाः ३९५

इतिमहालाक्षादितैलम् ।

अर्थ—लाखकारस २५६ दोसौछप्पन तोले, दहीकापानी २५६ दोसौ छप्पनतोले, इनमें चौंसठतोले तिलकेतेलको पकावे, फिर सौंफ, हलदी, मूर्वा, कूठ, रेणुका, कुटकी, महुआ, रास्ना, असगंध, देवदारु, नागरमोथा और चन्दन, यह सबऔषधी एकएक तोलेले महीनपीस उसमें मिलाकर तेलको सिद्ध करै, इस तेलको मलनेसे वातरोग सर्व प्रकारके विषमज्वर, खाँसी, प्रतिश्याय, खुजली, दुर्बलता, शरीरकी गुरुता, त्रिकशूल, पृष्ठशूल, कटिशूल, शरीरमेंदर्द, शरीरका फटजाना, पाप, अलक्ष्मी, और सर्वगृहदोष दूर होतेहैं । यह महालाक्षादितैल श्रीमान् अश्विनीकुमारने निर्माण कियाहै । यहाँ दोलायंत्रसे छैगुने जलमें लाखको इक्कीसवार टपकाके रस निकालकर ग्रहणाकिया जाताहै । इसप्रकार वृद्धआचार्योंने कहाहै ॥ ३८९ ॥ ३९० ॥ ३९१ ॥ ३९२ ॥ ॥ ३९३ ॥ ३९४ ॥ ३९५ ॥

कालीयकस्तुरजनीदेवदारुवचाघनम् ।
अभयाधन्वयासश्चश्रृंगीक्षुद्रमहौषधम् ॥ ३९६ ॥
त्रायन्तीपर्पटंनिम्बंग्रन्थिकंवालकंशठी ।
पुष्करंमागधंमूर्वाकुटजंमधुयष्टिका ॥ ३९७ ॥
शिग्रुत्पलंचेन्द्रयवापाठादार्वीकुचन्दनम् ।
पद्मकंचबलोशीरत्वचंसौराष्ट्रमृत्तिका ॥ ३९८ ॥

यवान्यातिविषाबिल्वंमरिचंपत्रकंस्थिरा ।
आमलकंशिवाक्षश्वसाचित्रकपटोलकम् ॥ ३९९ ॥
कलसीचैवसर्वाणिसमभागानिकारयेत् ।
सर्वद्रव्यस्यचार्द्धेनकैरातंसंप्रकल्पयेत् ॥ ४०० ॥
एतत्सुदर्शनंनामज्वरान्हन्तिनशंसयः ।
प्राकृतंवैकृतंचैवसौम्यंतीक्ष्णमथापिवा ॥ ४०१ ॥
अन्तर्गतंबहिष्कंचनिरामंसाममेवच ।
ज्वरमष्टविधंहन्यात्साध्यासाध्यमथापिवा ॥ ४०२ ॥
नानादोषोद्भवश्चैववारिदोषोद्भवन्तथा ।
विरुद्धभेषजभवंज्वरमाशुव्यपोहति ॥ ४०३ ॥

इतिसुदर्शनचूर्णम् ।

अर्थ-पीलाचन्दन, हलदी, देवदारु, वच, नागरमोथा, हरड, जवासा, काकड़ाशिंगी, कटेरी, सोंठ, त्रायमाण, पित्तपापडा, नीम, पीपलामूल, सुगन्धवाला, नरकचूर, पोहकरमूल, पीपल, चूरनहार, कूडा, मुलैठी, सैंजिना, कमल, इन्द्रयव, पाढ़, दारुहलदी, लालचन्दन, पद्माख, खिरैटी, खस, दालचीनी, सोरठकीमिट्टी, अजवायन, अतीस, वेल, मरिच, तेजपात, शालपर्णी, आमला, भुईआमला, बहेडा, चीता, परबल, और पृश्निपर्णी, इन सब औषधियोंको समान भाग लेवै, और इन सबसे आधाभाग चिरायता मिला चूरन करै यह सुदर्शननामवाला चूरन-निःसन्देह सर्वप्रकारके ज्वरोंको दूर करताहै । तथा प्राकृतज्वर, वैकृतज्वर, सौम्यज्वर, तीक्ष्णज्वर, अंतर्गतज्वर, बहिर्गतज्वर, निरामज्वर, आमज्वर, आठप्रकारका ज्वर, साध्य ज्वर, असाध्यज्वर, नानाप्रकारके दोषोंसें उत्पन्नहुआ ज्वर, पानीके दोषसे उत्पन्नहुआ ज्वर, और विरुद्धऔषधियोंसे उत्पन्नहुआ ज्वर दूर होताहै ॥ ३९६ ॥ ३९७ ॥ ३९८ ॥ ३९९ ॥ ४०० ॥ ४०१ ॥ ४०२ ॥ ४०३ ॥

रक्तचंदनह्रीबेरपाठोशीरकणाशिवा ।
नागरोत्पलधात्रीभिस्त्रिमदेनसमन्वितः ॥ ४०४ ॥

लोहानिहन्तिविविधान्समस्तान्विषमज्वरान् ॥४०५॥
मुथाचिताविडंगइतित्रिमदम् ।
सर्वचूर्णसमंलोहचूर्णंग्राह्यम् ।

इतिचंदनादिलौहम् ।

अर्थ-लालचंदन, सुगंधवाला, पाढ़, खस, पीपल, हरड़, सोंठ, कमल, आमला, नागरमोथा, चीता और वायविडंग, इन सब औषधियोंको समानभाग लेवै और सबकी बराबर लोहा मिलावै, यह चन्दनादिलौह-सर्वप्रकारके विषमज्वरोंको दूर करताहै ॥ ४०४ ॥ ४०५ ॥

इतिज्वराधिकारः ।

अथज्वरातिसारचिकित्सामाह ।

ग्रन्थान्तरे-

पैत्तेज्वरेपित्तभवोऽतिसार-
स्तथातिसारेयदिवाज्वरःस्यात् ।
दोषस्यदूष्यस्यसमानभावो
ज्वरातिसारःकथितोभिषग्भिः ॥ ४०६ ॥
पृथक्शुभानिदानेनज्वरातीसारनिर्णयः ।
ज्वरातिसारिणामादौकुर्याल्लंघनपाचने ॥ ४०७ ॥
प्रायस्तस्यामसम्बन्धंविनानभवतोयतः ।
ज्वरातिसारयोरुक्तंभेषजंयत्पृथक्पृथक् ॥ ४०८ ॥
नतस्मिन्द्वितयंकार्यमन्याऽन्यंवर्द्धयेद्यतः ।
प्रायोज्वरहरंभेदिस्तम्भनञ्चातिसारनुत् ॥ ४०९ ॥
अतोऽन्योन्यंविरुद्धत्वाद्वर्द्धनंतत्परस्परम् ।
व्यवसायंज्वरोदिष्टमुपेक्ष्यअनिलोबली ॥ ४१० ॥
पक्कोपिहिप्रकुर्वीतदोषःकोष्ठकृतेयतः ।
अतिसंवृतमानंवापाचनंसंग्रहंनयेत् ॥ ४११ ॥

अर्थ-अबग्रन्थान्तरोंके मतसे ज्वरातिसारकी चिकित्सा कहतेहैं। पित्तज्वरमें पित्तसे उत्पन्नहुआ अतिसार, अथवा आतिसारमें ज्वर हो जाय, तिसको दोष और दूष्यके समानभाव होनेसे भिषक्राज ज्वरातीसार कहते हैं। ज्वर और अतिसार इन दोनोंका पृथक् पृथक् निदानद्वारा ज्वरातीसाररोगका निर्णय करना। ज्वरातीसाररोगमें प्रथम लंघन और पाचन कराना चाहिये, कारण यहहै कि-विना आमके ज्वरातीसार उत्पन्न नहीं होताहै। ज्वर और अतीसारमें कहीहुई औषधि कभी भी ज्वरातिसारमें प्रयोग नहीं करनी चाहिये। कारण यहहै कि-ज्वरनाशक औषधी प्रायः भेदक, और अतीसारनाशक औषधी मलस्तम्भक होतीहै। इसलिये दोनों परस्परमें रोगको बढ़ानेवाली है॥ ४०६॥ ४०७॥ ४०८॥ ४०९॥ ४१०॥ ४११॥

नागरातिविषामुस्तभूनिम्बामृतवासकैः।
सर्वज्वरहरःक्काथःसर्वातीसारनाशनः॥ ४१२॥

इतिनागरादिः।

अर्थ-सोंठ, अतीस, नागरमोथा, चिरायता, गिलोय, और अडूसा इनका क्वाथ सर्वप्रकारके ज्वर और सर्वप्रकारके अतीसारोंको दूर करता है॥ ४१२॥

पाठेन्द्रयवभूनिम्बमुस्तपर्पटकामृताः।
जयन्त्यामामतीसारंसज्वरंवाथविज्वरम्॥ ४१३॥

प्रक्षेपार्थेशुण्ठीचूर्णं।

इतिपाठादिः।

अर्थ-पाढ़, इन्द्रजौ, चिरायता, नागरमोथा, दवनपापरा, गिलोय इनका काढ़ा बना उसमें सोंठका चूर्ण बुरककर पीनेसे ज्वरयुक्त और विना ज्वरका आमातीसार दूर होताहै॥ ४१३॥

ह्रीबेरातिविषामुस्ताबिल्वधन्याकमागधैः।
पिबेत्पिच्छाविबन्धघ्नंशूलदोषामपाचनम्॥ ४१४॥
सरक्तंहन्त्यतीसारंसज्वरंवाथविज्वरम्॥ ४१५॥

इतिह्रीबेरादिः।

अर्थ-सुगंधवाला, अतीस, नागरमोथा, वेलगिरी, धनिया और पीपल, इनकाक्काथ-विबन्ध, शूलदोष और झाँगोयुक्तआमको पाचन करै है। तथा ज्वरसहित अथवा ज्वररहित रक्तातिसारको हरैहै ॥ ४१४ ॥ ४१५ ॥

ह्रीबेरातिविषामुस्तबिल्वधन्याकवत्सकैः ।
समंगाधातकीलोध्रंविश्वंदीपनपाचनम् ॥ ४१६ ॥
हन्त्यरोचकपिच्छामंविबन्धंसातिवेदनम् ।
सशोणितमतीसारंसज्वरंवाथविज्वरम् ॥ ४१७ ॥
सरक्तेतिदृष्टफलः।
अत्रप्रक्षेपशिमलिआठा।

इति बृहद्ह्रीबेरादिः ।

अर्थ-सुगंधवाला, अतीस, नागरमोथा, वेलगिरी, धनिया, कुड़ा, मजीठ, धायकेफूल, लोध और सोंठ इनका काढा-दीपन, और पाचनहै। तथा अरुचि, झागोयुक्तआम, वेदनासहितविबंध, रक्तातिसार, ज्वरसहित अतीसार, अथवा विनाज्वरके अतीसार दूर करैहै ॥ ४१६ ॥ ४१७ ॥ यह रक्तातिसार मेरा कईवार अजमाया हुआ है ॥

उशीरंवालकंमुस्तंधन्याकंविश्वभेषजम् ।
समंगाधातकीलोध्रंबिल्वंदीपनपाचनम् ॥ ४१८ ॥
हन्त्यरोचकपिच्छामंविबन्धंसातिवेदनम् ।
सशोणितमतीसारंसज्वरंवाथविज्वरम् ॥ ४१९ ॥
धन्याकस्थानेभूनिम्बइतिपाठान्तरे ।
ज्वराधिकेयोज्यमिति ।

इतिउशीरादिः ।

अर्थ-खस, सुगंधवाला, नागरमोथा, धनिया, सोंठ, मजीठ, धायके फूल, लोध और वेलगिरी इनका काढा-दीपन और पाचन है । तथा अरुचि, झागोयुक्तआम, वेदनासहित विबन्ध, रक्तातीसार, ज्वरातीसार और ज्वररहित अतिसारकोभी दूर करै है ॥ ४१८ ॥ ४१९॥और कोईकोई वैद्य धनियेके स्थानमें चिरायता डालतेहैं ॥

जम्ब्वाम्रपल्लवोशीरवटशुंगारविच्छदः ।
रसःक्वाथोऽथवाचूर्णमधुनासहयोजितम् ॥ ४२० ॥
छर्दिज्वरातिसारश्चतृष्णांमूर्च्छांश्चदुर्जयाम् ।
नियच्छत्यचिराद्रक्तस्रुतिश्चानेकहेतुजाम् ॥ ४२१ ॥

इतिजम्ब्वादिः ।

इति ज्वरातीसारविकारः ।

अर्थ—जामन और आमके पत्ते, खस, बडके अंकुर, इनका रस क्वाथ वा चूर्णको मधुके साथ सेवनकरनेसे—वमन, ज्वरातीसार, तृषा-दुर्जयमूर्च्छा और अनेककारणोंसे रुधिरका गिरना दूर होताहै ॥ ॥ ४२० ॥ ४२१ ॥

इति ज्वरातीसाराधिकार समाप्त ।

अथातीसारचिकित्सामाह ।

शकृद्दुर्गन्धिसाटोपविष्टम्भार्त्तिप्रसेकिनः ।
विपरीतंनिरामन्तुकफात्पक्वन्तुमज्जति ॥ १ ॥
आमेविलंघनंशस्तमादौपाचनमेववा ।
कार्यश्चानशनस्यास्तेप्रद्रवंलघुभोजनम् ॥ २ ॥
योतिद्रवंप्रभूतञ्चपुरीषमतिसार्यते ।
तस्यादौवमनंकुर्यात्पश्चाल्लंघनमाचरेत् ॥ ३ ॥
नामेसंग्रहणंदद्यादतीसारेकदाचन ।
अकालेसंगृहीतोऽपिविकारान्कुरुतेबहून् ॥ ४ ॥
शोथपाण्ड्वामयप्लीहकुष्ठगुल्मोदरज्वरान् ।
दण्डकालसकाध्मानग्रहणार्शोगदांस्तथा ॥ ५ ॥
क्षीणधातुबलार्त्तस्यबहुदोषातिविस्रुतः ।
आमोपिस्तम्भनीयःस्यात्पाचनान्मरणंभवेत् ॥ ६ ॥
स्थविराणांचबालानांबहुवेगोऽतिविस्रुतः ।

आमोपिस्तम्भनीयःस्यान्नतुपाचनमाचरेत् ॥ ७ ॥
वर्जयेद्द्वैदलंशूलीकुष्ठीमांसंक्षयीस्त्रियम् ।
द्रवमन्नमतीसारीसर्वंश्चतरुणज्वरी ॥ ८ ॥
स्तोकंस्तोकंविबंधंवासशूलंयोऽतिसार्यते ।
अभयापिप्पलीकल्कैःसुखोष्णैस्तंविरेचयेत् ॥ ९ ॥
दीप्ताग्निर्बहुदोषोऽपिविबन्धमतिसार्यते ।
विडंगत्रिफलाकृष्णाकषायैस्तंविपाचयेत् ॥ १० ॥

अर्थ-दुर्गन्धयुक्तमल उतरे, पेटमें गुड़गुड़ शब्द होय, विष्टम्भ , वेदना और प्रसेकसंयुक्त हो उसको आमातीसार कहते हैं । इससे विपरीत होयतौ पक्वातिसार कहते हैं। कफके संयोगसे पक्वमल जलमें डूबजाताहै। आमातिसारमें प्रथम लंघन अथवा आमपाचक औषध देनी चाहिये । लंघनके अंतमें पतला और लघुभोजन देना योग्य है । और जिस अतिसारवाले रोगीके अत्यंतपतला और अधिकमल उतरे,उसको प्रथम वमन और पश्चात् लंघन करानेचाहिये । आमातीसारमें कभी-भी मलरोधक औषधी नहीं देनी चाहिये, कारण यहहै कि-अकालमें संग्राहक औषधी देनेसे-सूजन, पांडुरोग, प्लीहा, कोढ़, गुल्म, उदररोग, ज्वर, दंडक, अलसक, आध्मान, संग्रहणी और अर्शरोग उत्पन्न होताहै। धातुक्षीण, बलहीन,बहुतदोषोंसे पीड़ित, वृद्ध,बालक और अत्यन्त अतिसारके वेगोंसे युक्त रोगीके आमातीसार उत्पन्न होयतौ मलरोधक औषधी देनी चाहिये कभीभी इनको पाचक औषधी नहीं देनी चाहिये। कारण यह हैकि-आमके पचनेसे दुर्बलहोकर मृत्युको प्राप्त होजाते है । शूलरोगी बैदल अन्न, कुष्ठरोगी मांस, क्षयरोगी स्त्रीप्रसंग, अतिसाररोगी पतला भोजन और तरुणज्वरवाला रोगी इनसभी उपरोक्त अपथ्योंको त्यागदेवै. कुछ कुछ विबन्ध और शूलसंयुक्त मल उतरे तौ हरड और पीपलका कल्क बनाकर उष्णजलके साथ भक्षण करै । इससे दस्त होजायँगे । दीप्ताग्नि और बहुतदोषयुक्त अतीसारवाले रोगीके विबन्धसहित मलउतरे तौ वायविडंग, त्रिफला और पीपल, इनका क्वाथ पिलाना चाहिये ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥

धन्याकंनागरंमुस्तंवालकंबिल्वमेवच ।
आमशूलविबन्धघ्नंपाचनंवह्निदीपनम् ॥ ११ ॥

इतिधान्यपंचकम् ।

अर्थ-धनिया, सोंठ, नागरमोथा, सुगन्धवाला, और बेलगिरी, इनका क्वाथ आम, शूल और विबंधनाशकहै, तथा पाचक और अग्निप्रदीपकहै॥ ११

नागरातिविषामुस्तैरथवाधान्यनागरैः ।
तृष्णाशूलातिसारघ्नंपाचनंदीपनंलघु ॥ १२ ॥
हरीतकीसातिविषंहिंगुसौवर्चलान्वितं ।
सैन्धवञ्चसुचूर्ण्येदंपाययेदुष्णवारिणा ॥ १३ ॥
आमातिसारयोगेनयद्यनेननशाम्यति ।
नतंयोगशतेनापिचिकित्स्योहिचिकित्सकैः ॥ १४ ॥
पाठावत्सकबीजानिहरीतक्योमहौषधम् ।
एतदामसमुत्थानमतीसारंसवेदनम् ॥ १५ ॥
कफात्मजंसपित्तञ्चवर्चोबध्नातिहिध्रुवम् ॥ १६ ॥

क्वाथेनचूर्णेनवा ।

कुलत्थस्वरसोदेयोऽर्जुनस्यसमाक्षिकः ।
जयत्याममतीसारंक्वाथोवाकुटजत्वचः ॥ १७ ॥

इतिआमातीसारः ।

अर्थ-सोंठ, अतीस, और नागरमोथा अथवा धनियाँ और सोंठ, इनका क्वाथ तृषा, शूल और अतीसारनाशक है तथा पाचक, दीपन और हलका है ॥ १२ ॥ हरड़, अतीस, हींग, कालानोन और सैंधानोन इनका चूर्णकर गरमजलके साथ पीनेसे आमातीसार निःसन्देह दूर होताहै, और जो इसयोगसे आमातीसार दूर न होवैतौ सैंकडो योगोंसे-भी दूर न होगा ॥ १३ ॥ १४ ॥ पाढ़, इन्द्रजौ, हरड़ और सोंठ इनका क्वाथ, अथवा चूर्णकरनेसे वेदनायुक्त आमातीसार दूर होताहै तथा कफ और पित्तसे उत्पन्नहुआ पतला मल सक्त होताहै ॥ १५ ॥

॥ १६ ॥ कुलथी और अर्जुनकी छालका रस मधुके साथ अथवा कुड़ेकी छालका क्वाथ पीनेसे आमातीसार नष्ट होताहै ॥ १७ ॥

इतिआमातीसारचिकित्सासमाप्ता।

अथरक्तातीसारे।

ग्राह्यंवटप्ररोहाग्रंतण्डुलोदकपेषितम्।
पिबेद्वातक्रसंयुक्तंकर्षैकंरक्तदाहनुत् ॥ १८ ॥
तण्डुलोदकवासोत्थद्रवैरक्तोत्पलंपिबेत्।
मेघनादस्यमूलंवामधुनासितयायुतम् ॥ १९ ॥
तण्डुलोदकपानेनसर्वरक्तातिसारजित् ॥ २० ॥

अर्थ–वड़के अंकुरोंको चावलोंके जलमें पीसकर पीनेसे अथवा वड़के अंकुरोंका एक तोलाभर रस पीनेसे–रक्तस्राव और दाह दूर होती है ॥ १८ ॥ लालकमल और चौलाईकी जड़को पीसकर तण्डुलोदक और अडूसेके रसकेसाथ, तथा मधु और चीनीके साथ पीनेसे–अथवा केवलचावलोंके जलको ही पीनेसे सर्वप्रकारके रक्तातीसार नाश होतेहैं ॥ १९ ॥ २० ॥

यवानींद्रयवापाठाबिल्वशुंठीरसांजनैः।
चूर्णंचापिहरेद्गुल्मंसततंचातिशोणितम् ॥ २१ ॥

इतियवान्यादिचूर्णम्।

अर्थ–अजवायन, इन्द्रजौ, पाढ़, बेलगिरी, सोंठ और रसौत, इनका चूर्ण भक्षणकरनेसे गुल्म और रक्तातीसार नष्ट होताहै ॥ २१ ॥

पाठामोचरसंमुस्तंधातकीबिल्वनागरम्।
गुडतक्रयुतंपानेअसाध्यमपिसाधयेत् ॥ २२ ॥
काकमाचीरसंक्षौद्रंशुक्ताछागीपयःपिबेत्।
रक्तातीसारशोथांश्चअतिरक्तक्षयंजयेत् ॥ २३ ॥
रक्तसूत्रैःकटिबद्धासर्पाक्षिकस्यमूलकम्।
स्नुह्यावासहदेवस्यमूलैःस्यादतिसारजित् ॥ २४ ॥
बिल्वचूतास्थिनिर्यूहःपीतःसक्षौद्रशर्करः।

निहन्याच्छर्द्यतीसारंवैश्वानरइवाहुतिम् ॥ २५ ॥
कुलत्थस्वरसःपीतोहिज्जलस्यसमाक्षिकः।
जयत्याममतीसारंक्काथोवाकुटजत्वचः ॥ २६ ॥
कल्कःकृष्णतिलानाञ्चशर्करापंचभागिकः।
आज्येनपयसापीतःसद्योरक्तंनियच्छति ॥ २७ ॥

अर्थ-पाढ़, मोचरस, नागरमोथा, धायकेफूल वेलगिरी और सोंठ इनसबको गुड़ और मट्ठेकेसाथ पीनेसे असाध्यरक्तातीसारभी दूर होजाताहै ॥ २२ ॥ मकोयके रसको सहतमें मिलाकर सफेदबकरीके दूधके साथ पीनेसे-रक्तातीसार, सूजन और अतिरक्तक्षयका क्षय होता है ॥ २३ ॥ सर्पाक्षीकी जड़को लालसूतसे कटिपै बाँधनेसे, अथवा सेंहुडकी जड़को लालसूतसे कटिपै बाँधनेसे वा सहदेईकी जड़को लाल-सूतसे कटिपै बांधनेसे अतिसार दूर होताहै ॥ २४ ॥ वेलगिरी और आमकी गुठलीका काथ मधु और चीनीके साथ सेवनकरनेसे वमन और अतीसार दूरहोताहै ॥ २५ ॥ कुलथीवा हिज्जलका रस मधुके साथ अथवा कुडेका काथ पीनेसे अतीसार दूर होतातै ॥२६॥ एकभाग कालेतिलोंका कल्क और पाँचभाग चीनी इनदोनोंको मिलाकर घृत और दूधकेसाथ सेवनकरनेसे तत्काल रक्तातीसार दूर होताहै ॥ २७ ॥

धातक्यातिविषामुस्तसमंगाबिल्ववत्सकम्।
अजाक्षीरोदकेसिद्धंशर्करामाक्षिकंपिबेत् ॥ २८ ॥
रक्तातिसारशूलघ्नंदाहशोथज्वरोरुचा ॥ २९ ॥
इतिधातक्यादिः।

अर्थ-धायकेफूल, अतीस, नागरमोथा, मजीठ, वेलगिरी और कुडा इनसबको बकरीके दूधमें औटाकर शर्करा और सहत मिलाकर पीनेसे रक्तातीसार, शूल, दाह,सूजन, ज्वर और अरुचि दूर होतीहै ॥२८॥२९॥

जम्ब्वाम्रामलकीनान्तुपल्लवोत्थरसंपिबेत्।
अजाक्षीरसमंक्षौद्रंयुक्त्यारक्तातिसारजित् ॥ ३० ॥

शल्लकीबदरीजम्बुपियालार्जुनकत्वचः ।
पीतःक्षीरेणमध्वाज्येपृथक्शोणितवारणः ॥ ३१ ॥
पीत्वासशर्करंक्षीरंचन्दनंतण्डुलाम्बुना ।
दाहंतृष्णांप्रमोहञ्चसद्योरक्तंनियच्छति ॥ ३२ ॥
रसांजनंसातिविषंकुटजस्यफलत्वचम् ।
धातकीशृंगवेरंचपिबेत्तण्डुलवारिणा ॥ ३३ ॥
सक्षौद्रेणप्रनुदतिरक्तातीसारमुल्बणम् ।
मन्दञ्चदीपयेच्चाग्निंशूलंचाशुनिवर्त्तयेत् ॥ ३४ ॥
गुडेनखादयेद्बिल्वंरक्तातीसारनाशनम् ।
आमशूलविबन्धघ्नंकुक्षिरोगहरंपरम् ॥ ३५ ॥

स्विन्नंबालबिल्वम् ।

सुस्विन्नंकंचटंबालबिल्वंसनवनीतकम् ।
लिह्याद्रक्तातिसारघ्नंसशूलंग्रहणीप्रणुत् ॥ ३६ ॥

अर्थ–जामन,आम, और आमला इनके पत्तोंका रस बराबरके बकरीके दूधमें और सहतके साथ पीनेसे रक्तातीसार नष्टहोताहै ॥ ३० ॥ शालई, बेरी, जामर, चिरोंजीका वृक्ष और अर्जुन इनमेंसे एक किसीकी छालको बकरीके दूध,मधु और घृतकेसाथ सेवन करनेसे–रक्तातीसार दूर होताहै ॥ ३१ ॥ चन्दन, बूरा, दूध, और तण्डुलोदक मिलाकर पीनेसे–दाह, तृषा, मोह और तत्काल रक्तातीसार दूर होताहै ॥ ३२ ॥ रसोत, अतीस, कुड़ेकी छाल, इन्द्रयव, धायके फूल और सोंठ इनको चावलोंके जलके साथ पीस मधु मिलाकर सेवनकरनेसे रक्तातीसार, अग्निमान्द्य और शूलको हरैहै ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ कच्चे बेलको पानीमें उसेकर गुड़के साथ भक्षण करनेसे–रक्तातीसार, आम, शूल,विबन्ध और कोखके दर्दको आराम होताहै ॥ ३५ ॥ उसीजा हुआ कंचक शाक और बेल इनको नवनीतमें मिलाकर खानेसे–रक्तातीसार, शूल और संग्रहणी दूर होजातीहै ॥ ३६ ॥

गुदपाकन्तुपित्तेनयस्यस्याददहिताशिनः ।

तस्यापित्तहराःसर्वाअभीष्टाश्चानुवासनाः ॥ ३७ ॥
सेकशौचादिकंचात्र
अत्रान्तरेरक्तस्रावादिचिकित्सितम् ॥ ३८ ॥
गुदेऽतिरक्तंस्रवतिघृतैर्हिप्रतिसारयेत् ।
धातकीलोध्रमांसानांचूर्णैर्वापंचवल्कलैः ॥ ३९ ॥
घृताक्तैर्गुदकट्यादौशीतैःस्रावेऽतिसेचयेत् ।

पंचवल्कलंयथा ।

न्यग्रोधोदुम्बरप्लक्षसपिप्पलकपीतनाः ॥ ४० ॥
क्षीरवृक्षाश्चपंचानांवल्कलंपंचवल्कलम् ॥
क्वचित्कपीतनस्थानेशिरीषोवेतसोऽपिच ॥ ४१ ॥

इति गुदभ्रंशचिकित्सा ।

अर्थ–जिसमनुष्यके अहित सेवनसे पित्तकरकै गुदा पकजावै, उसके लिये पित्तको हरनेवाली और अनुवासनक्रिया तथा पटोलका रस, मधु और जलसे गुदाको सेकना और शौच हितकारक है। जो गुदासे अत्यन्त रुधिर गिरैतौ घृतका लेप करना चाहिये । तथा धायके फूल, लोध और उड़दोंका चूर्ण अथवा पंचकल्कलोंके चूर्णको घृतमें मिला गुदा आदिको सींचनेसे रक्तस्राव बन्द होजाताहै ॥ (पंचवल्कल) वड, गूलर, पाखर, पीपल और पारिसपीपल, इनपांच क्षीरवृक्षोंके वल्कलोंको पंचवल्कल कहतेहैं, और कितनेक वैद्य पारिस पीपलके स्थानमें सिरस और बैंतको मिलातेहैं ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ॥ ४० ॥ ४१ ॥

अथसर्वातीसारमाह ।

जातीफलंत्रिदशपुष्पसमन्वितेन
जीरंचटंगणयुतंचरकैःप्रयुक्तम् ।
चूर्णानिमाक्षिकसितासहितानिलीढ्वा
सामातिसारमखिलंगुरुहन्तिशूलम् ॥ ४२ ॥

इतिलवंगचतुःसमम् ।

अर्थ-जायफल, लौंग, जीरा और सुहागेकी खीले, इन सबका चूर्णकर सहत और चीनीके साथ खानेसे सर्वप्रकारके अतीसार और शूल नष्ट होतेहैं ॥ ४२ ॥

कंचटजम्बुदाडिमशृंगाटकपत्रबिल्वह्रीबेरम्।
जलधरनागरसहितंगंगामपिवेगिनींरुंध्यात् ॥ ४३ ॥

इतिकंचटादिः।

अर्थ-जलपीपल, जामन, अनार, सिंघाडेके पत्ते, बेल, सुगंधवाला, नागरमोथा और सोंठ इनका क्वाथ गंगाकेसमान वेगवाले अतिसारको रोक देता है ॥ ४३ ॥

दशमूलीबलाबिल्वधान्यकोत्पलविश्वजा।
वातातीसारणेदेयातक्रेणान्यतमेनवा ॥ ४४ ॥

क्वाथश्चूर्णोवा।

क्वाथपक्केतक्रादावर्द्धजलंदेयम्।
अन्यतमेनकांजिकजलादिना ॥

इतिवाते।

अर्थ-दशमूल, खिरैटी, बेलगिरी, धायके फूल, कमल और सोंठ, इनका क्वाथ अथवा चूर्ण, तक्र वा कौंजी इत्यादिकेसाथ सेवन करनेसे वाताद्यतीसार नष्ट होता है ॥ ४४ ॥

किराततिक्तकंमुस्तंवत्सकंसरसांजनम्।
पिबेत्पित्तातिसारघ्नंसक्षौद्रंवेदनापहम्।
मधुकंकट्फलंलोध्रंदाडिमस्यफलत्वचौ ॥ ४५ ॥
रक्तपित्तातिसारेषुयोजयेत्तण्डुलाम्बुना।

चूर्णेन।

अजाक्षीरप्रयोगेणबलंवर्णस्तुवर्द्धते ॥ ४६ ॥

इतिपित्ते।

अर्थ-चिरायता, नागरमोथा, कुडेकी छाल और रसौत इनका

क्काथ मधुके साथ पीनेसे पित्तातीसार और वेदनाका नाश होताहै ॥ मुलैठी, कायफल,लोध और अनारके फलकी छाल, इनका चूर्ण चावलों-के जलके साथ, रक्तातीसार और पित्तातीसारमें देना चाहिये । और यहही चूर्ण बकरीके दूधके साथ सेवनकरनेसे बल और वर्णको बढावै है ॥ ४५ ॥ ४६ ॥

श्लेष्मातिसारेप्रथमंहितंलंघनपाचनम् ।
योज्यंचामातिसारघ्नंयथोक्तंपूर्वमौषधम् ॥ ४७ ॥
सविडंगःसमरिचःसकपित्थःसनागरः ।
चांगेरीतक्रकोलाम्लःखडःश्लेष्मातिसारनुत् ॥ ४८ ॥

इतिकफे ।

अर्थ-कफातीसारमें प्रथम लंघन और पाचन कराना चाहिये । पश्चात् पूर्वोक्त आमातीसारको दूरकरनेवाली औषधीप्रयोग करनी योग्य है ॥ ४७ ॥ वायविडंग, कालीमिरच, कैथ, सोंठ, चांगेरी, तक्र और बेरके द्वारा बनायाहुआ खड़युष कफातीसार विनाशक है४८

कुटजातिविषामुस्तहरिद्रापर्णिनीद्वयम् ।
सक्षौद्रंशर्करंशस्तंपित्तश्लेष्मातिसारिणाम् ॥ ४९ ॥
कुटजत्वक्फलंमुस्तंक्काथयित्वाजलंपिबेत् ।
अतीसारंजयेदाशुशर्करामधुयोजितम् ॥ ५० ॥
कलिंगकवचामुस्तंदारुसातिविषंघनम् ।
कल्कंतण्डुलतोयेनपिबेत्पित्तानिलामयी ॥ ५१ ॥

इतिवातश्लेष्मे ।

अर्थ-कुडेकी छाल, अतीस, नागरमोथा, हलदी, शरवन, और पिठ-वन, इनका काढ़ा मधु और खाँडकेसाथ पीनेसे पित्तकफातीसार दूर होताहै ॥ ४९ ॥ कुडेकी छाल इन्द्रजौ और नागरमोथा, इनका काढ़ा शर्करा और मधुके साथ मिलाकर पीनेसे- शीघ्रही अतीसारको दूर करैहै ॥ ५० ॥ इन्द्रजव, वच, नागरमोथा, देवदारु, अतीस और मोथा, इनका कल्क बनाकर चावलोंके पानीके साथ पीनेसे-वातपित्ता-तीसार दूर होताहै ॥ ५१ ॥

सवत्सकः सातिविषःसबिल्वःसोदीच्यमुस्तश्चकृतःकषायः ।
सामेसशूलेसहशोणितेच चिरप्रवृद्धेपिहितोऽतिसारे ॥ ५२ ॥

इति वत्सकादिः ।

अर्थ-कुड़ेकी छाल, अतीस, बेलगिरी, सुगंधवाला और नागरमोथा, इनका क्वाथ-आमातीसार, शूलातीसार, रक्तातीसार, और जीर्णरक्तातीसारको, दूर करैहै ॥ ५२ ॥

रसभस्मस्यभागैकंचत्वारःशुद्धगंधकम् ।
पिष्ट्वावराटिकापूर्याटंगणेननिरुध्यच ॥ ५३ ॥
भाण्डंरुद्ध्वापुटेपच्यात्स्वांगशीतंविचूर्णयेत् ।
लोकनाथोरसोनाम्नाक्षौद्रैर्गुंजाचतुष्टयम् ॥ ५४ ॥
नागरातिविषामुस्तदेवदारुवचान्वितम् ।
कषायमनुपानंस्याद्वातातीसारनाशनम् ॥ ५५ ॥

इतिलोकनाथरसः ।

अर्थ-शुद्धपारा एकभाग, शुद्धगन्धक चारभाग, इनदोनोंकी कज्जली करै, उसकज्जलीको पीलीकौड़ीमें भरे और कौड़ीके मुखको सुहागेसे बन्दकरै, फिर भाण्डमें रख मुखको बन्दकर अग्निका पुट देवै, शीतल होनेपर निकाल लेवै, पश्चात् बारीक चूर्ण करै तौ लोकनाथरस बनजाताहै. इस लोकनाथरसको चाररत्ती प्रमाण मधुके साथ चाटै, पश्चात् सोंठ, अतीस, नागरमोथा, देवदारु और बचका क्वाथ पीवै, इससे सर्वप्रकारके वातातीसार नष्ट होतेहैं ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥

शुद्धंसूतंसमंगंधंमरिचंटंगणंतथा ।
स्वर्णबीजंसमंसर्वंभार्गीद्रावैर्दिनार्द्धकम् ॥ ५६ ॥
सूततुल्यंमृतंचाभ्रंरसःकनकसुन्दरः ।
योगंगुंजाद्वयंहंतिपित्तातीसारमद्भुतम् ॥
दध्यन्नंदापयेत्पथ्यमाजंवाथगवांदधि ॥ ५७ ॥

इतिकनकसुंदररसः ।

अर्थ-शुद्धपारा, शुद्धगंधक, मिरच, सुहागा, और धतूरेके बीज,

यह सब समानभाग लेवै, फिर सबको दोप्रहर भारंगीके रसमें घोटै पीछे पारेकी बराबर अभ्रककी भस्म मिलावै तौ कनकसुन्दररस सिद्धहो। दोगुंजाप्रमाण खानेसे-पित्तातीसारको निःसन्देह दूर करै इसके ऊपर गायके दहीके साथ भात तथा बकरीके दहीके साथ भात पथ्य है॥ ५६ ॥ ५७ ॥

कर्षंगंधकमर्द्धपारदमुभेकुर्याच्छुभांकज्जलीं
त्र्याक्षंत्र्यूषणकंचपंचलवणात्साद्धंञ्चकर्षंपृथक्।
सार्द्धाक्षंद्विपलंविचूर्ण्यसकलंशक्राशनान्मिश्रयेत्
खादेच्छाणमतोनुकांजिकपलंमंदाग्निसंदीपनम्॥ ५८॥
स्वेच्छाभोजनतोरसायनमिदंघूर्णादिकोपज्वरे
पेयंचात्रतुकांजिकंवदतिसानारीमहाभैरवी।
हन्याद्वातंचपित्तंकफकृतकमतीसारदोषंग्रहण्याः
श्वासंकासञ्चशूलंज्वरमुदररुजौराजयक्ष्माणमुग्रम्॥५९
प्लीहानंचामवातंषडपिचगुदजांकुष्ठरोगंसमग्रम्
वातास्रंकंठरोगानिदमिहकथितंदीपनंजाठराग्नेः।
दीर्घायुःकाममूर्तिर्जितवलिपलितोधीरगंभीरनादो
मेधावीसत्ववीर्यस्मृतिबलसहितोमानवोऽस्यप्रसादात्६०

इतिरसायनामृतम्।

अर्थ-दोतोले गन्धक, एकतोला पारा, इनदोनोंकी सुन्दर, कज्जली करै, पश्चात् सोंठ दो तोले, मिरच दो तोले, पीपल दोतोले सैंधानोंन तीनतोले, कालानोन तीनतोले, विड़नोन तीनतोले, खारीनोन तीनतोले और सांभरनोन तीनतोले एवं भाँग १८ तोले लेकर सबका चूर्ण करले; इसचूर्णको पूर्वोक्त कज्जलीमें मिलाकर चारमासे प्रमाण चार तोले काँजीके साथ खानेसे मन्दाग्नि दीपन होजायहै। इसमें मनोवांछित भोजन करै। यह रसायन घूर्णादिकोपज्वरमें हितकारीहै। तथा वातातीसार, पित्तातीसार, कफातीसार, संग्रहणीरोग, श्वाँस, खासी, शूल, ज्वर, उदररोग, घोर राजयक्ष्मारोग, प्लीहा, आमवात, छै

प्रकारका अर्शरोग, सर्वप्रकारके कुष्ठरोग, वातरक्त, कंठरोग और मंदाग्निको नष्ट करैहै ॥ और इसके प्रसाद अर्थात् सेवन करनेसे दीर्घायु, कामस्वरूप, वलीपलितरहित, धीर, गंभीरशब्दवाला शुद्धबुद्धिमान्, सत्वगुण, वीर्य्य, स्मरणशक्ति और बलसंयुक्त मनुष्य होजाताहै ॥५८॥५९॥ ६० ॥

शोथंशूलंज्वरंतृष्णांश्वासंकासमरोचकम् ।
छर्दिंमूर्च्छांचहिक्कांचतृष्णातीसारिणंत्यजेत् ॥ ६१ ॥
सुप्तेपार्श्वद्वयेयस्यअतिरुक्शब्दउत्कटः ।
तृषार्त्तश्चबलैःक्षीणोऽप्यसाध्योग्रहणीगदी ॥ ६२ ॥
द्वित्रिपंचदशाहाद्वापक्षान्मासाच्चवाकदा ।
आमंस्रावंसपैच्छिल्यंस्निग्धंशुभ्रंघनंस्रवेत् ॥
दिवाकोपोनिशाशांतिःकटिभेदःसकृद्भवेत् ।
ग्रहणीचामवातेनदुश्चिकित्स्याभिषग्वरैः ॥ ६३ ॥
अथापिपाचनैःसम्यग्दीपनैस्तामुपाचरेत् ॥ ६४ ॥

अर्थ–सूजन, शूल, ज्वर, तृषा, श्वास खाँसी, अरुचि, वमन, मूर्च्छा, और हिक्कासंयुक्त अतीसाररोगवाले रोगीको त्यागदेवै । जिस संग्रहणीवाले रोगीके सोनेके समय दोनों पसलियोंमें पीडा और उत्कट शब्द होवैं, तृषा करकै पीडित होवै, और बलकरकै क्षीण होवै, उसको असाध्य जानना । जो कभी२–३–४–५–१०–१५–अथवा३० दिनपर्यन्त पिच्छल, स्निग्ध, शुभ्र, और घन आमयुक्तमल गिरै, तथा दिनमें कुपितहो और रात्रिमें शान्त होजावै और मल उतरनेके समय कमरमें दर्दहो ऐसा आमवातयुक्त संग्रहणीरोग असाध्य जानना; यद्यपि यहरोगतौ असाध्यहै तथापि इसकी पाचन और दीपन औषधीयोंसे चिकित्सा करै ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥

इतिआमातीसारचिकित्सासमाप्ता ।

अथग्रहणीचिकित्सामाह ।

अतीसारेनिवृत्तेऽपिमंदाग्नेरहिताशिनः ।
भूयःसंदूषितोवह्निर्ग्रहणीमभिदूषयेत् ॥ १ ॥

अर्थ-अतीसारके निवृत्तहोनेपरभी मंदाग्नियुक्त और अहितसेवन रकनेवाले पुरुषके जठराग्नि दूषित होकर ग्रहणीकलाको अभिदूषित कर संग्रहणीरोगको उत्पन्न करै है ॥ १ ॥

चित्रकस्त्रिफलाव्योषंविडंगंरजनीद्वयम् ।
भल्लातकंयवानीचहिंगुलवणपंचकम् ॥ २ ॥
गृहधूमवचाकुष्ठंघनमभ्रंचगंधकम् ।
क्षारत्रयाजमोदाश्वपारदोगजपिप्पली ॥ ३ ॥
अमीषांगुण्डकंयावत्समंचूर्णंविमार्द्दितम् ।
शक्राशनस्यचूर्णन्तुतत्तुल्यंतत्रदापयेत् ॥ ४ ॥
बिडालपदमात्रन्तुभक्षयेदस्यगुण्डकम् ।
अभ्यर्च्यनायिकांप्रातर्योगिनींकामरूपिणीम् ॥ ५ ॥
मन्दाग्निकासदुर्नामप्लीहपाण्डुरुचिज्वरान् ।
प्रमेहशोथविष्टम्भसंग्रहग्रहणीगदान् ॥ ६ ॥
उपयुक्तोविधानेननाशं यचिरादिमान् ।
नानातीसारशमनःकृमिकण्डूविनाशनः ॥ ७ ॥
आमवातमदच्छेदीसूतिकातंकनाशनः ।
रजनीद्वयोःस्थानेकेऽपिजीरकद्वयंपठन्ति ॥ ८ ॥
कांजिकाम्लंसदापथ्यंदग्धमीनन्तथादधि ।
तस्मादसौसदासेव्योगुण्डकोनायिकामतः ॥ ९ ॥
काष्ठमप्युदरेयस्यभक्षणाद्यातिजीर्णताम् ।
नतेऽस्मिन्व्याधयःसन्तिवातपित्तकफोद्भवाः ॥ १० ॥
सर्वांस्तान्नाशयत्याशुगुण्डकोनायिकाकृतेः ।
वार्यन्नञ्चव्यवायंचमांसापिष्टकभक्षणम् ॥ ११ ॥

इति नायिकाचूर्णम् ।

अर्थ-चीता, हरड, बहेडा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल, वायविडंग,

हलदी, दारुहलदी, भिलावा, अजवायन, हींग, सैंधानोन, कालानोन, विडनोन, खारीनोन, सामरनोन, गृहधूम (घरकाधुआ), वच, कूट, नागरमोथा, अभ्रक, गन्धक, जवाखार, सज्जी, सुहागा, अजमोद, पारा और पीपल इनसबको समानभागलेकर बारीक चूर्ण करै और सब चूर्णकी बराबर भांगका चूर्ण मिलावै, इस नायिकानामवाले चूर्णको कामरूपिणी योगिनीका पूजनकरकै दोतोले प्रमाण प्रातःकालमें भक्षणकरै, यह चूर्ण—मन्दाग्नि, खांसी, बवासीर, प्लीहा, पाण्डुरोग, अरुचि, ज्वर, प्रमेह, सूजन, विष्टम्भ, मलरोध और संग्रहणीरोगको उपयुक्त विधानसे खानेपर शीघ्रही दूर करैहै। और नानाप्रकारके अतीसारों-को शमन करै है। तथा कृमि, कण्डू, आमवात और सूतिका-रोगको नष्ट करैहै। और कितनेक वैद्य इसयोगमें दोनों हल्दियों-की जगह दोनों जीरे डालते हैं। इसपै, काँजी, भुनीहुई मछली और दही पथ्यहै। इस चूर्णको भक्षणकरनेसे जिसके पेटमें काष्ठभी हो तौ जर जाताहै। इस कारण यह नायिकाचूर्ण सदैव सेवनकरना चाहिये, वात, पित्त और कफसे उत्पन्नहुए रोगोंको यह नायिकानामवाला चूर्ण शीघ्रही नष्ट करदेताहै॥ २॥ ३॥ ४॥ ५॥ ६॥ ७॥ ८॥ ९॥ १०॥ ११॥

अथसूतस्यशुद्धस्यगन्धकस्याभ्रकस्यच।
प्रत्येकंकर्षमेकन्तुग्राह्यंरसगुणैषिणा॥ १२॥
ततःकज्जलिकांकृत्वाव्योषचूर्णप्रदापयेत्।
केशराजस्यभृंगस्यानिर्गुण्ड्याश्चित्रकस्यच। १३॥
ग्रीष्मसुन्दरकस्याथजयन्त्याःस्वरसन्तथा।
मण्डूकपर्ण्योःस्वरसंतथाशक्राशनस्यच॥ १४॥
श्वेतापराजितायाश्चस्वरसंपर्णसम्भवम्।
दापयेत्तत्रतुल्यंचविधिज्ञःकुशलोभिषक्॥ १५॥
रसतुल्यंप्रदातव्यंचूर्णमारिचसम्भवम्।
देयंरसार्द्धभागेनचूर्णटंकणसम्भवम्॥ १६॥
शुभेशिलामयेपात्रेघर्षणीयंप्रयत्नतः।
शुष्कमातपसंयोगाद्वटिकांकारयेद्भिषक्॥ १७॥

कलायपरिमाणन्तुखादेत्तान्तुप्रयत्नतः ।
हन्तिकासंक्षयंश्वासंवातश्लेष्मभवंरुजम् ॥ १८ ॥
वरंवाजीकरःश्रेष्ठोबलवर्णाग्निदीपनः ।
ज्वरेचैवातिसारेचासिद्धएषप्रयोगराट् ॥ १९ ॥
नातःपरतरंकिंचिद्विद्यतेऽभ्ररसायनात् ।
चातुर्थीकज्वरेश्रेष्ठंसूतिकातंकनाशनम् ॥ २० ॥
भोजनेशयनेपानेनास्त्यत्रनियमःक्वचित् ।
दधिचावश्यकंभक्ष्यंप्राहनागार्जुनोमुनिः ॥ २१ ॥

इति अभ्रवटिका ।

अर्थ-शुद्धपारा दो तोले, गंधक दोतोले, और अभ्रक दो तोले इन तीनोंकी कज्जली करै, पश्चात् सोंठ, मिरच और पीपलका चूर्ण कज्जलीमें मिलाकर कुकुरभांगरा, भांगरा, सम्हालु, चीता, ग्रीष्मसुन्दर, अरनी, ब्रह्ममण्डूकी, भांग, सफेदकोयलके पत्ते इन प्रत्येकको दोदो तोले रसमें पृथक् पृथक् भिजोवै, फिर पारेकी बराबर मिरचोंका चूर्ण और पारेसे आधाभाग सुहागेका चूर्ण मिलाले, तत्पश्चात् पत्थरके खरलमें खरलकर धूपमें सुखाकर मटरकीसमान गोली बनावै- यह गोली खाँसी, क्षय, श्वाँस वातश्लेष्मोद्भवरोग, इनको दूर करैहै । श्रेष्ठ, उत्तमवाजीकरण, तथा बल, वर्ण और अग्निको दीपन करैहै । ज्वर और अतिसाररोगमें यह प्रयोगराज सिद्ध है । इससे परै और कोई दूसरी अभ्ररसायन नहीं है । यह चौथिया ज्वरमें हितकारीहै और सूतिकारोगनाशक है । इसपै भोजनका, सोनेका और पीनेका कुछनियम नहीं है परन्तु दही इसपै अवश्य खाना चाहिये । यह नागार्ज्जुनमुनिने कहाहै ॥ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥

कणानागरपाठाभिस्त्रिवर्गद्वितयेनच ।
बिल्वचन्दनह्रीबेरैःसमंलोहंप्रदापयेत् ॥ २२ ॥
सर्वातीसारशमनःसंग्रहग्रहणीहरः ।

सर्वोपद्रवसंयुक्तामपिहन्यात्प्रवाहिकाम् ॥ २३ ॥
नानेनसदृशोलोहोविद्यतेग्रहणीगदे ॥ २४ ॥

अर्थ-पीपल, सोंठ, पाठ, त्रिफला, चीता, वायविडंग, नागरमोथा, वेलगिरी, चन्दन और सुगंधवाला, इन सबको समानभाग लेवै और सबकीबराबर लोहालेवै, फिर सबको मिलाकर चूर्ण करले, यह सर्व प्रकारके अतिसारोंको शान्त करैहै और संग्रहणीरोगको हरै है तथा सर्वोपद्रवयुक्त प्रवाहिकारोगको नष्ट करै है । इसके समान संग्रहणी-रोगको हरनेवाला और लोहा नहीं है । इसको कणादिलोह कहते हैं ॥ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥

रसांजनंसातिविषंकुटजस्यफलत्वचम् ।
धातकीशृंगवेरंचपिवेत्तण्डुलवारिणा ॥ २५ ॥
क्षौद्रेणयुक्तंतुदतिरक्तातीसारमद्भुतम् ।
मन्दंदीपयतेचाग्निंशूलंचाशुनियच्छति ॥ २६ ॥

इतिरसांजनादिचूर्णम् ।

अर्थ-रसोत, अतीस, कुडेकी छाल, इन्द्रजौ, धायके फूल और सोंठ इनका चूर्ण तण्डुलोदक और मधुके साथ सेवनकरनेसे रक्तातीसार, मन्दाग्नि और शूल दूर होता है ॥ २५ ॥ २६ ॥

रसस्यशाणंसंगृह्यकांजिकेनतुशोधयेत् ।
चित्रकस्यरसेचापित्रिफलायाश्चबुद्धिमान् ॥ २७ ॥
रसार्द्धंगंधकंशुद्धंभृंगराजरसेनवै ।
द्वाभ्यांसंमूर्च्छनंकृत्वास्वरसैःशाणसंमितैः ॥ २८ ॥
खल्लयेच्चशिलाखल्वेक्रमशोवक्ष्यमाणजैः ।
निर्गुण्डीमण्डुकीश्वेताकुचेलाग्रीष्मसुन्दरैः ॥ २९ ॥
भृंगाह्वकेशराजस्यजयन्तींद्राशनोत्कटैः ।
सर्षपाभ्यांवटींकृत्वादद्यात्तांग्रहणीगदे ॥ ३० ॥
आमवाताग्निमान्द्येचज्वरेप्लीहोदरेषुच ।

वातश्लेष्मविकारेषुतथाश्लेष्मगदेषुच ॥ ३१ ॥
अम्लंतक्रादिसेवाश्चकुर्वीतस्वेच्छयाबहु ।
क्रियतेवैद्यनाथेनलोकानुग्रहकारिणा ॥ ३२ ॥
स्वप्नान्तेब्राह्मणस्येयंभाषितालिखितानतु ॥ ३३ ॥

इति वैद्यनाथवटिका ।

अर्थ-चारमासे पारेको काँजीमें और चीतेके रसमें तथा त्रिफलाके काढेमें भावना देकर शोषणकरै, पश्चात् दोमासे गंधकको भाँगरेके रसमें मर्द्दन करै, इस प्रकार शुद्धकिये हुए गंधकको मिलाकर कज्जलीकरै, फिर सह्मालू, मण्डूकपर्णी, सफेदकोयल, पाढ़, भांगरा, कुकुरभाँगरा, जयन्ती, भाँग और दालचीनी, इन प्रत्येकके चार चार मासे रसमें खरलकर सरसोंकी समान गोलीबनावै। यह गोली-संग्रहणीरोगमें, आमवातमें, मन्दाग्निमें, ज्वरमें, प्लीहा और उदररोगमें, वातकफविकारोंमें और कफरोगमें देनी चाहिये।पथ्य-अम्लरस और बहुतसा तक्र जितना जी-चाहै उतनाही पीना चाहिये। यह गोली वैद्यनाथकी कही हुईहै ॥२७॥ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥

जयारुबुककाकमाचीशृंगवेररसैःपृथक् ।
सप्तधामूर्च्छितःशैलेरसोभवतिनिर्मलः ॥ ३४ ॥
सूक्ष्मपत्रीकृतंताम्रंगंधचूर्णेनयोजितम् ।
पुटयित्वान्धमूषायांचूर्णंतक्रेणयोजयेत् ॥ ३५ ॥
तच्चर्णंत्रिकटूपेतंयोजयेन्मधुसर्पिषा ।
ग्रहणीक्षयरोगेषुहितःसोपद्रवेषुच ॥ ३६ ॥
अम्लपित्तेचकुष्ठेचज्वरेमेहेचकामले ॥ ३७ ॥

ग्रहण्यादौताम्रयोगः ।

अर्थ-अरणी, अंड, मकोय और अदरखके रसमें सातवार मूर्छित किया हुआ पारा, ताँबेके बारीक कियेहुए पत्र और गंधकका चूर्ण इन तीनोंको मिलाकर मूषामें धरै, फिर गजपुटमें फूँक देवै, तत्पश्चात् तिसमें सोंठ, मिरच और पीपलका चूर्ण मिलाकर छाछके साथ अथवा मधु

और घृतकेसाथ खानेसे- उपद्रवयुक्तसंग्रहणी, क्षय, अम्लपित्त, कोढ़, ज्वर, प्रमेह, और कामलारोग दूर होताहै ॥३४॥३५॥३६॥३७॥

रसगंधकयोःकर्षंप्रत्येकंशोधयेद्भिषक् ।
ततःकज्जलिकांकृत्वानैपालंताम्रपत्रकं ॥ ३८ ॥
कण्टवेध्यंविधातव्यंसर्वमेकत्रकारयेत् ।
पात्रेहिमृत्तिकोद्भुतेपरंदद्याद्रसंशुभम् ॥ ३९ ॥
पंचजम्बीरसंभूतंयथाप्लावितमेवतत् ।
आतपेस्थापयेत्पश्चाद्यावत्पंकोपमंभवेत् ॥ ४० ॥
पाणिनामर्द्दयित्वातुवटिकांकारयेत्ततः ।
विशोष्यभक्षयेद्रक्तिद्वयंतस्मान्महौषधात् ॥ ४१ ॥
दिनत्रयान्तरेणैवरक्तिरक्तिविवर्द्धयेत् ।
परिहारविधिस्तेनधान्यजीरानुपानतः ॥ ४२ ॥
प्रातरेतद्विधातव्यंहन्तिपित्ताम्लसंभवम् ।
ग्रहण्यामुद्भवंशूलमम्लपित्तञ्चदारुणम् ॥ ४३ ॥
अजीर्णरक्तपित्तंचक्षयंकुष्ठंविशेषतः ॥ ४४ ॥

इतिताम्रयोगः ।

अर्थ-पारा दोतोले, गंधक दोतोले, इन दोनोंको अलग अलग शोधै, फिर दोनोंकी कज्जली करै, तदनंतर ताँबेको कण्टकवेधी बनाकर कज्जली मिलादेवै, फिर मट्टीके बरतनमें रख पकेहुए जम्भीरी नीबुओंके रसमें भिजोवै, तत्पश्चात् जबतक गारेकीसमान न होजावै तबतक धूपमें रक्खा रहने देवै, फिर हाथसे मलकर गोली बनावै और उनगोलियोंको छायामें सुखादेवै, फिर दोरत्ती प्रमाण भक्षण करै और तीन तीन दिनके पश्चात् एक एक रत्ती बढ़ाता जाय और इसीप्रकार बहुतकालके बाद एकएकरत्ती घटाता जावै । इसका अनुपान-धनिया और जीरा है । इसको प्रातःकाल सेवन करै । यह ताम्रयोग-अम्लपित्त, संग्रहणी, शूल, अम्लपित्तोद्भवशूल, अजीर्ण, रक्तपित्त, क्षय और कुष्ठको नष्ट करै है ॥ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥

लवंगातिविषामुस्तंपिप्पलीमरिचानिच ।
सैन्धवंहपुषाधान्यंकट्फलंपौष्करंतथा ॥ ४५ ॥
जातिकोषफलाजाजीसौवर्चलरसांजनम् ।
धातुमोचरसंपाठापत्रंतालीसकेशरम् ॥ ४६ ॥
चित्रकंचविडंचैवतुम्बुरुबिल्वमेवच ।
त्वगेलापिप्पलीमूलमजमोदायवानिका ॥ ४७ ॥
समंगावत्सकंविश्वंदाडिमंयावशूकजम् ।
भूनिम्बंसर्जिकाक्षारंसामुद्रंटंगणाभ्रकम् ॥ ४८ ॥
ह्रीबेरंकुटजंचैवअम्लकंकटुरोहिणी ।
एतानिसमभागानिसूक्ष्मचूर्णानिकारयेत् ॥ ४९ ॥
अनुपानंप्रदातव्यंबुद्ध्वादोषबलाबलम् ।
सर्वदोषभवंचैवग्रहणीमतिदुस्तराम् ॥ ५० ॥
वातिकंपैत्तिकंचैवश्लैष्मिकंसान्निपातिकम् ।
सर्वातिसारशमनंसर्वशूलनिषूदनम् ॥ ५१ ॥
प्लीहगुल्मोदरानाहसूतिकारोगनाशकम् ।
आमवातंतथाजीर्णसंग्रहग्रहणीगदम् ॥ ५२ ॥
लवंगादिबृहच्चेदंधन्वंतरिप्रकाशितम् ॥ ५३ ॥

बृहल्लवंगादिचूर्णम् ।

इतिग्रन्थान्तरे ।

अर्थ-लौंग, अतीस, नागरमोथा, पीपल, कालीमिरच, सैंधानोन, हाऊबेर, धनिया, कायफल, पोहकरमूल, जायफल, जीरा, कालानोन, रसौत, धायकेफूल, मोचरस, पाठ, तेजपात, तालीशपत्र, नागकेशर, चीता, वायविडंग, तुम्बुरु, बेल, दालचीनी, इलायची, पीपरामूल, अजमोद, अजवायन, लज्जावंती, कुडेकी छाल, सोंठ, अनारदाना, जवाखार, चिरायता, सज्जी, समुद्रफेन, सुहागा, मोथा, सुगंधवाला,

इन्द्रजव, अमलवैंत, और कुटकी इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर कूट बारीकचूर्ण करले, इसपै बलाबलका विचारकर अनुपानदेवै. यह चूर्ण—सर्व दोषोंसे उत्पन्नहुई अत्यन्तदुस्तरसंग्रहणी, वातातिसार, पित्तातिसार, कफातीसार, त्रिदोषजअतिसार, सर्वप्रकारके अतिसार, सर्वप्रकारके शूल, प्लीहा गुल्म, उदररोग, आनाह, सूतिकारोग, आमवात, अजीर्ण और संग्रहणीरोगको नष्ट करताहै । यह बृहल्लवंगादिचूर्ण श्रीमान् धन्वन्तरिजीने प्रकाशित कियाहै ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥

अथरसरत्नाकरे।

टंकणक्षारगन्धाश्मरसंजातीफलानिच ।
बिल्वंखादिरसारंचजीरकंश्वेतधूनकम् ॥ ५४ ॥
कपिहस्तकबीजंचतथैवावाकपुष्पिका ।
एषांशाणंसमादायश्लक्ष्णचूर्णञ्चकारयेत् ॥ ५५ ॥
बिल्वपत्रककार्पासफलंशालिंचदुग्धिका ।
शालिञ्चमूलंकुटजत्वचंकंचकपत्रकम् ॥ ५६ ॥
सर्वेषांस्वरसेनैववटिकांकारयेद्भिषक् ।
रक्तिकैकप्रमाणेनखादयेद्दिवसत्रयम् ॥ ५७ ॥
दधिमण्डस्ततःपेयःपलमात्रप्रमाणतः ।
अपियोगशताक्रान्तांग्रहणीमुद्धतांत्यजेत् ॥ ५७ ॥
आमशूलंज्वरंकासंश्वासंशोथंप्रवाहिकाम् ।
रक्तस्रावकरंद्रव्यंकार्यंनैवात्रयुक्तितः ॥ ५८ ॥
कृष्णावार्त्ताकुमत्स्यञ्चदधितैलंचशस्यते ।
ज्ञात्वावायोर्गतिस्तत्रजलंतैलंप्रदापयेत् ॥ ६० ॥
ग्रहणीकपाटनामाऽयंकवाटघटनादिव ॥ ६१ ॥

इतिग्रहणीकपाटः ।

अर्थ—सुहागा, गन्धक, शिलारस, जायफल, बेल, खैरसार, जीरा,

सफेदराल, कौंछकेबीज, और सोंफ, इनसब औषधियोंको चारचारमासे लेकर बारीक चूर्ण करले, पीछै उस चूर्णको बेलपत्र, कपासकेफल शालिच, दुद्धी, शालिचमूल, कुडेकी छाल और कंचकशाकके पत्तोंके रसमें भावना देकर एक रत्तीभरकी गोली बनावै, प्रतिदिन एक गोली खाय इसप्रकार तीनदिन पर्यन्त खावै और ऊपरसे चारतोले दहीका पानी पी लेवै । यह ग्रहणीकपाटरस–जिस संग्रहणीको सैंकड़ों योगोंसे आराम न हुआ होय उसको, आमशूल, ज्वर, खाँसी, श्वास, सूजन और प्रवाहिकारोगको दूरकरै । इसके ऊपर रक्तस्राव (रुधिरको गिरानेवाली) औषधी नहीं खानी चाहिये । कालिवैगुन, मछली, दही और तेल इसपै पथ्यहै, किंतु वैद्यको चाहियेकि वायुकी गतिको जानकर तेल देवै । जिसप्रकार मनुष्योंको किवाडै रोक देतीहै, उसीप्रकार यह ग्रहणीकपाटरस संग्रहणीरोगको रोक देताहै ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥

लवंगातिविषामुस्तंबिल्वंपाठाथशाल्मली ।
जीरकंधातकीपुष्पंलोध्रेन्द्रयववालकम् ॥ ६२ ॥
धान्यकंसर्जकंशृंगीपिप्पलीविश्वभेषजम् ।
समंगायावशूकंचसैन्धवंसरसांजनम् ॥ ६३ ॥
समभागानिचैतानिभक्षयेत्प्रातरुत्थितः ।
शमयेदग्निमान्द्यञ्चसंग्रहग्रहणीगदम् ॥ ६४ ॥
नानावर्णमतीसारंसशोथंपाण्डुकामलम् ।
इदमष्ठीलिकांहन्तिकुष्ठंकोष्ठगतंज्वरम् ॥ ६५ ॥

इतिलवंगादिचूर्णम् ।

अर्थ–लौंग, अतीस, नागरमोथा, बेल, पाढ़, सेमल, जीरा, धायकेफूल, लोध, इन्द्रयव, सुगंधवाला, धनिया, राल, काकड़ाशिंगी, पीपल, सोंठ, लज्जावंती, जवाखार, सैंधानोन और रसौत समानभाग लेकर पीस चूर्ण करले, इसचूर्णको प्रातःकाल उठकर खावै । यह चूर्ण–मंदाग्नि, संग्रहणी, नानावर्णका अतिसार शोथातीसार, पाण्डुरोग, कामला, अष्ठीलिकावात, कुष्ठ और कोष्ठगत ज्वरको नष्ट करै ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥

रसगंधकयोश्चैवजातीफलविडंगकम् ।
प्रत्येकंशाणमात्रन्तुश्लक्ष्णचूर्णानिकारयेत् ॥ ६६ ॥
सूर्यावर्त्तरसैश्चैवबिल्वपत्ररसैस्तथा ।
शृंगाटकस्यपत्राणां रसैःप्रत्येककंपलैः ॥ ६७ ॥
चण्डातपेनसंशोध्यवटिकांकारयेद्भिषक् ।
बिल्वपत्ररसेनैवभक्षयेद्रक्तिकाद्वयम् ॥ ६८ ॥
दध्नापिभोजनीयञ्चग्रहणीरोगनाशनम् ।
पाण्डुरोगमतीसारंशोथदुर्नामनाशनम् ॥ ६९ ॥
ग्रहणीकपाटनामाऽयंकपाटघटनादिव ॥ ७० ॥

इतिग्रहणीकपाटरसः ।

अर्थ-पारा, गंधक, जायफल और वायविडंग, इन प्रत्येकको चार चारमासे लेवै, फिर सबको एकत्रकर बारीक चूर्ण करले, पीछे हुल-हुल, बेलपत्र और सिंघाड़ेके पत्ते, इन प्रत्येकके चार चार तोले रसमें भिजोवै, पश्चात् दोदो रत्तीकी गोली बनाकर तीक्ष्णधूपमें धरदे; एक गोली बेलपत्रके रसकेसाथ भक्षण करै, और दहीभातका भोजन करै तौ-संग्रहणीरोग, पाण्डुरोग, अतीसार, सूजन, और बवासीर दूर होजावै ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥

विशुद्धसूतस्यचगंधकस्यप्रत्येकशोमासचतुष्टयंच ।
विधायशुद्धोपलपात्रमध्येसुकज्जलींवैद्यवरःप्रयत्नात् ७१
जातीफलंशाल्मलिवेष्टमुस्तंसटंगणंसातिविषंसजीरम् ।
प्रत्येकमेतन्मरिचस्यशाणप्रमाणमेकंविषमासकञ्च ७२
विचूर्ण्यसर्वैंरवमर्द्यपश्चाद्विभावयेत्पत्ररसैरमीषाम् ।
वंशाम्रभद्रोत्काटानामिन्द्रानिकेन्द्राशकसजम्बु ॥ ७३॥
जयन्तिकांदाडिमकेशराजंसावित्रकर्णोपिचभृंगराजः ।
विभाव्यसम्यग्वटिकाविधेया
कोलास्थिमानाथयथानुपानम् ॥ ७४ ॥

सोमंनिहंत्यत्रबहुप्रकारंसूतीविकारंश्वयथुंसमग्रम् ।
कासंचपंचात्मकमम्लपित्तमियंनिहन्याद्ग्रहणींप्रवृद्धाम् ॥
अभ्यस्यजीयाद्बुदजानसाध्यानामानुबंधंह्यतिसारमुग्रम् ।
श्वासंतथापाण्डुगदंनिहान्ति चिरोद्भवांचग्रहणींप्रदुष्टाम् ॥
जयेद्भृशंयोगशतैरसाध्यांविवर्जनीयाइहदुष्टमत्स्याः ।
मत्स्यास्तथापाण्डववर्णकाश्चरम्भाफलंमूलमथोदलंच ॥
बुधैर्विधेयंनकदाचिदत्रजातीफलाद्यावटिकाचहृद्या ।
यशोर्थिनोवैद्यवरस्यविद्याह्यनेकसंभावितमर्त्यलोके ७८
नानाविधव्याधिपयोधिनौका ।
जातीफलाद्यावटिकाप्रसिद्धा ॥ ७९ ॥

इतिजातीफलाद्यावटिका ।

अर्थ-पारा चारमासे, गंधक चारमासे, इन दोनोंकी उत्तम खरलमें कज्जली करै, पश्चात् जायफल, मोचरस, नागरमोथा, सुहागा, अतीस, जीरा और कालीमिरच यह सब चार चारमासे लेवै, विष एकमासा लेवै फिर इन सबका चूर्णकर कज्जलीमें मिला, बाँसके पत्ते, आमकेपत्ते, नीमके पत्ते, जलपीपलके पत्ते, इन्द्रायन,भाँग, जामन, अरणी, अनार, कुकुरभाँघरा, पाढ़ और भाँगरा, इन सबके रसमें भावना देकर बेरकी गुठलीकी बरावर गोली बनावै, यह गोली अनुपानके साथ खानेसे-बहुतप्रकारके सोमरोग, सूतिकारोग, सर्वप्रकारकी सूजन, पांच प्रकारकी खाँसी, अम्लपित्त, उग्रसंग्रहणी, उग्र अतीसार, श्वाँस, पाण्डुरोग, प्राचीन संग्रहणी और असाध्यसंग्रहणीरोग दूर होते हैं । इसपै पाण्डुवर्णकी मछली, केलेकीफली, केलेकी जड और पत्र, शाक भक्षणकरना निषेधहै । यह जातीफलादिवटिका वैद्योंको यशदेनेवाली है, और यह नानाप्रकारके रोगरूपसमुद्रमें नौकारूप होकर रोगीको पार कर देतीहै ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥

शुद्धसूतंसमंगंधंसूतपादंविषंक्षिपेत् ।
सर्वतुल्यंमृतश्चाभ्रंमर्द्यंधुस्तूरजैर्द्रवैः ॥ ८० ॥

सर्पाक्ष्याश्चद्रवैर्यामंकषायेणाथभावयेत्।
धातक्यतिविषामुस्ताशुण्ठीजीरकवालकम्॥ ८१॥
यवानीधनिकाबिल्वंपाठापथ्याकणान्विता।
कुटजस्यत्वचंबीजंकपित्थंदाडिमंवचा॥ ८२॥
प्रत्येकंकर्षमात्रंस्यात्कल्कितंक्काथयेज्जलैः।
कल्कंचतुर्गुणंग्राह्यंकषायंपादमात्रकम्॥ ८३॥
अनेनात्रिदिनंभाव्यंपूर्वोक्तादिकृतंरसम्।
रुद्धातंवालुकायंत्रेक्षणंमृद्वग्निनापचेत्॥ ८४॥
मृतसंजीवनोनामरसोगुंजाचतुष्टयम्।
दातव्योह्यनुपानेनअसाध्यंसाधयेद्ध्रुवम्॥ ८५॥

इतिमृतसंजीवनोरसः।

अर्थ-शुद्धपारा, गंधक, यह दोनो समानभाग लेवै, विष पारेसे चौथाभाग लेवै और सबकी समान अभ्रककी भस्मलेवै, फिर इन सबको मिलाकर धतूरेके रसमें और सर्पाक्षीके रसमें एकप्रहर खरल करै, फिर धायके फूल, अतीस, नागरमोथा, सोंठ, जीरा, सुगंधवाला, अजवायन, धनिया, वेलगिरी, पाढ, हरड, पीपल, कुडेकी छाल, इन्द्रयव, कैथ, अनार और वच प्रत्येक दोदो तोले लेकर कल्क अथवा क्वाथ बनावै, कल्कमें तौ पानी चारगुणा ग्रहण करै और क्वाथमें एकगुणा ग्रहण करै, पीछै इसमें पूर्वोक्तचूर्णको तीन दिन भावना देकर वालुकायंत्रमें रख मुख बन्द करै, क्षणभर मृदुअग्निसे पचावै। इस मृतसंजीविनीरसको चार रत्तीभर अनुपानकेसाथ देनेसे असाध्यसंग्रहणीआदि रोगोंको दूर करैहै॥ ८०॥ ८१॥ ८२॥ ॥ ८३॥ ८४॥ ८५॥

नागरातिविषामुस्तदेवदारुकणावचा।
यवानीवालकोधान्यंकुटजस्यत्वचाभया॥ ८६॥
धातकीन्द्रयवंबिल्वंपाठामोचरसंसमम्।

चूर्णैःसमधुनालेह्यमनुपानंसुखावहम् ॥ ८७ ॥

इतिमृतसंजीवनीरसः ।

अर्थ–सोंठ, अतीस, नागरमोथा, देवदारु, पीपल, वच, अजवायन, सुगंधवाला, धनिया, कुडेकिछाल, धायकेफूल, इन्द्रयव, बेलगिरी, पाढ़ और मोचरस, इन सबको समानभाग लेकर चूर्णकरै, इस चूर्णको सहतकेसाथ खानेसे संग्रहणीरोग दूर होताहै ॥ ८६ ॥ ८७ ॥

अष्टौगंधकतोलकान्रसपलंलोहंतदर्द्धंशुभं
लोहार्द्धंबकुलाभ्रकंसुविमलंशुल्वस्यमासद्वयम् ।
पात्रेलोहमयेचमर्दनविधौचूर्णीकृतंचैकतो-
दार्व्याबादरवह्निनाचमृदुनापक्वंविदित्वादले ॥ ८८ ॥
रंभायालघुचालयेत्पुटैरियंपंचामृतपर्पटी
ख्याताक्षौद्रघृतान्विताप्रतिदिनंगुंजात्रयंवृद्धितः ।
लोहेमर्दनयोगतःसुविमलंभक्ष्यांक्रियालोहवद्
गुंजाष्टाविहनाधिकंत्रिकचतुःसप्तद्वयंयुग्मतः ॥ ८९ ॥
नानावर्णातिसारग्रहणीपरिगदेदुर्निवारेऽग्निमान्द्ये
छर्द्यांचैवाम्लपित्तेप्रबलगुदगदेरक्तपित्तेक्षयेच ।
श्रेष्ठापुष्टिप्रदायावलिपलितहरानेत्ररोगैकहन्त्री
तीक्ष्णंदीप्तिंस्थिराग्निंपुनरपिचनरंदिव्यदेहंकरोति ॥ ९० ॥

इतिपंचामृतपर्पटी ।

अर्थ–गंधक आठ तोले, पारा चार तोले, लोहा दो तोले, अभ्रक एक तोला और ताँबा दो मासे, इन सबको लोहेके पात्रमें एकत्रमर्दन करै, पश्चात् इसको लोहेके बरतनमें रख चुलेपै चढा बेरीकी लकडियों-से मंदमन्द पकावै, और लोहेकी करछीसे चलावै,पकजानेपर बरतनमें-से लौटकरके केलेकेपत्तेपर ढाललेवै, इस प्रकार पंचामृतपर्पटी बनतीहै। मात्रा तीन रत्तीकीहै, इसको लोहेके बरतनमें पीस सहत और घृतके साथ सेवनकरै, तीन रत्तीसे आठ रत्तीतक बढावै, आठ रत्तीसे अधिक एकदिनमें नहीं खाय; इसप्रकार इस पंचामृतपर्पटीको सेवनकरनेसे

अनेकरंगका अतीसार, नानाप्रकारकी संग्रहणी, असाध्यमंदाग्नि वमन, अम्लपित्त, प्रबल गुदरोग, रक्तपित्त और क्षयरोगका नाश होताहै । यह पंचामृतपर्पटी–पुष्टिकारक, वलि (शरीरमें वल पड़ने) पलित (विनाही अवस्थावालोंका धवल होजाना) नाशक, नेत्ररोगोंको दूर करनेवाली, तीक्ष्णता, दीप्ति, जठराग्निको स्थिर और देहको दिव्यस्वरूप करतीहै ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ ९० ॥

कृष्णाभ्रलोहमलशुद्धविडंगसारं
प्रत्येकमेकपलिकंविधिवद्विधाय ।
चव्यंकटुत्रयफलत्रयकेशराज-
दन्तीपयोदचपलानलघण्टकर्णाः ॥ ९१ ॥
मानोरुबूकबृहतीत्रिवृताथसूर्या-
वर्त्तपुनर्नविकयासहितस्त्वमीषाम् ।
चूर्णप्रतिप्रतिसुशोधितमक्षमेकं
चूर्णात्तदर्द्धरसगंधकमेकसंस्थम् ॥ ९२ ॥
संपिष्यतस्यगुडिकाविधिवत्कृतासा
हन्त्यम्लपित्तमरुचिंग्रहणीमसाध्याम् ।
दुर्नामकामलभगन्दरशोथगुल्मान्
शूलञ्चपाकजनितंसततान्निमान्द्यम् ॥ ९३ ॥
सद्यःकरोत्युपचितंचिरमन्दमग्निं
कुष्ठंनिहन्तिपलितञ्चवलींप्रवृद्धाम् ।
श्वासंचकासमपिपाण्डुगदंनिहन्ति
वार्यन्नमांसदधिकांजिकमत्स्यमांसम् ॥ ९४ ॥
वृक्षाम्लतैलपरिपक्वभुजोयथेष्टं
शृंगाटबिल्वगुडकंचटनारिकेलम् ।
दुग्धादिसर्वविदलानिविवर्जयेच्च ।

मुद्गमकुष्टचनककलायाढ्कीभिराख्यातः।
वैदलइतिवर्गोयंविष्टम्भीपवनशूलकरः॥ ९५ ॥

इति ग्रन्थान्तरस्य ।

अर्थ-कृष्णाभ्रक, लोहमल और विडंगसार, यह प्रत्येक चार चार तोले लेवै, चव्य, त्रिकुटा, त्रिफला, कुकुरभाँगरा, दन्ती, नागरमोथा, पीपल, चीता, घंटकर्ण, मानकन्द, अंड, कटाई, निसोत, हुलहुल और पुनर्नवा, इन प्रत्येकका चूर्ण दो दो तोले लेवै, और शुद्धपारा, शुद्धगन्धकचूर्णसे आधाभाग लेवै, इनसबको मिला बारीक पीसकर विधिपूर्वक गोली बनावै, इनगोलियोंको सेवनकरनेसे-अम्लपित्त, अरुचि, असाध्यसंग्रहणी, बवासीर, कामला, भगन्दर, सूजन, गुल्म, पाकजनितशूल, मन्दाग्नि, कोढ़, वलिपलित, श्वाँस, खाँसी और पांडुरोग, नष्ट होताहै। जल, अन्न, माँस, दही, कांजी, मछलीका मांस, विषांविल नींबू और तैलसे बना हुआ भोजन यह सब इसपै पथ्य हैं। सिंघाडे, बेल, गुड़, कंचटशाक, नारियल, दूध और वैदलअन्नादि अपथ्य हैं। मूंग, सोंठ, चने, मटर, अरहर, इन सबको वैदल अन्न कहतेहैं, यह वैदल अन्न-विष्टम्भकारक, वात और शूलको उत्पन्न करैहै ॥ ९१ ॥ ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ ९५ ॥

रसगंधकयोःकृत्वाकज्जलंसमभागयोः।
लौहचूर्णंरससमंदत्त्वासंश्लिष्यपर्पटी ॥ ९६ ॥
कार्यासाविधिनासेव्यारोगिभिःपथ्यभोजिभिः।
अनुपानंशृतंक्वाथ्यंधान्यजीरकनागरम् ॥ ९७ ॥
लौहेनपर्पटीचैवसिद्धालोकस्यसिद्धिदा।
रक्तिकैकंसमारभ्यवर्द्धयेद्रक्तिकाक्रमात् ॥ ९८ ॥
सप्ताहैकंद्वयंवापियावदारोग्यदर्शनात्।
ग्रहणींदुस्तरांहन्तिशूलातीसारसूतिकाम् ॥ ९९ ॥
अंगमर्दोज्वरःकम्पःपिपासागुरुगात्रता।
शोथःशूलातिसारौचसूतिकारोगलक्षणम् ॥ १०० ॥

प्लीहाग्निमान्द्यशोथार्शःपाण्डुदावर्त्तकामलाः ।
तथामवातकुष्ठानिरोगाण्येवंविधानिच ॥ १०१ ॥
भवेच्चायसवपुर्निर्वलीपलितोऽनया ।
पथ्यापथ्यविधिश्चात्रसर्वलौहविधानवत् ॥ १०२ ॥
गणाध्यायोक्तचरकोक्तवर्चःसंग्रहगणेन ।
तथालोहोक्तसंग्रहग्रहणीहरः ।
जम्बादिविशेषभेषजैःपुटितंलोहंग्राह्यमेवं ।
ग्रहाणांसर्वंतस्मादिदमपिपुटनियम् ।

इतिलौहपर्पटी ।

अर्थ–पारा और गन्धकको समानभाग लेकर कज्जली करै, पश्चात् पारेकी समान उस कज्जलीमें लोहेका चूर्ण मिलाकर पूर्ववत् पर्पटी बनाले । यह लोहपर्पटी–पथ्यसेवनकरनेवाले मनुष्यको सेवन करनी चाहिये, इस पर्पटीको धनिया, जीरा और सोंठके क्वाथके साथ सेवनकरना उचित है । इसको एक एक रत्तीसे बढ़ावै सात वा चौदह अथवा जबतक आरोग्य नहो तबतक सेवन करै । यह पर्पटी–घोरसंग्रहणी, शूल,अतीसार, सूतिकारोग, अंगमर्द्द, ज्वर, पियास, शरीरकी गुरुता, प्लीहा, मन्दाग्नि, सूजनयुक्तबवासीर, पाण्डुरोग, उदावर्त्त कामला, आमवात, और कुष्ठरोगको नष्ट करैहै, तथा नानाप्रकारके रोगोंको हरैहै, शरीरको लोहेके समान दृढकरनेवाली; वलिपलितनाशक है । इसपै लोहेकी समान पथ्यापथ्य सेवन करै, और इस लोहपर्पटीमें पुटपाकसे पकाया हुआ लोहा मिलाना चाहिये ॥९६ ॥ ९७ ॥ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ १०० ॥ १०१ ॥ १०२ ॥

क्वाथेपचेत्कंचटतालमूल्योः सितार्द्धप्रस्थःशृतपादशेषे ।
ततोऽक्षमानेनसमंप्रदद्याच्चूर्णानिधीरोविधिवत्तथैषाम् १०३
समंगाधातकीपाठाबिल्वंमुस्ताथपिप्पली ।
शक्रकातिविषाक्षारसौवर्चलरसांजनम् ॥ १०४ ॥

शाल्मलीवेष्टकंचैवसर्वंसिद्धेनिधापयेत् ।
शीतेचमधुनश्चात्रकुडवार्द्धंक्षिपेत्ततः ॥ १०५ ॥
अस्यमात्रांप्रयुञ्जीतयथाकालप्रमाणवित् ।
अम्लपित्तकृतंदोषमौदरंसर्वरूपिणम् ॥ १०६ ॥
सर्वातीसारशमनंसंग्रहग्रहणींजयेत् ।
एकजंद्वन्द्वजंचैवदोषत्रयकृतंचयत् ॥ १०७ ॥
विकारंकोष्ठजंचैवहन्याच्छूलमरोचकम् ।
एषकंचटकोलेहोविधेयोगुडपाकवत् ॥ १०८ ॥

कञ्चटावलेहः ।

अर्थ-कंचट (जलचौलाई) बत्तीस तोले, मुसली बत्तीस तोले, इन दोनोंको १६ सेरजलमें पकावै, जब जल जलकर चारसेर बाकी रहै तब उतारले, पश्चात् इस क्वाथमें बत्तीसतोले मिश्री मिलावै, फिर मजीठ, धायके फूल, पाढ़, बेलगिरी, नागरमोथा, पीपल, इन्द्रयव, अतीस, जवाखार, कालानोन, रसोत और मोचरस, इन प्रत्येकका दोदो तोले चूर्ण मिलावै, शीतलहोनेपर आधशेर सहत मिलावै, इस अवलेहको समय विचारकर खावैतौ-अम्लपित्तविकार, सर्वप्रकारके उदररोग, सर्व प्रकारके अतीसार, संग्रहणी, एकदोषसे उत्पन्नहुआ विकार, दो दोषोंका विकार, तीन दोषोंसे उत्पन्नहुआ विकार, कोष्ठगत विकार, शूल और अरुचि दूरहोवै । यह कंचटावलेह गुड़पाककी तरह बनाना चाहिये ॥ १०३ ॥ १०४ ॥ १०५ ॥ १०६ ॥ १०७ ॥ १०८

धान्यकंधातकीलोध्रसमंगातिविषाशिवा ।
उशीरंमुस्तकंचैवजलमोचरसांजनम् १०९ ॥
बिल्वंनीलोत्पलंपत्रंकेशरंपद्मकेशरम् ।
गुडूचीन्द्रयवश्यामापद्मकंकटुरोहिणी ॥ ११० ॥
तगरंजटिलाभृंगकेशराजंपुनर्नवा ।
आम्रजम्बूकदम्बानांत्वचंकुटजवल्कलम् ॥ १११ ॥

यवानीजीरकंचैवकार्षिकाणिप्रकल्पयेत् ।
तैलप्रस्थंपचेत्तेनतक्रेणान्यतमेनवा ॥ ११२ ॥
कुटजत्वक्कषायेणधन्याकंक्काथितंनवा ।
बुद्ध्वादोषगतिंवैद्योयथास्वौषधवारिणा ॥ ११३ ॥
एतद्रसायनंतैलंवलीपलितनाशनम् ।
हन्तिसर्वानतीसारान्ग्रहणींसर्वजामपि ॥ ११४ ॥
ज्वरंतृष्णांतथाश्वासंतथाहिक्कांवमिंभ्रमिम् ।
सोपद्रवांकोष्ठरुजंनाशयेत्सद्यएवाहि ॥ ११५ ॥
ग्रहणीमिहिरंनामतैलंभुवनदुर्लभम् ॥ ११६ ॥

इतिग्रहणीमिहिरतैलम् ।

इतिग्रंथान्तरस्य ।

अर्थ–धनिया, धायकेफूल, लोध, मजीठ, अतीस, हरड, खस, नागरमोथा, सुगंधवाला, मोचरस, रसौत, बेल, नीले कमलके पत्ते, नागकेशर, कमलकेशर, गिलोय, इन्द्रजो, अनन्तमूल, पद्माख, कुटकी, तगर, जटामांसी, भाँगरा, कुकुरभाँगरा, पुनर्नवा, आमकी छाल, जामनकीछाल, कदम्बकी छाल, कुडेकीछाल, अजवायन, और जीरा, ये प्रत्येक दो दो तोले लेवै, पीछै इन सबका कल्क करै, इस कल्कको और चोसठतोले तेलको तक्रमें अथवा काँजीमें वा कुडेकी छालके क्काथमें अथवा धनियेके क्काथमें मिलाके दोषोंका बलाबल विचार तेलको सिद्ध करै। यह ग्रहणीमिहिरतेल रसायन, बलिपलितनाशक, तथा सर्वप्रकारके अतीसार, सर्व प्रकारकी संग्रहणी, ज्वर, तृषा, श्वाँस, हिचकी, वमन, भ्रम और उपद्रवयुक्त-कोष्ठरोगको दूर करै है। यह ग्रहणीमिहिरतेल त्रैलोक्यदुर्लभ है। ॥ १०९ ॥ ११० ॥ १११ ॥ ११२ ॥ ११३ ॥ ११४ ॥ ११५ ॥ ११६ ॥

प्रस्थत्रयेणामलकीरसस्यशुद्धस्यदत्त्वार्द्धतुलांगुडस्य ।
चूर्णीकृतैर्ग्रन्थिकजीरचव्यव्योषेभकृष्णाहपुषाजमोदैः ११७
विडंगासिन्धुत्रिफलायवानीपाठाग्निधान्यैश्चपलप्रमाणैः ।

दत्त्वात्रिवृच्चूर्णपलानिचाष्टावष्टौचतैलस्यपचेद्यथावत् ११८
तंभक्षयेदक्षफलप्रमाणंयथेष्टचेष्टंत्रिसुगन्धियुक्तम्।
अनेनसर्वेग्रहणीविकाराःसश्वासकासस्वरभेदशोथाः ॥ ११९॥
शाम्यन्तिचायंचिरमन्दवह्नेर्हतस्यपुंस्त्वस्यचवृद्धिहेतुः।
स्त्रीणांचवन्ध्यामयमाहहन्यात्कल्याणकोनामगुडःप्रदिष्टः१२०
त्रिवृतांभर्ज्जयन्त्यत्रमनाक्केचिच्चिकित्सकाः।
अत्रोक्तमानसाधर्म्यात्त्रिसुगंधिपलंपृथक् ॥ १२१ ॥

इतिकल्याणगुडः।

अर्थ-अडतालीसपल आमलेके रसमें पचास पल शुद्धगुड़ मिलावै, पीच्छै पीपरामूल, जीरा, चव्य, त्रिकुटा, गजपीपल, हाऊवेर, अजमोद, वायविडंग, सैंधानोन, त्रिफला, अजवायन, पाढ़, और धनिया, इन प्रत्येकका चूर्ण चार चार तोले मिलावै, तदनंतर निसोतका चूर्ण बत्तीस तोले और तिलका तेल बत्तीस तोले लेकर सबको मिला गुड़ सिद्ध करै, सिद्ध होजानेके पश्चात् त्रिसुगधका चूर्ण मिलाकर बहेड़ेके फलकी समान भक्षण करे तौ-सर्वप्रकारके संग्रहणीरोग, श्वाँस, खांसी स्वरभेद और सूजन दूर होय।तथा बहुतदिनोंकी मन्दाग्नि दीपन होतीहै,पुंस्त्वता बढतीहै और स्त्रियोंका वन्ध्यापन नष्ट होताहै।इस कल्याणगुडमें कितनेक भिषक् निसोतको भूनकर डालतेहैं, और यहाँ त्रिसुगंधि अर्थात् इलायची, दालचीनी और तेजपात, इनप्रत्येकका चार चार तोले अलग अलग चूर्ण मिलाना चाहिये ॥ ११७ ॥ ११८ ॥ ११९ ॥ १२० ॥ १२१ ॥

नागरंपिप्पलीमूलंचित्रकोहस्तिपिप्पली।
श्वदंष्ट्रापिप्पलीधान्यंबिल्वंपाठायवानिका ॥ १२२ ॥
चांगेरीस्वरसेसर्पिःकल्कैरेतैर्विपाचितम्।
चतुर्गुणेनदध्नाचतद्घृतंकफवातनुत् ॥ १२३ ॥
अर्शांसिग्रहणीदोषंमूत्रकृच्छ्रंप्रवाहिकाम्।
गुदभ्रंशार्तिमानाहंघृतमेतद्व्यपोहति ॥ १२४ ॥

हन्तिपिप्पलीचविकातन्त्रान्तरात् ।
दधिसाहचर्याच्चांगेरीस्वरसोपिचतुर्गुणः १२५ ॥

इतिचांगेरीघृतम् ।

अर्थ-सोंठ, पीपरामूल, चीता, गजपीपल, गोखरू, पीपल, धनिया, बेल, पाढ़, और अजवायन, इन सबका चूर्ण चार चार तोले लेवै, और घृत चौसठपल और चांगेरी (नोनिया) का रस दोसौ छप्पनपल लेवै और दोसौछप्पन पल दही लेवै, फिर सबको यथाविधिसे मिलाकर घृत सिद्ध करै । यह घृत-वात, कफ, सर्वप्रकारका अर्श (बवासीर) रोग, संग्रहणी, मूत्रकृच्छ्र, प्रवाहिका, गुदभ्रंश और आनाहरोगको दूर करै है ॥ १२२ ॥ १२३ ॥ १२४ ॥ १२५ ॥

रसगंधकलोहानिशंखटंकणरामठाः
शठीतालीशमुस्तानिधान्यजीरकसैन्धवाः ॥ १२६ ॥
धातक्यातिविषाशुण्ठीगृहधूमंहरीतकीम् ।
भल्लातंतेजपत्रञ्चजातीफललवंगके ॥ १२७ ॥
त्वगेलावालुकंबिल्वंमेथीशक्राशनंसमम् ।
छागीदुग्धेनवटिकारसवैद्येनकारिता ॥ १२८ ॥
गहनानन्दनाथेनभाषितेऽयंरसायने ।
ग्रहणीगजेन्द्रसंज्ञोऽयंश्रीमतालोकरक्षणे ॥ १२९ ॥
ग्रहणींविविधांहन्तिज्वरातिसारनाशिनी ।
शूलगुल्माम्लपित्तानिकामलांचहलीमकम् ॥ १३० ॥
बलवर्णाग्निजननीसेविताचचिरायुषी ।
कुष्ठंकण्डूंविसर्पञ्चगुदभ्रंशंक्रामिंजयेत् ॥ १३१ ॥
मासद्वयंवटीभक्ष्याछागीदुग्धानुपानतः ।
बलाऽग्निबलमावेक्ष्ययुक्त्यावात्रुटिवर्द्धनम् ॥ १३२ ॥

इति ग्रहणीगजेन्द्रवटिका ।

अर्थ-पारा, गंधक, लोहा, शंखचूरा, सुहागा हींग, कचूर, तालीसपत्र,

नागरमोथा, धनिया, जीरा, सैंधानोन, धायकेफूल, अतीस, सोंठ, गृहधूम, हरड़, भिलावा, तेजपात, जायफल, लोंग, दालचीनी, इलायची, सुगंधवाला, बेल और भाँग, इन सबको समानभाग लेकर बकरीके दूधमें पीसकर गोली बना लेवै । यहगोली गहनानन्दनाथने रसायनप्रकरणमें कही हैं । इसको ग्रहणिगजेंद्रवटिका कहते हैं । यहगोली—अनेकप्रकारकी संग्रहणी, ज्वरातीसार, शूल, गुल्म, अम्लपित्त, कामला और हलीमकरोगको नष्ट करैहै । बल-वर्ण-और अग्निजनक है, तथा कोढ़, कण्डू, विसर्प, गुदभ्रंश और कृमिरोगको दूर करैहै । इसको सेवनकरनेसे मनुष्य दीर्घायु होतेहैं । यह दो दो मासेकी गोली बनाकर बकरीके दूधके साथ सेवनकरनी चाहिये, और अग्नि तथा बलको विचारकर मात्राको घटानी बढ़ानीभी चाहिये॥ १२६॥ १२७॥ १२८॥ १२९॥ १३०॥ १३१॥ १३२

इति ग्रहणीरोगचिकित्सा समाप्ता ।

अथार्शश्चिकित्सामाह ।

दुर्नाम्नांसाधनोपायश्चतुर्धापरिकीर्तितः ।
भेषजक्षारशस्त्राग्निसाध्यत्वादाद्यउच्यते ॥ १ ॥
यद्वायोरनुलोम्याययदग्निबलवृद्धये ।
अनुपानौषधंद्रव्यंतत्सेव्यंनित्यमर्शसैः ॥ २ ॥
शालिषष्टिकगोधूमयवान्नसंस्कृतैर्घृतैः ।
दद्यात्क्षीरेणवानित्यंपटोलानांरसेनवा ॥ ३ ॥
मांसैर्मांसरसैर्वापिकन्दवार्ताकुमूलकैः ।
जीवन्त्यपोदिकाशाकैस्तण्डुलीयकवास्तुकैः ॥ ४ ॥
क्षारचित्रकबिल्वानांतैलेनाभ्यज्यबुद्धिमान् ।
यवकोलकुलत्थानांतक्राम्लनवनीतयोः ॥ ५ ॥
शस्त्रैर्वाथजलौकाभिस्तेषांरक्तंचनिर्हरेत् ।
शुष्कार्शसांप्रलेपादिक्रियातीक्ष्णाविधीयते ॥ ६ ॥
स्राविणांरक्तमालोक्यक्रियाकार्यास्रपैत्तिकी ।

स्नुक्क्षीररजनीयुक्तंलेपाद्दुर्नामनाशनम् ॥ ७ ॥
अर्कक्षीरंस्नुहीक्षीरंतिक्ततुम्ब्याश्चपल्लवाः ।
करंजोबस्तमूत्रेणलेपनंश्रेष्ठमर्शसाम् ॥ ८ ॥

करंजस्यत्वक् ।

ज्योत्स्निकामूलकल्केनलेपोवाताऽर्शसांहितः ।
जम्बीरजमौद्भिदंतुकांजिकपिष्टंगुडीत्रयम् ॥ ९ ॥
अर्शोहरंगुदस्थंस्याद्दधिमाहिषमश्नतः ।
शिरीषस्यतुमूलानिलांगलक्यास्तथैवच ॥ १० ॥
एतेननाभिलेपेनसर्वतश्चतुरंगुलात् ।
पतन्त्यर्शांसिसर्वाणिसप्तरात्रान्नसंशयः ॥ ११ ॥
नृकेशाःसर्पनिर्मोकावृषदंशस्यचर्मच ।
अर्कमूलंशमीपत्रंधूपोऽर्शःशूलशान्तये ॥ १२ ॥
विड्बिन्धेर्हिंगुतक्रंयवानीविडसंयुतम् ।
वातश्लेष्मार्शसांतक्रात्परंनास्तीहभेषजम् ॥ १३ ॥
पित्तश्लेष्मप्रशमनीकण्डूकच्छूरुजापहा ।
गुदजान्नाशयत्याशुयोजितासगुडाभया ॥ १४ ॥
तिलभल्लातकंपथ्यागुडश्चेतिसमांशिकम् ।
दुर्नामश्वासकासघ्नंप्लीहपाण्डुरुजापहम् ॥ १५ ॥

अर्थ-औषध, क्षार, शस्त्र और अग्नि, इन चार प्रकारसे अर्शरोगकी चिकित्सा करनी कहीहै, तहाँ साध्य और सरलहोनेसे औषधका उपाय कहतेहैं । जो औषध वायुको अनुलोमनकरनेवाली, तथा अग्निके बलको बढ़ानेवालीहै, वह अर्शरोगीको सेवनकरनी चाहिये । शालिधान्य, साठीधान्य, गेहूँ, और जौ, इनका भोजन घीके साथ, दूध, पटोलरस, मांस, मांसरस, जिमींकन्द, वैंगुन, मुली, जीवंति-

१ ज्योत्स्निका घोषकः । २ औद्भिदं साम्बरिलवणम् । ३ वृषदंशो बिडालः ।

का शाक, पोईका शाक, चोलाईका शाक, वथुएका शाक, जवाखार, चीता, बेल, तेलसे पकायेहुए द्रव्य, जौ, बेर, कुलथी, तक्र और माखन, यह सब अर्शरोगीके लिये हितकारक जानने। अर्शांकुर होनेपर शस्त्र अथवा जोंकके द्वारा रुधिर निकलवाना चाहिये। शुष्क अर्शरोगमें प्रलेपादि तीक्ष्णक्रिया प्रयोगकरनी योग्यहै। रक्त-वहनेवाले अर्शरोगमें रुधिरका विचारकर रक्तपित्तनाशक क्रिया करनी चाहिये। थूहरके दूधमें हलदी मिलाकर लेपकरनेसे बवासीर दूर होतीहै। आकका दूध, थूहरका दूध, कडवीतौबीके पत्ते, और करंजकी छालको बकरेके मूत्रमें पीसकर लेप करनेसे अर्शरोग आराम होताहै। तोरईकी जडको पीसकर लेपकरनेसे बादीकी बवासीर दूर होतीहै। जंभीरी नीबू और सामरको काँजीमें पीसकर तीन गोली बनावै, एकगोली भैंसके दहीके साथ रोज खानेसे बवासीर दूर होतीहै। शिरसकी जड और कलिहारीकी जड़को पीसकर नाभिपर चार अंगुल चारों ओर लेपकरनेसे निःसन्देह सातदिनमें सर्वप्रकारकी बवा-सीरके मस्से गिर जातेहैं। मनुष्यके बाल, साँपकी कैचली, बिलावकी खाल, आककी जड और छोंकरके पत्ते इन सबको एकत्र कर धूप देनेसे अर्शरोगका शूल शांत होताहै। मलबद्ध अर्शरोगमें अजवायन, हींग, विड्नोन, इनको तक्रमें मिलाकर पीना चाहिये, वात तथा कफकी बवासीरमें तक्रसे उत्तमऔषध नहीं है. गुबके साथ हरड़को भक्षण-करनेसे पित्तकफार्श, कण्डू, कच्छू और वेदना नाश होतीहै। तिल, भिलावा, हरड और गुड़, इन सबको समान भाग लेकर सेवनकरनेसे बवासीर, श्वाँस, खासी, ज्वर, प्लीहा और पाण्डुरोग दूर होताहै॥ १ ॥ ॥ २ ॥३॥४॥५॥६॥७॥८॥९॥१० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥

व्योषाग्न्यरुष्करविडंगतिलाभयानां
चूर्णंगुडेनसहितंतुसदोपयोज्यम् ॥
दुर्नामशोथगरकुष्ठविकृद्विबन्धा-
नर्शोंजयत्यबलतांक्रिमिपाण्डुताञ्च ॥ १६ ॥
चूर्णेचूर्णसमोदेयोमोदकेद्विगुणोगुडः।

इतिव्योषादिचूर्णम्।

अर्थ-सोंठ, मिरच, पीपल, चीता, भिलावा, वायविडंग, तिल और हरड़,इन सबका चूर्ण बनावै,उस चूर्णमें गुड़ मिलाकर खानेसे बवासीर, सूजन, विषविकार, कोढ़, मलविबन्ध, बवासीर, निर्बलता, कृमि और पांडुरोग नाश होताहै ॥ १६ ॥

चूर्णमें समानभाग और मोदकमें दुगुना गुड़ मिलाना चाहिये।

त्रिवृत्तेजोवतीदन्तीश्वदंष्ट्राचित्रकंशठी ।
गवाक्षीमुस्तविश्वाव्हदविडंगानिहरीतकी ॥ १७ ॥
पलोन्मितानिचैतानिपलान्यष्टावरुष्करात् ।
षट्पलंवृद्धदारस्यसूरणस्यतुषोडश ॥ १८ ॥
जलद्रोणद्वयेक्वाथ्यंचतुर्भागावशेषितम् ।
पूतन्तुरसंभूयःक्वाथ्यंस्यात्रिगुणोगुडः ॥ १९ ॥
पचेल्लेहन्तुतंतावद्यावद्दर्वीप्रलेपनम् ।
अवतार्यततःपश्चाच्चूर्णानीमानिदापयेत् ॥ २० ॥
त्रिवृत्तेजोवतीकन्दचित्रकान्द्विपलांशकान् ।
एलात्वङ्मरिचंचापिगजाह्वश्चापिषट्पलम् ॥ २१ ॥
द्वात्रिंशच्चपलान्येवंचूर्णंदत्वानिधापयेत् ।
ततोमात्रांप्रयुंजीतजीर्णेक्षीररसाशनः ॥ २२ ॥
पंचगुल्मान्प्रमेहांश्चपाण्डुरोगंहलीमकम् ।
जयेदर्शांसिसर्वाणितथासर्वोदराणिच ॥ २३ ॥
दीपयेद्ग्रहणींमन्दांयक्ष्माणंचापकर्षति ।
पीनसेचप्रतिश्यायेआढ्यवातेतथैवच ॥ २४ ॥
अयंसर्वगदेष्वेवकल्याणोलेहउत्तमः ।
दुर्नामारिरयंनाम्नादृष्टोवारसहस्रशः ॥ २५ ॥
भवत्यनेनंप्रयुञ्जानःशतवर्षंनिरामयः ।
आयुष्योदैर्घ्यजननोवलीपलितनाशनः ॥ २६ ॥

रसायनवरश्चैवमेधाजननउत्तमः।
गुडःश्रीबाहुशालोऽयंदुर्नामारिःप्रकीर्त्तितः ॥ २७ ॥

इतिश्रीबाहुशालोगुडः।

अर्थ-निसोत, तेजबल, दन्ती, गोखुरु, चीता, नरकचुर, इन्द्रायण, नागरमोथा, सोंठ, मोथा, वायविडंग और हरड, यह सब चार चार तोले लेवै, भिलावे बतीस तोले, विधारा चौवीस तोले, और जिमीकन्द चौसठतोले लेवै, पीछे इन सबको ६४चौंसठ सेर अर्थात् ५१२ पांचसौं बारहपल, जलमें पकावै, जब चौथाभाग अर्थात् १६ सोलह सेर (१२८ एकसौ अठाईसपल) जलकर शेष रहै तब उतार लेवै, पश्चात् काथको वस्त्रमें छान रसको फिर चूलेपै चढ़ादेवै, और उसमें तिगुना गुड़ मिलाकर पकावै, जब लेहवत् अर्थात् करछीसे चिपटने लगजाय तब उतारकर निसोत, तेजबल, जमीकन्द और चीता, यह प्रत्येक आठ आठ तोले और इलायची, दालचीनी, कालीमिरच और गजपीपल यह प्रत्येक चौवीस चौवीस तोले लेवै, पीछे इन सबका चूर्णकर मिलादे, इसको अनुमानमाफिक भक्षण करै। औषधिके जीर्णहोनेपर दूध और मांसरस (सोरुआ) का भोजन करै. यह गुड-पाँचप्रकारके गुल्म, सर्व प्रकारके प्रमेह, पांडुरोग, हलीमक, सर्वप्रकारकी बवासीर, सर्व प्रकारके उदररोग, संग्रहणी, राजयक्ष्मा, पीनस, प्रतिश्याय, और आढ्यवातको नष्ट करै है। यह सर्वप्रकारके रोगोंमें हितकारी है। और बवासीरको विशेषकरके विध्वंस करैहै, ऐसे हजारोंवार अजमायाहै। इसको सेवन करनेसे-मनुष्य रोगोंसे छूट १०० सौवर्ष पर्यन्त जीताहै। तथा यह गुड़ आयुको बढ़ानेवाला, वलीपलितनाशक, अवस्थास्थापक, रसायनमें श्रेष्ठरसायन, मेधाजनक और उत्तम है। इसको श्रीबाहुशाल गुड़ कहते हैं और इसका दूसरा नाम 'दुर्नामारि' भीहै ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७॥

कौटजंकल्कमादायपिष्टातक्रेणबुद्धिमान्।
पीत्वारक्तार्शसोरक्तस्रुतिमाशुनियच्छति ॥ २८ ॥
कुटजत्वक्पलशतंजलद्रोणे विपाचयेत्।
अष्टभागावशेषन्तुकषायमवतारयेत् ॥ २९ ॥

वस्त्रपूतंपुनःक्काथ्यंपचेल्लेहत्वमागतम् ।
भल्लातकविडंगानित्रिकटुत्रिफलास्तथा ॥ ३० ॥
रसांजनंचित्रकंचकुटजस्यफलानिच ।
वचामतिविषांबिल्वंप्रत्येकंचपलंपलम् ॥ ३१ ॥
गुडात्पलानित्रिंशच्चचूर्णीकृत्यानिधापयेत् ।
मधुनःकुडवंदद्याद्घृतस्यकुडवन्तथा ॥ ३२ ॥
लेहोऽयंशमयत्यर्शांयस्यरक्तसमुद्भवम् ।
वातिकंपैत्तिकश्चैवश्लैष्मिकंसान्निपातिकम् ॥ ३३ ॥
येचदुर्नामजारोगास्तान्सर्वान्नाशयत्यपि ।
अम्लपित्तमतीसारंपाण्डुरोगमरोचकम् ॥ ३४ ॥
ग्रहणीमार्दवंकार्श्यंश्वयथुंकामलामपि ।
अनुपानंघृतंदद्यान्मधुतक्रंजलंपयः ॥ ३५ ॥
रोगानीकविनाशायकौटजोलेहउच्यते ॥ ३६ ॥
पलस्थानेफलमपिकेचित्पठन्तिअतस्त्वक्फल-
योर्मिलित्वापलशतम् ।फलन्तुरक्तेतियोगिकं दृष्टफलञ्च।

इति कुटजलेहः ।

अर्थ–कुड़ेकी छालको पीसकर मट्ठेके साथ सेवनकरनेसे–रक्तार्श (खूनी बवासीर) दूर होतीहै ॥ २८ ॥ कुडेकी छाल सौपल लेकर चौसठसेर (५१२ तोले) जलमें पकावै, जब जलकर आठमा भाग अर्थात् सोलहसेर क्वाथ शेषरहै, तब उतारले, पीछे वस्त्रमें छानकर फिर चूलेपै चढ़ादेवे, जब पकते पकते लेहकी समान हो जावे, तब भिलावा, वायविडंग, त्रिकुटा, त्रिफला, रसौत, चीता, इन्द्रजौ, वच, अतीस, बेलगिरी, यह प्रत्येक चार चार तोले लेकर चूर्ण बनाकर मिला-देवै, फिर गुड तीसपल, सहत बत्तीसतोले, और घृत बत्तीसतोले, इन सबको मिलादेवै तौ कुटजलेह सिद्ध होजाताहै। यह कुटजलेह–रुधिरकी बवासीर, वातजबवासीर, पित्तज बवासीर, कफजबवासीर, सन्निपातकीबवासीर,सर्वप्रकारकी बवासीर, अम्लपित्त, अतीसार, पाण्डु-

रोग, अरुचि,संग्रहणी, मृदुता, कृशता, सूजन और कामलारोगको दूर करैहै। इसको घृत, मधु, तक्र, जल और दूधके साथ सेवनकरना चाहिये। यह रोगोंके विनाशके अर्थ कुटजलेह कहाहै ॥ २९ ॥ ३० ॥ ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥

इसमें कोई कोई वैद्य पलके स्थानमें फल पढतेहैं इसकारण कुडेकी छाल फलको मिलाकर चारसौ तोले लेते हैं॥

शुद्धसूतंपलैकन्तुद्विपलंशुद्धगंधकम्।
मृतंताम्रंमृतंलौहंप्रत्येकञ्चपलत्रयम् ॥ ३७ ॥
त्र्यूषणंलांगलीदन्तीचित्रकंपुष्करन्तथा।
प्रत्येकंद्विपलंयोज्यंयवक्षारंचटंकणम् ॥ ३८ ॥
उभौपंचपलौयोज्यौसैन्धवंपलपंचकम्।
द्वात्रिंशत्पलगोमूत्रंस्नुहीक्षीरंचतत्समम् ॥ ३९ ॥
मृद्वग्निनापचेत्सर्वंयावत्तच्चसुपिण्डितम्।
मासद्वयंसदाखादेद्रसोह्यर्शःकुठारकः ॥ ४० ॥

इति अर्शःकुठारकोरसः।

अर्थ-शुद्धपारा चारतोले, शुद्धगंधक आठ तोले, ताँबेकी भस्म बारह तोले, लोहेकी भस्म बारह तोले, त्रिकुटा, कलिहारी, दन्ती, चीता, पोहकरमूल, यह प्रत्येक आठ आठतोले, जवाखार,सुहागा और सैंधानोन,यह प्रत्येक वीस वीस तोले, गोमूत्र बत्तीस पल और थूहरका दूध बत्तीस पल, इनसबको एकत्रकर मृदुअग्निसे पकावै, जब पकते २ पिंडकी समान गाढ़ा होजाय तब दोमासेभर सदैव सेवनकरै, इससे सर्व प्रकारकी बवासीर नष्ट होती हैं ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥

मृतसूतस्यचत्वारिपंचगंधकटंकणम्।
त्रिदिनंमर्दयेत्सर्वंद्रवैःश्वेतपुनर्नवैः ॥ ४१ ॥
मूषायांगोलकंतन्तुक्षिप्त्वाताम्रस्यचक्रिके।
रसगन्धसमोरुद्ध्वाचान्धमूषापुटेपचेत् ॥ ४२ ॥
चक्रिकांचूर्णयेत्पश्चादभयाभृंगजैर्द्रवैः।

दिनैकंभावयेत्तस्मिन्सिद्धश्चक्रेश्वरोरसः ॥ ४३ ॥
द्विगुंजंभक्षयेन्नित्यंजयेद्वाताशंसांक्षणात्।
सिन्धूत्थंमागधंवह्निशुण्ठीतक्रैःपिबेदनु ॥ ४४ ॥
भोजनंस्निग्धमूष्णञ्चमर्द्दनञ्चप्रशस्यते।
संजातेह्यतिविष्टम्भेस्नुहीक्षीरेणभावयेत् ॥ ४५ ॥
मरिचात्सततंयुक्तान्निशायाञ्चप्रयोजयेत्।
विडंगंत्रिफलाव्योषंत्रिवृन्मूषिकपर्णिका ॥ ४६ ॥
कम्पिल्लंनलिनीचूर्णंतुल्यंक्षौद्रेणसोलयेत्।
गुडेनसितयावाथवातरोगाणिवैजयेत् ॥ ४७ ॥

इतिचक्रेश्वरोरसः।

अर्थ–पारेकी भस्म चारभाग, गंधक और सुहागा पाँचभाग, इन सबको एकत्रकर तीन दिन विषखपराके रसमें खरलकरै, पश्चात् गोला बनाकर मूषामें रख ताम्रचक्रिकामें मूषाकोधर, अंधमूषापुटमें पकावै, फिर चूर्णकर हरड और भाँगरेके रसमें एकदिन भावना देवैतौ चक्रेश्वररस सिद्ध होवै, इस रसको दो गुंजा प्रमाण नित्यप्रति, भक्षण करनेसे बादीकी बवासीर दूर होतीहै। सैंधानोन, पीपल, चीता और सोठका चूर्ण तक्रमें मिलाकर पीना इसका अनुपान है। इसमें स्निग्ध और उष्णभोजन तथा मर्दनकरना हितकारी है। जो यह रस अत्यन्त विष्टम्भ होजायतो थूहरके दूधमें भिजोकर भक्षण करै, और वायविडंग, त्रिफला, त्रिकुटा, निसोत, मूषाकर्णी, कवीला और कमलिनीका चूर्ण सहतके साथ अथवा गुडके साथ वा मिश्रीके साथ खानेसे वातार्शरोग दूर होता है ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥

मृतसूताभ्रहेमाह्वतीक्ष्णमुण्डञ्चगंधकम्।
मण्डूरस्यसमंताप्यंमर्द्यंकन्याद्रवैर्दिनम् ॥ ४८ ॥
अंधमूषागतंपश्चात्त्रिदिनन्तुतुषाग्निना ॥ ४९ ॥
चूर्णितंसितयामासंखादेत्पित्तार्शसांजयेत्।

रसस्तीक्ष्णमुखोनामअनुस्यान्मधुरत्रयम् ॥ ५० ॥

इतितीक्ष्णमुखरसः।

अर्थ–पारेकी भस्म, अभ्रक, सोना, तीक्ष्णलोहा, मुंडलोहा, गंधक और मण्डूर तथा सोनामाखी इन सबको समानभाग लेकर घीकुवारके रसमें एक दिन मर्दन करै, पीछे अंधमूषापुटमें भूसीकी आगसे तीन दिन पर्यन्त पकावै, फिर चूर्णकरै, उसको एकमासाभर मिश्रिके साथ खावेतौ पित्तकी बवासीर दूरहो, इस तीक्ष्णमुखरसका अनुपान–मिश्री, घृत और सहतहैं ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥

रसवैक्रान्तशुद्धाभ्रकान्तभस्मसगंधकम्।
तुल्यांशंमर्दयेच्चार्द्रदाडिमोत्थैरसैस्ततः ॥ ५१ ॥
भक्षयेन्माषमेकन्तुअर्शसांनाशनोरसः।
अपामार्गस्यबीजानिवह्निशुंठीहरीतकी ॥ ५२ ॥
मुस्ताभूनिम्बतुल्यांशंसर्वतुल्यंगुडम्भवेत्।
कर्षैकंभक्षयेच्चानुजीर्णान्नंभक्तभोजनम् ॥ ५३ ॥

इतिअर्शोहररसः।

अर्थ–पारा, वैक्रान्तमणि, शुद्धअभ्रक, कान्तलोहेकी भस्म, और गंधक यह प्रत्येक समानभाग लेकर अदरख और अनारके रसमें मर्दन करै। इसकी मात्रा एकमासेकी है। अनुपान–चिरचिटेके बीज, चीता, सोंठ, हरड़, नागरमोथा, चिरायता, यह प्रत्येक समानभाग और सबकी समान गुड मिलाकर दो तोले प्रमाण देनेसे सर्वप्रकारकी बवासीर दूर होती है। पथ्य पुराना अन्न और भात है ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥

शुद्धसूतंसमंगन्धंतालसिन्धूत्थलाङ्गली।
फलंतुम्बीफलैकैकंलशुनञ्चचतुष्पलम् ॥ ५४ ॥
कारवेल्याद्रवैर्मर्द्यंदिनैकंवटकीकृतम्।
गुंजामात्रंसदाखादेत्पायुजञ्चापिनाशयेत् ॥ ५५ ॥
रक्तवातकफोत्थानिअर्शांसिनाशयेद्ध्रुवम्।
वटीकनकवतीनामअनुपानंचकथ्यते ॥ ५६ ॥

भल्लातत्रिफलादन्तीवह्निचूर्णसमंसमम्।
सैन्धवंसर्वतुल्यंस्याद्भर्जयेत्खर्परेचिरम्॥ ५७॥
मृद्वग्निनाभवेत्सिद्धंकर्षंतक्रंपिबेन्नरः॥ ५८॥

इति कनकावतीवटी।

अर्थ-शुद्धपारा, शुद्धगन्धक, हरिताल, सैंधानोन, कलिहारीका फल, और तुम्बी, यह प्रत्येक एक एक पल लेवै, और लहसुन चार पल लेवै, पीछै इनसबको करेलेके रसमें एक दिन मर्द्दनकर एक एक रत्तीभरकी गोली बनावै, एक गोली नित्य खानेसे गुदाके रोग, रुधिरकी बवासीर, वातकी बवासीर, और कफकी बवासीर दूर होतीहै। भिलावा, त्रिफला, दन्ती और चीता इनसबका चूर्ण समानभागले और सबकी बराबर सैंधानोन लेवै, पीछे सबको एकत्रकर खिपड़ेमें मृदु अग्निसे बहुतसमयतक भूनकर सिद्धकरै, पश्चात् दो तोले प्रमाण इसको तक्रके साथ भक्षण करै यह अनुपानहै॥ ५४॥ ५५॥ ५६॥ ५७॥ ५८॥

शुद्धसूताभ्रलोहानांमृतगन्धार्कसंयुताम्।
सर्वेषांसमभागन्तुभल्लातंसर्वतुल्यकम्॥ ५९॥
पलमेकंसमादायद्रवैःसूरणकन्दजैः।
मर्द्दयेद्दिनयुग्मञ्चमाषमात्रंदिनेदिने॥ ६०॥
भक्षणाद्धन्तिसर्वेषामर्शांसिचनसंशयः।
असाध्यान्याशुसर्वाणिरसःपंचामृतात्मकः॥ ६१॥
कुष्ठरोगंनिहन्त्याशुमृत्युरोगकुलान्तकः।
मरिचंपिप्पलीशुण्ठीवह्निक्रमगुणोत्तरम्॥ ६२॥
सर्वेषांद्विगुणंयोज्यंसूरणंपेषयेद्दृढम्।
सर्वतुल्योगुडोयोज्यःकर्षैकंभक्षयेदनु॥ ६३॥

इतिपंचामृतरसः।

अर्थ-शुद्धपारा, अभ्रक, लोहा, गंधक, और ताँबा यह सब समान भागलेवै, और भिलावेके बीज सबकी बराबर लेवै, पीछै सबको जिमीकन्दके रसमें दो दिन खरल करै, इसको एकमासेभर प्रतिदिन खानेसे

सर्वप्रकारके अर्शरोग निःसन्देह दूर होते हैं । तथा यह पंचामृतरस असाध्य बवासीर, कोढ, और मृत्युरोगकोभी दूर करै है। इस औषधी-के भक्षणकरनेके बाद एकभाग कालीमिरच, दोभाग पीपल, तीन भाग सोंठ, चारभाग चीता और वीसभाग जमीकन्द लेकर खूब मर्दन करै, पीछै चालीसभाग गुड़ मिलाकर सेवन करै। यह अनुपानहै ॥५९॥ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥

क्रिमिरिपुदहनव्योषत्रिफलामरदारुचव्यभूनिम्बम् ।
मागधिमूलंमुस्तंशठीवचाधातुमाक्षिकंचैव ॥ ६४ ॥
लवणक्षारनिशायुक्कुस्तुम्बुरुगजकणातिविषा ॥ ६५ ॥
कार्षिकान्येवसमानिकुर्यात्पलाष्टकंचाश्मजतोर्विदध्यात् ।
निष्पत्रशुद्धस्यपुरस्यधीमान्पलद्वयंलोहरजस्तथैव ॥६६॥
शिलाचतुष्कंपलमत्रवास्यान्निकुम्भकुम्भात्रिसुगन्धियुक्तम् ।
चन्द्रप्रभेयंगुटिकाप्रयोज्याअर्शांसिनिर्णाशयतिषडेव॥६७॥
भगन्दरंपाण्डुचकामलाश्चनिर्णष्टवह्नेःप्रकरोतिदीप्तिम् ।
हन्त्यामयान्पित्तकफानिलोत्थान्नाडीगतेमर्मगतेव्रणेच६८
ग्रन्थ्यर्बुदेविद्रधिराजयक्ष्मणोमेहेभगाख्येप्रबलेचयोज्या ।
शुक्रक्षयेचाश्मरिमूत्रकृच्छ्रेशुक्रप्रवाहेऽप्युदरामयेच ॥ ६९॥
भक्तस्यपूर्वंसततंप्रयोज्यातक्रानुपानंत्वथमस्तुपानम् ।
आजोरसोजाङ्गलिकोरसोवापयोथवाशीतजलानुपानम्७०
बलेननागस्तुरगोजवेनदृष्ट्यासुपर्णःश्रवणैर्वराहः ।
नपानभोज्येपरिहार्यमस्तिनशीतवातातपमैथुनेच ॥ ७१ ॥
शम्भुंसमभ्यर्च्यकृतप्रणामंप्राप्तागुटीचन्द्रमसःप्रसादात्७२॥
शुक्रदोषान्निहंत्यष्टौप्रमेहानपिविंशतिम् ।
वलीपलितनिर्मुक्तोवृद्धोऽपितरुणायते ॥ ७३ ॥

शिलाजतुशोधनंयथा ।

दशमूलक्वाथउष्णेनालोड्यप्रचण्डातपेप्रस्तरभाज-

नेकांस्येवास्थापयेत् । जर्द्धभूतंदधिसरवन्म-
स्तालिकाग्रहणंकर्त्तव्यम्।तदनुशिवागुटिको-
क्तकाकोल्याद्यष्टविंशतिद्रव्यक्काथेभावनीयम् ।
तदनुसालसारादिगणक्काथेभाव्यम् ।
तदनुत्रिफलाक्काथेभाव्यम् ।
तदनुधान्यपटोलादिक्काथेभाव्यम् ।
तदनुगुलञ्चक्काथेभाव्यम् । तदनुयष्टीमधुक्काथेभाव्यम्।
तदनुलोहचूर्णशिलाजतुगुग्गुलुमिश्रयित्वा
काकोल्यादिशालसारादिक्काथे । तदनुवि-
डंगादिचूर्णैःसंयोज्यधान्यपटोलक्काथेविसृ-
ज्यशिलायांपिष्ट्वाछायाशुष्कावटिकाकार्या ।
भक्षणंरक्तिकांपंचक्रमशः माषकद्वयंयावत् ॥ ७४ ॥

इति चन्द्रप्रभावटिका।

अर्थ-वायविडंग, चीता, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आमला, देवदारु, चव्य, चिरायता, पीपरामूल, नागरमोथा, अमियाहलदी, वच, सोनामाखी, सैंधानोन, जवाखार, हलदी, दारुहलदी, धनिया और अतीस, यह प्रत्येक दोदो तोलेले, शिलाजीत बत्तीसतोले, शुद्ध-गूगल आठ तोले, लोहेका चूर्ण आठ तोले, मिश्री सोलह तोले, वंशलोचन चार तोले, दन्ती, निसोत और त्रिसुगंधि, यह प्रत्येक दोदो तोले लेवै, पीछै सबको एकत्रकर गोली बनावै, इन गोलियोंको चन्द्र-प्रभा कहते हैं। यह चन्द्रप्रभावटिका छैप्रकारकी बवासीर, भगन्दर, पाण्डु, कामला, मन्दाग्नि, पित्तरोग, कफरोग, वातरोग, नाडीव्रण, मर्म-गतव्रण, ग्रंथिरोग, अर्बुदरोग, विद्रधि, राजयक्ष्मा, प्रमेह, योनिरोग, शुक्र-क्षय, पथरी, मूत्रकृच्छ्र, शुक्रप्रवाह और उदररोगको दूर करै है। इसको भोजनसे प्रथम भक्षण करै और भक्षणकरनेके बाद ऊपरसे तक्र तथा दहीका पानी पीवै, वा बकरीका सोरुआ, अथवा जांगलदेशके जीवोंके मांसका रस, या दूध, अथवा शीतलजलका अनुपान करै इसको सेवन

करनेसे—मनुष्य बलमें हाथीकीसमान, वेगमें घोडेकी समान, दृष्टिमें गरुडकी समान और सुननेमें वराहकी समान, होजाता है। इसपै भोजन तथा पीनेका कुछ परहेज नहीं है तथा शीतपवन, आतप और मैथुनकाभी कुछ परहेज नहींहै।

यहगोली—आठप्रकारके शुक्रदोष वीसप्रकारके प्रमेह, और वलीपलित रोगको दूर करैहै,और इसको सेवनकरनेसे वृद्धमनुष्यभी तरुण होजाताहै ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२ ॥७३॥ अब शिलाजीतके शोधनेकीविधि कहतेहैं। शिलाजीतको दशमूलके काढेमें आलोडनकर तीक्ष्णधूपमें पत्थरके अथवा कांसीके बरतनमें करके रखदेवै, जब दहीकी सरकी समान ऊपरको उठकर आजाय तब ग्रहण करै, पीछै काकोली आदि अट्ठाईस औषधियोंके क्वाथमें सातदिन भावना देवै, तदनंतर सालसारादि गणके क्वाथमें भावना देवै, पश्चात् त्रिफलेके क्वाथमें भावनादेवै, तदनंतर धनिये और परवलके क्वाथमें भावना देवै, फिर गुलंछकन्दके क्वाथमें भावना देवै, तत्पश्चात् मूलैठीके क्वाथमें भावना देवै, फिर लोहेका चूरन और गूगल मिलाकर काको-ल्यादि और सालसारादिगणके क्वाथमें भावनादेकर वायविडंगका चूरण मिलाले, पीछे धानिये और परवलके क्वाथमें भावनादेकर सिद्धकरै, इसप्रकार शिलाजीतको शुद्धकर उपरोक्त चन्द्रप्रभावटीमें मिलावै, शिलाजीतको शिलापै पीसकर छायामें सुखाकर गोली बनावै, इन गोलियोंको पाँच रत्तीसे लेकर दोमासे तक भक्षण करै ॥ ७४ ॥

प्रणम्यशंकरंरुद्रंदण्डपाणिमहेश्वरम्।
जितरोगंमनुष्यस्यनारदःपृच्छतेगुरुम् ॥ ७५ ॥
सुखोपायेनहेनाथ शस्त्रक्षाराग्निभिर्विना।
दुर्बलानांचभीरूणांचिकित्सांवक्तुमर्हसि ॥ ७६ ॥
तच्छिष्यवचनंश्रुत्वालोकानांहितकाम्यया।
अर्शसांनाशनंश्रेष्ठंभैषज्यमिदमीरितम् ॥ ७७ ॥
मुण्डवज्रादिलोहानांलोहमन्यतमंशुभम्।
कृत्वानिर्मलमादौतुकुनट्यामाक्षिकेणच ॥ ७८ ॥

पत्तूरमूसकल्केनस्वरसेनाहतस्ततः ।
वह्नौनिक्षिप्यविधिवच्छालांगारेणनिर्धमेत् ॥ ७९ ॥
ज्वालाचतस्यबोद्धव्यात्रिफलायारसेनच ।
ततोविज्ञायगलितंशंकुनोर्द्धेविनिक्षिपेत् ॥ ८० ॥
त्रिफलायारसेपूतेतदाकृष्यविनिर्वपेत् ।
नसम्यग्गलितंयच्चतेनैवविधिनापुनः ॥ ८१ ॥
ध्मातंनिर्वापयेत्तस्मिँल्लोहंतात्रिफलारसे ।
ततःसंशोष्यविधिवच्चूर्णयेल्लोहभाजने ॥ ८२ ॥
लोहेनैवतथापिस्याद्दृशादिश्लक्ष्णचूर्णितम् ।
कृत्वालोहमयेपात्रेमार्गेवालिप्तरन्ध्रके ॥ ८३ ॥
रसैःपंचोपमंकृत्वापाचयेद्गोमयाग्निना ।
पुटानिक्रमशोदद्यात्पृथगेषांविधानतः ॥ ८४ ॥
त्रिफलार्द्रकभृंगाणांकेशराजस्यबुद्धिमान् ।
कन्दमाणकभल्लातवह्नीनांसूरणस्यच ॥ ८५ ॥
हस्तिकर्णपलाशस्यकुलिशस्यतथैवच ।
पुटेपुटेचूर्णयित्वालोहात्षोडशिकंपलम् ॥ ८६ ॥
तन्मानंत्रिफलायाश्चपलेनाधिकमाहरेत् ।
अष्टभागावशिष्टेतुरसेतस्याःपचेद्बुधः ॥ ८७ ॥
अष्टौपलानिदत्त्वाचसर्पिषोलोहभाजने ।
ताम्रेवालौहदर्व्यातुचालयेद्विधिपूर्वकम् ॥ ८८ ॥
ततःपाकविधानज्ञःस्वच्छेचोर्द्धेचसर्पिषि ।
मृदुमध्यादिभेदेनगृह्णीयात्पाकमानतः ॥ ८९ ॥
अभिमंत्र्यविधानेनकृतकौतुकमंगलम् ।
भ्रामरंघृतसंयुक्तंलिहेद्द्वारक्तिकाक्रमात् ॥ ९० ॥
वर्द्धमानानुपानंचगव्यंक्षीरोत्तमंमतम् ।

गव्याभावेऽप्यजायाश्चस्निग्धवृष्यादिभोजनम् ॥ ९१ ॥
सद्योवह्निकरंचैवभस्मकञ्चनियच्छति ।
हन्तिवातंतथापित्तंकुष्ठानिविषमज्वरान् ॥ ९२ ॥
गुल्माक्षिपाण्डुरोगांश्चतन्द्रालस्यमरोचकम् ।
शूलंसपरिणामञ्चप्रमेहमवबाहुकम् ॥ ९३ ॥
श्वयथुंरक्तस्रावञ्चदुर्नामादिविशेषतः ।
बलकृद्बृंहणंचैवभ्रान्तिदंस्वरवर्द्धनम् ॥ ९४ ॥
लाघवंचमनोज्ञञ्चआरोग्यंपुष्टिवर्द्धनम् ।
आयुष्यंश्रीकरञ्चैववयस्तेजस्करस्तथा ॥ ९५ ॥
सश्रीकपुत्रजननंवलीपलितनाशनम् ।
दुर्नामारिरयंनाम्नाहृष्टोवारसहस्रशः ॥ ९६ ॥
निर्मूलंदह्यतेशीघ्रंयथातूलञ्चवह्निना ।
सौकुमार्यस्वकायत्वान्मद्यसेवीसदानरः ॥ ९७
जीर्णमद्यानियुक्तानिभाजनैःसहपाययेत् ॥ ९८ ॥
लावस्तित्तिरिगोंधामयूराःशशकादयः ॥ ९९ ॥
चटकःकलविंकश्चवर्त्तकोहारितालकः ।
श्येनकश्चबृहल्लावोवनाविष्किरकादयः ॥ १०० ॥
पारावतमृगादीनांमांसंजांगलजंतथा ।
मद्गुरोरोहितःश्रेष्ठःशकुलश्चविशेषतः ॥ १०१ ॥
मत्स्यराजाइमेप्रोक्ताहितमत्स्याश्चयेनवा ।
प्रशस्तंवार्ताकफलंपटोलंबृहतीफलम् ।
प्रलम्बाभीरुवेत्राग्रंतातकंतण्डुलीयकम् ।
वास्तुकंकालशाकञ्चकर्णालुकपुनर्नवम् ।
नारिकेलंचखर्जूरंदाडिमंलवलीफलम् ।

शृंगाटकश्चपक्काम्रंद्राक्षातालफलानिच ॥ १०३ ॥
जातीकोषंलवंगंचपूगंताम्बूलपत्रकम् ।
नाश्नीयाल्लकुचंकोलककन्धुबदराणिच ॥ १०४ ॥
जम्बीरंबीजपूरंचकरमर्दकतिन्तिडी ।
आनुपानिचमांसानिकुवरःपुत्तदादयः ॥ १०५ ॥
हंससारसदात्यूहमद्गुकाकबलाहकाः ।
मकन्दकरवीराणिचरणकश्चकलम्बुकम् ॥ १०६ ॥
कूष्माण्डकश्चककोंटकेबुकश्चविशेषतः ।
कञ्चटश्चकदलकंकशेरुंककर्कटीन्तथा ॥ १०७ ॥
विदलानिचसर्वाणिककारादींश्चवर्जयेत् ।
लोहराजस्तथाचायंस्वयंरुद्रेणभाषितः ॥ १०८ ॥
जनानामुपकारायदुर्नामारिरयंध्रुवम् ।
स्थानादपैतिमेरुश्चपृथ्वीपर्योतिवापुनः ॥ १०९ ॥
पतन्तिचन्द्रताराश्चमिथ्यानैववदाम्यहम् ।
ब्रह्मघ्नाश्चकृतघ्नाश्चक्रूराश्चासत्यवादिनः ॥ ११० ॥
वर्जनीयाविदग्धेनभैषज्यगुरुनिन्दकाः ।
रक्तीद्वादशकादूर्द्ध्वंवृद्धिरस्यभयप्रदा ॥ १११ ॥
अत्रजारितस्थालीपुटपाकादिसिद्धंलौहचूर्णं ग्राह्यम् ॥

इतिशंकरमतं लौहम् ।

अर्थ–एकसमय कल्याणरूप, खलोंको रुलानेवाले, दण्डधारी, मनुष्योंके रोगोंके हरनेवाले, जगद्गुरु, महेश्वर ऐसे श्रीमान् शिवजीको नारदजी प्रणामकर पूछते हुए कि–हेनाथ ! शस्त्रक्रिया, क्षारकर्म और अग्निको छोड़कर सुखसहित उपायसे दुर्बल और भीरु (भयभीत) अर्श-रोगवाले रोगियोंकी चिकित्सा कृपाकरके कहिये, तब शिष्य (नारदजी)के वचनोंको सुनकर संसारके प्राणियोंपै अनुग्रहकर शिवजीने अर्शरोगको दूरकरनेवाली यह औषधि कहीहै । मुण्डादि लोहोंमेंसे

एक कोईसा लोहा लेवै, उसको सोनामाखी तथा मैनशिलके द्वारा शुद्ध और निर्मल करै, पछि शालिचशाककी जडके कल्कके स्वरसमें भिजोकर मारे, फिर आगमें रख सालके अंगारोंसे फूंके, पश्चात् फूंककर त्रिफलेके रसमें बुझावै, फिर आगमें रख सालके अंगारोंसे फुंकै, पश्चात् फुंककर त्रिफलेके रसमें बुझावै, इसप्रकार वारंवार आगमें रखकर फुंकै और वारंवार बुझाता जाय, जब गलजाय, तब शंकुसे ऊपरको उठाकर त्रिफलेके रसमें छोड़देवै, जो अच्छे प्रकार नहीं गलेतौ फिर इसी विधिसे वारंवार गलावै, और त्रिफलेके रसमें बुझावै. पीछे, भलेप्रकार सुखाकर लोहेके बरतनमें चूर्णकरै और जो लोहेके बरतनमें अच्छेप्रकार चूर्ण न बनैतौ पत्थरपै पीसकर चूर्ण करै, पश्चात् लोहेके बरतनमें रख मुखबंदकर बरतनको मट्टीके गारेसे लीप सुखावै, फिर उपलोंकी अग्निसे गजपुटमें पचावै, तदनंतर त्रिफला, अदरख, भांगरा, कुकुरभांगरा, मानकन्द, भिलावा, चीता, जिमीकन्द, हस्तिकर्ण, पलाश और थूहर इन प्रत्येकके रसमें अलग अलग भावना देकर गजपुटमें पकावै, और प्रतिपुट चूर्ण बनाता जाय, और सोलहपल लोहेके चूर्णको सोलहपलसे अधिक त्रिफलेके रसमें पुटदेवै, आठभाग बाकी रहे हुए उस त्रिफलेके क्वाथमें फिर इस लोहेको पकावै, फिर इस लोहेके चूर्णको लोहेकी कढ़ाई अथवा तांबेकी कढ़ाईमें चढ़ाकर और उस कढ़ाईमें बत्तीसतोले घी डालकै पकावै, और लोहेकी करछीसे चलाता रहै, इसप्रकार पाकको जाननेवाला वैद्य अच्छेप्रकारसे पकावै, जब तैरकर स्वच्छघी ऊपरको आजाय तब सिद्धजानकर उतार लेवै, इसप्रकार जब लोहा सिद्ध होजाय तब मंत्र पढ़कर और अनेकप्रकारके मंगलरूप उत्सवादिकार्य करकै सहत और घीमें मिलाय एकरत्तीभरके क्रमसे बढ़ाता हुआ खावै और ऊपरसे गायके दूधको पीवै, यह अनुपान है। और जो गायका दूध न मिलै तौ बकरीके दूधको पीवै और वृष्य तथा स्निग्ध भोजन करै। यह लोह–मन्दाग्नि, भस्मकरोग, वातपित्त, कुष्ठ, विषमज्वर, गुल्म, नेत्ररोग, पाण्डुरोग, निद्रा, आलस्य, अरुचि, शूल, परिणामशूल, प्रमेह, अपबाहुक, वात, सूजन, रक्तस्राव, और विशेषकरके बवासीरको दूर करै है। तथा बलको करनेवाला, पुष्टिको करनेवाला, शरीरको हलका करनेवाला, आरोग्य और पुष्टिको बढ़ानेवाला, आयुवर्द्धक, लक्ष्मीदायक, तेजजनक

कांतियुक्तपुत्रोंको उत्पन्न करनेवाला, वली और पलितको हरैहै । यह दुर्नामारिलोह हजारोंवार अजमाया हुआहै । इससे बवासीर ऐसे नाश होतीहै जैसे आगसे रुई जलजातीहै । इसके ऊपर मद्यपान करना निषेधहै परंतु जो मद्यको सदैव सेवन करतेहैं और सुकुमार्य तथा अल्पशरीरवालेहैं वह जीर्णमदिराको भोजनके साथ सेवनकरते रहैं । लवा, तीतर, गोधा, मोर, शशक, चटक, कलविंक, वत्तक, हरियल, श्येणक, बडालवा, और वनमें रहनेवाले विष्किरपक्षी परेवा, जंगलीजीवोंका मांस, मदगुरु, रौहित, शकुल, वैगुन, परवल, कटेरीकाफल. लंबाकद्दू, शतावर, वैंतका अग्रभाग, देवदाड़, चौलाईका शाक, वथुवा, कालशाक, कर्णाल, पुनर्नवा, नारियल, खजूर, अनार, हरफकेवडी, सिंघाड़े, पक्केआम, दाख, ताड़के फल, जायफल, लौंग, सुपारी, और पान, यह सर्वपदार्थ लोहेके सेवनकरनेवाले मनुष्यको हितकारी है और वड़हर, बेर, बडेबेर (पोंडे), झड़वेर, जम्भीरीबीबु, बिजोरानीबू, करोंदा, और इमली, कुरव और पुत्तदाको आदि लेकर अनूपदेशके जीवोंका मांस, हंस, सारस, दात्यूह, सहु, काक, बलाहक, मानकन्द, कनेर, चने, कलम्बुक, पेठा, ककोड़ा, केबुक, कंचट, केला, कसेरु, ककडी, सर्वप्रकारके विदलअन्न, और सर्वप्रकारके ककारादि अन्न, यह सब द्रव्य इस लोहेके सेवनकरनेवालेको त्यागने चाहिये । यह दुर्नामारिलोहराज लोकोंके कल्याणकरनेके लिये श्रीमान् शिवजीने स्वयं कहाहै। श्रीमहादेवजी कहते हैं कि-अपने स्थानसे सुमेरुपर्वत हटजाय, पृथ्वी लौटजाय, चंद्रमा औ नारायण आकाशसे पतित होजाय, जो इस लोहके सेवनकरनेसे बवासिर दूर न होवै तौ । ब्रह्मघाती, कृतघ्नी, क्रूर, असत्यवादी और गुरुनिन्दक ऐसे मनुष्योंको यह लोहा कदापि नहीं देना चाहिये । बारहरत्तीसे अधिक इस लोहेको सेवनकरनेसे भय उत्पन्न होताहै, इसकारण यह बारह रत्तीसे कम सेवनकरना चाहिये, इसमें स्थालीपुटपाकमें सिद्धकिया तथा जारितकिया लोहा लेना चाहिये ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ ९० ॥ ९१ ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ॥ ९४ ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ १०० ॥ १०१ ॥ १०२ ॥ ॥ १०३ ॥ १०४ ॥ १०५ ॥ १०६ ॥ १०७ ॥ १०८ ॥ १०९ ॥ ११० ॥ १११ ॥

त्रिवृच्चित्रकनिर्गुण्डीस्नुहीमुण्डितिकाजटाः ।
प्रत्येकशोऽष्टपलिकाजलद्रोणेविपाचयेत् ॥ ११२ ॥
पलत्रयंविडंगस्यव्योषंकर्षत्रयंपृथक् ।
त्रिफलायाःपलंपंचशिलाजतुपलंन्यसेत् ॥ ११३ ॥
दिव्यौषधिहतस्यापिवैकङ्कतहतस्यवा ।
पलद्वादशकंदेयंरुक्मलौहस्यचूर्णितम् ॥ ११४ ॥
घृताच्चतुर्विंशतिभिर्मधुशर्करयोरपि ।
घनीभूतेषुशीतेचदापयेदवतारिते ॥ ११५ ॥
एतदग्निमुखन्नामदुर्नामान्तकरंपरम् ।
मन्दमग्निंकरोत्याशुकालाग्निसमतेजसः ॥ ११६ ॥
पर्वताअपिजीर्यन्तिप्राशनादस्यदेहिनः ।
गुरुवृष्यानुपानानिपयोमांसरसोघृतम् ॥ ११७ ॥
दुर्नामपाण्डुश्वयथुकुष्ठप्लीहोदरापहम् ।
अकालपलितंचैवआमवातगुदामयम् ॥ ११८ ॥
नसरोगोऽस्तियश्चापिनहिहन्यादिदंक्षणात् ।
करीरकांजिकादीनिककारादींश्चवर्जयेत् ॥ ११९ ॥
स्रवत्यतोऽन्यथालोहंलोहात्किट्टंचदुर्जयम् ॥ १२० ॥

इति अग्निमुखलोहमिति ख्यातम् ।

अर्थ–निसोत, चीता, निर्गुण्डी, थूहर, गोरखमुण्डी, और भुईआमला

१ मुण्डितिकाभण्डिरी जटाभूम्यामलकी त्रिवृदादीनां रसेनापि व्यवहारः क्वाथः पादावशिष्टत्वात् पाकावतारणकाले प्रक्षेपार्थं विडंगादीनां चूर्णम् । त्रिफलाया मिलित्वा पंचपलानि । शिलाजतु शिवागुड़िकोक्तविद्याशोधितम् । दिव्यौषधिः स्वर्णमाक्षिकमनःशिले । शालिंचाशूकशिम्बी वैकङ्कतो वनपालकः । रुक्मलौहं वज्रपाण्डवादितश्च रसायनोक्तक्रमेण जारणपुटनादिसूक्ष्मचूर्णितम् । घृताच्चतुर्विंशतिपलानि मधुशर्करयोश्चतुर्विंशतिमिलित्वा तप्तघृते लौहं ददवा पश्चात् ॥
शर्करासहितंक्वाथंदत्त्वापाकः । अवतारणसमयेविडंगादिचूर्णप्रक्षेपः । पर्युषितेमधु दत्त्वाविसृज्यलौहपात्रेघृतपात्रेवास्थाप्यम् ततोविश्राम्यपश्चादुपविश्यअमृतसारतत्त्वंप्रयोज्यमितिनिश्चलकरः ॥

यह प्रत्येक आठपल लेवै, पीछै चौसठसेर जलमें पकाकर चतुर्थांश काथ बनावै, फिर वायविडंग १२ बारह तोले, सोंठ ६ छै तोले, मिरच छै तोले, पीपल छै तोले, त्रिफला वीस तोले, शिलाजीत ४ चार तोले, सोनामाखी वा मैनशिलसे माराहुआ तथा विंकतके रससे माराहुआ तीक्ष्ण लोह १२ बारह पल लेवै, घृत चौंवीसपल, चीनी २४ चौवीसपल और सहत चौवीसपल लेवै। अब इसके बनानेकी विधि कहतेहैं। प्रथम घृतको कढ़ाईमें गरम करै, पीछै उसमें लोहा मिलाकर पकावै, फिर निसोतादिके काथमें चीनी मिलाकर उपरोक्त लोहेकी कढ़ाईमें छोड़-देवै,पीछै चूलेपैसे उतारकर वायविडंगादिका चूर्ण मिलादेवै, जब बहुत-देर रखनेसे शीतल होजाय तब सहत मिलादेवै, तदनन्तर इसको लोहेके बरतनमें अथवा मिट्टीके चिकने बरतनमें भरकै रख देवै, इसप्रकार यह अग्निमुखलोह बनताहै। यह लोह–बवासीरको विशेषकरकै विध्वंस करै, मन्दाग्निको दीपनकरै, पत्थरको भी जीर्ण करदेवै । इसपै भारी, वृष्य, दूध, मांसरस और घृत यह भोजनकरने चाहिये । यह लोह–बवासीर पाण्डुरोग, सूजन, कोढ़, प्लीहा, उदररोग, अकालमें बालोंका सफेद होजाना, आमवात और गुदारोगको दूर करैहै। संसारमें ऐसा कोईभी नहींहै जो इसके सेवनकरनेसे शांत नहीं होवै। इसपै करीर (बाँसकी कोपल), काँजी और ककारादि सर्वपदार्थ त्यागने चाहिये ॥ ११२ ॥ ॥ ११३ ॥ ११४ ॥ ११५ ॥ ११६ ॥ ११७ ॥ ११८ ॥ ११९ ॥ १२०॥

चव्याःपलाष्टकंदेयंखदिरंचार्द्धमेवच ।
चित्रकस्यपलंपंचतालमूलीचतत्समा ॥ १२१ ॥
त्रिफलाप्रस्थसंयुक्तंजलद्रोणेविपाचयेत् ।
अष्टभागावशेषेणकषायमवतारयेत् ॥ १२२ ॥
आज्यात्पलाष्टकंदेयंरुक्मलौहस्यषोडश ।
पचेत्ताम्रमयेपात्रेसुशीतेचावतारयेत् ॥ १२३ ॥
त्रिवृद्दन्तीविडंगानिपथ्याचामलकानिच ।
शुण्ठीविभीतकीकृष्णाएषांदेयंपलार्द्धकम् ॥ १२४ ॥
शर्करामधुचत्वारिस्निग्धेभाण्डेनिधापयेत् ।

गुरुवृष्यान्नपानानिपयोमांसरसोहितः ॥ १२५ ॥
दुर्नामकुष्ठश्वयथुपाण्डुप्लीहोदरापहम् ।
हृच्छूलेगुदशूलेचपरिणामकृतेहितम् ॥ १२६ ॥
बलवर्णकरंवृष्यमग्निसन्दीपनंपरम् ।
करीरकांजिकंचैवकाकमाचींविवर्जयेत् ॥ १२७ ॥

इतिचव्यादिलोहम् ।

अर्थ—चव्य बत्तीस तोले, खैर सोलह तोले, मुसली वीस तोले और त्रिफला चौसठतोले लेवै, पश्चात् बत्तीससेरजलमें पकावै, जब जलकर क्वाथ आठसेर बाकी रहै तब उतारले, फिर इस क्वाथको तांबेके बरतनमें करले, तिसमें बत्तीसतोले घी और चौसठ तोले तीक्ष्णलोह मिलाकर पकावै, जब पककर शीतल होजाय तब उतारले, पीछे निसोत, दन्ती, वायविडंग, हरड, आमला, सोंठ, बहेडा और पीपल, इन प्रत्येकका चूर्ण दोदो तोले, बूरा सोलह तोले, और सहत सोलह तोले मिलादेवै, पश्चात् चिकने बरतनमें भरके रखदेवै । इसके ऊपर भारी वृष्यभोजन, पान, दूध और मांसरस (सोरुआ) हितकारीहै। यह लोह, बवासीर, कोढ, सूजन, पाण्डु, प्लीहा, उदरोग, हृदयशूल, गुदशूल और परिणामशूलको निर्मूल करैहै, तथा बल, वर्ण और वीर्यको उत्पन्न करैहै, और अग्निको दीपन करै है । इसपै करीर, काँजी और काकमाची (मकोय) त्यागनी चाहिये ॥ १२१ ॥ १२२ ॥ १२३ ॥ ॥ १२४ ॥ १२५ ॥ १२६ ॥ १२७ ॥

स्वच्छपत्रीकृतंलोहंलिप्तंलिप्तंचनिर्वपेत् ।
लवणैर्माक्षिकोपेतैस्त्रिफलाकार्षिकोदके ॥ १२८ ॥
सुसिक्तंलोहमादायपूतंसंचूर्णयेत्नतः ।
पुटैर्यथाव्याधिहरंद्रव्यंसंपादितैःपचेत् ॥ १२९ ॥
पिण्डेनशर्कराक्काथःकलम्ब्याबहुपत्रतः ।
करिकर्णपलाशकलवणैरप्यरुष्करैः ॥ १३० ॥
चतुर्गुणेफलरसेलोहार्द्धघृतयोजितम् ।

पाचयेन्निपुणस्तावद्यावत्सर्पिर्विमुंचति ॥ १३१ ॥
षोडशांशंक्षिपेत्तत्रततःसंशोधितंरसम् ।
राजिकापिण्डमध्येतुव्योषपिंडस्यमध्यगम् ॥ १३२ ॥
गवांमलतुषाम्नौचवस्त्रवत्त्वश्चकांजिकैः ।
सिद्धंसप्ताहमेवन्तुततःसंचूर्णयेत्पुनः ॥ १३३ ॥
चिञ्चाकषायज्येष्ठाम्बुक्षीरानिर्वापितेनतु ।
द्विगुणेनगंधकशिलासुश्लक्ष्णरजसापुनः ॥ १३४ ॥
पादंविडंगमुस्ताग्नित्रिफलाव्योषजंरसः ।
लोहादेकीकृतंपिष्टमनुगुप्तंनिधापयेत् ॥ १३५ ॥
ततोमात्रांप्रयुंजीतयथादोषंयथावयः ।
आहारपरिहारौचलौहान्तरसमानवित् ॥ १३६ ॥
कुलत्थश्चकपोतश्चकरमर्दककांजिके ।
करीरंकारवेल्लंचषट्ककाराणिवर्जयेत् ॥ १३७ ॥
विद्याद्विद्याधरमतंलोहंसर्वगदापहम् ।
नसोऽस्थिरोगःकुक्षिस्थोयामिदंननिहन्तिच ॥ १३८ ॥
नलोपकारान्यर्शांसिसर्वोपद्रववन्तिच ।
अम्लकंग्रहणीमहान्गुल्मानुदरमष्टकम् ॥ १३९ ॥
गुरुपादप्रसादेनख्यातंभुविरसायनम् ।
अत्रस्वच्छामितिशाणादिनिर्मलीकृतम् ॥ १४० ॥
लवणैरितिसैन्धवादिभिः । रसशोधनमाह ।

राजिकेत्यादि । अयमर्थः ।

आदौपिष्टौषधमपिपिण्डमध्येगोलकःकर्त्तव्यः ।
तदनुबाह्यतोराजिकापिण्डकल्केनवेष्टयित्वागुडकःकर्त्तव्यः
तच्चवस्त्राच्छादितामितिवस्त्रेणवेष्टयित्वावस्त्रेणपोटलं

कुर्यात्। तदनुशरावेकृत्वातुषानलेमन्दपाकेपचनीयः।
उष्णःसन्पुनःकांजिकयापाचनीयः।
एवंसप्ताहंशोधनंकृत्वाशोधितश्लक्ष्णगंधकरजसारसान्
द्विगुणेनसहितंमूर्च्छयेत्।
कज्जलिकांकृत्वाइत्यर्थः। गंधकशोधनप्रकारमाह।
चिंचेत्यादि। अयमर्थः।
तत्रगंधकंचूर्णयित्वालौहपात्रेकृत्वाबदरीकाष्ठनिर्धूमाङ्गारे
विधृत्यभावयित्वाप्रथमंतिन्तिडीकषायेतदनुकांजिकेतद-
नुगव्येदुग्धेढालयित्वानिर्वाप्यंपुनरातपेतद्गन्धकंशिलायां
श्लक्ष्णरजःकृत्वातेनरजसामूर्च्छयेत्॥
इतिसम्बन्धः।
तदनुतंकज्जलीकावस्थीकृतरसंप्रक्षिपेत्।
विडंगादिनवद्रव्यानाम्।
इतिविद्याधरलौहम्।

अर्थ–लोहेके स्वच्छ पत्र बनाकर नोन और सहतका लेपकर करकै त्रिफलेके रसमें वारंवार बुझावै, इस प्रकार शुद्धकिया लोहा लेकर चूर्णकरै, उस चूर्णको पुटके द्वारा पकावै, पश्चात् बूराका क्वाथ, कलंबी, सतोना और हास्तिकर्ण, पलाशके पत्ते, नोन और भिलावेके रसमें भावना देकर वारंवार पुटदेवै, फिर चौगुने त्रिफलेके रसमें लोहेसे आधा घी मिलाकर पकावै,जबतक लोहा घृतको न छोड़दे तबतक पकाताही रहै, तदनन्तर उसमें शुद्धपारा सोलहभाग डालकर गोला बनाले, उस गोलेमें राई और त्रिकुटेका चूर्ण मिलाकर वस्त्रमें बाँध सम्पुटमें रख अन्य उपले और भुसकी आगसे पकावै, फिर कांजीमें पकावै, इस प्रकार सातदिनतक पकावै, पश्चात् इसका चूर्णकर और गंधकका चूर्ण इसमे मिला लोहेके पात्रमें रख बेरीकी लकडीकी अग्निसे पकाकर प्रथम इमलीके काढ़ेमें बुझावै, पश्चात् काँजीमें बुझावै, फिर दूधमें बुझावै, पश्चात् धूपमें सुखाकर सिलपै पीस पारेके साथ कज्जली करै, फिर इसमें वाय-

विडंग, नागरमोथा, चीता, त्रिफला और त्रिकुटेका चूर्ण मिलादेवै दोषोंका बलाबल विचारकर इसको देवै । इसपै कुलथी, कबुतर, करोंदा, काँजी, करीर, करेला, यह छैं ककार त्यागने चाहिये । यह विद्याधरलोहा सर्वप्रकारके रोगोंको दूर करैहै, और ऐसा मनुष्यकी कुक्षिमें स्थित कोईभी रोग नहींहै जो इससे दूर नहीं होताहै । इससे सर्वउपद्रवयुक्त बवासीर, अम्लपित्त, संग्रहणी, प्रमेह, गुल्म, और आठ-प्रकारके उदररोग दूर होते हैं । यह गुरुके चरनकमलोंके प्रसादसे उत्तमरसायन पृथिवीमें प्रसिद्ध है ॥ १२८ ॥ १२९ ॥ १३० ॥ ॥ १३१ ॥ १३२ ॥ १३३ ॥ १३४ ॥ १३५ ॥ १३६ ॥ १३७ ॥ १३८ ॥ ॥ १३९ ॥ १४० ॥

इतिअर्शरोगचिकित्सा समाप्ता ।

अथमन्दाग्निचिकित्सामाह ।

मन्दस्तीक्ष्णोऽथविषमःसमश्चेतिचतुर्विधः ।
कफपित्तादिनाधिक्यात्तत्साम्याज्जाठरोऽनलः ॥ १ ॥
जाठरइतिधात्वग्निभूताग्निनिरासार्थम् ।
विषमोवातजोरोगास्तीक्ष्णःपित्तनिमित्तजान् ॥ २ ॥
करोत्यग्निस्तथामन्दोविकारान्कफसम्भवान् ।
समासमाग्नेरशितामात्रासम्यग्विपच्यते ॥ ३ ॥
स्वल्पापिनैवमन्दाग्नेर्विषमपाग्नेस्तुदेहिनः ।
कदाचित्सम्यक्पचतेकदाचिच्चनपच्यते ॥ ४ ॥
मात्रातिमात्राप्यशितासुखंयस्यविपच्यते ।
तीक्ष्णाग्निरितितंविद्यात्समाग्निःश्रेष्ठउच्यते ॥ ५ ॥
समस्यरक्षणंकार्य्यंविषमेवातनिग्रहः ।
तीक्ष्णपित्तप्रतीकारोमन्दश्लेष्मविशोधनम् ॥ ६ ॥
ग्लानिगौरवसाटोपभ्रममारुतमूर्छिता ।
विष्टम्भोऽतिप्रवृत्तिर्वासामान्याजीर्णलक्षणम् ॥ ७ ॥

प्रायेणाहारवैषम्यादजीर्णंजायतेनृणाम्।
तन्मूलोरोगसंघातस्तद्विनाशाद्विनश्यति ॥ ८ ॥

अर्थ-कफकी अधिकतासै मंदाग्नि, पित्तकी अधिकातासै तीक्ष्णाग्नि, वातकी अधिकतासै विषमाग्नि, और वात, पित्त, कफकी समतासै जठराग्निसम अर्थात् समाग्नि होती है; ऐसे चार प्रकारकी जठाराग्नि जाननी। विषमाग्नि वातके रोगोंको, तीक्ष्णाग्नि पित्तके रोगोंको और मन्दाग्नि कफके रोगोंको उत्पन्न करै है और समाग्निवाले मनुष्यके भक्षणकी हुई समान मात्रा भलेप्रकार पचजाती है। मन्दाग्निवाले मनुष्यके भक्षणकी हुई अल्पमात्राभी नहीं पचती है। विषमाग्निवाले मनुष्यके खाई हुई मात्रा कभी पकती है और कभी नहीं पचती है और तीक्ष्णाग्निवाले मनुष्यके अधिक भक्षण कीहुई भी मात्रा तत्काल पचजाती है। इन सर्वमें समाग्निश्रेष्ठ है.समाग्निकी सदैव रक्षा करनी चाहिये,विषमाग्निमें वातको दूरकरना उचित है, तीक्ष्णाग्निमें पित्तको प्रशमनकरना चाहिये और मन्दाग्निमें कफको दूरकरना चाहिये। ग्लानि, शरीरभारी, पेटमें गुडगुड शब्द,भ्रम,वात, मूर्छा, विष्टम्भ और डकारका बहुत आना, यह सब अजीर्णरोगके साधारण लक्षण जानने। आहारकी विषमतासै अजीर्णरोग उत्पन्न होताहै और अजीर्णरोगसे अनेकप्रकारके रोगोंका समूह उत्पन्न होताहै और उस अजीर्णके शांतहोनेसे सर्वरोग नष्ट होजाते हैं ८

त्रिकटुकमजमोदासैन्धवंजीरकद्वेसमधरणघृतानाष्टमोहिंगुभागः
प्रथमकवलभुक्तंसर्पिषाचूर्णमेतज्जनयतिजठराग्निंवातरोगांश्चहन्ति

इतिहिंग्वष्टकम्।

अर्थ-सोंठ, मिरच, पीपल, अजमोद सैंधानोन, जीरा, कालाजीरा, भुनीहुई हींग इन सबको समानभाग लेकर चूर्ण करे, उसचूर्णको घीमें मिलाकर भोजनके प्रथमग्रासमें खावै, इससै जठराग्नि दीपन होतीहै और वातरोग नाश होते हैं ॥ ९ ॥

अन्नमण्डंपिबेदुष्णंहिंगुसौवर्चलान्वितम्।
विषमोऽपिसमस्तेनमन्दोदीप्येतपावकः ॥ १० ॥
क्षुद्बोधनोबस्तिविशोधनश्चप्राणप्रदःशोणितवर्द्धनश्च।

ज्वरापहारीकफपित्तहन्तावातंजयेदष्टगुणोहिमंडः ॥ ११ ॥

इतिहिंगुमंडः।

अर्थ-भातके मांडमें हींग और कालानोन मिलाकर गरम गरमपीनेसे विषमाग्नि और मन्दाग्नि दीपन होजाती है। तथा यह माड-भूखको बढानेवाला, बस्तिशोधक, प्राणरक्षक, रक्तवर्द्धक, ज्वरनाशक, कफपित्त-निवारक और वातको दूर करे है, इसप्रकार इसमें यह आठ गुणहैं॥ ११॥

भोजनाग्रेहितंहृद्यंदीपनंलवणार्द्रकम् ।
हरीतकीभक्ष्यमाणानागरेणगुडेनवा ॥ १२ ॥
सैन्धवोऽपिहितोवापिसातत्येनाग्निदीपनः ।
हरीतकीकणाशुंठीत्रिसमंसमुदाहृतम् ॥ १३ ॥
अग्निसन्दीपनंनृणांत्रिदोषामयनाशनम् ॥ १४ ॥

अर्थ-भोजनकेपूर्व सैंधानोन और अदरखका खाना अग्निदीपन करैहै। हरडको सोंठके साथ अथवा गुड़के साथ वा सैंधवनोनके साथ सेवन-करनेसे जठराग्नि दीपन होतीहै। हरड, पीपल और सोंठ इन तीनोंको समानभाग लेकर चूर्ण करे, उस चूर्णको भक्षण करनेसे अग्निदीपन और त्रिदोष दूर होवे ॥ १४ ॥

सिन्धूत्थपथ्यमगधोद्भववह्निचूर्ण-
मुष्णाम्बुनापिबतियःखलुनष्टवह्निः ।
तस्यामिषेणसघृतेनवरंनवान्नं
भस्मीभवत्यशितमात्रमपिक्षणेन ॥ १५ ॥

इति सैंधवादिचूर्णम् ।

अर्थ-सैंधानोन, हरड़, पीपल, और चीता इनका चूर्ण समानभाग लेकर गरमपानीके साथ पीवे, मांस घृतके साथ नवीन अन्नका भोजन करे। इससे नष्टअग्नि दीपन होजातीहै और भारी भोजन भस्म होजाता है ॥ १५ ॥

अभयानिम्बसंयुक्ताभक्षितानलवृद्धिकृत् ।
दद्रुविस्फोटकांश्चैवनाशयत्याशुदेहिनाम् ॥ १६ ॥

अर्थ-हरडको नीमके साथ सेवनकरनेसे- जठराग्नि बढतीहै, तथा दाह, और विस्फोटक दूर होते हैं ॥ १६ ॥

हिंगुभागोभवेदेकोवचाचाद्विगुणाभवेत्।
पिप्पलीत्रिगुणाचैवशृंगवेरंचतुर्गुणम् ॥ १७ ॥
यवानिकापंचगुणाषड्गुणाचहरीतकी।
चित्रकंसप्तगुणितंकुष्ठंचाष्टगुणम्भवेत् ॥ १८ ॥
एतद्वातहरंचूर्णंपीतमात्रंप्रसन्नया।
पिबेद्दध्नामस्तुनावासुरयाकोष्णवारिणा ॥ १९ ॥
दोषाबद्धमजीर्णन्तुप्लीहानमुदरन्तथा।
अंगानियस्यशीर्य्यन्तिविषंवायेनभक्षितम् ॥ २० ॥
अर्शोहरंदीपनंचश्लेष्मघ्नंगुल्मनाशनम्।
कासंश्वासंनिहन्त्याशुतथैवक्षयनाशनम् ॥ २१ ॥
चूर्णमग्निमुखन्नामनक्वचित्प्रतिहन्यते ॥ २२ ॥

इतिस्वल्पाग्निमुखंचूर्णम्।

अर्थ-हींग एक भाग, वच दोभाग, पीपल तीनभाग, अदरख चारभाग अजवायन पांचभाग, हरड छैभाग, चीता सातभाग और कूठ आठ भागलेवै, पीछे इनसबको कूट पीस चूर्ण बनावे। इस वातनाशक अग्निमुखचूर्णको प्रसन्नानामक मदिराके साथ, अथवा दहीके साथ वा दहीके पानीके साथ, वा सुराके साथ अथवा किंचित् गरमजलके साथ पीनेसे दोषोंसे उत्पन्नहुआ अजीर्णरोग, प्लीहा, उदररोग, गलतेहुवे शरीरको विषका भक्षणकरना, बवासीर, कफ, गुल्म, खाँसी, श्वाँस, और क्षयरोगको, दूर करैहै तथा अग्निको दीपन करैहै ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥

द्राक्षारौचित्रकंपाठाकरंजंलवणानिच।
सूक्ष्मैलापत्रकंभार्गीक्रिमिघ्नंहिंगुपुष्करम् ॥ २३ ॥
शठीदार्वीत्रिवृन्मुस्तंवचाचेन्द्रयवास्तथा।
धात्रीजीरकवृक्षाम्लंश्रेयसाचोपकुंचिका ॥ २४ ॥

अम्लवेतसमम्लीकायवानीसुरदारुच ।
अभयातिविषेइयामाहपुषारग्वधंसमम् ॥ २५ ॥
तिलमुष्ककशिग्रूणांकोकिलाक्षपलाशयोः ।
क्षाराणिलोहकिट्टञ्चतप्तंगोमूत्रसेवितम् ॥ २६ ॥
समभागानिसर्वाणिश्लक्ष्णचूर्णानिकारयेत् ।
मातुलुंगरसेनैवभावयेच्चदिनत्रयम् ॥ २७ ॥
दिनत्रयन्तुशुक्तेनआर्द्रकस्वरसेनवा ।
अत्यग्निकारकंचूर्णप्रदीताग्निसमप्रभम् ॥ २८ ॥
उपयुक्तंविधानेननाशयत्यचिराद्गदान् ।
अजीर्णकमथोगुल्मंप्लीहानंगुदजानिच ॥ २९ ॥
उदराण्यन्त्रवृद्धिञ्चअष्ठीलांवातशोणितम् ।
प्रणुदत्युल्बणान्रोगान्नष्टवह्निञ्चदीपयेत् ॥ ३० ॥
समस्तव्यञ्जनोपेतंभक्तंदत्त्वासभाजने ।
दापयेदस्यचूर्णस्यबिडालपदमात्रकम् ॥ ३१ ॥
गोदोहमात्रात्तत्सर्वंद्रवीभवतिसोष्मकम् ॥ ३२ ॥

इतिबृहदग्निमुखंचूर्णम् ।

अर्थ–सज्जी, जवाखार, चीता, पाड, करंज, पंचलवण, छोटी-इलायची, तेजपात, भारंगी, वायविडंग, हींग, पोहरमूल, कचूर, दारुहलदी, निसोत, मोथा, वच, इंद्रजों, आमला, जीरा, विषांविल, रास्ना, कलौंजी, अमलवैंत, इमली, अजवायन, देवदारु, हरड़, अतीस, पीपल, हाऊबेर, अमलतास, तिलोंकाखार, मोखेकाखार, सैंजिनेना खार, तालमखानेका क्षार, ढ़ाकका खार, और गोमूत्रमें शुद्ध कीई हुई लोहेकी कीट इन सबको समानभाग लेलर बारीक चूर्णबनावै, पीछे इस चूर्णको विजोरे नींबूके रसमें तीनदिन भावना देवै, फिर तीनदिन काँजी अथवा अदरखके रसमें भावना देवै तो बृहदग्निमुखचूर्ण बनजाताहै। यह बृहदग्निमुखचूर्ण–अत्यन्त अग्निकारक है।इसको उपयुक्त मात्राके अनुसार सेवनकरनेसे बहुतदिनोंके रोग नष्ट होते हैं, तथा अजीर्ण, गुल्म,

प्लीहा, गुदाकेरोग, उदररोग, अन्त्रवृद्धि, अष्ठीला, और वातरक्तरोग दूर होताहै। और नष्टअग्निकों दीपन करैहै। सम्पूर्णव्यञ्जनोंयुक्त भातको बरतनमें रख पश्चात् उसमें दोतोले भर इस चूर्णको डालकर खानेसे गोदोहनकाल अर्थात् शिघ्रखाया भोजन द्रवी अर्थात् पचजाता है ॥२३॥ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

पिप्पलीपिप्पलीमूलंधान्यकंकृष्णजीरकम्।
सैन्धवंचविडंचैवपत्रंतालीशकेशरम् ॥ ३३ ॥
एषांद्विपलिकान्भागान्पंचसौवर्चलस्यच।
मरीचाजाजीशुंठीनामेकैकस्यपलंपलम् ॥ ३४ ॥
त्वगेलाचार्द्धभागेनसामुद्रात्कुडवद्वयम्।
दाडिमात्कुडवश्चैवद्वेपलेचाम्लवेतसात् ॥ ३५ ॥
एतच्चूर्णीकृतंसूक्ष्मंगन्धाढ्यममृतोपमम्।
लवणंभास्करन्नामभास्करेणविनिर्मितम् ॥ ३६ ॥
जगतान्तुहितार्थायवातश्लेष्मभयापहम्।
वातगुल्मंनिहन्त्येतद्वातशूलानियानिच ॥ ३७ ॥
तक्रमस्तुसुरासीधुशुक्तकांजिकयोजितम्।
जांगलानान्तुमांसेनरसेषुविविधेषुच ॥ ३८ ॥
अर्शांसिग्रहणीदोषंकुष्ठामयभगन्दरान्।
हृद्रोगमामदोषांश्चविविधानुदरास्थितान् ॥ ३९ ॥
प्लीहानमश्मरीञ्चैवश्वासकासोदरक्रुमीन्।
विशेषतःशर्करादीन्रोगान्नानाविधानपि ॥ ४० ॥
पाण्डुरोगांश्चविविधान्नाशयत्यशनिर्यथा ॥ ४१॥

इतिभास्करलवणम्।

अर्थ–पीपल, पीपलामूल, धनिया, कालाजीरा, सैंधानोन, विडलोन, तेजपात, तालीशपत्र, नागकेशर, यह प्रत्येक आठ आठ तोले, काला लोन वीस तोले, कालीमिरच, जीरा, सोंठ, यह प्रत्येक चार चार तोले,

दालचीनी और इलायची दोदो तोले, समुद्रनोन बत्तीस तोले, अनार, दाना सौ तोले और अमलवैंत आठ तोले इन सबको महीन पीसकर चूर्ण बनावे तो भास्करलवण सिद्धहो । यह भास्करलवण श्रीमान् भास्कराचार्य्यजीने संसारके उपकारार्थ निर्माण कियाहै। यह भास्करलवण– वातरोग, कफरोग, वातगुल्म और वात-शूलको नष्ट करैहै । इसपै तक्र, दहीकापानी, सुरा, सीधु, शुक्त और कांजी, तथा जांगलदेशके जीवोंके मांसका रस यह अनुपानहै ।

यह लवणभास्कर-सर्वप्रकारकी बवासीर, संग्रहणीरोग, कोढरोग, भगन्दर, हृदयरोग, आमदोष, अनेकप्रकारके उदररोग, प्लीहा पथरी, श्वास, खासी, उदरोग, कृमि, विशेषकरकै शर्करादिरोग और पाण्डुरोगको दूर करै है ॥

शुंठीकणामरिचंनागदलत्वगेलं
चूर्णीकृतंक्रमवर्द्धितमूर्द्धमन्त्यात् ।
खादेदिदंसमशितंगुदजाग्निमान्द्य-
कासारुचिश्वसनकण्ठहृदामयेषु ॥ ४२ ॥

इति समशर्करचूर्णम् ।

अर्थ–सोंठ सातभाग, पीपल छै भाग, कालीमिरच पांचभाग, नागकेशर चार भाग, तेजपात तीनभाग, दालचीनी दोभाग और इलायची एकभाग लेवै पीछे सबको एकत्र कूट पीसकर चूर्णकरे, फिर सबचूर्णकी समान खांड़ मिलाकर खानेसे–मंदाग्नि, खाँसी, अरुचि, श्वाँस, कण्ठरोग और हृदयरोग दूर होता है ॥ ४२ ॥

हरीतकीधान्यतुषोदसिद्धासपिप्पलीसैन्धवहिंगुयुक्ता ।
सोद्गारधूमंभृशमप्यजीर्णविजित्यसद्योजनयेत्क्षुधाञ्च४३
विष्टम्भेस्वेदनंपथ्यंपेयञ्चलवणोदकम् ।
रसशेषेदिवास्वप्नोलंघनंवातवर्द्धनम् ॥ ४४ ॥
व्यायामप्रमदाऽध्ववाहनवतःक्लान्तानतीसारिणः
शूलश्वासवतस्तृषापरिगतान्हिक्कामरुत्पीडितान् ।
क्षीणान्क्षीणकफान्हिशूलजमदान्वृद्धान्रसाजीर्णितान्
रात्रीजागरितान्निरान्निरशनान्कामंदिवास्वापयेत् ॥४५॥

आलिप्यजठरंप्राज्ञोहिंगुसैन्धवत्र्यूषणैः।
दिवास्वप्नंप्रकुर्वीतसर्वाजीर्णप्रणाशनम् ॥ ४६ ॥
धान्यनागरसिद्धञ्चतोयंदद्याद्विचक्षणः।
आमाजीर्णप्रशमनंदीपनंबस्तिशोधनम् ॥ ४७ ॥
पथ्यापिप्पलिसंयुक्तंचूर्णसौवर्चलंपिबेत्।
मस्तुनोष्णोदकेनाथबुद्ध्वादोषगतिंभिषक् ॥ ४८ ॥
चतुर्विधमजीर्णञ्चमन्दानलमथारुचिम्।
आध्मानंवातशूलंचगुल्मंचाशुनियच्छति ॥ ४९ ॥
भवेदजीर्णंप्रतियस्यशंका स्निग्धस्यजन्तोर्बलिनोन्नकाले।
पूर्वंसशुंठीमभयामशंकोभुंजीतसंप्राश्यहितंहितार्थी ॥५० ॥
सिन्धूत्थहिंगुत्रिफलायवानीव्योषैर्गुडांशैर्गुटिकान्प्रकुर्य्यात्।
तैर्भक्षितैःसुतिमवाप्नुवन्वाभुञ्जीतमन्दाग्निरपिप्रभूतम् ॥५१॥
विडंगभल्लातकचित्रकामृताःसनागरास्तुल्यगुडेनसर्पिषा।
निहन्तियेमन्दहुताशनान्वाभवन्तितेवाडवतुल्यवह्नयः ॥५२

अर्थ–हरडको धान्यतुषोदक नामवाली काँजीमें सिद्धकर भक्षणकरनेसे अथवा पीपल, सैंधानोन और हींग इन तीनोंका एकत्र चूर्णकर खानेसे डकार और धुँआयुक्त अजीर्ण दूर होता है और भूँख उत्पन्न होतीहै। विष्टम्भाजीर्णमें स्वेद और लवणोदक प्रयोगकरना योग्यहै। रसशेषाजीर्णमें दिनमें सोना, लंघन और वातवर्द्धक द्रव्य सेवनकरने चाहिये. व्यायाम (दंडकसरत) स्त्रीप्रसंग, मार्गचलने और वाहन (सवारी) के दौडानासै थके हुवे मनुष्यको, अतिसार, शूल, श्वास, तृषा, हिक्का, और वातपीडित मनुष्यको, तथा क्षीण, क्षीणकफ,शूल और मदसै पीडित, वृद्ध, रसाजीर्णरोगी, रात्रीका जगाहुआ और लंघितमनुष्यको दिनमें सोना चाहिये। हींग, सैंधानोन, सोंठ मिरच, पीपल इन सबको बारीक पीस पेटपै लेपकरे और दिनमें सोवे तो सबप्रकारके अजीर्ण दूर होतेहैं।

धनिया और सोंठ डालकर औटाया हुवा जल पीनेसे आमाजीर्ण

शांत होता है और यह जल दीपन और बस्तिशोधक है। हरड, पीपल और कालानोन इनको कूट पीसकर चूर्णकरे, पीछे उस चूरनको दहीके पानीके साथ अथवा गरमजलके साथ दोषोंकी गतिको जानकर पीनेसे चारों प्रकारके अजीर्ण, मन्दाग्नि, अरुचि, आध्मान, वातशूल और गुल्मरोग दूर होता है। स्निग्ध और बलवान् मनुष्यके अन्नकालमें जो अजीर्णकी शंका होवेतो प्रथम सोंठ, हरड इनके चूर्णको शीतलजलके साथ पीकर पश्चात् हितकारी भोजन करेतो कुछ भय नहीं है। सैंधव, लवण, हींग, त्रिफला, अजवायन, त्रिकुटा, इनका चूर्ण बनावे, पीछे उसको गुडमें मिलाकर गोली बनाकर खानेसे, अजीर्ण और मन्दाग्नि दूर होती है। वायविडंग, भिलावा, चीता, हरड और सोंठ इनके चूरनको गुड और घीके साथ भक्षणकरनेसे मन्दाग्नि नष्ट होकर वडवानलकी समान जठराग्नि होजाती है ॥ ५१ ॥ ५२ ॥

रसरत्नाकरे।

शुद्धसूतंविषंगंधंप्रातिनिष्कंत्रयंत्रयम्।
मरिचंसर्वतुल्यंस्यात्कण्टकारिफलद्रवैः ॥ ५३ ॥
मर्दयेद्भावयेत्तेनभावनाचैकविंशतिः।
देयागुंजाद्वयंखादेत्सर्वाजीर्णप्रशान्तये ॥ ५४ ॥
विषूचिकांनिहन्त्याशुरसोह्यग्निकुमारकः ॥ ५५ ॥

इतिअग्निकुमाररसः।

अर्थ–शुद्धपारा, गंधक, विष, यह प्रत्येक बारह बारह मासे लेवे और काली मिरच सबकी बराबर लेवे, पीछे कटेरीके फलोंके रसमें २१ भावना देकर मर्दन करे तो अग्निकुमाररस सिद्धहो, इसको दोरत्तीभर भक्षण करे, इससै सर्वप्रकारके अजीर्णरोग और विषूचिका रोग नाश होतीहै ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥

रसगंधकमभ्रञ्चगुडूचीसत्त्वमेवच।
विडंगंमरिचंचैवसर्वमेकत्रकारयेत् ॥ ५६ ॥
आर्द्रकस्यरसेनापिगुटिकांकारयेद्बुधः।
भक्षयेन्मासमात्रन्तुअम्लतोयानुपानतः ॥ ५७ ॥

अग्निश्चकुरुतेदीप्तंसामाजीर्णप्रणाशनम् ॥ ५८ ॥

इतिवारिभक्तवटिका।

अर्थ-पारा, गंधक, अभ्रक, गिलोयका सत्व, वायविडंग और कालीमिरच इन सबका एकत्र चूर्ण करे, पीछे अदरखके रसमें मर्दनकर गोली बनावे। इसको एकमासेभर खावे और ऊपर कांजी पीलेवै तो अग्नि दीपनहो और आमाजीर्ण नष्ट होवे ॥ ५८ ॥

रसगंधकमभ्रंचत्र्यूषणंत्रिफलात्वचम्।
यवानीशतपुष्पाचचविकाजीरकद्वयम् ॥ ५९ ॥
प्रत्येकंपलमेकन्तुघण्टाकर्णपुनर्नवा।
माणकंग्रन्थिकन्दंचकेशराजःसुदर्शनः ॥ ६० ॥
दण्डोत्पलंत्रिवृद्दंतीसूर्य्यावर्त्तकचित्रकैः।
भृंगापामार्गकुलिशमण्डूराणांपलार्द्धकम् ॥ ६१ ॥
आर्द्रकस्यरसेनाथगुटिकाःसंप्रकल्पयेत्।
षण्माषप्रमिताश्चैकांभक्षयित्वाभवेदनु ॥ ६२ ॥
वारिभक्तजलंचैवप्रातरुत्थायमानवः।
वटीक्षुधावतीनामसर्वव्याधिविनाशिनी ॥ ६३ ॥
अग्निश्चकुरुतेदीप्तंभस्मकंचनियच्छति।
अम्लपित्तश्चशूलश्चपरिणामकृतंचयत् ॥ ६४ ॥
तत्सर्वनाशयत्याशुभास्करस्तिमिरंयथा ॥ ६५ ॥

इति क्षुधावतीवटिका।

अर्थ-पारा, गंधक, अभ्रक, त्रिकुटा (सोंठ, मिरच, पीपल,) त्रिफला (हरड, बहेडा, आमला) दालचीनी, अजवायन, सौंफ, चव्य, जीरा, कालाजीरा यह प्रत्येक एक एक पल अर्थात् चार चार तोले, घण्टाकर्ण, पुनर्नवा, मानकंद, ग्रन्थिकंद, कुकुरभांगरा, सुदर्शन, दण्डोत्पल, निसोत, दंती, सूर्य्यावर्त्त, चीता, भांगरा, चिरचिटा, हाड़जोडा और मण्डूर यह प्रत्येक दो दो तोले लेवे, पीछे इन सबको एकत्रकर अदरखके रसमें मर्दनकरके छै छै मासेकी गोली बनालेवे। इसको नित्य-

प्रति प्रातःकाल उठकर सेवनकरे। पश्चात् इसके ऊपर भातका माड पीवे यह क्षुधावतीनामावली वटी-सर्वव्याधिविनाशक, अग्निको दीपन-करनेवाली, भस्मकरोगको हरनेवाली, तथा अम्लपित्त, शूल और परिणामशूलको नष्ट करै है, जैसे सूर्य्य अंधकारको नष्ट करै हैं ॥६५॥

शुद्धसूतंमृतंगंधंत्रिक्षारंपटुपंचकम् ।
दशकंतुल्यतुल्यांशंभार्जितंविषयापिच ॥ ६६ ॥
दशानांतुल्यभागानांतस्यार्द्धंशिग्रुमूलकम् ।
तत्सर्वंविजयाद्रावैःशिग्रुचित्रकभृंगजैः ॥ ६७ ॥
द्रवैर्दिनद्वयंमर्द्यंरुद्धाभांडेपचेल्लघु ।
दीप्ताग्निनातुयामैकंशुद्धंपाच्यंसमुद्धरेत् ॥ ६८ ॥
सप्तधाचार्द्रकद्रावैश्चित्रकैर्भावयेद्भिषक् ।
दीप्यकोऽग्निकुमारोयंनिष्कैकंमधुनालिहेत् ॥ ६९ ॥
प्रातिकर्षंगुडंशुंठीमनुस्यादग्निदीपनः ॥ ७० ॥

इति अग्निकुमाररसः ।

अर्थ-शुद्धपारा, शुद्धगंधक,सज्जी,जवाखार,सुहागा,कालानोन,सैंधानोन, सामरनोन, विड्लोन खारीनोन, यह प्रत्येक एक एक भाग,अतीस दश भाग और सैजिनेकी जड़ पांचभाग लैवै, पीछे सबको एकत्र कर भांगके रसमें,सैजिनेके रसमें,चीतेके रसमें,और भांगरेके रसमें दोदो दिन खरलकरे, फिर लघुपुटमें दीप्ताग्निके द्वारा एक प्रहर पकावे,फिर उसमेंसे निकालकर अदरखके रसमें सातवार भावनादेवे और सातभावना चीतेके रसमें देवे तो अग्निकुमाररस तैय्यार हो। इसको चार मासे भर लेकर सहतके साथ चाटे, इससे सर्वप्रकारकी मन्दाग्नि आदि दोष नष्ट होतेहैं। इसके अन्तमें दो तोले गुड़ और दो तोले सोंठ दोनों मिलाकर खाने चाहिये ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥

मृतसूतंचतुर्भागंभागैकंमृतहेमकम् ।
अष्टभागंशुद्धगन्धंदिनैकंचित्रकैर्द्रवैः ॥ ७१ ॥
मर्दितंशोधितंचूर्णंवराटींतेनपूरयेत् ।

टंकणेनमुखंरुद्धाभाण्डमध्येनिरोधयेत् ॥ ७२ ॥
शुष्कंगजपुटेपच्यात्स्वांगशैत्यंविचूर्णयेत् ।
चतुर्गुंजाकणाक्षौद्रंलेह्यमग्निप्रदीपनम् ॥ ७३ ॥
समंक्षौद्रार्द्रकद्रावैःपलार्द्धंपालयेदनु ।
वैरोचनोरसोनामसर्वरोगकुलान्तकृत् ॥ ७४ ॥

इतिवैरोचनरसः ।

अर्थ-पारेकी भस्म चारभाग, सोनेकी भस्म एकभाग, आठभाग शुद्ध गंधक इन तीनोंको एकदिन चीतेके रसमें मर्दन कर कौडीमें भरदेवे और कौडीका मुख सुहागेसै बंदकर देवे, पश्चात् उस कौडीको भांडमें रख मुखबंदकर धूपमें सुखा गजपुटमें पचावे, शीतलहोनेपर चूर्ण करले।इसको चाररत्ती भर लेकर पीपलका चूर्ण और सहत मिला चाटे, इससे अग्नि दीपन होतीहै। इसके अंतमें सहत दो तोले और अदरखकारस दो तोले मिलाकरपीवै, यह अनुपान है। यह वैरोचननामवाला रस सर्वरोगनाशकहै ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥

रसेन्द्रगंधौसहटंकणेनसमंविषंयोज्यमिहात्रिभागम् ।
कपर्दकंशंखमिहात्रिभागंमरीचमत्राष्टगुणंप्रदेयम् ॥७५॥
सुपक्वजम्बीररसेनघर्त्रंसिद्धोभवेदग्निकुमारएषः ।
विषूचिकांजीर्णसमीरणार्त्तेदद्याद्विबन्धेग्रहणीगदेच ॥ ७६ ॥

इतिअग्निकुमाररसः ।

अर्थ-पारा,गंधक, सुहागा यह सब एक २ भागले, विष तीनभागले, कौड़ीकी भस्म और शंखकी भस्म तीनभागले, कालीमिरच आठ भागलेवे, पश्चात् सबको एकत्रकर पकेहुवे जम्भीरीनिबुओंके रसमें खरल करे तो अग्निकुमाररस तय्यार होताहै। यह अग्निकुमाररस-विषूचिका, अजीर्ण, वातरोग, विवन्ध, और संग्रहणीरोगमें देनाचाहिये ॥७५॥७६॥

शुद्धसूतंविषंगंधमजमोदाफलत्रयम् ।
स्वर्जिकाक्षारंयवक्षारंवह्निसैन्धवजीरकम् ॥ ७७ ॥

सुवर्चलंविडंगानिसामुद्रंत्र्यूषणंसमम् ।
विषमुण्डीसर्वतुल्यंजम्बीराम्लेनपेषयेत् ॥ ७८॥
मरीचाभंवटींखादेद्वह्निमान्द्यप्रशान्तये ।
पथ्याशुंठीगुडंचानुपलार्द्धंभक्षयेत्सदा ॥ ७९ ॥
कणामूलंकणावह्नित्रिवृद्दन्तीपलंपलम् ।
सर्वतुल्यामृताशुण्ठीगुडेनकृतमोदकम् ॥ ८० ॥
कर्षैकंगोलकंखादेद्दीपनंकुरुतेक्षणात् ।
रसभस्मसमंगन्धंधात्रीद्विगुणटंकणम् ॥ ८१ ॥
दिनंजम्बीरजैर्द्रावैर्मर्द्यंपूर्य्यावराटिका ।
रुद्धागजपुटेपच्याद्यथावैरोचनोरसः ॥ ८२ ॥
तथाकुर्य्याच्चरोगाणांफलंतद्वन्नसंशयः ।
कुमारीसैन्धवश्चानुलेहयेदग्निदीपनम् ॥ ८३ ॥
पलैकंमूर्च्छितंसूतंमरीचंहिंगुजीरकम् ।
प्रतिकर्षवचाशुंठीतत्सर्वंभृंगजैर्द्रवैः॥ ८४ ॥
दिनंमर्द्यंलिहेन्माषंमधुवह्निदिनेपिबेत् ।
कर्षैकंभक्षयेच्चानुदाडिमंनागरंगुडम् ॥ ८५ ॥
कणामूलंकणाशुंठीचव्यवह्निसमंसमम् ॥
सर्वतुल्यांपचेल्लाजांपेयांमन्दाग्निशूलनुत् ॥ ८६ ॥
मुस्तधन्याककर्षैकंपचेल्लाजाःपलैर्जलैः ।
दीपनीयाचपेयाचपथ्यंस्यादग्निमान्द्यके ॥ ८७ ॥
द्विपलंशुद्धताम्रन्तुशुद्धसूतंपलत्रयम् ।
पिष्टंजम्बीरजैर्द्रावैःकुर्य्यात्खल्वेभिषग्वरः ॥ ८८ ॥
गन्धकश्चमृतंतत्रप्रत्येकंपलपंचकम् ।
कज्जलीकृत्यसर्वंश्चभावयेन्निम्बकद्रवैः ॥ ८९ ॥

चूर्णितंपिष्टिकापृष्ठेक्षिपेच्चनिम्बकद्रवैः ।
घर्मेदिनाष्टकभाव्यंद्रवंदेयंपुनपुनः ॥ ९० ॥
भृंगाद्रावैरुयहंभाव्यंत्रिवारस्यार्द्रकद्रवैः ।
त्रिधामृतारसेभाव्यंरसमाग्निकुमारकम् ॥ ९१ ॥
रसंगुञ्जात्रयंखादेदग्निमान्द्यप्रशान्तये ॥ ९२ ॥

इतिअग्निकुमाररसः ।

अर्थ-शुद्धपारा, विष, गंधक, अजमोद, त्रिफला, सज्जी, जवाखार, चीता, सैंधानोन, जीरा, कालानोन, वायविडंग, समुद्रनोन और त्रिकुटा यह सब समान भाग,और कुचला सबकी बराबर लेवे, पीछै सबको एकत्र कर जम्भीरी नीबुके रसमें खरल करे, काली मिरचकी बराबर गोली बनावे, प्रतिदिन एकगोली खानेसे मंदाग्नि नष्ट होतीहै। इसके अंतमें हरड, सोंठ और गुड मिलाकर दोतोलेभर खाय यह अनुपानहै। पीपरामूल, पीपल, चीता, निसोत और दंती यह प्रत्येक चार चार तोले, गिलोय वीसतोले और सोंठ वीस तोले लेवे,पीछै सबको एकत्र कूट पीसकर चूर्ण करे, इस चूर्णमें गुड़ मिलाकर दोदो तोलेभरके लड्डू बनावे, एक लड्डू प्रतिदिन खानेसै अग्नि प्रदीप्त होतीहै। पारेकीभस्म, गंधक एक एकभाग, आमला, सुहागा दोदो भागलेवे, पछि इन सबको एकत्र-कर जम्भीरी नीबूके रसमें एकदिन मर्दन करकै कौडीमें भरदेवे, पश्चात् जिसप्रकार वैरोचनरसको पकावे उसीप्रकार इसको गजपुटमें पकावे, इसको सेवनकरनेसे अनेकप्रकारकेरोग निःसन्देह दूर होतेहैं।इसके अन्तमें घीकुवारके रसमें सैंधानोन मिलाकर लेहकी तरह बनाकर चाटै, यह अनुपानहै। इससै अत्यन्त अग्निदीपन होतीहै। मूर्छि-तपारा चार तोले, काली मिरच, हींग, जीरा, वच और सोंठ प्रत्येक दो दो तोले लेवै, पीछे इन सबको भांगरेके रसमें एक दिन मर्दन करे। इसको मासेभर लेकर चीतेके चूर्णके और मधुके साथ लेहकी तरह बनाकर चाटे। इस औषधिके अन्तमे अनार, सोंठ और गुड मिलाकर दो तोले खावे। इससे अग्निदीपन होतीहै। पीपलामूल, पीपल, सोंठ, चव्य, चीता, यह सब समानभाग लेवे, और खीलै सबकी बराबर लेवै, पश्चात् सबको मिलाकर पेया बनावे, इसको पीनेसे

मंदाग्नि और शूल नष्ट होताहै । नागरमोथा, धनिया यह प्रत्येक दोदो तोले, खीलै चार तोले इन सबको आठतोलेभर पानीमें मिलाकर पेया बनावे, यह पेया अग्निप्रदीपक और मन्दाग्निरोगमें हितकारीहै। आठतोले शुद्धतांबा, बारहतोले शुद्ध पारा इन दोनोंको जम्भीरीनीबुओंके रसमें खरलकर पश्चात् वीसतोले मृतगंधक मिलाकर कज्जली बनावे, फिर उस कज्जलीको कागजी नीबुके रसमें खरलकर आठदिनतक नीबुके रसमें भावना देता जाय और प्रतिभावना धूपमें सुखाता जाय, फिर तीनदिन भांगरेके रसमें भावना देवै, पश्चात् तीनवार अदरखके रसमें भावना देवे, फिर तीनवार गिलोयके रसमें भावनादेवेतो अग्निकुमाररस सिद्ध होता है । इसको तीनरत्तीभर खानेसे मन्दाग्नि दूरी होतीहै ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥८२॥ ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ ९० ॥ ९१ ॥९२॥

पारदंगन्धकंलौहंताम्रमभ्रकमेवच ।
एषांमाषकमेकैकंजम्बरिद्रवभावितम् ॥ ९३ ॥
देयंत्रिकटुनातुल्यंसम्यग्गुञ्जाचतुष्टयम् ।
तप्ततोयानुपानेनवह्निमान्द्यहरंपरम् ॥ ९४ ॥

इतिपञ्चामृतचूर्णम्।

अर्थ–पारा, गंधक, लोहा, तांबा, अभ्रक यह प्रत्येक एक एक मासे लेकर जम्भीरी नीबूके रसमें भावना देवे, पश्चात् इसमें बराबरका त्रिकुटेका चूर्ण मिलाकर चार रत्तीभर खावै और ऊपरसे गरमजल पीलेवे, इससे मन्दाग्नि नष्ट होतीहै ॥ ९४ ॥

अभ्रकंपारदंताम्रंगन्धकंमरिचान्वितम् ।
समभागमिदंसर्वंचांगेरीरसभावितम् ॥ ९५ ॥
मर्दितन्तुरसेभूयोजयन्तीसिन्धुवारयोः ।
मर्दनेनैवकर्तव्यागुंजापरिमितावटी ॥ ९६ ॥
तप्ततोयेनसंयुक्ताश्वतस्रास्तिस्रएववा ।
अग्निमान्द्येप्रदातव्यावटयःपंचविधामताः ॥ ९७ ॥

इति पंचामृतवटी।

अर्थ-अभ्रक, पारा, ताँबा, गंधक और कालीमिरच यह सब समान भाग लेवे, पश्चात् इन सबको चांगेरी (छोटीनोनिया) के रसमें भावना देकर खरलकरे, फिर जयंती और सम्हालुके रसमें खरलकर एकरत्ती-भरकी गोलीबनावे। तीन ३ वा चार ४ गोलीखावे, उपरसै गरमपानी पीलेवे, इससें मन्दाग्नि नष्ट होती है ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ ९७ ॥

करञ्जफलमज्जाथपथ्यावह्निविडंगकम् ।
कणाशुंठीसमंचूर्णंसर्वतुल्यासिताभवेत् ॥ ९८ ॥
अग्निदीप्तिकरंकर्षंभक्षयेद्वडवानलः ॥ ९९ ॥

इति वडवानल चूर्णम् ।

इत्यजीर्णाधिकारः ।

अर्थ-करंजके फलकीमींग, हरड़, चिता, वायाविडंग, पीपल और सोंठ इनसबको समानभाग लेकर चूर्ण करे और सब चूरनकी बराबर मिश्री मिलालेवे, इसवडवानल चूर्णको दो तोलेभर खानेसै अत्यन्त अग्नि दीपन होती है ॥ ९८ ॥ ९९ ॥

इति अजीर्णाधिकारसमाप्त ।

अथ कृमिचिकित्सामाह ।

अजीर्णभोजीमधुराम्लनित्योद्रवप्रियःपिष्टगुडोपभोक्ता ।
व्यायामवर्जीचदिवाशयानोनिरुद्धभुक्संभ्रमतेकृमींश्च ॥१॥
क्षीराणिमांसानिघृतानिचैवदधीनिशाकानिचपर्णवन्ति ।
समासतोऽम्लान्मधुरान्रसांश्चकृमीन्जिघांसुःपरिवर्जनीयात्२
अरुचिःस्यादबलत्वंपाण्डुत्वंछर्दनंभ्रमम् ।
ज्वरातीसारकृच्छूलंकृमिकोपेनजायते ॥ ३ ॥
अपकर्षणमेवादौकृमीणांभेषजंमतम् ।
ततोदोषचयंबुद्ध्वानिदानंपरिवर्जयेत् ॥ ४ ॥
विडंगपिप्पलीमूलशिग्रूभिर्मरिचेनवै ।
तक्रसिद्धायवागूःस्यात्कृमिघ्नंचसुवर्चिकाम् ॥ ५ ॥

विडंगंतंडुलव्योषयुक्तंमण्डंपिबेन्नरः ।
दीपनंकृमिनाशायवह्निंचकुरुतेभृशम् ॥ ६ ॥
मुस्ताखुपर्णीसुरदारुशिग्रु-
क्काथःसकृष्णाकृमिशत्रुकल्कः ।
मार्गद्वयेनापिचिरप्रवृत्तान्
कृमीन्निहन्यात्कृमिजांश्चरोगान् ॥ ७ ॥
रसेन्द्रेणसमायुक्तोरसोधत्तूरपत्रजः ।
ताम्बूलपत्रजोवापिलेपःकृमिविनाशनः ॥ ८ ॥

अर्थ–अजीर्णमें भोजनकरनेसे, मधुर, अम्ल, द्रव, पिट्ठी और गुड आदि द्रव्य सदैव सेवनकरनेसे तथा कसरत आदिको नहीं करनेसे, दिनमें सोनेसे और विरुद्धभोजन करनेसे मनुष्योंको कृमिरोग उत्पन्न होताहै । दूध, मांस, घृत, दही, पत्रशाक, अम्लपदार्थ और मधुरद्रव्य यह सब वस्तु क्रिमिरोगी त्याग देवे । अरुचि, दुर्बलता, पांडुता, वमन, भ्रम, ज्वर, अतीसार, और शूल यह सबलक्षण कृमिके कोपमें होते हैं । कृमिरोगमें प्रथम अपकर्षण, औषधियोंके द्वारा दोषोंकी गतिको जान निदानको त्यागकर चिकित्सा करनी चाहिये । वायविडंग, पीपलामूल, सैजिना, कालीमिरच और सज्जीखार इनके चूर्णको तक्रसे बनाई हुई यवागूमें मिलाकर पीवे तो कृमिरोग दूर होय, वायविडंग, सोंठ, मिरच और पीपल इनके चूर्णको माडमें मिलाकर पीनेसे कृमिरोग दूर होताहै और अग्निदीपन होती है । नागरमोथा, मूसाकानी, देवदारु और सैजिना इनके काढेमें पीपल और वायविडंगका चूर्ण मिलाकर पीनेसे क्रिमिरोग और कृमिरोगसे उत्पन्न हुवे रोग दूर होते हैं । पारेको धतूरेके पत्तोंके रसमें और पानके रसमें खरलकर लेपकरनेसे कृमिरोग दूर होता है ॥ ८ ॥

सविडंगगंधकशिलासिद्धंगोमूत्रजलेनकटु ।
तैलमाजन्मनयातिनाशंलिख्यासहिताश्चयूकाश्च ॥ ९ ॥

इति विडंगाद्यतैलम् ।

अर्थ-वायविडंग, गंधक, मनशिल इनके कल्कमें तथा गोमूत्रमें सरसोंके तेलको सिद्धकरे, फिर इस तेलसे लेपकरनेसे जूँए और लीखें दूर होती हैं ॥ ९ ॥

पारसीययवानीपीतापर्य्युषितवारिणाप्रातः।
गुडपूर्वाक्रिमिजातंकोष्ठगंतंपातयत्याशु ॥ १० ॥
क्वाथंखर्जूरपत्राणांसक्षौद्रमुषितंनिशि।
पीतंनिवारयत्याशुक्रुमीन्निरवशेषतः ॥ ११ ॥
लिह्यात्क्षौद्रेणवैडंगंचूर्णवाक्रिमिनाशनम् ॥ १२ ॥

अर्थ-खुरासानी अजवायनको बासी जलमें भिजोकर प्रातःकालमें गुड-मिलाकर पीनेसे कोष्ठगत क्रिमिरोग दूर होताहै। खजूरके पत्तोंके बासी क्वाथको रात्रिमें सहतके साथ पीनेसै सर्वप्रकारके कृमिरोग दूर होतेहैं। बायविडंगके चूरनको सहतकेसाथ चाटनेसै कृमिरोग दूर होताहै ॥ १२ ॥

त्रिफलात्रिवृतादंतीवचाकाम्पिलकस्तथा।
सिद्धमेभिर्गवांमूत्रेसर्पिःक्रुमिविनाशनम् ॥ १३ ॥
सर्वान्क्रुमीन्प्रणुदतिचक्रमुक्तमिवासुरान् ॥ १४ ॥

इतित्रिफलाघृतम्।

अर्थ-त्रिफला, निसोत, दंती, वच, कवीला इन सब औषधियोंका कल्क सेरभर, गायका घी चारसेर और गोमूत्र छे सेर लेवे, पीछे घृतको सिद्धकरे, इससे सर्वप्रकारके कृमिरोग दूरहोतेहैं।

लाक्षाभल्लातश्रीवासश्वेतापराजिताशिफा।
अर्जुनस्यफलंपुष्पंविडंगंसर्जगुग्गुलु ॥ १५ ॥
एभिःकृतेनधूपेनशाम्यन्तिनियतंगृहे।
भुजंगमूषिकालूताःपलायन्तेगृहात्सदा ॥ १६ ॥

अर्थ-लाख, भिलावा, श्रीवास (जिसके अभावमें लोवान लेते हैं), सफेदकोयलकी जड, अर्जुनवृक्षकेफल और फूल, वायविडंग, राल, गूगल इन सबको एकत्रकर धूप बना घरमें खेहनेसे-साँप, मूषा, मकडी, यह सब जीव भागजाते हैं ॥ १६ ॥

शुद्धसूतंचेन्द्रयवमजमोदामनःशिला ।
पलाशबीजतुल्यांशंदेवदाल्याद्रवैर्दिनम् ॥ १७ ॥
मर्दयेद्भक्षयेन्निष्कंमुद्गपर्णीकषायकम् ।
सितायुक्तंपिबेच्चानुकृमिपातोभवत्यलम् ॥ १८ ॥
अत्रशुद्धसूतंगंधकेनमूर्च्छितमापियवंरसयोगः ।

अर्थ-शुद्धपारा, इन्द्रजो, अजमोद, मनशिल, और ढाकके बीज इन सबको समानभाग लेकर देवदालीके रसमें एकदिन खरल करे। इसको चारमासेभर खावे और ऊपरसे मुगवनके काढेमें मिश्री मिलाकर पीलेवे तो कृमिरोग दूर हो ॥ १८ ॥

शुद्धसूतंशुद्धगंधमजमोदाविडंगकम् ।
विषमुंडीब्रह्मबीजंक्रमोत्तरगुणंभवेत् ॥ १९ ॥
चूर्णयेन्मधुनालेह्यंनिष्कैकंकृमिजिद्भवेत् ।
कीटभद्ररसोनाममुस्तातोयंपिबेदनु ॥ २० ॥

इति कीटभद्ररसः ।

इति कृमिरोगाध्यायः ।

अर्थ-शुद्धपारा, शुद्धगंधक, अजमोद, वायविडंग, कुचिला, और ढाकके बीज, यह सब एकोत्तर वृद्धिसैं अर्थात् पारा एकभाग, गंधकदो भाग, अजमोद तीनभाग, वायविडग चारभाग, कुचिला पांच भाग और ढाकके बीज छैभाग लेकर चूर्णकरे, पश्चात् चूर्णमें सहत मिलाकर चार मासे भर चाटे और ऊपरसैं नागरमोथेका क्वाथ पीवेतो कृमिरोग दूर होताहै, इसको कीटभद्ररस कहतेहैं ॥ २० ॥

इतिकृमिरोगाधिकारसमाप्त ।

अथपाण्डुरोगचिकित्सामाह ।

साध्यन्तुपाण्डुमायिनंसमीक्ष्यास्निग्धंघृतंनोर्द्ध्वमधश्चशुद्धम् ।
सम्पादयेत्क्षौद्रघृतप्रगाढैर्हरीतकीचूर्णमयैःप्रयोगैः ॥ १ ॥

विधिःस्निग्धस्तुवातोत्थेतिक्तशीतन्तुपैत्तिके।
श्लेष्मकेकटुरूक्षोष्णाःकार्य्यामिश्रस्तुमिश्रके ॥ २ ॥
द्विशर्करंत्रिवृच्चूर्णपलार्द्धंपैत्तिकेपिबेत्।
कफपाण्डुस्तुगोमूत्रयुक्तांस्विन्नांहरीतकीम् ॥ ३ ॥
नागरंलौहचूर्णवाकृष्णापथ्यामथाश्मजम्।
गुग्गुलुंक्काथमूत्रेणकफपाण्ड्वामयीपिबेत् ॥ ४ ॥
नागरंलौहचूर्णवाकृष्णापथ्याशिलाजतु ॥ ५ ॥
गग्गुलुनागोमूत्रेणयुक्ताश्चत्वारोयोगाःप्रकीर्त्तिताः।
लौहंपुटादिशब्दंतदभावेलौहपातिकापिशोधिताग्राह्या।
एवंसर्वत्रसकलंकफजेपाण्डौदशमूलीजलंपिबेत् ॥ ६ ॥
लौहपात्रेशृतंक्षीरंसप्ताहंपथ्यभोजनम्।
पिबेत्पाण्ड्वामयीशोषीग्रहणीदोषपीडितः ॥ ७ ॥
शृतचतुर्गुणजलेन।
सप्तवारंगवांमूत्रेभावितंवाप्ययोरजः।
पाण्डुरोगप्रशान्त्यैवपयसाथपिबेन्नरः ॥ ८ ॥

अर्थ–प्रथम साध्यपांडुरोगीको विचाकर पीछे घीके द्वारा स्निग्ध करे,फिर वमन आर विरेचनद्वारा शुद्ध करे,तदनन्तर हरडके चूर्णमें घी और सहत मिलाकर सेवन करावे।वातज पाण्डुरोगमें स्निग्ध क्रिया, पित्तज पांडुरोगमें तिक्त और शीतल क्रिया,कफजपाण्डुरोगमें कटु, रुक्ष,उष्णक्रिया और मिश्रितपाण्डुरोगमें मिश्रितक्रिया करे। पित्तजपांडुरोगमें दोभाग बूरा और एकभाग निसोतका चूरण मिलाकर भक्षण करे; कफज पांडुरोगमें हरडको गोमूत्रके द्वारा उसेकर देवे, अथवा सोंठ और लोहेका चूर्ण गोमूत्रके साथ तथा पीपल, हरड, शिलाजीत और गूगलको गोमूत्रके साथ; और सोंठ, लोहेका चूरन, पीपल, हरड, शिलाजीत, गूगल, इन सबको गोमूत्रके साथ सेवनकरनेसे कफजपांडुरोग दूर होताहै । दशमूलका क्काथ पीनेसे, कफजपांडुरोग दूर होताहै । लोहेके बरतनमें दूध औटाकर सात दिनपर्य्यंत पीवे, और हितकारी भोजन करे तो पांडु,

शौष, और संग्रहणीरोग दूर होय । लोहेके चूरणको चौगुने जलमें पकाकर पीछे गोमूत्रमें सात भावना देवे, इसको दूधके साथ सेवन करनेसे पांडुरोग शांत होताहै ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥

फलत्रिकामृतावासातिक्ताभूनिम्बनिम्बजः ।
क्काथःक्षौद्रयुतोहन्यात्पांडुरोगंसकामलम् ॥ ९ ॥

अर्थ-त्रिफला, गिलोय, अडूसा, कुटकी, चिरायता और नीमकी छाल इनका क्काथ बना तिसमें सहत मिलाकर पीवेतो पांडुरोग और कामला-रोग दूरहो ॥ ९ ॥

इतिफलत्रिकादिः ।

अयोमलन्तुसन्ततंभूयोगोमूत्रसेवितम् ।
मधुसर्पिर्युतंचूर्णंसहभक्तेनयोजयेत् ॥ १० ॥
दीपनश्चाग्निजननंशोथपाण्ड्वामयापहम् ॥ ११ ॥
अयोमलंपुराणलोहमलम् ।
शुद्धसूतंसासिन्दूरंपलैकैकंविमर्दयेत् ।
वासारसेनयामैकंतैलेकुर्य्याच्चपिष्टिकाम् ॥ १२ ॥

अर्थ-पुरानेलोहेको वारंवार आगमें तपाकर वारंवारगोमूत्रमें बुझावे, फिर चूर्णकर मधु और घीमें मिला भातके साथ सेवनकरनेसे अग्नि दीपन होतीहै, जठराग्नि उत्पन्न होतीहै तथा सूजन और पाण्डुरोग दूर होता है ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥

अपक्कांकारयेन्मूषामुन्नतांद्वादशाङ्गुलाम् ।
तन्मध्येगंधकंशुद्धंक्षिपेत्पलचतुष्टयम् ॥ १३ ॥
पूर्वोक्ताञ्चक्रियांचक्रेदत्त्वारुद्ध्वापुटेल्लघु ।
जीर्णगंधेसमुद्धृत्यचक्रिकांतांविचूर्णयेत् ॥ १४ ॥
चूर्णाद्दशगुणंयोज्यंमृतलोहंचमर्दयेत् ।
लशुनस्यदशांशेनचणमात्रावटीकृता ॥ १५ ॥
वातपाण्डुहरःसिद्धोरसःसिन्दूरभूषणः ।
पिबेच्चानुह्यपामार्गरुबुकस्यचमूलिकाम् ॥ १६ ॥

तक्रैःपिष्ट्वाचकर्षैकंहन्तिपाण्डुंसकामलम् ॥ १७ ॥

इतिसिन्दूरभूषणोरसः ।

अर्थ–शुद्धपारा चार तोले, सिन्दूर चार तोले इन दोनोंको बाँसाके रसमें एकप्रहर खरलकर तेलमें पिट्ठीबनावे, पश्चात् बारह अंगुलकी कच्चीघडीया बनाकर तिसके बीचमें चारपल शुद्धगंधक रखे,फिर पूर्वोक्त द्रव्य रक्खे, पश्चात् लघुपुटमें फूँकदेवे, जब गंधककी भस्म होजावे तब उसद्रव्यको निकाल कर चूर्ण करले, फिर इस चूर्णसे दसगुनी लोहेकी भस्म मिलाकर लहसुनके रसमें मर्दन कर चनेकी बराबर गोलीबनावे तो वातजपांडुरोगनाशक सिन्दूरभूषणरस सिद्धहो । इसको खाकर फिर ऊपरसे चिरचिटा और अंडकी जडको छाछमें पीसकर एक तोलेभर पीवे तो कामलासंयुक्तपांडुरोग दूर होवे ॥ १३ ॥ १४ ॥ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥

पंचकोलंसमरिचंदेवदारुफलत्रिकम् ।
विडंगमुस्तयुक्ताश्चभागास्त्रिपलसम्मिताः ॥ १८ ॥
यावत्येतानिचूर्णानिमण्डूराद्द्विगुणंततः ।
पक्त्वाचाष्टगुणेमूत्रेघनीभूतेतदुद्धरेत् ॥ १९ ॥
ततोमात्रान्वटकान्पिबेत्तक्रेणतक्रभुक् ।
पाण्डुरोगंजयत्येषमन्दाग्नित्वमरोचकम् ॥ २० ॥
अर्शांसिग्रहणीदोषमूरुस्तम्भमथापिवा ।
कृमीन्प्लीहानमुदरंगलरोगंचनाशयेत् ॥ २१ ॥
मण्डूरवज्रनामेदंरोगानीकप्रणाशनम् ॥ २२ ॥

इति मण्डूरवज्रम् ।

अर्थ–पीपल, पीपलामूल, चव्य, चीता, सोंठ, कालीमिरच, देवदारु, त्रिफला, वायविडंग, और नागरमोथा यह प्रत्येक बारह बारह तोले लेवे, फिर सबका चूरन कर चूर्णसे दुगुना मंडूर (लोहेकामल) मिलावे, तदनन्तर इसको आठगुने गोमूत्रमें पकावे,जब पकतेर गाढा होजावे तब उतारकर एक २ तोलेभरकी गोलीबनालेवे, एक गोली मट्ठेके साथखावै और मट्ठेहीको भोजनके साथ खावे तो पाण्डुरोग, मंदाग्नि, अरुचि, बवा-

सार, संग्रहणी, ऊरुस्तम्भ, कृमि, प्लीहा, उदररोग और गलरोग दूरहोवे। यह मंडूरवज्रनामवाला रस रोगोंके समूहोंको दूर करताहै ॥ २२ ॥

पुनर्नवात्रिवृच्छुण्ठीपिप्पलीमरिचानिच।
विडंगंदेवकाष्ठञ्चाचित्रकंपुष्कराह्वयम् ॥ २३ ॥
त्रिफलाद्वेहरिद्रेचदन्तीञ्चचविकान्तथा।
कुटजस्यफलंतिक्तापिप्पलीमूलमुस्तकम् ॥ २४ ॥
एतानिसमभागानिमंडूरंद्विगुणंततः।
गोमूत्रेऽष्टगुणेपक्त्वास्थापयेत्स्निग्धभाजने ॥ २५ ॥
पाण्डुशोथोदरानाहशूलार्शःकृमिगुल्मनुत् ॥ २६ ॥

इति पूनर्नवामंडूरः।

अर्थ-पुनर्नवा, निसोत, सोंठ, पीपल, कालीमिरच, वायविडंग, देवदारु, चीता, पोहकरमूल, त्रिफला, हलदी, दारुहलदी, दंती, चव्य, इन्द्रजव, कुटकी, पीपरामूल और नागरमोथा यह सब समानभाग और इन सबसै दुगुना मंडूर लेवे, पश्चात् सबको आठगुने गोमूत्रमें औटाकर चिकने बरतनमें भरके रखदेवे। यह रस-पाण्डु, सूजन, उदररोग, आनाह, शूल, बवासीर, क्रिमि और गुल्मको दूर करेहै ॥ २६ ॥

त्र्यूषणत्रिफलामुस्तविडंगचित्रकाःसमाः।
नवायोरजसोभागास्तच्चूर्णमधुसर्पिषा ॥ २७ ॥
भक्षयेत्पाण्डुहृद्रोगक्षयार्शःकामलापहम् ॥ २८ ॥

इतिनवायसंलौहम्।

अर्थ-त्रिकुटा, त्रिफला, नागरमोथा, वायविडंग, और चीता यह सब समान भाग लेवे, और नवीन लोहेका चूर्ण आठभाग लेवै, पश्चात् सबको एकत्रकर शहदके और घीके साथ खानेसे पांडुरोग, हृदयरोग, क्षय, बवासीर, और कामलारोग दूर होता है ॥ २८ ॥

त्रिफलायास्त्रयोभागास्त्रयस्त्रिकटुकस्यच।
भागाश्चित्रकमूलस्यविडंगानान्तथैवच ॥ २९ ॥
पंचाश्मजतुनोभागास्तथारूप्यमलस्यच।

माक्षिकस्यचशुद्धस्यलोहस्यरजसस्तथा ॥ ३० ॥
अष्टौभागाःसितायाश्चतत्सर्वंश्लक्ष्णचूर्णितम् ।
माक्षिकेणाप्लुतिस्थाप्यमायसेभाजनेशुभे ॥ ३१ ॥
उदुम्बरसमांमात्रांततःखादेद्यथाग्नि ना ।
दिनेदिनेप्रयोक्तव्यंजीर्णेभोज्यंयथेप्सितम् ॥ ३२ ॥
वर्जयित्वाकुलत्थांश्चकाकमाचीकपोतकान् ।
योगराजइतिख्यातोयोगोऽयममृतोपमः ॥ ३३ ॥
रसायनमिदंश्रेष्ठंसर्वरोगहरंपरम् ।
पाण्डुरोगंविषंकासंयक्ष्माणंविषमज्वरम् ॥ ३४ ॥
कुष्ठान्यजरकंमेहंश्वासंहिक्कामरोचकम् ।
विशेषाद्धन्त्यपस्मारंकामलांगुदजानिच ॥ ३४ ॥
त्रयोभागामिलित्वारूप्यमलम्।रजतनिर्गतशिलाजतु केचिदाह॥

इतिनिश्चलकरः ।

तल्लक्षणंरसायनेबोध्यम् । त्रिविक्रमदेवस्त्वाह ।
रूप्यमलाभावेलोहमलस्यव्यवहारः । तदुक्तं
सुवर्णमथवारूप्यंयोगयुक्तंनसम्भवेत् ।
तत्रलोहेनकार्यंचभिषक्कुर्याद्विचक्षणः ।

इतिरूप्याभावेलोहम् ।

तदातन्मलाभावेतन्मलंग्राह्यम् । माक्षिकस्यसुवर्णमाक्षिकस्य।
उदुम्बरंकर्षःमधूनान्तुमाषकचतुष्टयंभक्ष्यम् । नापुरुषः ।

इतियोगराजलोहम् ।

अर्थ—तीनभाग त्रिफला, तीनभाग त्रिकुटा, चीतेकी जड़ तीनभाग, तीनभाग वायविडंग, शिलाजीत, रूपेका मैल, शुद्धसोनामाखी और लोहेका चूर्ण प्रत्येक पांच भाग, और सफेद बूरा आठ भाग, सबको एकत्र पीस बारीक चूर्ण बनावे । पीछे इस चूर्णमें सहत मिलाकर उत्तमलोहेके बरतनमें भरकै रखदेवे, फिर एकतोलाभर प्रतिदिन

अग्निका बलाबलविचारकर भक्षण करे, और जीर्ण होजानेपर यथेष्ट भोजन करे, इसपै कुलथी, मकोय और कबुतरका मांस नखावे, यह योगराज अमृतकी समानहै, रसायन सर्वरोगनाशक, तथा पांडुरोग, विष, खाँसी, राजयक्ष्मा, विषमज्वर, कुष्ठ, अजीर्ण, प्रमेह, श्वाँस, हुचकी, अरुचि, विशेषकरकै अपस्मार, कामला और बवासीरको दूर करैहै ३५॥

मूर्वातिक्तानिशायासकृष्णचन्दनपर्पटैः ।
त्रायन्तीवत्सभूनिम्बपटोलाम्बुददारुभिः ॥ ३६ ॥
अक्षमात्रैर्घृतप्रस्थःसिद्धःक्षीरचतुर्गुणः ।
पाण्डुताज्वरविस्फोटश्रोत्राशोंरक्तपित्तनुत् ॥ ३७॥

इतिमूर्वाद्यंघृतम् ।

अर्थ-मूर्वा (चुरनहार), कुटकी, हलदी, जवासा, पीपल, चंदन, पित्तपापडा, त्रायमान, कुडेकीछाल, चिरायता, परवल, नागरमोथा और देवदारु यह सब समानभागलेवे, पश्चात् सबका कल्क बनावे, परंतु कल्क तोलमें सेरभरहो घृतचारसेर, और दूध १६ सोले सेर लेवे, फिर घृत सिद्ध करे । यह घृत-पांडुरोग,ज्वर विस्फोटक, कर्ण, बवासीर और रक्तपित्तको दूर करेहै ॥ ३७ ॥

दार्वीसत्रिफलाव्योषविडंगान्ययसोरजः ।
मधुसर्पिर्युतंलिह्यात्कामलापांडुरोगवान् ॥ ३८ ॥
सर्वचूर्णसमंलौहंसर्वनवायसादिवत् ॥ ३९ ॥

इतिदार्व्यादिलोहम् ।

अर्थ-दारुहलदी, त्रिफला, त्रिकुटा, वायविडंग और लोहेका चूर्ण इन सबका एकत्रकर चूर्णकरे, पश्चात् सहत और घृत मिलाकर चाटेतो कामला और पाण्डुरोग दूरहो । इसमें सर्वचूर्णकी बराबर लोहेका चूरन डाले ॥ ३८ ॥ ३९ ॥

धात्रीलोहरजोव्योषसिताक्षौद्राज्यशर्करा ।
लीढानिवारयत्याशुकामलामुद्धृतामपि ॥ ४० ॥
मधुघृतमवलेह्यंद्राव्यादिलौहवत् ॥ ४१ ॥

इतिधात्रिलोहम् ।

अर्थ-आमला, त्रिकुटा, शिलाजीत और शर्करा यह प्रत्येक एक एक भाग और लोहेका चूर्ण छै भाग लेवै, पीछे सबका चूर्णकर सहत और घृत मिलाकै चाटनेसे घोरकामलारोग दूर होताहै ॥४०॥४१॥

विडंगमुस्तात्रिफलादेवदारुषडूषणैः।
तुल्यमात्रमयश्चूर्णगोमूत्रेऽष्टगुणेपचेत् ॥ ४२ ॥
तैरक्षमात्रांगुटिकांकृत्वाखादेद्दिनेदिने।
कामलापाण्डुरोगार्तःसुखमाप्यतेचिरात् ॥ ४३ ॥
लोहात्सर्वत्रचूर्णादेवगोमूत्रमष्टगुणम्।
सिद्धेचूर्णप्रक्षेपइतिनिश्चलः।
दत्त्वाचपाकइतित्रिविक्रमः। लोहान्तरवत्कवलम्।

इतिविडंगादिलौहगुटिका।

अर्थ-वायविडंग, नागरमोथा, त्रिफला, देवदारू, सोंठ, मिरच, पीपल, पीपरामूल, चव्य, चीता यह सब समानभागलेवे और इन सबकी समान लोहेका चूर्णलेवे, पश्चात् सबको मिलाकर, आठगुने गोमूत्रमें पकावे, जब सिद्ध होजाय तो दोदो तोलभरकी गोली बनालेवे, एकगोली प्रतिदिन खावे। यह गोली कामला और पांडुरोगको दूर करेहै ॥४३॥

शुद्धसूतंसमंगन्धंमृतताम्रञ्चगुग्गुलुम्।
मृतायसञ्चगंधञ्चमृतताम्राभ्रगुग्गुलुम् ॥ ४४ ॥
जैपालबीजतुल्यांशंघृतेनगुटिकांकुरु।
भक्षयेद्बदराण्डाभांशोथपांडुप्रशान्तये ॥ ४५ ॥
पंचाननावटीख्याताअनुपानञ्चपूर्ववत् ॥ ४६ ॥

इति पंचाननावटी।

अर्थ-शुद्धपारा, गंधक, मृतताम्बा, गूगल, मृतलोहा यह सब समान-भाग लेवे और सबकी बराबर जमालगोटालेवे, पश्चात् सबको घीमें खरलकरकै गोली बनालेवे। इन गोलियोंको खानेसे सूजन और पांडु-रोग दूर होताहै ॥ ४६ ॥

मुस्तामृताकणायष्टीवह्निशुण्ठीफलत्रयम् ।
विडंगंचसमंचूर्णंसर्वांशंमृतलोहकम् ॥ ४७ ॥
मधुनाभक्षयेन्निष्कंपाण्डुरोगहरंपरम् ।
अयंलोहामृतंनामस्वयमग्निरसोपिवा ॥ ४८ ॥

इतिलोहामृतम् ।

अर्थ—नागरमोथा, गिलोय, पीपल, मुलेठी, चीता, सोंठ, त्रिफला और वायविडंग इन सबका चूर्ण समानभाग और सब चूर्णकी बराबर मृतलोहा लेवे, फिर सबको एकत्रकर मधुके साथ चारमासेभर खावेतो पांडुरोग दूर होता है, इसको लोहामृत और स्वयमग्निरस कहते हैं॥४८॥

कोकिलायाश्चबीजानिगुडूचीनागरैःसह ।
पयसाक्काथितंरात्रौपाचनंपांडुरोगिणाम् ॥ ४९ ॥

अर्थ—तालमखानेके बीज, गिलोय और सोंठ इनको दूधमें औटाकर रात्रिमें पीनेसे पांडुरोग आराम होताहै ॥ ४९ ॥

मण्डूरंचूर्णितंश्लक्ष्णंगोमूत्रेष्टगुणेपचेत् ।
त्र्यूषणंत्रिफलामुस्तंविडङ्गंश्चव्याचित्रकम् ॥ ५० ॥
दार्वीग्रान्थिदेवदारुतुल्यंसर्वंविचूर्णयेत् ।
चूर्णमण्डूरतुल्यंचपाककालेविमिश्रयेत् ॥ ५१ ॥
भक्षयेत्कर्षमात्रञ्चजीर्णान्तेतक्रभोजनम् ।
हलीमकंपांडुशोथमुरुस्तम्भञ्चकामलाम् ॥ ५२ ॥
अर्शांसिहन्तिशीघ्रञ्चहंसमण्डूरकोह्ययम् ॥ ५३ ॥

इति हंसमंडूरः ।

अर्थ—मंडूरको आठगुने गोमूत्रमें पकावे, जब पकते २ गाढा होजाय तब इसमें सोंठ, मिरच, पीपल, हड़, बहेडा, आमला, नागरमोथा, वायविडंग,चव्य, चीता, दारुहलदी, पीपरामूल और देवदारु इनसबका चूर्ण समानभाग और सबचूर्ण मंडूरकी समान मिलादेवे, दो तोलेभर खावे और इसके जीर्ण होजानेपर तक्रके साथ भोजनकरे । यह

हंसमंडूर- हलीमक, पांडु, सूजन, ऊरुस्तम्भ, कामला और बवासीरको दूर करैहै ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥

मुस्तैलापत्रकाणाश्चप्रतिसार्द्धपलंक्षिपेत् ।
त्र्यूषणंपिप्पलीमूलंविषंचैवपलंपलम् ॥ ५४ ॥
नागकेशरकर्षैकमेरण्डस्यपलन्तथा ।
पुरातनगुडेनैवतुल्येनैवविमिश्रयेत् ॥ ५५ ॥
मर्द्दयेत्कनकद्रावैर्यामैकंवाघृतान्वितम् ।
गुटिकांबदराण्डाभांकारयेद्भक्षयेन्निशि ॥ ५६ ॥
शोथपाण्डुहरःसोऽयंरसःकामेश्वरःस्वयम् ॥ ५७ ॥

इति कामेश्वररसः।

अर्थ-नागरमोथा,इलायची और तेजपत्र प्रत्येक छै छै तोले, पीपल, सोंठ, मिरच, पिपरामूल,और विष प्रत्येक चार चार तोले,नागकेशर दो तोले और अंडकी जड चार तोले लेवे, सबको एकत्रकर चूर्ण बना सब चूर्णकी बराबर पुरानागुड मिलाकर एकप्रहर धतूरेके रसमें अथवा घृतमें मर्दनकरकै बेरकी गुठलीकी बराबर गोली बनालेवे। इस कामेश्वररसको रात्रिमें खानेसै सूजन और पांडुरोग विनष्ट होता है॥५४॥५५॥५६॥५७

मंडूरस्यपलान्यष्टौगोमूत्रेष्टगुणेपचेत् ।
पुनर्नवात्रिवृद्व्योषंविडंगंदेवदारुकम् ॥ ५८ ॥
द्विनिशेपुष्करंवह्निर्दन्तीचव्यंफलत्रिकम् ।
कुटजस्यफलंतिक्तापिप्पलीमूलमुस्तकम् ॥ ५९ ॥
विषश्चप्रतिकर्षस्याच्चूर्णयित्वाविमिश्रयेत् ।
मण्डूरस्यचपाकान्तेअक्षमात्रावटीकृता ॥ ६० ॥
पांडुशोथज्वरानाहशूलार्शःकृमिगुल्मनुत् ।
इत्येवंसिद्धमण्डूरंसर्वरोगविनाशकृत् ॥ ६१ ॥

इति सिद्धमण्डूरः।

अर्थ-आठपल मंडूरको अठगुने गोमूत्रमें पकावे जब गाढा हाजाय

तब पुनर्नवा (सांठ) निसोत, सोंठ, मिरच, पीपल, वायविडंग, देवदारु, हलदी, दारुहलदी, पोहकरमूल, चीता, दंती, चव्य, हरड, बहेड़ा, आमला, इंद्रजव, कुटकी, पीपरामूल, नागरमोथा और विष प्रत्येक दोदो तोले लेवै, फिर सबका एकत्रचूर्णकर मिलादेवे, जब सिद्ध होजायतो दोदो तोलेभरकी गोली बनालेवे। प्रतिदिन एकगोली खावे यह सिद्धमंडूर-पांडु, सूजन, ज्वर, आनाह, शूल, बवासीर, कृमि, गुल्म और सर्वरोगनाशक है ॥ ६० ॥

विण्मूत्रनयनादीनांरूक्षकृष्णारुणाभता ।
वातपाण्ड्वामयेकम्पस्तोदानाहभ्रमादयः ॥ ६२ ॥

इतिवाते ।

पीतमूत्रशकृन्नेत्रदाहतृष्णाज्वरान्वितः ।
भिन्नविट्कोऽतिपीताभःपित्तपाण्ड्वामयीनरः ॥ ६३ ॥

इतिपित्ते ।

कफप्रसेकःश्वयथुस्तन्द्रालस्यातिगौरवैः ।
पाण्डुरोगीकफाच्छुक्लैस्त्वङ्मूत्रनयनाननैः ॥ ६४ ॥

इतिकफे ।

ज्वरारोचकहृल्लासतृष्णाछर्दिक्रमान्वितः ।
पाण्डुरोगीत्रिभिर्दोषैस्त्याज्यः क्षीणोहतेन्द्रियः ॥ ६५ ॥
पाण्डुदन्तनखोयस्तुपांडुरोगःसुदुःसहः ।
जायतेकृमिकुष्ठश्वसातिसारंकफंभ्रमम् ॥ ६६ ॥
शूनाक्षिकुटगंडभ्रूःशूनपान्नाभिमेहनः ।
कृमिकोष्ठोतिसार्य्यंतमलंसास्रकफान्वितः ॥ ६७ ॥

अर्थ-विष्ठा, मूत्र और नेत्र रूखे, काले और लालरंगकेहो, कम्प, पीड़ा, आनाह और भ्रम इत्यादि विकारोंकी उत्पत्तिहो तो वातजपांडुरोग जानना। विष्ठा, नेत्र और मूत्र यह सब पीलेरंगके होजाँय, दाह, तृष्णा, ज्वर और भेदहो, तथा शरीर पीतवर्णहो तो पित्तजपांडुरोग

जानना। कफस्राव, सूजन, तन्द्रा, आलस्य, शरीर भारीहो, और चर्म्म, मूत्र, नेत्र, और मुख श्वेतवर्णहो तो कफजपांडुरोग जानना। और ज्वर, अरुचि, हृल्लास, तृषा, वमन, ग्लानि, दुर्बलता और इन्द्रियें कमजोर होजावे तो असाध्य त्रिदोषजपांडुरोग जानना। जिस पांडुरोगीके नख और दाँत पांडुरंगके होजावे, कोठेमें कृमि पड़जाय, कफ और रुधिर-संयुक्त वारंवार पतला मल उतरे, भ्रमहो, नेत्रोंपै सूजनहो, कपोल और भ्रकुटी टेढ़ी होजावे, पांव, नाभि और लिंगपै सूजनहो, ऐसा पांडुरोगी असाध्य जानना ॥ ६७ ॥

शुद्धसूतंहेमतारंताम्रंतुल्यञ्चमर्दयेत् ।
जम्बीरनीरसंयुक्तमातपेमर्दयेद्दिनम् ॥ ६८ ॥
सर्वतुल्यंपुनःसूतंलिप्त्वापिष्टिंप्रकल्पयेत् ।
धत्तूरफलमध्यस्थंदोलायंत्रेत्र्यहंपचेत् ॥ ६९ ॥
धत्तूराच्छद्रवैरेवभांडेचूर्णंप्रपाचयेत् ॥
आदायबन्धयेद्वस्त्रेइष्टिकायंत्रगंपचेत् ॥ ७० ॥
जम्बीरैर्गंधकंपिष्ट्वाअधऊर्द्ध्वंप्रदापयेत् ।
तुल्यंतुल्यंपुनर्देयंरुद्ध्वालघुपुटेपचेत् ॥ ७१ ॥
शतधागंधकेजीर्णेतदुद्धृत्यविचूर्णयेत् ।
लोहभस्मसमांशंचदत्त्वामर्द्यंद्रवैर्दिनम् ॥ ७२ ॥
कण्टकार्य्याबृहत्याश्चतथाग्नीनांद्रवैरपि ।
प्रतिदिवैर्दिनंमर्द्यंपुटेत्पंचाभिरुपलैः ॥ ७३ ॥
एवंनवपुटंदेयंद्रावेद्रावेत्रिधात्रिधा ।
वह्न्यर्कचिरबिल्वानांद्रवैर्द्वित्रिपुटेपचेत् ॥ ७४ ॥
अन्धमूषागतंपच्यादादायचूर्णयेत्पुनः ।
दशांशेनविषंयोज्यंगुंजामात्रंप्रयोजयेत् ॥ ७५ ॥
कालविध्वंसनोनामरसःपाण्ड्वामयापहः ॥ ७६ ॥

इतिकालविध्वंसनोरसः ।

अर्थ-शुद्धपारा,सोना,रूपा,ताँबा यह सब समानभाग लेकर खरल करे, फिर धूपमें धरके एकदिन जम्भीरी नीबूके रसमें खरल करे, पश्चात् इन सबकी बराबर पारा मिलाकर पिट्ठी बनालेवे,फिर धतूरेके फलके बीचमें इस पिट्ठीको रख दोलायंत्रमें तीनदिन पकावे, पश्चात् चूर्णकर धतूरेके रसमें खरलकरके भांड़में रख पकावे, फिर वस्त्रमें बाँधकर इष्टिका-यंत्रमें पकावे, पीछे जम्बीरी नीबूके रसमें गंधकको मर्दनकर मूषाके ऊपर और नीचे रख उसके बीचमें उपरोक्तद्रव्यको रखे, तदनन्तर मूषाका मुख बंदकर लघुपुटमें पकावे, जब सौवार गंधक जीर्णहोजावे तब उस मूसामेंसे निकालकर चूर्ण करले, पश्चात् इस चूर्णमें बराबरकी लोहेकी भस्म मिलाकर कटेरी, कटाई और चीतेके रसमें एक एक दिन खरल करे, फिर पांच उपलोंकी पुटमें पकावे, ऐसी नोपुट देवे, तदनन्तर चीता, आक, करंज, और बेलके पत्तोंके रसमें खरलकर तीन पुट देवे, फिर अंधमूषामें पकावे, पश्चात् मूषामेंसे निकालकर चूर्ण बना लेवै, चूर्णमें दशमाभाग विष मिला देवे। मात्रा १ एक रत्तीकीहै । यह कालविध्वंसन रस-पाण्डुरोगको नष्ट करेहै ॥ ७६ ॥

टंकणंजारितंस्वर्णंशुल्वंशंखंमृतंरसः
दिनैकंचार्द्रकद्रावैर्मर्द्यंरुद्ध्वापुटेपचेत् ॥ ७७ ॥
त्रिनेत्राख्योरसोनामअसाध्यंश्वयथुंजयेत् ।
शूलगुल्ममथार्शांसिनाशयत्याशुदेहिनाम् ॥ ७८ ॥

इतित्रिनेत्राख्योरसः ।

अर्थ-भुनाहुवा सुहागा, सोना, तांबा, शंख और मराहुवा पारा इन सबको समानभाग लेकर एकदिन अदरखके रसमें खरलकर पुटपाक करेतो त्रिनेत्राख्यरस सिद्धहो, यहरस-असाध्य शोथ, शूल, गुल्म और बवासीरको दूर करेहै ॥ ७८ ॥

अथकामलाहलीमकयोश्चिकित्सामाह ।

निशागैरिकधात्रीभिरंजनंकामलापहम् ।
अपामार्गंशमीमूलंपिष्ट्वातक्रेणपाचयेत् ॥ ७९ ॥
कामलांश्वयथुंपांडुंकर्षमात्रंनिनहन्त्यलम् ।

शिलाजतुसगोमूत्रंमंडूरंवाथमाक्षिकम् ॥ ८० ॥
सुलोहभस्मस्यनिष्कंवासेवयेत्कुम्भकामली ॥ ८१ ॥
अंकोटमूलमर्कमूलंवातंडुलोदकेनापिष्ट्वानस्यंदेयं
कामलानश्यति।घोषफलेनवा। देवदाल्युदकं
रात्रौकार्य्यंप्रभातेनस्यंतत्कामलांहरति।
कुमारीकंदकंपिष्ट्वानस्यंशीतलवारिणा।
एवंसप्तदिनंकार्य्यंकामलांहन्तिदुस्तराम् ॥ २ ॥

इतिग्रन्थान्तरे।

अर्थ-हलदी, गेरू और आमला इनतीनोंका अंजन बनाकर नेत्रोंमें लगानेसै कामलारोग दूर होताहै। चिरचिटेकी जड और शमीकी जडको तक्रमें पीसकर पीनेसै कामला, सूजन और पांडुरोग नष्ट होताहै, इसकी मात्रा दोतोलेकी है। शिलाजीतको गोमूत्रके साथ, अथवा मंडूरको सहतके साथ वा लोहेकी भस्मको सेवनकरनेसै कुम्भकामलारोग दूर होताहै। अंकोलकी जडको अथवा आककी जडको चावलोंके जलमें पीसकर नास लेनेसै कामलारोग शांत होताहै।देवदालीके रसको रात्रिमें रखकर प्रभातके समय नास लेनेसै कामलारोग दूर होता है। घीकुवारको शीतलजलमें पीसकर सातदिनतक नास लेनेसै घोरकामला रोग दूर होताहै ॥ ८२ ॥

विडंगंत्रिफलांव्योषंशुद्धंलोहमलस्यच।
पुरातनगुडेनात्रलेहयेद्दिनपूर्वकम् ॥ ८३ ॥
श्वयथुंनाशयेत्क्षिप्रंपांडुरोगंहलीमकम् ॥।
मूलंसंगृह्यकाश्मर्य्याःपिष्ट्वातण्डुलवारिणा ॥ ८४ ॥
पानंतेनोदकेनैवकामलांहन्तिसज्वराम्।
अपामार्गमूलंतक्रेणपानात्कामलांहान्ति ॥ ८५ ॥
श्वेतापराजितामूलंमधुदुग्धेनापिष्ट्वापानात्कामलांहन्ति
विच्छातीमूलंपूर्वदिक्स्थंशनौनिमंत्र्यरवौआनीयरक्तसू-

त्रेणशिरसिबंधनाच्छोथकामलांहन्ति।त्रिफलामधुगुडं
आर्द्रकरसेनपानाच्छोथकामलांहन्ति।
गोरोचनाद्रोणपुष्पेणचक्षुरञ्जनात्तथा
विष्णुक्रान्तामूलपानात्सप्ताहेनकामलांहन्ति ॥ ८६ ॥

इति हरमेखलायाम्।

अर्थ–वायविडंग, त्रिफला,त्रिकुटा और शुद्धलोहेका मैल इनको पुराने गुडमें मिलाकर खानेसे-सूजन, पांडु और हलीमकरोग दूर होताहै।कुम्भेरकीजडको चावलोंके जलमें पीसकर चावलोंके जलके साथ पीनेसे ज्वरयुक्त कामलारोग दूर होता है। चिरचिटेकी जडको तक्रके साथ पीनेसै कामला रोग दूर होताहै।सफेदकोयलकी जडको सहत और दूधमें पीसकर पीनेसै कामलारोग नष्ट होताहै।पूर्वदिशामें स्थित विछाती (वंग भाषामें बिछाटी)की जडको शनैश्चरके दिन नौतआवे और रविवारके दिन जाकर उखाडलावे; फिर लालसूतके द्वारा शिरपै बांधे तो सूजनसंयुक्त-कामलारोग दूर होजाय। त्रिफला, मधु और गुडको अदरखके रसमें मिला कर सेवनकरनेसै सूजनसहित कामलारोग शांत होताहै। गोलोचन और गूमाको पानीमें पीसकर आंखोंमें लगानेसै कामलारोग आराम होताहै। अथवा कोयलकी जडको सातदिनपर्य्यंत पानीके साथ पीनेसै कामलारोग नाश होताहै ॥ ८६ ॥

मृतसूतार्ककान्ताभ्रतीक्ष्णंतालंसमाक्षिकम्।
देवदालीद्रवैःपिष्टंदिनैकंतत्समंसमम् ॥ ८७ ॥
पाचयेद्वालुकायंत्रेत्रिदिनान्तेसमुद्धरेत्।
अमृतोत्पलकन्दातिबलाक्षेत्रफलंयुतम् ॥ ८८ ॥
पिष्टंयष्ट्यम्भसायामंयामंक्षौद्रासितासमम्।
रसःपंचास्यनामायंसेवयेत्कुम्भकामली ॥ ८९ ॥

इति पंचास्यरसः।

अर्थ–पारेकीभस्म, तांबा,कान्तलोहा, अभ्रक, इस्पात, हरिताल और सोनामाखी इन सबको एकदिन देवदालीके रसमें पीसकर तीन दिन

वालुकायंत्रमें पकावे, फिर इसमें गिलोय, कुमुदकी जड, खिरैटी, और गूगलका चूर्ण मिलाकर मुलेठीके रसमें एकप्रहर मर्दनकरे, पीछे समानभाग मिश्री और सहत मिलालेवे, इस पंचास्यरसको सेवन करने से–कुम्भकामलारोग दूर होताहै ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥

इति पांडुरोगाधिकारसमाप्त ।

अथ रक्तपित्तचिकित्सामाह ।

नोतिक्रमादौसंग्राह्यंबलिनोऽप्यश्नतश्चयत् ।
हृत्पांडुग्रहणीदोषप्लीहगुल्मज्वरादिकृत् ॥ १ ॥
क्षीणमांसबलंबालंवृद्धंशोथानुबन्धिनम् ।
अवश्यमविरेच्यश्चस्तम्भनैःसमुपाचरेत् ॥ २ ॥
ऊर्द्धप्रवृत्तदोषस्यपूर्वंलोहितपित्तिनः ।
अक्षीणबलमांसाग्नेःकर्त्तव्यमपतर्पणम् ॥ ३ ॥
विनाशुण्ठींषडंगेनदद्याच्चार्द्धंशृतंजलम् ।
केवलंशृतशीतंवादद्यात्तोयंपिपासवे ॥ ४ ॥
ऊर्द्धगेतर्पणंपूर्वंकर्तव्यश्चविरेचनम् ।
प्रागधोगमनेपेयाश्मनश्चयथाबलम् ॥ ५ ॥
तर्पणंसघृतंक्षौद्रंलाजचूर्णैःप्रदापयेत् ।
ऊर्द्धगंरक्तपित्तन्तुपीतंकालेव्यपोहति ॥ ६ ॥
जलंखर्जूरमृद्वीकामधुकैःसपरूषकैः ।
शृतंशीतंप्रयोक्तव्यंतर्पणार्थंसशर्करम् ॥ ७ ॥
आरग्वधेनधात्र्यावात्रिवृतापथ्ययाथवा ।
विरेचनंप्रयोक्तव्यंशर्करामाक्षिकोद्भवम् ॥ ८ ॥
त्रिवृतात्रिफलाश्यामापिप्पलीशर्करामधु ।
मोदकःसन्निपातोर्द्धरक्तपित्तज्वरापहः ॥ ९ ॥
वमनंमदनोन्मिश्रंमन्थःसक्षौद्रशर्करः ।

शालियष्टिकनीवारकरदूषप्रशान्तिका ॥ १० ॥
श्यामाकश्चप्रियंगुश्चभोजनंरक्तपित्तिनाम् ।
मसूरमुद्गचणकाःसमकुष्टाढकीफलाः ॥ ११ ॥
प्रशस्तासूपयूषार्थंकल्पितारक्तपित्तिनाम् ।
शाकंपटोलवेतानतण्डुलीयादिकंहितम् ॥ १२ ॥
मांसंलावकपोतादिशशैणहारिणादिजम् ।
वृषपत्राणिनिष्पीडचरसंसमधुशर्करम् ॥ १३ ॥
पिबेत्तेनशमंयातिरक्तपित्तंसुदारुणम् ।
शतपर्व्यारसंक्षौद्रंखण्डश्चैवसमंसमम् ॥ १४ ॥
आज्येनपयसापीतंरक्तपित्तनिबर्हणम् ॥ १५ ॥
वासाकषायोत्पलमृत्प्रियङ्गुलोध्राञ्जनाम्भोरुहकेशराणि।
पीत्वासिताक्षौद्रयुतानिहन्यात्पित्तासृजोवेगमुदीर्णमाशु
प्रक्षेपणार्थंनीलोत्पलादीनांचूर्णानांमधु
शर्करयोश्चमिलित्वा ४ माषकाः ।
तालीशचूर्णसंयुक्तःपेयःक्षौद्रेणवासकःस्वरसः ।
कफपित्ततमकश्वासस्वरभेदास्रपित्तहरः ॥ १७ ॥
अभयामधुसंयुक्तादीपनीपाचनीमता ।
श्लेष्माणंरक्तपित्तंचहान्तिशूलातिसारनुत् ॥ १८ ॥

अर्थ–रक्तपित्तरोगमें बलवान् मनुष्यकोभी प्रथम तिक्तद्रवोंका सेवन नहीं करावे, कारण यह है कि तिक्तपदार्थोंके सेवनकरनेसे हृद्रोग, पांडु, संग्रहणी, प्लीहा, गुल्म और ज्वरादिरोग उत्पन्न होते हैं। क्षीणमांस, दुर्बल, बालक, वृद्ध और शोथसंयुक्तरक्तपित्तवाले रोगीको कदापि विरेचन (जुल्लाब) नहीं करावे, स्तम्भनक्रियाके द्वारा चिकित्सा करे। बल, मांस और अग्नियुक्त ऊर्द्धगदोषसंयुक्त रक्तपित्त-वाले रोगीको प्रथम लंघन करावे और तृषा लगेतो सोंठके विना अर्द्ध-शृत षडंगजल देवे, अथवा अर्द्धावशिष्ट पकायाहुवा जलदेवे। ऊर्द्धगत

रक्तपित्तरोगमें प्रथम तर्पण और पश्चात् विरेचन कराना चाहिये। अधोगतरक्तपित्तरोगमें प्रथम पेया और पश्चात् वमन करानी चाहिये। खीलोंका चूर्ण, घृत और सहत मिलाकर बनाया हुवा, अथवा पिंडखजुर, मुलैठी, दाख और फालसा इनके काढेमें बूरा डालकर बनाया हुवा तर्पण, ऊर्द्धगतरक्तपित्तरोगमें देना चाहिये। अमलतास और आमलेके काढेमें बूरा और सहत डालकर अथवा निसोत, और हरड़के काढेमें बूरा और सहत मिलाकर तैय्यार किया हुवा विरेचन देना चाहिये। निसोत, त्रिफला, कालीसर और पीपल इनके चूर्णमें बूरा और सहत मिला मोदक बनाकर खानेसे सान्निपातिक ऊर्द्धगतरक्तपित्त और ज्वर नष्ट होताहै। मंथमें मैनफल, सहत और बूराको मिलाकर सेवनकरनेसे वमन होकर रक्तपित्त दूर होजाताहै। शालिधान साठीधान्य, नीवार, कोदों, प्रशान्तिका, समा और कंगनी इनसबका भात, मसूर, मूग, चने, मोठ, अडहर इनकी दाल वा यूष, परवल, वैंतका अग्रभाग और चौलाई आदिशाक, लवा, कबूतर, खरगोस, हिरन और एणमृगादिका मांस रक्तपित्तरोगमें हितकारीहै। अडूसेके रसमें बूरा और सहत मिलाकर पनिसे रक्तपित्तरोग शांत होताहै। दूबके रसमें बूरा और सहत डालकर बकरीके दूधके साथ पीनेसे रक्तपित्तरोग दूर होता है। अडूसेके काढ़ेमें कुमुद, (बबूला) सोरठकीमट्टी, फूलप्रियंगु, लोध, रसोत और कमलकेशरका चूर्ण मिला पश्चात् शर्करा और सहत डालकरपनिसे रक्तपित्तरोग शमन होताहै। अडूसेका काढा, तालीसपत्रके चूर्णके साथ और मधुके साथ पीनेसै—कफ, पित्त, तमक श्वास, स्वरभेद और रक्तपित्तरोग आराम होताहै। हरड़के चूर्णमें सहत मिलाकर खाना—दीपन, पाचन, कफ, रक्तपित्त, शूल और अतिसार निवारकहै ॥ १८ ॥

एलापत्रत्वचोद्राक्षाःपिप्पल्यर्द्धपलंतथा।
सितामधुकखर्जूरमृद्वीकाश्चपलोन्मिताः ॥ १९ ॥
संचूर्ण्यमधुनायुक्तांगुटिकांकारयेद्भिषक्।
अक्षमात्रांततश्चैकांभक्षयेन्नादिनेदिने ॥ २० ॥
कासंश्वासंज्वरंहिक्कांछर्दिंमूर्च्छांमदंभ्रमम्।
रक्तनिष्ठीवनंतृष्णांपार्श्वशूलमरोचकम् ॥ २१ ॥

शोषंप्लीहामवातांश्चस्वरभेदंक्षतक्षयम् ।
गुटिकातर्पणीवृष्यारक्तपित्तञ्चनाशयेत् ॥ २२ ॥

इतिएलादिगुटिका ।

अर्थ-इलायची, तेजपत्र, दालचीनी, दाख और पीपल यह प्रत्येक दो दो तोले, मिश्री, महुवा, खजूर, और किसमिस यह प्रत्येक चार चार तोले लेवै, पीछे सबका चूर्णकर सहत मिलाकै दोदो तोलेभरकी गोली बनालेवे, एकगोली रोज खानेसे- खाँसी, श्वाँस, ज्वर, हिचकी, वमन, मूर्छा, मद, भ्रम, रुधिरका थूकना, तृषा, पार्श्वशूल, अरुचि, शोष, प्लीहा, आमवात, स्वरभेद, क्षतक्षय, और रक्तपित्तरोग विनष्ट होताहै । और यह गोली- तृप्तिकारक और वृष्य है ॥ २२ ॥

नासाप्रवृत्तंरुधिरंघृतमृष्टंश्लक्ष्णपिष्टमामलकम् ।
सेतुरिवतोयवेगंनिरुणद्धिमूर्ध्निलेपेन ॥ २३ ॥
काञ्जिकेनपिष्टामलकमिति ।
नस्यंदाडिमपुष्पोत्थोरसोदूर्वाभवोथवा ।
आम्रास्थिजःपलाण्डोर्वानासिकास्रुतरक्तजित् ॥ २४ ॥
मेढ्रगेतिप्रवृत्तेतुबस्तिरुत्तरसंज्ञितः ।
शृतंक्षीरंपिबेद्वापिपंचमूल्यातृणाह्वया ॥ २५ ॥
रक्तातिसारिणंकर्म्मरक्तंस्यात्पायुगामिनम् ।
पित्तप्रायेऽधिकंसर्वमेढ्रगेचनियोजयेत् ॥ २६ ॥

अर्थ-घीमें भुनेहुवे आमलेको काँजीमें बारीक पीसकर मस्तकपै लेपकरनेसै नासिकासै रुधिरका निकलना बंद होजाताहै, जैसे पुलसे जलका वेग बंद होजाताहै । अथवा अनारके फूलकारस, वा दूबकारस, अथवा आमलेकी गुठलीरस, या प्याजके रसके द्वारा नास लेनेसै नाशिकासै रुधिरका गिरना बंद होजाताहै । लिंगसै रुधिर निकलतारहै ऐसे रक्तपित्तरोगमें उत्तर बस्तिकर्म्म कराना चाहिये । तृण पंचमूलीको दूधमें औटाकर पीनेसै अथवा रक्तातिसारोक्त चिकित्सा करनेसै गुदासै निकलताहुवा रुधिर बंद होजाहै । मेढ्र (लिंग) गत रक्तपित्तरोगमें पित्तनाशक चिकित्सा करनी कही है ॥ २६ ॥

शतावर्य्यास्तुमूलानांरसंप्रस्थद्वयंमतम् ।
तत्समंचभवेत्क्षीरंघृतप्रस्थंविपाचयेत् ॥ २७ ॥
जीवकर्षभकौमेदामहामेदास्तथैवच ।
काकोलीक्षीरकाकोलीमृद्वीकामधुकस्तथा ॥ २८ ॥
मुद्गपर्णीमाषपर्णीविदारीरक्तचंदनम् ।
शर्करामधुसंयुक्तंसिद्धंविस्रावयेद्भिषक् ॥ २९ ॥
रक्तपित्तविकारेषुवातरक्तगदेषुच ।
क्षीणशुक्रेषुदातव्यंवाजीकरणमुत्तमम् ॥ ३० ॥
अंगदाहंशिरोदाहंज्वरंपित्तसमुद्भवम् ।
योनिशूलंचदाहंचमूत्रकृच्छ्रंश्चपैत्तिकम् ॥ ३१ ॥
एतान्रोगान्निहन्त्याशुच्छिन्नाभ्राणीवमारुतः ।
शतावरीसर्पिरिदं बलवर्णाग्निदीपनम् ॥ ३२ ॥
स्नेहःपादःशृतःकल्कःकल्कवन्मधुशर्करे ।
इतिवाक्यबलात्स्नेहेप्रक्षेप्यंपादिकंभवेत् ॥ ३३ ॥

इति शतावरीघृतम् ।

अर्थ–शतावरकी जड़का रस४सेर,दूध४सेर,घी४सेर जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, दाख, मुलैठी, मुगवन, मषवन, विदारीकंद और लालचंदन इन सबका कल्क १ सेर सहत और घृत मिलाहुवा सेरभर लेवे, पश्चात् विधिपूर्वक घृतको सिद्धकरे । इस घृतको रक्तपित्त , वातरक्त और शुक्रकी क्षीणतामें देनाचाहिये, यह अत्युत्तम वाजीकरण है । तथा यह घृत– अंगदाह, शिरोदाह, पित्तज्वर, योनिशूल, दाह और पित्तोद्भवमूत्रकृच्छ्ररोगको दूर करैहै । यह शतावरीघृत-बल, वर्ण और अग्निको दीपन करे है ॥ ३३ ॥

तथाचबिन्दुसारे ।

वासादाडिमपुष्पस्यदूर्वारससमन्वितः ।
अलक्तकरसोपेतःपथ्यारससमन्वितः ॥ ३४ ॥

योजितोनस्यतःक्षिप्रंत्रिदोषमपिदेहिनाम् ।
नासारक्तप्रवृत्तन्तुहन्यादितिकिमद्भुतम् ॥ ३५ ॥

अर्थ–अडूसा, अनारका फूल, दूब, आल और हरड इनसबके रसको मिलाकर नास लेनेसे त्रिदोषसे उत्पन्नहुवा नासागत रक्तपित्त दूर होताहै ॥ ३५ ॥

वासकस्वरसेसर्पिःपयसासहपाचयेत् ।
कल्कैर्भूनिम्बकुटजमुस्तयष्ट्याह्वचंदनैः ॥ ३६ ॥
उदीच्यमधुकानन्ताशिरीषोशीरपद्मकैः ।
त्रायन्त्युत्पलमूर्वाभिर्मदयन्त्याश्चपल्लवैः ॥ ३७ ॥
सिताक्षौद्रयुतोहन्याद्रक्तपित्तंसुदारुणम् ।
पित्तंकासंचशूलंचस्वरभेदंहलीमकम् ॥ ३८ ॥
रक्तपित्तकफोद्भूतान्रोगानन्यांश्चनाशयेत् ॥ ३९ ॥
स्वरसचतुर्गुणंपयःस्नेहसमम् ।

इति बृहद्वासाघृतम् ।

अर्थ–घृत ४ सेर, अडूसेका रस १६ सेर, दूध ४ सेर, चिरायता, कुडेकीछाल, नागरमोथा, मुलैठी, चंदन,सुगंधवाला, महुवा, अनन्तमूल, सिरस, खस, पद्माख, त्रायमान, कमोदिनी, मुर्वा, और मोतियाके पत्ते इनसबका मिलाहुवा कल्क सेरभर,बूरा आदसेर,और सहत आदसेर लेवे, पश्चात् इन सबको मिलाकर विधिपूर्वक घृतको सिद्धकरे । इस घृतको सेवनकरनेसे दारुणरक्तपित्त, पित्त, खांसी, शूल, स्वरभेद, हलीमक, रक्तपित्त और कफसे उत्पन्न हुवे रोग विनष्ट होते हैं ॥ ३९ ॥

अश्वगंधापलशतंतदर्द्धंगोक्षुरस्यच ।
शतावरीविदारीचशालपर्णीबलातथा ॥ ४० ॥
अश्वत्थस्यचशुंगानिपद्मबीजंपुनर्नवा ।
काश्मरीफलमेतच्चमाषबीजन्तथैवच ॥ ४१ ॥
पृथग्दशपलान्भागांश्चतुर्द्रोणेऽम्भसःपचेत् ।

चतुर्भागावशेषन्तुकषायमवतारयेत् ॥ ४२ ॥
मृद्वीकापद्मकंकुष्ठंपिप्पलीरक्तचन्दनम् ।
वालकंनागपुष्पञ्चशूकाशिम्बीफलंतथा ॥ ४३ ॥
नीलोत्पलंशारिवेद्वेजीवनीयंविशेषतः ।
पृथक्कर्षसमंचैवशर्करायाःपलद्वयम् ॥ ४४ ॥
रसस्यपौण्ड्रकेक्षूणामाढकेतत्रदापयेत् ।
चतुर्गुणेनपयसाघृतप्रस्थंविपाचयेत् ॥ ४५ ॥
रक्तपित्तक्षतक्षीणकामलावातशोणितम् ।
हलीमकंतथाशोथंवर्णभेदंस्वरक्षम् ॥ ४६ ॥
अरोचकंमूत्रकृच्छ्रंपार्श्वशूलंचनाशयेत् ।
एतद्राज्ञांप्रयोक्तव्यंबह्वन्तःपुरचारिणाम् ॥ ४७ ॥
स्त्रीणाञ्चैवह्यपत्यानांदुर्बलानांचदेहिनाम् ।
क्लीबानांनष्टशुक्राणांजीर्णानामल्परेतसाम् ॥ ४८ ॥
श्रेष्ठंबलकरंहृद्यंवृष्यंपेयंरसायनम् ।
ओजस्तेजःकरञ्चैवआयुष्प्राणविवर्द्धनम् ॥ ४९ ॥
संवर्द्धयतिशुक्रञ्चपुरुषंदुर्बलेन्द्रियम् ।
सर्वरोगविनिर्मुक्तस्तोयासिक्तोयथाद्रुमः ॥ ५० ॥
कामदेवइतिख्यातः सर्वर्तुषुप्रशस्यते ॥ ५१ ॥
जीवनीयंजीवनीयदशकम् ।

इति कामदेवघृतम् ।

अर्थ—असगंध१०० पल, गोखरू ५० पल, शतावर, विदारीकंद,शारिवन, खिरैटी, पीपलकी कोपल, कमलगट्टा, पुनर्नवा, कुम्भेरका फल और माषबीज यह प्रत्येक४०तोले भरले पश्चात् इनसबको ४ द्रोण अर्थात्१२८ सेर जलमें पकाव जब जलकर चौथाभाग बाकी रहै तब उतारले; फिर इसमें दाख, पद्माख, कूठ, पीपल, लालचंदन, सुगंधवाला, नागकेशर, कौंछके बीज, नीलोत्पल (जिसके अभावमें "नीलोफर" गेरतेहैं) शारिवा (गौरसिर, गौरीयावासाऊ ई०सालशापरेला) श्यामलता

(कालीसर, करियावासाऊ, अनन्तमूल), जीवक, ऋषभक, ऋद्धि, वृद्धि, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, मुगवन, मषवन यह प्रत्येक २ तोले, बूरा आठ ८ तोले, पुंड्रकईखकारस ८ सेर, दूध ८ सेर डाले; तदनन्तर इन सबमें दो २ सेर घी डाल अच्छेप्रकार घृतको सिद्धकरे। यह घृत–रक्तापित, क्षतक्षीण, कामला, वातरक्त,हलीमक, सूजन, वर्णभेद, स्वरक्षय, अरुचि, मूत्रकृच्छ्र, और पार्श्वशूल (पसलीयोंमें दर्द) को नष्ट करेहै। और यह राजाओंके सेवने योग्यहै। तथा वंध्यास्त्री, दुर्बलमनुष्य, नपुंसक, नष्टशुक्रवाले, वृद्ध और अल्पवीर्य्यवाले मनुष्योंको अत्यन्त हितकारीहै, बलकारक, हृदयको हितकारी, वीर्य्यवर्द्धक, रसायन, ओजजनक, तेजवर्द्धक, आयु और प्राणवर्द्धक, और दुर्बलइन्द्रियोंवाले पुरुषको पुष्टिकारक, और सर्वरोगनाशकहै। यह कामदेवघृत–सर्वऋतुओंमें सेवना श्रेष्ठहै ॥ ५१ ॥

कूष्माण्डकात्पलशतंसुस्विन्नंनिष्कुलीकृतम्।
पचेत्तत्तेघृतप्रस्थेशनैस्ताम्रमयेदृढे ॥ ५२ ॥
यदामधुनिभःपाकस्तदाखण्डशतंन्यसेत्।
पिप्पलीशृंगवेराभ्यांद्वेपलेजीरकस्यच ॥ ५३ ॥
त्वगेलापत्रमरिचधान्यकानांपलार्द्धकम्।
न्यसेच्चूर्णीकृतंतत्रदार्व्यासंघट्टयेत्ततः ॥ ५४ ॥
तत्पक्वंस्थापयेद्भाण्डेदत्त्वाक्षौद्रंघृतार्द्धकम्।
तद्यथाग्निबलंखादेद्रक्तपित्तीक्षतक्षयी ॥ ५५ ॥
कासश्वासतमश्छर्दितृष्णाज्वरनिपीडितः।
वृष्यंपुनर्नवकरंबलवर्णप्रसादनम् ॥ ५६ ॥
उरःसन्धानकृद्बल्यंबृंहणंस्वरशोधनम्।
अश्विभ्यांनिर्मितंसिद्धंकूष्माण्डकरसायनम् ॥ ५७ ॥
खण्डामलकमानानुसारात्कूष्माण्डकद्रवात्।
पात्रंपाकायदातव्यंयावानत्ररसोभवेत् ॥ ५८ ॥

अत्रापिमुद्रयापाकोनिस्त्वचंनिष्कुलीकृतम् ॥ ५९ ॥

इतिखण्डकूष्माण्डः ।

अर्थ-प्रथम पेठेको लेकर उसेलेवे फिर उसको छीलकर टुकड़े कर लेवे, वह टुकडे तोलमे १०० पललेवे, पश्चात् उत्तम तांबेके बरतनमें ६४ तोले घृतको डालकर चूलेपै चढादेवे, जब घी खूब गरम होजाय तब उसमें वह पेठेके टुकडे गेरदेवे, फिर धीरे धीरे पकावे, जब वह पकते २ सहतकी समान होजाय तब उसमें १०० पल बूरा मिलादेवे, पश्चात् पीपल, सोंठ और जीरा यह प्रत्येक आठ तोले, दालचीनी, इलायची, कालीमिरच, और धनिया यह प्रत्येक दो २ तोले लेवे, इन सबका चूरन कर मिलादेवे, करछी चलातारहै, जब भलेप्रकारसै पकजावे तब उत्तमपात्रमें करकै ३२ तोले सहत मिलादेवे, । इसको अमिका बलाबल विचारकर भक्षणकरे । यह रक्तपित्त, क्षतक्षय, खाँसी, श्वास, तम, वमन, तृषा और ज्वरसै पीडितमनुष्योंको सेवन करना चाहिये । वृष्य, शरीरको फिरसै नवीन करनेवाला, बलकारक, वर्णको प्रसन्न करनेवाला, फटीहुई छातीको जोड़नेवाला, पुष्टिकारक, स्वरशोधक यह कूष्मांडरसायन श्रीमान् अश्विनीकुमारोंने निर्माण की है, इसको खण्डकूष्माण्ड कहतेहैं ॥ ५९ ॥

पञ्चाशच्चपलंस्विन्नंकूष्माण्डात्प्रस्थमाज्यतः ।
ग्राह्यंपलशतंखंडंवासाक्काथाढकेपचेत् ॥ ६० ॥
मुस्ताधात्रीशुभाभार्गीत्रिसुगन्धैश्चकार्षिकैः ।
ऐलेयविश्वधन्याकमरिचैश्चपलांशिकैः ॥ ६१ ॥
पिप्पलीकुडवञ्चैवमधुमानीप्रदापयेत् ।
कासंश्वासंक्षयंहिक्कांरक्तपित्तंहलीमकम् ॥ ६२ ॥
हृद्रोगमम्लपित्तञ्चपीनसंचव्यपोहति ॥ ६३ ॥
कूष्माण्डरसोऽत्रदेयः ॥

इति वासाखण्डकूष्माण्डः ।

अर्थ-प्रथम पेठेको उसेकर छीललेवे, फिर चकूसे बनारकर टुकडे करलेवे.

१ शुभावंशलोचना । २ ऐलेयकमेलवालुकम् ।

ऐसे टुकडे २०० पल, घृत ६४ तोले,बूरा१०० पल, पेठेकारस २५६ तोले, अडुसेका काथ २५६ तोले लेवे, पश्चात् इन सबको विधिपूर्वक मिलाकर पकावे, फिर नागरमोथा, आमला, वंशलोचन, भारंगी, तेजपात, इलायची, दालचीनी, यह प्रत्येक दोदो तोले लेवे, एलुआ, सोंठ, धनिया, कालीमिरच यह प्रत्येक चार तोले, पीपल १६तोले लेवे, फिर इनसबका चूर्णकर मिलादेवे और सहत ३२ तोले मिलादेवे,। यह खाँसी, श्वास, क्षय, हिचकी रक्तपित्त, हलीमक, हृदयरोग, अम्लपित्त, और पीनसरोगको दूरकरैहै ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ॥

मृतंसूतंमृतंतीक्ष्णंतुल्यवासाद्रवैर्दिनम् ।
मर्दितंमासमात्रन्तुभक्षयेन्मृगजंरसम् ॥ ६४ ॥
सर्पाक्षिमधुनालेह्याअनुस्याद्रक्तपित्तके ॥ ६५ ॥

इतिमृगजरसः ।

अर्थ–पारेकी भस्म और इस्पातकी भस्मको समानभाग लेकर अडूसेके रसमें एकदिन खरल करै। एक मासाभर खानेसै रक्तपित्तरोग दूर होताहै और इसके ऊपर सर्पाक्षीकी जड़को सहतके साथ भक्षणकरे, यह अनुपानहै ॥ ६४ ॥ ६५ ॥

नीलोत्पलंशिलाक्षौद्रंतुल्यांशंपद्मकेशरम् ।
तण्डुलोदकपानेनरक्तपित्तहरम्भवेत् ॥ ६६ ॥
शृंगाटकस्यमज्जायाःपलैकंशीतवारिणा ।
पीतंवाथगवांक्षीरैरक्तपित्तरुजापहम् ॥ ६७ ॥
नवनीतंसितालाजाद्राक्षयासहभक्षयेत् ।
मुस्तकेनघृतंदद्याद्रक्तपित्तहरंपरम् ॥ ६८ ॥
द्राक्षावासायुतंक्काथंपिबेच्चशर्करान्वितम् ।
वासारसंसिताक्षौद्रैर्वासावाशर्करासमा ॥ ६९ ॥
भक्षयेद्रक्तपित्तार्त्तस्तृष्णादाहज्वरंहरेत् ।
धात्रीचूर्णंसितातुल्यंभक्षयेद्रक्तपित्तनुत् ॥ ७० ॥

काकमाचीरसंक्वाथ्यंक्षीरैश्चतुर्गुणेनतत्।
पिबेन्मधुसिताभ्यांचद्वन्द्वोत्थंरक्तपित्तनुत्॥ ७१॥

अर्थ-नीलोत्पल (फा० नीलोफर), मैनशिल,कमलकेशर और सहत इन सबको समानभागेलकर चावलोंके जलके साथ पीनेसै-रक्तपित्तरोग दूर होताहै। चारतोले सिंघाडेकी मीगको लेकर शीतलजलके साथ अथवा गायके दूधके साथ पीवेतो-रक्तपित्तरोग नाश होय,। नवनीत (माखन), मिश्री, खील और दाख इन सबका एकत्र चूर्णकर खानेसै, अथवा नागरमोथेके चूरनको घृतके साथ मिलाकर चाटनेसै, तथा दाख और अडूसेके क्वाथमें बूरा मिलाकर पीनेसै,वा बिसोटेके रसमें सहत और मिश्री डालकर पीनेसै,अथवा अडूसेके रसमें बराबरकी बूरा मिलाकरपीनेसै-रक्तपित्त, तृषा, दाह और ज्वर दूर होताहै। आमलेके चूरनमें बराबरकी मिश्री मिलाकर खानेसे रक्तपित्त नष्ट होताहै। सोंठके चूरनमें सहत मिलाकर चाटनेसै-कफोत्पन्न रक्तपित्तरोग दूर होता है। मकोयके रसको चौगुने दूधमें औटाकर सहत और मिश्री मिलाके पीनेसे दो दोषोंसे उत्पन्नहुवा रक्तपित्तरोग दूर होताहै ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥

मृतंवामूर्छितंसूतंकार्पासपुष्पजैर्द्रवैः।
मर्दयेद्दिनमेकन्तुतेनपूर्य्यावराटिका॥ ७२॥
निरुध्यचान्धमूषायांभांडेरुद्ध्वापुटेपचेत्।
उद्धृत्यचूर्णयेच्छ्लक्ष्णंमरिचैर्द्विगुणैःसह ॥ ७३॥
गुञ्जैकेकंघृतैर्लेह्यंरक्तपित्तंनियच्छति।
कपर्दकरसोनामसाध्यंचसाधयत्यलम्॥ ७४॥
उदुम्बरफलंपक्वंघृतैःपाच्यंसितायुतम्।
भक्षयेन्मरिचैर्युक्तमनुस्याद्रक्तपित्तनुत्॥ ७५॥

इतिकपर्दकरसः।

अर्थ-मृत वा मूर्छित पारेको कपासके फूलोंके रसमें एकदिन खरल करकै फिर कौड़ीमें भरदेवे, और कौड़ीका मुख बंदकर देवे, पश्चात् अंधमूषामें रख गजपुटमें फूँक देवे, जब अपने आप शीतल होजावे तब

निकालकर दुगुनी कालीमिरचोंके साथ पीसलेवे । एक गुंजाभर इसको घीके साथ चाटनेसै-रक्तपित्तरोग दूर होताहै । यह कपर्दकरस असाध्यरक्तपित्तरोगको भी साधताहै । इसपै पके हुवे गूलरोंको घी और बूरामें पकाकर फिर कालीमिरचोंको चूर्ण मिलाके भक्षण करे, यह अनुपानहै ॥ ७५ ॥

वासानिम्बपटोलंचत्रायमाणादुरालभा ।
धातकीपर्पटंमुस्तमुशीरंकटुरोहिणी ॥ ७६ ॥
निशादारुनिशातुल्यंतोयेदशगुणंपचेत् ।
पादशेषेहरेत्काथंगोघृतंकाथपादकम् ॥ ७७ ॥
त्रिफलात्रिकटुनिम्बंचन्दनञ्चपलोन्मितम् ।
कल्कंतंनिक्षिपेत्तत्रघृतशेषंविपाचयेत् ॥ ७८ ॥
घृतंमाहेश्वरंनामरक्तपित्तहरंपिबेत् ॥ ७९ ॥

इति माहेश्वरघृतम् ।

अर्थ-अडूसा, नीम, परवल, त्रायमान, जवासा, धायकेफूल, पित्तपापडा, नागरमोथा, खस, कुटकी, हलदी और दारुहलदी यह सब समान भाग-लेकर दशगुने पानीमें पकावे, जब पकते २ चौथाभाग शेषरहजाय तब काथसे चौथा भाग गायका घी, त्रिफला, त्रिकुटा, नीम और चंदन इन सबका कल्क चार चार तोले मिलाकर घृतको सिद्धकरे । यह माहेश्वर-घृत-रक्तपित्तनाशक है ॥ ७९ ॥

लोहाच्चतुर्गुणंक्षीरमाज्याद्द्विगुणमुत्तमम् ।
चूर्णपादन्तुवैडंगंदद्यान्मधुसितेसमे ॥ ८० ॥
ताम्रपात्रेशुभेपक्त्वास्थापयेद्घृतभाजने ।
माषकादिक्रमेणैवभक्षयेद्विधिपूर्वकम् ॥ ८१ ॥
अनुपानंप्रयुंजीतनारिकेलजलादिकम् ।
रक्तपित्तंजयेत्तीव्रमम्लपित्तंक्षतक्षयम् ॥ ८२ ॥
पुष्टिदंकान्तिजननमायुष्यंवृष्यमुत्तमम् ॥ ८३ ॥

इति समशर्करलौहम् ।

अर्थ-एकभाग लोहा, चारभागदूध, दोभागघी, लोहेसे चौथा भाग वायविडंगका चूरन लेवे, पहिले लोहेकी भस्म, दूध, और घृतको तांबेके बरतनमें पकाकर फिर वायविडंगका चूरन मिलादेवे, शीतल होजाय तब समान भाग सहत और मिश्री मिलाकर घीके बरतनमें भरकै धर देवे, क्रमसे माषादि बढाकर विधिपूर्वक सेवन करे। और ऊपरसे नारियलका जल पीवे, यह-तीव्ररक्तपित्त, अम्लपित्त, क्षतक्षय, इनको दूरकरे, पुष्टिको करे, कान्तिजनक, आयुवर्द्धक, और वीर्य्यवर्द्धक है ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥

शतावरीछिन्नरुहावृषमुण्डातिकाबला ।
तालमूलीचगायत्रीत्रिफलायास्त्वचन्तथा ॥ ८४ ॥
भार्गीपुष्करमूलन्तुपृथक्पंचपलानिच ।
जलेद्रोणेविपक्तव्यमष्टभागावशेषितम् ॥ ८५ ॥
दिव्यौषधिहतस्यापिमाक्षिकेणहतस्यवा ।
पलद्वादशकन्देयंरुक्मलोहस्यचूर्णितम् ॥ ८६ ॥
खंडतुल्यंघृतंदेयंपलषोडशिकंबुधैः ।
पचेत्ताम्रमयेपात्रेगुडपाकोयथामतः ॥ ८७ ॥
प्रस्थार्द्धमधुनोदेयंशुभाश्मजतुकंत्वचम् ।
शृंगीविडंगकृष्णेचशुण्ठ्यजाजीपलंपलम् ॥ ८८ ॥
त्रिफलाधान्यकंपत्रंत्र्यक्षंमरिचकेशरम् ।
चूर्णंदत्त्वासुमथितंस्निग्धभाण्डेनिधापयेत् ॥ ८९ ॥
यथाकालंप्रयुंजीतबिडालपदकन्तुतत् ।
गवांक्षीरानुपानंचसेव्यंमांसरसंपयः ॥ ९० ॥
गुरुवृष्यानुपानानिस्निग्धमांसादिभोजनम् ।
रक्तपित्तंक्षयंकासंपक्तिशूलंविशेषतः ॥ ९१ ॥
वातरक्तंप्रमेहञ्चशीतापित्तंवमिंक्लमीन् ।
श्वयथुंपाण्डुरोगञ्चकुष्ठंप्लीहोदरंतथा ॥ ९२ ॥

आनाहंरक्तसंस्रावमम्लपित्तंनियच्छति ।
चक्षुष्यंबृंहणंवृष्यंमंगल्यंप्रीतिवर्द्धनम् ॥ ९३ ॥
आरोग्यंपुष्टिदंश्रेष्ठंकामाग्निबलवर्द्धनम् ।
श्रीकरंलाघवकरंखण्डखाद्यंप्रकीर्त्तितम् ॥
छागंपारावतंमांसंतित्तिरिःक्रकराःशशाः ॥ ९४ ॥
कुरंगाःकृष्णसाराश्चतेषांमांसानियोजयेत् ।
नारिकेलपयःपानंसुनिषण्णकवास्तुकम् ॥ ९५ ॥
शुष्कमूलकबीजाख्यंपटोलंबृहतीफलम् ।
फलंवार्त्ताकुपक्काम्रंखर्ज्जूरंस्वादुदाडिमम् ॥ ९६ ॥
ककारपूर्वकंयच्चमांसञ्चानूपसम्भवम् ।
वर्जनीयंविशेषेणखण्डखाद्यंप्रकुर्वता ॥ ९७ ॥
दिव्यौषधिर्मनःशिलाजीवाख्यंशाकमारिषम् ।
एतच्चपूर्वयुक्तिप्रयोगात्इदानीन्तुत्रिचतुः-
पंचरक्तिकाद्यारभ्यरक्तिवृद्ध्यलोहान्तरवत् ।

इतिखण्डखाद्यंलोहम् ।

अर्थ-शतावर, गिलोय, अडूसा, गोरखमुंडी, खिरैंटी, मुशली, खैर, त्रिफला, भारंगी, पोहकरमूल यह प्रत्येक २० वीस वीस तोले लेकर ३२ सेर जलमें पकावे, जब आठमा भाग काढा शेष रहै तब मैनसिलसे अथवा सोनामाखीसे माराहुवा तीक्ष्णलोहा ४८ तोले, खांड ६४ तोले, घृत ६४ तोले लेवे, फिर सबको मिलाकर तांबेके वासनमें, जिसप्रकार गुडका पाक बनताहै उसी प्रकार इसको पकावे, शीतलहोनेपर ३२ तोले सहत मिलावे और वंशलोचन, शिलाजीत, दालचीनी, काकडासिंगी, वायविडंग, पीपल सोंठ, और जीरा प्रत्येक चार चार तोले, त्रिफला, धनिया, तेजपात, कालीमिरच और नागकेशर प्रत्येक दो दो तोले लेवे, सबका चूर्णकर मिलादेवे, और चिकने बासनमें भरकै रखदेवे, इसको एक तोलेभर भक्षणकरै, और उपरसे गायका दूध पीवे, तथा मांसका रस (सोरुआ) दूध, भारीपदार्थ, वृष्यपदार्थ, स्निग्ध पदार्थ, और मांसादिका भोजन करे। यह-रक्तपित्त, क्षय, खाँसी, पक्तिशूल, वातरक्त, प्रमेह, शीतपित्त, वमन, कृमि, सुजन,

पांडुरोग, कोढ़, प्लीहा उदररोग, आनाह, रक्तसंस्राव और अम्लपित्तको दूर करैहै। नेत्रोंको हितकारी, पुष्टिकारक, वीर्य्यवर्द्धक, मंगलजनक, प्रीतिवर्धक, आरोग्यदायक, पुष्टिजनक, श्रेष्ठ, कामाग्नि और बलवर्द्धक, लक्ष्मीकारक और लघुताकारकहै । इसको खंडखाद्य कहते हैं। इसपै बकरा, परेवा तीतर, ककर, शशक, कुरंग, और कृष्णसारादि जीवोंका मांस खाना चाहिये। और नारियलकादूध, शिरिआरीशाक, वथुआ, सूखी मूलीके बीज, परवल, बृहतीके फल, वैंगुन, पक्के आम, खजूर, मीठा अनार, और जिन शाकोंके आदिमें ककारहै वह सब, और अनूपदेशमें होनेंवाले जीवोंका मांस यह सब, खंडखाद्य सेवनकरनेवाला त्याग देवे ॥ ९७॥

अमृतात्रिवृतादंतीश्रावणीखदिरीवृषम् ।
चित्रकोभृंगराजश्चकोकिलाक्षःसपुष्करः ॥ ९८ ॥
पुनर्नवाबलाकाशशिग्रुमोरटदारकाः ।
गवाक्षीवरुणैःकन्दश्चविकातालमूलिका ॥
नागबलाकणामूलंकुष्ठंब्राह्मणयष्टिका ।
पलोन्मितानिचैतानिजलद्रोणेविपाचयेत् ॥ ९९ ॥
अष्टभागावशेषन्तुकषायमवतारयेत् ।
त्रिफलायास्तथाप्रस्थंजलाष्टगुणपाचितम् ॥ १०० ॥
तस्मादष्टावशेषन्तुकषायंसुपरिस्रुतम् ।
माक्षिकेणहतस्यापिपुटितस्ययथाविधि ॥ १०१ ॥
अयसश्चूर्णितंपूतंपलषोडशसम्मितम् ।
पलान्यभ्रस्यचत्वारितावन्तिगंधकस्यच ॥ १०२ ॥
द्वेद्वेपलेरसस्यापिखल्लितस्यविधानतः ।
गुडस्यचपलान्यष्टौसितायावाथपैत्तिके ॥ १०३ ॥
रक्तपित्तेतुखंडेनमत्स्यण्डीवापिकासके ।
गुग्गुलोर्द्विपलंदत्त्वाप्रस्थमेकन्तुसर्पिषः ॥ १०४ ॥
एवंपाकविधिज्ञस्तुपचेल्लोहंसमाहितः ।

शीतेवतार्य्यमधुनःक्षिपेदष्टपलंभिषक् ॥ १०५ ॥
माक्षिकस्यविशुद्धस्यद्विपलंरजसःक्षिपेत् ।
शिलाजतुतथाचूर्णपलार्द्धसम्मितंभिषक् ॥ १०६ ॥
तथैषांप्रक्षिपेच्चूर्णपलमात्रंपृथक्पृथक् ।
एषलोहवरःश्रीमान्सर्वव्याधिप्रनाशनः ॥ १०७ ॥
यत्रयत्रप्रयुज्येततत्तदाशुविनाशयेत् ।
रक्तपित्तेह्यम्लपित्तेक्षयेकुष्ठेज्वरेऽरुचौ ॥ १०८ ॥
दुर्नाम्निचोदरेशूलेग्रहण्यामामवातके ।
वातरक्तेमूत्रकृच्छ्रेप्रमेहेशर्करागदे ॥ १०९ ॥
अस्योपयोगान्मनुजस्तारुण्यमधिगच्छति ।
ब्रह्मचर्य्येणकुर्वीतप्लुतंमाक्षिकसर्पिषा ॥ ११० ॥
मानकंराक्तिकारभ्ययावदष्टौचमाषकान् ।
संवर्ज्यवैदलंसूपंमांसञ्चानूपसम्भवम् ॥ १११ ॥
ककारपूर्वकंसर्वंयत्नेनपरिवर्जयेत् ।
अमृताख्योवरोलोहःसर्वत्रैवोपयुज्यते ॥ ११२ ॥
अनेनसर्वथास्वस्ताजन्तवःसन्तिःनान्यथा ॥ ११३ ॥

इतिअमृताख्यंलौहम् ।

इतिरक्तपित्ताध्यायः ।

गंधकशुद्धिविधिश्चयथा ।

गंधकन्तुसमानीयनवनीतामलच्छविः ।

---

१ दारकोवृद्धदारकः ।गवाक्षी गोरक्षकर्कटी नागबलागोरक्षतंडुला कुष्ठपुष्कराभ्यां काण्डग्रन्थिभेदेनग्रहणम् । अथवाभागद्वयग्रहणमेवम् । माक्षिकस्यहतस्यनिरुत्थ मारितस्येत्यर्थः । पुटितस्यसामान्यविशेषपुटितस्थ ।पलान्यभ्रस्येत्यत्रापिपुटितस्येतिसम्बध्यते ।तेनप्रथमपरिच्छेदोक्तक्रमेणरसायनाधिकारेवक्ष्यमाणबृहदमृतसारप्रोक्तलोहाभ्रसमभिहितविधिनैववा चूर्णितपुटितस्येत्यर्थः । तावन्ति गंधकस्येतिचत्वारि पलानीत्यर्थः ।

तत्सर्पिषिविपक्कव्यंयावत्तैलनिभंभवेत् ॥ १ ॥
वस्त्रेणान्तरितंकृत्वाढालयेत्त्रिफलाम्भसि।
एवंगंधाश्मसंशुद्धंतत्तत्कर्म्मसुयोजयेत् ॥ २ ॥

अथरसस्येतिपारदरसस्यपलद्वयं खल्लितस्यमूर्च्छितस्येत्यर्थः। मूर्च्छनंखल्वशिलादिषुऔषधचूर्णरसंवादत्त्वाविमर्द्यनिर्मलीकरणमभिधीयते। तत्रतावत्पारदेसिद्धदोषत्रयनिवारणार्थंत्रिभिर्द्रवैःप्रत्येकंसप्तधामूर्छनंकार्य्यं तदुक्तंरसहृदये। मलशिखिविषनामानोरसस्यनैसर्गिकास्त्रयोदोषाः।

मूर्छांमलेनकुरुतेशिखिनादाहंविषेणमरणंहि।
ग्रहकन्याहरतिमलंत्रिफलावह्निश्चचित्रकंचविषम् ॥३ ॥
तस्मादेभिर्वारान्संमूर्छयेत्सप्तसप्तैवेति।
अत्रग्रहकन्याघृतकुमारी तथायोगरत्नाकरेऽप्युक्तम्।
इष्टकाराजिकापटुनागारधुमालम्बुषाकिण्वगुडार्द्रकैः॥४॥
इष्टकादिरयंख्यातःसूतदोषहरोगणइति ॥
एतैरितियथासम्भवंयथायोगंचमूर्छनंकार्यम्। अत्र
पटुलवणम्। अलम्बुषःकुलाहलःकिण्वंसुराबीजम्।
तच्चउत्तमजात्यादिषुनप्रयोज्यंतस्यचरसस्यमूर्च्छितमात्रत्वात्पाकसमाप्तौप्रवेशः।

तदुक्तंयोगरत्नाकरे।

मूर्च्छितोयदिसूतःस्यात्क्षिपेत्पाकोत्तरन्तदा

एतदुक्तमेवप्रथमपरिच्छेदे।

माक्षिकस्यविशुद्धस्येतिस्वरूपतःशोधिततयाज्ञेयम्।

तदुक्तंयोगरत्नाकरे।

भंगेसुवर्णसंकाशोमनाक्कृष्णच्छविर्बहिः।

बृहद्वर्णइतिख्यातोमाक्षिकोत्रप्रशस्यतेइति ।
उक्तश्चान्यत्रशोधनमस्य ।
कालमारिषशालिंचक्काथेदोलाविधानतः ॥
तदधःपतितंग्राह्यमेवंशुद्ध्यतिमाक्षिकम् ॥

इत्यादिप्रथमपरिच्छेदंप्रोक्तम्। एषांचस्वर्णमाक्षिकाशिला जतुचूर्णादीनांलोहपाकसमाप्तौविश्राम्यमनाक्तत्तत्व दशायांप्रक्षेपः ।

तदुक्तंयोगरत्नाकरसमुच्चये ।
अवतार्य्ययदादर्व्यापरिघट्यपुनःपुनः ।
यदापाणिसहोभूतोनिक्षिपेदौषधन्तदेति ॥ ५ ॥
तावत्तच्छुतमितिवस्त्रच्छानितामित्यर्थः ।
चित्रकान्तचूर्णानिप्रत्येकंपलमात्राणि ।
चातुर्जातकादीनांप्रत्येकमर्द्धंपलसम्मितत्वम् ।
व्यक्तमन्यत् ।

अर्थ-गिलोय, निसोत, दंती, गोरखमुंडी, खैर, अडूसा, चीता, भांगरा, तालमखाना, पोहकरमूल, पुनर्नवा, खिरैटी, काँस, सैंजिना, अंकोलकेफूल, विधारा, इन्द्रायन, बरना, कमलकंद, चव्य, मुसली, गंगेरन, पीपरामूल, कूठ, भारंगी, यह प्रत्येक चार चार तोले लेकर ३२सेर जलमें पकावे,जब आठमा भाग अर्थात्४सेर शेषरहै जाय तब उतारले फिर त्रिफलेको आठगुने जलमें पकावे जब आठमाभाग शेषरहै तब उतारकर पूर्वोक्तमें मिलादेवे, तदनन्तर सोनामाखीसे माराहुवा और अच्छेप्रकारसे पुटिताकिया लोहेका चूरन १६पल लेवे, अभ्रक१६तोले,गंधक१६तोले शुद्धपारा आठ८तोले,गुड ८ पल, जो पित्तकी अधिकताहो तो बूरा मिलावे, रक्तपित्तके लिये इसमें खांड मिलावे, खाँसीकेलिये मिश्री, गूगल८ तोले, घी ६४ तोले इनसबको मिलाकर विधिपूर्वक पाककरे, शीतल होनेपर ३२ तोले सहत, शुद्धसोनामाखीका चूर्ण ८ तोले, शिलाजीत दो २ तोले मिलावे,चीतादि औषधियोंका चूर्ण चार २ तोले और दालचीनी, इलायची, तेजपात और नागकेशरादिका चूर्ण दो २ तोले मिलावे, तो

अमृताख्य लोहबने । यह सर्वलोहोंमें उत्तम और सर्वरोगनाशकहै। जिस २ रोगपर इसको देवे उसी उसी रोगको दूर करे, रक्तपित्त, अम्लपित्त, क्षय, कुष्ठ, ज्वर, अरुचि, बवासीर, उदररोग, शूल संग्रहणी, आमवात, वातरक्त, मूत्रकृच्छ्र, प्रमेह और शर्करारोगको हरेहै, इसको सेवनकरनेसे मनुष्य तरुण होजाताहै। इसको सेवनकरनेवाला ब्रह्मचर्य्यसे रहै। इसलोहेको घृत और सहतके साथ सेवनकरे। इसकी एकरत्तीसे लेकर आठमासेपर्य्यंत परम मात्राहै। इसपै विदल अन्न, दाल, आनूपदेशमें उत्पन्नहोनेवाले जीवोंका मांस तथा ककार जिनके आदिमें हैं ऐसै सर्वपदार्थ छोडदेवे, यह अमृताख्यलोहा सर्व योगोंमें प्रयोगकरना योग्य हैं, इससै मनुष्य रोगहीन होजाते हैं॥

इतिरक्तपित्ताधिकारः समाप्तः।

अथ रोगराजचिकित्सामाह।

अनेकरोगानुगतोबहुरोगपुरःसरः।
दुर्विज्ञेयोदुर्निवारःशोषोव्याधिर्महाबलः॥ १ ॥
सुशोषणाद्रसादीनांशोषइत्याभिधीयते।
क्रियाक्षयकरत्वाच्चक्षयइत्युच्यतेबुधैः॥ २ ॥
राज्ञश्चन्द्रमसोयस्मादभूदेषाकिलामयः।
तस्मात्तंराजयक्ष्मेतिकेचिदाहुर्मनीषिणः॥ ३ ॥
शुक्रायत्तंबलंपुंसांमलायत्तञ्चजीवनम्।
तस्माद्यत्नेनसंरक्षेद्यक्ष्मिणोमलरेतसी॥ ४ ॥
नित्यंस्वदेहपूजीभक्तोभैषज्यदेवतागुरुषु।
छागलमांसप्राशीजीवतियक्ष्मापरंधृतिमाकरम्॥ ५ ॥
बलिनोबहुदोषस्यपंचकर्म्माणिकारयेत्।
यक्ष्मिणःक्षीणदोषस्यकृतंतत्स्याद्विषोपमम्॥ ६ ॥
दोषाधिकानांवमनंशस्यतेसविरेचनम्।
स्नेहस्वेदोपपन्नानांसस्नेहंयत्वकर्षणम्॥ ७ ॥

कर्षणंदौर्बल्यकरंशुद्धकोष्ठस्ययुञ्जीत।विधिंबृंहणंदीपनं।
शालिषाष्टिकगोधूमयवमुद्गादयःशुभाः।
मद्यानिजांगलःपक्षिमृगाःशस्ताविशुष्यतः॥ ८॥
शुष्यतांक्षीणमांसानांकल्पितानिविधानवित्।
दद्यात्क्रव्यादमांसानिबृंहणानिविशेषतः॥ ९॥
छागमांसंपयश्छागंछागंसर्पिःसशर्करम्।
छागोपसेवाशयनंछागमध्येचयक्ष्मनुत्॥ १०॥
सपिप्पलीकंसयवंसकुलत्थंसनागरम्।
दाडिमामलकोपेतंस्निग्धमाजरसंपिबेत्॥ ११॥
तेनषड्विनिवर्त्तन्तेविकाराःपीनसादयः।
शतपुष्पाचमधुकंकुष्ठंतगरचन्दने॥ १२॥
आलेपनंस्यात्सघृतंतच्चपार्श्वांसशूलनुत्॥ १३॥

अर्थ—यह शोषरोग अनेकरोगानुगत,बहुतरोगोंमें श्रेष्ठ,दुर्ज्ञेय,महाबलवान् और दुर्निवार अर्थात् असाध्यहै,शरीरकी रसादिधातुओंको शोषण करेहै इसकारण इसको शोष कहतेहैं, क्रियाओंको क्षय करनेसे इसको क्षय कहतेहैं, और प्रथम राजा चन्द्रके यह उत्पन्न हुवाथा इस कारण इसको राजयक्ष्मा कहते हैं। बल शुक्रके अधीन और जीवन मलके अधीन है, इसकारण राजयक्ष्मावाले रोगीके यत्नपूर्वक वीर्य्य और मलकी रक्षा करनी योग्यहै। सदैव देहकी पूजाकरनेवाला औषध, देवता और गुरुमें भक्तिकरनेवाला और बकरेके मांसको सेवनकरनेवाला तथा धैर्य्यको धारण करनेवाला, ऐसा राजयक्ष्मारोगी आरोग्य होजाताहै। बहुतदोषोंसे युक्त बलवान् राजयक्ष्मावाले रोगीके पंचकर्म्म (वमन, विरेचन, नस्य, निरूहबस्ति और अनुवासनबस्ति) कराने चाहिये, परन्तु क्षीणदोषवाले राजयक्ष्मा रोगीके यह पंचकर्म्म विषकी समान अपकारी होतेहैं। दोषोंकी अधिकतावाले राजयक्ष्मा रोगीको वमन और विरेचन कराना हितकारीहै। स्नेह और स्वेदयुक्तराजयक्ष्मा रोगीको स्नेहयुक्त अकर्षण (अदौर्बल्यकारक) सेवन कराना चाहिये। शुद्धकोठेवाले मनुष्यको अग्निप्रदीपक और पुष्टिकारक द्रव्य सेवनकरने चाहिये।

शालि और साठीधान, गेहूं, जौ, और मूग आदि अन्न, तथा मदिरा, और जांगलदेशके पशुपक्षियोंका मांस यह सब राजयक्ष्मा रोगीको हितकारी हैं। मांसहीन शोषरोगीको मांसको खानेवाले पशुपक्षियोंका मांस तथा बृंहण पथ्य देना चाहिये। बकरेका मांस, बकरीका दूध, और बकरीका घी बूरा मिलाकर खाना, तथा बकरे, बकरियोंकी टहल करनी, और बकरे, बकरियोंके बीचमें सोनेसे राजयक्ष्मारोग दूर होताहै। पीपल, जव, कुलथी, सोंठ, अनार और आमले युक्त बकरी (रा) के मांसरस (सोरुआ) को पीनेसै-पीनसादि छै प्रकारके रोग दूर होते हैं। सोआ, मूलैठी, कूठ, तगर और चंदनको घृतके साथ पीसकर लेपकरनेसै-पार्श्वशूल और स्कन्धशूल नष्ट होताहै ॥ १३ ॥

धन्याकपिप्पलीविश्वदशमूलीजलम्पिबेत्।
पार्श्वशूलज्वरश्वासपीनसादिनिवृत्तये ॥ १४ ॥
क्वाथस्त्रयोदशांगस्यचातुर्जातकसंयुतः ।
कासज्वरादिशमनोबलपुष्टिविवर्द्धनः ॥ १५ ॥

इति त्रयोदशांगः।

अर्थ-धनिया, पीपल, सोंठ और दशमूल इनका क्वाथ बनाकर पीवेतो पार्श्वशूल, ज्वर, श्वास और पीनसादि रोग नष्ट होते हैं, और इसत्रयोदशांग क्वाथमें, दालचीनी, इलायची, नागकेशर, तेजपात इनका चूरन बुरक कर पीनेसै खांसी और ज्वरादिरोग शांत होतेहैं, तथा बल और पुष्टिकी वृद्धि होताहै ॥ १५ ॥

दशमूलीबलारास्नापुष्करसुरदारुनागरैःक्वथितम्।
पेयंपार्श्वांसशिरोरुक्क्षतकासादिविशान्तयेसलिलम् ॥ १६ ॥
अश्वगंधामृताभीरुदशमूलीबलावृषाः।
पुष्करातिविषेघ्नंतिक्षयंक्षीररसाशितः ॥ १७ ॥

क्वाथनयोगः।

कुकुभत्वङ्नागबलावानरीबीजानिचूर्णितंपयसि।
पक्कंघृतमधुयुतंससितंयक्ष्मादिकासहरम् ॥ १८ ॥

पारावतकपिच्छागकुरङ्गाणांपृथक्पृथक् ।
मांसचूर्णमजाक्षीरंपीतंक्षयहरंपरम् ॥ १९ ॥
दिनकरदीधितिशोधितपारावतमांसमनुदिनंनियतः ।
योलेढिमधुघृतयुक्तंसजयतियक्ष्माणमत्युग्रम् ॥ २० ॥
शर्करामधुसंयुक्तंनवनीतंलिहन्क्षयी ।
क्षीराशीलभतेपुष्टिमंगुल्येचाज्यमाक्षिके ॥ २१ ॥

अर्थ-दशमूल, खिरैटी, रसायन, पोहकरमूल, देवदारु, और सोंठ इनका काथ पार्श्वशूल, स्कन्धशूल, शिरोरोग, क्षतकासादिरोगोंको दूर करैहै। असगंध, गिलोय, सतावर, दशमूल, खिरैटी, अडूसा, पोहकर-मूल और अतीस इनका काढा पीवे और ऊपरसे दूध, मांसरस खावेतो क्षयरोग नाशहोवे। अर्जुनवृक्षकी छाल, गंगेरन, और कौंछके बीजोंका चूर्ण, इनको दूधमें पकाकर घृत, मधु और बूरा मिलाकै खानेसे खाँसी, यक्ष्मादिरोग विनष्ट होतेहैं। परेवा, वानर, बकरा, हिरन, इन प्रत्येकके मांसका चूरन अलग २ बकरीके दूधमें मिलाकर पीनेसे क्षयरोग नाश होताहै। परेवाके मांसको धूपमें सुखाकर चूरनबना प्रतिदिन मधु और सहतके साथ खानेसै अत्युग्रराजयक्ष्मारोग दूर होताहै। क्षयरोगी शर्करा और मधुसंयुक्त नौनीघीको खावे। दूध, घृत और मधुको खानेसै-राजयक्ष्मावाले रोगीके पुष्टि बढतीहै ॥ २१ ॥

एलात्वङ्मरिचंशुंठीपिप्पलीनागकेशरम् ।
यथोत्तरंभागवृद्ध्याचूर्णन्तुसितयासमम् ॥ २२ ॥
यक्ष्मार्शोग्रहणीगुल्मरक्तपित्तक्षयापहम् ।
कण्ठरोगारुचिहरंप्लीहरोगहरंपरम् ॥ २३ ॥

एलादिचूर्णम् ।

अर्थ-इलायची एकभाग, दालचीनी दोभाग, कालीमिरच तीनभाग, सोंठ चारभाग, पीपल पांचभाग, नागकेशर छैभाग, इन सबको एकत्र पीसकर चूरन करे और चूरनकी बराबर बूरा मिलावे, पश्चात् इस चूरनको खानेसै राजयक्ष्मा, बवासीर, संग्रहणी, गुल्म, रक्तपित्त, क्षय, कंठरोग, अरुचि, और प्लीहारोगको दूर करैहै ॥ २३ ॥

सितोपलतुगाक्षीरीपिप्पलीबहुलात्वचः ।
अन्त्यादूर्द्धंद्विगुणितंलेहयेत्क्षौद्रसर्पिषा ॥ २४ ॥
चूर्णितंप्राशयेद्वापिश्वासकासक्षयापहम् ।
हस्तपादांशदाहेषुज्वरेरक्तेतथोर्द्धगे ॥ २५ ॥
सुप्तजिह्वारोचकिनंमन्दाग्निंपार्श्वशूलिनम् ॥ २६ ॥

इतिसितोपलादिलेहः ।

अर्थ–मिश्री १६ भाग, वंशलोचन ८ भाग, पीपल ४ भाग, छोटी-इलायची २ भाग और दालचीनी १ भाग लेवे, सबका चूरन कर सहत और घृतमें मिलाकर चाटनेसे श्वास, खांसी, क्षय, हाथ, पांव और कन्धोंकी दाह, ज्वर, ऊर्द्धगतरक्त, सुप्तजिह्वा, अरुचि, मंदाग्नि और पार्श्वशूल दूरहोता है ॥ २६ ॥

लवंगकङ्कोलमुशीरचंदनंनतंसनीलोत्पलजीरकद्वयम् ।
त्रुटिःसकृष्णागुरुभृंगकेशरंकणासविश्वानलदंसहाम्बुदम्
अहीन्द्रजातीफलवंशलोचनासिताष्टभागंसमश्लक्ष्णचूर्णितम् ।
आरोचकंतर्पणमग्निदीपनंबलप्रदंवृष्यतमंत्रिदोषनुत् ॥ २८ ॥
उरोविबन्धंतमकंगलग्रहंसकासहिक्कारुचियक्ष्मपीनसम् ।
ग्रहण्यतीसारभगन्दरार्बुदंप्रमेहगुल्मांश्चनिहन्तिसत्वरम् २९
वातपित्ताधिकेवह्निबलेसर्वचूर्णापेक्षयाशर्कराष्टगुणा ।
कफाधिकेचाग्निमान्द्येचएकभागापेक्षयाष्टगुणेति ।

इतिलवंगादिचूर्णम् ।

अर्थ–लौंग, शीतलचीनी, खस, चंदन, तगर, नीलेकमल, जीरा, छोटी इलायची, कालीअगर, दालचीनी, नागकेशर, पीपल, सोंठ, बालछड, नागरमोथा, अनन्तमूल, जायफल, वंशलोचन, यह प्रत्येक समान भाग और मिश्री८भागलेकर बारीक चूर्णकरे।यह लवंगादि चूरन रुचिको करनेवाला, अग्निको दीपनकरनेवाला, तृप्तिकारक, बलप्रदायक

---

१ बहुला एलाबीजम् । २ त्रुटिरेलाबीजम् । ३ भृंगंगुड़त्वक् । ४ नलदं जटामांसी । ५ सहाम्बुदंसमुस्तकम् । ६ अहीन्द्रमनन्तमूलम् ।

वृष्य, त्रिदोषनाशक, तथा छातीकादर्द, विबध, तमक, गलग्रह, खांसी, हुचकी, अरुचि, पीनस, राजयक्ष्मा, संग्रहणी, अतिसार, भगन्दर, अर्बुद, प्रमेह, और गुल्मरोगको दूर करैहै ॥ २९ ॥

तालीशपत्रंमरिचंनागरंपिप्पलीशुभा ।
यथोत्तरंभागवृद्धयात्वगेलाचार्द्धभागिके ॥ ३० ॥
पिप्पल्यष्टगुणाचात्रप्रदेयासितशर्करा ।
कासश्वासारुचिहरंतचूर्णंदीपनंपरम् ॥ ३१ ॥
हृत्पांडुग्रहणीरोगप्लीहाशोषज्वरापहम् ।
छर्द्यतीसारशूलघ्नंमूढवातानुलोमनम् ॥ ३२ ॥
कल्पयेद्गुटिकाश्चैतच्चूर्णपक्त्वासितोपलाम् ।
गुटिकाह्यग्निसंयोगाच्चूर्णाल्लघुतरास्मृता ॥३३॥
पैत्तिकेग्राहयन्त्येकेशुभायावंशलोचना ॥

इतितालीशाद्योमोदकः ।

अर्थ-तालीसपत्र ५ भाग, कालीमिरच४ भाग, सोंठ ३ भाग, पीपल २ भाग, वंशलोचन १ भाग, दालचीनी और इलायची आधा २ भाग, और मिश्री१६भाग लेवे,पश्चात् सबको एकत्रकर मोदक बनावे,यह लड्डु-खाँसी, श्वाँस, अरुचि हृदयरोग, पांडु, संग्रहणी, प्लीहा, शोष, ज्वर, वमन, अतिसार, शूल, और मूढवातको हरेहै, तथा दीपन है । इन उपरोक्त औषधियोंका चूर्णभी येही गुण करता है, जो चूरन बनाना हो तो कूठ पीसकर बनाले और जो गुटिका (मोदक) बनानी हो तो पाककर बनावे ॥ ३३ ॥

बिल्वाग्निमन्थश्योनाककाश्मर्यःपाटलीबला ।
पर्ण्यश्चपिप्पल्यःश्वदंष्ट्राबृहतीद्वयम् ॥ ३४ ॥
शृंगीतामलकीद्राक्षाजीवन्तीपुष्करागुरु ।
अभयासामृताऋद्धिर्जीवकर्षभकौशठी ॥ ३५ ॥
मुस्तंपुनर्नवामेदेसूक्ष्मैलोत्पलचंदनम् ।
विदारीवृषमूलानिकाकोलीकाकनासिका ॥ ३६ ॥

एषांपलोन्मितान्भागान्शतान्यामलकस्यच ।
पंचदद्यात्तदैकध्यंजलद्रोणेविपाचयेत् ॥ ३७ ॥
ज्ञात्वागतरसान्येतान्योषधान्यथतंरसम् ।
तच्चामलकमुद्धृत्यनिष्कुलंतैलसर्पिषोः ॥ ३८ ॥
पलद्वाशकेभृष्ट्वादत्त्वाचार्द्धतुलांभिषक् ।
मत्स्यण्डिकायाःपूतायालेहवत्साधुसाधयेत् ॥ ३९ ॥
षट्पलंमधुनश्चात्रसिद्धशीतेप्रदापयेत् ।
चतुष्पलन्तुगोक्षीर्य्याःपिप्पल्याद्विपलन्तथा ॥ ४० ॥
पलमेकंनिदध्याच्चत्वगेलापत्रकेशरात् ।
इत्ययंच्यवनःप्राशःपरमुक्तोरसायनः ॥ ४१ ॥
कासश्वासहरश्चैवविशेषेणोपदिश्यते ।
क्षीणक्षतानांवृद्धानांबालानांचांगवर्द्धनम् ॥ ४२ ॥
स्वरक्षयमुरोरोगंहृद्रोगंवातशोणितम् ।
पिपासामूत्रशुक्रस्थान्दोषांश्चैवापकर्षति ॥ ४३ ॥
अस्यमात्रांप्रयुञ्जीतयोपरुन्ध्यान्नभोजनम् ।
अस्यप्रयोगाच्च्यवनःसुवृद्धोऽभूत्पुनर्नवः ॥ ४४ ॥
मेधांस्मृतिंकान्तिमनामयत्वमायुष्प्रकर्षंबलमिन्द्रियाणाम्।
स्त्रीषुप्रहर्षंपरमाग्निवृद्धिंवर्णप्रसादंपरमानुलोम्यम्॥४५॥
रसायनस्यास्यनरःप्रयोगाल्लभेतक्षीणोपिकुटीप्रवेशात् ।
ज्वराकृतंपूर्वमपास्यरूपंबिभर्त्तिरूपंनवयौवनस्य ॥४६॥
सितामत्स्यण्डिकालाभेधात्र्याश्चमृदुभर्जनम् ।
चतुर्भागजलेप्रायोद्रव्यंगतरसंभवेत् ॥ ४७ ॥

इति श्रीच्यवनप्राशः ।

अर्थ–बेल, अगेथु, सोनापाठा, कुम्भेर, पाढल, खिरैटी, मुगवन, मषवन, सरिवन, पिठवन, पीपल, गोखुरू, कटेरी, कटाई, काकड़ासिंगी,

भुँईआमला, दाख, जीवन्ती, पुष्करमूल, अगर, हरड, गिलोय, ऋद्धि, जीवक, ऋषभक, आमियाहलदी, नागरमोथा, पुनर्नवा, मेदा, महामेदा, छोटी इलायची, कुमुदिनी, चंदन, विदारीकंद, अडूसेकी जड़, काकोली और काकनासा (कौआठोडी) प्रत्येक चार तोले, और उत्तमआमले, ५०० लेवे, इन सबको एकद्रोण जलमें पकावे, जब चौथाभाग शेष रहै तब उतारले, पश्चात् इस काढेमेंसे आमलोंको अलग निकालकर आमलोंकी गुठली निकाल डाले, और काढ़ेको छानकर रखदेवे, फिर ४८ तोले घी और तेलमें इन आमलोंको भूनकर पीस लेवे, तदनन्तर ५० पल मिश्री पूर्वोक्तकाथमें मिला और यह आमले मिलाकर पकावे, जब लेहकी समान होकर शीतल होजाय, तब २४ तोले सहत मिलादेवे, वंशलोचन चारपल, पीपल आठ तोले, और दालचीनी, इलायची, नागकेशर, इनतीनोंका चूरन ४ तोले मिलादेवे, और सबको करछीसे एकमें एक करदेवे। यह च्यवनप्राश-परमरसायनहै, खाँसी और श्वासको विशेषकरके हरे हैं। क्षीणक्षत, वृद्ध और बालकोंके अंगोंको बढ़ावे, तथा स्वरक्षय, छातीका रोग, वातरक्त, पियास, मूत्रदोष और वीर्य्यदोषको दूर करेहैं। इस अवलेहको सेवनकरनेसे-वृद्ध च्यवन ऋषि फिरसे तरुण हुयेथे। यह च्यवनप्राश अवलेह-मेधा, स्मरणशक्ति, कान्ति, आरोग्यता, आयुकी वृद्धि, इंद्रियोंका बल, स्त्रीप्रसंगमें अत्यन्त आनन्द, जठराग्निकी वृद्धि, और शरीरकी सुन्दरताको उत्पन्नकरेहैं। इसको सेवनकरनेसे वृद्धमनुष्यभी तरुण होजाताहै ॥ ४७ ॥

छागमांसतुलांगृह्यसाधयेदुल्बणेऽम्भसि ।
पादशेषेणतेनैवसर्पिःप्रस्थंविपाचयेत् ॥ ४८ ॥
ऋद्धिर्वृद्धिश्चमेदेद्वेजीवकर्षभकौतथा ।
काकोलीक्षीरकाकोलीकल्कैःपृथक्पलोन्मितैः ॥ ४९ ॥
सम्यक्सिद्धेचावतार्य्यंःसितेतास्मिन्प्रदापयेत् ।
शर्करायाःपलान्यष्टौमधुनंकुडवंक्षिपेत् ॥ ५० ॥
पलंपलंपिबेत्प्रातर्यक्ष्माणंहान्तिदुर्जयम् ।
क्षतक्षयंचकासांश्चपार्श्वशूलमरोचकम् ॥ ५१ ॥

स्वरक्षयमुरोरोगंश्वासंहन्यात्सुदारुणम् ॥ ५२ ॥

इति छागलाद्यंघृतम्।

अर्थ-१२॥ सेर बकरेके मांसको लेकर बत्तीस ३२सेर जलमें पकावे,जब चौथा भाग जल शेष रहेजाय तब घी ६४ तोले, ऋद्धि,वृद्धि,मेदा, महामेदा, जीवक,ऋषभक, काकोली, क्षीरकाकोली,इन प्रत्येकका कल्क चार२ तोले मिलाकर विधिपूर्वक पकावे, जब भलेप्रकारसे पकजावे तब उतार लेवे, शीतलहोनेपर, ३२ तोले बूरा १६ तोले सहत मिलादेवे। इस घृतको प्रातःकाल चारतोले पीनेसे दुर्जयराजयक्ष्मारोग, क्षतक्षय खाँसी,पार्श्वशूल, अरुचि, स्वरक्षय, छातीकारोग, और दारुणश्वाँसको दूरकरेहै ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥

वासकस्यरसप्रस्थेमानिकासितशर्करा।
पिप्पलीद्विपलंदद्यात्सर्पिषश्चपचेच्छनैः ॥ ५३ ॥
लेहीभूतेततःपश्चाच्छीतेक्षीरपलाष्टकम्।
दत्त्वावतारयेद्वैद्योमात्रयालेहमुत्तमम् ॥ ५४ ॥
निहन्तिराजयक्ष्माणंकासंश्वासंचदारुणम्।
पार्श्वशूलञ्चहृच्छूलंरक्तपित्तंज्वरन्तथा ॥ ५५ ॥

इति वासावलेहः।

अर्थ-अडूसेकारस ६४ तोले, सफेदबूरा ३२ तोले, पीपल ८ आठ तोले, घी ८ आठ तोले लेवे, फिर सबको मिलाकर धीरे २ पकावे, जब लेहकी समान होकर शीतल होजाय तब ३२ तोले सहत मिलादेवे। यह लेह-राजयक्ष्मा, खाँसी, श्वास, पार्श्वशूल, हृदयकाशूल, रक्तपित्त और ज्वरको दूर करे है। ॥ ५५ ॥

भस्मसूताभ्रलोहानांशिलाजतुविषंसमम्।
गुडूचीत्रिफलाक्काथैःसंस्कृतंगुग्गुलुन्तथा ॥ ५६ ॥
मृतनेपालताम्रञ्चसूतस्थानेनियोजयेत्।
एकीकृत्यनिजोज्यंतद्विगुञ्जंराजयक्ष्मनुत् ॥ ५७ ॥
पञ्चामृतरसोह्येषअनुपानंचपूर्ववत् ॥ ५८ ॥

इति पंचामृतरसः।

अर्थ-पारेकीभस्म, अभ्रककी भस्म, लोहेकीभस्म, शिलाजीत, गिलोय और त्रिफलाके क्वाथसै शुद्धकिया गूगल, नेपाल, तांबेकी भस्म और विष इन सबको समानभाग लेवे, फिर सबको मिलाकर दोरत्तीभर खावे। इससै-राजयक्ष्मा रोग दूर होताहै। इसको पंचामृतरस कहतेहैं ॥ ५८ ॥

संकोचःस्कन्धपार्श्वानांस्वरभेदोज्वरोभ्रमः।
वातजेयक्ष्मणिज्ञेयंलक्षणंगात्ररुक्षता ॥ ५९ ॥
ज्वरोदाहोऽतिसारश्चरक्तवान्तिश्रमोमहान्।
वीर्य्यस्तम्भोऽरतिश्चापिलक्षणंपैत्तिकेक्षये ॥ ६० ॥
गुरुत्वंशिरसश्छर्दिःकासःकण्ठस्यचारुचिः।
ऊर्द्ध्वश्वासंचविज्ञेयंलक्षणंकफजेक्षये ॥ ६१ ॥

अर्थ-स्कंध और पसलीयोंमें संकोच, स्वरभेद, ज्वर, भ्रम और शरीरकी रुक्षता यह सबलक्षण वातजक्षयमें होतेहैं। ज्वर, दाह, अतीसार, रुधिरकी वमन, अत्यन्त श्रम, वीर्य्यस्तम्भ, और ग्लानि यह सब लक्षण पैत्तिकक्षयमें होतेहैं। मस्तकमें भारीपन, वमन, खाँसी, अरुचि, और ऊर्द्ध्वश्वास यह सब लक्षण कफक्षयमें जानने ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१॥

रसंवज्रंहेमतारंगंधंलोहश्चताम्रकम्।
तुल्यांशंमरिचंयोज्यंमुक्तामालिकविद्रुमम् ॥ ६२ ॥
शंखंचपूर्ववद्भागंसप्ताहंचित्रकद्रवैः।
मर्दयित्वावचूर्ण्याथतेनपूर्य्यावराटिका ॥ ६३
टंकणंरविदुग्धेनपिष्ट्वातासांमुखंलिपेत्।
मृद्भाण्डेतान्निरुद्ध्याथमहागजपुटेपचेत् ॥ ६४ ॥
आदायचूर्णयेत्सर्वंनिर्गुण्ड्याःसप्तभावनाः।
संशोष्यचूर्णितंसर्वंवस्त्रवद्गणंदोलया ॥ ६५ ॥
अम्लवर्गविधिक्काथेततःसंशोष्यचूर्णयेत्।
आर्द्रकस्यद्रवैःसप्तचित्रकस्यैकविंशतिः ॥ ६६ ॥
द्रवैर्भाव्यंततःशोष्यंदेयंगुंजाचतुष्टयम्।

पिप्पलीदशकैःक्षौद्रैर्मरिचैकोनविंशतिः ॥ ६७ ॥
सघृतैर्दापयेद्राथक्षयरोगनिवृत्तये ।
महारोगाष्टकेचैवज्वरेचैवातिसारके ॥ ६८ ॥
पोटलीरत्नगर्भोऽयंयोगवाहेषुयोजयेत् ॥ ६९ ॥

इति रत्नगर्भपोटलीरसः।

अर्थ–पारा, हीरा, सोना, चांदी, गंधक, लोहा, ताँबा, कालीमिरच, मोती, सोनामाखी, मूगा, शंख यह सब समानभाग लेकर सातदिन चीतेके रसमें खरल करे, पश्चात् कौडीयोंमें भरके आकके दूधसे पिसे हुये सुहागेसे कौडियोंका मुख बंदकरदेवे, फिर कौडियोंको मिट्टीके बरतनमें रखके बरतनका मुख बंदकर गजपुटमें धर फूंक देवे, जब अपने आप शीतल होजाय तब उसमेंसे निकाल चूर्णकर सह्मालुके रसमें सात भावनादेवे, फिर सर्वचूर्णको सुखाकर वस्त्रमें बांध दोलायंत्रके द्वारा अम्लवर्गके क्काथमें पकाकर सुखावे, फिर चूर्णकर अदरखके रसमें सात भावना देवे, तदनन्तर चीतेके रसमें २१ भावना देवे, पश्चात् इसको सुखाकर चूर्णकरेतो रत्नगर्भपोटलीरस सिद्धहो। इसको चाररत्तीभरलेकर १० पीपल १९ काली मिरच, सहत अथवा घीमें मिलाकर चाटेतो- क्षयरोग दूर होवे, और अष्टमहारोग (वातव्याधि, अश्मरी, कुष्ठ, प्रमेह, उदररोग, भगन्दर, अर्श और संग्रहणी) को हरेहै। ज्वर और अतीसारादिरोग नष्टहोते हैं. यह रत्नगर्भपोटलीरस योगवाही योगोंमें प्रयोगकरना योग्य हैं ॥ ६९ ॥

रसभस्मस्वर्णभस्मनिष्कंनिष्कंप्रकल्पयेत् ।
शंखगंधकमुक्तानांद्वौद्वौनिष्कौतुचूर्णयेत् ॥ ७० ॥
मुक्ताभावेवराटीवारसपादंचटंकणम् ।
वह्न्यारनालक्काथेनमर्दयेत्प्रहरद्वयम् ॥ ७१ ॥
तद्गोलकंविशोष्याथभाण्डेलवणपूरिते ।
पचेद्यायामचतुष्कञ्चमृगाङ्कोयंमहारसः॥ ७२॥
रोगराजनिवृत्त्यर्थंचतुर्गुञ्जामितंघृतैः ।

दातव्यंमरिचैःसार्धंपिप्पलीमधुनापिवा ॥ ७३ ॥

इतिमृगांकरसः।

अर्थ-पारेकी भस्म चारमासेभर, सोनेकी भस्म चारमासेभर, शंख, गंधक, मोती प्रत्येक ८ मासे, अगर मोती न मिलेतो कौडीयोंकी भस्म लेवे, पारेसै चौथाभाग सुहागा लेवे, फिर इन सबको चीतेके काढेमें और कांजीमें दोप्रहर मर्दनकरे, पश्चात् गोला बनाकर धूपमें सुखा नोनसै भरे हुवे वासनमें रख चारप्रहरपर्य्यंत पकावेतो मृगांकरस तैय्यारहो। इसकीमात्रा ४ रत्तीकीहै। अनुपान-घृत, कालीमिरचोंका चूर्ण, पीपलका चूर्ण और सहतहै। यह मृगांकरस राजयक्ष्मारोगको दूर करेहै ॥ ७३ ॥

रसलोहामृतासत्वंमधुसर्पिःसमन्वितम्।
अमृतेश्वरनामायंषडंगक्षयरोगनुत् ॥ ७४ ॥

इतिअमृतेश्वरोरसः।

अर्थ-पारा, लोहा और गिलोयका सत्व इन तीनोंको घृत और मधुके साथ सेवनकरनेसे राजरोग शांत होताहै ॥ ७४ ॥

शंखस्यबलायानिष्कंचतुर्निष्कंवराटकम्।
तुर्य्यंचनीलतुत्थंचसर्वतुल्यञ्चगंधकम् ॥ ७५ ॥
गंधतुल्यंमृतंनागंनागतुल्यंमृतंरसम्।
टंकणंरसतुल्यंस्यान्मर्द्यंपाच्यंमृगांकवत् ॥ ७६ ॥
राजयक्ष्महरःसोऽयंनाम्नाशंखेश्वरोरसः।
षड्गुञ्जन्तुकणाक्षौद्रैर्लेह्यंवामरिचंघृतैः ॥ ७७ ॥

इतिशंखेश्वरोरसः।

अर्थ-शंखकीनाभी चारमासे, कौडीकी भस्म १६ मासे नीलाथोथा १६ मासे, सबकी बराबर गंधक, गंधककी बराबर सीसेकी भस्म, सीसे-की भस्मकी बराबर पारेकी भस्म और पारेकी बराबर सुहागा लेवे, फिर इन सबको मृगांकरसकी तरह खरलकर पचावेतो शंखेश्वररस सिद्धहो। इसकी मात्रा ६ रत्तीकीहै। अनुपान-पीपल, सहत, काली-मिरच, और घृत है ॥ ७७ ॥

वराटीतुल्यमण्डूरंचूर्णयित्वादिनंपचेत्।
चूर्णयेन्मरिचैस्तुल्यंनागवल्याविभावयेत् ॥ ७८ ॥
तत्पात्रेमधुनालेह्यंसघृतंनवनीतकैः।
निष्कपादंक्षयंहन्तियामेयामेचभक्षयेत् ॥ ७९ ॥
लोकनाथोरसोह्येषमण्डलाद्राजयक्ष्मनुत् ॥ ८० ॥

इतिलोकनाथरसः।

अर्थ-कौड़ी और मंडूरका समानभाग चूर्ण लेकर एकदिन पचावे, फिर बराबरका कालीमिरचोंका चूर्ण मिलाकर पानोंके रसमें भावना देवे। इस रसको एकमासेभर लेकर सहतमें, घृतमें अथवा नवनीतमें मिलाकर ४८ दिनतक चाटनेसे राजयक्ष्मारोग दूर होताहै ॥ ८० ॥

रसभस्महेमभस्मतुल्यंगुंजाद्वयंपृथक्।
पूर्ववदनुपानेनमृगांकोऽयंक्षयापहः ॥ ८१ ॥

इतिस्वल्पमृगांकरसः।

अर्थ-पारेकी भस्म, और सोनेकी भस्म समानभागलेवे।इसको दो २ रत्तीभर मधु, घृत वा नवनीतके साथ खानेसे क्षयरोग दूर होताहै॥८१॥

शिलाजतुविडंगानिह्यभयाहेममाक्षिकम्।
मृतलोहसमंक्षौद्रैर्निष्कंभुक्तंक्षयापहम् ॥ ८२ ॥
अयंलोहामृतोनाम्नासन्निपातंनियच्छति ॥ ८३ ॥

इतिलोहामृतः।

अर्थ-शिलाजीत,वायविडंग, हरड़, सोनामाखी, यह सब समान भागलेवे, और सबकी बराबर लोहेकी भस्म लेवे, पश्चात् सबको मिलाकर चारमासे सहतके साथ खानेसे क्षयरोग दूर होताहै, और यह लोहामृतरस सन्निपातको दूर करेहै ॥ ८३ ॥

टंकणंशुद्धगंधंतुसुवर्णमाक्षिकंपृथक्।
एकंद्वित्रिचतुःपंचक्रमाच्चशुद्धसूतकम् ॥ ८४ ॥
चांगेर्य्याश्चद्रवैर्मर्द्यंदिनैकंगोलकीकृतम्।

गंधकंताम्रपर्ण्याथगोलकांशंप्रमर्दयेत् ॥ ८५ ॥
गोलकंलेपयेत्तेनततोवस्त्रेणवेष्टयेत् ।
मृगांकंपाचयेत्स्थाल्यांबालुकाभिश्चपूरिते ॥ ८६ ॥
उद्धृत्यचूर्णयेच्छ्लक्ष्णंहरनेत्रोरसोत्तमः ।
मृगांकवत्क्षयंहन्तितद्वन्मात्रानुसारतः ॥ ८६ ॥

इतिहरनेत्रोरसः ।

अर्थ–सुहागा एक भाग, शुद्धगंधक दो भाग, सुवर्ण तीन भाग, सोनामाखी चार भाग और शुद्ध पारा पांच भाग लेकर चांगेरीके रसमें एक दिन खरलकर गोला बनावे, पश्चात् इस गोलेको गंधक और मजीठके रसमें खरलकरे, तदनन्तर गंधकका गोलेके ऊपर लेपकर गोलेको वस्त्रमें बाँधे, फिर वालुकायंत्रमें मृगांकरसकी तरह फूंकदेवे, जब स्वयंशीतल होजाय तब निकालकर बारीक चूर्णकरे तो हरनेत्ररस सिद्ध हो। यह रस–मृगांकरसकी मात्राके अनुसार खानेसे क्षयरोगको दूर करेहै ॥ ८७ ॥

रसभस्मचतुर्थांशंहेमभस्मप्रकल्पयेत् ।
तालकंरसकंतुल्यंमाक्षिकंगंधकंशिला ॥ ८८ ॥
रसमानानियुंजीतसूतपादंचटंकणम् ।
दिनैकैकंक्रमेणैवतत्सर्वंमर्दयेद्दृढम् ॥ ८९ ॥
अर्कक्षीरंजयन्तीचभृंगवासाचलांगली ।
अगस्तिचित्रकंपाठामद्यमेषांद्रवैःपृथक् ॥ ९० ॥
द्विगुंजंभक्षयेन्नित्यमनुपानंमृगांकवत् ।
क्षयंहन्तिमहातीव्रंरसःकनकसुन्दरः ॥ ९१ ॥

इति कनकसुन्दरः ।

अर्थ–मृतपारा, हारिताल,खपरिया, सोनामाखी, गंधक, मनशिल यह प्रत्येक एक एक भाग, सोनेकीभस्म चौथाभाग,सुहागा चौथाभाग लेवे, फिर इन सबको एकत्र खरलकर क्रमसे एक एक दिन आकके दूध, जयन्तीके रस, भांगराके रसमें, अडूसेके रसमें,करियारीके रसमें,अगथियाके

रसमें, चीतेके रसमें और पाढ़के रसमें अलग २ खरलकरे। इसको दो-रत्ती भर खावे, ऊपरसे मृगांकरसकी समान अनुपान करे तो महाती-व्रक्षयरोग दूरहो। इसको कनकसुंदर कहतेहैं ॥ ९१ ॥

विषंक्षुद्राउशीरञ्चहरिद्रागोक्षुरंमधु।
कुटजस्यत्वचंचूर्णसमांशंसर्वचूर्णकम् ॥ ९२ ॥
राजयक्ष्महरंखादेद्रसोऽयंनीलकण्ठकः ॥ ९३ ॥

अर्थ-विष, कटेरी, खस, हलदी, गोखुरू, सहत, और कुडेकी छालका चूर्ण इनसबको समान भाग लेकर विधिपूर्वक मिलावे। यह नीलकण्ठ-रस-राजयक्ष्मारोगको दूर करेहै ॥ ९२ ॥ ९३ ॥

कर्षंखर्परसत्वस्यसमांशेहेमविद्रुमे।
निक्षिपेच्चूर्णयेत्तद्वत्षड्‌निष्कंशुद्धगंधकम् ॥ ९४ ॥
अंकोलकंगुलीबीजंतुत्थंतालंचतुश्चतुः।
मुक्ताप्रवालचूर्णञ्चप्रतिनिष्काष्टकंक्षिपेत् ॥ ९५ ॥
मृतलौहस्यनिष्कौद्वौटंकणस्याष्टनिष्ककम्।
द्वौनिष्कौनीलकटुकीवराटीनांचविंशतिः ॥ ९६ ॥
सितानिष्कद्वयंयोज्यंसर्वंखल्वेविमर्दयेत्।
चांगेर्य्यम्लेनयामैकंजम्बीराम्लैर्दिनद्वयम् ॥ ९७ ॥
रुद्ध्वापुटाष्टकंदेयंदिनमेकंतुषाग्निना।
जम्बीरोत्थद्रवेणैवपिष्ट्वापिष्ट्वापुटेपचेत् ॥ ९८ ॥
ततोवनोपलैरेवदेयंगजपुटंमहत्।
आदायचूर्णयेच्छ्लक्ष्णंचूर्णार्द्धंशुद्धगंधकम् ॥ ९९ ॥
गंधार्द्धंमरिचंचूर्णमेकीकृत्याद्विमाषकम्।
लेहयेन्मधुनासार्द्धंनागवल्लीदलोत्थितम् ॥ १०० ॥
पथ्याशीप्रातियामेस्यादभुक्तेविषवद्भवेत्।
रसोवज्रेश्वरःख्यातःक्षयपर्वतभेदकः ॥ १०१ ॥

इति वज्रेश्वररसः।

अर्थ–खपरियाका सत्व दो तोले, सोना एक तोला, मूगा एक तोला इन तीनोंको लेकर खरलकरे फिर उसमें २४ मासेभर शुद्धगंधक मिलावे पश्चात् अंकोल, हिंगोटके बीज, नीलाथोथा और हरिताल यह प्रत्येक सोले २ मासे लेवे, मोती और मूगेका चूर्ण ३२ बत्तीस २ मासेलेवे, लोहेकी भस्म आठ ८ मासे लेवे, सुहागा ३२ मासेलेवे, नीलकुटकी आठ ८ मासे भरले, कौडीकी भस्म८०मासे और मिश्री ८ मासे भरलेवे, पश्चात् इन सबको खरलमें डालकर खरलकरे, फिर चांगेरीके रसमें एकप्रहर खरलकरे, तदनन्तर जम्भीरीनीबूके रसमें दोदिन खरल करे, फिर पात्रमें बंदकर एकदिनमें भुसकी आगसे आठ पुट देवे और प्रतिपुटमें जम्भीरी नीबूके रसमें पीसलेवे, तदनन्तर वनके अन्ने उपलोंकी अग्निके द्वारा महागजपुटमें खरलकर फूंकदेवे, जब स्वयंशीतल होजाय तब निकालकर बारीक चूर्ण करले, फिर चूर्णसे आधाभाग शुद्धगंधक और चौथाई भाग कालीमिरचोंका चूर्ण मिलावे, इसको दो उड़दोंकीबराबर लेकर सहत और नागरपानके रसमें मिलाकर चाटनेसे–क्षयरोग नाश होताहै, इसपै पथ्यसे रहै और विना पथ्य यह रस–विषकी समान अपकार करताहै । यह वज्रेश्वर रस–क्षयरूपी जो पर्वतहैं तिनको भेदनेवालाहै ॥ ९४ ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ ९७ ॥ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ १०० ॥ १०१ ॥

भस्मसूतमजाक्षीरैःकणानिष्कैःपलैःसह ।
व्योषगंधकक्षौद्रैर्वाभक्षयेद्भक्षयेत्क्षयम् ॥ १०२ ॥

इतिभस्मसूतरसः ।

अर्थ–चार मासे भर पारेकी भस्मको लेकर बकरीके दूधके साथ और पीपलके चूर्णके साथ खानेसे तथा त्रिकुटा, गंधक और सहतके साथ भक्षण करनेसे यह रस क्षयरोगको भक्षण करताहै ॥ १०२ ॥

वज्रहाटकसूतानांभस्मैकंद्वित्रिषट्क्रमात् ।
त्रिकण्टकरसैर्भाव्यंदिनान्तेताद्विचूर्णयेत् ॥ १०३ ॥
गुंजामात्रंप्रयोक्तव्यंसज्वरेराजयक्ष्मणि ।
स्नुहीमूलंचजम्बीरद्रवैःस्यादनुपानकम् ॥ १०४ ॥
साध्यासाध्यक्षयंहन्तिह्यनुपानंमृगांकवत् ।

अयमग्निरसंखादेद्त्रिनिष्कंराजयक्ष्मनुत् ॥ १०५ ॥

इतिअग्निरसः ।

अर्थ—हीरेकी भस्म २ भाग, सोनेकी भस्म ३ भाग, पारेकी भस्म ६ भागलेवे, पश्चात् इन तीनोंको गोखरूके रसमें एकदिन भावना देवे, दिनके अंतमें इसका चूर्ण करले । इसको एक गुंजाभर खावे तो ज्वरयुक्त राजयक्ष्मा रोग दूर होजाय, और ऊपरसे थूहरका दूध और जम्भीरी नीबूका रस पीवे, यह अनुपानहै । इसके ऊपर मृगांककी तरह अनुपान करै तो साध्यासाध्य राजयक्ष्मा दूर होवे । इस अग्निरसको १ तोलाभर खानेसे शीघ्रही राजयक्ष्मा दूर होवे ॥ १०४ ॥

त्रिकटुत्रिफलाचव्यंधान्यंजीरकसैन्धवाः ।
प्रत्येकंतोलकंग्राह्यंछागीदुग्धेनगोलयेत् ।
रसगंधकलोहानिप्रत्येकंकार्षिकंक्षिपेत् ॥ १०६ ॥
टंकणस्यपलंदत्त्वामरिचस्यपलार्द्धतः ॥
नवगुंजाप्रमाणेनवटिकांकारयेद्भिषक् ।
प्रातःकालेशुचिर्भुत्वाचिन्तयित्वामृतेश्वरीम् ॥ १०७ ॥
एकैकांवटिकांखादेद्रक्तोत्पलरसप्लुता ।
नीलोत्पलरसेनापिकुलत्थस्यरसेनवा ॥ १०८ ॥
छागीदुग्धेनमंडेनकैरवस्यरसेनवा ।
निहन्तिविविधंकासंवातपित्तसमुद्भवम् ॥ १०९ ॥
वातश्लेष्मोत्थितंदुष्टंपित्तश्लेष्मभवंचिरम् ।
वातिकंपैत्तिकंचैवगरदोषसमन्वितम् ॥ ११० ॥
सरक्तमथनीरक्तंज्वरश्वाससमान्वितम् ।
तृड्दाहभ्रमशूलघ्नीरुच्यावह्निप्रदीपनी ॥ १११ ॥
बलवर्णकरीवृष्याहीनगुल्मोदरापहा ।
आनाहक्रिमिपाण्डुघ्नीजीर्णज्वरविनाशिनी ॥ ११२ ॥
इयंचन्द्रामृतानाम्नाचन्द्रनाथेनानिर्मिता ।

वासागुडूचिकाभार्गीमुस्तकंकण्टकारिका ॥ ११३ ॥
भोजनान्तेप्रकर्त्तव्यंवटिकावीर्य्यवृद्धये ॥ ११४ ॥

इतिचन्द्रामृतरसः ।

अर्थ-त्रिकुटा, त्रिफला,चव्य, धनिया,जीरा, और सैंधानोन यह प्रत्येक तोले तोले भर लेकर बकरीके दूधमें खरलकरे,फिर पारा,गंधक और लोहा प्रत्येक दोदो तोले,सुहागा चार तोले और कालीमिरचोंका चूर्ण दो तोले यह सब पूर्वोक्तमें मिलाकर ९ रत्तीभर गोली बनालेवे । प्रातःकालमें पवित्र होकर अमृतेश्वरी देवीका ध्यानधर एक गोली लालकमलके रसमें अथवा नीलकमलके रसमें, वा कुलथीके रसमें, अथवा बकरीके दूधमें वा माडमें मिलाकर,अथवा कमोदिनीके रसमें मिलाकर रोज खावे। इससै विविधप्रकारकी खांसी, वातसै उत्पन्न हुई खांसी, पित्तसै उत्पन्न हुई खांसी, वातकफसै उत्पन्न हुई खांसी, पित्तश्लेष्मसै उत्पन्न हुई खांसी, विषोद्भव खाँसी, रुधिरयुक्त खाँसी,सूखी खाँसी,ज्वर और श्वास-युक्त खाँसी, तृषा, दाह, भ्रम और शूल दूर होताहै, तथा यह रुचिकारक, अग्निप्रदीपक, बलकारक,वर्णको सुंदरकरनेवाला, वीर्य्यवर्द्धक,और प्लीहा, गुल्म, उदररोग, आनाह, कृमि, पाण्डु, और जीर्णज्वरको दूर करैहै । यह चन्द्रामृतरस श्रीचन्द्रनाथसिद्धने निर्म्माण किया है । अडूसा, गिलोय, भारंगी, नागरमोथा कटेरी, इन सबको मिला गोली बनाकर भोजनके अंतमें खानेसे वीर्य्यकी वृद्धि होतीहै ॥११४॥

कांचनंरससिन्दूरंमुक्तिकंलौहमभ्रकम् ।
विद्रुममभयातारंकस्तूरीचमनःशिला ॥ ११५ ॥
प्रत्येकंबिन्दुमात्रंचसर्वंमर्द्यंप्रयत्नतः ।
वारिणावटिकाकार्याद्विगुंजाफलमानतः ॥ ११६ ॥
अनुपानंप्रयोक्तव्यंयथादोषानुसारतः ।
नानारोगप्रशमनंसर्वोपद्रवसंयुतम् ॥ ११७ ॥
क्षयंहंतितथाकासंश्लेष्मपित्तहरंतथा ।
प्रमेहान्विंशतिंचैवदोषत्रयसमुत्थितान् ॥ ११८ ॥
अशीतिवातजान्रोगान्नाशयेत्सद्यएवहि ।

बलवृद्धिंवीर्य्यवृद्धिंलिंगजाड्यंकरोतिच ॥ ११९ ॥
रसोऽयंसुश्रुतप्रोक्तोवाजीकरणमुत्तमम् ।
काञ्चनस्यसमाकान्तिर्मदनस्यसमंवपुः ॥ १२० ॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थायरसोऽयंकांचनाभ्रकम् ॥ १२१ ॥

इतिकांचनाभ्ररसः ।

अर्थ-सोना, पारा, सिन्दूर, मोती, लोहा, अभ्रक, मूगा हरड, चांदी, कस्तूरी और मैनसिल यह सब समान भागले, जलमें खरलकर दोदो-रत्तीकी गोली बनालेवे। इसको दोषानुसार अनुपानके साथ देवे । यह गोली-सर्वोपद्रवयुक्त नानाप्रकारके रोगोंको शांतकरेहैं, तथा क्षय, खाँसी, कफ, पित्त, वीस २० प्रकारके प्रमेह, त्रिदोषोत्पन्न रोग और ८० प्रकारके वातरोगोंको दूर करेहै.बल और वीर्य्यकी वृद्धिकरे,लिंगकी जड-ताको उत्पन्नकरे.यह रस श्रीसुश्रुताचार्य्यने कहाहै और उत्तम वाजीकरणहै. यह काञ्चनाभ्ररस कांचनकी समान कांतिको देवे और कामदेवकी समान शरीरको करेहैं, इसको प्रातःकाल उठकर भक्षण करना चाहिये ॥१२१॥

रसभस्मत्रयोभागाभागैकंहेमभस्मकम् ।
मृतताम्रस्यभागैकंशिलागंधकतालकम् ॥ १२२ ॥
प्रतिभागद्वयंशुद्धमेकीकृत्यविचूर्णयेत् ।
वराटींपूरयेत्तेनअजाक्षीरेणटंकणम् ॥ १२३ ॥
पिष्ट्वातेनमुखंरुद्धामृद्भाण्डेतंनिरोधयेत् ।
श्लक्ष्णंगजपुटेपच्याच्चूर्णयेत्स्वांगशीतलम् ॥ १२४ ॥
वासाराजमृगांकोयंचतुर्गुंजंक्षयापहम् ।
पिप्पलीदशकंक्षौद्रैर्मरिचैकोनविंशतिः ॥ १२५ ॥
सघृतैर्दीपयेद्वाथवातश्लेष्मभवेक्षये ॥ १२६ ॥

इतिराजमृगांकरसः ।

अर्थ-पारेकी भस्म तीन भाग, सोनेकी भस्म एकभाग, ताँबेकी भस्म एक भाग, मनशिल दोभाग,गंधक दोभाग, हरिताल दोभाग, इनसबका चूर्णकर कौडियोंमें भरदेवे, और कौडियोंका मुख बकरीके दूधमें पीसे-

हुवे सुहागेसे बंदकर देवे, फिर कौडियोंको मट्टीके वासनमें रख गजपुट-में फूँकदेवे, जब स्वाँगशीतल होजाय तब बारीक चूर्ण करले, तो राज-मृगांकरस सिद्धहो। इसको चाररत्ती भर खानेसे क्षयरोग दूर होताहै. दसपपिलके चूर्णमें सहत मिलाकर अथवा उन्नीस कालीमिरचोंके चूर्णमें घी मिलाकर खावे, यह अनुपान है। और यह वातकफोत्पन्न क्षयरो-गका क्षयकरेहै ॥ १२२ ॥ १२३ ॥ १२४ ॥ १२५ ॥ १२६ ॥

स्वरभेदः कफःकण्ठशूलंकासश्वछर्द्दनम् ।
वातश्लेष्मभवेचिह्नंज्ञातव्यश्चाचिकित्सकैः ॥ १२७ ॥
स्वरभेदोज्वरोदाहःशूलंछर्दिररोचकम् ।
वातपित्ताधिकेज्ञेयोराजरोगेमहाबले ॥ १२८ ॥
आलस्यंबहुनिद्राचस्वल्पदाहोज्वरोभ्रमः ।
वान्तिःशोणितपित्तोत्थापित्तश्लेष्मभवेक्षये ॥ १२९ ॥
वातपित्तकफोत्थैश्चलक्षणैःसंहतोयदा ।
सन्निपातान्वितोज्ञेयःकष्टसाध्यःस्वयंस्मृतः ॥ १३० ॥

अर्थ–वातकफसे उत्पन्न हुवे क्षयरोगमें स्वरभेद, कफ कण्ठशूल, खाँसी और वमन यह सब लक्षण होतेहैं, । स्वरभेद, ज्वर, दाह, शूल वमन, और अरुचि यह लक्षण वातपित्तसे उत्पन्न हुवे क्षयरोग-में होतेहैं। आलस्य, बहुनिद्रा, स्वल्पदाह, ज्वर, भ्रम, वमन, और रक्त-पित्तमिश्रित वमन यह सब लक्षण होंतो पित्तकफसे उत्पन्न हुआ क्षय-रोग जानना। सन्निपातसे उत्पन्न हुवे क्षयरोगमें वात, पित्त और कफ इनतीनों दोषोंके मिले हुये लक्षण होतेहैं, और सन्निपातोद्भव क्षयरोग कष्टसाध्य है ॥

शंखनाभीगवांक्षीरैःपेषयेन्निष्कषोडशम् ।
तेनमूषाप्रकर्त्तव्यातन्मध्येभस्मसूतकम् ॥ १३१ ॥
निष्कार्द्धंगंधकास्त्रीणिचूर्णीकृत्याविनिक्षिपेत् ।
रुद्धातद्वेष्टयेद्वस्त्रेमृत्तिकांलेपयेद्बहिः ॥ १३२ ॥
शोष्यंगजपुटेपच्यान्मूषयासहचूर्णयेत् ।

गुंजैकमनुपानेनक्षयंहन्तिमृगांकवत् ॥ १३३ ॥
पोटलीशंखगर्भोयंयोजयेद्वातपित्तजित् ॥ १३४ ॥

इतिशंखगर्भपोटलीरसः ।

अर्थ-शंखकीनाभी ६४ मासे लेकर गायके दूधमें पीसके मूषा बनावे, उस मूषामें २ मासे पारेकी भस्म, और १२ मासे गंधक डाल कपरौटी कर धूपमें सुखा गजपुटमें फुकदेवे, जब अपनेआप शीतल होजाय तब उसको निकाल ऊपरकी कपरौटी अलगकर मूषासमेत खरलमें गेरकर पीसलेवे। इसकी मात्रा एकरत्तीकीहै, अनुपान मृगांकरसकी समान जानना । यह शंखगर्भपोटलीरस-राजयक्ष्मारोग, वात और पित्तको दूरकरैहै ॥ १३४ ॥

कांचनंरससिन्दूरंमौक्तिकंलौहमभ्रकम् ।
विद्रुमंमृतवैक्रान्तंतारंताम्रञ्चवंगकम् ॥ १३५ ॥
कस्तूरिकालवंगंचजातिकोषैलवालुका ।
प्रत्येकंबिन्दुमात्रंचसर्वंमर्द्यंप्रयत्नतः ॥ १३ ॥
कन्यानीरेतुसंमर्द्यकेशराजरसेनच ।
अजाक्षीरेणसंभाव्यप्रत्येकंदिवसत्रयम् ॥ १३७ ॥
चतुर्गुञ्जाप्रमाणेनवटिकांकारयेद्भिषक् ।
अनुपानंप्रदातव्यंयथादोषानुसारतः ॥ १३८ ॥
नानारोगप्रशमनंसर्वोपद्रवसंयुतम् ।
क्षयंहन्तितथाकासंयक्ष्माणंश्वासमेवच ॥ १३९ ॥
प्रमेहान्विंशतिश्चैवदोषत्रयसमुत्थितान् ।
सर्वान्रोगान्निहन्त्याशुभास्करस्तिमिरंयथा ॥ १४० ॥

इतिबृहत्काञ्चनाभ्रः ।

अर्थ-सोना, रससिंदूर, मोती, लोहा, अभ्रक, मूगा, वैक्रान्त, चांदी, ताँबा, और वंग इन सबकी भस्म, कस्तूरी, लौंग, जायफल और एलुआ यह सब समान भाग लेकर खरल करे, पश्चात् घीकुवारके रस, कुकुरभांगराके रस और बकरीके दूधमें तीन २ दिन खरलकर चार चार

रत्तीकी गोलीबना लेवे । इसको दोषानुसार अनुपानके साथ देवे । यहरस-सर्वोपद्रवयुक्त नानाप्रकारके रोगोंको दूर करैहै, तथा क्षय, खाँसी, राजयक्ष्मा, श्वास, वीसप्रकारके प्रमेह, त्रिदोषोद्भवरोग, और सर्व प्रकारके रोगोंको दूर करैहै ॥ १४० ॥

शुद्धसूतंद्विधागंधंसूततुल्यंचसैन्धवम् ।
शमीश्वेतादलद्रावैर्मर्दितंगोलकीकृतम् ॥ १४१ ॥
नागवल्लीदलैर्वेष्ट्यंपाच्यंपातालयंत्रके ।
दिनान्तेऊर्द्धलग्नंतंग्राह्यंभक्ष्यात्रिगुंजकम् ॥ १४२ ॥
पर्णखंडेनसंयुक्तंमासैकाद्राजयक्ष्मनुत् ।
रसश्चन्द्रामृतोनामह्यनुपानंमृगांकवत् ॥ १४३॥

इति चन्द्रामृतरसः ।

अर्थ-शुद्धपारा १ भाग, शुद्धगंधक २ भाग, सैंधानोन १ भाग इन तीनोंको छोंकर और सफेद्कोयलके पत्तोंके रसमें खरलकर गोला बनालेवे, फिर इसगोलेको पानोंसे वेष्टितकर पातालयंत्रमें एकदिन पकावे, जब अपने आप शीतल होजाय तब ऊपरके पात्रमें लगे हुवे द्रव्यको खुरचलेवे । इसको एकमहिनेपर्य्यंत पानके टुकडेपै तीन चोटलीभर लगाकर खानेसै राजयक्ष्मारोग दूर होजाताहै, इसको चंद्रामृतरस कहतेहै, अनुपान मृगांकरसकी समान जानना ॥ १४३ ॥

शुद्धसूतंस्वर्णभस्मजम्बीरैर्मर्द्दयेद्दिनम् ।
तयोर्द्विगुणितंताम्रंत्रिभिस्तुल्यन्तुगंधकम् ।
टंकणंगंधकार्द्धञ्चसर्वंजम्बीरजैर्द्रवैः ॥ १४४ ॥
मर्द्यंयामचतुर्गोलंवस्त्रेबद्ध्वाविपाचयेत्
दोलायंत्रेचारनालेयामादुद्धृत्यशोषयेत् ।
ततोमृन्मयभाण्डान्तर्लवणञ्चांगुलद्वयम् ॥ १४५ ॥
ऊर्द्ध्वाधःपृष्ठतःकृत्वागोलकंवस्त्रवेष्टितम् ।
लवणैःपूरयेद्भाण्डेऽन्धयित्वादिनंपचेत् ॥ १४६ ॥

चुल्ल्यांक्रमाग्निसिद्धोरसोमहामृगांकक: ।
अनेनैवप्रकारेणमृगांकान्पाचयेद्रसान् ॥ १४७ ॥
राजरोगनिवृत्त्यर्थंदेयंसिताघृतन्तुतैः ।
दशभिर्मरिचैःसार्द्धंपिप्पलीमधुनापिवा ॥ १४८ ॥

इति महामृगांकरसः ।

अर्थ-शुद्धपारा १ भाग, स्वर्णभस्म १ भाग इन दोनोंको लेकर जम्भीरी नीबूके रसमें एकदिन खरल करे, पश्चात् तांबा ४ भाग, गंधक ६ भाग, और सुहागा ३ भाग लेवे, फिर इन तीनोंको पूर्वोक्तमें मिलाकर जम्बीरी नीबूके रसमें चारप्रहर पर्य्यंत खरलकर गोला बनालेवे, पश्चात् गोलेको वस्त्रमें बांधकर काँजीमें दोलायंत्रके द्वारा दो प्रहर पकावे, तदनन्तर उसमेंसे निकाल कर गोलेको सुखालेवे, पश्चात् मट्टीके वासनमें दो अंगुल ऊंचा लवण स्थापितकर उसके ऊपर कपड़ेमें बँधे हुवे गोलेको रख ऊपर नोन भरदेवे, फिर बासनके मुखको बंदकर चूलेपै चढ़ा क्रमसे मन्द, मध्य, और तीक्ष्ण अग्निके द्वारा एकदिन पकावे तो, महामृगांकरस सिद्धहो । इसी विधिसै और सर्वप्रकारके मृगांकरस बनतेहैं । इससे रोगराज (राजयक्ष्मा)नष्टहोताहै, अनुपान-१०मिरच, बूरा, घृत, अथवा पीपल और मधु है ॥ १४८ ॥

विभ्रमंश्लेष्मदिग्धांगमतीसारेणपीडितम् ।
शूनमुष्कोदरंचैवयक्ष्मिणंपरिवर्जयेत् ॥ १४९ ॥
ऊर्द्ध्वश्वासोऽतिशुष्काक्षःकांस्यपात्रहतःस्वरः ।
मधुमेहीकृशोऽमल्लोहीनबुद्धिबलेन्द्रियः ॥ १५० ॥
व्रणांगःशुक्रमेहीचक्षयीयातियमालयम् ।
अथास्यापिप्रकर्त्तव्याचिकित्साजीवितावधि ॥ १५१ ॥

अर्थ-विभ्रमहो, कफसै अंग लिप्त होजाय, अतीसारकी पीडाहो,अंडकोश और उदरमें सूजनहो ऐसा राजयक्ष्मारोगी असाध्य जानना । ऊर्द्ध्वश्वासहो, नेत्र अत्यन्त सूखजाय, कांसीके बरतनकी समान स्वरहो, मधुमेहहो, कृशता आजाय, दुर्वलताहो, बल, बुद्धि और इन्द्रियोंमें हीनता उत्पन्नहो, शरीरमें व्रण होजाय और शुक्रमेहहो, ऐसा क्षयरोगी

निश्चय मृत्युको प्राप्त होताहै, किन्तु जबतक यह रोगी जीते रहैं तब तक चिकित्साकरे, असाध्य जानकर छोड न देवे ॥ १५१ ॥

लोहभस्मपलैकन्तुद्विपलंभृंगजद्रवात् ।
पलैकंत्रिफलाक्काथंसर्वंसम्मर्द्यखर्परे ॥ १५२ ॥
लोहांशंमाक्षिकंशुद्धंमर्द्यपूर्वोदितद्रवैः ।
रुद्ध्वात्रिभिःपुटेपाच्यंद्रवैर्मर्द्यंपुनःपुनः ॥ १५३ ॥
मृतंसूतंमृतंनागंनिष्कंनिष्कंविमिश्रयेत् ।
शुद्धगंधस्यद्वौनिष्कौवराटीनांचतुष्टयम् ॥ १५४ ॥
एकीकृत्यपुटेपच्यात्पूर्वेणैवविमिश्रयेत् ।
पूर्वोक्तैश्चद्रवैर्मर्द्यंपुटेनैकेनपाचयेत् ॥ १५५ ॥
चूर्णयेन्मरिचैःसप्ततुत्थटंकणयोर्दश ।
मेलयेच्चपृथङ्निष्कान्प्राणत्राणाह्वयोरसः ॥ १५६ ॥
भक्षयेन्निष्कपादार्द्धमसाध्यंराजयक्ष्मनुत् ।
शोथोदरार्शोग्रहणीपांडुगुल्महरञ्जयत् ॥ १५७ ॥

इतिप्राणत्राणरसः।

अर्थ-लोहेकी भस्म चार तोले,सोनामाखी४तोले,भंगराका रस८तोले, और त्रिफलाका काढा ४ तोले लेवै, इन सबको कढाईमें डालकर खूब घोटे, पश्चात् पात्रमें रख गजपुटमें तीनवार पकावे और प्रतिपुट पूर्वोक्त रसोंमें मर्दन करता जाय, तदनन्तर पारेकी भस्म४मासे, सीसेकी भस्म४ मासे,शुद्धगंधक ८ मासे और कौड़ीकी भस्म१६ मासे मिलाकर भांगरेके रस और त्रिफलेके काढ़ेमें खरल कर गजपुटमें फूंकदेवे, पश्चात् इस रस-में कालीमिरचोंका चूर्ण २८ मासे, तूतिया ४० मासे और सुहागा ४० मासे मिलादेवे। इसकी मात्रा तीनरत्तीकी है। यह असाध्यराजयक्ष्मा रोगको दूर करैहै तथा सूजन, उदररोग, बवासीर, संग्रहणी, पांडु और गुल्मरोगको दूर करैहै ॥ १५७ ॥

मृतंसूतंमृतंहेमशुद्धगंधकटंकणम् ।
प्रत्येकमर्द्धनिष्कंस्यान्मृतंशुल्वंद्विनिष्ककम् ॥१५८॥

शंखनिष्कद्वयंचूर्णंसर्वमेकत्रकारयेत्।
पूरयेत्पूर्वचूर्णेनपुटयेच्चमृगांकवत् ॥ १५९ ॥
ततश्चार्द्रकनिर्य्यासैःसार्द्धंरुद्धापुटेपचेत्।
आदायचूर्णयेच्छ्लक्ष्णंद्वात्रिंशन्मरिचैर्युतम् ॥ १६० ॥
चूर्णाच्चतुर्गुणंगंधमेकीकृत्यविचूर्णयेत्।
पंचमांशंघृतंलेह्यमसाध्यंराजयक्ष्मनुत् ॥ १६१ ॥
शोथोदरार्शोग्रहणीज्वरगुल्मांश्चनाशयेत्।
रसोहेममृगांकोऽयंह्यनुपानंमृगांकवत् ॥ १६२ ॥

इति हेममृगांकरसः।

अर्थ–पारेकी भस्म २ मासे, सोनेकीभस्म २ मासे, शुद्ध गंधक २ मासे, सुहागा २ मासे, तांबेकीभस्म ८ मासे और शंखका चूर्ण ८ मासे लेवे, फिर इन सबको मिलाकर मृगांकरसकी नाई गजपुटमें पकावे, पश्चात् अदरखके रसमें भावना देकर गजपुटमें फूंक देवे,जब स्वयं शीतल होजाय तब निकालकर बारीक चूर्ण करले, फिर इस चूर्णमें ३२ काली मिरचोंका चूर्ण, चौगुनागंधक मिलादेवे। इसमें पांचभाग घृत मिलाकर चाटनेसै–असाध्य राजयक्ष्मा रोग, सूजन, उदर, बवासीर, संग्रहणी, ज्वर और गुल्मरोगको दूर करताहै। इसपै अनुपान मृगांकरसकी समान जानना ॥ १५८ ॥ १५९ ॥ १६० ॥ १६१ ॥ १६२ ॥

कर्य्यालोहमयीमूषाऊर्द्धतोद्वादशांगुला।
मर्दितंस्वर्णवाराहीगृहकन्यारसैःसमम् ॥ १६३ ॥
लशुनैर्यामगात्रश्चापिण्डंकृत्वानिवेशयेत्।
पूर्वोक्तायाश्चमूषायांसूतपादश्चगंधकम् ॥ १६४ ॥
निर्गुण्डीरससंपिष्टंमूषायांतंविनिक्षिपेत्।
आच्छाद्यलौहचक्रेणवक्रयंत्रेणजारयेत् ॥ १६५ ॥
एवमष्टपुटेजीर्णंसमुद्धृत्यविचूर्णयेत्।
पंचगुञ्जामितंखादेदनुपानंमृगांकवत् ॥ १६६ ॥
देयःकालान्तकोनाम्नारसोऽयंराजयक्ष्मनुत्।

अर्थ-बारह अंगुल ऊँची लोहेकी मूषा बनावै, उसमें स्वर्ण और बाराहीकन्दको घीकुवार और लशुनके रसमें एकएक प्रहर मर्दन कर गोला बनावै, पश्चात् पारा और पारेसे चौथाभाग गंधकको सह्मालुके रसमें पीसकर मूषामें डालदेवै, और मूषाको लोहेके चक्रसे ढककर वक्रयंत्रद्वारा आठवार पकावै, जब जीर्ण होजाय तब निकालकर चूर्ण करले। इसकी मात्रा पांचरत्ती है। अनुपान मृगांककी समानहै। यह कालान्तक नामवाला रस-राज्ययक्ष्मारोगको दूरकरै है ॥ १६३ ॥ ॥ १६४ ॥ १६५ ॥ १६६ ॥

उपद्रवप्रशान्त्यर्थंपथ्यंवैकथ्यतेक्षये ।
घृतपक्वःप्रदातव्योलावकस्तित्तिरःशशः ॥ १६७ ॥
मरिचैर्जीरकेणैवसंस्कृतंपथ्यमाचरेत् ।
वर्जयेल्लवणंहिंगुतक्रंदधिविदाहितत् ॥ १६८ ॥
क्षीरमाजंदधिवाथपथ्यवर्गेयथोचितम् ।
वर्जयेत्तत्रवर्ज्यश्चरसश्चापिहिगुग्गुलोः ॥ १६९ ॥
पिबेद्वान्तिप्रशान्त्यर्थंक्षौद्रैश्छिन्नरुहारसम् ।
उशीरंतगरंशुण्ठींकंकोलंचन्दनद्वयम् ॥ १७० ॥
लवंगंपिप्पलीमूलंकृष्णैलानागकेशरम् ।
मुस्तामलककर्पूरंतुगाक्षीरंचपत्रकम् ॥ १७१ ॥
कृष्णागुरुसमंचूर्णंसितास्यादष्टमांशतः ।
रक्तवान्तिश्चसन्तापंनाशयेन्नात्रसंशयः ॥ १७२ ॥

अर्थ-घृतसे पकाया हुआ लवा, तीतर और खरगोसका मांस, तथा मिरच और जीरेसे संस्कृत किया हुआ पथ्य राजयक्ष्मारोगीको हितकारी है। लवण, हींग, तक्र, दधि, सर्वविदाही द्रव्य, और गूगलका रस यह सब राजयक्ष्मारोगीको अपथ्यहै। बकरीका दूध अथवा दही इनको यथोचित विचारकर सेवन करे। गिलोयके रसमें सहत डाल पीनेसै राजरोगमें उत्पन्न हुई वमन दूर होतीहै। खस, तगर, सोंठ, शीतलचीनी, चन्दन, लालचन्द, लोंग, पीपलामूल, पीपल, इलायची, नाग-

केशर, नागरमोथा, आमला, कपूर, वंशलोचन, तेजपात, और काली अगर, यह सब समान भाग और मिश्री आठभाग लेवै, सबको एकत्र पीस चूर्णबनावै। यह चूर्ण रक्तवान्ति और सन्तापको दूर करैहै ॥ १६७॥ ॥ १६८ ॥ १६९ ॥ १७० ॥ १७१ ॥ १७२ ॥

रास्नाकर्पूरतालीशभेकपर्णीशिलाह्वयैः ।
त्रिकत्रयसमायुक्तैर्लोहोयक्ष्मान्तकोमतः ॥ १७३ ॥
सर्वोपद्रवसंयुक्तमपिशम्भोःसुदुर्जयम् ।
हन्तिकासंस्वराघातंक्षयकासंक्षतक्षयम् ॥ १७४ ॥
बलवर्णाग्निपुष्टीनांवर्द्धनोदोषनाशनः ॥ १७५ ॥
त्रिकत्रयंत्रिकटुत्रिफलाचित्रकमुस्ताविडंगंसर्वचूर्णसमलौहम् ।

इतिरास्नादिलौहम् ।

अर्थ-रायसन, कपूर, तालीशपत्र, मण्डूकपर्णी, मैनशिल, त्रिकुटा, त्रिफला, चीता, वायविडंग और नागरमोथा, यह सब समान भाग और सबकी बराबर लोहा मिलावै । इस लोहेको सेवनकरनेसे सर्व उपद्रवयुक्त, दुर्जयराजरोग, खाँसी, स्वराघात, क्षय, कास और क्षतक्षयको क्षय करैहै । बल, वर्ण, अग्नि और पुष्टिको बढानेवाला और दोषनाशक है ॥ १७३ ॥ १७४ ॥ १७५ ॥

व्योषंशतावरीत्रीणिफलानिद्वेफलेतथा ।
सर्वमेहहरोयोगःसोऽयंलोहरुजान्वितः ॥ १७६ ॥
एषवक्षःक्षतंहान्तिकण्ठजांविविधांरुजाम् ।
राजयक्ष्माणमत्युग्रंबाहुस्तम्भार्दितन्तथा ॥ १७७ ॥
सर्वचूर्णसमंलौहम् ।

इतिविन्ध्यवासियोगलौहम् ।

अर्थ-त्रिकुटा, शतावरी, त्रिफला, जायफल, कायफल, यह सब समानभाग लेवे, और सबकी समान लोहेका चूर्ण मिलावे, । यहलोह-छातीकाक्षत, अनेकप्रकारके कंठके रोग, अत्युग्रराजयक्ष्मा, बाहुस्तम्भ और अर्दितरोग विनष्ट करताहै ॥ १७६ ॥ १७७ ॥

मधुताप्यविडंगाश्मजतुलोहघृताभयाः ।
घ्नन्तियक्ष्माणमत्युग्रंसेव्यंवानाहिताशिना ॥ १७८ ॥

अत्रमधुघृताभ्यांलेहः ।

इति श्रेष्ठत्वात्सर्वचूर्णसमंलोहम् ।

अर्थ-सहत, सोनामाखी, वायविडंग, शिलाजीत, घृत और हरड़, यह सब समान भाग लेवै, और सबकी बराबर लोहेका चूरन मिलावै। इसको सेवनकरनेसे अत्यन्त उग्र राजरोग शान्त होताहै ॥ १७८ ॥

शिलाजतुक्षौद्रविडंगसर्पिर्लेहोभिषक्सूतकताप्यभक्षः ।
आपूर्यतेदुर्बलदेहधातुस्त्रिपंचरात्रेणयथाशशाङ्कः ॥७९॥

इति शिलाजत्वादिलौहम् ।

अर्थ-शिलाजीत, वायविडंग, पारा और सोनामाखी, इन सबको समान भाग लेकर चूर्णकर सहत और घृतके साथ चाटनेसे आठ दिनमें राजयक्ष्मारोग नष्ट होकर शरीर चन्द्रमाकी समान दीतिमान् होजाती है ॥ १७९ ॥

अभ्रकंपुटितंताम्रंलोहंगंधकपारदम् ।
कुलटाटंकणक्षारंत्रिफलाचपलंपलम् ॥ १८० ॥
गरलञ्चतथामाषचतुष्कंचैवचूर्णितम् ।
दृढपाषाणपात्रेचभूयोभूयःसुचूर्णितम् ॥ १८१ ॥
तत्सर्वंभावयेदेषांरसैःप्रत्येकशःपलैः ।
देवराजाशनाख्यस्यकेशराजाख्यकस्यच ॥ ८२ ॥
सोमराजस्यभृंगाख्यराजस्यात्रिफलस्यच ।
पारिभद्राग्निमन्थस्यवृद्धदारकतुम्बुरो ॥ १८३॥
मण्डूकपर्णीनिर्गुण्डीपूतिकोन्मत्तकस्यच ।
ग्रीष्मसुन्दरकन्याटरूषकस्यक्रमेणतु ॥ १८४ ॥
रसश्चताम्रपर्ण्याश्चदलोत्थैर्भावितंभिषक्।
द्रवेकिंचितस्थितंचूर्णमरिचस्यपलंक्षिपेत् ॥ १८५ ॥

ततश्चैववटींकुर्याच्चतुस्त्रीण्येकरक्तिका ।
ज्वरेचैवातिसारेचकासेश्वासेक्षयज्वरे ॥ १८६ ॥
सन्निपातज्वरेचैवविविधेविषमज्वरे ।
क्षयरोगेषुसर्वेषुक्षीणशुक्रेषुयक्ष्मणि ॥ १८७ ॥
ग्रहण्यांचिरजातायांसूतिकायांविशेषतः ।
शोथेशूलेतथासाध्येस्थविरेचाममारुते ॥ १८८ ॥
मन्दानलेबलेचैवसकलेश्लेष्मजेगदे ।
पीनसेऽपीनसेचैवपक्केऽपक्केचशस्यते ॥ १८९ ॥
वातश्लेष्मणिवातेचविविधेद्वन्द्वजेतथा ।
आमदोषारतेपित्तेशस्तंबलावृतेऽपिवा ॥ १९० ॥
अष्टधैवोदरेचैवकोष्ठरोगेप्रशस्यते ।
अजीर्णकर्णरोगेचकृशस्थौल्येऽपिदेहिनि ॥ १९१ ॥
अयंसर्वगदोच्छेदीरसोयंपरिकीर्त्तितः ।
रसायनवरश्रेष्ठंवाजीकरणमुत्तमम् ॥ १९२ ॥
वृष्यंमधुरमाहारंप्रयोगेपरिकल्पयेत् ।
महाभ्रकमिदंब्रह्मकमनीयकमीरितम् ॥ १९३ ॥
यइहसकलकालंकल्पकामःकरोति
सर्षपपरिमाणैर्नित्यमभ्यासयोगैः ।
सखलुविगतरोगेभोगमुक्तोऽग्नियुक्तो
भवतिपलितहीनःसप्तकल्पान्तजीवी ॥ १९४ ॥

इति महाभ्रवटिका ।

अर्थ–पुटित अभ्रक, ताँबा, लोहा, गंधक, पारा, मैनशिल, सुहागा और त्रिफला, यह प्रत्येक चार चार तोले, और विषका चूर्ण चार मासेभरले, पीछे इन सबको भाँग, कुकुरभांगरा, बापची, भांगरा, त्रिफला, पारिभद्र, अग्निमन्थ, विधारा, तुम्बुरु, मण्डूकपर्णी, निर्गुण्डी, करंज,

धतूरा, ग्रीष्मसुन्दर, घीकुआर, अडूसा और मँजीठ इनके चार चार तोले रसमें अलग अलग भावना देकर चारतोले कालीमिरचोंका चूर्ण मिलावै, एक, दो, तीन, वा चारचाररत्तीकी गोली बनावै, इन गोलियोंको यथायोग्य मात्राके अनुसार भक्षण करे। यह गोली-ज्वर, अतिसार, खाँसी, श्वास, ज्वरयुक्तक्षय, सन्निपातज्वर, नानाप्रकारके विषमज्वर, सर्वप्रकारके क्षयरोग, क्षीणशुक्र, यक्ष्मारोग, बहुतदिनोंकी संग्रहणी, प्रसूतिकारोग, सूजन, शूल, पुरानाआमवात रोग, मन्दाग्नि, बलक्षय, सर्वप्रकारके कफरोग, पीनसरोग, अपीनस, पक्वपीनस, अपक्वपीनस, वातकफ, वात, द्वन्द्वजरोग, आमदोष, पित्तरोग, आठप्रकारके उदररोग, अजीर्ण, कर्णरोग, कृशता और स्थूलताको दूर करेहैं। यह रस सर्वरोगनाशक, सर्वरसायनोंमें श्रेष्ठ, उत्तम वाजीकरणहै। इसके ऊपर वृष्य और मधुर भोजनकरना चाहिये। इसको सरसोंकी समान सदा सेवनकरनेसे मनुष्य कल्पपर्यन्त जीते रहते हैं। तथा इसके सेवनसे सफेद बाल काले होजाते है॥ १८० ॥ १८१ ॥ १८२ ॥१८३॥१८४॥ ॥ १८५ ॥ १८६ ॥१८७॥१८८॥१८९॥१९०॥१९१॥१९२॥१९३॥१९४॥

चन्दनाम्बुनखंवाप्यंयष्टीशैलेयपद्मकम्।
मञ्जिष्ठासरलंदारुचव्यैलापूतिकेशरम् ॥ १९५ ॥
पत्रंतैलसुरामांसीकक्कोलंवनिताम्बुदम्।
हरिद्रेशारिवेतिक्ताल्वंगागुरुकुंकुमम् ॥ १९६ ॥
त्वग्रेणुनलिकाचैभिस्तैलंमस्तुचतुर्गुणम्।
लाक्षारससमंसिद्धंग्रहघ्नंबलवर्णकृत् ॥ १९७ ॥
अपस्मारज्वरोन्मादेहृत्याऽलक्ष्मीविनाशनम्।
आयुष्पुष्टिकरंचैववशीकरणमुत्तमम् ॥ १९८ ॥

इति चन्दनाद्यंतैलम्।

अर्थ-चन्दन, सुगन्धवाला, नख, कूठ, मूलैठी, शैलेय (भूरिछरीला), पद्माख, मजीठ, सरल, देवदारु, इलायची, चव्य, रोहिषतृण,नागकेशर, शिलारस, कपूरकचरी, शीतलचीनी, फूलप्रियंगू, नागरमोथा, हलदी, दारुहलदी, सारिवा, श्यामालता, कुटकी लोंग, अगर, केशर, दाल-

चीनी, रेणुका और नलिका, इन सबका कल्क सेरभर, तिलका तेल चारसेर, लाखका रस चारसेर और दहीका पानी सोलहसेर लेवे; पश्चात् सबको विधिपूर्वक मिलाकर तेलको सिद्धकरै । यह तेल ग्रहनाशक, बलकारक, वर्णको सुन्दर करनेवाला, तथा अपस्मार (मृगी) ज्वर, उन्माद और अलक्ष्मीविनाशकहै, हृदयको हितकारी, आयुवर्द्धक, पुष्टिकारक और उत्तम वशीकरणहै ॥ १९५ ॥ १९६ ॥ १९७ ॥ १९८ ॥

चन्दनागुरुतालीशनखमञ्जिष्ठपद्मकाः ।
मुस्तकंचशठीलाक्षाहरिद्रेरक्तचन्दनम् ॥ १९९ ॥
एषांप्रतिपलैश्चूर्णैस्तैलार्द्धपात्रकेपचेत् ।
भार्गीवासाकण्टकारीवाट्यालकगुडूचिका ॥ २०० ॥
एषांपलशतक्काथेसमभागेजडीकृते ।
पक्त्वातैलंप्रदातव्यंयक्ष्मरोगविनाशनम् ॥ २०१ ॥
कासघ्नंज्वरदोषघ्नंबलवर्णाग्निवर्द्धनम् ।
पापाऽलक्ष्मीप्रशमनंग्रहदोषनिवारणम् ॥ २०२ ॥
श्रीमद्गहननाथेनानिर्मितंविश्वसम्पादि ॥ २०३ ॥

इतिमहच्चन्दनाद्यंतैलम् ।

इतिराजयक्ष्मक्षतक्षीणाध्यायः ।

अर्थ–चन्दन, अगर, तालीशपत्र, नख, मजीठ, पद्माख, नागरमोथा, कचूर, लाख, हलदी, दारुहलदी, लालचन्दन, यह प्रत्येक चार चार तोले, तिलका तेल ९६ तोले लेवे, भारंगी, वाँसा, कटेरी, खिरैटी और गिलोय इनका क्काथ ४०० चारसौ तोले लेवै, पश्चात् क्काथमें पूर्वोक्त औषधियें और तेल डालकर पकावै; जब सिद्ध होजायतौ उतारले। यह तेल–राजयक्ष्मारोग, खाँसी, ज्वर, पाप, अलक्ष्मी, और ज्वरको दूर करैहै, बलको बढ़ानेवाला, वर्णको सुन्दर करनेवाला, अग्निवर्द्धक है, यह तेल श्रीमान् गहननाथने संसारके उपकारार्थ निर्माण कियाहै ॥ १९९॥ ॥ २०० ॥ २०१ ॥ २०२ ॥ २०३ ॥

इतिराजयक्ष्मक्षतक्षीणाधिकारःसमाप्तः ।

अथकासरोगचिकित्सामाह ।

कासाच्छ्वासात्क्षयच्छर्दिस्वरभेदादयोगदाः ।
भवन्त्युपेक्षयायस्मात्तस्मात्तंत्वरयाजयेत् ॥ १ ॥
केवलानिलजंकासंस्नेहैर्वासमुपाचरेत् ।
लेहैर्यूषैस्तथाभ्यंगैःस्नेहसेकावगाहनैः ॥ २ ॥
बास्तिभिरूर्द्ध्वंविड्घातंसपित्तंचोर्द्ध्वभक्तिकैः ।
घृतैःक्षीरैश्चसकलंजयेत्स्नेहविरेचनम् ॥ ३ ॥
वास्तुकोवायसीशाकंमूलकंसुनिषण्णकम् ।
स्नेहास्तैलादयोभक्ष्याःक्षीरेक्षुरसगौडिकाः ॥ ४ ॥
दध्यारनालाम्लफलप्रसन्नापानमेवच ।
शस्यतेवातकासेषुस्वाद्वम्ललवणानिच ॥ ५ ॥
ग्राम्यानूपोदकैःशालियवगोधूमयष्टिकान् ।
रसैर्माषात्मगुप्तानांयूषैर्वाभोजयेद्धितान् ॥ ६ ॥
कण्टकारिरसेसर्पिर्बुधायूषसुसंस्कृतम् ।
सगौरामलकःसाम्लःपंचकासान्व्यपोहति ॥ ७ ॥

सगौरामलकःपरिणताम्लकः ।

पंचमूलीकृतःक्काथःपिप्पलीचूर्णसंयुतः ।
रसार्थमश्नुतोनित्यंवातकासमुदस्यति ॥ ८ ॥

पंचमूलीस्वल्पा ।

शठीशृंगीकणाभार्गीगुडवारिदयासकैः ।
सतैलैर्वातकासघ्नोलेहोऽयमपराजितः ॥ ९ ॥

गुडतैलाभ्यांलेहः ।

चूर्णिताविश्वदुःस्पर्शाशठीद्राक्षासितोपला ।
लिह्यात्कर्कटशृंगंचकासेतैलेनवातजे ॥ १० ॥

भार्गीद्राक्षाशठीशृंगीपिप्पलीविश्वभेषजैः ।
गुडतैलयुतोलेहोहितोमारुतकासिनाम् ॥ ११ ॥

अर्थ-खाँसी और श्वाँसके होनेसे क्षय, वमन, स्वरभेदादिरोग, उत्पन्न होतेहैं,इसकारण खाँसी और श्वासरोगकी शीघ्र चिकित्सा करनी चाहिये । केवल वातसे उत्पन्न हुई खाँसीमें स्नेहद्वारा चिकित्सा करनी चाहिये । अवलेह, यूष, अभ्यंग, स्नेह, अवगाहन, बस्ति और ऊर्द्धभक्तिके द्वारा मलबद्ध पित्तज खाँसीकी और घृत, क्षीर तथा स्नेहके विरेचनद्वारा सर्वप्रकारकी खाँसीकी चिकित्सा करनी चाहिये । वथुआ, मकोय, मूली, शिरिआरीका शाक, तैलादिस्नेह, दूध, ईखकारस, गुड़के पदार्थ, दही, काँजी, अम्ल फल, प्रसन्नामदिरा, स्वादिष्ठ, अम्ल और नमकीन पदार्थ,यह सब वातकी खाँसीमें हितकारीहैं । ग्रामके जीव,अनूपके जीव और जलके जीव, इनसबका मांस, शालिधानके चावल, जौ, गेहूँ, साठीधानके चावल, उड़द और कौंछके यूषके साथ भोजनके पदार्थ सेवन करै । कटेरीका रस और घृतकेद्वारा संस्कृत किया हुआ आमलेका यूष अम्लरसमें भिजोकर पीनेसे वातज खाँसी दूर होती है । लघुपंचमूलके क्राथमें पीपलका चूरन डालकर पीनेसे वातज खाँसी नष्ट होतीहै । कचूर, काकड़ासींगी, पीपल, भारंगी, नागरमोथा, और जवासा इनके चूर्णमें गुढ़ और तेल मिलाकर बनायाहुआ अवलेह चाटनेसे वातकी खाँसी शान्त होतीहै । सोंठ, गोखरू, कचूर, दाख, मिश्री और काकड़ाशिंगी, इनका चूर्ण तेलमें मिलाकर चाटनेसे-वातज खाँसी दूर होती है । भारंगी, दाख, काकड़ाशिगी, कचूर, पीपल, और सोंठ, इनके चूरनमें गुड़ और तेल मिलाकर चाटनेसे वातकी खाँसी नष्ट होती है ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥

पित्तकासेतनुकफेवमनंसर्पिषाहितम् ।
तथादमनकाश्मर्यमधुकक्राथजैर्द्रवैः ॥ १२ ॥
यष्टयाह्वफलकल्कैर्वाविदारीक्षुरसैर्युतैः ॥ १३ ॥
सर्पिषावमनद्रव्ययुक्तेन ।
द्राक्षामलकखर्जूरपिप्पलीमरिचान्वितम् ।
पित्तकासहरंह्येतल्लिह्यान्माक्षिकसर्पिषा ॥ १४ ॥

खर्ज्जूरपिप्पलीद्राक्षासितालाजाःसमांशिकाः ।
मधुसर्पिर्युतोलेहःपित्तकासहरःपरः ॥ १५ ॥

अर्थ—किंचित् कफयुक्त पित्तकी खाँसीमें घृत मिलाकर वमन करानी हितकारी है, तथा मैनफल, कुम्भेर, और महुआ इनके काढेमें, अथवा मुलेठीके कल्कमें वा विदारीकन्द और ईखके रसमें घृत मिलाकर वमन करानी चाहिये । दाख, आमला, खजूर, पीपल और कालीमिरच, इनके चूर्णमें सहत और घी मिलाकर चाटे । खजूर, पीपल, दाख, मिश्री और खीलै, यह सब समानभागले सहत और घी मिलाकर चाटनेसे पित्तकी खाँसी दूर होतीहै ॥ १२ ॥ १३ ॥ ॥ १४ ॥ १५ ॥

बलिनंवमनेनादौशोधितंकफकासिनम् ।
यवान्नैःकटुरूक्षोष्णैःकफघ्नैश्चाप्युपाचरेत् ॥ १६ ॥
पिप्पलीक्षारकैर्यूषैःकौलत्थैर्मूलकस्यच ।
लघुन्यन्नानिभुञ्जीतरसैर्वाकटुकान्वितैः ॥ १७ ॥
कट्फलंपौष्करंभार्गीविश्वपिप्पलिसाधितम् ।
पिबेत्काथंकफोद्रेकेकासेश्वासेगलग्रहे ॥ १८ ॥
स्वरसंशृंगवेरस्यमाक्षिकेणसमन्वितम् ।
पाययेच्छ्वासकासघ्नंप्रतिश्यायकफापहम् ॥ १९ ॥
पार्श्वशूलेज्वरेकासेश्वासेश्लेष्मसमुद्भवे ।
पिप्पलीचूर्णसंयुक्तंदशमूलीजलंपिबेत् ॥ २० ॥
तैलयुक्तश्चपिप्पल्याःकल्कार्थंससितोत्पलम् ।
पिबेद्वाकफकासघ्नंकुलत्थसलिलाप्लुतम् ॥ २१ ॥

अर्थ—जो बलवान् मनुष्यको कफकी खाँसी होतो वमन करावै, तथा यवान्न, कटु, रूक्ष, और कफनाशकद्रव्य सेवन करावै । कफकी खाँसी-में पिप्पलीका क्षार, कुलथीका यूष, मूलीकायूष, लघु अन्न और मरिचादियुक्त मांसरस हितकारीहै । कायफल, पोहकरमूल, भारंगी, सोंठ, और पीपल, इनका काढ़ा बनाकर पीनेसे—कफज खाँसी, श्वास

और गलग्रह दूर होताहै। अदरखके रसमें सहत मिलाकर पीनेसे-श्वास, खाँसी, प्रतिश्याय और कफका नाश होताहै। दशमूलके काढेमें पीपलका चूर्ण मिलाकर पीनेसे- पार्श्वशूल, ज्वर और कफसे उत्पन्न हुआ कास और श्वाँसरोग नष्ट होता है। पीपलका कल्क, मिश्री और कमल, इनको तेलमें पीसकर खानेसे अथवा कुलथीके क्काथमें मिलाकर पीनेसे कफकी खाँसी शान्त होतीहै ॥ १६ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥

कट्फलंचतथाभार्गीमुस्तंधान्यंवचाभया।
शृंगीपर्पटकंशुण्ठीसुराह्वञ्चजलेशृतम् ॥ २२
मधुहिंगुयुतंपेयंकासेवातकफात्मके।
कण्ठरोगेमुखेशूलेश्वासहिक्काज्वरेषुच ॥ २३ ॥

इति कट्फलादिः।

अर्थ-कायफल, भारंगी, नागरमोथा, धनिया, वच, काकड़ाशींगी, पित्तपापड़ा, सोंठ, और देवदारु, इनके काढ़ेमें सहत और हींग मिलाकर पीनेसे-खाँसी, वातज, कफज, कण्ठरोग, मुखरोग, शूल, श्वास, हिचकी और ज्वर दूर होताहै ॥ २२ ॥ २३ ॥

कण्टकारिकृतःक्काथःसकृष्णःसर्वकासहा।
तिंतिडीपत्रजःक्काथोहिंगुसैन्धवसंयुतः ॥ २४ ॥
दुष्टकासंजयेदाशुघनवृन्दमिवानलः।
बिभीतकंघृताभ्यक्तंगोशकृत्परिवेष्टितम् ॥ २५ ॥
स्विन्नमग्नौहरेत्कासंध्रुवमास्याविधारितम्।
वासकस्वरसःपेयोमधुयुक्तोहिताशिना ॥ २६ ॥
पित्तश्लेष्मकृतेकासेरक्तपित्तेविशेषतः।
कासेचक्षतजेचान्यैर्जीवनीयैश्चबृंहणैः ॥ २७ ॥
शमनंपित्तकासोक्तैरन्यैश्चमधुरौषधैः।
वातानुबन्धेवातघ्नैस्तेनस्वाभ्यंजनेहितम् ॥ २८ ॥
मंजिष्ठांजनमूर्वाग्निपाठाकृष्णानिशायुतः।

क्षतक्षयजकासघ्नंलीढंचमधुनासह ॥ २९ ॥
मधुकंपिप्पलीद्राक्षालाक्षाशृंगीशतावरी ।
द्विगुणाचतुगाक्षीरीसितासर्वैश्चतुर्गुणा ॥ ३० ॥
लिह्यात्तंमधुसर्पिर्भ्यांशतकासनिवृत्तये ।
पिप्पलीपद्मकंलाक्षासुपक्वंबृहतीफलम् ॥ ३१ ॥
घृतक्षौद्रयुतोलेपःक्षयकासनिबर्हणः ।
सन्निपातभवोह्येषक्षयकासःसुदारुणः ॥ ३२ ॥
सन्निपातहितंतस्मात्कार्यमत्रचिकित्सितम् ।
कुनटीसैन्धवव्योषविडंगामयहिंगुभिः ॥ ३३ ॥
लेहःसाज्यमधुःकासश्वासहिक्कानिबर्हणः ।
वचाहरिद्रासिन्धूत्थबिभीतककणारजः ॥ ३४ ॥
पुटेवद्धासुखेक्षिप्तंकासश्वासापहंनिशि ॥ ३५ ॥

अर्थ–कटेरीके काथमें पीपलका चूर्ण डालकर पीनेसे सर्वप्रकारकी खाँसी दूर होतीहै । इमलीके पत्तोंके काथमें हींग और सैंधानोनका चूर्ण डालकर पीनेसे दुष्ट खाँसी शीघ्र नष्ट होतीहै,जैसे पवनसे बादलोंका समूह नष्ट होताहै । बहेडेको घीमें भिजोकर पश्चात् गोबरसे लपेट धूपमें सुखा आगमें पकाकर मुखमें रखनेसे खाँसी दूर होजातीहै । अडू-सेके रसमें सहत डालकर पीवै तौ पित्तकफसे उत्पन्न हुई खाँसी और रक्तपित्त रोग दूरहो । काकोली, क्षीरकाकोली, जीवक, ऋषभक, ऋद्धि, वृद्धि, मेदा, महामेदा, जीवन्ती और मुलैठी, इन औषधियोंको सेवन करना तथा पित्तजकासनिवारक औषधियोंको सेवन करना और बृंहण तथा मधुरद्रव्योंको सेवनकरना चाहिये । वातकी खाँसीमें वातनाशक द्रव्योंका सेवनकरना और तैलादिका मालिस करना हितकारीहै । मजीठ, रसोत,मूर्वा, चीता, पाढ़, पीपल और हलदी इनके चूर्णमें सहत मिलाकर चाटनेसे क्षत क्षयज खाँसी दूर होती है । मुलैठी, दाख,पीपल, लाख, काकड़ासिंगी, और शतावर, यह प्रत्येक एक एक भाग, वंशलोचन बारह भाग और मिश्री सबसे चौगुनी लेवे, पश्चात् इन सबको बारीक पीस सहत और घीमें मिलाकर चाटनेसे

क्षतकी खांसी दूर होतीहै । पीपल, मुनाख, लाख और पका हुआ कटाईका फल, इनके चूर्णमें सहत और घृत मिलाकर चाटैतौ क्षयकी खांसी दूर होवे । सन्निपातसे उत्पन्न हुई क्षयकी खांसीमें सन्निपातनाशक क्रिया प्रयोगकरनी चाहिये । मनशिल, सैंधानोन, त्रिकुटा, वायविडंग, कूठ, और हींग, इनके चूर्णमें घी और सहत मिलाकर चाटनेसे खांसी, श्वास, और हिक्कारोग दूर होताहै । वच, हलदी, सैंधानोन, बहेडा, और पीपल, इन सबका चूर्ण एकत्रकर कपडेकी पोटलीमें बांध रात्रिके विषै मुखमें रखै तौ खासी और श्वास दूर होजाय ॥२४॥ २५ ॥ २६ ॥ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥

कर्षःकर्षार्द्धमथोपलंपलद्वयंतथार्द्धकर्षश्च ।
मरिचस्यचापिप्पलीनांदाडिमगुडयावशूकानाम् ३६ ॥
सर्वौषधैरसाध्यायेकासावैद्यविवर्जिताः ।
अपिपूयंछर्दयतांतेषामिदमौषधंपथ्यम् ॥ ३७ ॥

इतिमरिचाद्यंचूर्णम् ।

अर्थ—कालीमिरच दो तोले, पीपल एक तोला, अनारकी छाल चार तोले, गुड आठतोले, और जवाखार एकतोले लेवै, सबको पीसकर एकत्र चूर्ण करले । जो कासरोग अनेक प्रकारकी औषधियोंके सेवन करनेसे शान्त न हुआ होय तथा जिनको वैद्य असाध्य जानकर छोड़ बैठेहों वह कासरोग इसचूर्णसे निःसन्देह नष्ट होजाताहै, और यह चूर्ण राधयुक्त वमनको दूर करैहै ॥ ३६ ॥ ३७ ॥

लवंगजातीफलपिप्पलीनां
भागान्प्रकल्प्याक्षसमानमीषाम् ।
पलार्द्धमेकंमरिचस्यदद्यात्
पलानिचत्वारिमहौषधस्य ॥ ३८ ॥

सितासमंचूर्णमिदंप्रसह्यरोगानिमानाशुबलान्निहन्यात् ।
कासज्वरारोचकमेहगुल्मान्श्वासाग्निमान्द्यग्रहणीप्रदोषान् ३९॥

इति समशर्करचूर्णम् ।

अर्थ-लोंग, जायफल, और पीपल, यह प्रत्येक एक एक तोला, काली मिरच दो तोले, सोंठ सोलह तोले और सबकी बराबर मिश्री लेवै, पश्चात् सबको पीसकर बारीक चूर्ण करले । इस चूर्णको सेवन करनेसै-खाँसी, ज्वर, अरुचि, प्रमेह, गुल्म, श्वास, मन्दाग्नि और संग्रहणी-रोग दूर होताहै ॥ ३८ ॥ ३९ ॥

हरीतकीकणाशुण्ठीमरिचंगुडसंयुतम् ।
कासघ्नोमोदकःप्रोक्तस्तृष्णारोचकनाशनः ॥ ४० ॥

इतिहरीतक्यादिमोदकः ।

अर्थ-हरड, पीपल, सोंठ कालीमिरच और गुड, इनसबको एकत्रकर मोदक बनाके खानेसे खाँसी, तृषा और अरुचि दूर होतीहै ॥ ४० ॥

हरीतकीनागरमुस्तचूर्णंगुडेनतुल्यंगुटिकाविधेया ।
निवारयत्यास्यविधारितेयंश्वासंप्रवृद्धंप्रबलञ्चकासम् ४१

इति हरीतक्यादिगुटिका ।

अर्थ-हरड, सोंठ, नागरमोथा, यह प्रत्येक एकएक भाग और गुड़ तीनभाग लेवै, फिर सबको मिलाकर गोली बनावै । इन गोलियोंको खानेसे बढाहुआ श्वाँस और प्रबल खाँसी दूर होतीहै ॥ ४१ ॥

तालीशवह्निदीप्यकचविकाम्लवेतसव्योषैः ।
तुल्यैस्त्रिसुगन्धियुतैर्गुडेनगुटिकाप्रकर्त्तव्या ॥ ४२ ॥
कासश्वासारोचकपीनसयकृत्कंठवाङ्निरोधेषु ।
ग्रहणीगुदभवेषुगुटिकाव्योषान्तिकानाम ॥ ४३ ॥
सर्वचूर्णस्यचतुर्थांशंत्रिसुगंधिचूर्णम् ।

इतिव्योषान्तिकागुटिका ।

अर्थ-तालीशपत्र, चीता, अजवायन, चव्य, अमलवैंत, और त्रिकुटा, यह सब समानभागले, और सबसे चौथाई भाग दालचीनी, इलायची, और तेजपात लेवै, और सबसे दुगुना गुड लेवै, पश्चात् सबको मिलाकर गोली बनावै, । यह गोली-खाँसी, श्वास, अरुचि, पीनस, यकृत्, कण्ठानिरोध, वाङ्निरोध, संग्रहणी और गुदाके रोगोंको दूर करैहै ॥ ४२ ॥ ४३ ॥

रम्यमाणस्यकासेनमुखश्वासेचशस्यते ।
श्वयथूद्गारकासेषुधूमपानंप्रयोजयेत् ॥ ४४ ॥
मनःशिलालमधुकंमांसीमुस्तैंगुदैःपिबेत् ।
धूमंत्र्यहश्चतस्यानुसगुडंचपयःपिबेत् ॥ ४५ ॥
एषकासान्पृथग्द्वन्द्वसर्वदोषसमुद्भवान् ।
शतैरपिप्रयोगाणांसाधयेदप्रसाधितान् ॥ ४६ ॥

ऐंगुदंपुत्रञ्जीवफलम् ।

ममःशिलालिप्तदलंबदर्याऽपशोषितम् ।
सक्षीरधूमपानाच्चमहाकासनिवारणम् ॥ ४७ ॥

क्षीरमनुपानम् ।

अर्कच्छदाशिलेतुल्येततोऽर्द्धंनकटुत्रिकम् ।
चूर्णितंवह्निनिक्षिप्तंपिबेद्धूमञ्चयोगवित् ॥ ४८ ॥
भक्षयेदथताम्बूलंपिबेद्दुग्धमथाम्बुवा ।
कासाःपंचविधायान्तिनाशमाशुनसंशयः ॥ ४९ ॥
मरिचशिलार्कक्षीरैरर्कत्वचमाशुभावितांशुष्काम् ।
कृत्वाविधिनाधूमंपिबतःकासाःशमंयान्ति ॥ ५० ॥

अर्थ–मुखश्वास, हिचकी, उद्गार और कासरोगमें धूमपान करना हितकारीहै । मनशिल, हरताल, मुलैठी, बालछड, नागरमोथा और पतजिया, इनका तीनदिन धूमपान करै, गुड और दूधके साथ भोजन करै तौ सर्वप्रकारकी खाँसी और श्वास दूर होताहै । मनशिलको पीस बेरीके पत्तोंपै लेपकर धूपमें सुखा धूमपान करै और ऊपर दूध पान करै तौ महाकासरोग नष्ट होताहै । आकके पत्ते और मैन-शिलको समान भाग लेवे, और इनसे आधाभाग त्रिकुटेका चूर्ण लेवै, पीछे सबको मिलाकर चिलममें रख धूमपान करनेसे पाँच प्रकारकी खाँसी दूर होती है, इसके ऊपर पान और दूध सेवन करै, अथवा जल पीवै, यह अनुपान है । कालीमिरच, मनशिल, और आककी छाल, इनको आकके दूधमें भिजो धूपमें सुखावै, फिर चिलममें

रख धूमपान करनेसे खाँसी दूर होती है ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥

दशमूलाढ़कैःप्रस्थंघृतस्याक्षसमैःपचेत्।
पुष्कराह्वशठीबिल्वसुरसाव्योषहिंगुभिः ॥ ५१ ॥
पयोऽनुपानंतत्पेयंकासेवातकफात्मके।
श्वासरोगेषुसर्वेषुहिक्कायांचप्रशस्यते ॥ ५२ ॥
बिल्वस्यमूलम् ।

इति दशमूलघृतम् ।

अर्थ-घृत चारशेर, दशमूलका क्वाथ १६ सोलहसेर, और पोहकर-मूल, कचूर, बेलकी जड़, तुलसी, त्रिकुटा, हींग, इन प्रत्येकका कल्क दो दो तोले लेवे, पश्चात् विधिपूर्वक घृतको सिद्ध करै। इसके सेवन करनेसे वात और कफकी खाँसी, सर्वप्रकारके श्वासरोग, और हिक्का-रोग दूर होता है, इसघीके ऊपर दूध पीवे, यह अनुपान है ॥५१॥५२॥

हिंगुलंमरिचंव्योषंटंकणंगंधकंसमम्।
जम्बीररससंयुक्तंमर्दयेद्याममात्रकम् ॥ ५३ ॥
कासंश्वासमतीसारंग्रहणींसान्निपातिकम्।
अपस्मारामयंमेहमजीर्णंचाग्निमान्द्यताम् ॥ ५४ ॥
गुंजामात्रप्रदानेनसर्वंनाशयातिक्षणात् ॥ ५५ ॥

इति कालान्तकोरसः।

अर्थ-सिंग्रफ, कालीमिरच, त्रिकुटा, सुहागा, और गंधक, यह सब समान भाग लेकर जम्बीरी नीबूके रसमें एक प्रहर खरल करै। इसकी मात्रा एक रत्तीकीहै। इससे खाँसी, श्वास, अतीसार, संग्रहणी, सान्निपातिकअपस्माररोग, प्रमेह, अजीर्ण, और मन्दाग्नि, नष्ट होती है ॥ ५४ ॥ ५५ ॥

त्रिकटुत्रिफलाचव्यधान्यजीरकसैन्धवाः।
प्रत्येकंतोलकंग्राह्यंछागीदुग्धेनगोलयेत् ॥ ५६ ॥
रसगंधकलोहानिप्रत्येकंकार्षिकंक्षिपेत्।

टंकणस्यपलंदत्त्वामरिचस्यपलार्द्धतः ॥ ५७ ॥
नवगुंजाप्रमाणेनवटिकांकारयेद्भिषक् ।
प्रातःकालेशुचिर्भूत्वाचिन्तयित्वामृतेश्वरीम् ॥ ५८ ॥
एकैकांवटिकांखादेद्रक्तोत्पलरसप्लुताम् ।
नीलोत्पलरसेनापिकुलत्थस्यरसेनवा ॥ ५९ ॥
छागीदुग्धेनमण्डेनकैरवस्यरसेनवा ।
निहन्तिविविधंकासंवातपित्तसमुद्भवम् ॥ ६० ॥
वातश्लेष्मोत्थितंदुष्टंपित्तश्लेष्मभवंचिरम् ।
वातिकंपैत्तिकंवापिगरदोषसमन्वितम् ॥ ६१ ॥
सरक्तमथनीरक्तंज्वरश्वाससमन्वितम् ।
तृड्दाहभ्रमशूलघ्नीरुच्यावह्निप्रदायिनी ॥ ६२ ॥
बलवर्णकरीवृष्याप्लीहगुल्मोदरापहा ।
आनाहकृमिपाण्डुघ्नीजीर्णज्वरविनाशिनी ॥ ६३ ॥
इयंचन्द्रामृतानामचंद्रनाथेननिर्मिता ।
वासागुडूचिकाभार्गीमुस्तकंकण्टकारिका ।
भोजनान्तेप्रयोक्तव्यावटिकावीर्यवर्द्धनी ॥ ६४ ॥

इति चन्द्रामृतरसः ।

अर्थ-त्रिकुटा, त्रिफला, चव्य, धनिया, जीरा और सैंधानोन, यह प्रत्येक एक एक तोला लेकर बकरीके दूधमें खरल करै, फिर पारा, गंधक और लोहा, यह प्रत्येक दो दो तोले, सुहागा चार तोले, और काली मिरच दो तोले लेवै, पीछे इन सबको पूर्वोक्तमें मिलावै और खूब मर्दन करै, तदनन्तर नौ नौ रत्तीकी गोलियां बनालेवै, पश्चात् प्रातः-काल पवित्रहो अमृतेश्वरी देवीका ध्यान धर एकगोली नित्यप्रति लाल-कमलके रसमें, अथवा नीलकमलके रसमें, वा कुलथीके रसमें, या बकरीके दूधमें, वा माडमें अथवा कमोदिनीके रसमें मिलाकर भक्षण करै। यह गोली नानाप्रकारकी खाँसी, वातपित्तकी खाँसी, वातकफकी खाँसी, दुष्टखाँसी, पित्तकफकी खाँसी, बहुतदिनोंकी खाँसी, वातकी खाँसी,

पित्तकी खाँसी, विषके विकारोंसे उत्पन्न हुई खाँसी, रुधिरयुक्त खाँसी, रुधिररहित खाँसी, ज्वर और श्वाससंयुक्त खाँसी, तृषा, दाह, भ्रम, प्लीहा, गुल्म, उदररोग, आनाह, कृमि, पाण्डु, और जीर्णज्वरको दूर करेहैं, तथा रुचिकारक, अग्निप्रदीप, बलकारक, वर्णको सुन्दर करनेवाली, और वीर्यवर्द्धकहै। यह चन्द्रामृतरस, श्रीचन्द्रनाथने निर्माण कियाहै। अडूसा, गिलोय,भारंगी, नागरमोथा, और कटेरी, इनकी गोली बनाकर, भोजनके अन्तमें खानी चाहिये। इससे वीर्यकी वृद्धि होतीहै ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥

रसगंधकतुल्यांशौद्वौभागौटंकणस्यच।
मौक्तिकंविद्रुमंशंखंमारणीयाःसमांशतः ॥ ६५ ॥
हेमभस्मार्द्धभागंचसर्वंखल्वेविमर्द्दयेत्।
निम्बुद्रवस्ययोगेनपिण्डकांकारयेद्भिषक् ॥ ६६ ॥
पश्चाद्गजपुटंदद्याच्छीतलंचसमुद्धरेत्।
हेमभस्मसमंतीक्ष्णंतीक्ष्णार्द्धंदरदोमतः ॥ ६७ ॥
एकीकृत्यसमस्तानिसूक्ष्मचूर्णानिकारयेत्।
ततःपूजांप्रकुर्वीतरसस्यादिवसेशुभे ॥ ६८ ॥
सर्वांगसुंदरोह्येषरोगराजनिकृन्तनः।
वातपित्तज्वरेघोरेसन्निपातेसुदारुणे ॥ ६९॥
अर्शस्संग्रहणीरोगेमेहेगुल्मेभगन्दरे।
निहन्तिवातजान्रोगान्श्लैष्मिकांश्वविशेषतः ॥ ७० ॥
पिप्पलीचूर्णसंयुक्तंघृतयुक्तमथापिच।
भक्षयेत्पर्णखंडेनासितयाचार्द्रकेणवा ॥ ७१ ॥
गुडूचीसत्वसहितंप्रमेहेऽपिविशेषतः।
रसरत्नाकरेप्रोक्तःसिद्धयोगेरसोत्तमः ॥ ७२ ॥
राजिकातैलहिंगवम्ललवणाढ्यंचवर्जयेत् ॥ ७३ ॥

इतिसर्वांगसुन्दररसः।

अर्थ–पारा और गंधक समान भाग, सुहागा दो भाग, मोती-मूंगा-

शंख, इनकी भस्म एक एक भाग, और सोनेकी भस्म आधा भाग लेवै, सबको खरलमें डाल नीबूके रसमें घोटकर गोला बना लेवै, फिर इस गोलेको गजपुटमें फूंक देवै, जब शीतल हो जाय तब निकालकर चूर्ण करले, पश्चात् इसमें सोनेकी भस्मकी बराबर तीक्ष्णलोहेकी भस्म, और लोहेकी भस्मसे आधा भाग सिंग्रफ मिलावै, फिर सबको पीस बारीक चूर्ण करले। फिर इस रसकी शुभदिनमें पूजाकर पीपलके चूर्णमें मिला, वा घीमें मिला, अथवा पानमें मिला, या मिश्रीमें मिला, अथवा अदरखके रसमें मिलाकर खावै तौ राजरोग, वातपित्तज्वर, दारुणसन्निपात ज्वर, बवासीर, संग्रहणी, प्रमेह, गुल्म, भगन्दर, वातके रोग और कफके रोग दूरहों, और इसको गिलोयके सत्वके साथ खावै तौ सर्वप्रकारके प्रमेहरोग दूर होवैं। इस सर्वांगसुन्दर रसपै राई, तैल, हींग, खटाई, और लवणके पदार्थ नहीं खाने चाहिये ॥ ६५ ॥ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥

समूलपत्रशाखायाःकण्टकार्यारसाढके।
घृतप्रस्थंबलाव्योषविडंगशठिचित्रकैः ॥ ७४ ॥
सौवर्चलयवक्षारबिल्वामलकपुष्करैः।
वृश्चीरबृहतीपथ्यायवानीदाडिमस्तथा ॥ ७५ ॥
द्राक्षापुनर्नवाचव्यादुरालभाम्लवेतसैः।
शृंगीतामलकीभार्गीरास्नागोक्षुरकैःपचेत् ॥ ७६ ॥
कल्कोऽयंसर्वकासेषुहिक्काश्वासेचशस्यते।
कण्टकारीघृतंसिद्धंकफव्याधिविनाशनम् ॥ ७७ ॥

इति बृहत्कण्टकारीघृतम्।

अर्थ-मूल, पत्र और शाखायुक्त कटेरीके ८ आठसेर रसमें दोसेर घृत, चिरैटी, त्रिकुटा, वायविडंग, कचूर, चीता, कालानोन, जवाखार, बेल, आमला, पोहकरमूल, विषखपरा, कटाई, हरड, अजवायन, अनार, दाख, पुनर्नवा, चव्य, धमासा, अमलवैत, काकडाशिंगी, भुई-आमला, भारंगी, रास्ना और गोखरू इनसबका कल्क समान भाग मिलाके विधिपूर्वक घृतको सिद्ध करै। यह कण्टकारीघृत सर्वप्रकारकी

खाँसी, हिक्का और श्वासरोगमें अत्यन्त हितकारी है, तथा कफव्याधिविनाशकहै ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥

समूलपुष्पच्छदकण्टकार्यास्तुल्यांजलद्रोणपरिप्लुताश्च ।
हरीतकीनाञ्चशतंनिदद्यादथार्द्रपक्काचरणावशेषम् ॥७८॥
गुडस्यदत्त्वाशतमेवचाग्नौविपक्कमुत्तार्यततःसुशीते ।
कटुत्रिकञ्चद्विपलप्रमाणंपलानिषट्पुष्परसस्यतत्र ॥ ७९ ॥
क्षिपेच्चतुर्जातपलंयथाग्निप्रयुज्यमानोविधिनावलेहः ।
वातात्मकंपित्तकफोद्भवञ्चद्विदोषकासानपियत्त्रिदोषम्॥८०
यक्ष्माणमेकादशमुग्ररूपंभृगूपदिष्टंहिरसायनंस्यात्॥ ८१ ॥

इति व्याघ्रीहरीतकी ।

अर्थ—कटेरीका पंचांग १२॥ साडेबारहसेर, हरड १०० एकसौ, इनको बत्तीससेर जलमें औटावै, जब चौथाभाग जल शेष रहै तब १२॥ साडेबारह सेर गुड डालकर पकावै, जब अच्छेप्रकार पकजावै तब उतारले, शीतलहोनेपर त्रिकुटेका चूर्ण आठ तोले, सहत चौवीस तोले और चतुर्जातकका चूर्ण चार तोले मिलादेवै । अग्निका बलाबल विचारकर इसको भक्षण करै तौ वातज, पित्तज, कफजन्य, द्विदोषज और त्रिदोषज खाँसी, तथा ग्यारहप्रकारेक राजयक्ष्मारोगको दूर करै है । यह रसायन भृगुजीने प्रकाशित कीहै ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥

दशमूलंस्वयंगुप्तांशंखपुष्पींशठींबलाम् ।
हस्तिपिप्पल्यपामार्गपिप्पलीमूलचित्रकान् ॥ ८२ ॥
भार्गीपुष्करमूलंचाद्विपलांशंयवाढकम् ।
हरीतकीशतञ्चैकंजलपंचाढकेपचेत् ॥ ८३ ॥
यवैःस्विन्नैःकषायन्तंप्लुतंतच्चाभयाशतम् ।
पचेद्गुडतुलांदत्त्वाकुडवञ्चपृथग्घृतात् ॥ ८४ ॥
तैलात्सपिप्पलीचूर्णात्सिद्धशीतेचमाक्षिकात् ।
लेह्याद्वेचाभयेनित्यमतःखादेद्रसायनात् ॥ ८५ ॥

तद्वलीपलितंहन्याद्वर्णाग्निबलवर्द्धनम्।
पंचकासान्क्षयंश्वासंहिक्कांसविषमज्वरम् ॥ ८६ ॥
हन्यात्तथाग्रहण्यर्शोहृद्रोगारुचिपीनसान्।
अगस्त्यविहितंधन्यमिदंश्रेष्ठंरसायनम् ॥ ८७ ॥
यवहरीतक्योःश्लक्ष्णपोटलींबद्ध्वानिक्षिपेत्।
पश्चात्स्विन्नहरीतकींघृततैलाभ्यांभर्जयेदिति ॥
रसरत्नाकरोक्तंयथा।

इतिअगस्त्यहरीतकी।

अर्थ–दशमूल, कौंछके बीज, शंखपुष्पी, कचूर, खिरैटी, गजपीपल, चिरचिटा, पीपरामूल, चीता, भारंगी, और पोहकरमूल, यह प्रत्येक सोलै सोलै तोले लेकर ८० सेर जलमें पकावे, फिर आठसेर जौ और एकसौ हरड़, इनको बारीक कपड़ेकी पोटलीमें बांधकर पूर्वोक्त क्वाथमें डालदेवै, जब २० वीस सेर जल शेष रहे तब उतारकर काढ़ेको छान लेवै, और हरडोंको अलग निकालकर उनकी गुठली निकाल डाले, फिर घी और तेलमें हरडोंको भूने, तदनन्तर पूर्वाक्त छने हुए क्वाथमें १२॥ साडेबारह सेर गुड़ उपरोक्त भुनी हुई एकसौ हरड, सोलह तोले घी, १६ सोलह तोले तेल, और सोलह तोले पीपलका चूर्ण मिलाकर पकावे, शीतल होनेपर सोलह तोले सहत मिला देवै। दोहरडैं नित्यप्रति खावै तौ वलीपालितरोग, पांचप्रकारकी खाँसी, क्षय, श्वास, हिक्का, विषमज्वर, संग्रहणी, बवासीर, हृदयरोग, अरुचि, और पीनसरोग दूरहोवै। यह श्रेष्ठरसायन अगस्त्यजीने कहीहै ॥ ८२ ॥८३॥८४॥८५ ॥८६॥८७॥

वातान्हृच्छंखयोःशूलंमूर्धिपार्श्वोदरेऽपिच।
क्षामाननंबलंक्षीणंभिन्नकांस्यस्वरस्तथा ॥ ८८ ॥

इतिवातकासे।

अर्थ–हृदय, कनपटी, मस्तक, पसली, और उदर, इनसबमें शूल चले, मुख क्षीण और बलहानि होवै, तथा फूटे कांसीके वासनके शब्दकी समान स्वर होजावै तो वातकी खाँसी जाननी ॥ ८८ ॥

शुद्धसूतंद्विधागंधंद्रवैःपुनःपुनःपचेत् ।
वातारिचार्द्रकंभृंगीकाकमाच्यद्रिकर्णिका ॥ ८९ ॥
दिनैकंमर्दयेत्खल्वेपाचयेत्पर्पटींयथा ।
द्वयोःपादंमृतंताम्रंपिष्ट्वामृद्वग्निनापचेत् ॥ ९० ॥
रक्तवर्णंभवेद्यावत्तावद्दर्व्याप्रचालयेत् ।
प्रक्षिपेत्कदलीपत्रेऽथवास्निग्धपुटेपुनः ॥ ९१ ॥
अब्दाद्यतेनयोगेनततश्चोर्द्धंचगोमयम् ।
देयंविचूर्णयेत्पश्चाच्चूर्णपादंविषंक्षिपेत् ॥ ९२ ॥
रुद्रपर्पटिकाह्येषादेयंगुंजाद्वयंतथा ।
चूर्णितंकटुनिर्गुण्ड्यामूलंनिष्कद्वयंपिबेत् ॥ ९३ ॥
भृंगराजरसेनैवलिहेद्वामधुनासह ।
वातकासंनिहन्त्याशुरसोवानन्दभैरवः ॥ ९४ ॥

कटुस्त्रिकटुः ।

इति रुद्रपर्पटी ।

अर्थ-शुद्धपारा एक भाग, शुद्धगंधक दो भाग, इन दोनोंको अंड, अदरख, अतीस, मकोय, और कोयल, इनके रसमें एक दिन खरल करै, और पर्पटीकी तरह पकावे, पश्चात् पारे और गंधकसे चौथा भाग तांबेकी भस्म मिलाकर मृदु अग्निसे पकावे, जब पकते पकते लाल होजाय तब उतारकर केलेके पत्तेके नीचे गोबर बिछाय उसपै ढाल देवे और ऊपरसे दूसरे पत्तेसे दबाकर पपडीकी तरह बनालेवे, फिर इसका चूर्णकर चूर्णसे चौथाभाग विष मिलालेवे तौ रुद्रपर्पटीरस सिद्धहो। मात्रा दो रत्तीकी है। इस औषधिके अन्तमें त्रिकुटा और सह्मालुकी जड़के चूर्णको भांगरेके रसमें अथवा सहतमें मिलाकर सेवन करे। यह रस शीघ्रही वातकी खाँसीको दूर करै है ॥ ८९ ॥ ९० ॥ ९१ ॥ ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥

रास्नाविडंगत्रिफलारसगंधंकटुत्रयम् ।
अमृतापद्मकंक्षौद्रंविषतुल्यंसुचूर्णितम् ॥ ९५ ॥

द्विगुंजंवातकासार्त्तःसेवयेदमृतार्णवम् ॥ ९६ ॥

इति अमृतार्णवरसः।

अर्थ-रास्ना, वायविडंग, त्रिफला, पारा, गंधक, त्रिकुटा, गिलोय, पद्माख, सहत और विष, इन सबको समान भाग लेकर चूर्ण करै। इसको दो रत्तीभर खानेसे-वातकी खाँसी दूर होतीहै। इसको अमृतार्णवरस कहते हैं ॥ ९५ ॥ ९६ ॥

शुद्धसूतस्यभागैकंद्विभागंशुद्धगंधकम्।
भागद्वयंमृतंताम्रंमरिचंदशभागकम् ॥ ९७ ॥
मृताभ्रस्यचतुर्भागंभागमेकंविषंक्षिपेत्।
भूतांकुशस्यभागैकंसर्वमम्लेनभावयेत् ॥ ९८ ॥
योयंभूतांकुशोनामयामैकंवातकासजित्।
अनुपानंलिहेत्क्षौद्रविभीतकफलत्वचम् ॥ ९९ ॥

इति भूतांकुशरसः।

अर्थ-शुद्धपारा एकभाग, शुद्धगंधक दो भाग, ताँबेकी भस्म दो भाग कालीमिरच दश भाग, अभ्रककी भस्म चार भाग, विष एक भाग, और भूतांकुशरस एक एक भाग लेवै, सबको एक प्रहर नीबूके रसमें भावना देकर एक एक मासेकी गोली बनावै।एक गोली खानेसे वातकी खांसी दूर होतीहै। अनुपान- बहेडेकी छालको पीस सहतमें मिलाकर चाटै ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥

उरोदाहोरक्तशोषस्तिक्तास्यश्चज्वरंतथा।
कटुपित्तंवमत्येवपाण्डुत्वंपित्तकासके ॥ १०० ॥

इति पित्तकासः।

अर्थ-वक्षस्थलमें दाहहो, रुधिर सूख जावै, मुख कड़वा हो, ज्वरहो, कटु पित्त वमनमें गेरै, और शरीर पाण्डुवर्ण हो जाय, यह सब लक्षण पित्तकी खाँसीमें होते हैं ॥ १०० ॥

भस्मताम्राभ्रतीक्ष्णानांकासमर्दत्वचोरसैः।
सालजैर्वेतसाम्लेनादिनंमर्द्यंसुपिण्डतम् ॥ १०१ ॥

द्विगुंजांपित्तकासार्त्तोभक्षयेच्चत्रिनेत्रकम् ॥ १०२ ॥
इति त्रिनेत्ररसः।

अर्थ-ताँबेकी भस्म, अभ्रककी भस्म, लोहेकी भस्म, इन तीनोंको समान भाग लेकर कसौंदीकी छालके रसमें, सालके रसमें, और अमलवैंतके रसमें एक दिन खरलकर गोला बनालेवै,फिर दो रत्तीकी गोलियें करले। एक गोली खानेसे पित्तकी खाँसी दूर होतीहै, इसको त्रिनेत्ररस कहतेहैं ॥ १०१ ॥ १०२ ॥

रसोलोकेश्वरोप्यत्रपिप्पलीमधुनासह।
देयंगुंजाचतुष्कंचसघृतैर्मरिचैःसह ॥ १०३ ॥
कासश्वासाग्निमान्द्यश्चक्षयकासंचनाशयेत् ॥ १०४ ॥

अर्थ-चार रत्ती लोकेश्वररसको पीपलके चूर्णके साथ सहत मिलाकर खावैतौ, अथवा कालीमिरचोंके चूर्णके साथ घी मिलाकर खावै तौ- खाँसी, श्वास, मन्दाग्नि, और क्षयकी खाँसी दूर होती है ॥ १०४॥

शिरोऽर्त्तिःकफपूर्णास्यतारुजिगौरवंज्वरः।
कासेत्सान्द्रकफःकण्ठेश्लेष्मकासस्यलक्षणम् ॥ १०५ ॥

अर्थ-शिरमें पीड़ा, कफसे मुख भराहै, अरुचि, शरीर भारी और ज्वरहो, वारंवार खाँसी उठे, और कण्ठमें गाढ़ा कफ होय, यह लक्षण कफकी खाँसीके जानने ॥ १०६ ॥

रसगंधकताम्राणांशंखटंकणलोहकम्।
मरिचंकुष्ठतालीशंजातीफललवङ्गकम् ॥ १०६ ॥
कार्षिकंचूर्णमादायद्रवैरेषांचमर्दयेत्।
भेकपर्णीकेशराजानिर्गुण्डीकाकमाचिका ॥ १०७ ॥
द्रोणपुष्पीचशालश्चाग्रीष्मसुन्दरएवच।
भार्गीहरीतकीवासाकार्षिकैःपत्रजैरसैः ॥ १०८ ॥
वटिकांकारयेद्वैद्यःपंचगुंजाप्रमाणिकाम्।
पित्तजंवातजंकासंद्वन्द्वजंचिरकालजम् ॥ १०९ ॥

श्रीमद्गहननाथेनकाससंहारभैरवः ।
रसोऽयंनिर्मितोयत्नाल्लोकरक्षणहेतवे ॥ ११० ॥
वासाशुंठीकंटकारीक्वाथेनपाययेद्बुधः
कासनाशनवज्रोऽयंरसःश्वासपाण्डुजित् ॥ १११ ॥

इति काससंहारभैरवः ।

अर्थ-पारा, गंधक, ताँबा, शंख, सुहागा, लोहा, कालीमिरच, कूठ, तालीसपत्र, जायफल और लौंग, ये प्रत्येक दो दो तोले लेकर मंडूकपर्णी, कुकुरभांगरा, सह्मालु, मकोय, द्रोणपुष्पी, शालिचशाक, ग्रीष्मसुन्दरशाक, भारंगी, हरड़, अडूसा, इन प्रत्येक पत्तोंके दो दो तोले रसमें भावना देकर पांच पांच रत्तीकी गोलियें बनालेवै। इसको अडूसा, सोंठ और कटेरीके काढेमें मिलाकर पीवैतौ पित्तज, वातज, द्वन्द्वज और बहुतदिनोंकी खाँसी, तथा श्वास और पाण्डुरोग दूरहोवै। यह काससंहारभैरवरस श्रीमान् गहननाथने संसारकी रक्षाके अर्थ निर्माण कियाहै ॥ १०६ ॥ १०७ ॥ १०८ ॥ १०९ ॥ ११० ॥ १११ ॥

कटुत्रयंपाठकदेवदारुरास्नाविडङ्गत्रिफलावृषाणाम् ।
चूर्णसमांशंसितयाविमिश्रंकासंजयेद्विष्णुरिवातिपापम् ॥ ११२ ॥

इतित्रिकट्वादिचूर्णम् ।

अर्थ-त्रिकुटा, पाढ, देवदारु, रास्ना, वायविडङ्ग, त्रिफला और अडूसा इनसबको समान भागलेकर चूर्णकरै, और सब चूर्णकी बराबर मिश्री मिलावै, यह खाँसीको दूर करैहै ॥ ११२ ॥

कुमारीत्रिफलाचूर्णचित्रकस्वरसैःक्रमात् ।
शोधयित्वापुनाराजीगृहधूमहरिद्रया ॥ ११३ ॥
पक्केष्टकारजश्चैवजलम्बूपरसेनच ।
भृंगराजरसेनापिशोधयित्वापुनःपुनः ॥ ११४ ॥
प्रक्षालयेत्पुनःपश्चाच्छानयेद्वसनेघने ।
कर्षद्वयंरसेन्द्रस्यभावयेद्विजयाद्रवैः ॥ ११५ ॥
शिलायांखलयेच्चापियावत्पिण्डत्वमागतम् ।

जलकर्णीकाकमाचीरसाभ्यांभावयेत्पुनः ॥ ११६ ॥
सौगन्धिकपलंशुद्धमर्द्धमरिचटंकणम् ।
माक्षिकंचाशिखिग्रीवतालकंचाभ्रकन्तथा ॥ ११७ ॥
एतांस्तुमिलितान्कृत्वाभावयेच्चार्द्रकद्रवैः ।
रक्तिद्वयप्रमाणेनकारयेद्गुटिकांभिषक् ॥ ११८ ॥
जीर्णान्नोभक्षयेदेकांक्षीरमांसरसाशनः ।
पंचकासंक्षयंश्वासंरक्तपित्तविनाशनम् ॥ ११९ ॥
पाण्डुकृमिज्वरहरंकृशानांपुष्टिवर्द्धनम् ।
वाजीकरणनिर्दिष्टमम्लपित्तहरंपरम् ॥ १२० ॥
वह्निसंदीपनंश्रेष्ठमरोचकविनाशनम् ।
नागार्जुनाख्यमुनिनाभाषितंतत्त्ववेदिना ॥ १२१ ॥

इति रसेन्द्रगुटिका ।

अर्थ–घीकुवार और त्रिफलेके चूर्णमें, चीतिके रसमें, राई, घरका धुआ और हलदीके रसमें, तथा ईटके चूर्णमें, लज्जालुभेदके रसमें और भांगरेके रसमें क्रमसे पारेको अलग अलग शोधकर पानीसे धोकर वस्त्रमें छानले, ऐसा पारा दो तोले लेकर भांगके रसमें भावनादेवै, फिर खरलमें घोट गोला बनाके उस गोलेको कर्णमोरट लताके रसमें और मकोयके रसमें भावनादे, चारतोले शुद्धगंधक, तथा कालीमिरच, सुहागा, सोनामाखी, तुतिया और हारिताल तथा अभ्रक ये प्रत्येक चार तोले मिलाकर अदरखके रसमें भावना देवै, फिर दोरत्तीकी गोलियें बनालेवै, एकगोली रोज भोजनके जीर्ण होनेपर भक्षण करै । इसके ऊपर दूध और मांसरसका भोजन करै । यह रसेन्द्रगुटिका पांचप्रकारकी खाँसी, क्षय, श्वास, रक्तपित्त, पाण्डुरोग, कृमिरोग, ज्वर, अम्लपित्त, और अरुचिको दूर करैहै, तथा कृशमनुष्योंके पुष्टिको बढानेवाला, वाजीकरण, अग्निप्रदीपक और अति उत्तमहै । यह रस–श्रीमान् नागार्जुनऋषिने निर्म्माण कियाहै ॥ ११३ ॥ ११४ ॥ ११५ ॥ ११६ ॥ ११७ ॥ ११८ ॥ ॥ ११९ ॥ १२० ॥ १२१ ॥

कर्षंशुद्धरसेंद्रस्यगंधकस्याभ्रकस्यच ।

लौहचूर्णस्यताम्रस्यतालकस्यविषस्यच ॥
मनःशिलायाःक्षाराणांबिजंधुस्तूरकस्यच ।
मरिचस्यापिसर्वेषांचूर्णंतुल्यंप्रदापयेत् ॥ १२३ ॥
जयन्तीचित्रकौमानघण्टाकर्णोऽथमण्डुकी ।
शक्राशनंकेशराजभृंगापामार्गकस्यच ॥ १२४ ॥
सिन्धुवारस्यचरसैःकर्षमात्रैश्चमर्दयेत् ।
हन्तिपंचविधंकासंश्वासश्चैवसुदारुणम् ॥ १२५ ॥
कफवातमयंरोगमानाहंविड्विबन्धताम् ।
अग्निमान्द्यारुचिश्चैवउदरंपाण्डुकामलाम् ॥ १२६ ॥
रसायनीचवृष्याचबलवर्णप्रदायिनी ।
बृंहणंमधुरंस्निग्धंमत्स्यंमांसञ्चजांगलम् ॥ १२७ ॥
घृतपक्कंसदाभक्ष्यंरूक्षणंतीक्ष्णंचवर्जयेत् ॥ १२८ ॥

इति बृहद्रसेंद्रगुटिका ।

अर्थ-शुद्धपारा, शुद्धगंधक, अभ्रक, लोहेकाचूर्ण, तांबा, हरिताल, विष, मनशिल, जवाखार, सज्जी, सुहागा, धतूरेके बीज, और कालीमिरचोंका चूर्ण, यह प्रत्येक दो दो तोले लेकर जयन्ती, चीता, मानकंद, घण्टाकर्ण, ब्रह्ममण्डूकी, भांग, कुकुरभांगरा, भांगरा, चिरचिटा, और सह्मालू, इन प्रत्येकके दो दो तोले रसमें खरलकर मटरकी बराबर गोली बनालेवै । इनको भक्षणकरनेसे-पाँचप्रकारकी खाँसी, श्वाँस, कफ, वातरोग, आनाह, विड्विबन्ध, मन्दाग्नि, अरुचि, उदररोग, पाण्डुरोग, और कामलारोग दूर होता है । यह गोली-रसायन, वीर्यवर्द्धक, बलकारक, वर्णको सुन्दर करनेवाली है । इसके ऊपर पुष्टिकारक, मधुर, स्निग्ध, मत्स्य, जांगलदेशके जीवोंका मांस घीमें भुना हुआ सदैव खाना चाहिये, तथा रूक्ष और तीक्ष्णपदार्थ इसके ऊपर नहीं भक्षण करै ॥ ॥ १२२ ॥ १२३ ॥ १२४ ॥ १२५ ॥ १२६ ॥ १२७ ॥ १२८ ॥

सूतकंगंधकंलौहंविषमभ्रकमेवच ।
विडंगंबिल्वकंमुस्तमेलाग्रन्थिककेशरम् ॥ १२९ ॥

...कटुत्रिफलाचित्रंशुद्धजैपालबीजकम्।
एतानिसमभागानिगुडोद्विगुणउच्यते॥ १३०॥
तिन्तिडीबीजमानेनप्रातःकालेतुभक्षयेव।
श्वासंकासंक्षयंगुल्मंप्रमेहंविषमज्वरम्॥ १३१॥
अजीर्णग्रहणीदोषाञ्छूलंपार्श्वामयांस्तथा।
अपानेहृदयेशूलेवातरोगेगलग्रहे॥ १३२॥
अरुचौचातिसारेचसूतिकाविषनाशनः।
जयाक्षनिर्मितोह्येषब्रह्मादित्रिदिवेश्वरैः॥ १३३॥

इति विजयभैरवरसः।

अर्थ–पारा, गंधक, लोहा, विष, अभ्रक, वायविडंग, बेलगिरी, नागरमोथा, इलायची, पीपरामूल, नागकेशर, त्रिकुटा, त्रिफला, चीता, और शुद्ध जमालगोटेके बीज, यह सब समान भाग, और सबसे दुगुना गुड़ लेवै, सबको मिलाकर इमलीके चीयेकी समान गोलियां बनालेवै, एक गोली रोज प्रभातके समय भक्षण करैतौ–श्वास, खांसी, क्षय, गुल्म, प्रमेह, विषमज्वर, अजीर्ण, संग्रहणी, शूल, पशलियोंका शूल, अपान शूल, हृदयका शूल, वातरोग, गलग्रह, अरुचि, अतिसार, सूतिका, विष, इनको दूर करैहैं। यह विजयभैरव रस ब्रह्मादि देवोंने निर्माण किया है॥ १२९॥ १३०॥ १३१॥ १३२॥ १३३॥

पर्वभेदोज्वरश्वासतृषावैस्वर्य्यपीडितम्।
सपूर्वंकासतेशुष्कंततःष्ठीवेत्सशोणितम्॥ १३४॥
पारावतइवाकूजन्कासवेगात्क्षतोद्भवात्॥ १३५॥

अर्थ–शरीरकी संधियोंमें हड़फूटनहो, ज्वर, श्वाँस, तृषा, स्वरभेद इनसे पीड़ित हो, प्रथम सूखा खाँसे, पश्चात् रुधिर थूके और कबूतरकी समान शब्द कहै तौ जानिये क्षतकी खांसी है॥ १३४॥ १३५॥

रसपादंमृतंतारंशिलातालंचतुर्गुणम्।
वासागोक्षुरसत्वाभ्यांमर्दयेत्प्रहरद्वयम्॥ १३६॥
द्वियामंवालुकायन्त्रेस्वेद्यमादायचूर्णयेत्।

गुंजाद्वयंनिहंत्याशुकासंश्वासंक्षतोद्भवम् ॥
रसस्तालेश्वरोनाम्नाअनुपानंचकथ्यते ।
वचाकुष्ठहरिद्राभिःसैंधवंटंकणंविषम् ॥ १३८ ॥
सपाठालांगलीव्योषंचाक्षंप्रत्येकभागकम् ।
भावितंभृंगराजेनदिनैकंतंचभक्षयेत् ॥ १३९ ॥
माषंतालेश्वरोनाम्नाहिक्कावैस्वर्यकासजित् ॥ १४० ॥

इति तालेश्वररसः ।

अर्थ-पारा एक भाग, चांदीकी भस्म, मैनशिल और हरिताल, इसे प्रत्येक चार चार भाग लेकर अडूसे और गोखरूके सत्वमें दो प्रहर खरल करै, पश्चात् दो प्रहरतक वालुकायंत्रमें पकावै, जब स्वयं शीतल हो जाय तब निकालकर चूर्ण करले, इसको दो गुंजाभर खावै तौ-क्षतसे उत्पन्न हुए खांसी और श्वाँस दूर हो जाते हैं। इसको तालेश्वररस कहतेहैं. वच कूट हलदी, सैंधानोंन, सुहागा, विष, पाढ़, कलिहारी, त्रिकुटा यह प्रत्येक दो दो तोले लेकर, भांगरेके रसमें एक दिन भावना देकर, अनुपान करै। इसको एकमासेभर रोज खाय तौ हिचकी, स्वरभेद और कासरोग दूर हो ॥ १३६ ॥ १३७ ॥ १३८ ॥ १३९ ॥ १४० ॥

गात्रशूलंज्वरोदाहोमोहःश्वासश्चयस्यवै ।
शुष्कंनिष्ठीवयेत्कृच्छ्रात्सपूयंशोणितंचयः ॥ १४१ ॥
इत्येषक्षयजःकासःसाध्योबलवतांक्वचित् ।
क्षीणानांदेहनाशायसएकःसाध्यतांव्रजेत् ॥ १४२ ॥

इति क्षयकासः ।

अर्थ-शरीरमें शूल हो, ज्वर, दाह, मोह और श्वास, उत्पन्न हो, अत्यन्त कष्टके साथ सूखा खाँसे, पश्चात् राधयुक्त रुधिर थूके तौ क्षयकी खाँसी जाननी । यह खाँसी-बलवान् मनुष्योंको कुछ कुछ साध्य होती है और क्षीणमनुष्योंकै असाध्य जाननी ॥ १४१ ॥ १४२ ॥

शुद्धसूतंद्विधागंधंकुर्याद्यत्नेनकज्जलीम् ।
तयोःसमंतीक्ष्णचूर्णंमर्दयेत्कनकद्रवैः ॥ १४३ ॥
द्वियामान्तेकृतंगोलंताम्रपात्रेविनिक्षिपेत् ।

...छाद्येरण्डपत्रेणयामार्द्धेऽप्युष्णताभवेत् ॥ १४४ ॥
धान्यराशौन्यसेत्पश्चाद्वियामान्तेसमुद्धरेत् ।
संपेष्यगोलयेद्वस्त्रेसद्योवारितरंभवेत् ॥ १४५ ॥
त्रिकटुत्रिफलाचैलाजातीफललवंगकम् ।
एषाश्वपरभागानांसमपूर्वरसोभवेत् ॥ १४६ ॥
संचूर्ण्यालोडयेत्क्षौद्रैर्भक्ष्यंनिष्कद्वयंद्वयम् ।
अयमग्निरसोनाम्नाक्षयकासनिकृन्तनः ॥ १४७ ॥
इन्द्रवारुणिकामूलंभृंगंकृष्णातिलैःसह ।
भक्षयेत्क्षयकासार्त्तोनिष्कमात्रंप्रशान्तये ॥ १४८ ॥

इति अग्निरसः ।

इति कासाध्यायः ।

अर्थ–शुद्धपारा एकभाग, गंधक दोभाग, इन दोनोंकी कज्जली करै, पश्चात् दोनोंकी समान इस्पात्का चूर्ण मिला धतूरेके रसमें खरल करै, दोप्रहरपर्यन्त खरलकर गोला बनालेवै, उस गोलेको तांबेके वासनमें रख ऊपर अंडके पत्ते ढक चारघडीतक रहनेदेवै, जब गरम होजाय तब दोप्रहरतक धानोंके ढेरमें रखदेवै, पश्चात् निकालकर महीन पीस वस्त्रमें छानलेवै, वह छनाहुआ ऐसा होजाय कि–पानीमें डालनेसे तिरनेलगै, फिर उसमें त्रिकुटा, त्रिफला, इलायची, जायफल, लांग, इनसबको समानभागलेकर चूर्णबना मिलादेवै, पश्चात् सहत मिलाके आठमासेभर नित्यप्रति भक्षण करै । यह अग्निरस–क्षयकी खाँसीको दूर करैहै । इसके सेवनके अन्तमें इन्द्रायनकी जड, दालचीनी और कालेतिल, इनको एकत्रमिलाकर चारमासेभर भक्षणकरै ॥ १४३ ॥ ॥ १४४ ॥ १४५ ॥ १४६ ॥ १४७ ॥ १४८ ॥

इति कासाधिकारःसमाप्तः ।

अथ हिक्काश्वासयोश्चिकित्सामाह ।

हिक्काश्वासार्त्तयोःपूर्वंतिलाक्तःस्वेदइष्यते ।
स्निग्धैर्लवणयोगैश्चमूर्द्ध्ववातानुलोमनम् ॥ १ ॥

ऊर्द्धाधःशोधनंशक्तेदुर्बलेशमनंमतम्।
प्रस्वापयेद्दिवायत्नान्नरंहिक्कातुरंभिषक्॥ २॥
मधुकंमधुसंयुक्तंपिप्पलीशर्करान्विता।
नागरंगुडसंयुक्तंहिक्काघ्नंलावणत्रयम्॥ ३॥
लावणंनस्यम्।
स्तन्येनमाक्षिकाविष्ठानस्यंवालक्तकाम्बुना।
योज्यंहिक्काभिभूतायस्तन्यंवाचन्दनान्वितम्॥ ४॥

अर्थ-हिक्का और श्वाससे पीडितमनुष्यको प्रथम तिलयुक्त द्रव्योंका स्वेदप्रयोग कराना चाहिये। और चिकने तथा निमकीनपदार्थोंसे ऊर्द्धवातको अनुलोमन करना चाहिये। हिक्का और श्वासरोगी जो बलवान् होयतौ वमन और विरेचन करावै,और जो दुर्बल होयतौ शमन-औषधि सेवन करावै। हिक्कारोगीको दिनमें शयन करावै। मुलैठीमें सहत मिलाकर अथवा पपिलके चूर्णमें बूरा मिलाकर वा सोंठके चूर्णमें गुड मिलाकर नासलेनेसे हिक्कारोग शान्त होताहै। मक्खीकी विष्ठाको पीसकर नास लेनेसे वा दूधको चन्दनमें मिलाकर नास लेनेसे हिक्कारोग शान्त होताहै॥ १॥ २॥ ३॥ ४॥

पिप्पल्यामलकीद्राक्षाकोलास्थिमधुशर्कराः।
विडंगपुष्करैर्युक्तोलोहोहन्तिसुदुर्जयाम्॥ ५॥
छर्दितृष्णांतथाहिक्कांत्रिरात्रेणनसंशयः॥ ६॥
सर्वचूर्णसमंलोहम्।
इति पिप्पल्यादिलोहम्।

अर्थ-पीपल, आमला, दाख, बेरकी मींग, सहत, बूरा, वायविडंग और पोहकरमूल, यह सब समानभाग लेवै, और सबकी बराबर लोहेका चूर्ण लेवै। इसको सेवनकरनेसे दुर्ज्जयहिक्कारोग, वमन, तृषा, तीन रात्रियोंमें दूर होजातेहैं॥ ५॥ ६॥

कूश्माण्डप्रभवंमूलंपीत्वाभक्तस्यवारिणा।
अजस्रमुत्थिताहिक्काशान्तिर्भवतितत्क्षणात्॥ ७॥

आष्ठीलकदलीकन्दरसखण्डविमिश्रितम् ।
पीत्वाहिक्कांजयत्युग्रांवातापित्तसमुद्भवाम् ॥ ८ ॥
हिक्काश्ववासीभजेत्सर्वपानार्थकफवातनुत् ।
दशमूल्याकुलत्थैर्वासिद्धंजांगलजैरसैः ॥ ९ ॥
भुंजीतशालिगोधूमयवान्नंजीर्णमेवच ।
हिक्काश्वासीपिबेदुष्णंदशमूलीकृतंजलम् ॥ १० ॥
देवदारुश्टृतंवापिभार्गीश्टृतमथापिवा ।
सनागराभयातुल्याकासश्वासौव्यपोहति ॥ ११ ॥
अभयानागरंवल्कंपौष्करयावशूकमरिचकल्कंवा ।
तोयेनोष्णेनापिबेच्छ्वासीहिक्कीचतच्छान्त्यै ॥ १२ ॥
गुडंकटुकतैलेनमिश्रयित्वाऽसमंलिहेत् ।
त्रिसप्ताहप्रयोगेणश्वासंनिर्मूलतांनयेत् ॥ १३ ॥
कृष्णासैन्धवसंयुक्तंचूर्णस्वरसेनशृंगवेरस्य ।
योलेढिशयनकालेसजयातिसप्ताहतःश्वासान् ॥ १४ ॥
कृष्णामलकशुण्ठीनांचूर्णमधुसिताघृतम् ।
मुहुर्मुहुःप्रयोक्तव्यंहिक्काश्वासनिवारणम् ॥ १५ ॥
अमृतानागरंफञ्जीव्याघ्रपर्णीसुसाधितः ।
क्वाथःपीतःसकणाचूर्णःकासश्वासाञ्जयन्त्याशु ॥ १६ ॥
बिल्वाटरूषदलवारिसमूलशुक्त-
दण्डोत्पलदलजलंकटुतैलमिश्रम् ।
भार्गीगुडादिरपियत्रहतप्रभाव-
स्तंश्वासमाशुविनिहन्तिमहाप्रभावम् ॥ १७ ॥
बिल्ववासापत्ररसःसमूलपत्रशुक्तदंडोत्पलरसश्च ।

इति कटुतैलेनसह योगः ।

अर्थ-पेठेकी जड़को चावलोंके जलमें पीसकर पीनेसे-तत्काल हिक्का

रोग शान्त होताहै। केलेके कन्दके रसको खांडके साथ पीनेसे वातपैत्तिक हिक्कारोग दूर होताहै, हिक्का और श्वासरोगी सब पीनेके द्रव्य कफवातनाशक पान करै तथा दशमूल, कुलथी और जंगलदेशोंके जीवोंके मांसका यूष सेवन करै, और पुराने चावलोंका भात, गेहूं और जौके अन्नका भोजन करै। गरमागरम दशमूलका क्काथ, देवदारुका क्काथ, और भारंगीका क्काथ पीनेसे हिचकी और श्वास नष्ट होता है। सोंठ और हरड़ समानभाग लेकर सेवनकरनेसे श्वास और खासी दूर होतीहै। हरड, सोंठ, दालचीनी, पोहकरमूल, जवाखार और कालीमिरच, इनको गरमजलमें पीसकर सेवन करनेसे श्वास और हिक्का रोग दूर होताहै। गुडमें सरसोंका तेल मिलाकर तीन सप्ताहतक सेवन करनेसे श्वासरोग शान्त होता है। सोनेके समय पीपल और सैंधानोंनका चूर्ण अदरखके रसके साथ सेवनकरै तो एकसप्ताहमें श्वासरोग शान्तहो। पीपल, आमला, और सोंठका चूर्ण, सहत, बूरा और घीके साथ वारंवार सेवनकरनेसे हिचकी और श्वासरोग नष्ट होता है। गिलोय, सोंठ, भारंगी, कटेरी, और जलकुम्भी, इनके काढ़ेमें पीपलका चूर्ण डालके पीनेसे श्वास और खांसी दूर होतीहै। बेलगिरी, अडूसा और मूल तथा पत्रसमेत सफेद दण्डोत्पलका रस सरसोंके तेलके साथ पीनेसे अथवा भारंगीको गुड़ादिके द्वारा पीनेसे—असाध्य श्वासरोग शान्त होता है॥७॥८॥९॥१०॥११॥१२॥१३॥१४॥१५॥१६॥१७॥

श्रृंगीकटुत्रयफलत्रयकण्टकारी-
भार्गीसपुष्करजटालवणानिपंच।
चूर्णंपिबेदपिशिवेनजलेनहिक्का-
श्वासोर्द्ध्ववातकसनाऽरुचिपीनसेषु ॥ १८ ॥

इति श्रृंग्यादिचूर्णम्।

अर्थ—काकड़ाशिंगी, त्रिकुटा, त्रिफला, कटेरी, भारंगी, पोहकरमूल, पंचलवण, इनका चूर्ण बना, जलके साथ पीनेसे—हिक्का, श्वास, ऊर्द्ध्ववात खासी, अरुचि और पीनसरोग दूर होताहै ॥ १८ ॥

कुलत्थाद्दशमूलाच्चभार्ग्याःप्रस्थंपृथक्पृथक्।
क्काथयित्वाजलद्रोणेपादशेषेविपाचयेत् ॥ १९ ॥

द्विक्षीरंसर्पिषःप्रस्थंसक्षारैःपंचकोलकैः ।
पलिकैस्तज्जयेत्सिद्धंश्वासंकासंसपीनसम् ॥ २० ॥
प्लीहहिक्काग्रहण्यर्शोगुल्मांश्चविषमज्वरान् ।
कुलत्थषट्पलंसर्पिर्बलवर्णाग्निदीपनम् ॥ २१ ॥

इति कुलत्थषट्पलंघृतम् ।

अर्थ–कुलथी, दशमूल, और भारंगी, प्रत्येक चौसठ चौसठ तोले लेकर १०२४ एक हजार चौवीस तोले जलमें पकावै जब चौथा भाग जल शेष रहै तब उसमें २५६ दोसौ छप्पन तोले दूध, ६४ चौसठ तोले घी, जवाखार, सज्जीखार, सुहागा, चीता, चव्य, सोंठ, पीपल और पीपलामूल, यह प्रत्येक चार चार तोले मिलाकर घृतको सिद्ध करै। यह घृत श्वास, खाँसी, पीनस, प्लीहा, हिचकी, संग्रहणी, बवासीर गुल्म और विषमज्वरको दूर करै। यह कुलत्थषट्पल घृत–बल, वर्ण और अग्निको दीपन करै है॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥

कुलत्थोदशमूलञ्चतथैवद्विजयष्टिका ।
शतंशतञ्चसंगृह्यजलद्रोणेविपाचयेत् ॥ २२ ॥
पादावशेषेतस्मिश्चगुडस्यार्द्धतुलांक्षिपेत् ।
शीतीभूतेचपक्केचमधुनोऽष्टौपलानिच ॥ २३ ॥
षट्पलञ्चतुगाक्षीर्य्याःपिप्पल्याश्चपलद्वयम् ।
त्रिसुगन्धिसुगंधंतत्खादेदग्निबलंप्रति ॥ २४ ॥
श्वासंकासंज्वरंहिक्कांनाशयेत्तमकन्तथा ।
क्वाथत्रयेजलद्रोणत्रयमेव ।
पिप्पलीमानसान्निध्यात्त्रिसुगंधिपलद्वयम् ॥ २५ ॥

इति कुलत्थगुडः ।

अर्थ–कुलथी, दशमूल और भारंगी, यह प्रत्येक ४०० चारसौ तोले लेकर तीन द्रोण पानीमें पकावै,जब चौथा भाग जल शेष रहै तब२००दो सौ तोले गुड़ मिलाकर फिर पकावै, शीतल होनेपर ३२ बत्तीस तोले सहत, वंशलोचन २४ चौवीस तोले, पीपल आठ तोले और त्रिसुंग-

न्धिका चूर्ण ८ आठ तोले मिला, इसको अग्निका बलाबल विचार कर खावै तौ–श्वास, खांसी, ज्वर, हिचकी और तमकश्वास, दूर होवै ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥

चतुष्पलंमूलकशुण्ठिकायास्तथैवशुद्धस्यकुलत्थकस्य।
तुलांप्रदद्याद्दशमूलकस्यद्रोणेम्भसःसर्वमिदंपचेच्च ॥ २६ ॥
पूतेरसेपादचतुर्थशेषेप्रस्थप्रमाणंरसमार्द्रकस्य।
दत्त्वाहविस्तैलपलाष्टकञ्चगुडस्यशुद्धस्यतुलांपचेच्च ॥२७॥
चूर्णैर्युतंजीरकचव्यशृंगीभार्गीत्रिसौगन्धिककट्फलैश्च।
मुस्तायवानीशठिपुष्करैश्चसव्योषकैरर्द्धपलप्रमाणैः ॥२८॥
अर्द्धांक्षिपेन्माक्षिकप्रस्थमात्रांपथ्याशनःस्यादुपयोगकाले।
कफोद्भवायेचविकारजाताःश्वासःसकासोहृदयक्षतश्च ॥२९॥
हृत्पार्श्वशूलज्वरवान्तितृष्णास्वरक्षयारोचकवह्निसादाः।
तेनाशमायान्त्युपयोगकालेकुलत्थसंज्ञस्यगुडस्यशीघ्रम् ३०

इति बृहत्कुलत्थगुडः ॥

अर्थ–पीपरामूल १६ सोलह तोले, सोंठ १६ सोलह तोले, कुलथी १६ सोलह तोले, और दशमूल ४०० चारसौ तोले लेवै, इन सबको १०२४ एकहजार चौबीसतोले जलमें पकावै, जब चौथा भाग शेष रहै, तब अदरखका रस चौसठ तोले, घृत बत्तीस तोले, तेल बत्तीस तोले, गुड चारसौ तोले मिलादे, फिर जीरा, चव्य, काकडासिंगी, भारंगी, दालचीनी, इलायची, तेजपात, कायफल, नागरमोथा, अजवायन, कचूर, पोहकरमूल, सोंठ, मिरच, और पीपल यह सब दो दो तोले मिला देवै, पश्चात् चौंसठतोले सहत मिलाकै, सेवनकरै और ऊपरसे पथ्य भोजन करै। यह कुलत्थगुड–कफ, श्वास, हृदयक्षत, हृदयशूल, पसलीशूल, ज्वर, वमन, तृष्णा, स्वरक्षय, अरुचि, और मन्दाग्नि दूर होती है ॥ ३० ॥

सूतार्द्धगंधकंमर्द्यंयामैकंकन्यकाद्रवैः।
द्वयोस्तुल्यंताम्रपत्रंपूर्वकल्केनलेपयेत् ॥ ३१ ॥

दिनैकंहण्डिकायंत्रेपक्कमादायचूर्णयेत् ।
सूर्य्यावर्त्तोरसोनामद्विगुंजंश्वासजिद्भवेत् ॥ ३२ ॥
इन्द्रवारुणिकामूलंदेवदारुकटुत्रिकम् ।
शर्करासहितंखादेदूर्द्ध्वश्वासप्रशान्तये ॥ ३३ ॥
निष्कैकंलेहयेद्वापिक्षौद्रेणकटुरोहिणीम् ।
श्वासश्चारोचकंहन्तिमरिचंदाडिमंगुडम् ॥ ३४ ॥

इति सूर्य्यावर्त्तोरसः ।

अर्थ-पारा दो भाग, गंधक एक भाग, इन दोनोंको घीकुवारके रसमें एक प्रहर खरल करै, फिर दोनोंकी बराबर तांबेके पत्रले उनपै पूर्वोक्त कल्कका लेप करै, पश्चात् उन पत्रोंको हण्डिकायंत्रमें एक दिन पकावै, शीतल होनेपर चूर्ण करले । इसको दोरत्ती प्रमाण खावै तौ श्वास रोग दूर होवे । इन्द्रायणकी जड, देवदारु, त्रिकुटा, इनके चूर्णमें बूरा मिलाकर खावै तौ ऊर्द्ध्वश्वास दूर होवै । दो तोले कुटकीके चूर्णमें सहत मिलाकर खानेसे अथवा कालीमिरचोंका चूर्ण, अनारदाना, और गुड मिलाकर खानेसे-श्वास और अरुचि दूर होती है ॥ ३१ ॥ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥

धान्याभ्रंसूतकंगंधंश्वेतापामार्गजद्रवैः ।
तुल्यांशंमर्दयेच्चापियन्त्रेपातालकेपचेत् ॥ ३५ ॥
ऊर्द्ध्वलग्नन्तुसंग्राह्यंरसोह्युदयभास्करः ।
श्वासंपञ्चविधंहन्तिद्विगुंजमनुपानतः ॥ ३६ ॥

इति उदयभास्कररसः ।

अर्थ-धान्याभ्रक, पारा और गंधक, इनको समानभाग लेकर सफेद कोयल, और चिरचिटेके रसमें खरलकर पातालयन्त्रमें पकावै, फिर ऊपरके पात्रमें उडकै लगे हुए द्रव्यको सुखाकर दो रत्ती प्रमाण अनुपानके साथ खावै तौ पांचप्रकारके श्वास दूर होवैं ॥ ३५ ॥ ३६ ॥

दाडिमंनागरंहिंगुसर्जंसैन्धवपौष्कराः ।
रास्नाचात्रसमंचूर्णंकर्षंघृतेनसंपिबेत् ॥ ३७ ॥

कासश्वासहरंचूर्णंदाडिमाद्यंनसंशयः ॥ ३८ ॥

इतिदाडिमाद्यंचूर्णम् ।

अर्थ-अनार, सोंठ, हींग, राल, सैंधानोन, पोहकरमूल, रास्ना इन सबको समान भाग लेकर चूर्णबना दोतोले घीके साथ पिवैतौ यह दाडिमाद्यचूर्ण निःसन्देह खाँसी और श्वासको दूर करैहै ॥ ३७ ॥ ३८ ॥

विडंगपिप्पलीचैलात्वचश्चप्रतिकार्षिकम् ।
त्रिकर्षमरिचस्यापिनागराच्चचतुष्फलम् ॥ ३९ ॥
सर्वतुल्यासितायोज्याकर्षमात्रंचभक्षयेत् ।
कासश्वासज्वरप्लीहपाण्डुरोगक्षयापहम् ॥ ४० ॥

इति विडंगादिचूर्णम् ।

अर्थ-वायविडंग, पीपल,इलायची, दालचीनी, यह प्रत्येक दोदो तोले लेवै, कालीमिरच छैतोलेलेवै, सोंठ सोलह तोले लेवै, सबका चूर्णबना फिर सबकी बराबर बूरा लेवै, सबको मिलाकर दोतोलेप्रमाण खावै तौ खाँसी, श्वास, ज्वर, प्लीहा, पाण्डुरोग और क्षयरोग दूरहोवै॥३९॥४०॥

गंधकंमरिचंसाज्यंपिबेद्वातकफापहम् ।
गंधकंघृतपानेनश्वासयक्ष्मक्षयापहम् ॥ ४१ ॥

अर्थ-गंधक,कालीमिरच और घी इनको मिलाकर पीवैतौ वात और कफ दूर होवै, अथवा केवल गंधकको घृतके साथ पीवैतौ श्वास, यक्ष्मा और क्षयरोग नष्ट होताहै ॥ ४१ ॥

तण्डुलीयद्रवैःपिष्टंसूततुल्यश्चगंधकम् ।
वज्रमूषाघृतंपच्याद्भूधरेभस्मतांनयेत् ॥ ४२ ॥
दशमूलकषायेणभावयेत्प्रहरद्वयम् ।
गुंजाद्वयंजयत्याशुहिक्काश्वासज्वरप्रणुत् ॥ ४३ ॥
अनुपानेनदातव्यंरसोऽयंमेघडम्बरः ।
अभयापिप्पलीभार्ङ्गीपुष्करंकर्कटीशठी ॥ ४४ ॥
शर्करायुग्गुडंयोज्यमनुपानंप्रयोजयेत् ॥ ४५ ॥

इति मेघडम्बररसः ।

अर्थ-पारे और गंधकको समानभाग लेकर चौलाईके रसमें पीस वज्रमूषामें रख भूधरयंत्रके द्वारा फूँककेवै, फिर दोप्रहरपर्य्यन्त दशमूलके काढेमें भावनादे, पश्चात् इस मेघडम्बर रसको दोगुंजाप्रमाण अनुपानके साथ सेवनकरनेसे-हिचकी, श्वास, और ज्वरको हरैहै। हरड, पीपल, भारंगी, पोहकरमूल, काकड़ाशिंगी और अमियाहलदी, इनका चूर्ण समान भागले और आठगुनी बूरालेवे, सबको मिला अनुपान करे ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४६ ॥

पाषाणभेदीमत्स्याक्षीद्रवैःपिष्टन्तुमर्दयेत् ।
तद्गोलंलेपयेद्वाह्यकल्कैःपाषाणभेदकैः ॥ ४६ ॥
मत्स्याक्ष्याश्चदलंलेप्यंदत्त्वापातालयंत्रके ।
स्वेदयेद्यामत्रंचरसोऽयंयोगवाहकः ॥ ४७ ॥
गुंजाद्वयंप्रदातव्यंहिक्कावैस्वर्यश्वासजित् ।
दशमूलेपिबेच्चानुसकुलत्थैःकषायकम् ॥ ४८ ॥

इति योगवाहकः ।

अर्थ-पाखानभेदको मत्स्याक्षी (मछेछी) के रसमें घोटकर गोला बनालेवै, पश्चात् उस गोलेके ऊपरके भागको मत्स्याक्षी और पाखान-भेदके कल्कसे लेपकर पातालयन्त्रमें एकप्रहरतक पकाकर चूर्णकरले। इसको दो गुंजाभर खानेसे हिक्का, स्वरभेद और श्वास दूर होताहै। इसके ऊपर दशमूल और कुलथीके काढेका अनुपान करै॥४६॥४७॥४८

द्वाभ्याञ्चरसगंधाभ्यांकज्जलींकारयेद्बुधः ।
निशाभांकारयेन्मूषांकज्जलींतांविनिक्षिपेत् ॥ ४९ ॥
पलैकंशुद्धताम्रस्यपात्रिकांतत्रनिक्षिपेत् ।
सम्यङ्निरुध्यसंशोष्यंक्षिपेत्कुक्कुटकेपुटे ॥ ५० ॥
स्वांगशीतलमुद्धृत्यधमेट्टंगणसंयुतम् ।
काचटंकणयोगेनधमेत्तंचाष्टधापुटे ॥ ५१ ॥
ईषद्वंगसमायोगःसमावर्त्तिततारकम् ।
सार्द्धंतेनैवभावेननिष्कमात्रेणयोजयेत् ॥ ५२ ॥

गोजलैरष्टधाभिन्नंस्वल्पगंधकसंयुतम् ।
मूषिकायांविनिक्षिप्यरुद्ध्वातंप्रधमेत्ततः ॥ ५३ ॥
द्वित्रिवारंकृतेह्येवंतंतारंतत्रजीयति ।
जीर्णसुवर्णमानञ्चतत्रनागंनियोजयेत् ॥ ५४ ॥
तद्गोलंतत्रचादायकटुत्रितयकट्फलैः ।
चूर्णितैःसहसंयोज्यतुलामात्रंनिषेवितम् ॥ ५५ ॥
श्वासंकासंक्षयंशूलंप्लीहगुल्माग्निमन्दताम् ।
वातरोगमशेषञ्चकफरोगमनेकधा ॥ ५६ ॥
ज्वरंनानाविधंचैवपीडामुदरसम्भवाम् ।
ग्रहणींश्वयथुञ्चैवअर्शांसिचभगन्दरम् ॥ ५७ ॥
यकृद्वृद्धिंतथाप्लीहमेदोवृद्धिञ्चविद्रधिम् ।
एवमन्यान्हरेद्व्याधींस्तमःसूर्योदयेयथा ॥ ५८ ॥
तत्तद्रोगहरैर्योगैर्योजनीयःसदारसः ।
चन्द्रिकाबद्धसूतोऽयंजलदोषनिवारणः ॥ ५९ ॥
स्वस्थानंनित्यमेवात्रदेहलाघवकारकम् ॥ ६० ॥
रसगंधकयोःपलमेकंग्राह्यंनिशाभांनिशाकारमूषाम् ।

इति चन्द्रिकाबद्धरसः ।

इति हिक्काश्वासाध्यायः ।

अर्थ-पारा और गंधक समान भागलेकर कज्जली करै. फिर रातमें मूषा बनावै, कज्जलीको मूषामें रख उसके ऊपर चारतोले शुद्ध तांबेके पत्र रखै, पश्चात् मूषाको अच्छेप्रकार बंदकर कुक्कुटपुटमें पकावै. शीतल होनेपर बराबरका सुहागा मिलाकै फिर पकावै, तदनंतर काँच और सुहागा समानभाग मिलाकर आठवार पुटपाक करै, फिर दोतोले वंग और दो तोले चाँदी मिलाके आठवार गोमूत्रमें भावना देवै, फिर कुछ थोडासा गंधक मिलाकर सम्पुटमें रख दो या तीनवार अग्निमें पकावै,

इसप्रकारकरनेसे चाँदी जीर्ण होजाती है । पश्चात् चान्दीकी बराबर सोनेकी भस्म और सीसेकी भस्म मिलाकर गोला बनालेवै, पश्चात् गोलेमें सोंठ, मिरच, पीपल और कायफलका चूरन मिलाकर सेवन करै तौ श्वाँस, खाँसी, क्षय, शूल, प्लीहा, गुल्म, मन्दाग्नि, सर्वप्रकारके वातरोग, नानाप्रकारके कफरोग, अनेकप्रकारके ज्वर, उदरकी पीडा, संग्रहणी, सूजन, बवासीर, भगंदर, यकृत् अंडवृद्धि, प्लीहा, मेदवृद्धि, विद्रधिरोग, इत्यादिरोग दूर होवैं, जैसे-सूर्यसे अंधकार दूर होताहै। यह रस यथारोगोक्त अनुपानके साथ सेवनकरना चाहिये । यह चंद्रिकाबद्धरस-जलदोषविनाशक है, तथा शरीरको हलका करता है ॥ ४९ ॥ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७॥५८॥५९॥६०॥

इति हिक्काश्वासाधिकारः समाप्तः ।

अथ स्वरभेदचिकित्सामाह ।

वातेसलवणंतैलंपित्तेसर्पिःसमाक्षिकम् ।
कफेसक्षारकटुकंक्षीरंकवडइष्यते ॥ १ ॥
गलेतालुनिजिह्वायांदन्तमूलेषुचाऽनुतः ।
तेननिष्कुप्यतेश्लेष्मास्वरश्चास्यप्रसीदति ॥ २ ॥
पथ्यापिप्पलीसंयुक्तानागरेणगुडेनवा ।
बदरीपत्रकल्कंवाघृतभृष्टंससैन्धवम् ॥ ३ ॥
स्वरोपघातेकासेचलेहमेनंप्रयोजयेत् ।
अजमोदांनिशांधात्रींक्षारंवह्निंविचूर्णयेत् ॥ ४ ॥
मधुसर्पिर्युतंलीढ्वास्वरभेदंव्यपोहति ॥ ५ ॥
कलितरुफलसिन्धुकणाचूर्णंतक्रेणलीढमपहरति ।
स्वरभेदंगोपयसापिबतिवामलकचूर्णम् ॥ ६ ॥
शर्करामधुमिश्राणिशृतानिमधुरैःसह ।
पिबेत्पयांसियस्योच्चैर्वदतोहिहतःस्वरः ॥ ७ ॥

अर्थ-वातसे उत्पन्न हुए स्वरभेदमें तेलकेसाथ नोन पीना चाहिये ।

पित्तसे उत्पन्न हुए स्वरभेदमें घीकेसाथ सहत मिलाकर पीवै, कफके स्वरभेदमें जवाखार और त्रिकुटेका चूर्ण दूधमें मिलाकर कुल्लेकरै तौ गल, तालु, जिह्वा, और दन्तमूलका कफ निकलकर स्वर शुद्ध होजाताहै, हरड और पीपलके चूर्णको मिलाकर खावै, अथवा सोंठके चूर्णको गुडमें मिलाकर खावै, बाबेरीके पत्तोंके कल्कको घीमें भूजकर सैंधानोन मिलाकर खावै तौ स्वरभेद और खांसी दूर होवै। अजमोद, हलदी, आमला, जवाखार, और चीतेके चूर्णको सहत और घीमें मिलाकर खानेसे–स्वरभेदरोग दूर होताहै। बहेडा, सैंधानोन और पीपल, इनके चूर्णको छाछमें मिलाकर पीनेसे स्वरभेदरोग दूर होताहै। गायके दूधमें आमलोंका चूर्ण मिलाके पीनेसे स्वरभेदरोग नष्ट होताहै। मधुर औषधियोंको दूधमें औटाके बूरा और सहत मिलाकर पीनेसे ऊंचेस्वरसे भाषणकरनेका स्वरभेद दूर होजाताहै ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥६॥७॥

चव्याम्लवेतसकटुत्रिकतिन्तिडीकं
तालीशबीजकतुगादहनैःसमांशैः।
चूर्णंगुडप्रमृदितंत्रिसुगंधियुक्तं
वैस्वर्यपीनसकफारुचिषुप्रशस्तम् ॥ ८ ॥

इति चव्यादिचूर्णम्।

अर्थ–चव्य, अमलवैंत, त्रिकुटा, इमली, तालीशपत्र, बिजोरेकी केशर, वंशलोचन, चीता, और त्रिसुगन्धि, इनका चूर्ण बना गुड मिलाके सेवनकरनेसे–स्वरभेद, पीनस, कफ और अरुचि दूर होतीहै ॥ ८ ॥

भृंगराजामृतावल्लीवासकदशमूलकासमर्दरसैः।
सर्पिःसपिप्पलीकंसिद्धंस्वरभेदकासजिन्मधुना ॥ ९ ॥
भृंगराजप्रभृतीनांचतुर्गुणःक्वाथःपिप्पल्याःपादिकःकल्कः।

इति भृंगराजाद्यंघृतम्।

अर्थ–भांगरा, पीपल, अडूसा, दशमूल, और कसौंदी, इनके रसमें घीको सिद्धकर, पीपलका चूर्ण और सहत मिलाकै खानेसे स्वरभेद और खाँसी दूर होतीहै ॥ ९. ॥

पथ्यापाठाकणाशुण्ठीसैन्धवंमरिचंवचा।

शिग्रुप्रतिपलंकल्कंघृतंद्वात्रिंशतंपलम् ॥ १० ॥
घृताच्चतुर्गुणंक्षीरमाजंसर्पिर्विपाचयेत् ।
घृतशेषंपिबेन्नित्यंवाङ्मेधास्मृतिबुद्धिकृत् ॥ ११ ॥

इति पथ्याद्यंघृतम् ।

अर्थ–हरड, पाढ, पीपल, सोंठ,सैन्धानोन, कालीमिरच, बच, और सैजिना, यह प्रत्येक चार चार तोले ले कल्क बना उसमें १२८ एक सौ अठाईश तोले बकरीका घी और ५१२ पांचसौ बारह तोले दूध मिलाकै घीको सिद्ध करै। इसघीको पीनेसे वाणी, मेधा और स्मरणशक्ति बढतीहै ॥ १० ॥ ११ ॥

अश्वगंधाजमोदाचपाठात्रिकटुकत्रिकम् ।
शतपुष्पंब्रह्मबीजंसैंधवञ्चसमंसमम् ॥ १२ ॥
एतदर्द्धंवचाचैवचूर्णितंमधुसर्पिषा ।
भक्षयेत्कर्षमात्रन्तुजीर्णानिक्षीरभोजनम् ॥ १३ ॥
सहस्रग्रन्थधारीस्यान्मृतोवावाक्पतिर्भवेत् ।
ब्रह्मबीजंपलाशबीजंसर्वचूर्णादर्द्धग्राह्यम् ॥ १४ ॥

इति अश्वगंधाद्यंघृतम् ।

अर्थ–असगंध, अजमोद, पाढ़, त्रिकुटा, त्रिफला, सोया, ढाकके बीज, और सैंधानोन, यह प्रत्येक समान भाग लेकर और सबसे आधा भाग वचका चूर्ण लेवै, सबको एकत्रकर घी और सहतमें मिलाकर दो तोले भर खानेसे १००० एक सहस्र ग्रन्थोंका धारणकरनेवाला होजाताहै, पश्चात् मरकर बृहस्पतिके अवतारको धारण करता है. इसके ऊपर दूधका भोजन करना चाहिये ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥

सहरिद्रावचाकुष्ठंपिप्पलीविश्वभेषजम् ।
अजाजीचाजमोदाचयष्टीमधुकसैन्धवम् ॥ १५ ॥
एतानिसमभागानिश्लक्ष्णचूर्णानिकारयेत् ।
तच्चूर्णंसर्पिषालोड्यप्रत्यहंभक्षयेन्नरः ॥ १६ ॥
एकविंशतिरात्रेणभवेच्छ्रुतिधरोनरः ।

मेघदुन्दुभिनिर्घोषोमत्तकोकिलानिस्वनः ॥ १७ ॥
जडगद्गदमूकत्वंलेहःकल्याणकोजयेत् ॥ १८ ॥

इतिकल्याणावलेहः।

अर्थ-हलदी, बच, कूट, पीपल, सोंठ, कालाजीरा, अजमोद, मुलैठी और सैंधानोन, यह सब समानभागले एकत्र चूर्णकर घीमें मिला इकीस दिन खावै तौ अनेकशास्त्रोंको धारनकरनेवाला मनुष्य होजाताहै, यह कल्याणावलेह शब्दकोमेघकी समान और कोकिलकी समानकरदेताहै, तथा जडता, गदगदपन,और गूंगेपनको दूर करैहै॥१५॥१६॥१७॥१८॥

समूलपत्रमादायब्राह्मींप्रक्षाल्यवारिणा।
उलूखलेक्षोदयित्वारसंवस्त्रेणगालयेत् ॥ १९ ॥
रसेचतुर्गुणेतास्मिन्घृतप्रस्थंविपाचयेत्।
औषधानितुपेष्याणितानीमानिप्रदापयेत् ॥ २० ॥
हरिद्रामालतीकुष्ठंत्रिवृतासहरीतकी।
एतेषांपालकान्भागान्शेषांश्चकार्षिकानिह ॥ २१ ॥
पिप्पल्यथविडंगानिसैन्धवंशर्करावचा।
सर्वमेतत्समालोड्यशनैर्मृद्वग्निनापचेत् ॥ २२ ॥
एतत्प्राशितमात्रेणवाग्विशुद्धिश्चजायते।
अर्द्धमासप्रयोगेणसोमराजवपुर्भवेत्।
सप्तरात्रप्रयोगेणकिन्नरैःसहगीयते ॥ २३ ॥
मासमेकप्रयोगेणस्मृतमात्रन्तुधारयेत् ॥ २४ ॥
हन्त्यष्टादशकुष्ठानिअर्शांसिविविधानिच।
पंचगुल्मान्प्रमेहांश्चकासंपंचविधंजयेत् ॥ २५ ॥
वन्ध्यानाञ्चैवनारीणांनराणामल्परेतसाम्।
घृतंसारस्वतंनामबलवर्णाग्निवर्द्धनम् ॥ २६ ॥

इति ब्राह्मीघृतम्।

इति स्वरभेदाऽध्यायः।

अर्थ-मूल और पत्तों समेत ब्राह्मीको लेकर पानीसे धो डाले, फिर ओखलीमें कूट वस्त्रमें निचोडके रस निकालले, यह रस २५६ दोसौ छप्पन तोले और इसमें चौसठ तोले घी मिलाके पकावै, फिर हलदी, मालती, कूठ, निसोत, हरड, यह प्रत्येक चार २ तोले, पीपल, वायविडंग, सैंधानोंन, बूरा, और वच, यह प्रत्येक दो २ तोले मिलाकर धीरे धीरे मृदु अग्निसे पकावै, शीतल होनेपर उतार लेवै. इस घृतको सेवनकरनेसे-शब्द शुद्ध होजाता है । इसको सातरात्रिपर्यन्त खावै तौ किन्नरकी समान शब्द होजावै, इसको पंद्रहदिन सेवनकरनेसे शरीर चन्द्रमाकी समान निर्मल होजाता है, और इसको एक महिने सेवन करनेसे-सम्पूर्ण शास्त्रोंको धारणकरनेवाला मनुष्य होजाता है । तथा यह घी-अठारह प्रकारके कोड, अनेक प्रकारकी बवासीर, पांचों प्रकार-के गुल्म, सर्वप्रकारके प्रमेह, पांचों प्रकारकी खांसी, इन सबको दूर करे हैं और वंध्या स्त्री तथा अल्पवीर्यवाले पुरुषोंके यह तेल-बल, वर्ण और अग्निको बढ़ानेवाला है॥१९॥२०॥२१॥२२॥२३॥२४॥२५॥२६

इतिस्वरभेदाध्यायसमाप्तः ।

अथारोचकचिकित्सा ।

बस्तिसमीरणेपित्तेविरेकंवमनंकफे ।
कुर्याद्धृद्यानुकूलानिहर्षणंचमनोघ्नजे ॥ १ ॥
वान्तोवचाद्भिरनिलेविधिवत्पिबेत्तु
स्नेहोष्णतोयमदिरान्यतमेवचूर्णम् ।
कृष्णाविडंगयवभस्महरेणुभार्गी
रास्नैलहिंगुलवणोत्तमनागराणाम् ॥ २ ॥
सर्वत्रमदनफलयोगइतिबोद्धव्यः ।
पिबेद्गुडाम्बुमधुरैर्वमनंप्रशस्तं
लिहःससैन्धवसितामधुसर्पिरिष्टः ।
निम्बाम्बुछर्दितवतःकफजेचपानं
राजद्रुमाम्बुमधुनासहदीप्यकाढ्यम् ॥ ३ ॥

चूर्णंयदुक्तमथवानिलजेतदेव
सर्वैश्वसर्वकृतमेवमुपक्रमेच्च ॥ ४ ॥
पानानिचविचित्राणिभक्ष्याणिविविधानिच।
कर्पूरादिसुगंधीनिप्रयुंजीतयथाविधि ॥ ५ ॥
कुष्ठंसौवर्चलाजाजीशर्करामरिचंविडम्।
धात्र्यैलापद्मकोशीरपिप्पल्यश्चन्दनोत्पले ॥ ६ ॥
लोध्रंतेजोवतीपथ्यात्र्यूषणंसयवाग्रजम्।
आर्द्रदाडिमनिर्यासश्चाजाजीशर्करान्वितः ॥ ७ ॥
सतैललवणास्त्वेतेचत्वारःकवडग्रहाः।
चत्वारोऽरोचकान्हन्युर्वाताद्येकजसर्वजान् ॥ ८ ॥
आर्द्रकदाडिमफलस्वरसः।
अथवामांसीधान्यानिमुस्तमामलकत्वचः।
त्वक्चदार्वीयवान्यश्चपिप्पल्यस्तेजवत्यपि ॥ ९ ॥
यवानीतिन्तिडीकंचपंचैतेमुखशोधनाः।
श्लोकपादैरभिहिताःसर्वारोचकनाशनः ॥ १० ॥
विड्चूर्णमधुसंयुक्तोरसोदाडिमसम्भवः।
असाध्यमपिसंहन्यादरुचिंवक्त्रधारितः ॥ ११ ॥
अम्लिकागुडतोयंचत्वगेलामरिचान्वितम्।
अभक्तच्छन्दरोगेषुशस्तंकवडधारणम् ॥ १२ ॥

इति अम्लिकातिन्तिडीफलम्।

अर्थ-वात उत्पन्न हुई अरुचिमें बस्तिकर्म कराना चाहिये। पित्तसे उत्पन्न हुई अरुचिमें विरेचनकर्म कराना चाहिये। और कफसे उत्पन्न हुई अरुचिमें वमन करानी चाहिये। मनको नाश करनेवाले पदार्थोंसे उत्पन्न हुई अरुचिमें मनके अनुकूल और हर्षजनक पदार्थ सेवन करने उचित हैं। बचके क्वाथको पीनेसे वमन होकर वातज अरुचि रोग दूर होजाता है। घृत तैलादि स्नेह, गरमजल, मदिरा, इन तीनों-

मेंसे एक किसीको पीनेसे वातज अरुचि दूर होजाती है । पीपल, वायडंग, जवाखार, रेणुका, भारंगी, रास्ना, इलायची, हींग, सैंधानोंन और सोंठ,इनके चूर्णको सेवनकरनेसे अरुचि विनष्ट होजातीहै, इनसब योगोंमें वमन करानेके लिये मैनफलका चूर्ण मिलाना उचितहै । मधुर औषधियोंको गुडके सरबतके साथ पीनेसे वमन होकर अरुचिरोग दूर होजाताहै । सैंधानोंन, मिश्री सहत और घी मिलाकर खानेसे अरुचि दूर होती है, नीमके काढेको पीनेसे कफजअरुचि दूर होती है । अमलतासके रसमें अजमोदका चूर्ण और सहत मिलाकर खानेसे वातज अरुचि दूर होतीहै । त्रिदोषसे उत्पन्न हुए अरुचिरोगमें सब प्रकारकी चिकित्सा करनी चाहिये । विविधविचित्र अन्नपान तथा कर्पूरादि सुगंधिद्रव्य अरुचिरोगमें प्रयोग करने चाहिये । कूठ, कालानोन, जीरा, बूरा, कालीमिरच, विडनोन, आमला, इलायची, पद्माख, खस, पीपल, चंदन, और कमल अथवा लोध, तेजबल, हरड, त्रिकुटा और जवाखार या अदरखका रस, अनारकारस, जीरा और खांड, इनचार योगोंका तेलके साथ और सैंधेनोनके साथ कुल्ला करनेसे सर्वप्रकारकी अरुचि दूर होजातीहै । बालछड़ और धनिया अथवा नागरमोथा और आमला वा दालचीनी, दारुहलदी, और अजवायन या पीपल और चव्य अथवा अजवायन, और इमली, इन पाचों योगोंमेंसे एक किसी योगका चूर्ण करकै मुखमें धारणकरनेसे मुख शुद्ध होकर सर्व प्रकारकी अरुचि नष्ट होजातीहै । विरियासंचरनोनको सहत और अनारके रसके साथ अथवा इमली, गुड और जलके साथ दालचीनी; इलायची और कालीमिरचोंका चूर्ण मुखमें धारणकरनेसे सर्वप्रकारकी अरुचि दूर होजातीहै ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥

कारव्यजाजीमरिचंद्राक्षावृक्षाम्लदाडिमम् ।
सौवर्चलगुडक्षौद्रंसर्वारोचकनाशनम् ॥ १३ ॥
एभिश्चतुर्माषप्रमितागुटिकाकार्य्या ।

अर्थ-सौंफ, जीरा, कालीमिरच, दाख, इमली, अनार, कालानोन, गुड़, और सहत, यह सब द्रव्य एकत्र मिलाकर चारमासेकी गोलिया बनालेवै, इन गोलियोंको सेवनकरनेसे सर्वप्रकारकी अरुचि दूर होजातीहै ॥ १३ ॥

यवानीतिन्तिडीकश्चनागरश्चाम्लवेतसम् ।
दाडिमंबदरंचाम्लंकार्षिकाण्युपकल्पयेत् ॥ १४ ॥
धान्यसौवर्चलाजाजीवराङ्गंचार्द्धकार्षिकम् ।
पिप्पलीनांशतंचैकंद्वेशतेमरिचस्य च ॥ १५ ॥
शर्करायाश्चचत्वारिपलान्येकत्रकारयेत् ।
जिह्वाविशोधनंहृद्यंतच्चूर्णंभक्तरोचनम् ॥ १६ ॥
कासश्वासहरंग्राहिग्रहण्यर्शोविकारनुत् ॥ १७ ॥
पिप्पलीमरिचयोर्गुडकेनमानम् ।

इति यवानीषांडवः ।

अर्थ-अजवायन, इमली, सोंठ, अमलवैंत, अनार और बेर, यह प्रत्येक दोदो तोले, धनिया, कालानोन, जीरा, और दालचीनी यह प्रत्येक चारचार तोले, कालीमिरच २०० दोसौ, पीपल १०० एकसौ, तथा खांड चारपल लेवै, इन सबको एकत्र पीसकर सेवनकरनेसे सर्व-प्रकारकी अरुचि दूर होजातीहै, तथा यह रागषांडव जिव्हाको शुद्ध करनेवाला, हृदयको हितकारी, खाये हुएको जीर्ण करनेवाला, खाँसी, श्वास, संग्रहणी, और बवासीरको दूर करे है, और मल-रोधक है ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥

अष्टादशशिग्रुफलानिदशमरिचानिविंशतिश्चपिप्पल्यः ॥
आर्द्रकपलंप्रस्थत्रयमारनालस्य ।
विड्लवणसहितमेतत्स्वजाहतंसरतिगंधाढ्यम् ।
व्यंजनसहस्रघातिज्ञेयंसकलहंसकोनाम ॥ १८ ॥

इतिकलहंसकः ।

अर्थ-सैंजिनेके बीजोंका चूर्ण अठारह पल, कालीमिरचोंका चूर्ण दशपल, अदरखकारस एकपल, कांजीबारह सेर और विड़नोन, इन सब द्रव्योंकों एकत्र पकार त्रिसुगंधिका चूर्ण मिलाकै लेवै। इसको अनु-पान माफिक खानेसै अरुचि दूर होजातीहै ॥ १८ ॥

यवक्षारन्तुकर्षैकंद्वाविंशद्भृगकैर्जलैः ।

पादशेषंहरेत्क्वाथंश्लेष्मघ्नंमुखशुद्धिकृत् ॥ १९ ॥
कणापथ्याप्रियंगुश्चदार्वीतेजोवतीनिशा ।
लोध्रंचप्रतिकर्षैकंदत्त्वात्रिंशद्गुणैर्जलैः ॥ २० ॥
पादशेषंहरेत्क्वाथंपलैकञ्चमधुक्षिपेत् ।
गण्डूषाच्छ्वासकासञ्चमुखरोगञ्चनाशयेत् ॥ २१ ॥
पक्वदाडिमबीजञ्चग्राहयेच्चपलाष्टकम् ।
अजाजीभृष्टचूर्णञ्चकर्षांशंसितशर्कराः ॥ २२ ॥
पलंक्षौद्रेणसंयुक्तंपीतंरुचिकरंमुखे ।
शर्करादाडिमक्वाथद्राक्षाखर्जूरमेव वा ॥ २३ ॥
केशरंमातुलुंगस्यसैन्धवंमधुनापि वा ।
आस्यवैरस्यशान्त्यर्थंभक्षयेत्कर्षमात्रकम् ॥ २४ ॥
मुस्ताद्राक्षामृताशुंठीकिराततिक्तकंजलैः ।
क्वाथयित्वापिबेदुष्णमास्यवैरस्यशान्तये ॥ २५ ॥
कणातगरसौराष्ट्रीतुल्यतेजोवतीजले ।
मधुयुक्तंपिबेत्क्वाथंवैरस्यंश्लैष्मिकंजयेत् ॥ २६ ॥
कपित्थमज्जात्रिकटुचूर्णक्षौद्रसितायुतम् ।
अरोचकेषुसर्वेषुप्रसन्नंधारयेन्मुखे ॥ २७ ॥

इति अरोचकाऽध्यायः ।

अर्थ–एक तोले जवाखारको बत्तीस तोले जलमें पकावै, जब आठ तोले जल शेष रहे तब उतारले, यह क्वाथ कफनाशक और मुखशोधक है। पीपल, हरड, फूलप्रियंगू, दारुहलदी, तेजबल, हलदी, और लोध ये प्रत्येक एक एक कर्ष लेवे और ३२ कर्ष पानीमें काढा करे, चतुर्थांश शेषरहे तब एक पल सहत डालकर गंडूष करे, इससें श्वास, कास और मुखरोग नष्ट होतेहैं; पके अनारके बीजोंको आठपल लेकर उसमें अजमायनका भुना हुआ चूर्ण एक कर्ष डाले उसका काढा करके एक पल सहत डालके पीनेसें मुखमें रुचि आतीहै,

अनारके क्काथको खांडके साथ, अथवा दाख और खजूरके क्काथको वा बिजोरेकी केशरको सैंधानोनके साथ और सहतके साथ दोतोलेभर सेवन करनेसे-मुखकी विरसता दूर होतीहै । नागरमोथा, दाख, हरड, सोंठ और चिरायता इनके काढ़ेको गरम गरम पीनेसे मुखकी विरसता दूर होतीहै । पीपल, तगर, सोरठकी मिट्टी और तेजबल, इन सबको समानभाग लेकर काढ़ाकरे इसकाढेमें सहत मिलाकर पीवै तौ कफसे उत्पन्न हुई मुखकी विरसता दूर होतीहै । कैथकी मींग, त्रिकुटेका चूर्ण, सहत और मिश्री, इनसबको मिलाकै मुखमें धारणकरनेसे सर्वप्रकारकी अरुचि दूर होतीहै ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥२४॥ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥

इति अरोचकाधिकारः समाप्तः ।

अथ च्छर्दिचिकित्सामाह ।

आमाशयोत्क्लेशभवाहिसर्वाश्छर्द्योमतालंघनमेवतस्मात्
प्राक्कारयेन्मारुतजांविमुच्यसंशोधनंवाकफपित्तहारि १॥
हन्यात्क्षीरोदकंपीतंछर्दिंवमनसंभवाम् ।
ससैन्धवंपिबेत्सर्पिर्वातच्छर्दिनिवारणम् ॥ २ ॥
मुद्गामलकयूषंवाससर्पिष्कंससैन्धवम् ।
यवागूंमधुमिश्रांवापंचमूलीकृतांपिबेत् ॥ ३ ॥

पंचमूलीस्वल्पा ।

सोदीच्यंगैरिकंपेयंसेव्यंवातण्डुलाम्बुना ।
चन्दनञ्चमृणालञ्चवालकंनागरंवृषः ॥ ४ ॥
सतण्डुलोदकक्षौद्रःपीतःकल्कोवमिंजयेत् ।
क्काथःपर्पटजःपीतःसक्षौद्रश्छार्दिनाशनः ॥ ५ ॥
कषायोभृष्टमुद्गस्यसलाजमधुशर्करः ।
छर्द्यतीसारतृड्दाहज्वरघ्नःसंप्रकाशतः ॥ ६ ॥
गुडूचीत्रिफलानिम्बपटोलैःक्काथितंपिबेत् ।

क्षौद्रयुक्तंनिहन्त्याशुच्छर्दिंपित्ताम्लसंभवाम् ॥ ७ ॥
कोलामलकमज्जानौमाक्षिकाविट्सितामधु ।
सक्तुष्णातण्डुलोलेहश्छर्दिमाशुनियच्छति ॥ ८ ॥
अश्वत्थवल्कलंशुष्कंदग्ध्वानिर्वापितंजले ।
तज्जलंपानमात्रेणच्छर्दिंजयतिदुस्तराम् ॥ ९ ॥
लाजाकपित्थमधुमागधिकोषणानां
क्षौद्राभयात्रिकटुधान्यकजीरकाणाम् ।
पथ्यामृतामरिचमाक्षिकपिप्पलीनां
लेहास्त्रयःसकलवम्यरुचिप्रशान्त्यै ॥ १० ॥
कृतंगुडूच्याविधिवत्कषायंहिमसंज्ञितम् ।
तिसृष्वपिभवेत्पथ्यंमाक्षिकेणसमायुतम् ॥ ११ ॥

अर्थ–आमाशयके उत्क्लेश होनेसे छर्दि होतीहै, इसकारण वातकी छर्दिको छोडकै शेष छर्दियोंमें प्रथम लंघन अथवा कफपित्तनाशक जुल्लाबदेवै। दूध और जल अथवा घी और सैंधानोंनको मिलाकर पीनेसे वातकी वमन शमन होतीहै। मूग और आमलेके यूषको घृत और सैंधानोनके साथ अथवा स्वल्पपंचमूलकी बनाई हुई यवागूमें सहत मिलाके पीनेसे सर्वप्रकारकी वमन दूर होती है। सुगंधवाला, और गेरूको चावलोंके जलके साथ पीनेसें–अथवा लालचन्दन, कमलकीनाल, सुगंधवाला, सोंठ, और अडूसा, चावलोंके जलकेसाथ पीसकर मधुके साथ या पित्तपापडेके काढेको मधुके साथ पीनेसे वमन दूर होतीहै। भुनीहुई मूंगके काढेमें खीले सहत और बूरा मिलाकर पीनेसे–वमन, अतीसार, तृषा, दाह और ज्वर दूर होताहै। गिलोय, त्रिफला, नीम, और परवल, इनके काढेमें सहत डालकै पीनेसे अम्लपित्तसे उत्पन्नहुई वमन दूर होजातीहै। बेरकीमींग, आमलेकी मींग, मक्खीकी विष्ठा, मिश्री, सहत, पीपल और चावल, इनसबका अवलेह बनाकर चाटनेसे सर्वप्रकारकी वमन, दूर होजातीहै। पीपलके खारका नितरा हुआ जल पीनेसें छर्दि नष्ट होजाती है। खीलें, कैथ, सहत, पीपल और कालीमिरच, अथवा सहत, हरड, त्रिकुटा, धनिया और

जीरा, या हरड, गिलोय, कालीमिरच, सहत और पीपल, इनका अवलेह बनाकर चाटनेसे-वमन और अरुचि दूर होती है। गिलोयके शीतल क्काथमें मधु डालके पीनेसे सर्वप्रकारकी वमन दूर होती है ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥

एलालवंगगजकेशरकोलमज्जा-
लाजाप्रियंगुवनचन्दनपिप्पलीनाम् ।
चूर्णानिमाक्षिकसितासहितानिलीढ्वा
छर्दिंनिहन्तिकफमारुतपित्तजाञ्च ॥ १२ ॥

इति एलादिचूर्णम् ।

अर्थ-इलायची, लौंग, नागकेशर, बेरकीमींग, खीलैं, फूलप्रियंगू, नागरमोथा, चन्दन, और पीपल,इनका चूर्ण बना तिसमें सहत मिलाकर खावैतौ-सर्वप्रकारकी छर्दि दूरहोवै ॥ १२ ॥

चन्दनंमधुकंक्षीरंपीतंरुधिरवान्तिजित् ।
पद्मकंगुडुचीनिम्बंधन्याकंरक्तचन्दनम् ॥ १३ ॥
कल्केक्काथेचहविषःशास्तंछर्दिनिवारणम् ।
तृष्णारुचिप्रशमनंदाहज्वरनिवारणम् ॥ १४ ॥

इति पंचकाद्यंघृतम् ।

खण्डनारिकेलखण्डकूष्माण्डच्यवनप्राशाद-
योऽत्रयोज्याः ।

इति छर्द्यधिकारः ।

अर्थ-चन्दन और मुलैठीके चूर्णको दूधमें मिलाकर पीनेसे रक्तवमन, दूर होतीहै। पद्माख, गुडूची (गिलोय), नीम, धनिया, लालचन्दन, इनके कल्कमें और क्काथमें घीको सिद्धकर खानेसे वमन, तृष्णा, अरुचि और दाहज्वर दूर होताहै ॥ १३ ॥ १४ ॥

नारिकेलखण्ड, खण्ड कूष्माण्ड, और च्यवनप्राशको सेवनकरनेसे सर्व प्रकारकी वमन विनष्ट होजाती है ॥

इति छर्द्यधिकारः समाप्तः ।

अथ तृष्णाचिकित्सा।

वान्तिःसर्वासुतृष्णासुक्षयादन्यत्रपूज्यये।
विलोडनञ्चसर्वासांप्रयोगैर्विविधैर्हितम् ॥ १ ॥
वातपित्तहरःकृत्स्नोविधिःप्रायोऽत्रशस्यते।
तृष्णायांपवनोत्थायांसगुडंदधिशस्यते ॥ २ ॥
रसाश्चबृंहणाःसितागुडूच्यारसएववा।
लाजोदकंमधुयुतंशीतंगुडविमर्दितम् ॥ ३ ॥
काश्मर्य्याःशर्करायुक्तंपिबेत्तृष्णार्दितोरसम्।
ओदनंरक्तशालीनांशीतंमाक्षिकसंयुतम् ॥ ४ ॥
भोजयेत्तेनशम्येतच्छर्दिस्तृष्णाचिरोत्थिता।
आम्रजम्बूकषायंवापिबेन्माक्षिकसंयुतम् ॥ ५ ॥
छर्दिंसर्वांप्रणुदतितृष्णांचैवापकर्षति।
मूर्च्छाछर्दितृषादाहस्त्रीमद्यभृशकर्षिताः ॥ ६ ॥
पिबेयुःशीतलंतोयंरक्तपित्तेमदात्यये।
दाडिमस्यतुबीजानिजीरकंनागकेशरम् ॥ ७ ॥
चूर्णसशर्करक्षौद्रोलेहस्तृष्णानिवारणम्
पैत्तेतृषिसितायुक्तःपक्वोदुम्बरजोरसः ॥ ८ ॥
तत्क्वाथोवाहिमस्तद्वच्छारिवादिगणाम्बुवा।
वटशुङ्गामयक्षौद्रलाजानीलोत्पलैर्दृढा ॥ ९ ॥
गुडिकावदनेन्यस्ताक्षिप्रंतृष्णामुदस्यति।
मुस्तकंचन्दनोशीरपद्मकंरक्तचन्दनम् ॥ १० ॥
एतैःशिरसिलेपेनक्षिप्रंतृष्णामुदस्याति।
शुष्कंन्यग्रोधकाष्ठञ्चदग्ध्वानिर्वापयेज्जले ॥ ११ ॥
तज्जलंपानमात्रेणक्षिप्रंतृष्णांविनश्याति।
पुनर्नवाह्यपामार्गमूलकंजीरकद्वयम् ॥ १२ ॥

तक्रपिष्टंपिबेद्यस्तुमुखशोषप्रशान्तये ।
खर्जूरंदाडिमंद्राक्षातिन्तिडीकंपरूषकम् ॥ १३ ॥
चित्रकामलकन्तोयैःक्वाथंपादावशेषितम् ।
संयुक्तंनिखिलंचैवतृष्णादाहहरंपरम् ॥ १४ ॥
पलैकंचन्दनंतोयैर्द्वात्रिंशद्भिस्तैःपचेत् ।
अर्द्धशेषंपिबेन्नित्यंदाहतृष्णाज्वरापहम् ॥ १५ ॥
द्राक्षाखर्जूरकोलानांप्रतिपंचपलंभवेत् ।
पचेदष्टगुणेतोयेपादशेषंसुशीतलम् ॥ १६ ॥
त्वगेलापत्रकंचूर्णंप्रतिनिष्कद्वयंक्षिपेत् ।
क्षौद्रञ्चपलचत्वारिपानात्तृष्णास्रशोषजित् ॥ १७ ॥
खर्जूरोशीरमृद्वीकापद्मकंपद्मकेसरम् ।
धात्रीपरूषकंव्याघ्रीबलायष्टिकचन्दनम् ॥ १८ ॥
मधूकपुष्पकाश्मर्य्यंतोयैश्चैवचतुर्गुणैः ।
पक्वंपर्युषितंरात्रौस्थितंभाण्डेनवेदृढे ॥ १९ ॥
लाजाचूर्णञ्चतद्युक्तंशर्करामधुसंयुतम् ।
तृष्णादाहहरंपानेजातीपुष्पाधिवासितम् ॥ २० ॥
मूर्च्छादाहभ्रमंहन्तितृष्णामत्यन्तदारुणाम् ।
तृषितोमोहमायातिमोहात्प्राणंप्रमुञ्चति ॥ २१ ॥
तस्मात्सर्वास्ववस्थासुनक्वचिद्वारिवार्य्यते ॥

इतितृष्णाध्यायः ।

अर्थ–क्षयजको छोडकर बाकीके सर्व तृषारोगोंमें वमन करानी चाहिये, तथा वातपित्तनाशक क्रिया तृषारोगोंमें हितकारीहै । वातकी तृषामें गुडके साथ दहीका खाना उत्तमहै । पुष्टिकारक रस, खाण्ड, और गिलोयका रस यह तृषारोगमें पीने चाहिये । खीलोंके शीतलजलमें सहत और गुड मिलाकर पीनेसे तृषा रोग दूर होताहै; कुम्भेरके

रसमें खाँड मिलाकर पीनेसे तृषा दूर होतीहै । लालधानके चावलोंके भातको सहतके संग खानेसे तृषा और वमन नष्ट होतीहै । आम और जामुनके काथमें सहत डालके पीनेसे, तृषा और वमन नष्ट होती है । मूर्च्छा, वमन, तृषा, दाह, स्त्रीप्रसंग और मद्यपानसे क्षीण हुए मनुष्यको तथा रक्तपित्त, और मदात्यय रोगीको शीतलजल पीनेको देना चाहिये । अनारकेबीज, जीरा और नागकेशर, इनके चूर्णमें बूरा और सहत मिलाकर चाटनेसे तृषारोग नाश होता है । पके हुए गूलर-केरसमें अथवा काथमें खाँड डालके पीनेसे पित्तकी तृषा दूर होतीहै । सारिवादिगणका काथ शीतलकर पीनेसे पित्तकी तृषा दूर होती है । वडके अंकूर, खीलै, सहत और नीलोत्पल (जिसके अभावमें फा०में नीलोफर लेतेहैं), इनकी बनाई हुई गोली मुखमें खानेसे तृषा दूर होजाती है । नागरमोथा, चन्दन, खस, पद्माख और लालचन्दन, इनको पीसकर शिरपै लेप करनेसे तृषा दूर होजातीहै । वडकी सूखी हुई लकडियोंको जलाकै क्षार बना उस क्षारको जलमें नितारके पीनेसे तृषा दूर होजातीहै । पुनर्नवा, चिरचिटा, मूली, सफेदजीरा और काला जीरा, इनको समानभाग लेकर मट्ठेमें पीस सेवनकरनेसे–मुखशोषरोग दूर होताहै । पिण्डखजूर, अनार, दाख, इमली, फालसा, चीता और आमला इनका चतुर्थांश काथ बनाकर पीनेसे–सर्वप्रकारकी तृषा और दाह दूर होतीहै । चारतोलेभर चन्दनको ३२ बत्तीसगुणे जलमें पकावै, जब आधाभाग जलजाय तब उतारकर पीवै तौ दाह, तृषा, और ज्वर दूर होवै । दाख खजूर और बेर, यह प्रत्येक वीसवीस तोले लेकर आठगुने पानीमें पकावै, जब चौथाभाग शेषरहै तब उतारले, शीतल होनेपर दालचीनी, इलायची, तेजपात, इनका चूर्ण चारचार मासेभर मिलादेवै और सोलह तोले सहत मिलादेवै, इसको सेवन करनेसे तृषा और रक्तशोष दूर होताहै । खजूर, दाख, खस, पद्माख, नागकेशर, आमला, फालसा, कटेरी, खिरैटी, मुलैठी, चन्दन, महुएके फूल, और कुम्भेर इनको चौगुने जलमें पकावै, जब काढा तयार होजाय तब उत्तम नवीन वासनमें करकै रात्रिभर धरा रहनेदेवै, फिर दूसरेदिन खीलोंका चूर्ण, बूरा और सहत मिलाके तथा चमेलीके फूलोंकी वासना देकर, सेवन करैतौ मूर्च्छा, दाह, भ्रम, और अत्यन्त दारुणतृषा दूर होवै । तृषासे पीडित मनुष्योंके मोह उत्पन्न होताहै, और मोहसे प्राण

नष्ट होतेहैं, इसकारण संपूर्ण अवस्थाओंमें तृष्णातुर मनुष्योंको जल पीनेको देना चाहिये ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥

इतितृष्णाधिकारःसमाप्तः।

अथ मूर्च्छामाह।

सेकावगाहौमणयःसहाराःशीताःप्रदेहाव्यजनानिलाश्च।
शीतानिपानानिचगंधवन्तिसर्वासुमूर्च्छासुनिवारितानि॥१॥
कुर्याच्चनासावदनावरोधंक्षीरंपिबेद्वाथचमानुषीणाम्।
मूर्च्छाप्रशक्तान्तुशिरोविरेकैर्जयेदभीक्ष्णंवमनैश्चतीक्ष्णैः २॥
स्नेहस्वेदोपपन्नानांयथादोषंयथाबलम्।
पंचकर्माणिकुर्वीतमूर्च्छायेषुमदेषुच ॥ ३ ॥
सिद्धानिवर्गैमधुरेपयांसिसदाडिमाजांगलजारसाश्च।
तथायवालोहितशालयश्चमूर्च्छासुशस्ताःससतीनमुद्गाः ॥४
यथादोषंकषायाणिज्वरघ्नानिप्रयोजयेत्।
रक्तजायान्तुमूर्च्छायांहितःशीतक्रियाविधिः ॥ ५ ॥
मद्यजायांवमेन्मद्यंनिद्रांसेवेद्यथासुखम्।
विषजायांविषघ्नानिभोजनानिप्रयोजयेत् ॥ ६ ॥
कोलमज्जोषणोशीरकेशरंशीतवारिणा।
पीतंमूर्च्छांजलेलीढाकृष्णांवामधुसंयुताम् ॥ ७ ॥
महौषधामृताक्षुद्रापौष्करंग्रन्थिकोद्भवम्।
पिबेत्कणायुतंक्काथंमूर्च्छायेषुमदेषुच ॥ ८ ॥
क्षुद्राकण्टकारी।
त्रिफलायाःप्रयोगोवाप्रयोगःपयसोऽपिवा।

रसायनानांकौंभस्यसर्पिषोवाप्रशस्यते ॥ ९ ॥
कौम्भंदशवर्षस्थितंघृतम् ।
पिबेद्दुरालभाक्काथंसघृतंभ्रमशान्तये ।
शतावरीबलामूलद्राक्षासिद्धंपिबेत्पयः ॥ १० ॥
सघृतंभ्रमनाशायवीजंवात्र्यालकस्यवा ।
आभाशतावरीव्योषसौवर्चलरजःपिबेत् ॥ ११ ॥
उष्णाम्बुनाभ्रमेकासेश्वासेनेत्ररुजित्र्यहम् ॥ १२ ॥
आभाआहा ।

कल्याणघृतादिकमत्रविधातव्यमिति ।

अर्थ–जलका छिडकना, जलमें घुसकर स्नानकरना, मुक्तादिके हारोंका धारणकरना, चन्दनादिका प्रलेपकरना, शीतलपंखेकी पवन और गुलाबादि शीतल और सुगंधित अर्कोंका पीना, यह सब कर्म्म मूर्च्छा-रोगमें करने चाहिये । मुख और नासिकाको बन्दकरनेसे अथवा स्त्रीके दूधको पीनेसे मूर्च्छा दूर होतीहै । शिरोविरेचन (अत्यन्त तीक्ष्ण नस्य) अथवा तीक्ष्ण वमन करानेसे–मूर्च्छा दूर होती है। स्नेह और स्वेदसे उत्पन्न हुए मूर्च्छा और मदात्ययरोगमें दोषोंका बलाबल विचार कर पंचकर्म्म (वमन, विरेचन, अनुवासनबस्ति, निरूहबस्ति और नस्य), प्रयोग करने चाहिये । मधुरद्रव्योंके साथ सिद्ध कियाहुआ दूध, अनारके रसके साथ जांगलदेशके जीवोंका मांस, तथा जौ, लालचावल, मटर और मूंग, यह सब पदार्थ मूर्च्छारोगमें हितकारीहै । दोषोंको विचारकर ज्वरनाशक कषाय पीनेसे मूर्च्छा रोग दूर होताहै।रक्तकी मूर्च्छामें शीतल क्रिया, मद्यज मूर्च्छामें मदिराकी वमन और निद्रा सेवनकरनीचाहिये। विषज मूर्च्छारोगमें विषनाशक भोजन सेवनकरने चाहिये। बेरकी मींग, कालीमिरच खस और नागकेशरका चूर्ण शीतलजलके साथ, अथवा पीपलका चूर्ण सहतके साथ सेवनकरनेसे मूर्च्छा दूर होजातीहै । सोंठ गिलोय, कटेरी, पोहकरमूल और पीपलामूल इनके क्वाथमें पीपलका चूर्ण डालकर पीनेसे–मूर्च्छा और मदरोग दूर होताहै । त्रिफलेको सेवनकरनेसै, दूधको पीनेसे, रसायन पदार्थोंके भक्षणकरनेसे और दश वर्षके पुराने घीको सेवनकरनेसे–मूर्च्छारोग आराम होताहै। धमासेका

काढ़ा घीके साथ अथवा शतावर, खिरैटी और दाखोंके साथ पकाया हुआ दूध घीके साथ पीनेसे भ्रमरोग नष्ट होजाताहै। बबूरकी फली, सतावर, त्रिकुटा और कालानोन इनका चूर्ण गरमजलके साथ पीनेसे तीन दिनमें भ्रम, खाँसी, श्वास और नेत्ररोग दूर होते हैं ॥ १ ॥ २ ॥ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥

कल्याणकादि घृतोंको सेवनकरनेसे भ्रमरोग दूर होताहै ॥

शक्ताननद्रुताभाषंचलक्षलितचेष्टितम्।
विद्याद्वातमदाविष्टंरक्तपीतासिताकृतिम् ॥ १३ ॥
सक्रोधपरुषाभाषीसंप्रहारकलिप्रियम्।
विद्यात्पित्तमदाविष्टंरक्तपीतसिताकृतिम् ॥ १४ ॥
स्वल्पसंबद्धवचनंतंद्रालस्यसमान्वितम्।
विद्यात्कफमदाविष्टंपाण्डुप्रध्यानतत्परम् ॥ १५ ॥

अर्थ-शक्तमुखहोवै, बहुत शीघ्रबोलै, चंचलतासे गमनादि कार्य करै तथा देह लाल, पीली और सफेद रंगकी होयतौ वातका मदाविष्ट जानना। क्रोधसहित कठिनवचन बोलै, मारनेकी चेष्टा करै, कलह प्यारी लगै, शरीर लाल, पीला और सफेद रंगका होतौ पित्तका मदाविष्ट जानना। बहुत थोड़ाबोले, तन्द्रा और आलस्यसें संयुक्तहो और शरीर पाण्डुवर्ण होजायतौ कफका मदाविष्ट जानना ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥

वन्यकरीषघ्राणाच्छीतलजलपानाल्लवणभक्षणाद्वापि।
शाम्यतिपूगीफलमदचूर्णरुजाशर्कराकवलात् ॥ १६ ॥
पथ्याक्काथेनसंसिद्धंसर्पिर्धात्रीरसेनवा।
सर्पिःकल्याणकंवापिमदमूर्च्छाहरंपिबेत् ॥ १७ ॥
घृत३२पल,हरीतकी६४पल,पानीय५२४पल,शेष१२८पल
अकल्कमिदंघृतम्।

अंजनान्यवपीडाश्चधूमःप्रधमनानिच।
सूचिभिस्तोदनंशस्त्रैर्दाहःपीडान्यथान्तरे ॥ १८ ॥

अंजनंकेशलोम्नाञ्चदन्तैर्दशनमेवच।
आत्मगुप्तावघर्षश्चाहितस्तस्यावरोधने॥ १९॥
अवपीडानिर्गुण्डीपत्ररसादिभिर्नस्यम्।
प्रधमनंत्रिकटुकादिचूर्णस्यनासायांक्षेपः॥ २०॥
शस्त्रैःपीडेतियोजना।
प्रबुद्धसंज्ञमल्पैस्तुलघुभिस्तमुपाचरेत्।
विस्मापनैःसंस्मरणैःप्रियैःश्रुतिभिरेवच॥ २१॥
पटुभिर्गीतवादित्रैःशब्दैश्चित्रैश्चदर्शनैः।
विरेकवान्त्यसृक्स्रावैर्व्यायामामोदघर्षणैः॥ २२॥
प्रातर्गुडार्द्रकंखादेत्तथामधुलिहान्निशि।
मूर्च्छोन्मादमदंकासंसप्ताहात्पथ्यभुग्जयेत्॥ २३॥

अर्थ–वनकागोवर (अरने उपले) सूंघनेसे वा शीतलजलको पीनेसे अथवा लवणको भक्षणकरनेसे सुपारीका मद दूर होता है। खाँडका कवल मुखमें धारणकरनेसे चूनादिकी वेदना दूर होतीहै। हरडोंके क्वाथमें अथवा आमलोंके क्वाथमें पकाए हुए घृतको या कल्याणघृतको पीनेसे मद और मूर्च्छा दूर होजातीहै। नेत्रोंमें अंजन लगानेसे, अवपीडन करनेसे, धूम्रपान करनेसे, प्रधमन करनेसे, सुइयोंको चुभानेसे, शस्त्रोंसे तोदनकरनेसे, लोहेकी शलाकासै दग्धकरनेसे, बाल और रुओंको उखाडनेसे, दांतोसे काटनेसे, कोंछकी फलीको देहपै घिसनेसे और शस्त्रादिकसे डरानेसे मूर्च्छारोगीको चेत होताहै। नास निर्गुण्डीके पत्तोंके रसका लेना चाहिये, और प्रधमन अर्थात् नाकमें त्रिकुटेका चूर्ण डालना चाहिये। चेतहुए मूर्च्छा रोगीकी लघु अल्पाक्रिया, आश्चर्यकी वार्त्ता, स्मरण, प्रिय कार्य, प्रियस्रवण, सुंदर गीत वाद्यादिकेशब्द, विचित्रदर्शन, विरेचन,वमन, रक्तमोक्षण, व्यायाम, आमोद और घर्षणके द्वाराचिकित्सा करनी चाहिये। प्रातःकाल अदरखमें गुड मिलाके खावै और रात्रिमें अदरखको सहतके साथ चाटै तौ सातदिनमें मूर्च्छा उन्माद, मद और खाँसी दूर होवै, इसपै पथ्य भोजन करै॥ १६॥ १७॥ १८॥ १९॥ २०॥ २१॥ २२॥ २३॥

पयः पुनर्नवाक्काथेयष्टिकल्कप्रसाधितम् ।
घृतंपुष्टिकरंपानान्मद्यपानहतौजसम् ॥ २४ ॥

इति पुनर्नवाद्यंघृतम् ।

अर्थ–पुनर्नवाके क्काथमें मुलैठीका कल्क और दूध मिलाकै घीको पकावै । यह घी–पुष्टिकारक और मद्यपानजनित ओजोहीनताको दूर करैहै ॥ २४ ॥

मुस्तकंसैन्धवंचैवबृहतीफलमेवच ।
यष्टीमधुसमायुक्तंनस्यंतन्द्राविनाशनम् ॥ २५ ॥

इति मूर्च्छाभ्रमनिद्रातंद्राध्यायः ।

अर्थ–नागरमोथा, सैंधानोन, बडीकटेरीका फल, और मुलैठी, इनके चूर्णसे नास लेनेसे तन्द्रा दूर होतीहै ॥ २५ ॥

इति मूर्च्छाभ्रमनिद्रातन्द्राधिकारःसमाप्तः ।

अथ दाहचिकित्सामाह ।

यत्पित्तज्वरदाहोक्तंदाहेतत्सर्वमिष्यते ।
शतधौतघृताभ्यक्तंलिह्याद्वायवसक्तुभिः ॥ १ ॥
कोलामलकयुक्तैर्वाधान्याम्लैरपिबुद्धिमान् ।
छादयेत्तस्यसर्वाङ्गमारनालार्द्रवाससा ॥ २ ॥
लामज्जेनाथशुक्तेनचन्दनेनानुलेपयेत् ।
चन्दनाम्बुकणास्यन्दितालवृन्तोपजीविते ॥ ३ ॥
स्वप्याद्दाहार्दितोऽम्भोजकदलीदलसम्भवे ।
परिसेकावगाहेषुव्यजनानाञ्चसेचने ॥ ४ ॥
शस्यतेशिशिरंतोयंतृष्णादाहोपशान्तये ।
क्षीरैः क्षीरकषायैश्चसुशीतैश्चन्दनान्वितैः ॥ ५ ॥
अन्तर्दाहंप्रशमयेदेतैश्चान्यैश्चशीतलैः ।
फलिनीलोध्रसेव्याम्बुहेमपत्रंकुटन्नटम् ॥ ६ ॥

कालीयकरसोपेतंदाहेशस्तंप्रलेपनम् ।
सेव्याम्बुशीरवालाचहेमनागेश्वरचूर्णम् ॥ ७ ॥
(कुटन्नटंकैवर्त्तमुस्तकम् ।)
धातुक्षयोत्थेकुर्वीतक्षीरमांसादिबृंहणम् ॥ ८ ॥

अर्थ-जो औषधी पित्तज्वरमें कहीहै वह सब दाहरोगमें हितकारी है। सौवार धुलेहुए घीको शरीरमें मलनेसे, जौके सतुओंके खानेसे, वेर और आमलोंके साथ काँजीको पीनेसे, काँजीमें भिजोएहुए वस्त्रको सब शरीरमें ढकनेसे, लामज्जकतृण और काँजी तथा चन्दनके लेप करनेसे, चन्दनके जलमें ताड़के पंखेको भिजो पवन करनेसे कमलके पत्तोंकी शय्यापै शयन करनेसे अथवा केलेके पत्तोंपै शयन करनेसे, शीतल जलसे परिसेक और अवगाहन तथा, पंखेको भिजोकर पवन करनेसे दाह और तृषा शान्त होतीहै । चन्दनसंयुक्त शीतल दूध, क्षीर कषाय और अन्यान्य शीतलप्रयोगोंके द्वारा अंतर्दाह दूर होतीहै । फूलप्रियंगू, लोध, खस, सुगंधवाला, नागकेशर और कैवर्ती मोथा, इन सब द्रव्योंको दारुहलदीके रसमें पीसकर प्रलेप करनेसे दाह दूर होती है। धातुक्षयजनित दाहरोगमें दूध और मांसादि पुष्टिकारक खाद्यद्रव्य देने चाहिये ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥

कुशादिशालपर्णीभिर्जीवकाद्येनसाधितम् ।
तैलंघृतंवादाहघ्नंवातपित्तविनाशनम् ॥ ९ ॥
इति कुशाद्यंतैलंघृतञ्च ।

अर्थ-कुशादि पंचतृण, लघुपंचमूल, इनके काढ़ेमें जीवकादि अष्टवर्गका कल्क मिला घृत वा तेलको सिद्ध करकै सेवनकरनेसे, दाह और वातपित्त दूर होते हैं ॥ ९ ॥

चतुर्गुणेशतावर्यारसेक्षीरंचतुर्गुणम् ।
सर्पिःप्रस्थंबलाजाजीमंजिष्ठापीवरीनिशा ॥ १० ॥
काकोल्यौमधुमेदद्वेऋद्धीद्विदेवदारुच ।
एषामष्टपलैःकल्कैःपचेत्कल्याणकंमहत् ॥ ११ ॥

बृंहणीयंविशेषेणपरंपुष्टिकरंमतम्।
अर्दितंकर्णशूलञ्चनेत्ररोगंसुदारुणम् ॥ १२ ॥
दाहोन्मादमपस्मारंवातरुग्वातशोणितम्।
उदावर्त्तंगुल्मरोगंहृद्रुजंमूत्रकृच्छ्रकम् ॥ १३ ॥
मूत्रबद्धोपदंशंचग्रहणीमतिदुस्तरम्।
गुदाङ्कुरंमन्दमग्निंश्वासरुग्विषमज्वरौ ॥ १४ ॥
हलीमकंतथाशूलंरक्तपित्तस्वरक्षयम्।
कासश्चैवस्वरंभिन्नंछर्दिंतृष्णांप्रमेहकम् ॥ १५ ॥
स्त्रीणांरुजंजयेच्छीघ्रंक्षयरोगंसकामलम्।
एकजंद्वन्द्वजंचैवतथैवसान्निपातिकम् ॥ १६ ॥
सर्वरोगांनिहन्त्येतन्महत्कल्याणकंघृतम् ॥ १७ ॥

इतिमहत्कल्याणकंघृतम्।

इति दाहाध्यायः।

अर्थ–सतावरका रस २५६ दोसौ छप्पन तोले, गायका दूध २५६ दोसौ छप्पन तोले, घी ६४ चोंसठ तोले, खिरैटी, जीरा, मजीठ, असगंध, हलदी, काकोली, क्षीरकाकोली, मुलैठी, मेदा, महामेदा, ऋद्धि, वृद्धि, और देवदारु, इन सबका कल्क ३२ बत्तीस तोले लेवै, सबको विधिपूर्वक मिलाकर घृतको सिद्ध करै, यह महत्कल्याण घृत–बृंहण, पुष्टिकारक, तथा अर्दितरोग, कर्णशूल, दारुणनेत्ररोग, दाह, उन्माद, अपस्मार, वातरोग, वातरक्त, उदावर्त्त, गुल्मरोग, हृदयरोग, मूत्रकृच्छ्र, मूत्रबंध, उपदंश, असाध्यसंग्रहणी, गुदांकुर, मन्दाग्नि, श्वासरोग, विषमज्वर, हलीमक, शूल, रक्तपित्त, स्वरक्षय, खाँसी, स्वरभेद, वमन, तृषा, प्रमेह, स्त्रीरोग, क्षयरोग, कामला, ऐकाहिक ज्वर, द्वन्द्वजज्वर, और सन्निपात ज्वरको दूर करै है ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥

इति दाहाधिकारःसमाप्तः।

अथोन्मादचिकित्सामाह ।

उन्मादेवातजेपूर्वंस्नेहपानंविरेचनम् ।
कुर्यादावृतवातेतुसस्नेहमूर्द्धशोधनम् ॥ १ ॥
पैत्तिकेरेचनंशस्तंवमनन्तुकफोत्तरे ।
स्निग्धस्विन्नेयथादोषंबस्तिनस्यंचयोजयेत् ॥ २ ॥
शुद्धस्याचारविभ्रंशेतीक्ष्णंलावणमंजनम् ।
ताडनञ्चमनोबुद्धिस्मृतिसंवेजनंहितम् ॥ ३ ॥
तर्जनंत्रासनंदानंसान्त्वनंहर्षणंभयम् ।
विस्मयोविस्मृतेर्हेतोर्नयन्तिप्रकृतिंमनः ॥ ४ ॥

सान्त्वनमाश्वासनम् ।

सर्पैरदन्तैश्चगजैर्व्याघ्रैस्तथारिभिः ।
त्रासयेद्राजपुरुषैःशस्त्रहस्तैर्वधोद्यतैः ॥ ५ ॥
प्रदेहोच्छादनाभ्यंगधूमपानञ्चसर्पिषः ।
प्रयोक्तव्यंमनोबुद्धिस्मृतिसंज्ञाप्रबोधनम् ॥ ६ ॥
प्रयोज्यंसार्षपंतैलंनस्याभ्यंजनयोस्तथा ।
बद्धंसर्षपतैलाक्तमुत्तानञ्चातपेन्यसेत् ॥ ७ ॥
सिद्धार्थिकोवचाहिङ्गुकरंजौदेवदारुच ।
मंजिष्ठात्रिफलाश्वेताकटभीत्वक्कटुत्रिकम् ॥ ८ ॥
समांसानिप्रियंगुश्चशिरीषोरजनीद्वयम् ।
बस्तमूत्रेणपिष्टोऽयमगदःपानमंजनम् ॥ ९ ॥
नस्यमालेपनंचैवस्नानमुद्वर्तनन्तथा ।
अपस्मारविषोन्मादकृत्यालक्ष्मीज्वरापहः ॥ १० ॥
भूतेभ्यश्चभयंहन्तिराजद्वारेचशस्यते ।
सर्पिरितैश्चसिद्धंवासगोमूत्रंतदर्थकृत् ॥ ११ ॥

अर्थ-वातके उन्मादरोगमें प्रथम स्नेहपान और विरेचन तथा

वातसमन्वित उन्मादरोगमें सस्नेह शिरोविरोचन करना चाहिये। पित्तज उन्मादरोगमें विरेचन और कफज उन्मादरोगमें वमन कराना चाहिये। स्नेह और स्वेदयुक्त मनुष्यको बलाबलका विचार कर बस्तिकर्म्म और नस्यप्रदान करना चाहिये। आचारभ्रष्टमनुष्यको तीक्ष्ण नस्य, अँजन और ताड़नके द्वारा मन, बुद्धि और स्मृति उत्पन्न करानी चाहिये। तर्जन (झिड़कना) त्रासन (धमकाना) दान, सान्त्वन (प्रियवचनोंसे शान्त करना) हर्षण, भय, आश्रय, आश्चर्य और विस्मृतिके द्वारा उन्माद रोगीके मनको प्रकृतिमें प्राप्त करनाचाहिये। सर्प, विनादाँतोंके अथवा दाँतोंके भयंकर जीव, हाथी, व्याघ्र, शत्रु, शस्त्रको हाथमें धारण किये और वधकरनेको तैय्यार ऐसे राजाके पुरुषोंसे उन्मादरोगीको भयभीत करावे, इनसे चित्त स्थिर होजाताहै। उत्तम प्रलेप, श्रेष्ठ आच्छादन, अभ्यंग, धूम्रपान और घृतपानके द्वारा मन, बुद्धि, स्मृति और संज्ञा यह उत्पन्न होतेहैं। सर्सोंके तेलका नास देनेसे और सर्सोंके तेलको शरीरसै मर्दनकरनेसे उन्माद रोग दूर होताहै। उन्माद रोगीको सरसोंके तेलमें भिजोकर फिर सूर्यकी धूपमें पैर फैलाकर सीधा सुलादेवै, इससे उन्मादरोग आराम होताहै। सफेद सरसों, वच, हींग, करंज, देवदारु, मजीठ, त्रिफला, सफेदकोयल, कटमीकी छाल, त्रिकुटा, फूलप्रियंगू, सिरस, हलदी और दारुहलदी, यह सब समान लेकर बकरीके मूत्रमें पीसके पीनेसे, या आंखोंमें अंजन लगानेसे अथवा नाकमें सूंघनेसे वा लेप करनेसे या उबटन करनेसे अथवा जलमें मिलाकर स्नान करनेसे-अपस्मार, विष, उन्माद, अलक्ष्मी और ज्वर दूर होताहै। यह प्रयोग भूतके भयको दूर करताहै और राजद्वारमें श्रेष्ठहै। अथवा गोमूत्र और उक्तद्रव्योंके कल्कमें घृतको सिद्धकर सेवनकरनेसे उन्माद और अपस्मारादिरोग नष्ट होजाते हैं॥१॥२॥३॥४॥५॥६॥ ७॥ ८॥ ९॥ १०॥ ११॥

त्र्यूषणंहिंगुलवणंवचाकटुकरोहिणी।
शिरीषनक्तमालानांबीजंश्वेताश्चसर्षपाः॥ १२॥
गोमूत्रपिष्टैरेतैस्तुवर्त्तिर्नेत्रांजनेहिता।
चातुर्थकमपस्मारमुन्मादंचनियच्छति॥ १३॥

इति त्र्यूषणाद्यावर्त्तिः।

अर्थ-त्रिकुटा, हींग, सैंधानोंन, वच, कुटकी, सिरसके बीज, करंजके बीज, सफेद कोयल, और सरसों, इन सबको गोमूत्रमें पीस बत्ती बना कर आँखोंमें लगानेसे चौथियाज्वर, अपस्मार, और उन्मादरोग दूर होताहै ॥ १२ ॥ १३ ॥

उन्मादेसमधुःपेयोरसोवातालशाखजःकेवलोऽपि।
ब्राह्मीकूष्माण्डीफलषड्ग्रन्थाशंखपुष्पिकाःस्वरसाः १४
उन्मादहराहष्टाःपृथगेतेकुष्ठमधुमिश्राः ॥ १५ ॥
कूष्माण्डफलस्यमज्जा।
दशमूलांबुसघृतंयुक्तंमांसरसेनवा।
ससिद्धार्थकचूर्णवापुराणंचैककंघृतम् ॥ १६ ॥
पानाभ्यंजननस्येषुहितमुन्मादिनांसदा।
उग्रगंधंपुराणंस्याद्दशवर्षस्थितंघृतम् ॥ १७ ॥
लाक्षारसनिभंशीतंप्रपुराणमतःपरम् ॥ १८ ॥

अर्थ-ताडकी शाखाओंके रसमें सहत मिलाकर पीनेसे या केवल ताडकी शाखाओंकाही रस पीनेसे, अथवा ब्रह्मी, पेठेकीमींग, वच और शंखपुष्पी इनके रसोंमें कूठका चूरन और सहत मिलाके अलग अलग सेवन करै तौ उन्माद रोग दूर होवै। घृतयुक्त दशमूलका क्वाथ वा मांस-रसके साथ सफेद सरसोंका चूर्ण अथवा केवल पुरानेघीको पीनेसे, नास लेनेसे और मालिस करनेसे उन्मादरोग दूर होजाताहै। उग्रगंधयुक्त, दशवर्षका रक्खा हुआ, लाखके रंगकी समान ऐसे घीको पुरानाघी कहते हैं और इससे अधिक पुरानेको प्रपुराणघी कहतेहैं १४॥ १५॥ १६॥ १७॥ १८

हिंगुसौवर्चलंव्योषैर्द्विपलांशैर्घृताढकम्।
चतुर्गुणेगवांमूत्रेसिद्धमुन्मादनाशनम् ॥ १९ ॥
इति हिंग्वाद्यंघृतम्।

अर्थ-हींग, कालालोन, त्रिकुटा, यहप्रत्येक आठ आठ तोले लेवै, गोमूत्र ३२ बत्तीस सेर लेवै, इनमें आठसेर घृतको डालके सिद्ध करै, यह घृत उन्मादरोगनाशकहै ॥ १९ ॥

पंचमूल्यावकाश्मर्य्योरास्नैरण्डत्रिवृद्बला।
मूर्वाशतावरीचेतिक्काथैर्द्विपलिकैरिमैः॥ २०॥
कल्याणकस्यचाङ्गेनतद्घृतंचैतसंस्मृतम्।
सर्वचेतोविकाराणांशमनंपरमंमतम्॥ २१॥
(अकाश्मर्य्योगम्भारीमूलरहितदशमूलम्
एषांक्काथःकल्याणघृतस्यकल्कः)

इति स्वल्पचैतसंघृतम्।

अर्थ—कुम्भेररहितदशमूल, रास्ना, अण्ड, निसोथ, खिरैटी, मूर्वा और शतावर, प्रत्येकका आठ आठ तोले क्काथ लेवै, और कल्याणघृतमें कहीहुई औषधि ले कल्कबना क्काथमें मिलाके चित्तके विकारोंको दूर करदेवै॥ २०॥ २१॥

जटिलापूतनाकेशीचारटीमर्कटीवचा।
त्रायमाणाजयावीराचोरकंकटुरोहिणी॥ २२॥
कायस्थाशूकरीच्छत्रासातिच्छत्रापलंकषा।
महापुरुषदन्ताचवयस्थालांगलीद्वयम्॥ २३॥
कटम्भरावृश्चिकालीस्थिराचैवचतैर्घृतम्।
सिद्धंचातुर्थकोन्मादग्रहापस्मारनाशनम्॥ २४॥
महापैशाचिकंनामघृतमेतद्यथामृतम्।
मेधास्मृतिबुद्धिकरंबालानांचांगवर्द्धनम्॥ २५॥

(जटिलाजटामांसीपूतनाहरीतकीकेशीभूकेशः चारटीकुम्भाडुब्रह्मीरामकर्कटीशूकशिम्बीजयाजयन्तीवीराक्षीरकाकोलीपृश्निपर्णी वा चोरकश्चोरहेलीः कायस्थासिन्धुवारःशूकरीवाराहीकन्दः तदभावेचर्मकारत्वक्छत्रामधुरिकैवनतुजीरकंमिसीतिजत्रुकणात् अतिच्छत्राशतपुष्पापलङ्कषागुग्गुलुः महापुरुषदन्ताशतावरीवयस्था

ब्रह्मीगुडूचीवा लांगलीद्वयंरास्नाद्वयमेकातत्रगन्धरास्नात
दभावेभागद्वयम् । कटम्भराभद्राणिकाकटभीवावृश्चि-
कालीविछाती। स्थिराशालपर्णीघृतप्रस्थेकल्कार्थप्रत्ये-
कमेषांरक्तित्रयोपेतषण्माषाधिककर्षएकःकर्ष १ मा ६
रत्ती ३ जलंघृताच्चतुर्गुणम् । महापैशाचिकमितिमह-
च्छब्दःपूजावचनःस्वल्पस्याभावात् ॥)

इति महापैशाचिकंघृतम् ।

अर्थ-बालछड़, हरड, भूकेशी, ब्रह्मी, कौंछ, वच, खिरैटी, जयंती, क्षीरकाकोली, चोरपुष्पी, कुटकी, सम्हालू, वाराहीकन्द, सौंफ, सोया, गूगल, शतावर, गिलोय, रास्ना, गंधरास्ना, मालकांगनी, विछाटी, और शालपर्णी, यह प्रत्येक दो तोले ६ मासे ३ रत्तीभर लेवे, इन सबका कल्क बना उसमें २५६ दोसौछप्पन तोले जल और ६४ चौसठ तोले घृत विधिपूर्वक मिलाकै घृतको सिद्ध करै। यह घृत-चातुर्थिक ज्वर, उन्माद, ग्रहदोष और अपस्मारको दूर करैहै। तथा मेधा, स्मृति, बुद्धि और बालकोंके अंगको बढ़ानेवाला है ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥२५॥

शिवायास्तुसुपुत्रायाःपलंपंचाशतन्तथा ।
पंचपंचसमादायपंचमूलयुगात्पृथक् ॥ २६ ॥
कुट्टयित्वाचतुष्षष्टिप्रस्थैरेवाम्भसांपृथक् ।
पक्त्वापादावशिष्टेनतेनक्काथोदकेनच ॥ २७ ॥
क्षीरस्याष्टभिराज्यस्यशरावाणाश्चतुष्टयम् ।
यष्टीमधुकमंजिष्ठाकुष्ठाचन्दनपद्मकैः ॥ २८ ॥
विभीतकशिवाधात्रीत्रिवृत्तगरपादिकैः ।
विडंगदाडिमंदेवदारुदन्तीहरेणुकैः ॥ २९ ॥
तालीशकेशरंश्यामाविशालाशालपर्णिभिः ।
प्रियंगुमालतीपुष्पकाकोलीयुगलोत्पलैः ॥ ३० ॥
हरिद्रायुगलानन्ताहरिवालुकवालकैः ।

पृश्निपर्णीसमैरेभिःकल्कैरक्षसमन्वितैः ॥ ३१ ॥
सिद्धमेतद्घृतंयच्चतन्मेनिगदतःशृणु ।
देवासुरग्रहैर्ग्रस्तेमानुषेराक्षसैःक्षते ॥ ३२ ॥
गंधर्वधर्षितेचैवपितृग्रहनिपीडिते ।
भूतैरप्यभिभूतेचपिशाचैश्चपरिप्लुते ॥ ३३ ॥
भुजंगमगृहीतेचतथाजांगलभक्षिते ।
ऋक्षैरपिपरिक्षितेभयैरप्यर्दितेभृशम् ॥ ३४ ॥
शस्यतेसर्ववातेचसर्वशूलेप्रशस्यते ।
शोषेवक्षःक्षतेकासेश्वासेमेदेमदात्यये ॥ ३५ ॥
मेहेमूत्रग्रहेचैवज्वरेचैतत्प्रशस्यते ।
वृष्यंबलकरंहृद्यंवन्ध्यानामपिपुत्रदम् ॥ ३६ ॥
श्रीविन्ध्यवासिपादेननिर्म्मितंघृतमुत्तमम् ।
शिवाघृतमिदंनाम्नाशिवायोन्मादिनांसदा ॥ ३७ ॥

(अथ शृगालीमांसंप्रशस्यते)

(पलपंचसंख्यायादशमूल ५० पलक्काथद्वयम्)

इति शिवाघृतम् ।

अर्थ-गायका घी चारसेर, दूध आठसेर, क्राथके लिये शृगालीका मांस ५० पल, जल ६४ चौसठ सेर, शेष १६ रक्खे। दशमूलकी सब औषधी ५० पल, जल ६४ चौसठसेर, शेष १६ सोलह सेर रहने देवै। कल्कके लिये मुलैठी, मजीठ, कूठ, चन्दन, पद्माख, हरड़, आमला, निसोत, तगर, वायविडंग, अनार, देवदारु, दन्ती, रेणुका, तालीशपत्र, नागकेशर, सारिवा, इन्द्रायन, शालिपर्णी, फूलप्रियंगू, मालतीकेफूल, काकोली, क्षीरकाकोली, कमल, नीलेकमल, हलदी, दारुहलदी, अनन्तमूल, एलुआ, सुगंधवाला, और पिठवन, यह प्रत्येक औषधि दो दो तोले लेवै। इस घृतको भलेप्रकारसे सिद्धकर सेवनकरनेसे देव, असुर, राक्षस, गंधर्व, पितर, पिशाच, नाग और यक्षादिका उन्माद दूर होता है। तथा सर्वप्रकारके वातरोग, सर्व प्रकारके शूल, शोष, वक्षःक्षत,

खाँसी, मेदरोग, मदात्यय, प्रमेह, मूत्रग्रह और ज्वर दूर होवै । और यह घी वीर्य तथा बलको बढ़ावै, हृदयको हितकारी, और वंध्या स्त्रियोंको पुत्र देवै है । यह शिवाघृत उन्मादरोगियोंको अत्यन्त हितकारी है ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥

निंबपत्रवचाहिंगुसर्पनिर्म्मोकसर्षपैः ।
डाकिन्यादिहरोधूपोभूतोन्मादविनाशनः ॥ ३८ ॥
कार्पासास्थिमयूरपुच्छबृहतीनिर्म्माल्यपिंडीतकैः
दुग्धाशिवातथाहिविष्ठावचाकेशाहिनिर्मोककैः ।
गोशृंगद्विपदन्तहिंगुमरिचैस्तुल्यैस्तुधूपःकृतः
स्कन्दोन्मादपिशाचराक्षससुरावेशोज्वरघ्नःस्मृतः ३९॥

अर्थ—नीमकेपत्ते, वच, हींग, साँपकी कैंचली, और सरसों, इनकी धूप बनाकर देनेसै डाकिनी आदिग्रह और भूतोन्माद दूर होवै है । विनौले, मोरकी पूंछ, कटाई, निर्मलीफल, मैनफल, दुद्धी, हरड़, साँपकी विष्ठा, केश, वच, साँपकीकैचली, गायकेसींग, हाथीकेदाँत, और कालीमिरच, इन सबको समान भाग लेकर धूप बनाकर देनेसै—स्कन्दग्रह, उन्माद, पिशाचबाधा, राक्षसप्रवेश, देवताप्रवेश, और ज्वर दूर होता है ॥ ३८॥ ३९॥

सूतायस्तारताम्रश्चमुक्ताचैवसमंसमम् ।
सूतपादंतथावज्रंतालंगंधंमनःशिला ॥ ४० ॥
तुत्थंशिलाजनंसीसमब्धिफेनंरसाञ्जनम् ।
पंचानांलवणानांचप्रतिभागंरसोन्मितम् ॥ ४१ ॥
चित्रकंमूलकंचैववज्रीदुग्धेनमर्दयेत् ।
दिनान्तेगोलकंकृत्वारुद्धागजपुटेपचेत् ॥ ४२ ॥
भूतांकुशरसोनामततोगुंजाद्वयंलिहेत् ।
आर्द्रकस्यरसेनैवभूतोन्मादसमीराजित् ॥ ४३ ॥
पिप्पल्यार्कंविवेचानुदशमूलकषायकम् ।
स्वेदयेत्कटुतुम्बीनांरसेशीतश्चगोलयेत् ॥ ४४ ॥

माहिषञ्चघृतंक्षीरंभक्षयेच्चततःपरम्।
सघृतंक्कथितंक्षीरंशुष्कशाकंविवर्जयेत्॥ ४५॥
अभ्यंगंकटुतैलेनंगुर्वन्नंभोजनेहितम्॥ ४६॥

इति भूतांकुशरसः।

अर्थ–पारा एकतोला, लोहा एक तोला, चाँदी एक तोला, मोती एक तोला, हीरा ३ मासे, हरिताल तीनमासे, गंधक तीनमासे, मैनशिल तीनमासे, नीलाथोथा तीनमासे, सुरमा तीनमासे, सीसा तीन मासे, समुद्रफेन तीन मासे, रसौत तीनमासे, और पांचों नोन पारेके समान लेवे, इन सबको चीतेके रसमें, मूलीके रसमें और थूहरके दूधमें खरल करै, रात्रिमें गोला बनाकै गजपुटमें रखकर फूंक देवै तो भूतांकुशरस तयार होता है। इसको दो रत्तीभर अदरखके साथ खानेसै भूतोन्माद और वात दूर होती है। इसके ऊपर दशमूलके काढ़ेमें पीपलका चूर्ण डालकै पीवै, और कड़वी तोम्बीके द्वारा स्वेदन करै, सर्वप्रकारके शीतलपदार्थ त्याग देवै, भैंसकाघी और दूध सेवन करै। घृतयुक्त पकाया हुआ दूध और सूखेशाक त्याग देवै। और सदैव कड़वे तैलका मालिस एवं भारी अन्नोंका भोजन करै॥ ४०॥ ४१॥४२॥४३॥४४॥४५॥४६॥

हेमपादंमृतंसूतंनिष्कंखल्वेविमर्दयेत्।
शोभांजनंविषंतुल्यंमर्द्यश्चत्रिशूलीद्रवैः॥ ४७॥
देवदाल्याद्रवैश्चाह्नितद्गोलंपाचयेद्दिनम्।
गंधकोत्थेनतैलेनततउद्धृत्यचूर्णयेत्॥ ४८॥
मासैकंभक्षयेन्नित्यंपिबेद्ब्राह्मीघृतंह्यनु।
सर्वभूतग्रहंहन्तिरसोऽयंचण्डभैरवः॥ ४९॥

इति चण्डभैरवरसः।

अर्थ–सोनेकी भस्म एक भाग, पारेकी भस्म चौथाई भाग, सैंजिना, और विष, यह प्रत्येक एक एक भाग लेकर गोखुरूओंके रसमें और देवदालीके रसमें खरल करै, फिर गोला बना एक दिन पकावै, तदनन्तर गंधकके तेलमें मिलाकर एकमास पर्यन्त सेवनकरै तौ सर्वप्रकारके भूत-ग्रह दूर होवै। इसके ऊपर ब्राह्मीघृतका अनुपान करै॥४७॥४८॥४९॥

नारसिंहस्यमंत्रेणसकृदुच्चारितैर्हरेत् ।
डाकिनीग्रहभूतादितमःसूर्योदयेयथा ॥ ५० ॥
ओंनमोनरसिंहायहिरण्यकशिपोर्वक्षस्थलविदारणायत्रि-
भुवनव्यापकायभूतायप्रतिसारणायडाकिनीकुलोन्मूल-
नायसमस्तदोषान् हरहरविसरविसरबलबलकम्पकम्पम
थहुंहुंहुं फट्फट्चट्चट्एहिएहिरुद्राज्ञापयतिस्वाहा ॥
सर्षपानिम्बपत्राणिभूर्जपत्रंवचाघृतम् ।
धूपोवाजिनखैर्युक्तःसर्वग्रहनिवारणम् ॥ ५१ ॥
इतिनरसिंहमन्त्रः।
इत्युन्मादाऽध्यायः ।

अर्थ–ओं नमो नरसिंहाय–ज्ञापयति स्वाहा । इस मंत्रको एकवार पढ़ैतौ डाकिनी, ग्रह और भूतादिजनित उन्माद दूर होवै है। जैसे सूर्य्योदयसे अन्धकार दूर होवैहै ॥ ५० ॥ सरसों, नीमकेपत्ते, भोजपत्र, वच, घृत, और घोड़के नख, इनसबकी धूपबनाकर देनेसे सर्वप्रकारके ग्रह दूर होतेहैं ॥ ५१ ॥

इत्युन्मादाध्यायः ।

अथापस्मारचिकित्सामाह ।

चिकित्स्योह्यपस्मारीचाचिरकालीमहागदः ।
तस्माद्रसायनैरेनंप्रायशःसमुपाचरेत् ॥ १ ॥
वातिकंबस्तिभिःप्रायःपित्तंप्रायोविरेचनैः ।
श्लैष्मिकंवमनैःप्रायोह्यपस्मारमुपाचरेत् ॥ २ ॥
सर्वतःपरिशुद्धस्यसम्यगाश्वासितस्यच ।
अपस्मारविमोक्षार्थयोगान्त्संशमनाञ्छृणु ॥ ३ ॥
पिप्पलीवृश्चिकालीचकुष्ठञ्चलवणानिच ।
प्रदद्याच्चूर्णितंनस्यमेतत्प्रशमनंपरम् ॥ ४ ॥

भूतोन्मादोत्थितश्चात्रयोज्यंनस्याञ्जनादिकम्।
मनोह्वाताक्षंजश्चैवसकृत्पारावतस्यच ॥ ५ ॥
अञ्जनंहन्त्यपस्मारमुन्मादंचविशेषतः।
(तार्क्षंजंरसांजनम्)
यष्टीहिंगुवचावक्राशिरीषलशुनामयैः ॥ ६ ॥
अजाघृतैरपस्मारेसोन्मादेचांजनंहितम्।
(वक्रंतगरपादिका)
पुष्योद्धृतंशुनःपित्तमपस्मारघ्नमंजनम् ॥ ७ ॥
तदेवसर्पिषायुक्तंधूपनंपरमंमतम्।
नकुलोलूकमार्जारगृध्रकीटादिकाकजैः ॥ ८ ॥
तुण्डैःपक्षैःपुरीषैश्चधूपनंकारयेद्भिषक्।
(कीटोवृश्चिकः)
यःखादेत्क्षीरभक्ताशीमाक्षिकेणवरारजः ॥ ९ ॥
अपस्मारंमहाघोरंसचिरोत्थंजयेद्ध्रुवम्।
(वरात्रिफला)
कूष्माण्डकफलोत्थेनरसेनपरिशोधितम् ॥ १० ॥
अपस्मारविनाशाययष्टिमधुपिबेत्र्यहम्।
प्रयोज्यंतैलल्शुनंपयसाऽथशतावरी ॥ ११ ॥
ब्रह्मीरसश्चमधुनासर्वापस्मारनाशनम् ॥ १२

अर्थ-अपस्माररोग चिरकाली और महा रोगोंमें गिनाजाताहै, इस कारण रसायनप्रयोगसे इनकी चिकित्सा करनी चाहिये। विशेष करकै वातज अपस्माररोगकी बस्तिकर्मसे, पित्तज अस्मारकी विरेचनसे और कफज अस्माररोगकी वमनके द्वारा चिकित्सा करनी उचितहै। अब भलेप्रकारसे शुद्ध किये और भलेप्रकारसे आश्वासित किये अपस्माररोगको हरनेवाले प्रयोग कहे जाते हैं। पीपल, वृश्चिकाली, कूठ,

और पांचो नोन, इनसबको पीसकर नास देनेसे अपस्मार रोग दूर होताहै । भूतोन्मादमें कहेहुए नस्य और अंजन, इसरोगमें प्रयोग करने चाहिये । मैनशिल, रसोत और परेवाकी विष्ठाका अंजन बनाकर नेत्रोंमें लगानेसै अपस्मार और उन्मादरोग नाश होताहै। मुलैठी, हींग, वच, तगर, सिरसके बीज और कूठ, इनको पीसकर बकरीके घीमें मिला नेत्रोंमें लगानेसे-अपस्मार और उन्मादरोग दूर होताहै । पुष्यनक्षत्रमें कुत्तेके पित्तको लेकर आखोंमें आँजनेसै तथा घृत मिलाके धूपदेनेसै उन्मादरोग आराम होताहै । नकुल, उलूक, बिलाव, गीध, विच्छू, साँप और गाककी चोंच अथवा मुख, पक्ष, और विष्ठा, इनकी धूपदैनेसै-अपस्माररोग दूर होताहै । त्रिफलेके चूर्णको सहतमें मिलाकरखावै और दूधके साथ भोजन करै तौ महाघोर और बहुत पुराना अपस्मार दूर होजावै । पेठके रसमें शुद्ध कीहुई मुलैठीके चूरनको मिलाकर खानेसै तीनदिनमें अपस्मार रोग आराम होजाताहै । लहसुनको तेलमें मिलाकर खावै, या शतावरको दूधमें मिलाकर सेवन करै अथवा ब्रह्मीके रसको सहत मिलाकर चाटै तौ सर्वप्रकारके अपस्मार रोगदूर होजावै ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥५॥६॥७॥८॥९॥१०॥११॥१२ ॥

गोशकृद्रसदध्यम्लक्षीरमूत्रैःसमैर्घृतम् ।
सिद्धंचातुर्थिकोन्मादसर्वापस्मारनाशनम् ॥ १३ ॥

इति स्वल्पपंचगव्यघृतम् ।

अर्थ-गोवरका रस, खट्टादही, दूध, गोमूत्र, और घी, इन सबको समान भाग लेकर घृतको सिद्ध करै, इस घृतको सेवनकरनेसे चातुर्थिक ज्वर, उन्माद और सर्वप्रकारके अपस्माररोग दूर होते हैं ॥ १३ ॥

द्वेपंचमूल्यौत्रिफलारजन्यौकुटजत्वचः ।
सप्तपर्णमपामार्गनीलिनीकटुरोहिणी ॥ १४ ॥
शम्याकफल्गुमूलश्चपौष्करंसदुरालभम् ।
द्विपलांशंजलद्रोणेपक्त्वापादावशेषितम् ॥ १५ ॥
भार्गीपाठात्रिकटुकत्रिवृतानिचूर्णानिच ।
श्रेयसीमागधीमूर्वादन्तीभूनिम्बचित्रकौ ॥ १६ ॥

द्वेशारिवेरोहिषश्चभूतिकोमदयन्तिकाम्।
क्षिपेत्पिष्ट्वाक्षमानानितैःप्रस्थंसर्पिषःपचेत्॥ १७॥
गोशकृद्रसदध्यम्लक्षीरमूत्रैश्चतत्समैः।
पंचगव्यमितिख्यातंमहत्तदमृतोपमम्॥ १८॥
अपस्मारेज्वरेकासेश्वयथावुदरेषुच।
गुल्मार्शःपाण्डुरोगेषुकामलायांहलीमके॥ १९॥
अलक्ष्मीग्रहरक्षोघ्नंचातुर्थिकनिवारणम्॥ २०॥
श्रेयसीगजपिप्पलीरोहिषंगंधतृणभेदः।
भूतिकंगंधतृणंरोहिषाभावेभागद्वयंग्राह्यम्॥ २१॥

इतिबृहत् पंचगव्यघृतम्।

अर्थ–गायकाघी चारसेर, गोमूत्र चारसेर, गायका दूध चारसेर, गोवरकारस ४ चारसेर, गायका दही चारसेरलेवै, दशमूल, त्रिफला, हलदी, दारुहलदी, कुडेकीछाल, सतवनकी छाल, चिरचिटा, नील, कुटकी, अमलतास, कठूमर, पोहकरमूल और जवासा, यह प्रत्येक दोदो पल लेकर सबका कल्कबना चौसठसेर जलमें पकावै, शेष १६ सोलहसेर जल रहनेदेवै और कल्कके लिये भारंगी, पाढ, त्रिकुटा, निसोत, गजपीपल, पीपल, चुरनहार, दन्ती, चिरायता, चीता, अनंतमूल, गौरीसर, रोहिषतृण, गंधतृण और मैनफल यह प्रत्येक वस्तु दो दो तोले लेवै, पश्चात् विधिपूर्वक घृत सिद्धकरै, इसको पंचगव्यघृत कहतेहैं। यह पंचगव्यघृत–अपस्मार, ज्वर, खाँसी सूजन, उदररोग, गुल्म,, बवासीर पाण्डुरोग, कामला, हलीमक, अलक्ष्मी, ग्रहदोष, राक्षसबाधा और चातुर्थिक ज्वरको दूर करैहै॥ १४॥ १५॥ १६॥ १७॥ १८॥ १९॥ २०॥ २१॥

शणस्त्रिवृत्तथैरण्डोदशमूलीशतावरी।
रास्नामागधिकाशिग्रुक्काथ्यंद्विपलिकंभवेत्॥ २२॥
विदारीमधुकंमेदेद्वेकाकोल्यौशिवातथा।
एभिःखर्जूरमृद्वीकाभीरुयुञ्जातगोक्षुरैः॥ २३॥
चैतसस्यघृतस्यापिपक्तव्यंसर्पिरुत्तमम्।

महाचैतससंज्ञन्तुसर्वापस्मारनाशनम् ॥ २४ ॥
गरोन्मादप्रतिश्यायतृतीयकचतुर्थकान् ।
पापालक्ष्मीर्जयेदेतत्सर्वग्रहनिवारणम् ॥ २५ ॥
श्वासकासहरंचैवशुक्रार्त्तवविशोधनम् ।
(नित्यंयुञ्जातकाभावेतालमस्तकमिष्यते ॥ २६ ॥
शणादिशिग्रुपर्यन्तंक्वाथःघृतमानंक्वाथविधिः
विदार्य्यादिभिः)
(कल्याणकस्याष्टाविंशतिभिःसहकल्कः)
शणस्यबीजम् ।

इति महाचैतसंघृतम् ।

अर्थ–गायकाघी चारसेर, सनके बीज, निसोत, अंड, दशमूल, सतावर, रायसन और सैंजिना, यह प्रत्येक दो दो पल लेकर १६ सोलह सेर जलमें पकावै, शेष चारसेर जल रहने देवै, और कल्कके लिये विदारीकन्द, मुलैठी, मेदा महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, हरड, खजूर, दाख, सतावर, ताडका मस्तक, गोखुरू, और चैतसघृतमें कही हुई सर्व औषधियोंका कल्क एक सेर लेवै, पश्चात् घृतको सिद्ध करै । इसको महाचैतसघृत कहतेहैं । यह घृत–सर्वप्रकारके मृगीरोग, विषविकार, उन्माद, प्रतिश्याय, तृतीयकज्वर, चातुर्थिक ज्वर, पाप, अलक्ष्मी, सर्व प्रकारके ग्रह, श्वास, और खांसीको दूर करैहैं । तथा शुक्र और आर्त्तवको शुद्ध करैहै ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥

ब्रह्मीयासवचाकुष्ठशंखपुष्पीभिरेवच ।
पुराणंमेध्यमुन्मादग्रहापस्मारनाशनम् ॥ २७ ॥
(ब्रह्मीरसश्चतुर्गुणः पुराणंघृतमत्रयोज्यम्)

इति ब्रह्मीघृतम् ।

अर्थ–पुराना घी चारसेर, ब्रह्मीका रस सोलह सेर, और कल्कके लिये ब्रह्मी, जवासा, कूठ, और शंखपुष्पी, यह समान भागले, सब तोलमें सेरभर लेवै, फिर घृतको सिद्धकर सेवनकरनेसे–उन्माद, ग्रहदोष और अपस्माररोग दूर होताहै ॥ २७ ॥

पार्वतीकाशीशसूतंदरदोमधुपुष्पकम्।
गुडूचीशाल्मलीधान्यभूनिम्बामरतुम्बुरुम्॥ २८॥
तिलमुद्गपटोलानांद्राक्षाकूष्माण्डभस्मानि।
वटिकाकन्यकाभस्मबलाद्वयानियोजितम्॥ २९॥
सर्वमेतत्समाहृत्यगव्याज्येगुटिकाशुभा।
उन्मादपवनच्छर्दिमपस्मारंविशेषतः॥ ३०॥
कासंश्वासंक्षयंहिक्कांदुर्नामश्चप्रमेहकम्।
पित्तज्वरारुचिश्चैवतिमिरंचक्षुरामयम्॥ ३१॥
गलरोगेषुसर्वेषुकर्णस्तब्धंहरेद्ध्रुवम्॥ ३२॥

इतिप्रचण्डभैरवरसः।

अर्थ-गंधक, कसीस, पारा, सिंग्रफ, महुएके फूल, गिलोय, सेमल, धनिया, चिरायता, देवदारु, तुम्बुरु, तिल, मूग, परवल, दाख, पेठेकी भस्म, घीकुवारकी भस्म, खिरैटी और गँगेरन, इन सबका चूर्ण बनाकर गायके घीमें मिलाकै गोली बना लेवै। इनको सेवन करनेसे उन्माद, वात, वमन,अपस्मार, खाँसी, श्वाँस, क्षय, हिचकी,बवासीर, प्रमेह, पित्तज्वर अरुचि, तिमिररोग, नेत्ररोग, सर्वप्रकारके गलरोग और कर्णस्तब्धरोगको दूर करैहै॥२८॥२९॥३०॥३१॥३२॥

मृतसूतार्कलोहश्चतालंगंधमनःशिला।
स्रोतोऽञ्जनंचतुल्यांशंनरमूत्रेणमर्दयेत्॥ ३३॥
तद्गोलंद्विगुणंगंधंलोहपात्रेक्षणंपचेत्।
पंचगुंजामितंखादेदपस्मारहरंघृतैः॥ ३४॥
हिंगुसौवर्चलंत्र्यूषंनरमूत्रेणसर्पिषा।
कर्षमात्रंपिबेच्चानुरसोऽयंभूतभैरवः॥ ३५॥

इति भूतभैरवः।

अर्थ-पारेकी भस्म, तांबा, लोहा, हरिताल, गन्धक, मैनशिल, और सुरमा, यह सब समान भाग लेकर मनुष्यके मूत्रमें खरलकर गोला

बनाले, फिर इस गोलेमें दुगुना गंधक मिलाकर लोहेके पात्रमें क्षणभर पकावै । इसको५पांच रत्ती भर सेवन करै, ऊपरसे हींग, कालानोंन और त्रिकुटेका चूर्ण मनुष्यके मूत्रमें मिलाकर घीके साथ अनुपान करै । यह भूतभैरवरस-सर्वप्रकारके अपस्माररोगोंको दूर करैहै॥३३॥३४॥३५॥

मृतंसूताभ्रंसतीक्ष्णंतारताप्यविषंसमम् ।
पद्मकेसरसंयुक्तंदिनैकंमर्दयेद्द्रवैः ॥ ३६ ॥
स्नुग्वह्निविजयैरण्डवचानिष्पावसूरणैः ।
निर्गुण्ड्याश्वद्रवैर्मर्द्यतद्गोलंपाचयेत्पुनः ॥ ३७ ॥
कर्णिकासर्षपोत्थेनतैलेनगंधसंयुतम् ।
ततःपक्त्वासमुद्धृत्यचणमात्रावटीकृता ॥ ३८ ॥
इन्द्रब्रह्मवटीनामभक्षयेदार्द्रकद्रवैः ।
दशमूलकषायञ्चकणायुक्तंपिबेदनु ॥ ३९
अपस्मारंनिहन्त्याशुयथासूर्योदयेतमः ॥ ४० ॥

इति इन्द्रब्रह्मवटी ।

अर्थ-पारेकी भस्म, अभ्रककीभस्म, लोहा, चाँदी, सोनामाखी, और विष, यह सब समानभागले, कमलकी केशर मिला थूहर, चीता, भांग, अण्ड, वच, निष्पाव, जिमीकन्द, और निर्गुण्डीके रसमें खरल कर गोला बना लेवै, फिर इसगोलेको पकावै, पकती समय मूषाकर्णी, सरसोंका तेल, और गंधक मिला देवै । जब पकजावै तब निकालकर चनेकी समान वटी बना लेवै । इस इन्द्रब्रह्मवटीको अदरखके रसके साथ भक्षण करै । ऊपरसै दशमूलके काढेमें पीपलका चूरन डालकर पीवै । जैसे सूर्योदयसे अंधकार दूर होता है तैसेही इसके सेवनकरनेसे अपस्माररोग दूर होताहै ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९॥४०॥

मानुषास्थिवसाहिंगुलशुनंसर्पकंचुकम् ।
गोधूमंसर्पिषापिष्टाधूपोऽपस्मारनाशनः ॥ ४१ ॥

इति अपस्माराध्यायः ।

अर्थ-मनुष्यकी हड्डी, चर्बी, हींग, लसुन, सांपकी केंचला और गेहूं घीके साथ पीसकर धूपदेनेसै अपस्माररोग दूर होताहै ॥ ४१ ॥

इतिअपस्माराध्यायः समाप्तः।

अथ वातव्याधिचिकित्सामाह।

स्वाद्वम्ललवणस्निग्धैराहारैर्वातरोगिणः।
अभ्यंगस्नेहबस्त्याद्यैःसर्वानेवोपपादयेत् ॥ १ ॥
सर्पिस्तैलवसामज्जपानाभ्यंजनबस्तयः।
स्वेदःस्निग्धोनिवातश्चस्थानंप्रावरणानिच ॥ २ ॥
बृंहणंयच्चतत्सर्वंप्रशस्तंवातरोगिणाम्।
निरामंकेवलंवातमादौस्नेहैरुपाचरेत् ॥ ३ ॥
यूषैर्ग्राम्यांबुजानूपैरसैर्वास्नेहसंस्कृतैः।
कृशरापायसश्चान्नैःसुस्विन्नंस्वेदयेत्ततः ॥ ४ ॥
अभ्यक्तंस्नेहसंयुक्तैःस्वेदनैःशाल्वनादिभिः।
स्नेहाक्तंस्विन्नमङ्गन्तुवक्रंसर्वमथापिवा ॥ ५ ॥
यथेष्टमानमशितुंशक्यतेशुष्कदारुवत्।
स्विन्नस्याशुप्रशाम्यन्तिरुक्स्तम्भःसुग्रहादयः ॥ ६ ॥
स्नेहोमुष्णातिसंशुष्कान्धातून्पुष्टिबलप्रदः।
अतःपुनःपुनःस्नेहैःस्वेदैश्चाप्युपपादयेत् ॥ ७ ॥
अतोपशान्तौमृदुभिःसस्नेहैस्तंविरेचयेत्।
पयसैरण्डतैलंवापाययेद्दोषशोधनम् ॥ ८ ॥
पटोलफलकयूषोवृष्योवातहरोलघु।
वत्यालककृतोयूषःपरंवातविकारनुत् ॥ ९ ॥
उभयत्रैवयूषार्थंमुद्गान्वाकुलत्थान्क्षिपेत् ॥ १० ॥
वात्यालकयूषस्तुमाषकलायाढ्यःप्राय:

प्रचरतिघृतेपरिभज्यसैंधवमनुरूपं
देयमेवमन्यत्रापियूषरसादौ ।
बलायाःपंचमूलस्यदशमूलस्यवारसे ।
अजाशीर्षाम्बुजानूपक्रव्यादपिशितैःपृथक् ॥ ११ ॥
साधयित्वारसान्स्निग्धान्दध्यम्लस्नेहसंस्कृतान् ।
भोजयेद्वातरोगार्त्तंतैलाक्तलवणैर्युतान् ॥ १२ ॥
अम्बुजाःकूर्मादयः । अनूपावराहादयः ।
क्रव्यादादीनांव्याघ्रश्येनगृध्रादीनाम् ।
पंचमूलीबलासिद्धंक्षीरंवातामयेहितम् ॥ १३ ॥
कोलंकुलत्थःसुरदारुरास्नामाषातसीतैलफलानिकुष्ठम् ।
वचाशताह्वायवचूर्णमम्लमुष्णानिवातामयिनांप्रदेहः १४
तैलफलानिसर्षपादीनिअम्लंकांजिकंपेषणार्थम् ।
अनुपवेशवारोष्णप्रदेहोवातनाशनः ॥ १५ ॥
निरस्थिपिशितंपिष्टंस्विन्नंघृतगुडान्वितम् ।
कृष्णामरिचसंयुक्तंवेशवारइतिस्मृतः ॥ १६ ॥

अर्थ–स्वादिष्ट, खट्टे, निमकीन और स्निग्धभोजनकरनेसे, तैलादिका मालिस करनेसे, और स्नेह बस्तिकर्म करानेसे वातरोग शान्त होता है। घृत, तैल, वसा, और मज्जाकापान, अभ्यंजन, बस्तिप्रयोग, स्निग्ध, स्वेद, निर्वातस्थान, प्रावरण (कनात तम्बू) और जितने पुष्टिकारक द्रव्यहैं, सब वातरोगमें हितकारीहैं। केवल निरामवात (आमरहित वात) रोगमें प्रथम स्नेहके द्वारा चिकित्सा करै, तथा ग्राम्य, जलज और अनूपदेशके जीवोंके मांसका यूष बनाकर पीवै, तथा घृतादिकसे मांसको सिद्धकर सेवन करै, और कृशरा (खिचडी)पायस (खीर) और लाल चावलोंके भातके द्वारा तथा स्नेहसंयुक्तमनुष्यको शाल्वनादि स्वेदके द्वारा वारंवार स्वेददेवै, इससे रोगी यथेष्ट भोजन करसक्ताहै, तथा स्तम्भ और पीडा दूर होतीहै। स्नेह और स्वेद यहदोनों सूखीहुई धातुओंको पोषणकर बल और पुष्टिको देवैंहै। इसकारण

वातादि रोगोंमें वारंवार तैलादिको मलकर स्वेदप्रदान करै। और जो इससे वातरोग शान्त न होय तौ स्नेहादिका जुल्लाब देकर वातरोगको शान्त करै। अंडीके तेलको दूधके साथ पीनेसे दस्त होकर कोठा शुद्ध हो जाता है। परवलके फलोंका यूष बनाकर सेवन करनेसे वीर्यकी वृद्धि होतीहै, और वातविकार विनाश होताहै। और यह यूष हलकाहै, वा खिरैंटीका यूष बनाकर पीनेसे वातविकार दूर होताहै, उपरोक्त दोनों यूषोंमें मूंग और कुलथी डालै, प्रायः खिरैंटीके यूषमें उडद और मटर डालते हैं, और यूषादिको घृतमें भून कुछेक सैंधानोंन मिलाकर पीना चाहिये। बकरीके मस्तकका मांस, कच्छपादि जीवोंका मांस, वराहादि पशुओंका मांस, व्याघ्रादि पशुओंका मांस, तथा गृध्रादि पक्षियोंके मांसका यूष, तेल, लवण और खट्टे दहीके साथ पकाकर पीनेसे वातरोग शान्त होताहै। दूधमें पंचमूल और खिरैंटीको पकाकर पीनेसे वातरोग शमन होताहै। बेर, कुलथी, देवदारु, रास्ना, उडद, अलसी, सरसों, कूठ, वच, सौंफ और जौका चून इन सबको कांजीमें पीसकर लेपकरनेसे वातरोग शान्त होताहै। शूकरादिके अस्थिहीन मांसको पीसै, फिर तिसमें घृत, गुड, पीपलका चूर्ण और कालीमिरचोंका चूर्ण मिला वेशवार बना गरम करकै लेपकरनेसे वातरोग शान्त होताहै ॥ १ ॥ २॥३॥४॥५॥६॥७॥८॥९॥१०॥ ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥

वातरोगाश्मरीकुष्ठमहोदरभगन्दराः।
अर्शांसिग्रहणीदुष्टामहारोगाःप्रकीर्त्तिताः ॥ १७ ॥
आध्मानस्तम्भरौक्ष्यस्फुटनविमथनक्षो-
भकम्पप्रतोदाःकण्ठोद्ध्वंसारमादोभ्रमक-
विलपनस्रंसशूलप्रभेदाः ॥ पारुष्यंक-
र्णनादःकेशपरिणतिभ्रंशदृष्टिप्रमोहा-
विस्पन्दोद्घट्टनानिप्लवनमशयनंताडनंपीडनञ्च ॥१८॥
नामोन्नामौविषादोभ्रमपरिसदनंजृम्भणं
रोमहर्षौ विक्षेपाक्षेपशोषग्रहणिशुषि
रताछेदनंवेष्टनंच ॥ वर्णःश्यामोऽरुणोवा

तृडपिचमहतीस्वापविश्लेषसङ्गा
विद्यात्कर्माण्यमूनिप्रकुपितमरुतःस्यात्कषायोरसश्च १९
कटिविकटियकृत्क्रोमपार्श्वांघ्रिपृष्ठे
जठरवृषणवक्षःकुक्षिस्कन्धांसकेषु ।
प्रसरतिगुरुशूलंरात्रिनिद्राविपर्य्य-
स्त्ववातिपवनविकारालक्षणैर्लक्षणीयाः ॥ २० ॥

अर्थ-वातरोग, पथरी, कोढ़, उदर, भगन्दर, बवासीर और संग्रहणी यह सब महारोग कहे जाते है। वातके कुपितहोनेसे आध्मान, स्तम्भ, रौक्ष्य, स्फुटन, विमथन, क्षोभ, कम्प, प्रतोद, कंठके ऊर्ध्वभागमें श्रम, विलाप, स्रंसन, शूल, पारुष्य, कर्णनाद, केशपकता, भ्रंशदृष्टि, मोह, स्पन्दन, उद्वट्टन, ग्लानि, अनिद्रा, ताडन, पीडन, और विक्षेपादि विकारोंकी उत्पत्ति होती है ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥

चित्रकेन्द्रयवापाठाकटुकातिविषाभयाः ।
महाव्याधिप्रशमनोयोगःषड्धरणःस्मृतः ॥ २१ ॥
हरीतकीवचारास्नासैन्धवंसाम्लवेतसम् ।
घृतमात्रासमायुक्तमपतंत्रकनाशनम् ॥ २२ ॥

अर्थ-चीता, इन्द्रजौ, पाढ, कुटकी, अतीस, और हरड, इन सब को एकत्रकर सेवनकरै तौ सर्वप्रकारकी वातव्याधि दूर होतीहै। इसको षड्धरण योग कहतेहैं। हरड, वच, रायसन, सैंधानोंन, और अमलवेंत, इन सबको पीस घीके साथ सेवनकरनेसे अपतंत्रक वातरोग शान्त होताहै ॥ २१ ॥ २२ ॥

बिभीतकविषामुस्तंशुण्ठींभार्ङ्गींचपिप्पलीम् ।
कृत्वाचूर्णानिमद्येनपीतान्युष्णोदकेनवा ॥ २३ ॥
नाशयन्तिनृणांक्षिप्रंहिक्काश्वासापतंत्रकम् ॥ २४ ॥

इति बिभीतकादिचूर्णम् ।

अर्थ-बहेड़ा, अतीस, नागरमोथा, सोंठ, भारंगी और पीपल, इनका

चूर्ण बनाकर मदिरा अथवा गरमजलके साथ सेवनकरनेसे-हिक्का, श्वास और अपतन्त्रकवातरोग विनष्ट होताहै ॥ २३ ॥ २४ ॥

तैलद्रोण्यान्तुशमनंधनुस्तम्भेपरंहितम्।
पत्रोत्थाम्बुपरस्तैलद्रोण्यःस्युरवगाहने ॥ २५ ॥
पत्रोत्थाम्बुप्रसारण्यश्वगन्धादीनांपत्ररसः।
पक्षाघातिनमक्षीणंस्निग्धस्विन्नंविरेचनम् ॥ २६ ॥
बस्तिभिर्योजयेत्पित्तकफोद्रेकेविरेचयेत्।
माषात्मगुप्तैरण्डवाट्यालकश्टृतंजलम् ॥ २७ ॥
हिंगुसैन्धवसंयुक्तंपक्षाघातनिवारणम् ॥ २८ ॥

अर्थ-पसरन और असगन्ध आदिके पत्तोंका रस, दूध और तैलसे भरीहुई द्रोणीमें डूबनेसे धनुस्तंभरोग शान्त होताहै। अक्षीण, स्निग्ध, स्विन्न, पक्षाघात रोगीकै पित्तकफकी अधिकता होय तो बस्ति द्वारा विरेचन देवै। उड़द, कौंछ, अण्ड और खिरैंटीका क्वाथ बना तिसमें, हींग और सैंधानोनका चूरन डालके पीनेसे पक्षाघातरोग दूर होताहै ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥

माषबलाशूकशिम्बीकत्तृणरास्नाश्वगन्धोरुबूकाणाम्।
क्वाथोनश्यतिपीतोवासत्रंलवणान्वितःकोष्णः ॥ २९ ॥
अपहरतिपक्षवातंमन्यास्तम्भंसकलकर्णनादरुजाम् ॥
दुर्जयमर्दितवातंसप्ताहाज्जयतिचावश्यम् ॥ ३० ॥

इति माषबलादिः।

अर्थ-उड़द, खिरैटी, कौंछ, गंधतृण, रास्ना, असगन्ध और अंड, इनका क्वाथ बना हींग और सैन्धानोन मिला, नासिकाके द्वारा पान करनेसे पक्षाघात, मन्यास्तम्भ, खाँसी, कर्णनाद और दुर्जय अर्दित वातरोग सात दिनमें दूर होताहै ॥ २९ ॥ ३० ॥

रास्नायास्तुपलंचैकंकर्षान्पंचचगुग्गुलोः।
सर्पिषावटिकांकृत्वाखादेद्धन्तिचगृध्रसीम् ॥ ३१ ॥

इति रास्नागुग्गुलुः।

अर्थ-चार तोले रास्ना और पांचतोले गूगल, इन दोनोंको घीमें मिलाकर गोली बना खानेसे-गृध्रसी वातरोग दूर होताहै ॥ ३१ ॥

दशमूलीकषायेणपिबेद्वानागराम्भसा ।
कटीशूलेषुसर्वेषुतैलमेरण्डसंभवम् ॥ ३२ ॥
दशमूलस्यनिर्यूहोहिंगुपुष्करसंयुतः ।
शमयेत्परिपीतस्तुवातंझिंझिनिसंज्ञितम् ॥ ३३ ॥

अर्थ-अंडीके तेलको दशमूलके क्वाथके साथ अथवा सोंठके क्वाथके साथ पीनेसे कटीशूल दूर होताहै। दशमूलके काढ़ेमें हींग और पोहकर मूलका चूरन डालकर पीनेसे-झिनझिन वात शमन होतीहै ॥३२॥३३॥

पलमर्द्धपलंवापिरसोनस्यसुकुट्टितम् ।
हिंगुजीरकसिन्धूथैःसौवर्चलकटुत्रयैः ॥ ३४ ॥
चूर्णितैर्माषिकोन्मानैरवचूर्ण्यविलोडितम् ।
यथाग्निभक्षितंप्रातारुबुक्काथानुपानतः ॥ ३५ ॥
दिनेदिनेप्रयोक्तव्यंमासमेकंनिरन्तरम् ।
वातरोगान्निहन्त्याशुचार्दितंसापतानकम् ॥ ३६ ॥
एकाङ्गरोगिणेचैवतथासर्वाङ्गरोगिणे ।
ऊरुस्तम्भेचगृध्रस्यांकृमिदोषेविशेषतः ॥ ३७ ॥
कटिपृष्ठामयंहन्यादुदरञ्चविशेषतः ॥ ३८ ॥
(वाशब्देनसार्द्धपलमित्यर्थः ।)

इति स्वल्परसोनपिण्डः ।

अर्थ-कुटाहुआ लसुन चार या दो तोले, हींग, जीरा, सैंधानोन, कालानोन, और त्रिकुटा, इन प्रत्येकका चूर्ण एकएक मासा लेवै, सबको अच्छेप्रकार मिला अग्निका बलाबल विचारकर सेवन करै, और ऊपरसे अण्डका काढ़ा पीवै, इसप्रकार प्रतिदिन पीवै तो एक महीनेमें--वात रोग, अर्दितवात, अपतानक, एकांगवात, सर्वांगवात, ऊरुस्तम्भ, गृध्रसीवात, कृमिरोग, कटिरोग, और पृष्ठरोग, दूर होताहै ॥ ३४ ॥ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥

आहाश्वगन्धाहवुषागुडूचीशतावरीगोक्षुरवृद्धदारकम् ।
रास्नाशताहासशठीयवानीसनागराश्चेतिसमैश्चचूर्णम् ॥३९॥
तुल्यंभवेत्कौशिकमत्रमध्येदेयंतथासर्पिरथार्द्धभागम् ।
अर्द्धाक्षमात्रंत्वथतत्प्रयोगात्कृतानुपानंसुरयाथयूषैः॥४०॥
मद्येनवाकोष्णजलेनवाथक्षीरेणवामांसरसेनवापि ।
कटिग्रहेगृध्रसिबाहुपृष्ठेहनुग्रहेजानुनिपादयुग्मे ॥ ४१ ॥
सन्धिस्थितेचास्थिगतेचवातेमज्जास्थितेस्नायुगतेचकुष्ठे ।
रोगाञ्जयेदान्त्रकफानुविद्धान्वातोरितान्हृद्ग्रहयोनिदोषान्॥
भग्नास्थिविद्धेषुचखंजवातेत्रयोदशांगंप्रवदन्तिधीराः॥४३॥

इति त्रयोदशांगगुग्गुलुः ।

अर्थ-आहा (एकप्रकारका वणिकद्रव्य) असगन्ध, हाऊवेर, गिलोय, सतावर, विधारा, सौंफ, कचूर, अजवायन, और सोंठ, यह सब समान भाग, गुगल सबकी बराबर और सबसे आधा भाग घी मिलावै, पश्चात् इसका एक तोलाभर सुरा, यूष, मदिरा, किंचित् गरमजल, गरम दूध और मांसरस, इनमेंसे किसी एक अनुपानके साथ सेवन करनेसे कटिग्रह, गृध्रसी, बाहुग्रह, पृष्ठग्रह, जानुग्रह, सन्धिवात, अस्थिवात, मज्जाश्रितवात, स्नायुगतवात, कुष्ठ, कफरोग, वातविकार, हृद्ग्रह, योनिदोष, अस्थिभग्न, विद्ध, और खंजवात दूर होतीहै। इसको त्रयोदशांगगूगल कहतेहैं ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥

आजंचर्मविनिर्मुक्तंत्यक्तशृंगखुरादिकम् ।
पंचमूलीद्वयञ्चैवजलद्रोणेविपाचयेत् ॥ ४४ ॥
तेनपादावशेषेणघृतंप्रस्थंविपाचयेत् ।
जीवनीयैःसयष्ट्याह्वैःक्षीरंचैवशतावरीम् ॥ ४५ ॥
छागलाद्यमिदंनाम्नासर्ववातविकारनुत् ।
अर्दितेकर्णशूलेचबाधिर्य्येमूकमिन्मिने ॥ ४६ ॥
जडगद्गदपंगूनांखञ्जेगृध्रसिकुब्जयोः ।

अपतानेऽपतन्त्रेचसर्पिरेतत्प्रशस्यते ॥ ४७ ॥

इति छागलाद्यंघृतम् ।

अर्थ—चर्म, शींग और खुर आदिसे हीन बकरीके ५० पंचास पल मांसको ३२ सेर जलमें पकावै जब आठसेर शेष रहै तब उतारले फिर पंचास पल दशमूलको ३२ बत्तीस सेर जलमें पकावै, जब चौथा भाग अर्थात् आठसेर जल बाकी रहै तब उतारले, और दूध चारसेर, सतावरका रस ४ चार सेर, गायका घी चारसेर, तथा कल्कके लिये जीवनीयदशक और मुलैठी, यह सब ६ सेर लेवै, पश्चात् विधिपूर्वक घृतको बनावै । इस घृतको सेवनकरनेसे— सर्वप्रकारके वातरोग, अर्दितवात, कर्णशूल, बधिरता, गूंगापन, मिनमिन वात, जड़ता, गद्गदवात, पंगला वात, खंजवात, गृध्रसीवात, कुब्जक वात, अपतानक वात और अपतंत्र वातरोग दूर होताहै, इसको छागलाद्यघृत कहतेहैं ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥

बलामूलकषायस्यदशमूलीकृतस्यच ।
यवकोलकुलत्थानांक्काथस्यपयसस्तथा ॥ ४८ ॥
अष्टावष्टौशुभाभागास्तैलादेकस्तदेकतः ।
कल्कीकृत्यपचेद्धीमान्काकोल्यादिससैन्धवम् ॥ ४९ ॥
तथागुरुसर्जरसंसरलंदेवदारुच ।
मंजिष्ठाचन्दनंकुष्ठमेलातगरपादिकम् ॥ ५० ॥
मांसीशैलेयकंपत्रंतगरंशारिवांवचाम् ।
शतावरीमश्वगंधांशतपुष्पांपुनर्नवाम् ॥ ५१ ॥
तत्सिद्धंस्थापयेत्कुम्भेसुवर्णादौसुरक्षिते ।
राजार्हणमिदंतैलंसर्ववाताविकारनुत् ॥ ५२ ॥
सूतिकारोगशमनंगर्भदंशुक्रवर्द्धनम् ।
गुल्माग्निमन्दहिक्कार्त्तिश्वासकासान्त्रवृद्धिनुत् ॥ ५३ ॥
भग्नेमर्मगतेग्रन्थेसर्वथैवोपयोजयेत् ।

प्रत्यग्वधात्तः पुरुषोभवेच्चस्थिरयौवनः ॥ ५४ ॥
(यवकोलकुलत्थानांक्काथः)
(बलादीनांतैलाष्टभागापेक्षयाद्वात्रिंशद्गुणोद्रवः)
(बलाक्काथोऽष्टगुणः । दशमूलक्काथोऽष्टगुणः ।
यवादीनांक्काथोऽष्टगुणः । दुग्धमष्टगुणम् ।
काकोल्याद्यष्टवर्गः ।)

इति बृहद्बलातैलम् ।

अर्थ–तिलका तेल आठसेर, खिरैंटीका क्काथ आठसेर, दशमूलका क्काथ आठसेर, जो, बेर और कुलथीका क्काथ आठसेर. दूध आठसेर, और कल्कके लिये काकोल्यादि द्रव्य, सैंधानोन, अगर, राल, धूप सरलदवदारु, मजीठ, लालचन्दन, कूठ, इलायची, बालछड़, तगर, भूरि, छरीला, तेजपात, तगरपुष्प, अनन्तमूल, वच, सतावर, असगंध, सोंफ और पुनर्नवा, यह प्रत्येक समान भाग और सब दोसेर लेवै, सबको मिला अच्छेप्रकारसे सिद्ध कर सुवर्णादिके कुम्भमें भरकै रखदेवै। यह बृहद्बलातेल राजाओंके सेवने योग्य है । यह तेल– सर्वप्रकारके वातविकार, सूतिका रोग, गुल्म, मन्दाग्नि, हिक्कारोग, श्वास, खाँसी, अन्त्रवृद्धि, भग्नरोग, और मर्मगत ग्रन्थि इन रोगोंको दूर करैहै। गर्भजनक, वीर्यवर्द्धक, और वृद्धपुरुषोंको फिर यौवनयुक्त करदेताहै ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥

शालपर्णीपृश्निपर्णीबलागोक्षुरतण्डुला ।
एरण्डस्यचमूलानिबृहत्योःपूतिकस्यच ॥ ५५ ॥
शतावरीसहचरंपचेदेतैःपलोन्मितैः ।
तैलप्रस्थंपयोदत्वागव्यंवाजंचतुर्गुणम् ॥ ५६ ॥
वातार्त्तानरनागाश्वाःपीत्वास्युर्निश्चयंदृढाः ।
हृत्पार्श्वशूलवातेषुगलगंडार्दितेक्षये ॥ ५७ ॥
सशर्कराश्मरीपाण्डुकामलार्द्धावभेदके ।
क्षीणेन्द्रियेऽन्त्रवृद्धौचजरयाजर्जरेहितम् ॥ ५८ ॥

स्त्रीणामश्वतरीणान्तुगर्भस्थितिकरंपरम् ।
एतदङ्गवरन्तैलंविष्णुनापरिकल्पितम् ॥ ५९ ॥

इतिविष्णुतैलम् ।

अर्थ-तिलका तेल चारसेर, गाय या बकरीका दूध १६ सोलहसेर, और कल्कके लिये शालपर्णी, पृश्निपर्णी, खिरैंटी, गोखरू, गंगेरन, अंडकीजड, बडी कटाई, छोटी कटेरी, पूतिकरञ्ज, सतावर और पियावासा यह सब एकसेर लेवे, सबको विधिपूर्वक मिला तेलको सिद्धकरै। यह विष्णुतैल वातसै पीड़ितमनुष्य, हाथी और घोडोंके रोगोंको शान्त करकै शरीरको दृढ करदेताहै। हृदयका शूल, पसलीका दर्द, वातरोग, गलगण्ड, अर्दितवात, क्षयरोग,शर्करा, पथरी, पाण्डु, कामला, अर्द्धावभेदक, इन्द्रियोंकी क्षीणता, अन्त्रवृद्धि, जरा और जर्जरविकारको दूर करै है। स्त्री और खिच्चरियोंके गर्भकी स्थिति करनेवालाहै । यह अंगवर तेल विष्णुने निर्म्माण कियाहैं ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥५९॥

छागलक्षणंयथा ।

नातिबालानसूताचनवृद्धानचरोगिणी ।
मध्यस्थातरुणीग्राह्याकृष्णावृष्याविशेषतः ॥ ६० ॥
छागमांसंतुलांगृह्यदशमूल्यास्तथाशतम् ।
अश्वगन्धापलशतंवाट्यालकशतन्तथा ॥ ६१ ॥
घृताढकंपचेत्तेनचतुर्भागावशेषितम् ।
क्षीरंस्नेहसमन्दद्याच्छतावर्यारसस्तथा ॥ ६२ ॥
ताम्रपात्रेदृढेचैवशनैर्मृद्वग्निनापचेत् ।
अस्यौषधस्यकल्कस्यप्रत्येकंशुक्तिसम्मितम् ॥ ६३ ॥
जीवन्तीमधुकंद्राक्षाकाकोलीनीलमुत्पलम् ।
मुस्तंसचन्दनंरास्नापर्णिनीद्वयशारिवे ॥ ६४ ॥
मेदेद्वेचतथाकुष्ठंजीवकर्षभकौसठी ।
दार्वीप्रियङ्गुत्रिफलानंततालीसपद्मकौ ॥ ६५ ॥
एलापत्रंवरीनागजातीकुसुमधान्यकम् ।

माञ्जिष्ठादाडिमंदारुएलावालुकरेणुकम् ॥ ६६ ॥
विडंगंजीरकंचैवपेषयित्वाविनिक्षिपेत् ।
वस्त्रपूतेचशीतेचशर्कराप्रस्थसंयुतम् ॥ ६७ ॥
निधापयेत्स्निग्धभाण्डेमर्दयेद्दृढभाजने ।
अस्यौषधस्यसिद्धस्यशृणुवीर्यमतःपरम् ॥ ६८ ॥
देवदेवंनमस्कृत्यसंपूज्यगणनायकम् ।
पिबेत्पाणितलंतत्रवारिवीक्ष्यानुपानकम् ॥ ६९ ॥
सर्ववातविकारेषुअपस्मारेविशेषतः ।
सोन्मादेपक्षघातेचआध्मानेकोष्ठविड्ग्रहे ॥ ७० ॥
कर्णरोगेशिरोरोगेबाधिर्येसापतन्त्रके ।
भूतोन्मादेचगृध्रस्यांसोद्गारेचाम्लपित्तजे ॥ ७१ ॥
पार्श्वशूलेतथाशूलेबाह्यायामार्दितेतथा ।
क्रोष्टुशीर्षेतथाखंजेकुब्जेगद्गदमिन्मिने ॥ ७२ ॥
अपतानेऽन्तरायामेरक्तपित्तेतथोर्द्धगे ।
आनाहेऽर्शोविकारेषुचातुर्थकज्वरेषुच ॥ ७३ ॥
हनुग्रहेतथाशोषेक्षीणेचैवाववाहुके ।
दण्डापतानके भग्नेदाहेचाक्षेपकेतथा ॥ ७४ ॥
जीर्णज्वरेविषेकुष्ठेशेफस्तम्भेमदात्यये ।
आढ्यवातेऽग्निमांद्येचवातरक्तगदेषुच ॥ ७५ ॥
एकाङ्गरोगिणेचैवतथासर्वांगरोगिणे ।
हस्तकम्पेशिरःकम्पेजिह्वास्तम्भेजडेगद्दे ॥ ७६ ॥
क्षीणेन्द्रियेनष्टशुक्रेशुक्रानिःसरणेतथा ।
स्त्रीणांवातहतेरक्तेप्रदरेसर्वसम्भवे ॥ ७७ ॥
योनिमध्यगतेवातेयोनिशूलेचशस्यते ।
क्षीणगर्भेनष्टगर्भेमूढगर्भेविशेषतः ॥ ७८ ॥

अर्द्धावभेदकेचैवातिमिरेवातपंगुके।
नक्तान्ध्येचाश्रुपातेचपटोलेचाक्षिस्पन्दने॥ ७९॥
एकाङ्गस्पन्दनेचैवतथासर्वांगस्यन्दने।
नगादिपतितेवातेस्त्रीणामप्राप्तिहेतुके॥ ८०॥
आभिचारिकदोषेचधनसन्तापहेतुके।
येवातसम्भवारोगायेचान्येपित्तसम्भवाः॥ ८१॥
शिरोमध्यगतायेचजंघापार्श्वेषुसंस्थिताः।
कुक्षिबस्तिगतायेचयेचान्येहृदिसंस्थिताः॥ ८२॥
मातृग्रहाभिभूतेनाशिशुर्यश्चविशुष्यति।
प्रक्षीणबलमांसश्चनवत्र्मगहनेगतिः॥ ८३॥
स्तन्यंशुष्यतियस्याश्चयावत्स्तन्यंनाविंदाति।
घृतेनानेनसिद्धयन्तिवज्रमुक्तिरिवासुरान्॥ ८४॥
रसायनंवह्निबलप्रदश्चवपुःप्रकर्षंविदधातिरूपम्।
गजेंद्रतुल्येनसमानतेजाश्चिरायुषंपुत्रशतंकरोति॥८५॥
स्त्रीणांशतंगच्छतिसातिरेकंनयातितृप्तिंसबलःसमाङ्गः।
अपुत्रिणीपुत्रशतंकरोतिशतायुवत्सामृतपुत्रवत्यः ८६
महद्घृतंनामतुछागलाद्यंविनिर्मितंवायुनिषूदनश्च।
शिवंशुभंरोगभयापहश्चचकारहारीतमुनिर्वरिष्ठः॥८७॥

अर्थ–न अत्यंत बालकहो, न तत्काल ब्याही हुई हो, न वृद्धहो, और न रोगी हो, मध्यम अवस्थावाली, तरुण और कृष्णवर्ण हो ऐसे बकरी बृष्य होतीहै। ऐसी बकरीका मांस १०० एकसौ पल, दशमूल एकसौ पल, असगंध एकसौ पल, और खिरेंटी एकसौ पल लेवै, प्रत्येक को ५१२ पल जलमें पकावै जब १२८ एकसौ अट्ठाईस पल जल शेष रहै तब उतारले, इसप्रकार सबका चतुर्थांश क्वाथ बनावै, फिर सब क्वाथोंको एकत्र करलेवै, पश्चात् इसमें १२८ एकसौ अट्ठाईस पल गायका घी और एकसौ अट्ठाईस पल सतावरका रस मिलाकै तांबेके

बासनमें मन्दमन्द अग्निसे पकावै, और पकते समय जीवन्ती महुआ, दाख, काकोली, नीलकमल, नागरमोथा, चन्दन, रसायन शालिपर्णी, पृश्निपर्णी, सारिवा, अनन्तमूल, मेदा, महामेदा, कूट, जीवक, ऋषभक, कचूर, दारुहलदी, फूलप्रियंगु, त्रिफला, तगर, तालीसपत्र, पद्माख, इलायची, तेजपात, रुतावर, नागकेशर, चमेलीके फूल, धनिया, मजीठ, अनार, देवदारु, एलुआ, रेणुका, वायविडंग, और जीरा, यह प्रत्येक चार चार तोले लेकर कल्क बना छोड देवै। जब पककर घृत शीतल होजाय तब वस्त्रमें छानकर ६४ तोले बूरा मिलाके चिकणे बासनमें भरकर रखदेवै, फिर देवाधिदेव गणेशजीको नमस्कार और पूजाकर प्रतिदिन एक तोलाभर पीवै, और इसके ऊपर रोगानुसार अनुपान करै तो यह घृत सर्वप्रकारके वातविकार, अपस्मार, उन्माद, पक्षाघात, आध्मान, कोष्ठरोग, विड्ग्रह, कर्णरोग, शिरोरोग, बधिरता, अपतन्त्रक, भूतोन्माद, गृध्रसीवात, अम्लपित्तोद्भव उद्गाररोग, पार्श्वशूल, शूल, बाह्यायाम, अर्दितरोग, क्रोष्टुशीर्ष, वात, खंजवात, कुब्जवात गद्गदवात, मिन्मिन्, अपतानक, अंतरायामवात, अधोगतवायु, रक्तपित्त, आनाह, अर्शरोग, चातुर्थिकज्वर, हनुग्रह, शोष, क्षीणता, अवबाहुकरोग, दण्डापतानक वात, भ्रमरोग, दाह, आक्षेपक वात, जीर्णज्वर, विषविकार, कोढ, शेफस्तम्भ (लिंगरोग विशेष) मदात्यय, आढ्यवात, मन्दाग्नि, वातरक्तरोग, एकांगवात, सर्वांगवात, हस्तकम्प, शिरकम्प, जिह्वास्तम्भ, जड़ता, इन्द्रियोंकी क्षीणता, वीर्यकी क्षीणता, शुक्रनिःसरण, स्त्रियोंके शरीरमें वातसे हताहुआ रुधिरविकार, सर्वप्रकारके प्रदररोग, योनिगतवात, योनिशूल, क्षीणगर्भ, नष्टगर्भ, मूढगर्भ, अर्द्धविभेदक मस्तकरोग, तिमिररोग, पंगुवात, रतौंधा, अश्रुपात रोग, पटलगतनेत्ररोग, नेत्रस्पन्दनरोग, एकांगस्पन्दन, सर्वांगस्पन्दन, वृक्षके ऊपरसे पतित होनेसे उत्पन्न हुई वात, स्त्रियोंकी प्राप्तिके अभावसे उत्पन्न हुई वात, अभिचारिक दोष, धनके सन्तापसे उत्पन्न हुई वात, सर्वप्रकारके वातसे उत्पन्नहोनेवाले रोग, सर्वप्रकारके पित्तसे उत्पन्न होनेवाले रोग, सर्व प्रकारके शिरोरोग, जंघाके रोग, पसलियोंके रोग, कुक्षिरोग, बस्तिरोग, हृदयरोग, मातृग्रहादिसे बालका सूखजाना, बल और मांसकी क्षीणता, मार्गचलनेकी शक्तिका न होना, स्तनोंसे दूधका सूखजाना और स्तनोंमें दूधका उत्पन्न नहीं होना, यह सब रोग

दूर होजावैं । जैसै वज्रसै राक्षस दूर होवै । यह घृत-परमोत्तम रसायन, अग्निप्रदीपक, बलवर्द्धक, शरीरको सुन्दरकरनेवाला, गजेन्द्रकी समान तेजवान् और चिरायुष १०० सौ पुत्रोंको उत्पन्न करनेवाला, इसको सेवनकरनेवाला मनुष्य सौ स्त्रियोंके साथभी रमण करै तौभी तृप्त नहीं होता, अपुत्र स्त्रियोंकै सैंकडों पुत्रोंको उत्पन्न करनेवाला, जिसके पुत्र नहीं जीते हौं और जिसकी अवस्था सौ १०० वर्षकी होय, उनको भी यह घृत-पुत्रवती करदेताहै, इसको बृहत् छागलाद्य घृत कहतेहैं ॥ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥६९॥ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९॥ ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥

बिल्वाग्निमन्थश्योनाकपाटलापारिभद्रकः ।
प्रसारण्यश्वगंधाचबृहतीकण्टकारिका ॥ ८८ ॥
बलाचातिबलाचैवश्वदंष्ट्रासपुनर्नवा ।
एषांदशपलान्भागांश्चतुर्द्रोणेऽम्भसःपचेत् ॥ ८९ ॥
पादशेषंपरिस्राव्यतैलपात्रंप्रदापयेत् ।
शतपुष्पादेवदारुमांसीशैलेयकंवचा ॥ ९० ॥
चन्दनंतगरंकुष्ठमेलापर्णीचतुष्टयम् ।
रास्नातुरगगंधाचसैन्धवंसपुनर्नवम् ॥ ९१ ॥
एषांद्विपलिकान्भागान्पेषयित्वाविनिक्षिपेत् ।
शतावरीरसंचैवतैलतुल्यंप्रदापयेत् ॥ ९२ ॥
आजंवायदिवागव्यंक्षीरंदद्याच्चतुर्गुणम् ।
पानेबस्तौतथाभ्यंगेभोज्येचैवप्रयोजितम् ॥ ९३ ॥
अश्वोवावातसंभग्नोगजोवायदिवानरः ।
पंगुलःपीठसर्पीचतैलेनानेनासिध्यति ॥ ९४ ॥
अधोभागेचयेवाताःशिरोमध्यगताश्चये ।
मन्यास्तम्भेहनुस्तम्भेदन्तरोगेगलग्रहे ॥ ९५ ॥

यस्यशुध्यतिचैकांगंगतिर्यस्यचविह्वला।
क्षीणेन्द्रियाःक्षीणशुक्राज्वरक्षीणाश्चयेनराः॥ ९६॥
बधिरालल्लजिह्वाश्चमन्दमेधसएवच।
अल्पप्रजाचयानारीयाचगर्भनविन्दति॥ ९७॥
वातात्कौवृषणौयेषामन्त्रवृद्धिश्चदारुणा।
एतत्तैलवरंतेषांनाम्नानारायणःस्मृतः॥ ८९॥

इतिनारायणंतैलम्।

अर्थ—बेलगिरी, अरणी, शोनापाठा, पाटल, पारिभद्र, पसरन, असगंध, कटाई, कटेरी, खिरैटी, कंधी, गोखरू, और पुनर्नवा, यह प्रत्येक चालीस चालीस तोले लेकर चार द्रोण जलमें पकावै, जब एक द्रोण जल शेषरहै तब आठसेर तेल, सौंफ, देवदारु, वालछड भूरिछरीला, वच, लालचन्दन, तगर, कूठ, इलायची, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, शालिपर्णी, पृश्निपर्णी, रायसन, असगंध, सैंधानोन और पुनर्नवा, यह प्रत्येक पिसेहुए आठ आठ तोले, सतावरका रस आठ शेर और बकरी या गायका दूध ३२ सेर मिलाके पकावै। इसको पीनेसैं, इसके द्वारा बस्तिकर्म करनेसे, मालिस करनेसे और खानेसै वातसे पीडित अश्व, हाथी और मनुष्य रोगसै विमुक्त होजाताहै। इसको सेवनकरनेवाले पंगु और पीठसै चलनेवाले मनुष्यभी आरोग्य होजातेहैं। तथा अधोभागगत वायु, शिरोगतवायु, मन्यास्तम्भ, हनुस्तम्भ, दन्तरोग, गलग्रह, एकांगशोष, मार्गमें गमन करनेकी शक्ति का न होना, इन सबको दूर करैहै। जिन मनुष्योंकी इन्द्रियैं क्षीणहोगईहैं, जो वीर्य क्षीणहै और जो ज्वरसे क्षीण होगयेहै, बधिरतारोगवाले, जिह्वारोगवाले, जो मन्दबुद्धिवालेहैं उन मनुष्योंको, तथा जिन स्त्रियोंकी सन्तान नहीं जीती, और जिनके गर्भ नहीं रहता उन स्त्रियोंको वातसै पीड़ित अंडकोशरोगवाले मनुष्य और अंत्रवृद्धि रोगवाले मनुष्योंको यह नारायणनामवाला तेल परम श्रेष्ठहै॥ ८८॥ ८९॥ ९०॥ ॥ ९१॥ ९२॥ ९३॥ ९४॥ ९५॥ ९६॥ ९७॥ ९८॥

जलधराश्वगंधाजाजीजीवकर्षभकौसठी।
काकोलीक्षीरकाकोलीजीवन्तीमधुयष्टिका॥ ९९॥

मधुरिकादेवदारुपद्मकाष्ठंचशैलजम् ।
मांसीएलात्वचंकुष्ठंवचाशैलजचन्दनम् ॥ १०० ॥
मंजिष्ठामृगनाभिश्चश्वेतचन्दनकुंकुमम् ।
पद्मिनीकुंदकोटिश्चग्रंथिकश्चनखीतथा ॥ १०१ ॥
एतेषांपलिकैर्भागैस्तैलञ्चापिसहाढकम् ।
शतावरीरससमंदुग्धञ्चापिसमम्भवेत् ॥ १०२ ॥
एतत्संभृत्यसम्भाव्यशनैर्मृद्वग्निनापचेत् ।
विष्णुतैलवरंश्रेष्ठंसर्ववातविकारनुत् ॥ १०३ ॥
ऊर्द्धवातेतथावातेह्यंगविग्रहएवच ।
शिरोमध्यगतेवातेमन्यास्तम्भेशिरोग्रहे ॥ १०४ ॥
यस्यशुष्यतिवैकाङ्गंगतिर्यस्यचविह्वला ।
येवातप्रभवारोगायेचान्येपित्तसम्भवाः ॥ १०५ ॥
सर्वास्तान्नाशयत्याशुतमःसूर्योदयेयथा ॥ १०६ ॥

इति बृहद्विष्णुतैलम् ।

अर्थ-नागरमोथा, असगंध, जीरा, जीवक, ऋषभक,कचूर, काकोली, क्षीरकाकोली, जीवन्ती, मुलैंठी, सौंफ, देवदारु, पद्माख भूरिछरीला, बालछड़, इलायची, दालनी, कूठ, वच, शिलारस, लालचन्दन, मजीठ, कस्तूरी, सफेदचंदन, केसर, कमलिनी, कुन्दुरु (वं कुन्दुरु खोटी) गठिवन और नखी यह प्रत्येक चारचार तोले लेकर कल्क बनावै, फिर दोसौ छप्पन तोले सतावरका रस और दोसौ छप्पनतोले गायका दूध लेवै, इन सबको और उपरोक्त औषधियोंके कल्कको विधिपूर्वक मिलाकै धीरै धीरै मन्दमन्द आगसै पकावै, जब सिद्ध होजाय तब उत्तम वासनमें भरकै रखदेवै । यह बृहद्विष्णुतैल-अत्यंत श्रेष्ठ, तथा सर्वप्रकारके वात विकार, ऊर्द्धवात, अधोवात, व्यंग, विग्रह, शिरोगतवात, मन्यास्तम्भ, शिरोग्रह, एक अंगका सूखजाना, मार्ग चलतेसमय अत्यन्त दुःख होना, सर्वप्रकारके वातरोग और सर्वप्रकारके पित्त, इन सबको यह तेल दूर करैहै, जैसे सूर्योदय अंधकारको दूर करैहै ॥ ९९ ॥ १०० ॥ १०१ ॥ ॥ १०२ ॥ १०३ ॥ १०४ ॥ १०५ ॥ १०६ ॥

बिल्वाश्वगंधाबृहतीश्वदंष्ट्रास्योनाकवाटचालकपारिभद्रम्।
क्षुद्राकठिल्लातिबलाग्निमन्थंमूलानिचैषांशरणीयुतानाम् ॥
मूलंविदध्यादथपाटलीनांसपादप्रस्थंविधिनोद्धृतानाम्।
द्रोणैरपामष्टभिरेवपक्त्वापादावशेषेणरसेनतेन ॥१०८॥
तैलाढकाभ्यांसममेवदुग्धमाजंविदध्यादथवापिगव्यम्।
एकत्रसम्यग्विपचेत्सुबुद्धिर्दद्याद्रसञ्चैवशतावरीणाम् १०९॥
तैलेनतुल्यंपुनरेवतत्ररास्नाश्वगंधामिसिदारुकुष्ठम्।
पर्णीचतुष्कागुरुकेशराणिसिन्धूत्थमांसीरजनीद्वयंच ११०॥
शैलेयकंचन्दनपुष्कराणिएलासयष्टीतगराब्दपत्रम्।
भृंगाष्टवर्गाम्बुवचापलाशंवृश्चीरस्थौणेयकचोरकाख्यम् १११
एतैःसमस्तैर्द्विपलप्रमाणैरालोड्यसर्वंविधिनापिपक्वम्।
नारायणंनाममहच्चतैलंकर्पूरकाश्मीरमृगाण्डजानाम् ११२॥
दद्यात्सुगन्धायवदन्तिकेचित्प्रस्वेददौर्गन्ध्यनिवारणाय।
चूर्णीकृतानांद्विपलप्रमाणंसर्वैःप्रकारैर्विधिवत्प्रयोज्यम् ११३
आश्वेतपुंसांपवनार्दितानांचैकाङ्गशोषार्दितवेपनानाम्।
येपंगवःपीठविसर्पिणश्चत्राधिर्येशुक्रक्षयपीडिताश्च ॥११४॥
मन्याहनुस्तम्भशिरोगदार्त्तायुक्तामयान्तेबलवर्णयुक्ताः।
संसेव्यतैलंसहसाभवन्तिवन्ध्याचनारीलभतेसुपुत्रम् ११५॥
देवोपमंसर्वगुणोपपन्नंसुमेधसंश्रीविजयान्वितंच।
शाखागतेकोष्ठगतेचवातेवृद्धौविधेयंपवनांत्रजायाम्॥११६॥
जिह्वानिलेदन्तगतेचशूलेवातापहंतैलवरंप्रदिष्टम्।
उन्मादकुब्जज्वरकर्षितानांनातःपरंतैलवरंप्रदिष्टम्॥११७॥
वातामयेवैद्यवरेणयोज्यमायुःप्रकर्षंप्रमदाप्रियत्वम्।
प्राप्नोतिलक्ष्मींविजयञ्चनित्यंरक्षांसिदुष्टानिनिहन्तिनूनम् ॥

तैलोपसेवीजरयाविमुक्तोजीर्णज्वरीचाशुभरेणुरेव।
देवासुरेयुद्धवरेसमीक्ष्यस्नायवस्थिभग्नानसुरैःसुरास्तु ११९
नारायणेनापिसुबृंहणार्थंस्वनामतैलंविहितंतुतेषाम्॥१२०॥

अर्थ-बेलगिरी, असगंध, कटाई, गोखरू, सोनापाठा, खिरैंटी, पारिभद्र, कटेरी, पुनर्नवा, कंधी, अरणी, परस और पाडल यह प्रत्येक अस्सी अस्सी तोले लेकर आठ द्रोण जलमें पकावै, जब दो द्रोण जल शेष रहजाय तब उतारकर छानलेवै, पश्चात् इस काढ़ेमें ५१२ पांचसो बारह तोले गाय या बकरीका दूध और ५१२ पांचसौं बारह तोले शतावरका रस, तथा रास्ना, असगन्ध, सोफ, देवदारु, कूठ, माषपर्णी, मुद्गपर्णी, शालपर्णी, पृश्निपर्णी, अगर, नागकेशर, सैंधानोन, बालछड, हलदी, दारु हलदी, भूरिछरीला, लालचन्दन, पोहकरमूल, इलायची, मुलैठी, तगर, नागरमोथा, तेजपात, दालचीनी, काकोली, क्षीरकाकोली, जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, ऋद्धि, वृद्धि, सुगंधवाला, वच, कचूर, विषखपरा, थुनेर, और चोरक (ने, भटेउर); यह प्रत्येक औषधि आठ आठ तोले लेकर सबको पीसकै मिलादेवै, फिर तेलको विधि पूर्वक पकावै। इस तैलको महानारायण तैल कहतेहैं। पश्चात् कितनेक वैद्य इसमें कचूर, कस्तूरी और केशर, यह प्रत्येक औषधि आठ आठ तोले सुगन्धिके लिये, और कितनेक वैद्य प्रस्वेद और दुर्गन्ध दूर करनेके लिये डालतेहैं। यह महानारायण तैल- वातरोग, एकांगशोष, अर्दित रोग और कम्पादि रोगोंको दूर करैहै। तथा पंगुरोगी, जो मनुष्य पीठसे खिचड़ते हैं, बधिरतारोगवाले, जो मनुष्य वीर्य्यके क्षयसे पीडितहैं, मन्यास्तम्भ, हनुस्तम्भ, और शिररोगी मनुष्योंको यह नारायण तैल परम हितकारीहै, और बल तथा वर्णको बढ़ानेवालाहै। इस तेलको सेवनकरनेसे वंध्यास्त्रीभी देवोंकी समान सुन्दर, सर्वगुणसम्पन्न, महाबुद्धिवान्, और विजय लक्ष्मीको पानेवाला पुत्र उत्पन्न करतीहै। यह तेल- शाखागत वात, कोष्ठगतवात, वातवृद्धि, जिह्वा गतवात, दन्तगत शूल और वातरोगको दूर करैहै। उन्माद, कुब्जवात, और ज्वरसे व्याकुल मनुष्योंको यह तेल- महा उपकारीहै। इसको वैद्य सर्वप्रकारके वातरोगोंमें देवैं। जो इसतेलको सदैव सेवन करतेहैं, उनके लक्ष्मी और विजयकी प्राप्ति होतीहै, राक्षस दूरसेही भाग

जातेहैं, वृद्धता नहीं आती, और जीर्णज्वर शीघ्रही नष्ट होजाता है पूर्वकालमें देवता और राक्षसोंका परस्पर युद्ध हुआथा, उससमय राक्षसोंने देवताओंकी हड्डी, स्नायु और संधि आदि तोडडाली, तब श्रीनारायणने देवताओंकी पुष्टिके अर्थ निजनामसे प्रसिद्ध 'नारायणने' तैल निर्माण किया है ॥ १०७ ॥ १०८ ॥ १०९ ॥ ११० ॥ १११ ॥ ॥ ११२ ॥ ११३ ॥ ११४ ॥ ११५ ॥ ११६ ॥ ११७ ॥ ११८ ॥ ११९ ॥ १२० ॥

माषक्काथेबलाक्काथेरास्नायादशमूलजे ।
यवकोलकुलत्थानांछागमांसंभवेत्पृथक् ॥ १२१ ॥
प्रस्थेचातिलतैलस्यक्षीरंदत्त्वाचतुर्गुणम् ।
रास्नात्मगुप्तासिन्धूत्थशताह्वैरण्डमुस्तकैः ॥ १२२ ॥
जीवनीयबलाव्योषैःपचेदक्षसमैर्भिषक् ।
बाधिर्येकर्णशूलेचकर्णनादेचदारुणे ॥ १२३ ॥
विषूच्यामर्दितवातेकुब्जेगृध्रस्यामपतानके ।
वस्त्यभ्यंजनपानेषुलावणेषुप्रयोजयेत् ॥ १२४ ॥
माषतैलमिदंश्रेष्ठमूर्द्ध्वजत्रुगदापहम् ।
क्काथःप्रस्थाःषडेवात्रविभक्त्यन्तेनकीर्त्तिताः ॥ १२५ ॥

यथा माषपल १६ जलशराव १६ शेषशराव ४ एवंसर्वत्र ॥

इति माषतैलम् ।

अर्थ–तिलका तेल चारसेर, उड़दोंका क्काथ चारसेर, खिरैटीका क्काथ चारसेर, रास्नाका क्काथ चारसेर, दशमूलका क्काथ चारसेर जौका क्काथ चारसेर, बेरका क्काथ चारसेर, कुलथीका क्काथ चारसेर, और बकरेके मांसका क्काथ चारसेर लेवै, दूध सोलहसेर, कल्कके लिये रास्ना, कौंछ, सैंधानोन, सौंफ, अंड, नागरमोथा, जीवनीयदशक, खिरैटी, और त्रिकुटा, यह, प्रत्येक औषधि दो दो तोले लेवै, सबको विधिपूर्वक मिला तैलको सिद्ध करै । इसतैलको सेवनकरनेसे– बधिरता, कर्णशूल, दारुणकर्णनाद, विषूचिका, अर्दितवात, कुब्जकवात, गृध्रसी वात, और अपतानक वातरोग दूर होताहै । इसको बस्तिकर्म्म,

अभ्यंजन, पान और नस्य, इन सब कर्मोंमें योजना चाहिये। यह माषतैल अत्यन्त श्रेष्ठहै, ऊर्ध्वजत्रुरोगोंको दूर करैहै ॥ १२१ ॥ ॥ १२२ ॥ १२३ ॥ १२४ ॥ १२५ ॥

माषस्यार्द्धाढकंदत्त्वातुलार्द्धंदशमूलतः ।
पलानिच्छागमांसस्यत्रिंशद्द्रोणेऽम्भसःपचेत् ॥ १२६ ॥
पूतेशीतेकषायेचचतुर्थांशावशेषिते ।
प्रस्थश्चतिलतैलस्यपयोदत्त्वाचतुर्गुणम् ॥ १२७ ॥
आत्मगुप्तोरुबुकश्चशताह्वालवणत्रयम् ।
जीवनीयानिमंजिष्ठाचव्याचित्रककट्फलम् ॥ १२८ ॥
सव्योषंपिप्पलीमूलंरास्नामधुकसैन्धवम् ।
देवदार्व्यमृताकुष्ठंवाजिगंधावचाशठी ॥ १२९ ॥
एतैरक्षसमैःकल्कैःसाधयेन्मृदुनाग्निना ।
पक्षाघातार्दितेवातेचार्दितेहनुसंग्रहे ॥ १३० ॥
कर्णमन्याशिरःशूलेतिमिरेचत्रिदोषजे ।
पाणिपादशिरोग्रीवाभ्रमणेमंदचंक्रमे ॥ १३१ ॥
कलायखंजेपंगुल्येगृध्रस्यामपबाहुके ।
पानेबस्तौतथाभ्यंगनस्यकर्णाक्षिपूरणैः ॥ १३२ ॥
तैलमेतत्प्रशंसन्तिसर्ववातरुजापहम् ॥ १३३ ॥

इतिबृहन्महामाषतैलम् ।

अर्थ–तिलका तेल दोसेर, दूध आठसेर, क्वाथके लिये उड़द चारसेर, दशमूल सवाछहसेर, और बकरेका मांस तीसपल लेवै, सबको एक द्रोण अर्थात् ३२ बत्तीस सेर जलमें पकावै, जब चौथा भाग जल शेष रहै तब उतारकर शीतल होनेपर छान लेवै, फिर कल्कके लिये कौंछ, अंड, सौंफ, सैंधानोंन, काचानोंन, विरिया, संचरनोंन, जीवनीय-दशक, मजीठ, चव्य, चीता, कायफल, त्रिकुटा, पीपरामूल, रास्ना, मुलैठी, सैंधानोंन, देवदारु, गिलोय, कूठ, असगंध, वच और कचूर, यह प्रत्येक दो दो तोले लेवै, सबको मिला यथाविधिसे तेलको पकावै,

यह बृहन्माषतैल–पक्षाघात, अर्दितवात, हनुग्रहवात, कर्णशूल, मन्याशूल, शिरःशूल, त्रिदोष जतिमिररोग, हस्त, पाद, शिर और ग्रीवाका घूमना, मंदचक्रम, कलापखंज, पंगुरोग, गृध्रसी वात, अवबाहुक इत्यादि रोगोंको दूर करैहै। यह–पान, बस्तिकर्म, अभ्यंग, नस्य और नेत्रोंमें भरनेसे सर्वप्रकारके वातरोगोंको दूर करैहै ॥ १२६ ॥ १२७ ॥ ॥ १२८ ॥ १२९ ॥ १३० ॥ १३१ ॥ १३२ ॥ १३३ ॥

त्रिकत्रयसमायुक्तंजीवनीययुतन्त्वयः।
हन्त्यपस्मारमुन्मादंवातव्याधिंसुदुर्ज्जयम् ॥ १३४ ॥

इति त्रिकत्रयाद्यंलौहम्।

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आमला, नागरमोथा, चीता, वायविडंग और जीवनीयदशक, इन सबको समान भाग लेकर सबका चूर्ण बना और सब चूर्णकी समान लोहेका चूर्ण मिला लेवै। इसको सेवन करनेसे–बवासीर, उन्माद, और दुर्जयवातव्याधि दूर होतीहै ॥ १३४ ॥

जिङ्गीचोरकदेवदारुशबरव्याघ्रीवचाचेलक-
त्वक्पत्रैःसहगन्धपत्रकशठीपथ्याक्षधात्रीघनैः।
एतैःशोधितसंस्कृतैःपलयुगैराख्यातयासंख्यया
तैलप्रस्थमवस्थितैःस्थिरमतिःकल्कैःपचेद्गान्धिकः ॥
मांसीमुरादमनचम्पकसुन्दरीत्वक-
ग्रन्थ्यम्बुरुङ्मरुबकैर्द्विपलैःसपृक्कैः।
श्रीवामकुन्दुरुनखीनालिकामिसीनां
प्रत्येकतःपलमुत्तार्यपुनःपचेच्च ॥ १३६ ॥
एलालवंगचलचन्दनजातियूथी-
कक्कोलकागुरुलताघुसृणैः पलार्द्धैः।
कस्तूरिकाक्षसहितानलदीप्तियुक्तैः
पक्षीष्टमन्दशिखिनैमहासुगन्धम् ॥ १३७ ॥

पंचद्विकेनचार्द्धेनमदात्कर्पूरमेष्यते ।
कर्पूरमदयोरर्द्धंपत्रकल्कादिहेष्यते ॥ १३८ ॥
पंचपत्राम्बुनात्राद्योद्वितीयोगंधवारिणा ।
तृतीयोऽपिचतेनैवपाकोवाधूपिताम्बुना ॥ १३९ ॥
(चेलकंगुवाकस्यत्वक्)

इतिमहासुगन्धिलक्ष्मीविलासतैलम् ।

अर्थ–मजीठ, चोरक, सुगंधद्रव्य, देवदारु, सबरलोध, कटेरी, वच, सुपारीके पेड़की छाल, दालचीनी, तेजपात, गंधपत्रक (बं. पचापाता), कचूर, हरड, बहेडा, आमला और नागरमोथा, यह प्रत्येक दो दो पलके कल्क बना दोसेर तेलमें मिला बिल्वादि पंचपल्लवोंके जलके द्वारा पकावै, फिर बालछड, कपूरकचरी, दौना, चम्पा, फूलप्रियंगू, दालचीनी, गठिवन, सुगंधवाला, कूठ, मरुआ, और असवरग, यह प्रत्येक दो दो पल, तथा श्रीवास (गंधविरोजा , कुंदरू, नखी, नलिका और सोंफ, यह प्रत्येक एक एक पल लेवै । इन सबका कल्कबना दूसरीवार गंधोदकके द्वारा पकावै, तदनन्तर इलायची, लौंग, शिलारस, चन्दन, चमेलीके फूल, जुहीके फूल, शीतलचीनी, अगर, लताकस्तूरी और केशर, यह प्रत्येक दो दो तोले, कस्तूरी एक तोला और कपूर छः मासे, इन सबका कल्कबना तीसरी वार गंधद्रव्यादिके द्वारा गंधोदकके साथ पाक करै । यह महासुगंधि लक्ष्मीविलासतैल–सर्वप्रकारके वातरोगोंको दूर करैहै ॥ १३५ ॥ १३६ ॥ १३७ ॥ १३८ ॥ १३९ ॥

शतत्रयंप्रसारण्यार्द्धचपीतसहाचरात् ।
अश्वगंधैरण्डबलावरारास्नापुनर्नवा ॥ १४० ॥
केतकीदशमूलञ्चपृथक्कपारिभद्रतः ।
प्रत्येकमेषान्तुतुलातुलार्द्धंदेवदारुतः ॥ १४१ ॥
तुलार्द्धंशिरीषस्यैवलाक्षायाःपंचविंशतिः ।
पलानिलोध्राच्चतथासर्वमेकत्रसाधयेत् ॥ १४२ ॥
जलपंचाढकशतेसपादेतत्रशेषयेत् ।

द्रोणद्वयंकांजिकश्चषड्विंशत्याढकोन्मितम् ॥ १४३ ॥
क्षीरदध्नोःपृथक्प्रस्थान्दशमस्त्वाढकंतथा ।
इक्षोरसाढकेचैवछागमांसतुलात्रये ॥ १४४ ॥
जलपंचचत्वारिंशत्प्रस्थेप्रस्थेतुशेषयेत् ।
सप्तदशरसप्रस्थामंजिष्ठाक्काथएवच ॥ १४५ ॥
कुडवोनाढकोन्मानेद्रवैरेभिस्तुसाधयेत् ।
सुशुद्धतिलतैलस्यद्रोणंप्रस्थेनसंयुतम् ॥ १४६ ॥
आद्यएभिर्द्रवैःपाकेकल्कोभल्लातकंकणा ।
नागरंमरिचंचैवप्रत्येकंषट्पलोन्मितम् ॥ १४७ ॥
पथ्याक्षधात्र्यःसरलंशताह्वाककोंटीवचा ।
चोरपुष्पीशठीमुस्तद्वयंपद्मश्चसोत्पलः ॥ १४८ ॥
पिप्पलीमूलमंजिष्ठासाश्वगंधापुनर्नवा ।
दशमूलंसमुदितंचक्रमर्दोरसांजनम् ॥ १४९ ॥
गंधतृणंहरिद्राचजीवनीयगणस्तथा ।
एषांद्विपलिकैर्भागैराद्यपाकोविधीयते ॥ १५० ॥
देवपुष्पीबोलपत्रंशल्लकीरसशैलजे ।
प्रियंगूशीरमधुरीमांसीदारुबलाचलाः ॥ १५१ ॥
श्रीवासोनलिकाखोटिःसूक्ष्मैलाकुन्दुरुर्मुरा ।
नखीत्रयश्चत्वक्पत्रीपयस्यापूतिचम्पकम् ॥१५२ ॥
दमनंरेणुकापृक्कामरुवश्चपलत्रयम् ।
प्रत्येकंगंधतोयेनाद्वितीयःपाकइष्यते ॥ १५३ ॥
गंधोदकन्तुत्वक्पत्रीपद्मकोशीरमुस्तकम् ।
प्रत्येकंसबलामूलपलानिपंचविंशतिः ॥ १५४ ॥
कुर्याऽर्द्धभागोऽत्रजलप्रस्थन्तुपंचविंशतिः ।

अर्द्धावशिष्टःकर्त्तव्यःपाकोगंधाम्बुकर्मणि ॥ १५५ ॥
गंधाम्बुचन्दनाम्बुभ्यांतृतीयःपाकइष्यते ।
कल्कोऽत्रकेशरंकुष्टंत्वक्कालीयककुंकुमम् ॥ १५६ ॥
भद्रश्रियंग्रन्थिपर्णलताकस्तूरिकातथा ।
लवंगागुरुकक्कोलजातीकोषफलानिच ॥ १५७ ॥
एलालवंगवल्लीचप्रत्येकंत्रिपलोन्मितम् ।
कस्तूरीषट्पलंचन्द्रात्पलंसार्द्धंश्चगृह्यते ॥ १५८ ॥
वेधार्थंश्चपुनश्चन्द्रमदौदेयौतथोन्मितौ ।
महाराजप्रसारिणीसेयंराजयोग्याप्रकीर्त्तिता ॥ ५९ ॥
गुणान्प्रसारणीनान्तुवहस्येषाबलोत्तमान् ॥ १६० ॥
सपादंपंचाढकशतंपंचविंशत्यधिकंपंचशतान्याढकानिभवन्ति।

तेषुचद्रोणद्वयंस्थाप्यम् ।

तत्रप्रतिशतमेकविंशतिराढकानिशरावाश्चषट्किंचिन्न्यूनसप्तपलान्विता एतेन किंचिन्न्यूनसप्तपलाधिकत्वाच्चत्वारिंशदुत्तरशरावशतत्रयं भवति । स्थाप्यश्चकिंचिदधिकसार्द्धपलान्विताःप्रतिशतंदेयं जलशरावः ३४२ किंचिदूनपल २७ शेष ५ पल १ किंचिदधिककर्ष ३ समुदायेनदेयजलस्य चतुःशताधिकाष्टसहस्रशरावाः ८४००स्थाप्यश्चाष्टाविंशत्यधिकरशरावशतं १२८किंवा समुदायेन षोडशशरावपरिमितकलशेन पंचविंशत्युत्तरकलशपञ्चशतानि ।

स्थाप्याश्चाष्टौकलशाः ।

कांजिकस्याढकानि षड्विंशतिर्यद्यपि तथापि कांजिकद्रोणमात्रेण व्यवहरन्ति वृद्धाः । कांजिकंशुक्तं ग्राह्यमत

एवोक्तंचक्रेण कांजिकमानतो द्रोणःशुक्तेनैव विधीयते। शुक्तन्तुपरग्रन्थेप्रस्थंतण्डुलतोयत इत्यादिना ग्रहण्यामुक्तम् चक्रमतं पुनरन्यथा तथा

अत्रशुक्तिविधिर्मण्डप्रस्थःपंचाढकोन्मितम्।
कांजिकंकुडवोदध्नोगुडप्रस्थेऽम्लमूलकात् ॥ १६१ ॥
पलान्यष्टौशोधितार्द्रात्पलषोडशकन्तथा।
कणामरिचसिन्धूत्थहरिद्राजीरकंपृथक् ॥ १६२ ॥
द्विपलम्भाविते भाण्डेघृतमष्टदिनास्थितम्।
सिद्धंभवतितच्छुक्तंयदावतार्य्यगृह्यते ॥ १६३ ॥
तदादेयंचतुर्ज्जातंपृथक्कर्षत्रयोन्मितम् ॥ १६४ ॥

अत्रमण्डस्यभक्तमण्डस्यप्रस्थम्।

अम्लमूलकंकांजिकमूलकंशोधितार्द्रात् निस्त्वगार्द्रात् क्षीरदध्नाप्रत्येकंप्रस्थादशेतिभेदः। छागमांसपल २०० जलांश १८० शेषांश ६८ मंजिष्ठापल ६० जलांश ६० शेष १५ गांधिकव्यवहारंसिध्यति तैलांश ६४ उपक्षयार्थमपरतैलांश ४कल्के भल्लातकस्या सहद्रेतस्य स्थानेरक्तचन्दनमेव वदन्ति वृद्धाः।अक्षांविभीतकं पद्मोत्पलयोः पुष्पं दशमूलस्य मिलित्वापलत्रयं चक्रमर्दएडगजाबीजंकल्कद्रव्यं तप्तोदकप्रक्षालितं श्लक्ष्णचूर्णितं सुपिष्टं दत्त्वा क्काथादि सर्वत्र वैवाद्यःपाकः सचातिमृदुःकार्योनिष्पत्तिपाकोऽस्त्येव यतः। द्वितीयपाके देवपुष्पी देवडुलीति प्रसिद्धा बोलो गंधरसः पत्रंवाटीयगंधपत्रकं शल्लकीरसः कुन्दुरु यदुक्तं शब्दार्णवे। कुन्दुरु भागद्वयं पुनरुक्तत्वात् वाला वालकं सुगन्धित्वा-

तृचलः सिद्धकं श्रीवासो नवनीतखोटिःनखी त्रयमश्वखुर-बदरपत्रोत्पल गजकर्णाख्य नखीमध्याज्या दुष्पत्रा तेजोवती पूतिःखाटासी गंधोदके बलायूलं बलानिकरः दुष्पत्रादीनां प्रतिपल २८ तोला उत्पलं १२ तोला ४ जलशराव १०० शेषांश ५० तृतीयपाके गंधोदकं पूर्ववत्। चन्दनोदकार्थं श्वेतचंदनपल८३७कर्ष२क्षोदयित्वा जलशराव १०० शेषांश ५० किंवा उक्तार्द्धमानेन कृत-गंधोदश २८अन्येतु सुपविष्टेनसुघृष्टेनवा गंधोदक एवा-र्द्धमानचन्दनेगोलितमर्द्धावशिष्ट गंधोदकमानं गृह्णन्ति । इत्थं व्यवहारोऽपिकल्के भद्राश्रियंसितचन्दनं जाड्या-दोषःफलश्चलवंगस्यैव छल्ली चन्द्रःकर्पूरःवेधार्थं मदः कस्तूरी सिद्धतैलस्यकिंचित्तैलेन कस्तूरीं पिष्ट्वा पात्रस्थ सिद्धतैले मिश्रयित्वाच्छाद्य स्थाप्यमितिवेधशब्दार्थः)

इतिमहाराजप्रसारणीतैलम् ।

अर्थ—पसरन तीनसौ पल, पीलेफूलकी कटसरैया दोसौ पल, असगंध, अंड, खिरैटी, सतावर, रसायन, पुनर्नवा, केतकी, दशमूल, और फरहद-कीछाल, यहप्रत्येक सौ पल, देवदारु पचास पल, सिरसकी छाल पचा-सपल, लाख पचीसपल और लोध पचीसपल, इन सबको एकत्रकर५२५ आढ़क ५ जलमें पकावै, जब दो द्रोण जल शेषरहै तब उतारकर छान-लेवै । कांजी एकद्रोण, दूध, दही, प्रत्येक दशप्रस्थ, दहीका तोड़ १ एक आढ़क, ईखका रस एक आढक, बकरेकामांस ३०० तीनसौपल, पाकके लिये जल ८५ पिचासी सेर, शेषजल १७ सत्तरह सेर, मजीठ ५० पचासपल, जल साठ सेर, शेष पन्द्रहसेर, तिलका तेल एकद्रोण एक प्रस्थ, कल्कके लिये मिलावै, पीपल, सोंठ और कालीमिरच, प्रत्येक छैछै पल, हरड़ बहेडा, आमला, धूपसरल, सोंफ, काकडाशिंगी, वच, शंख-पुष्पी, कचूर, मोथा, नागरमोथा, कमल, कुमुद, पीपरामूल, मजीठ, असगंध, पुनर्नवा, दशमूल, चकवड,रसौत, सुगंधतृण, हलदी और जीव-

नीयगणकी सम्पूर्ण औषधि, प्रत्येक दोदोपल लेवै, सबको विधिपूर्वक मिलाके प्रथम पाक करै। तत्पश्चात् लौंग, गंधबोल, तेजपात, शल्लकी-कागोंद, भूरि छरीला, फूलप्रियंगू, खंस, सौंफ, वालछड, देवदारु, खिरैटी, सिलारस, सरलका गोंद, नलिका, कुन्दुरु, छोटी इलायची, लोबान, कपूरकचरी, तीनोंप्रकारकी नखी, दालचीनी, गंगापत्री, काकोली, खट्टाशमुष्क, चंपा, दवना, रेणुका, असवरग और मरुआ यह प्रत्येक तीन तीन पल लेवै, इन सबका कल्क और गंधोदकके द्वारा तेलका दूसरा पाककरै। गंधोदक बनानेकी यह विधिहै कि-दालचीनी, गंगापत्री, तेजपात, खस, नागरमोथा और खिरैटीकी जड, प्रत्येक २५पचीस पल कमल १२ बारहपल, जल १०० सौ शरावले, अर्द्धावशेष क्काथ बनावै, इसको गन्धजल कहतेहैं। इसगंधजलके द्वारा उपर लिखाहुआ दूसरा पाककरै। पश्चात् इसी गंधोदक और चन्दनोदकके द्वारा नीचै लिखे तृतीयकल्कका पाककरै। अबचंदनोदक बनानेकी विधि कहतेहैं, कुटाहुआ चन्दन ५० पचास पल, जल पचीस सेरले, अर्द्धावशेष अथवा चतुर्थांश काढा करै, तथा चन्दनको जलमें घिसलेवै। इसको चन्दनोदक, चन्दनाम्बु, चन्दनजल कहतेहैं। उपरोक्त गंधोदक और चन्दनोदकके द्वारा नागकेशर, कूठ दालचीनी, पीलाचन्दन, केशर, चन्दन, गठिवन, लताकस्तूरी, लौंग, अगर, शीतलचीनी, जायफल, जावित्री, इलायची, और लौंगकी वेल प्रत्येक तीन तीन पल, कस्तूरी छै पल, कपूर डेढ पल, इनके कल्कके साथ तृतीय पाक करै। जब तेल सिद्ध होजाय तब १॥ डेढ तोले कस्तूरी और १॥ डेढ तोले कपूर पीसकर तेलमें मिलादेवै। यह महाराजप्रसारिणी तैल-राजाओंके सेवने योग्यहै, तथा अन्यप्रसारिणी तैलोंकी अपेक्षा यह तैल अधिक गुणवालाहै। अब शुक्त बनानेकी विधि कहतेहै। भातका मांड़ दो सेर, कांजी४०चालीस सेर, दही एकसेर, गुड़१एकसेर कांजिकमूलक(कांजी के नीचेकी जमी हुई गाद) आठपल, अदरख १६सोलहपल, पीपल, कालीमिरच, सैंधानोंन, हलदी और जीरा, यह प्रत्येक दो २ पल लेकर सबको एकत्र घीके चिकने बासनमें आठदिन तक रक्खा रहनेदे, फिर इसमें दालचीनी, इलायची, तेजपात और नागकेशर प्रत्येकका चूर्ण छै छै तोले मिलादेवै, इसको शुक्त कहतेहै। यहशुक्तनामवालीकांजी

इस महाराजप्रसारिणी तैलमें डाली जाती है, इसकारण इसको यहाँपै लिख दियाहै ॥ १४० ॥ १४१ ॥ १४२ ॥ १४३ ॥ १४४ ॥ १४५ ॥ ॥ १४६ ॥ १४७ ॥ १४८ ॥ १४९ ॥ १५० ॥ १५१ ॥ १५२ ॥ १५३ ॥ ॥ १५४ ॥ १५५ ॥ १५६ ॥ १५७ ॥ १५८ ॥ १५९ ॥ १६० ॥ १६१॥ ॥ १६२ ॥ १६३ ॥ १६४ ॥

मूलञ्चैवाश्वगन्धायागृहीत्वाखण्डशःशतम्।
पंचाशत्पलमानन्तुजलद्रोणेविपाचयेत् ॥ १६५ ॥
पादशेषेहरेत्क्वाथंक्वाथांशंतिलतैलकम्।
तैलाच्चतुर्गुणंक्षीरंगव्यंवामाहिषन्तथा ॥ १६६ ॥
शतपुष्पाकणाचेलाकुष्ठञ्चकण्टकारिका।
शुण्ठीयष्टीदेवदारुशालपर्णीपुनर्नवा ॥ १६७ ॥
मंजिष्ठापत्रकंरास्नावचापुष्करमूलकम्।
यवानीभूतिकंमांसीनिर्गुण्डीपयस्यावला ॥ १६८ ॥
वह्निगोक्षुरकञ्चैवमृणालंबहुपुत्रिका।
प्रतिकर्षमिदंयोज्यंसर्वमेकत्रपाचयेत् ॥ १६९ ॥
तैलशेषंसमुद्धृत्यसिद्धंवातकुलान्तकम्।
अभ्यंगेयोजयेत्पानेनस्यकर्मणिसर्वदा ॥ १७० ॥
भग्नानांखञ्जपंगूनांशान्तिमाप्नोतिनान्यथा ॥ १७१ ॥

वातकुलान्तकंतैलम्।

अर्थ-तिलकातेल दोसेर, गाय या भैंसका दूध आठसेर, क्वाथके लिये असगंधकी जड़के टुकडे पंचास पल, जल ३२ बत्तीससेर, शेष आठसेर और कल्कके लिये सौंफ, पीपल, इलायची, कूठ, कटेरी, सोंठ, मुलैठी, देवदारु, सालपर्णी, पुनर्नवा, तेजपात, मजीठ, रायसन, वच, पोहकरमूल, अजवायन, सुगन्धतृण, बालछड़, सम्हालू, सूर्यमुखी, खिरैटी, चीता, गोखरू, खस और सतावर, यह प्रत्येक दोदो तोले लेवै। सबको विधिपूर्वक मिलाके तेलको सिद्धकरै। यह वातकुलान्तक तैल अभ्यंग, पान, और नस्यकर्ममें सदैव प्रयोग करैतौ भग्नरोग, खंजरोग, और पंगुरोग दूरहोवै ॥ १६५ ॥ १६६ ॥ १६७ ॥ १६८॥ १६९॥ १७०॥ १७१॥

तिलतैलाढकेक्षिप्त्वातक्रंतत्परिमाणकम्।
वचाचतुष्पलंदत्त्वाशुक्तंतच्चचतुर्गुणम् ॥ १७२ ॥
त्रिफलायाःपलान्यष्टौमंजिष्ठायास्तथैवच।
पुनरष्टपलान्यस्ताअर्द्धदग्धानिधापयेत् ॥ १७३ ॥
पूगलेचशठीपत्रशरण्यम्बुददारुणः।
पलान्यष्टौविनिक्षिप्यंघृतस्यतुपलद्वयम् ॥ १७४ ॥
आद्येपाकेपचेदित्थंतैलंयावच्चतुर्गुणम्।
गालयित्वापरंकुर्यात्तत्रपाकत्रयंबुधः ॥ १७५ ॥
चण्डाचलमरुच्छत्रात्वक्पत्रीचोलशैलजम्।
विषाणवीरणग्रन्थिदेवताकुसुमानिच ॥ १७६ ॥
प्रत्येकमेषांचत्वारिपलान्यादायगान्धिकः।
पाकंद्वितीयंतैलस्यकारयेत्क्रमयोगतः १७७ ॥
स्पृक्कामांसीमुरावालंलवंगच्छलिकामला।
नगुरुकाष्ठखोटीचचम्पकुन्दुप्रियङ्गवः ॥ १७८ ॥
एषांखट्टासिकायाश्चप्रत्येकञ्चपलद्वयम्।
आदायकारयेत्पाकंतृतीयंगंधकोविदः ॥ १७९ ॥
फणिलावलताकोलफलैलागुरुसिह्लकैः।
त्वक्कोषार्कैर्द्विपलिकैरितिपाकचतुर्थकः ॥१८०
वेधपलयुगेनेन्दोर्म्मदस्यत्वष्टभिःपलैः।
गन्धराजाह्वयतैलमिदंनृपमनोहरम् ॥ १८१ ॥

अर्थ-तिलोंका तेल एक आढक, तक्र एक आढक, वच चारपल, शुक्तनामवाली काँजी १६ सोलह पल, त्रिफला आठपल, आधाभुना हुआ मजीठ आठपल और सुपारीके वृक्षकी छाल, कचूर, तेजपात, पसरन, नागरमोथा, और चीता, यह प्रत्येक आठपल, तथा घृत आठ तोले लेवै, सबको विधिपूर्वक मिलाके प्रथम पाककरै, फिर वस्त्रमें

छानकर चोरक, सुगंधद्रव्य, दालचीनी, मरुआ, सौंफ, गंगापत्री, बोल, भूरिछरीला, कूठ, खस, पीपलामूल और लोंग, यह प्रत्येक चारपल मिलाकै दूसरा पाककरै, फिर वस्त्रमें छानकर स्पृक्का (असवरग) बालछड, कपूरकचरी, सुगंधवाला, लोंगकीछाल, भुई आमला, अगर, लोवान, चम्पाकी कली, कुन्दुरु, फूलप्रियंगू और खट्टाशमुष्क यह प्रत्येक दोपल, मिलाकै तृतीय पाककरै, फिर इसको वस्त्रमें छानकर सफेदचंदन, लोंग, लता, कस्तूरी, शीतलचीनी, जायफल, इलायची, अगर, शिलारस, दालचीनी, जावित्री और केशर, यह प्रत्येक आठ आठ तोले मिलाकै चौथीवार पकावै, फिर इसमें २ पल कपूर और आठ पल कस्तूरी मिलालेवै । यह गंधराजतैल सर्वप्रकारके वातरोगोंको दूर करैहै ॥ १७२ ॥ १७३ ॥ १७४ ॥ १७५ ॥ १७६ ॥१७७॥ ॥ १७८ ॥ १७९ ॥ १८० ॥ १८१ ॥

पंचपल्लवतोयेनगंधानांक्षालनंतथा ।
शोषणंचापिसंस्कारोविशेषश्चात्रवक्ष्यते ॥ १८२ ॥
आम्रजम्बुकपित्थानांबीजपूरकबिल्वयोः ।
गंधकर्मणिसर्वत्रपत्राणिपंचपल्लवम् ॥ १८३ ॥

अर्थ–पंचपल्लवके जलसे सर्वगंधद्रव्य धोकर धूपमें सुखाने चाहिये। आम, जामन, कैथ, बिजोरा और बेल इन पांच वृक्षोंके पत्तोंको पंचपल्लव कहतेहैं ॥ १८२ ॥ १८३ ॥

चण्डीगोमयतोयेनयदिवातिन्तिडीजलैः ।
नखंसंक्वाथयेदेभिरभावेमृज्जलेनतु ॥ १८४ ॥
पुनरुद्धृत्यप्रक्षाल्यभर्जयित्वानिषेचयेत् ।
गूडपथ्याम्बुनाह्येवंशुध्यतेनात्रसंशयः ॥ १८५ ॥
सम्मर्द्यचन्दनाद्यैस्तुवासयेत्कुसुमैःशुभैः ॥ १८६ ॥
(चण्डीमहिषीमृत्तिकाकृष्णाग्राह्याकुसुमैर्जातीमल्लिकावकादिभिः । अधिवासनञ्चशरावसंपुटेकृत्वा एवं सर्वेषामेवशुद्धानामधिवासनंज्ञेयम् ।)

इतिनखीकर्कटशुद्धिः ।

अर्थ-भैंसके गोवरके रस अथवा इमलीके जलमें या काली मट्टीके काथमें नखद्रव्यको औटावै, फिरगंधोदकसे धो घीमें भून गुड मिलाकर हरडोंके जलमें भिजोवै, फिर धूपमें सुखाकर चंदनादिसे मर्दनकर चमेली, मोतिया, आदिके फूलोंके सुवासित करलेवै तौ नखद्रव्य शुद्ध होजाताहै ॥ १८४ ॥ १८५ ॥ १८६ ॥

गोमूत्रेचालम्बुषकेपक्त्वापंचदलोदके।
पुनःसुरभितोयेनास्विन्नमातपशोषितम् ॥ १८७ ॥
गुडाम्बुनासिच्यमानंभर्जयेच्चूर्णयेत्ततः ॥ १८८ ॥

इति वचाहरिद्राशुद्धिः।

अर्थ-वच और हलदीको गोमूत्र और गोरखमुंडीके काथमें तथा पंचपल्लवके काथमें पका गंधकोदकमें भिजोके धूपमें सुखावै, फिर गुड़के सरबतमें भिजोकर सुखा देवै,तदनंतर अग्निमें भूनकर चूर्ण करले तौ वच और हलदी शुद्ध होजातीहै ॥ १८७ ॥ १८८ ॥

मुस्तकंचमनाक्क्षुण्णंकांजिकेत्रिदिनोषितम्।
पंचपल्लवतोयेनस्विन्नमातपशोषितम् ॥ १८९ ॥
गुडाम्बुनासिच्यमानंभर्जयेच्चूर्णयेत्ततः।
आजसौभांजनजलैर्भावयेच्चेतिशुध्यति ॥१९०॥
अजस्यजलंमूत्रम्।

इति मुस्तकशुद्धिः।

अर्थ-नागरमोथेको कूट तीन दिन तक काँजीमें भिजो रक्खै, फिर पंचपल्लवके जलमें पकाकर सुखालेवै फिर गुडके सरबतमें भिजोकर भूनकै चूर्ण करले पश्चात् बकरीके मूत्र और सैजिनेके रसकी भावना देवैतौ नागरमोथा शुद्ध होजाता है ॥ १८९ ॥ १९० ॥

कांजिकक्कथितंशैलंभृष्ट्वापथ्यागुडांबुना।
सिंचेदेवंततःपुष्पैर्विविधैरधिवासयेत् ॥ १९१ ॥
कांजिकेविपच्यपंचपल्लवतोयेनक्षालनमित्युपदेशः)

इति शैलजशुद्धिः।

अर्थ-प्रथम भूरिछरीलेको कांजीमें पकाकर पंचपल्लवके जलसे धोलेवै फिर अग्निपै भूनकर हरड और गुडके जलमें भिजोकै अनेकप्रकारके सुगंधित पुष्पोंसे सुवासितकरले तौ भूरीछरिला शुद्ध होजाताहै ॥१९१

यथालाभमपामार्गस्नुहादिक्षीरलेपितम्।
बाष्पस्वेदेनसंस्वेद्यपूतिनिर्लोमतांनयेत् ॥ १९२ ॥
दोलापाकंपचेत्पश्चात्पंचपल्लववारिणि।
खलःसाधुमिवोत्पीड्यततोनिःस्नेहतांनयेत् ॥ १९३ ॥
आजसौभांजनजलैर्भावयेच्चपुनःपुनः।
शिग्रुमूलेचकेतक्याःपुष्पपत्रपुटेचतम् ॥ १९४ ॥
पचेदेवंविशुद्धःसन्मृगनाभिसमोभवेत् ॥ १९५ ॥

इति खट्टासीशुद्धिः।

अर्थ-चिरचिटा और थूहरके दूधसै खट्टाशीको लपेटकर वाफसे स्वेदन करै, तौ यह दुर्गन्धरहित और रोमशून्य होजावै, फिर पंच-पल्लवके जलमें दोलायंत्रकेद्वारा पकाकर निचोड़ लेवै तौ खट्टाशी स्नेहरहित होजाय। पश्चात् बकरीके मूत्र और सैजिनेके रसमें वारंवार भावना देकर सैजिनेके जड, केतकीके फूल, तथा पत्रोंसे पुट बना उसमैं खट्टाशीको रख पकावै, इसप्रकार करनेसे खट्टाशी शुद्ध होकर कस्तूरीकी समान होजातीहै ॥ १९२ ॥ १९३ ॥ १९४ ॥ १९५ ॥

सिह्लकंमधुनाभाव्यंकुंकुमञ्चापिसर्पिषा।
कुंकुमेनागुरुप्राज्ञैर्गोमूत्रेग्रन्थिपर्णकम् ॥ १९६ ॥
मधूदकेनमधुरीपत्रकंतण्डुलाम्बुना।
(भाव्यमितिसर्वत्रयोज्यम्)
कुष्ठंपंचदलोत्स्वन्नमौर्वीकुन्दुरुधूपितम् ॥ १९७ ॥
वासितंकुसुमैरेभिःशुद्धिमायातिनिर्म्मलाम्।
ध्यामकश्चूर्णितःशुद्धिंशर्कराजलसेचितम् ॥ १९८ ॥
घृतगुग्गुलुधूपेनयातिचन्दनवासितः।
(ध्यामकोगंधतृणम्)

कुन्दुरुश्चूर्णितोऽत्यर्थंकुंकुमेनाविमर्दितः ॥ १९९ ॥
धूपितेगुडसर्जाभ्यांवासितःशुध्यतेतराम्।
रेणुकोभावितोऽत्यर्थंमधुनातक्रभावितः ॥ २०० ॥
आतपेशोषितःपुष्पवासितःशुद्धितामियात्।
सर्वेषांगंधवस्तूनांपंचपल्लववारिणा ॥ २०१ ॥
गंधाम्बुनाचकर्त्तव्यंक्षालनंरौद्रशोषणम्।
ततोगुग्गुलुतोयेनसिक्तायुक्त्यातुभर्जयेत् ॥ २०२ ॥
(कुष्ठादिकन्तुनभर्जनीयम्) यदुक्तम्।
रुग्ग्रन्थिलघुनिर्यासपत्रपुष्पफलेषुच।
चन्दनेनचकर्त्तव्यंभर्ज्जनंगंधकोविदैः ॥ २०३ ॥

अर्थ-शिलारस सहतमें भिजोनेसै शुद्ध होजाताहै। केशर घृतमें, अगर केशरमें, गठीवन गोमूत्रमें, सौंफ मधूदकमें, और तेजपात चावलोंके पानीमें भिजोनेसै शुद्ध होताहै। कूटको पंचपल्लवके जलमें पकाकै मूर्वा और कुन्दुरुकी धूपदेवै, फिर सुगंधित पुष्पोंसै सुवासित करैतौ कूट शुद्ध होजाताहै। गंधतृणोंका प्रथम चूर्णकर फिर खांडके सरबतमें भिजोके घृतयुक्त गूगलकी धूपदेवै, पश्चात् चंदनादिकसै सुवासित करलैतौ गंधतृण शुद्ध होजातेहैं। कुन्दुरुका अत्यन्त बारीक चूर्णकरकै केशरके साथ पीसै, फिर गुड और रालकी धूप देकर पुष्पोंसे सुवासित करलैतौ कुन्दुरु शुद्ध होजाताहै। रेणुकाको सहत और तक्रमें भावना देकर सुखालेवै फिर पुष्पोंसै सुवासित करनेसै रेणुका शुद्ध होजातीहै। सर्व प्रकारके गंधद्रव्योंको पंचपल्लवोदक और गंधोदकसै धोकर धूपमें सुखालेवे फिर गूगलके क्काथमें भिजोकर भूनलेवै, परन्तु कुष्ठादि गंध द्रव्योंको नभूने, कूठ, गठिवन, अगर, सर्वप्रकारके गोंद, पत्र, पुष्प और फल, इन सबको चन्दनके साथ भूनना चाहिये ॥ १९६ ॥ १९७ ॥ ॥ १९८ ॥ १९९ ॥ २०० ॥ २०१ ॥ २०२ ॥ २०३ ॥

केतकीयूथिकाजातिश्चम्पकश्चातिमुक्तकः।
कदम्बोमाल्लिकानागःपुन्नागःकुटजस्तथा ॥ २०४ ॥

पाटलाकरुणामौर्वीपुष्पैरेभिःसमाचरेत् ।
वासनंदवसंभिन्नैस्तथान्यैरपिशोभनैः ॥ २०५ ॥
शोधिताशोधितंद्रव्यंनकुर्यादेकभाजने ।
असाधुसंगतःसाधुरप्यसाधुर्यतोभवेत् ॥ २०६ ॥
पीतःकिंचिल्लघुरतिशयंकेतकीतुल्यगंधः ।
स्निग्धोगन्धोमिसिमिसिकरोभस्मभावंनयाति ॥
ईषत्तिक्तःकटुरपिमनाक्क्षारगंधानुविद्धम् ।
शुद्धःसम्यक्मदइतिमहीपालयोग्योमनोज्ञः ॥ २०७ ॥
करस्थतोयेनिक्षिप्ताकस्तूरीचेन्मुहूर्ततः ।
रक्तापित्तंजलंकुर्यात्वकृत्रिमांतांतदाभवेत् ॥ २०८ ॥
पक्वात्कर्पूरतःप्राहुरपक्वंगुणवत्तरम् ।
अत्रापिस्याद्यदक्षुद्रंस्फटिकाभंतदुत्तमम् ॥ २०९ ॥
आकृष्यमाणंयच्चापिकरेरेफाकरंभवेत् ।

अत्राद्यपक्के ।

पक्वञ्चसदलंस्निग्धंहरितद्युतिचोत्तमम् ॥ २१० ॥
भङ्गेमनागपिनचेन्निपतन्तिततःकणाः ।
चन्दनंगुरुगंधाढ्यंरक्तसारंविदुर्बुधाः ॥ २११ ॥
मध्यमंपीतसारंस्यादधमंपाण्डुरच्छवि ।
विशेषेणगुणस्तत्रग्रन्थिकोटरसंगताः ॥ २१२ ॥
आकृष्णमुत्तमंमूलंरक्तच्छायञ्चमध्यमम् ।
आरक्तंमध्यमंविद्धिरक्तचंदनकन्त्रिधा ॥ २१३ ॥
काकतुण्डच्छविस्निग्धंगुरुचागुरुशस्यते ।
मध्यंतित्तिरपक्षाभंहेयंशाल्मलिकाष्ठवत् ॥ २१४ ॥
रक्तास्निग्धंसुगंधंचसरलंसम्मतंसताम् ।

स्निग्धंसुगन्धिलघुचदेवदारुप्रशस्यते ॥ २१५ ॥
खट्टासीधूपजःश्रेष्ठोवर्चलोमांसलश्चयः ।
मृगशृंगोपमंकुष्ठंकीटदोषोज्झितंमतम् ॥ २१६ ॥
किंचित्पीतामुराशस्तामांसीपिंगजटाकृतिः ।
शैलजःशुकपिच्छाभोजलाग्निभ्यामदूषितः ॥ २१७ ॥
वेणुकोमुद्गतुल्योऽत्रश्रेष्ठःस्थूलस्तुनिन्दितः ।
मुस्तंशस्तमनूपोत्थंनिशास्थूलाऽरुणान्तरा ॥ २१८ ॥
जातीफलंसशब्दंचगुरुस्निग्धंप्रशस्यते ।
एलाकक्कोलबीजाभाग्राह्यालोकोऽत्रवाकृतिः ॥ २१९ ॥
एलासूक्ष्मबीजाश्रेष्ठेऽत्यर्थः ।
कक्कोलाभाचकर्पूरश्वेताश्रेष्ठात्रुटिर्मता ।
कक्कोलकंगुरुस्निग्धंसूक्ष्माद्राग्रस्थितंशुभम् ॥ २२० ॥
गुडत्वक्सुरसाभद्रासुदृढाकीटवर्जिता ।
ग्रन्थिकापाण्डवःकिंचित्कनिष्ठामध्यमंमतः ॥ २२१ ॥
उत्तमःकृष्णवर्णोयःस्थूलोऽतीवसानिन्दितः ।
शस्ताप्रियंगूर्वापाण्डुशामाकीटैरदूषिता ॥ २२२ ॥
मलकोष्ठोज्झितंशस्तंसर्जश्रीवासकुन्दुरु ।
सिह्लकस्तुस्वच्छःपिङ्गःशस्तोमधुनिभोऽधमः ॥२२३॥
भूकेशःसूक्ष्ममूलोऽत्रशस्यतेसरसोनवः ।
कीटाग्नितोयैरक्लिष्टंसरसंपत्रकंशुभम् ॥ २२४ ॥
दीर्घमूलंदृढंस्निग्धंपुराणंद्रवसंयुतम् ।
देशेसाधारणेजातमुशीरंभद्रकम्भवेत् ॥ २२५ ॥

अर्थ—केतकी, जुही, चमेली, चम्पा, अतिमुक्तक, कदम्ब, मल्लिका, नागकेशर, पुन्नाग, कुड़ा, पाढ़ल, करुणी और मौर्वी, इनके फूलोंमें तथा अन्यान्य सुगंधित पुष्पोंमें गंधद्रव्यको सुवासित करनाचाहिये । शोधित

और अशोधित दोनों द्रव्योंको कदापि एक बासनमें न रक्खै, कारण यह है कि-दुर्जनकी संगतिसे सज्जनभी दुर्जन होजाते हैं। (कस्तूरीपरीक्षा) कुछेक पीतवर्ण हो, तोलमें अत्यन्त हलकीहो, जिसमें केतकीके फूलोंके समान गंध आतीहो, स्निग्ध, अत्यन्त सुगंधयुक्त, अग्निमें डालनेसै भस्मभावको न प्राप्त होवै और मिसिमिसि ऐसा शब्द करै, स्वादमें किंचित्कडवी और चरपरीहो और अल्पक्षारगंधयुक्तभीहो ऐसी कस्तूरी उत्तम और राजाओंके योग्य होतीहै।

हाथमें जलको स्थापनकर उसमें कस्तूरीको डालदेवै, एकमुहूर्त्तमें वह जल लाल पीले रंगका होजायतौ उसको कृत्रिम कस्तूरी जाननी। पक्क कर्पूरसे अपक्व कर्पूर अधिक गुणवालाहै, और कच्चे कपूरमेंभी जो अक्षुद्र, स्फटिककी कान्तिसमान निर्मल और जिसके लगनेसै हाथमें रेखा पड़जाय वह कपूर अत्युत्तम होताहै। दलयुक्त, स्निग्ध, हरितमणिकी समान प्रकाशमान और अल्पतोडनेसेभी जिसमें कण गिरनेलगैं ऐसा पक्क कपूर उत्तम होताहै, सफेदचंदन-भारी, अत्यंतगंधयुक्त और लाल गूदेवाला उत्तम होताहै, पीले गूदेका मध्यम और पाण्डु वर्णका अधम होताहै। विशेष करकै ग्रन्थि और कोटरसंयुक्त सफेद चन्दन उत्तम होताहै। लालचन्दन तीन प्रकारकाहै, तहाँ जिसका मूल किंचित् कृष्णवर्णहो ऐसा उत्तम होताहै, जिसका रक्तवर्णहो वह मध्यम, और जिसका मूल अल्प रक्तवर्णहो उसको अधम जानना। अगर कौवेकी तुण्डकी समान रंगवाली स्निग्ध और भारी उत्तम होतीहै, तीतर पक्षीके परोंकी समान रंगवाली मध्यम, और सेमलकी समान रंगवाली अधम होतीहै। सरल काष्ठ-स्निग्ध, सुगंधित और रक्तवर्ण होतौ उत्तम होताहै। देवदारु-स्निग्ध, सुगंधित और हलकी उत्तम होतीहै। खट्टाश मुष्क-धूपज और शब्दयुक्त तथा मांसल श्रेष्ठ होतीहै। कूठ-मृगके सींगके समान और कीटदोष वर्जित उत्तम होताहै। किंचित् पीली कपूरकचरी उत्तम होती है। बालछड पिंगवर्ण और जटाकी समान आकृतिवाली उत्तम होती है। जो तोतेकी पूंछकी समानहो, जल और अग्निसै न विगड़ाहो ऐसा भूरिछरीला उत्तम होताहै। रेणुका-मूंगकी समान उत्तम होतीहै और स्थूल निन्दित होतीहै। नागरमोथा-अनूपदेशमें उत्पन्न होनेवाला उत्तम होताहै, हलदी मोटी और भीतरसै लाल उत्तम होतीहै, जायफल शब्दयुक्त भारी और चिकना उत्तम होताहै। इलायची-कंकोलकी समान सूक्ष्म-

बीजोंवाली उत्तम होतीहै, छोटी इलायची कंकोलकी समान प्रभावाली कपूरकी समान धवल और छोटेबीजोंकी उत्तम होतीहै, शीतलचीनी-भारी, चिकनी और सूक्ष्मअग्रभागवाली उत्तम होतीहै। उत्तम रसवाली दृढ और कीडे आदिने नखाई हो, ऐसी दालचीनी उत्तम होतीहै, पाण्डु-वर्ण और छोटा पीपलामूल मध्यम होताहै, कालेरंगका पीपरामूल उत्तम होताहै और अत्यंत मोटा पीपरामूल अधम होताहै। फूलप्रियंगू-पाण्डुवर्ण, श्यामवर्ण और कीडे आदिका नखाया उत्तम होताहै, राल, श्रीवास और कुन्दुरु यह कीट आदिसे न विगडे हुए उत्तम होतेहैं। शिला-रस स्वच्छ और पिंगलवर्णका उत्तम होताहै, और सहतकी समान कान्तिवाला अधम होता है, सूक्ष्मजड़वाला, उत्तमरसयुक्त और नवीन उत्तम होताहै, तेजपात-कीड़े, अग्नि और जलसे नबिगड़ा हुआ और सरस उत्तम होता है, खस-बड़ी जड़वाली, दृढ़, स्निग्ध, पुरानी, रससं-युक्त, और साधारण देशमें उत्पन्न होनेवाली उत्तम होती है ॥ २०४ ॥ ॥ २०५ ॥ २०६ ॥ २०७ ॥ २०८ ॥ २०९ ॥ २१० ॥ २११ ॥ २१२॥ ॥ २१३ ॥ २१४ ॥ २१५ ॥ २१६ ॥ २१७ ॥ २१८ ॥ २१९ ॥ २२० ॥ ॥ २२१ ॥ २२२ ॥ २२३ ॥ २२४ ॥ २२५ ॥

ग्राह्याप्रशोष्यसम्यक्चम्पककलिकाप्रदीपकलिकैव।
कीटादिदोषविरहितमभिनवमितिकेशरंग्राह्यम् ॥२२६॥
अत्युग्रापिसरागापिग्रन्थिलापिपदेपदे।
अन्तःशुद्धित्वमात्रेणवचाबाह्यत्वमुज्झति ॥ २२७ ॥
असारमध्यसबलानिष्कीटानालिकामता।
गजकर्णाश्वखुरकौबदर्युत्पलपत्रकौ ॥ २२८ ॥
वराहकर्णःपंचैतेनखास्त्याज्या इहान्तिमाः।
नामानुरूपातसात्रते।
लाक्षाचनूतनाग्राह्यामृत्तिकादिविवर्जिता ॥ २२९ ॥
कुसुम्भंनूतनंस्पृक्कामव्यापन्नांनवांविदुः।
चौरपुष्पींनवांश्यामामामनन्तिमनीषिणः ॥ २३० ॥
मध्यपाकोगुडःश्रेष्ठोनिर्मलःकाष्ठवर्जितः ॥

हरीतकीचिह्नंरसायनाऽध्यायेऽस्ति ।
भाद्रव्यांकीर्तितंयेषांविरुद्धत्वंनकीर्त्तितम् ॥ २३१ ॥
तेषांतद्विपरीतत्वाद्विरुद्धमपिलक्षयेत् ।
एतेषामपरेषाञ्चनवातप्रभवोगुणः ॥ २३२ ॥
मांसीपत्रंमुरादारुकेशरंकुष्ठरेणुकम् ।
एलाप्रियंगुकाश्मीरंमिथोमित्रगणोमतः ॥ २३३ ॥
परमागुरुपत्राम्बुचौराब्दश्वेतचंदनम् ।
नखीग्रन्थिकचोरस्पृग्देवपुष्पीतुमध्यमः ॥ २३४ ॥

स्पृक्स्पृक्का

श्रीवासतैलेमदकुन्दचन्द्रामिसिद्धिषड्गंइतिप्रकीर्तितः ।
भागक्रमात्तैलविधौविधेयोभवेदमाषांसकलोर्द्धपादिकः॥२३५
सुगन्धितैलपाकार्थंबालानांगंधयोजनम् ॥ २३६ ॥

अर्थ—चम्पाकीकली—दीपककी कलिकाकी समान दीप्तवान् लेनी चाहिये, नागकेशर कीटादि दोषसे रहित और नवीन उत्तम होती है, बच—अत्यन्त उग्र, रागयुक्त, और बहुत गाठोंवाली उत्तम होती है, जो सारही नहो, जिसका मध्यभाग बलवान्हो, और जो निष्कीट हो ऐसी नलिका उत्तम होती है, हस्तिकर्ण, अश्वखुर, बेरीकेपत्र, उत्पल-पत्र और वराहकर्णके सदृश, ऐसे पाँचप्रकारके नख होते हैं, इनमें वराहकर्णकी समान नख त्यागना चाहिये, लाख नवीन और मृत्ति-कादिसै रहित उत्तम होती है, कसूमके फूल नवीनही उत्तम होते हैं,और असवरगभी नवीनही उत्तम होतीहैं, चोरपुष्पी नूतन और श्यामवर्ण उत्तम होती है; गुड मध्यमरीतिसै पकाया हुवा निर्मल और तृणआदिसै रहित उत्तम होताहै, हरड़के लक्षण रसायनाध्यायमें लिखेहैं। जिन द्रव्योंको श्रेष्ठ कहाहै उनमें विरुद्धता नहीं कही है, और उनमें विपरीत-गुणयुक्त होनेके कारण उनको विरुद्धभी कहाहै । इन द्रव्योंमें तथा अन्यान्य द्रव्योंमें वातजनित गुण नहीं है। जटामांसी (बालछड), तेजपात, कपूरकचरी, देवदारु, नागकेशर, कूठ, रेणुका, इलायची, फूलप्रियंगू और केशर, इनसब मिलेहुए द्रव्योंको मित्रगण कहते

हैं। गंधशठी (कपूर कचरी , अगर, तेजपात, सुगंधवाला, चोरद्रव्य नागरमोथा, सफेदचंदन, नखीद्रव्य, गठिवन, चोरक (चोरपुष्पी), असवरग और लोंग, इनसबको मध्यमगण कहतेहैं। श्रीवास, शिलारस, कस्तूरी, कुन्दुरु, कपूर, और, सोंफ, इनको षड्वर्ग (शत्रुवर्ग) कहते हैं। इनकी मात्रा तेलके बनानेमें क्रमसै उत्तरोत्तर चौथाई भाग कम लेनी चाहिये। और सुगंधित तैल बनानेमें सुगंधवाला आदि सुगंधित औषधि डालनी चाहिये ॥ २२६ ॥ २२७ ॥ २२८ ॥ २२९ ॥ २३० ॥ ॥ २३१ ॥ २३२ ॥ २३३ ॥ २३४ ॥ २३५ ॥ २३६ ॥

शुद्धसूतंमृतंलोहंताप्यगंधकतालकम् ।
पथ्याग्निमंथनिर्गुण्डीत्र्यूषणंटंगणंविषम् ॥ २३७ ॥
तुल्यांशंमर्दयेत्खल्वेदिनंनिर्गुण्डिकाद्रवैः ।
शुण्ठीद्रावैर्दिनैकन्तुद्विगुंजांवटकीकृताम् ॥ २३८ ॥
भक्षयेत्सर्वशूलार्त्तोनाम्नास्वच्छन्दभैरवः ॥ २३९ ॥

इति स्वच्छन्दभैरवरसः ।

अर्थ-शुद्धपारा, लोहेकीभस्म, सोनामाखी, गंधक, हरिताल, हरड़ अरणी, निर्गुण्डी, त्रिकुटा, सुहागा और विष, इनसबको समान भाग लेकर एकदिन सम्हालुके रसमें खरल करै, फिर एकदिन सोंठके रसमें खरल करै, पश्चात् दो गुंजाभरकी, गोली बनावैतौ स्वच्छन्दभैरव रस सिद्धहो, यह स्वच्छन्दभैरवरस सर्वप्रकारके शूलोंको दूर करैहै ॥ ॥ २३७ ॥ २३८ ॥ २३९ ॥

अमृतादेवकाष्ठञ्चशुण्ठीवातारितैलकम् ।
गुग्गुलुंसर्वतुल्यांशंकुट्टयेच्चसदादृढम् ॥ २४० ॥
कर्षांशंखादयेच्चापिख्यातंषडङ्गगुग्गुलुम् ॥ २४१ ॥

इति षडंगगुग्गुलु ।

अर्थ-गिलोय, देवदारु, सोंठ, एरण्डकातेल, यह सब समान भाग लेवै और सबकी बराबर गूगल लेवै, सबको कूठ पीसकै एक तोलेभर प्रतिदिन खावैतौ सर्वप्रकारके वातशूल दूर होवैं, इसको षडंग-गूगल कहतेहैं, और कोई वैद्य इसको स्वच्छन्दभैरवरसका अनुपान कहतेहैं ॥ २४० ॥ २४१ ॥

त्र्यूषणंपिप्पलीमूलंचित्रकंरजनीद्वयम् ।
अजमोदायवानीचपथ्यातुल्यासुवर्चलैः ॥ २४२ ॥
सैन्धवंवाकुचीबीजंयवक्षारंविडंवचा ।
प्रत्येकश्चत्रिमाषन्तुसर्वंतुल्यंचगुग्गुलुम् ॥ २४३ ॥
अम्लवेतसकर्षैकंकिञ्चिदाज्येनकुट्टयेत् ।
गुटिकाचहितावातेसामेसंध्यास्थिमज्जगे ॥ २४४ ॥
दृढंकरोतिभग्नंचजठरानलदीपनी ॥ २४५ ॥

इति त्र्यूषणादिगुटिका ।

अर्थ-त्रिकुटा, पीपरामूल, चीता, हलदी, दारुहलदी, अजमोद, अजवायन, हरड़, कालानोन, सैंधानोन, बापचीके बीज, जवाखार, विरिया संचरनोन और बच, यह प्रत्येक तीनतीन मासे और सबकी बराबर गूगल लेवै, और अमलवेंत दोतोले लेवै, फिर सबको एकत्र पीसकै गोली बनालेवै, यहगोली वातरोग, आमवात, संधिगतवात, अस्थिगत वात, मज्जागत वात, इन सब वातविकारोंको दूरकरैहै, टूटे-हाडोंको जोड़देवै, और अग्निको दीपन करैहै॥२४२॥२४३॥२४४॥२४५

क्रमोत्तरगुणंशुद्धंरसंगंधंफलत्रिकम् ।
चित्रकंगुग्गुलुंपञ्चमर्द्यमेरण्डतैलकैः ॥ २४६ ॥
पुन्नागबृहतीयुग्मदेवदारुसुचूर्णितम् ।
एतत्पूर्वौषधिसमंमर्दयेद्यामात्रकम् ॥ २४७ ॥
कर्षंखादेत्पिबेत्क्वाथंनागरैरण्डमूलकैः ।
संमर्द्यैरण्डतैलेनपृष्ठेस्वेदञ्चकारयेत् ॥ २४८ ॥
विरेचनंभवेत्तेनस्निग्धमुष्णञ्चभोजनम् ।
रसोवातारिनामायंसर्ववातहरःपरः ॥ २४९ ॥

इति वातारिरसः ।

अर्थ-पारा एक भाग, गंधक दोभाग, त्रिफला तीनभाग, चीता चारभाग, गूगल पाँचभागलेवै, सबको अंडके तेलमें एक प्रहरतक मर्दनकरै, फिर इसमें पुन्नागके पुष्प, कटाई, कटेरी और देवदारुका

चूर्णमिलाकै एकप्रहर खरल करैतौ वातारिनामकरस सिद्धहो, इसको एक तोलाभर खावै और ऊपरसे सोंठ और अण्डकी जडका क्वाथ पीवै तथा रोगीके शरीरमें अंडीके तेलका मालिस करावै, और पृष्ठभागमें स्वेदप्रदान करै, इसप्रकार करनेसे जुल्लाब होजाताहै। चिकने और गरम भोजनकरै, यह वातारिनामक रस सर्वप्रकारके वातविकारोंको दूर करैहै ॥ २४६ ॥ २४७ ॥ २४८ ॥ २४९ ॥

सूतवज्रार्ककान्तानांभस्ममाक्षिकहाटकम्।
तालंनीलांजनंतुत्थमहिफेनसमांशिकम् ॥ २५० ॥
पंचानांलवणानांचभागैश्चैकंविमर्दयेत्।
वज्रीक्षीरैर्दिनैकन्तुरुद्धातंभूधरेपचेत् ॥ २५१ ॥
माषैकंचार्द्रकद्रावैर्लेहयेद्वडवानलम्।
पिप्पलीमूलजंक्काथंपिप्पल्यासहपाचयेत् ॥ २५२ ॥
धनुर्वातंदण्डवातंशृंखलावातकंजयेत् ॥ २५३ ॥

इतिवडवानलरसः।

अर्थ–पारेकीभस्म, हीरेकीभस्म तांबेकीभस्म, कान्तलोहेकी भस्म सोनामाखीकी भस्म, सोनेकी भस्म, हरिताल, नीलासुर्मा, नीलाथोथा, समुद्रफेन और पांचोनोन, प्रत्येक एकएक भागलेवै, सबको एकत्र कर थूहरके दूधमें एकदिन खरल करै, फिर भूधरयंत्रमें फूँकदेवै तौ वडवानल रस सिद्धहो, इसको एकमासेभर, अदरखके साथ खावै और ऊपरसै पीपलके साथ पीपलामूलका क्वाथ पान करै तौ धनुर्वात, दण्डवात और शृंखलादि वातविकार दूर होवै ॥ २५० ॥ २५१ ॥ ॥ २५२ ॥ २५३ ॥

मृतंसूतंतीक्ष्णकान्तंतालंमाक्षिकगंधकम्।
तुल्यांशंमर्दयेद्द्रावैर्विदार्यार्द्रकसम्भवैः ॥ २५४ ॥
भृंग्युत्थैःकाकमाच्युत्थैर्गिरिकर्णीद्रवैर्दिनम्।
संमर्द्यभांडगंरुद्धापचेन्मन्दाग्निनादिनम् ॥ २५५ ॥
व्योषाग्निगंधकाविषैःसरण्याभयाटङ्कणैः।

समांशैश्चूर्णितंमिश्रैस्तुल्यांशंपूर्वपातितम् ॥ २५६ ॥
त्रिदिनंमर्दयेद्द्रावैर्मुण्डीनिर्गुण्डीभृंगजैः ।
अष्टगुंजामितंखादेद्रसःस्वच्छन्दनायकः ॥ २५७ ॥
सर्ववातहरःख्यातोह्यनुपानमिदंपिबेत् ।
लशुनंसैन्धवंतैलंकर्षमात्रंसुखावहम् ॥ २५८ ॥

इति स्वच्छन्दनायकरसः ।

अर्थ–पारेकीभस्म, तीक्ष्णलोहा, कान्तलोहा, हरिताल, सोनामाखी और गंधक प्रत्येक समान भागलेवै, सबको एकत्रकर विदारीकन्द, अदरख, अतीस, मकोय और विष्णुक्रान्ता (कोयल), इन प्रत्येकके रसमें एकएकदिन खरल गोलाबनालेवै, उस गोलेको हाँडीमें रखके मृदु अग्निसे एकदिन पकावै, फिर त्रिकुटा, चीता, गंधक, विष, प्रसारिणी, हरड और सुहागा समानभागले; सबका चूर्णकर उक्तगोलेमें मिलादेवै, फिर इसको गोरखमुण्डी, सम्हालु और भांगरेके रसमें तीनदिन खरलकरै तौ स्वच्छन्दनायक नामवाला रस सिद्धहो, इसको आठ चौटलीभर खवै और ऊपरसै लशुन, सैंधानोंन और तिलोंका तेल मिलाकर दो तोलेभर पीवै तौ सर्वप्रकारके वातरोग दूर होवैं ॥ २५४ ॥ २५५ ॥ २५६ ॥ २५७ ॥ २५८ ॥

गंधकाष्टगुणंसूतंशुद्धंमृद्वग्निनाक्षणम् ।
पक्वावतार्यसंचूर्ण्यचूर्णतुल्याभयायुतम् ॥ २५९ ॥
सप्तगुंजामितंखादेद्वर्द्धयेच्चदिनेदिने ।
गुंजैकैकंक्रमेणैवयावत्स्यादेकविंशतिः ॥ २६० ॥
क्षीराज्यशर्कराभिश्चशाल्यन्नंपथ्यमाचरेत् ।
कम्पवातप्रशान्त्यर्थंनिर्वातेनिवसेत्सदा ॥ २६१ ॥
द्विगुणाख्योरसोनामात्रिपक्षात्कम्पवातजित् ॥ २६२ ॥

इति द्विगुणाख्योरसः ।

अर्थ–गंधक एकभाग, और शुद्धपारा आठ भाग, दोनोंको क्षण भर मृदु अग्निसै पकावै, फिर उतारकर चूर्ण करले और इस चूर्णमें बराबरका हरडकाचूर्ण मिलालेवै, इसको पहिलेदिन सातरत्तीभर खावै

पश्चात् क्रमसे रोज रोज एकरत्ती बढ़ाकै खावै,ऐसे इक्कीस रत्तीतक खावै, इसपै दूध,घी,बूरा और शालिधानोंका भात सेवन करै । और कंपवातको शान्तकरनेके लिये रोगी निरंतर निर्वातस्थानमें रहै,यह त्रिगुणाख्यनाम-वालारस तीनपक्षमें कम्पवातको दूर करैहै ॥२५९॥२६०॥२६१॥२६२॥

मृताभ्रंतीक्ष्णताम्रञ्चसूततालकगंधकम् ।
भार्गीशुण्ठीवलाधान्यंकट्फलंचाभयाविषम् ॥ २६३ ॥
मर्द्यञ्चचपलाद्रावैर्निष्कैकंभक्षयेद्वटीम् ।
वातश्लेष्महराह्येषागुरुवातगजांकुशः ॥ २६४ ॥

इति वातगजांकुशः ।

अर्थ-अभ्रककीभस्म, लोहेकीभस्म, तांबेकीभस्म, पारेकीभस्म, शुद्ध-हरिताल, शुद्धगंधक, भारंगी, सोंठ, खिरैंटी, धनिया, कायफल, हरडै, और विष इन सबको समान मागले पीपलके क्राथमें खरल करकै दोदो मासेभरकी गोली बनालेवै, इन गोलियोंको सेवनकरनेसे-वातकफरोग और अत्यन्त बढ़ा हुआ वातरोग दूर होताहै, इसको वातगजांकुश रस कहतेहैं ॥ २६३ ॥ २६४ ॥

रसगंधशिलातालंचूर्णसंमर्द्यकांजिकैः ।
लिप्त्वावस्त्रेकृतावर्तिस्तैलाक्ताज्वालयेच्चताम् ॥ २६५ ॥
तद्द्रुतंग्राहयेत्तैलमधःपात्रेधृतेसति ।
तत्तैलेर्लेपयेद्गात्रंनागवल्यातुभक्षयेत् ॥ २६६ ॥
बाहुकम्पंशिरःकम्पमेकाङ्गंजानुकम्पनम् ।
नाशयेद्भक्षणाल्लेपात्तैलंविजयभैरवम् ॥ २६७ ॥

इति विजयभैरवतैलम् ।

अर्थ-पारा, गंधक, मैनसिल, और हरिताल, इनसबका चूर्ण करकै कांजीमें खरल करै, फिर इसको वस्त्रपै लपेटकर बत्ती बनालेवै, उन बत्तियोंको तेलमें भिजोके अग्निसै जलावै,उनके जलनेसे जो तेल नीचे-को गिरै उसको एक बासनमें लेलेवै, इसतेलको शरीरसे मलै, अथवा नागरपानपै लगाकर भक्षण करैतौ बाहुकंप, शिरकम्प, एकांगकम्प

और जानुकम्प दूर होवै, इसको विजयभैरव तैल कहते हैं ॥ २६५ ॥ ॥ २६६ ॥ २६७ ॥

मृतंसूतंमृतंताम्रंमर्द्दयेत्कटुकद्रवैः ।
एकविंशतिवारंचशोष्यंपेष्यंपुनःपुनः ॥ २६८ ॥
चणमात्रावटीभक्ष्यारसःसर्वाङ्गकम्पजित् ॥ २६९ ॥

इति सर्वांगकम्पारिरसः ।

अर्थ-पारेकीभस्म और ताँबेकी भस्म दोनोंको त्रिकुटेके रसमें खरल करै, पश्चात् खरल करके सुखा देवै, फिर खरल करै, इसप्रकार इकीसवार खरलकर चनेकी बराबर गोली बनाके खानेसे सर्वांगकम्परोग दूर होताहै, इसको सर्वांगकम्पारिरस कहते हैं ॥ २६८ ॥ २६९ ॥

सूतस्यचपलात्पञ्चपलैकंमृतताम्रकम् ।
जम्बीराणांद्रवैःपिष्टंसूततुल्यञ्चगंधकम् ॥ २७० ॥
नागवल्लीदलैःपिष्टांस्थित्वामूषांविलेपयेत् ।
रुद्ध्वालघुपुटेपच्यात्त्र्यूषणेनसमान्वितम् ॥ २७१ ॥
अर्द्धाङ्गकम्पवातार्तोभक्षयेच्चाद्रिगुंजकम् ॥ २७२ ॥

इति अर्द्धांगवातारिरसः ।

अर्थ-पारा वीस तोले और ताँबेकी भस्म चार तोले, इन दोनोंको जम्बीरी नीबूओंके रसमें पीसै, फिर इसमें पारेकी बराबर गंधक मिलाकर पानोंके रसमें पीसै, पश्चात् मूषामें रख मूषाका मुख बंदकर लघुपुटमें फूंक देवै । फिर इसरसमें त्रिकुटेका चूर्ण मिलाकर इसको दो रत्तीभर भक्षण करै तौ अर्द्धांगकंपवात दूर होवै ॥ २७० ॥ ॥ २७१ ॥ २७२ ॥

दाहसन्तापमूर्च्छाःस्युर्वातेपित्तसमन्विते ॥ २७३ ॥

अर्थ-पित्तसंयुक्त वातरोगमें दाह, सन्ताप, और मूर्च्छा उत्पन्न होतीहै ॥ २७३ ॥

मृतंसूतंमृतंताम्रंशिलातालंविषोषणम् ।
कुष्टंनागबलापथ्यात्रिकण्टञ्चविदारिका ॥ २७४ ॥

एरण्डंमर्दयेत्तुल्यंद्रवैश्चाग्निपुनर्नवैः।
निष्कमात्रांवटींखादेद्वातपित्तहराभवेत् ॥ २७५ ॥
इतिवातपित्तारिरसः।

अर्थ-पारेकीभस्म, तांवेकीभस्म, मैनशिल, हरिताल, विष, कालीमिरच, कूठ, गंगेरन, हरड, गोखरू, विदारीकन्द, और अण्डकी जड इन सबको समान भागलेकर चीते और पुनर्नवेके रसमें खरल करकै चारचार मासेकी गोली बनालेवै, एकगोली प्रतिदिन खानेसै वातपित्त रोग दूर होवै। इसको वातपित्तारिरस कहतेहैं ॥ २७४ ॥ २७५ ॥

स्निग्धोष्णस्थिरवृष्यबल्यलवणस्वाद्वम्लतैलातप-
स्नानाभ्यंजनमत्स्यमांसमदिरासंवाहनोन्मर्द्दनैः।
स्नेहस्वेदनिरूहनस्यशमनस्नेहोपनाहादिक-
पानाहारविहारभेषजमिदंवातंप्रशान्तिनयेत् ॥ २७६ ॥
इति वातरोगाध्यायः।

अर्थ-स्निग्ध, उष्ण, स्थिर, वृष्य, बलकारक, नमकीन, खट्टे और मधुरद्रव्य, तेल, धूप, स्नान, अभ्यंजन, मत्स्यमांस, मदिरा, संवाहन, उन्मर्द्दन, स्नेहस्वेद, निरूहण, नस्य, स्नेह और उपनाहादि, पान, आहार और विहार, यह सब वातरोगको शान्त करनेवालेहैं॥२७६॥

इति वातरोगाध्यायःसमाप्तः।

अथ वातरक्तचिकित्सामाह।

बाह्यलेपाभ्यंगसेकोपानाहैर्वातशोणितम्।
विरेकास्थापनस्नेहपानैर्गम्भीरमाचरेत् ॥ १ ॥
द्वयोर्मुञ्चेदसृक्शृंगसूच्यलाबुजलौकसा।
देशाद्देशंव्रजेत्स्राव्यंसिराभिःप्रच्छलेनवा ॥ २ ॥
अंगम्लानौनचस्राव्यंरूक्षेवातोद्भवेतुयत्।
पुराणायवगोधूमशालयोभोजनेमताः ॥ ३ ॥

मुद्गादियूषःसघृतोमांसंप्रातुदवैष्किरम् ।
शाकंवास्तुकवेत्राग्रसुनिषण्णादिकंहितम् ॥ ४ ॥
शस्तावातकफेकोष्णालेपाद्याःपैत्तिकेहिमाः ।
दशमूलीशतंक्षीरंसद्यःशूलनिवारणम् ॥ ५ ॥
परिसेकोऽनिलप्रायेतद्वत्कोष्णेनसर्पिषा ।
क्षीरपरिसेकइतियोजनानतुपेयम् । शूलंव्यथा ।
लेपोवरुणाशिग्रुभ्यांशूलंहन्तिसकांजिकः ॥ ६ ॥
गोधूमचूर्णछगलीपयश्चसच्छागदुग्धोरुबुबीजकल्कः ।
लेपेविधेयंशतधौतसर्पिःसेकेपयश्चाविकमेवशस्तम् ॥७॥
अगस्तिपुष्पचूर्णेनमाहिषंजनयेत्पयः ।
तदुत्थनवनीताक्तोदेहजंस्फुटनंजयेत् ॥ ८ ॥
माहिषंनवनीतञ्चखलिगोमूत्रसैन्धवम् ।
क्षीरञ्चाग्नौप्रताप्याङ्गमुद्वर्त्त्यस्फुटनंजयेत् ॥ ९ ॥
लेपःपिष्टास्तिलास्तद्वद्भृष्टाःपयसिनिर्वृताः ।
दुग्धेनपिष्टाहिततोभृष्टादुग्धेनिर्वापिताः ॥ १० ॥
अमृतानागरधान्यककर्षत्रितयेनपाचनंसिद्धम् ।
जयतिसरक्तंवातंसामंकुष्ठान्यशेषाणि ॥ ११ ॥

इति प्रत्येकंकर्षात्कर्षत्रितयम् ।

अर्थ–बाह्यवातरक्तमें लेप, अभ्यङ्ग, जलका सेवन और उपनाह स्वेद करावै, और गम्भीरवातरक्तमें विरेचन, निरूहबस्ति, और स्नेहपान करावै। शींग, सुई, तोंबी और जोंकसे दोनों प्रकारके वातरक्तरोगमें रक्तमोक्षण करावै, एकही जगह रक्तमोक्षण न करावै, किन्तु शरीरकी सर्व शिराओंके प्रदेशमें जगह जगह रक्तस्राव करावै। जिसके अंगमें ग्लानि हो, जिसका शरीर रूखाहो, और जिनके वातसे वातरक्त उत्पन्न हुआ हो, उनको वातरक्तरोगमें रक्तमोक्षण नहीं कराना चाहिये। पुराने जो, गेहूँ, और शालिधानोंका भोजन, मुद्गादिका यूष, प्रतुद और विष्किर पक्षियोंका घृतसै भूना

हुआमांस, वथुआ, वेतका अग्रभाग और शिरीआरी आदिका शाक, यह सब वातरक्तरोगमें हितकारीहै। वातश्लैष्मिक वातरक्तरोगमें किंचित् उष्ण प्रलेपादि हितकारीहैं और पैत्तिक वातरक्तरोगमें शीतल लेपादिक हितकारीहैं। गायके दूधमें दशमूलको पका शीतलकर पीनेसै तत्काल शूल दूर होताहै, किंचित् गरमघीमें दूध मिलाकै सींचनेसै शूल दूर होताहै (यहां शूलशब्दका अर्थ वातरक्तकी पीडाकाहै) वरना और सैंजिनेकी छालको काँजीमें पीसकर लेपकरनेसे वातरक्तकी वेदना दूर होतीहै। गेहूंके चूनेको बकरीके दूधमें मिलाके अथवा अंडके बीजोंको बकरीके दूधमें पीसकै, वा सौवार धुले हुए घीके लेप करनेसै, भेडके द्वारा सेक करनेसै वातरोग आराम होताहै। भैंसके दूधमें अगस्तियेका चूर्ण डालकै दही जमादेवै, फिर उसहीमेंसे माखन निकालकर लेप करनेसै देहस्फुटन दूर होताहै। अथवा भैंसका माखन, खल, गोमूत्र, सैंधानोन, और दूध इन सबको मिलाकर आगपै गरम करकै शरीरपै उद्वर्त्तन करनेसे देहस्फूटन दूर होतीहै। भुने हुए तिलोंको दूधमें पीसकर फिर दूधहीमें मिलाकै लेप करनेसे, अथवा गिलोय, सोंठ, और धनिया प्रत्येक एक एक तोले लेकर पाचन बनाकै पीनेसे वातरक्त, आमवात, और सर्वप्रकारके कुष्ठ नष्ट होतेहैं ॥ १ ॥ २ ॥ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११

गुडूच्याःस्वरसंकल्कंचूर्णवाक्काथमेववा।
प्रभूतकालमासेव्यमुच्यतेवातशोणितात् ॥ १२ ॥

अर्थ-गिलोयका स्वरस कल्क, चूर्ण, अथवा काथ कुछेक दिवस सेवन करनेसे वातरक्तरोग दूर होताहै ॥ १२ ॥

पीतःसगुग्गुलुःक्काथोगुडूच्यावातरक्तजित् ॥ १३ ॥

अर्थ-गिलोयके काढ़ेमें गूगल मिलाकै पीनेसे वातरक्तरोग दूर होताहै ॥ १३ ॥

घृतेनवातंसगुडाविबन्धंपित्तंसिताढ्यामधुनाकफञ्च।
वातास्रमुग्रंरुबुतैलमिश्राशुंठ्यामवातंशमयेद्गुडूची ॥ १४ ॥

अर्थ-गिलोय घीकेसाथ, वातको गुड़केसाथ विबन्धको, खाँडकेसाथ पित्तको मधुके साथ कफको अंडीके तेलके साथ, वातरक्तको और सोंठकेसाथ सेवनकरनेसे आमवात रोगको दूर करे है।

वासागुडूचीचतुरङ्गुलानामेरण्डतैलेनपिबेत्कषायम् ।
क्रमेणसर्वांगजमप्यशेषंजयेदसृग्वातभवंविकारम् ॥१५॥
(चतुरङ्गलंशोणालुमूलम्)

अर्थ-वाँसा, गिलोय और श्योनाककी जड इनका क्वाथ बना अंडीके तेलके साथ पीनेसै सर्वांगवातरक्त दूर होताहै ॥ १५ ॥

तिस्रोथवापंचगुडेनपथ्याजग्ध्वापिबेच्छिन्नरुहाकषायम् ।
तद्वातरक्तंशमयत्युदीर्णमाजानुसंभिन्नमपिह्यवन्यम् ॥ १६ ॥

अर्थ-तीन या पांच छोटी हरडोंको गुडके साथ खाकर ऊपरसै गिलोयका क्वाथपीनेसै जानुतक स्फुटित वातरक्तरोग दूर होताहै ॥१६॥

रुबुबीजामृताकल्कोवातास्रंहन्तिसेवितः ॥ १७ ॥

अर्थ-अण्डके बीज और गिलोयका कल्क सेवन करनेसै वातरक्त रोग दूर होताहै ॥ १७ ॥

कफवातास्रवीसर्पकण्डूजित्सगुडंघृतम् ॥ १८ ॥

अर्थ-गुड और घृतको एकत्र मिलाकर सेवन करनेसै कफ वातरक्त, वीसर्प और कण्डूरोग दूर होताहै ॥ १८ ॥

पटोलकटुकाभीरुत्रिफलामृतसाधितम् ।
क्वाथंपीत्वाजयेज्जन्तुःसदाहंवातशोणितम् ॥ १९ ॥

अर्थ-पटोल, कुटकी, सतावर, त्रिफला और गिलोय इनका क्वाथ बनाकर पीनेसे दाहयुक्त वातरक्तरोग दूर होताहै ॥ १९ ॥

कटुकामृतयष्टाह्वशुण्ठीकल्कःसमाक्षिकः ।
गोमूत्रपीतोजयतिसकफंवातशोणितम् ॥ २० ॥

अर्थ-कुटकी, गिलोय, मुलैठी, और सोंठ, इनको सहतमें पीसकर गोमूत्रके साथ पीनेसे कफयुक्त वातरक्त दूर होताहै ॥ २० ॥

धात्रीमुस्तहरिद्राणांकषायंवाकफाधिके ॥ २१ ॥

अर्थ-आमला, नागरमोथा, और हलदीका क्वाथ बनाकर पीनेसे कफाधिक्य वातरक्त दूर होताहै ॥ २१ ॥

कोकिलाक्षामृताक्वाथेपिबेत्कृष्णांकफाधिके ।

पथ्यभोजीत्रिसप्ताहान्मुच्यतेवातशोणितात् ॥ २२ ॥

अर्थ-तालमखाना और गिलोयके काढेमें पीपलका चूर्ण डालकर पीनेसे इक्कीस दिनोंमें कफाधिक्य वातरक्तरोग दूर होताहै ॥ २२ ॥

त्रिफलानिंबमंजिष्ठावचाकटुकरोहिणी।
वत्सादनीदारुनिशाकषायोनवकार्षिकः ॥ २३ ॥
वातरक्तंतथाकुष्ठंपामानंरक्तमण्डलम्।
कुष्ठंकपालिकाकुष्ठंपानादेवापकर्षति ॥ २४ ॥

प्रत्येकंकर्षकम्।

पंचरक्तिकामाषेणकर्षोग्राह्यः।

इति नवकार्षिकः।

अर्थ-त्रिफला, नीम, मजीठ, वच, कुटकी, गिलोय, दारुहलदी, प्रत्येक एक एक कर्ष ले क्काथ बनाके पीनेसे वातरक्त, कोढ़, पामा, रक्त-मण्डकुष्ठ, और पालिकाकुष्ठरोग नष्ट होताहै ॥ २३ ॥ २४ ॥

शतावरीरसेकल्केगुडूच्याःक्काथकल्कयोः।
तुल्यंक्षीरंघृतंसिद्धंवातासृक्कुष्ठजित्परम् ॥ २५ ॥

इति शतावरीगुडूचीघृते।

अर्थ-गायका घी चारसेर, गायका दूध चारसेर, सतावरका रस वा गिलोयका क्काथ चारसेर, और कल्कके लिये सतावर, गिलोय एकसेर लेवै। विधिपूर्वक दोनों घृतोंको सिद्ध करै। इस सतावरी घृत अथवा गुडूची घृतको पीनेसे वातरक्त और कुष्ठरोग दूर होताहै ॥ २५॥

अमृतायष्टिकाश्मर्यद्राक्षाब्दारग्वधामरैः।
गोक्षुरिक्षुरखुक्षीरवृद्धदारबलावृषैः ॥ २६ ॥
रास्नैरण्डवरातिक्ताभीरुशुण्ठीकणोत्पलैः।
धात्रीरससमंसर्पिःसाधितंत्रिगुणेजले ॥ २७ ॥
गम्भीरोत्तानवातास्रंत्रिकजंघोरुजांरुजम्।
हन्त्युग्रंक्रोष्टुशीर्षंचरुग्दाहंसानिलंज्वरम् ॥ २८ ॥
मेदोदावर्त्तब्रध्नादीनिदमायुर्बलप्रदम्।

अमरंदेवदारु इक्षुरःकोकिलाक्षमूलम् ॥ २९ ॥
वृश्चीरःश्वेतपुनर्नवा । व्यक्तमन्यत् ।

इति अमृताद्यंघृतम् ।

अर्थ–गायका घी चारसेर, आमलोंका रस चारसेर, जल बारह सेर और कल्कके लिये गिलोय, मुलैठी, कुम्भेर, दाख, नागरमोथा, अमलतास, देवदारु, गोखरू, तालमखाना, सोंठ, विधारा, खिरैटी, अडूसा, रास्ना, अण्ड, त्रिफला, कुटकी, सतावर, सोंठ, पीपल और कमल, यह सब एकसेर लेवै, फिर विधिपूर्वक घृतको सिद्ध करै । इस घृतको सेवनकरनेसे-गम्भीर और उत्तानवातरक्त, त्रिक और जंघाकी वेदना, अत्यन्त उग्र क्रोष्टुशीर्षवात, रुग्दाह, सन्निपात, वातज्वर, मेदरोग, उदावर्त्त और ब्रध्नादि रोग दूर होते हैं, तथा बल और आयु बढ़तीहै ॥ २६॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥

गुडूचीक्काथकल्काभ्यांतैलंद्राक्षारसेनवा ।
सिद्धंमधुककाश्मर्यरसैर्वावातरक्तजित् ॥ ३० ॥
(गुडूचीक्काथदुग्धाभ्यामितिचक्रेपाठान्तरम्)

इति गुडूच्यादितैलानित्रीणि ।

अर्थ–गिलोयके क्काथ अथवा कल्कमें तेलको पकाकर, या दाखके रसमें तेलको पकाकर अथवा महुआ और कुम्भेरके रसमें पकाकर सेवन करनेसे वातरक्त रोग दूर होताहै ॥ ३० ॥

पद्मकोशीरयष्ट्याह्वरजनीक्काथसाधितम् ।
स्यात्पिष्टैःसर्जमञ्जिष्ठावीराकाकोलिचंदनैः ॥ ३१ ॥
खुड्डाकपद्मकमिदंतैलंवातास्रदाहनुत् ॥ ३२ ॥

इति खुड्डाकपद्मकतैलम् ।

अर्थ–तिलोंका तेल एकसेर, कल्कके लिये राल, मजीठ, सतावर, काकोली और लालचंदन एकसेर, और पद्माख, खस, मुलैठी और हलदीका क्काथ सोलहसेर लेवै, सबको विधिपूर्वक मिलाकै तेलको सिद्ध करै । इसको खुडाकपद्मक तेल कहतेहैं । इसको सेवन करनेसे वातरक्त और दाह दूर होतीहै ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

तुलांपचेज्जलद्रोणेगुडूच्याःपादशेषितम् ॥ ३३ ॥
क्षीरद्रोणन्तुताभ्याञ्चपचेत्तैलाढकंशनैः ॥ ३४ ॥
कल्कैर्मधुकमंजिष्ठाजीवनीयगणस्तथा।
कुष्ठैलागुरुमृद्वीकामांसीव्याघ्रनखंनखी ॥ ३५ ॥
हरेणुश्रावणीव्योषंशताह्वाशृंगिशारिवे।
त्वक्पत्राज्र्जुनविक्रान्तास्थिरातामलकीतथा ॥ ३६ ॥
नतंह्रीबेरकेशरंपद्मकोत्पलचन्दनम्।
सिद्धंकर्षसमैर्भागैःपानाभ्यामनुवासनैः ॥ ३७ ॥
सेव्यंवातास्रजोहन्तिसर्वधात्वन्तराश्रयाः।
स्वेदकण्डूरुजायासाशिरःकंपामयार्दितः ॥ ३८ ॥
हन्याद्व्रणकृतान्दोषान्गुडूचीतैलमुत्तमम् ॥ ३९ ॥

इति गुडूचीतैलम्।

अर्थ-तिलोंकातेल आठसेर, कल्कके लिये मुलैठी, मजीठ, जीवनीयगणकी सम्पूर्ण औषधि, कूठ, इलायची, अगर, दाख, बालछड़, व्याघ्रनखी, नखी, रेणुका, गोरखमुण्डी, त्रिकुटा, सोंठ, काकडासिंगी, शारिवा, दालचीनी, तेजपात, अर्जुन, मूषाकानी, सालपर्णी, भुईआमला, तगर, नागकेशर, सुगंधवाला, पद्माख, कमल और चंदन, प्रत्येक दोदो तोले लेवै, गायका दूध बत्तीस सेर, और क्वाथके लिये गिलोय साडेबारह सेर, शेष सोलहसेर। सबको एकत्र कर तेलको सिद्धकरै। इसको पान, मालिस और अनुवासनके द्वारा व्यवहार करनेसे- सर्वधातुओंमें स्थित वातरक्त, पसीना, खुजली, पीडा, दोप्रकारका आयाम, शिरःकम्प, अर्दित वात, और व्रण आदिसे उत्पन्न हुए विकार दूर होतेहैं, यह गुडूचीतैल अत्यन्त उत्तम है ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥

शतंपक्त्वाशतावर्याजलद्रोणावशेषितम्।
विस्राव्यविपचेत्तैलंक्षीरंदत्त्वाचतुर्गुणम् ॥ ४० ॥
कल्कैर्मृणालशालूकबिषकिंजल्कमालती।
पुष्पैर्ह्रीबेरमधुकशारिवापद्मकेशरैः ॥ ४१ ॥

मेदापुनर्नवाद्राक्षामंजिष्ठाबृहतीद्वयम् ।
गंधकस्यचमूलानिमूलंसहचरस्यच ॥ ४२ ॥
अश्वगंधाचबिल्वञ्चश्वदंष्ट्रात्रिकटुस्तथा ।
निष्क्काथ्यमूलमेतेषांयस्मिंस्तैलेविनिक्षिपेत् ॥ ४३ ॥
शतपुष्पादेवदारुमांसीशैलेयकंबले ।
चंदनंतगरंकुष्ठमेलाचांशुमतीवचा ॥ ४४ ॥
वृद्धदारककाकोलीमेदामधुकमुत्पलम् ।
सर्वमेतत्समंकृत्वाकल्कैरक्षसमन्वितैः ॥ ४५ ॥
पानेबस्तौतथाभ्यंगेनस्येचैवप्रदापयेत् ।
अंगशूलंशिरःशूलंमेहदण्डापतानकम् ॥ ४६ ॥
वातरक्तंसदाहञ्चवातपित्तादिकंमदम् ।
शोथपाण्ड्वामयप्लीहकामलागरगृध्रसी ॥ ४७ ॥
योनिशूलंत्वसृग्दोषमाध्मानेविनिहन्तिच ।
क्षीणशुक्रौजसांपुंसांशस्तंवन्ध्याशुभप्रदम् ॥ ४८ ॥
शतावरीतैलमिदंकृष्णात्रेयेणपूजितम् ॥ ४९ ॥

इति शतावरीतैलम् ।

अर्थ-तिलोंकातेल सोलहसेर, गायका दूध चौसठ सेर, क्काथके लिये शतावर साडेबारहसेर, जल चौसठसेर, शेष सोलह सेर रखै । मृणाल (कमलकी डंडी) शालूक (भसींडे) कमलकी केशर, मालतीके फूल, सुगंधवाला, मुलैठी, सारिवा, कमल, नागकेशर, मेदा, पुनर्नवा, दाख, मजीठ, कटाई, कटेरी, अण्डकीजड, कटसरैयाकी जड ,असगंध, बेल, गोखरू, और त्रिकुटा, प्रत्येकका क्काथ दोदो तोले लेवै, और कल्कके लिये सोंफ, देवदारु, बालछड, भूरिछरीला, खिरैटी, गंगेरन, लालचंदन, कूठ, इलायची, पिठवन, वच, विधारा, काकोली, मेदा, महुएके फूल और कुमुद प्रत्येक दोदो तोले लेवै, सबको मिलाकर तेल सिद्धकरै । इसको पान, बस्तिकर्म्म, अभ्यंग और नस्यकर्म्मके द्वारा प्रयोग करनेसै-अंगशूल, शिरःशूल, प्रमेह, दंडापतानक, वातरक्त, दाह, वातपित्तादिक,

मद, सूजन, पाण्डुरोग, प्लीहा, कामला, विषदोष, गृध्रसीवात, योनिशूल, रुधिरविकार और आध्मानरोग दूर होताहै। यह तेल क्षीणशुक्र और क्षीण ओजवाले मनुष्योंको परमाहितकारीहै और वन्ध्या स्त्रियोंको कल्याणप्रदायकहै। यह सतावरीतेल श्रीकृष्ण और आत्रेयकरकै पूजितहै ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥

अंकोठमूलंत्रिफलाकुण्डलीमरिचंनिशा।
सप्तच्छदाकुटीकुष्ठंप्रत्येकंकार्षिकंभवेत् ॥ ५० ॥
विडंगमुस्तकंकाचंतालकंटंगणंत्रिवृत्।
रसगंधकलोहानांप्रत्येकार्द्धंपलंक्षिपेत् ॥ ५१ ॥
गुग्गुलंत्रिपलंदत्त्वाघृतेनपरिपेषितम्।
वटीकामलकानामगहनानन्दभाषिता ॥ ५२ ॥
चतुर्मासावटीखाद्यागोमूत्रेणजडीकृता।
वातरक्तंनिहन्त्याशुनानादोषसमुद्भवम् ॥ ५३ ॥
कुष्ठंनानाविधंहन्तिनानादोषसमुद्भवम्।
दद्रुकण्डूविचर्चंश्चव्रणाशोंगंडमालिका ॥ ५४ ॥
भगंदरोपदंशाश्चविद्रधिगर्द्दभार्बुदे।
श्लीपदंशोथशूलानिकासश्वासमरोचकम् ॥ ५५ ॥
प्लीहगुल्मोदराष्ठीलामेहमेदोगलामयान्।
जीर्णज्वरमानाहश्चपांड्वादित्रितयंजयेत् ॥ ५६ ॥
संग्रहग्रहणींदुष्टांबलवर्णाग्निवर्द्धनीम् ॥ ५७ ॥

इति कामलकावटिका।

अर्थ–अंकोठकी जड, त्रिफला, गिलोय, कालीमिरच, हलदी, सतोना, कपूरकचरी और कूठ, यह प्रत्येक औषधि एक एक तोले, वायविडंग, नागरमोथा, कांच, हरिताल, सुहागा, निसोत, पारा, गंधक और लोहा, यह प्रत्येक दो दो तोले और गूगल चौवीस तोले लेवै, सब द्रव्योंको एकत्र घीके साथ पीस कर गोमूत्रमें चार चार

मासेकी गोली बनालेवै, यह कामलकानामवाली वटी गहनानन्दने कहीहै । प्रतिदिन एकगोलीखानेसै-शीघ्रही अनेकप्रकारके दोषोंसै उत्पन्न हुवा वातरक्त, नानाप्रकारके कोढ़ और दाह, कण्डू, विचर्चिका, व्रण, बवासीर, गंडमाला, भगंदर, उपदंश, विद्रधि, जालगर्दभकरोग, अर्बुद, श्लीपद, सूजन, शूल, खाँसी श्वास, अरुचि, प्लीहा, गुल्मरोग, उदररोग, आष्ठीला, प्रमेह, मेदरोग, गलरोग, जीर्णज्वर, आनाह, पाण्ड्वादिरोग और दुष्ट संग्रहणीरोग दूर होताहै, तथा बल, वर्ण और जठराग्निकी वृद्धि होतीहै ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥

मधूच्छिष्टंसमंजिष्ठंससर्जरसशारिवम् ।
पिण्डतैलंतदभ्यंगाद्वातरक्तरुजापहम् ॥ ५८ ॥

इति पिण्डतैलम् ।

अर्थ-मोम, मजीठ, राल और सारिवा, इनको तेल सिद्धकर मालिस करनेंसै-वातरक्तरोग दूर होताहै ॥ ५८ ॥

शारिवारिष्टकूष्माण्डपोतकीभस्मजाऽम्बुना ।
गुडूचीक्वाथदुग्धंचकर्म्मरङ्गरसेनच ॥ ५९ ॥
पचेत्तैलश्चातिलजंदत्त्वैतानिभिषग्वरः ।
काकोल्यौजीरकंमेदेशताह्वाक्षीरिणीयुतैः ॥ ६० ॥
जिङ्गीसिक्थामृतानन्तासर्जसैन्धवचन्दनैः ।
षड्गुंजाधिकचतुर्मासंकर्षद्वितयसंयुतम् ॥ ६१ ॥
हन्तिवातास्रजंघोरंस्फुटितंगलितन्तथा ।
चर्मदलश्चपामानंत्वग्दोषश्चविपादिकाम् ॥ ६२ ॥
कुष्ठान्यर्शांसिवीसर्पव्रणशोथभगन्दरान् ॥
नसोऽस्तिवातरक्तस्यविकारोयंनहन्तिच ॥ ६३ ॥

इति शारिवाद्यंतैलम् ।

अर्थ-तिलका तेल चारसेर, सारिवा, नीम, कुह्मडा और पोईकी क्षारका जल चारसेर, गिलोयका क्काथ चारसेर, गायका दूध चारसेर, कमरखोंका रस चारसेर और कल्कके लिये मजीठ,

मोम, जीरा, मेदा, महामेदा, खिरनी, काकोली, क्षीरकाकोली,गिलोय, सारिवा, राल, सेंधानोंन और लालचन्दन यह प्रत्येक तीन कर्ष चार मासे और छै रत्ती लेवै । सबको विधिपूर्वक मिलाके तेलको सिद्ध करै । यह तेल-वातरक्त, घोर स्फुटित और गलितरोग, चर्मदलकुष्ठ, पामारोग, त्वचाकेविकार, विपादिका, सर्वप्रकारके कुष्ठ, ववासीर, वीसर्प, व्रण, सूजन और भगन्दररोगको दूर करैहै, ऐसा कोईभी वातरक्तविकार नहीं है जिसको यह शारिवादितैल दूर नहीं करसक्ता ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥

लोहंफलत्रिकंचैवशाणमानंसमाहरेत् ।
षट्शाणंबाकुचीबीजंयत्नतः परिकल्पयेत् ॥ ६४ ॥
त्रिवृच्चित्रकमूलञ्चशाणंशाणंसमाहरेत् ।
शुण्ठीशाणत्रयंदद्याच्छाणैकंपिप्पलींतथा ॥ ६५
तोलद्वयंगुडूच्याश्चतथापौनर्नवंदलम् ।
तथावासकवल्कञ्चमुस्तंशाणद्वयंतथा ॥ ६६ ॥
शाणद्वयंघोषावतीफलंदद्याद्भिषग्वरः ।
पिष्ट्वैकत्रजलंदत्त्वाशुष्कंभक्ष्येत्प्रयत्नतः ॥ ६७ ॥
मासमेकंप्रयोगेणप्रातःकालेदिनेदिने ।
मधुनालेहपिष्टञ्चवातरक्तंविनाशयेत् ॥ ६८ ॥
गम्भीरंद्वन्द्वजंचैवत्रिदोषजमथापिवा ।
नाशयेन्नात्रसंदेहःसर्वकुष्ठंतथैवच ॥ ६९ ॥
वातरक्तान्तकोनामप्रयोगोमुनिसम्मतः ॥ ७० ॥

इति वातरक्तान्तकोरसः ।

अर्थ-लोहा और त्रिफला प्रत्येक चारमासे, बापचीके बीज तीन तोले, निसोथ, चीता, प्रत्येक चार चारमासे, सोंठ बारहमासे, पीपल चारमासे, गिलोय, पुनर्नवा और अडूसेकी छाल प्रत्येक दोदो तोले, नागरमोथा एकतोला,और कडवी तोरइयोंके वीज एक तोला भरलेवै, सबको एकत्रकर पानी डालके पीसलेवै, फिर इसको सूखजानेपर इसमें

सहत मिलाके प्रतिदिन प्रातःकाल चाटै, इसप्रकार एकमास चाटनेसै वातरक्त, गम्भीर, द्वन्द्वज और त्रिदोषवातरक्त तथा सर्वप्रकारके कोढ दूर होतेहैं, इसको वातरक्तान्तक रस कहतेहैं ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥

वरमहिषलोचनोदरसन्निभवर्णस्यगुग्गुलोःप्रस्थम्।
प्रस्थद्वयंगुडूच्यास्त्रिफलायाःपृथगपिप्रस्थम् ॥ ७१ ॥
पक्काशताढकजलेशेषितमर्धंपचेत्पश्चात्।
दत्त्वापिण्डितगुग्गुलुमस्मिन्गुडवत्साधितेशीते ॥७२॥
त्रिफलात्रिकटुविडंगंपृथक्पलार्द्धंगुडूच्याश्च।
कर्षंकर्षंत्रिवृतादन्त्योःसंचूर्ण्यनिक्षिपेत्तदनु ॥ ७३ ॥
जलमुष्णाद्यनुपानंभेषजमुपयुज्ययंत्रणाहीनः।
वातास्रंहन्त्यखिलंस्रुतशुष्कंस्फुटितमागतंजानु ॥७४॥
व्रणकासगुल्मश्वयथूदरपाण्डुमेहांश्च।
मंदाग्नित्वविबन्धंप्रमेहविट्कांश्चनाशयत्याशु ॥ ७५ ॥
सततंनिषेव्यमाणःकालवशाद्धन्तिगदान्।
अभिभूयजरादोषंयातिचकैशोरकंरूपम् ॥ ७६ ॥

(किशोरस्तरुणस्तस्यरूपम्)

इति कैशोरकगुग्गुलुः।

अर्थ–उत्तमभैंसागूगल एकप्रस्थ, गिलोय दो प्रस्थ, और त्रिफला एकप्रस्थ लेकर एकसौ आढ़क जलमें पकावै, जब जल पचास आढ़क शेषरहै तब उतारकर छानलेवै, फिर इसमें उक्तऔटेहुए गूगलको छोड़-कर गुड़की समान पकावै, पश्चात् शीतल होनेपर त्रिकुटा, त्रिफला और वायविडंग, इन प्रत्येकका चूर्ण दो दो तोले, गिलोय, निसोथ और दन्ती, प्रत्येकका चूर्ण एक एक तोले मिला देवै । इसको उष्णजलके साथ सेवन करै तौ सर्वप्रकारके वातरक्त, स्रुत, शुष्क, स्फुटित और जानुतक आयाहुआ वातरक्त, व्रण, खांसी, गुल्म, सूजन, उदररोग, पाण्डुरोग, प्रमेह, मन्दाग्नि, विबन्ध, प्रमेहपिडका, यह सब दूर होवैं।

इसको निरंतर सेवनकरनेसे यह कैशोरगूगल जरादोषको दूर करके मनुष्यको किशोरअवस्थावाले मनुष्योंकी समान रूपवान् करदेताहै ॥ ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ ७६ ॥

प्रस्थंगुडूच्याःप्रस्थार्द्धंप्रत्येकंत्रिफलापुरम्।
पक्काद्द्रोणेऽम्भसःशिष्टेपाकाद्घनेततःक्षिपेत् ॥ ७७ ॥
कोष्णेदन्त्यमृताव्योषविडंगत्रिफलारजः।
प्रत्येकमर्द्धपलिकंत्रिवृच्चूर्णञ्चकार्षिकम् ॥ ७८ ॥
वातास्रकुष्ठमेहार्शऊरुस्तम्भंभगन्दरान्।
आमवातंव्रणंशोथममृतागुग्गुलुर्जयेत् ॥ ७९ ॥

इतिअमृतागुग्गुलुः।

अर्थ-गिलोय दोसेर, त्रिफला और गूगल प्रत्येक सेर सेर भर लेवै, सबको एकद्रोण जलमें औटावै जब आधाभाग जल शेष रहै तब उतार लेवै, पश्चात् इसको छानकर दूसरीवार पकावैं; गाढे होजाने पर किंचित् उष्णमें दन्ती, गिलोय, त्रिकुटा, वायविडंग और त्रिफला प्रत्येकका चूर्ण दोदो तोलेले, और निसोथका चूर्ण एक तोला मिलादेवै। इसको अमृतागुग्गुलु कहते हैं, यह वातरक्त, कोढ, प्रमेह, ऊरुस्तम्भ, भगंदर, आमवात, व्रण, और सूजनको हरै है ॥ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥

शतावरीनागबलावृद्धदारकमुञ्चटा।
पुनर्नवामृताकृष्णावाजिगंधात्रिकण्टकम् ॥ ८० ॥
पृथक्दशपलान्येषांश्लक्ष्णचूर्णानिकारयेत्।
सर्पिष्प्रस्थमाढकार्द्धंक्षौद्रंचूर्णार्द्धशर्करा ॥ ८१ ॥
पृथक्त्रिजातकपलंदत्त्वामद्यंचभक्षितम्।
वातासृक्क्षयकुष्ठासृक्पित्तमन्यांस्तथागदान् ॥ ८२ ॥
हत्वाकरोतिपुरुषंवलीपलितवर्जितम्।

योगसारामृतोनामलक्ष्मीकान्तिविवर्द्धनः ॥ ८३ ॥
उच्चटारक्ताग्राह्याश्रेष्ठत्वान्मिलितचूर्णार्द्धसमाशर्करा।

इति योगसारामृतः।

अर्थ–शतावर, गंगेरन, विधारा, सफेद चौटलीकी जड, पुनर्नवा, गिलोय, पीपल, असगंध, और गोखरू, प्रत्येक चालीस चालीस तोले लेकर सबका बारीक चूर्ण करले। घृत दोसेर, सहत चार सेर, और सब चूरणसे आधीमिश्री, दालचीनी, इलायची और तेजपात, प्रत्येकका चूर्ण चार चार तोले लेवै, सबको एकत्र कर खूब मर्दन करै। इसको भक्षणकरनेसै वातरक्त, क्षय, कोढ, रक्तपित्त तथा अन्यान्यरोग दूर होते है, तथा मनुष्य वलीपलितरहित होजाते हैं। यह योगसारामृत–लक्ष्मी और कान्तिको बढानेवाला है ॥ ८० ॥ ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥

अलम्बुषालोहचूर्णमयोर्द्धपलेपृथक् ॥
पलत्रयंचताप्यस्यवाकुच्याश्चपलत्रयम् ॥ ८४ ॥
शिलाजतुतयोस्तुल्यंपलानिदशगुग्गुलोः ॥
सर्वाण्येतानिसंचूर्ण्यगुटिकांकारयेद्भिषक् ॥ ८५ ॥
शाणंकर्षार्द्धकर्षंवाततःखादेत्प्रयत्नतः ॥
वातरक्तानिकुष्ठानिश्वित्राणित्रिविधानिच ॥ ८६ ॥
भगन्दरान्दुष्टव्रणान्ग्रहणीश्चव्रणन्तथा ॥
बस्तिजान्गुदजान्दोषान्पाण्डुतामुदराणिच ॥ ८७ ॥
शोथश्लीपदमानाहंयक्ष्माणश्चविशेषतः ॥
नाडीव्रणान्निहन्त्याशुअंत्रवृद्धिंश्चविद्रधीन् ॥ ८८ ॥
वृष्योबल्यश्चकेश्यश्चमेधाग्निबलवर्द्धनः।
आयुर्वर्णकरस्त्वच्यःपुत्रसौभाग्यदस्तथा ॥ ८९ ॥
भग्नसंधानकृत्प्रोक्तोगृध्रदृष्टिकरःपरः।
जालपादेनविख्यातोनाम्नास्वायंभुवोभुवि ॥ ९० ॥

इति स्वायंभुवोगुग्गुलुः।

अर्थ-गोरखमुंडी और लोहेका चूर्ण प्रत्येक दो दो तोले, सोनामाखी और बापचीके बीज तीन तीन पल, शिलाजीत छै पल, और गूगल दश पल लेवै, सबको एकत्र पीसकर गोली बनालेवै। इसको चारमासे अथवा एक तोला वा दो तोलेभर यत्नपूर्वक भक्षण करै तौ वातरक्त, कोढ़, श्वित्रकोढ़, नानाप्रकारके कोढ़, भगन्दर, दुष्टव्रण, संग्रहणी, व्रण, बस्तिरोग, गुदारोग, पाण्डुता, उदररोग, सूजन, श्लीपद, आनाह राजयक्ष्मा, नाडीव्रण, अन्त्रवृद्धि, और विद्रधिरोग दूर होताहै। यह स्वायम्भुव गूगल वीर्यवर्द्धक, बलकारक, केशोंको हितकारी, मेधा, अग्नि और बलको बढानेवाला, आयुको बढानेवाला, वर्णको सुन्दरकरनेवाला, त्वचाको हितकारी, पुत्र और सौभाग्यताको देनेवाला, भग्नसन्धानकारक, गृध्रकी समान दृष्टि करनेवाला, यह स्वायम्भुव नाम वाला गूगल, पृथ्वीपर जालपादमुनिने प्रकाशित कियाहै ॥८४॥८५॥८६॥ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ ९० ॥

काकोलियुग्ममधुकंसशिवाचधात्री
जीवन्तिमेदयुगलावपिपृश्निपर्ण्यौ।
द्राक्षासपद्मकतुगाचकुलीरशृंगी
द्वौजीरकावपिसमस्तचतुष्पलाधिकम् ॥ ९१ ॥
यष्टिंविचूर्ण्यविपचेच्चशनैर्घटेऽपां
प्रस्थंमृतस्यचतथास्वरसंगुडूच्याः ॥ ९२ ॥
घृतस्यपादंपुरमेवदत्त्वापुनःपचेद्वैद्यवरोविधिज्ञः ॥
कृत्वाविरेकंवमनञ्चपश्चाद्यथानुपानंसुदिनेप्रयुज्यात् ९३
वातरक्तंमहाघोरंद्वन्द्वजंसर्वजन्तथा ॥
आमवातञ्चवातञ्चनाशयेन्नात्रसंशयः।
काकोल्यादिघृतंह्येतद्बलवर्णाग्निवर्द्धनम् ॥ ९४ ॥
वृष्यंरसायनंमेध्यंवातरक्तान्तकंविदुः।
वातरक्तगजेन्द्रायकेसरीमुनिनिर्मितः ॥ ९५ ॥

इति काकोल्यादिघृतम्।

अर्थ-काकोली, क्षीरकाकोली, मुलैठी,हरड, आमला, जीवन्ती, मेदा, महामेदा, पृश्निपर्णी, दाख, पद्माख, काकडाशिंगी, सफेदजीरा और कालाजीरा, प्रत्येक चार चार पल लेकर सबका बारीक चूर्ण करले, पश्चात् इसचूर्णको बत्तीस सेर जलमें पकावै, फिर छानकर दूसरी बार पकावै, जब पकते पकते गाढ़ा पडजावै तब दो सेर गिलोयका रस, दोसेरघी और आधसेर गूगल डालकर आलोडनकरै । तदनंतर विरेचन और वमन कराकर शुभदिनमें यथानुपानके साथ इस काकोल्यादि घृतको देवै । यह काकोल्यादिघृत-महाघोरवातरक्त, द्वन्द्वज, सर्वज आमवात और वातको दूर करैहै । यह काकोल्यादिघृत-बल, वर्ण और अग्निको बढानेवालाहै, वीर्यवर्द्धक, रसायन, मेधाजनक और वातरक्तका अंतकारकहै ।यह वातरक्तरूपी गजेन्द्रके लिये सिंहस्वरूपहै ॥ ९१ ॥ ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ ९५ ॥

गंधकंपारदंलौहंघनतालंमनःशिला ।
शिलाजतुपरंशुद्धंसमभागंविचूर्णयेत् ॥ ९६ ॥
विडंगंत्रिफलाव्योषमब्धिफेनंपुनर्नवा ।
देवदारुंचित्रकञ्चदार्वींश्वेतापराजिता ॥ ९७ ॥
चूर्णमेषांपृथक्तुल्यंसर्वमेकत्रकारयेत् ।
त्रिफलाभृंगराजस्यरसेनैवत्रिधात्रिधा ॥ ९८ ॥
भावनाखलुदातव्याततःसंचूर्ण्यभक्षयेत् ।
मधुनामाषमात्रञ्चप्रातःकालेदिनेदिने ॥ ९९ ॥
कृत्वाऽनुपानंनिम्बस्यपत्रंपुष्पंत्वचंसमम् ।
शाणमात्रंघृतैःकुर्यात्सर्ववातविकारनुत् ॥ १०० ॥
वातरक्तंमहाघोरंगंभीरंसर्वजंजयेत्
सर्वोपद्रवसंयुक्तंसाध्यासाध्यंनिहन्त्यलम् ॥ १०१ ॥

इति वातरक्तान्तकोरसः ।

अर्थ-गंधक, पारा, लोहा, अभ्रक, हरिताल, मैनशिल, समानभाग लेकर, सबका चूर्ण अलग अलग करकै पश्चात् एकत्र करलेवै, फिर

शुद्ध शिलाजीत, वायविडंग, त्रिफला, त्रिकुटा, समुद्रफेन, पुनर्नवा, देवदारु, चीता, दारुहलदी, और सफेदकोयल, इनसबको समान भाग ले, सबका अलग अलग चूर्णकर पश्चात् सबको एकत्र कर त्रिफला और भांगरेके रसकी तीन तीन भावनादेवै, फिर चूरनकर सहतके साथ एक मासेभर प्रतिदिन प्रातःकाल सेवनकरै और ऊपरसे नीमके पत्र, फूल और छालको घीमें पीसकर चारमासे भर भक्षणकरे तौ सर्वप्रकारके वातविकार, वातरक्त, महाघोरवातरक्त, गम्भीरवातरक्त, सर्वजवातरक्त, सर्वोपद्रवसंयुक्त वातरक्त और साध्य तथा असाध्य वातरक्त दूर होवै ॥ ९६ ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ १०० ॥ १०१ ॥

त्रिकटुत्रिफलादन्तीचित्रकंत्रिवृताशठी ।
विडंगमुस्तकंरात्रिबाकुचीन्द्रयवंवचा ॥ १०२ ॥
अंकोठमूलंकुष्ठञ्चराजवृक्षस्यमूलकम् ।
एतेषांपलिकंग्राह्यंतत्समंगुग्गुलुंगुरु ॥ १०३ ॥
भल्लाततैलंद्विपलंगोघृतेनजडीकृतम् ।
तत्रताम्रहरितालंद्वयोःकुर्यात्पलद्वयम् ॥ १०४ ॥
सर्वमेकीकृतंयत्नात्पेषयित्वासुपिण्डकम् ।
घृतभाण्डेतुसंस्थाप्यखादेन्मासचतुष्टयम् ॥ १०५ ॥
गुग्गुलुर्वज्रनामायंगहनानन्दभाषितः ।
देशकालवयोवह्निंदृष्ट्वावात्रुटिवर्द्धनम् ॥ १०६ ॥
वातरक्तंनिहन्त्याशुनानादोषसमुद्भवम् ।
श्लीपदंशोथशूलानिमेहमेदोगलामयान् ॥ १०७ ॥
प्लीहगुल्मोदराष्ठीलाकासश्वासमरोचकम् ।
जीर्णज्वरश्वसानाहंबलवर्णाग्निवर्द्धनम् ॥ १०८ ॥
संग्रहग्रहणींदुष्टांपाण्डुवातादित्रितयंजयेत् ॥ १०९ ॥

इति वज्रगुग्गुलुः ।

अर्थ-त्रिकुटा, त्रिफला, दन्ती, चीता, निसोथ, कचूर, वायविडंग, नागरमोथा, हलदी, बापची, इन्द्रजौ, वच, अंकोठकी जड़, कूठ,

अमलतासकी जड, यह प्रत्येक चार चार तोले, और सबकी समान गूगल, भिलावेका तेल दो पल, गायकाघी दोपल लेवै, सबको एकत्र कर यत्नपूर्वक पीसके गोला बनालेवै, इसको घीके चिकने बासनमें स्थापनकर देश,काल, अवस्था और अग्निका बलाबल देखकर प्रतिदिन चार चार मासे खावै । यह वज्रगुग्गुलु श्रीमान् गहनानन्दने भाषण कियाहै । यह गूगल नानाप्रकारके दोषोंसै उत्पन्न हुआ वातरक्तरोग, श्लीपद रोग, सूजन, शूल, प्रमेह, मेदरोग, गलरोग, प्लीहा, गुल्म, उदररोग, अष्ठीला, खाँसी, श्वास, अरुचि, जीर्णज्वर, आनाह, दुष्टसंग्रहणी और पाड्वादि तीनों रोगोंको दूर करैहै, तथा बल, वर्ण और अग्निको बढ़ावै है ॥ १०२ ॥ १०३ ॥ १०४ ॥ १०५ ॥ १०६ ॥ १०७ ॥ १०८ ॥ १०९ ॥

गरुत्मान्दरदस्तीक्ष्णंस्वर्णाह्वावंगशक्तिका ।
शुल्बश्चगगनंफेनंरुधिरश्चत्रिनेत्रकम् ॥ ११० ॥
पातालनृपतिश्चैववह्निमूलश्चरामठम् ।
त्रिकटुत्रिफलाशिग्रुचाजमोदायवानिका ॥ १११ ॥
पिप्पलीमूलभार्गीचलशुनंजीरकद्वयम् ।
आर्द्रकस्यरसेनैवगुटिकांकारयेद्भिषक् ॥ ११२ ॥
मन्दानलामवातघ्नंश्लेष्माणञ्चजलोदरम् ।
अशीतिर्वातजान्रोगान्प्रमेहांश्चैवविंशतिम् ॥ ११३ ॥
घ्राणाक्षिकर्णजिह्वानांगदश्चैवत्रिदोषजम् ।
गलिताङ्गंवातरक्तंसर्वमेतद्व्यपोहति ॥ ११४ ॥

इतित्रिनेत्रारसः ।

अर्थ–सोनामाखी, सिंग्रफ, लोहा, स्वर्णक्षीरी, बंग, गंधक, तांबा, अभ्रक, समुद्रफेन, गेरू, सोना, सीसा, चीतेकीजड, हींग, त्रिकुटा, त्रिफला, सैंजिना, अजमोद, अजवायन, पीपरामूल, भारंगी, लशुन, जीरा और कालाजीरा; इन सबको अदरखके रसमें खरलकरकै गोली बनालेवै । इन गोलियोंको सेवनकरनेसै–मन्दाग्नि, आमवात, कफ, जलोदर, अस्सीप्रकारके वातरोग, वीसप्रकारके प्रमेहरोग,

त्रिदोषज नासिका नेत्र कर्ण और जिह्वारोग, गलितांग और वातरक्तरोग दूर होता है ॥ ११० ॥ १११ ॥ ११२ ॥ ११३ ॥ ११४ ॥

विमर्द्दयेत्ततःपच्याद्गुटिकाकोलसम्मिता ।
लाङ्गल्यामूलमुद्धृत्यत्रिफलात्रिकटुकामृता ॥ ११५ ॥
द्राक्षागुग्गुलुभिस्तुल्यंलोहचूर्णंनियोजयेत् ।
मातुलुंगरसेनैवत्रिफलायारसेनच ॥ ११६ ॥
भक्षयेन्मधुनासार्द्धंशृणुकुर्वन्तियत्फलम् ।
पादस्फोटंमहाघोरंसर्वगात्रस्यस्फोटनम् ॥ ११७ ॥
तत्सर्वंनाशयन्त्याशुसाध्यासाध्यञ्चशोणितम् ॥ ११८॥

इति लांगलाद्यंलौहम् ।

अर्थ–कलिहारीकी जड़, त्रिफला, त्रिकुटा, गिलोय, दाख, गूगल, यह सब समान भाग और सबकी बराबर लोहेका चूर्ण लेवै. सब एकत्रकर विजौरे नीबूके और त्रिफलेके रसमें खरल करकैं बेरकी बराबर गोली बनालेवै। इन गोलियोंको सहतके साथ सेवन करै, इससे महाघोर पादस्फोट, सर्व शरीर स्फोटन, और साध्यासाध्य वातरक्त रोग दूर होताहै ।

गुडूचीसारसंयुक्तंत्रिकत्रयसमन्वितम् ।
वातरक्तंनिहन्त्याशुसर्वरोगहरोपिसन् ॥
सर्वचूर्णसमंलौहचूर्णंग्राह्यम् । इतिगुडच्याद्यंलौहम् ।

इतिवातरक्ताध्यायः ।

अर्थ–गिलोयका सार, त्रिफला, त्रिकुटा, नागरमोथा, चीता, वायविडंग, यह सब समान भाग और सबकी बराबर लोहेका चूर्ण लेवै, सबको एकत्र पीसकर सेवन करनेसे वातरक्तादि संपूर्ण रोग दूर होतेहैं ।

इति वातरक्ताधिकारःसमाप्तः ।

अथोरुस्तम्भचिकित्सामाह ।

ऊरुस्तम्भेविधिःकार्योवातकोपीकफापहः ।
युक्त्याजित्वाकफंरूक्षैःपश्चाद्वातंजयेद्भिषक् ॥

अर्थ–ऊरुस्तम्भरोगमें वातको कुपित करनेवाली और कफनाशक विधि करनी चाहिये । प्रथम रूक्ष क्रियाओंके द्वारा यत्नपूर्वक कफको जीतकर पश्चात् वातको जीते ।

पुराणशालिश्यामाकयवकोद्रवमोदनम् ।
अघृतैर्जाङ्गलैर्मांसैस्तथाचालवणैर्हितम् ॥
वास्तुकंवायसीनिम्बवेत्राग्रकुलकादिभिः ।
शुष्कमूलकयूषेणपटोलस्यरसेनवा ॥
कफक्षयार्थंव्यायामेष्वेनंशक्येषुयोजयेत् ।
स्थानान्याक्रामयेत्प्रातःप्रतिस्रोतोनदीन्तरेत् ॥
लिम्पेदूरुग्रहंमूत्रकरञ्जफलसर्षपैः ।
क्षौद्रसर्षपवल्मीकमृत्तिकागजपिप्पलीः ॥
त्वक्पत्रफलमूलानिकरञ्जात्सर्षपस्तथा ।
प्रलोपोद्वर्त्तनंपिष्ट्वामूत्रेणोरुग्रहापहम् ॥
शिलाजतुगुग्गुलुंवापिप्पलींवाथनागरम् ।
ऊरुस्तम्भेपिबेन्मूत्रैर्दशमूलीरसेनवा ॥
भल्लातकामृताशुण्ठीदारुपथ्यापुनर्नवा ।
पंचमूलीद्वयोन्मिश्राऊरुस्तम्भानिवर्हणाः ॥

क्काथेन ।

पिप्पलीपिप्पलीमूलंभल्लातक्काथएववा ।
कल्कोवासमधुर्देयऊरुस्तम्भविनाशनः ॥
दारुचव्याग्निपथ्यानांकल्कंचमधुनालिहेत् ।
त्रिफलाचव्यकटुकंग्रन्थिकंमधुनालिहेत् ॥

लिह्याद्वात्रिफलाचूर्णंक्षौद्रेणकटुकायुतम् ।
कटुकेनात्रिकटुकेनयुतंकिंवाकटुकंकटुकी ॥
सुखाम्बुनापिबेद्वापिचूर्णषड्धरणंनरः ॥

इति षड्धरणंवातोक्तम् ।

अर्थ-पुराने शालिधान, समा, जव और कोदोंकाभात, घृत और लवण-रहित जांगलदेशके जीवोंका मांस, वथुआ, मकोय, नीम, बेतकी कोपल, परवल और सूखीमूलीका यूष, तथा परवलका रस भोजनार्थ देवे। कफको दूर करनेके लिये बलवान् रोगीको व्यायाम, पथ-भ्रमण करावे, और प्रातःकाल प्रवाहवाली नदियोंमें तिरावे। करंजके फल और सरसोंको गोमूत्रमें पीसकर, अथवा सहत, सरसों, बांबीकी माटी, और गजपीपलको गोमूत्रमें पीसकर अथवा करंजकी छाल, पत्र, फल, मूल और सरसोंको गोमूत्रमें पीसकर लेप तथा उबटन करनेसे ऊरुग्रहरोग दूर होताहै। शिलाजीत और गूगल वा पीपल अथवा सोंठको गोमूत्रके या दशमूलके काथके साथ सेवन करनेसे ऊरुस्तम्भरोग दूर होताहै। पीपल, पीपरामूल, और भिलावेंका काढ़ा या कल्क सहतके साथ, देवदारु, चव्य, चीता और हरड़ अथवा त्रिफला, चव्य, त्रिकुटा और पीपलामूलका चूर्ण अथवा त्रिफलेका चूर्ण और कुटकी सहतके साथ, किंवा वातोक्त षड्धरणयोग किंचित् गरमजलके साथ पीनेसे ऊरुस्तम्भ रोग दूर होताहै ॥

कुष्ठंश्रीवेष्टकोदीच्यंसरलंदारुकेशरम् ।
अजगंधाश्वगंधाचतैलन्तैःसर्षपंपचेत् ॥
सक्षौद्रंमात्रयातस्यऊरुस्तम्भार्दितःपिबेत् ॥

इति कुष्ठाद्यंतैलम् ।

अर्थ-कूठ, श्रीवेष्ट, सुगंधवाला, धूपसरल, देवदारु, नागकेशर, वनतुलसी और असगंध, इनके काथ अथवा कल्कमें सरसोंका तेल पकावे, इसतेलको सहतके साथ सेवन करै तौ ऊरुस्तम्भरोग दूर होवे॥

द्विपलिकंग्रन्थिकंविश्वंसमंदध्यष्टकद्वरम् ।
कटुतैलंपचेत्प्रस्थंगृध्रस्यूरुग्रहापहम् ॥

द्विपलंप्रत्येकम् ।

अष्टकट्वरमष्टगुणंसस्नेहंदधिघृततक्रकम् ॥
इतिअष्टकट्वरंतैलम् ।
सैन्धवादितैलमत्रयोज्यम् ।

इति ऊरुस्तम्भाध्यायः ।

अर्थ-पीपरामूल आठतोले, सोंठ आठतोले, दहीका तोड बत्तीस तोले, सरसोंका तेल दोसेर, अष्टकट्वर दोसेर लेवै, सबको मिलाके तेलको पकावै । इस तेलको सेवनकरनेसै गृध्रसीवात, और ऊरुस्तम्भ रोग दूर होताहै, यहाँ सैन्धवादितैल योजना चाहिये ॥

इति ऊरुस्तम्भाधिकारःसमाप्तः ।

अथ आमवातचिकित्सामाह ।

लंघनंस्वेदनंतिक्तंदीपनानिकटूनिच ।
विरेचनंस्नेहपानंवान्तयश्चाममारुते ।
रुक्षःस्वेदोविधातव्योवालुकापुटकैस्तथा ॥

अर्थ-लंघन करना, पसीना निकलवाना, चरपरे, कडवे और दीपन पदार्थोंका भक्षण करना, विरेचन, स्नेहपान, बस्ति और वालूकी पोटलीकेद्वारा रूक्ष पसीना देना, यह सब उपचार आमवातरोगमें कराने चाहिये ॥

कार्पासास्थिकुलत्थकातिलयवैरण्डमूलातसी
वर्षाभूषणबीजकांजिकयुतैरेतत्कृतैर्वापृथक् ।
स्वेदःस्यादतिकूर्परोदराशिरःस्फिक्पाणिपादांगुली
गुल्फस्कन्धकटीरुजोविजयतेसाम्याःसमीरारुजः ॥

अर्थ-विनोले, कुलथी, तिल, जौ, अंडकीजड, अलसी, पुनर्नवा और सनकेबीज, इनसब द्रव्योंको एकत्रकर अथवा एक एकको अलग अलग कूठकर काँजीमें भिजोके पोटली बनालेवै, उन पोटलियोंसे कुहिनी, उदर, शिर, कूला, हाथ, पांव, अंगली, स्कन्ध और कमरको सेके तौ आमवात दूर होवै ॥

गोजलंपिष्टाहिंस्राकेबुकाशिग्रुभिरत्रनाङ्गयुतैः।
लेपःसामसमीरेविहितःसहवेदनेशोथे॥

अर्थ-मकोय, केउँआ, सैंजिनीकी जड और बाँबीकी मट्टी, यह सब समान भागले गोमूत्रमें पीस गरम करकै प्रलेप करैतौ वेदना और सूजनयुक्त आमवात रोग दूरहोवै।

कोष्णंकृत्वालेपःसवेदनेशोथे।
पटोलंगोक्षुरंचैववरुणंकारवेल्लकम्।
यवकोद्रवशाल्यादिप्रपुराणंसतिक्तकम्॥
लावादीनांतथामांसंतक्रेणमस्तुनाहितम्।
कुलत्थयूषसूपैश्चरूक्षमन्नंप्रदापयेत्॥

अर्थ-परवल, गोखरू, बरना, करेला, जौ, कोदौ, पुरानेशालिधान्य, और पित्तपापडा, लावादिपक्षियोंका मांस, तक्र, दहीका पानी, कुलथीका यूष और दालके साथ रूक्ष अन्न आमवात रोगमें देवै॥

शुण्ठीगोक्षुरकःक्काथःप्रातःप्रातर्निषेवितः।
सामेवातेकटीशूलेपाचनोरुक्प्रणाशनः॥

अर्थ-सोंठ और गोखुरोंका क्काथ प्रातःकाल सेवन करैतौ आमवात और कटीशूल दूरहोवै, यह पाचनहै॥

रास्नामृतारग्वधदेवदारुत्रिकण्टकैरण्डपुनर्नवानाम्।
क्काथंपिबेन्नागरचूर्णमिश्रंजंघोरुपृष्ठत्रिकपार्श्वशूली॥

इति रास्नासप्तकः।

अर्थ-रायसन, गिलोय, अमलतास, देवदारु, गोखरू, अण्डकी जड और पुनर्नवा, इनके क्काथमें पीपलका चूर्ण डालकर पीवैतौ जंघा, ऊरु, पृष्ठ, त्रिक और पार्श्वशूल दूर होवै॥

रास्नागुडूचीमेरण्डंदेवदारुमहौषधम्।
पिबेत्सर्वाङ्गकेवातेसामेसंध्यस्थिमज्जगे॥
भेदार्थमेरण्डतैलंप्रक्षिपन्तिवृद्धाः॥

इति रास्नापंचकः।

अर्थ-रायसन, गिलोय, अंडकी जड, देवदारु, और सोंठ, इनके काढेमें अंडीका तेल मिलाकर पीनेसे सर्वाङ्गगत, सन्धिगत, अस्थिगत और मज्जागत, आमवातरोग दूर होता है ॥

दशमूलामृतैरण्डरास्नानागरदारुभिः ।
क्वाथोरुबूकतैलेनसामंहन्त्यनिलंगुरुम् ॥

इति रास्नादशमूलः ।

अर्थ-दशमूल, गिलोय, अण्ड, रास्ना, सोंठ और देवदारु, इनके काढेमें अण्डीका तेल मिलाकर पानकरनेसै निःसन्देह आमवातरोग दूर होताहै ॥

आमवातगजेन्द्रस्यशरीरवनचारिणः ।
एकएवनिहन्त्याशुएरण्डस्नेहकेसरी ॥

अर्थ-मनुष्योंके शरीररूपी वनमें विचरता हुआ जो आमवातरूपी गजेन्द्रहै उसको मारनेके लिये केवल एकही अण्डका तेल सिंहस्वरूपहै.

आमवातेकणायुक्तंदशमूलीजलंपिबेत् ॥

अर्थ-अथवा दशमूलके काढेमें पीपलका चूर्ण डालकर पीनेसै, आमवातरोग दूर होताहै ।

खादेद्द्राव्यभयाविश्वंगुडूचीनागरेणवा ।
शतपुष्पाविडंगानिसैन्धवंमरिचंसमम् ॥
चूर्णमुष्णाम्बुनापीतमामघ्नंवह्निदीपनम् ॥

अर्थ-हरड, सोंठ, और गिलोयके काढेमें सोंठका चूर्ण मिलाकर पीनेसै अथवा सोंफ, बायविडंग, सैंधानोन और कालीमिरच इन सबको समानले, बारीक चूर्णकर किंचित् गरमजलके साथ पीनेसै आमवातरोग दूर होताहै, तथा अग्नि दीपन होतीहै ॥

मणिमन्थस्यभागौद्वौयवान्यास्तद्वदेवतु ।
भागास्त्रयोऽजमोदायानागराद्भागपंचकम् ॥
दशद्वौचहरीतक्याःश्लक्ष्णचूर्णीकृताःशुभाः ।
मस्त्वारनालतक्रेणसर्पिषोष्णोदकेनवा ॥

पीतंजयत्यामवातंगुल्महृद्बस्तिजान्गदान्।
प्लीहानंग्रन्थिशूलादीनर्शांस्यानाहमेवच ॥
विबन्धंजाठरान्रोगांस्तथावैदुष्टपादजान्।
वातानुलोमनमिदंचूर्णंवैश्वानरंस्मृतम् ॥

इति वैश्वानरचूर्णम्।

अर्थ-सैंधानोन दो तोले, अजवायन दो तोले, अजमोद तीनतोले, सोंठ पाँचतोले, और हरड बारहतोले लेवै, सबको एकत्र पीस बारीक चूर्ण करले, इसचूर्णको दहीका तोड, काँजी, तक्र, घी और गरमजल इनमेंसे किसीएक अनुपानके साथ पीनेसे- आमवात, गुल्म, हृदयरोग, बस्तिरोग, प्लीहा, ग्रन्थिरोग, शूल, अर्श, आनाह, विबन्ध, उदररोग, और पावोंके रोग दूर होतेहैं, और यह वैश्वानर चूर्ण वातानुलोमकहै ॥

अलम्बुषांगोक्षुरकंगुडूचींवृद्धदारकम्।
पिप्पलींत्रिवृतांमुस्तांवरुणंसपुनर्नवम् ॥
त्रिफलांनागरञ्चैवश्लक्ष्णचूर्णानिकारयेत्।
मस्त्वारनालतक्रेणपयोमांसरसेनवा ॥
आमवातंनिहंत्याशुश्वयथुंसन्धिजस्थितम् ॥

इति अलम्बुषाद्यंचूर्णम्।

अर्थ-अलम्बुषा (एक प्रकारका लज्जालु), गोखरू, गिलोय, विधारा, पीपल, निसोथ, नागरमोथा, वरना, पुनर्नवा, त्रिफला और सोंठ, इन सबका बारीक चूर्ण कर दहीका पानी, तक्र, दूध और मांसरस इनमेंसे किसी एकके साथ सेवनकरनेसे-आमवात और संधिज शोथ दूर होता है ॥

चित्रकंपिप्पलीमूलंयवानींकारवींतथा।
विडंगान्यजमोदाञ्चजीरकंसुरदारुच ॥
चव्यैलांसैन्धवंरास्नांतथागोक्षुरधान्यकम्।
त्रिफलामुस्तकंव्योषंत्वगुशीरयवाग्रजम् ॥

तालीशपत्रंपत्रञ्चश्लक्ष्णचूर्णानिकारयेत् ।
यावन्त्येतानिचूर्णानितावन्मात्रन्तुगुग्गुलुम् ॥
संमर्द्यसर्पिषागाढंस्निग्धेभाण्डेनिधापयेत् ।
ततोमात्रांप्रयुञ्जीतयथेष्टाहारवानपि ॥
योगराजइतिख्यातोयोगोऽयममृतोपमः ।
आमवाताढ्यवातादीन्कृमिकुष्ठव्रणानपि ।
प्लीहगुल्मोदरानाहदुर्नामानिविनाशयेत् ।
अग्निंचकुरुतेदीप्तंतेजोवृद्धिंबलंतथा ॥
वातरोगाञ्जयत्येषसन्धिमज्जागतानपि ॥

इति योगराजगुग्गुलुः ।

अर्थ—चीता, पीपरामूल, अजवायन, सोंफ, वायविडंग, अजमोद, जीरा, देवादारु, चव्य, इलायची, सैंधानोंन, रायसन, गोखरू, धनिया, त्रिफला, नागरमोथा, त्रिकुटा, दालचीनी, खस, जवाखार, तालीशपत्र और तेजपात, यह सब समान भागलेकर बारीक चूर्ण बनावै, और सबचूर्णकी बराबर गूगल डालै, पश्चात् इसको घृतमें मर्दन कर चिकने वासनमें भरकै रखदेवै, यह संसारमें अमृतकी समान योग, " योगराज गुग्गुलु " इसनामसे प्रसिद्ध है। इसको उचित मात्रानुसार खावे और यथेष्ट भोजन करै। यह योगराज—आमवात, आढ्यवातादिरोग, कृमि, कुष्ठ, व्रण, प्लीहा, गुल्म, उदररोग, आनाह और बवासीरको दूर करैहै। अग्निको दीपनकरै, तेज और बलको बढ़ावै, तथा सन्धि और मज्जागत वातरोगोंको हरैहै ॥

वातारितैलसंयुक्तंगुग्गुलुंपरिपेषयेत् ।
गंधकंत्रिफलाचूर्णैःसुश्लक्ष्णैर्मिश्रयेत्ततः ॥
भक्षयेत्प्रत्यहंप्रातरुष्णतोयाऽनुपानतः ।
आमवातंकटीशूलंगृध्रसींखञ्जपंगुताम् ॥
वातरक्तंसशोथञ्चसदाहंक्रोष्टुशीर्षकम् ।
शमयेच्छतशोदृष्टमपिवैद्यविवर्जितम् ॥

इति वातारिगुग्गुलुः ।

अर्थ-अंडीके तेलके साथ गूगलको पीस लेवै, पश्चात् इसमें गन्धक और त्रिफलेका चूर्ण मिलाकर प्रतिदिन प्रातःकाल गरम जलके अनुपानसे भक्षण करै तो आमवात, कटीशूल, गृध्रसीवात, खंज और पंगुता, शोथयुक्त और दाहयुक्त वातरक्त, तथा क्रोष्टुशीर्षक रोग और वैद्यवर्जित सैंकडों रोग दूर होवै ॥

पलत्रयंकषायस्यत्रिफलायाःसचूर्णितम्।
सौगन्धिकपलंचैकंकौशिकस्यपलन्तथा ॥
कुडवंचित्रतैलस्यसर्वमादाययत्नतः।
पाचयेत्पाकविद्वैद्यःपात्रेलोहमयेदृढे ॥
हन्तिवातंतथापित्तंश्लेष्माणंखंजपंगुताम्।
श्वासंसुदुर्जयंहन्तिकासंपंचविधंतथा ॥
कुष्ठानिवातरक्तंचगुल्मशूलोदराणिच।
आमवातंजयेदेतदपिवैद्यविवर्जितः ॥
एतदभ्यासयोगेनवलीपलितनाशनः।
सर्पिस्तैलरसोपेतमश्नीयाच्छालियष्टिकम् ॥
सिंहनादइतिख्यातोरोगवारणदर्पहा।
वह्नेर्वृद्धिकरंपुंसांभाषितोदण्डपाणिना ॥
चित्रतैलमेरण्डतैलं तस्यकुडवोकृतद्वैगुण्यः।
अन्यथातैलबहुत्वात्पाकःबहुर्विज्ञेयःस्यात् ॥

इति सिंहनादगुग्गुलुः।

अर्थ-त्रिफलेका क्काथ तीन पल, गंधकका चूर्ण एक पल, गूगल एक पल, और अंडीका तेल एक सेर लेवै, पश्चात् सबको मिलाकर पाकक्रियाको जाननेवाला वैद्य उत्तम लोहेके दृढ पात्रमें पकावै। इसको सेवनकरनेसे वात, पित्त, कफ, खंज और पंगुता, दुर्जय श्वास पाँच प्रकारकी खाँसी, कोढ़, वातरक्त, गुल्म, शूल, उदररोग, और वैद्य करकै वर्जितभी आमवातरोग दूर होवै। इसके अभ्यासके योगसै मनुष्य वली (शरीरमें वलोंका पड़ना), पलित (विना समयही

वालोंका धवल होजाना) रहितहो जाते हैं । घी, तेल, और रसों- युक्त शालि और साठी धानोंका भात खावै । यह सिंहनाद गूगल रोगरूप हाथियोंके दर्प्पको भंजन करनेवाला है । और मनुष्योंकी जठराग्निको बढानेवाला है । यह महादेवने भाषण कियाहै ॥

त्रिफलायाःपलान्यष्टौप्रत्येकंबीजवर्जितम् ।
गुग्गुलोर्द्विपलंचात्रनिक्षिपेत्तंसुकुट्टितम् ॥
सर्वसंक्षुद्ययत्नेनसार्द्धाढकजलेपचेत् ।
एकरात्रौस्थितंचैतत्पक्त्वापादावशेषितम् ॥
द्विपलंकटुतैलस्यमिलित्वैकत्रपाचयेत् ।
त्रिकटुत्रिफलामुस्तविडंगामलकानिच ॥
गुडूच्यग्नित्रिवृद्दन्तीचव्यसूरणमानकम् ।
अष्टाष्टौमाषकानेतान्प्रत्येकन्तुसुचूर्णितम् ॥
सहस्रार्द्धपलंद्वयंकालकंविधिशोधितम् ।
रसगंधककर्षार्द्धंप्रत्येकंकज्जलीकृतम् ॥
सम्यक्सिद्धंतुविज्ञायस्निग्धेभाण्डेविनिक्षिपेत् ।
ततोमाषद्वयंजग्ध्वाप्रातरुष्णोदकंपिबेत् ॥
प्रथमंकुरुतेवह्निंशरीरंस्थिरयौवनम् ।
धातुवृद्धिंवयोवृद्धिंबलंसुविपुलन्तथा ॥
अश्मरीमूत्रकृच्छ्रञ्चदुर्नामंसभगन्दरम् ।
आमवातंशिरोवातमम्लपित्तंनिहन्तिच ॥
कामलांपाण्डुतांश्वासंप्रमेहंगुदनिर्गमम् ।
प्लीहानंश्लीपदंश्वासंकासंपंचविधन्तथा ॥
शमयत्युदराण्यष्टौशूलान्यष्टौविशेषतः ।
भग्नास्थिविद्धवातेषुसक्थिग्रहविमोक्षये ॥
हन्यादेवंविधान्व्याधीनामवातंविशेषतः ।

ग्रन्थिवातंतथाकुष्ठंविषमज्वरमेवच ॥
मेदःकफामयंवातंव्याधिवारणदर्पहा ।
व्याधिशार्दूलविख्यातोयोगोऽयममृतोपमः ॥
इति व्याधिशार्दूलगुग्गुलुः ।

अर्थ-गुठलीरहित हरड़, बहेडा और आमला, प्रत्येक आठ आठ पल और कुटा हुआ गूगल आठ तोले गेरै, सबको यत्नपूर्वक कूटकर बारहसेर जलमें पकावै, जब चौथा भाग जल शेष रहै, तब एक रात रख दूसरेदिन आठ तोले कड़वातेल मिला चूल्हेपै चढ़ाकै इसमें त्रिकुटा, त्रिफला, नागरमोथा, वायविडंग, आमला, गिलोय, चीता, निसोत, दन्ती, चव्य, जमीकन्द और मानकन्द, इन प्रत्येकका चूर्ण आठ आठ मासे, जमालगोटेकी अन्तर्जिह्वा दो तोले, पारे और गंधककी कज्जली एक तोले मिलादें, जब भले प्रकारसै सिद्ध हो जाय तब चिकने बासनमें भरके रख देवै, पश्चात् इसको प्रतिदिन प्रातःकाल दो मासे भर खावै और ऊपरसे गरम जल पीवे । यह अग्निको दीपन करै, शरीरको स्थित यौवनयुक्त करे, धातुओंको बढावै, आयुको बढावै और अत्यन्तबलकी वृद्धि करै है । तथा पथरीरोग, मूत्रकृच्छ्र, बवासीर, भगन्दर, आमवात, शिरोवात, अम्लपित्त, कामला, पाण्डुरोग, श्वास, प्रमेह, गुदनिर्गम, प्लीहा, श्लीपद, श्वास, पांचप्रकारकी खाँसी, आठ प्रकारके उदर रोग, आठप्रकारके शूल, भग्नअस्थि, विद्धवात, सक्थिग्रह, विशेषकरकै आमवात, ग्रन्थिवात, कोढ़, विषमज्वर, मेदरोग और कफरोगको दूर करैहै । यह वातरोगरूपी हाथीके मदके दूर करनेके लिये व्याधिशार्दूल है, यह अमृतकी समान योग व्याधिशार्दूल गुग्गुलु नामसे विख्यात है ॥

त्रिफलामुस्तकंव्योषंविडंगंपुष्करंवचा ।
चित्रकंमधुकंचैवपलांशंश्लक्ष्णचूर्णितम् ॥
अयश्चूर्णपलान्यष्टौगुग्गुलुस्तावदेवच ।
आलोड्यमधुनोपेतंपलद्वादशकेनच ॥
प्रातर्विभज्यभुंजानोजीर्णेतस्मिन्नयेद्रुजः ।

आमवातंतथागुल्मंश्वयथुंविषमज्वरम् ॥
जीर्णानुसम्भवंशूलंपाण्डुरोगंहलीमकम् ॥

इति त्रिफलागुग्गुलुः ।

अर्थ-त्रिफला, नागरमोथा, त्रिकुटा, वायविडंग, पोहकरमूल, वच, चीता, और महुआ प्रत्येकका चूर्ण चारचार तोले, लोहेका चूर्ण बत्तीस तोले, और गूगल ३२ बत्तीस तोलेलेवै, पश्चात् इसमें बारहपल सहत मिलाकर नित्यप्रति प्रातःकाल सेवन करै तौ जीर्ण आमवातरोग, गुल्म, सूजन, विषमज्वर, बहुत दिनोंका शूल, पाण्डुरोग और हलीमक रोग दूर होवै ॥

वृद्धदारात्रिवृद्दन्तीकरिकर्णाग्निमानकैः ।
त्रिकत्रययुतोलोहआमवातान्तकोमतः ॥
सर्वानेतान्गदान्हन्तिदन्तिनःकेसरीयथा ॥

इति वृद्धदारकादिलोहम् ।

अर्थ-विधारा, निसोत, दन्ती, हस्तिकर्णपलाश, चीता, मानकन्द, त्रिकुटा, त्रिफला और त्रिमद, यह सब समानभाग और सबकी समान लोहा लेवै, सबको एकत्रकर चूर्ण बनाकर भक्षण करै तौ आमवातरोग, दूर होवै। जिसप्रकार सिंह हाथीको मारदेवे है उसीप्रकार यह लोह आमवातादि संपूर्णरोगोंको विध्वंस करदेवैहै ॥

योगरत्नाकरस्य ।

जारितंपुटितंलौहंचूर्णंपंचपलन्ततः ।
गुग्गुलोःपलपंचाथलौहार्द्धंमृतमभ्रकम् ॥
शुद्धसूतमभ्रसमंगन्धकञ्चतथामतम् ।
त्रिगुणामसयश्चूर्णादभ्रान्तात्रिफलांनयेत् ॥
दत्त्वाद्विरष्टपानीयमष्टभागावशेषयेत् ।
तेनचाष्टावशेषेणपचेल्लोहाभ्रगुग्गुलुम् ॥
घृततुल्यंशतावर्यारसंदत्त्वातथाशुभम् ।
प्रस्थंप्रस्थञ्चदुग्धस्यशनैर्मृद्वग्निनाभिषक् ॥

लोहमय्यापचेद्दर्व्यापात्रेचायसिमृन्मये।
ततःपाकविधिज्ञस्तुपाकसिद्धेविनिक्षिपेत्॥
रसकज्जलिकांकृत्वादत्वाचापिविशुद्धयेत्।
विडंगनागरंधान्यंगुडूचीसत्वजीरकान्॥
पंचकोलंत्रिवृद्दन्तीत्रिफलैलाचमुस्तकम्।
सुचूर्णितंचप्रत्येकंचूर्णमर्द्धपलन्तथा॥
उत्तार्यस्थापयेद्भाण्डेसिद्धेचापिसुरञ्जितम्।
घृतेनमधुनापश्चान्मर्दयित्वानुपानतः॥
भक्षयेच्छुद्धदेहस्तुशुभेऽहनिविपृच्छयच।
आमवातमहाव्याधिविनाशायमहौषधम्॥
सन्धिवातंकर्णशूलंकुक्षिशूलंसुदारुणम्।
जंघापदांगुलीशूलंगृध्रसीमग्निमान्द्यताम्॥
गुल्मंशोथंकामलाञ्चपाण्डुरोगंसुदुःसहम्।
आमवातगजेन्द्रस्यकेसरीमुनिनिर्मितः॥

इति पंचाननोरसः।

अर्थ-जारित और पुटित लोहेका चूर्ण पांचपल, शुद्ध गूगल पांच पल, अभ्रककी भस्म ढाईपल क्राथके लिये त्रिफला प्रत्येक बारहपल पांच तोले लेकर छः सौ तोले जलमें पकावै, जब आठमाभाग जल शेष रहै तब उतारले, पश्चात् उसमें अष्टावशेष काढेमें लोहेका चूर्ण, गूगल और अभ्रक तथाघृत, दूध और शतावरका रस प्रत्येक एक एक प्रस्थ डालकै उत्तम लोहेकी पात्रमें अथवा मट्टीके पात्रमें धीरै धीरै मन्दमंद अग्निसै पकावै और लोहेकी करछीसै चलाता जावै। जबपाक सिद्ध होजाय तब किंचित् गरममें गंधक और पारेकी कज्जली पांच पल, वायविडंग, सोंठ, धनियां, गिलोयका सत्व, जीरा पंचकोल, निसोथ, दन्ती, त्रिफला, इलायची, और नागरमोथा, प्रत्येकका चूर्ण दोदो तोले मिलादेवै। फिर इसको उतारकर चिकने वासनमें भरकै रखदेवै, पश्चात् इसको घृत और सहतमें मर्दनकर पवित्रहो शुभ दिनमें अनुपानके

साथ सेवन करै । यह आमवातमहाव्याधिको दूर करनेके लिये, महौषध है । तथा सन्धिवात, कर्णशूल, कुक्षिशूल, जंघाओंकी पीडा, पदांगुली शूल, गृध्रसीवात, अग्निकी मंदता, गुल्म, सूजन, कामला और दुःसह पाण्डुरोगको दूर करैहै । यह पंचाननरस आमवात-रूपी गजराजके लिये सिंहहै ॥

रसार्णवस्य ।

पिट्टितांगुग्गुलुमानींकटुतैलपलाष्टके ।
प्रत्येकंत्रिफलाप्रस्थौसार्द्धद्रोणेजलेपचेत् ॥
पादशेषंचपूतंचपुनरग्नावधिश्रपेत् ।
त्रिकटुत्रिफलामुस्तविडंगामलकालिकम् ॥
गुडूच्यग्नित्रिवृद्दन्तीचव्यंसूरणमानकम् ।
पारदंगंधकंचैवप्रत्येकंशुक्तिसम्मितम् ॥
सहस्रंकालकफलंसिद्धेसंचूर्ण्यनिक्षिपेत् ।
ततोमाषद्वयंजग्ध्वापिबेत्तप्तजलादिकम् ॥
अग्निश्चकुरुतेदीप्तंवडवानलसन्निभम् ।
धातुवृद्धिंवयोवृद्धिंबलवृद्धिकरन्तथा ॥
आमवातंशिरोवातंसन्धिवातंभगन्दरम् ।
जानुजंघाश्रितंवातंसकटीग्रहमेवच ॥
अश्मरीमूत्रकृच्छ्रञ्चभग्नञ्चतिमिरोदरम् ।
अम्लपित्तंतथाकुष्ठंप्रमेहंगुदनिर्गमम् ॥
कासंपंचविधंश्वासंक्षयञ्चविषमज्वरम् ।
प्लीहानंश्लीपदंगुल्मंपाण्डुरोगंसकामलम् ॥
शोथान्त्रवृद्धिशूलानिगुदजानिविनाशयेत् ।
मेदःकफामसंजातव्याधिवारणदर्पहा ॥
सिंहनादइतिख्यातोयोगोऽयममृतोपमः ॥

इति बृहत्सिंहनादगुग्गुलुः ।

अर्थ-गूगल आठपल, सरसोंका तेल आठपल, और त्रिफला प्रत्येक २ दोसेर लेकर डेढ द्रोण जलमें पकावै,जब जल चौथा भाग शेष रहै तब उतार लेवै,पश्चात् वस्त्रमें छानकर फिर चूल्हेपै चढादेवै,और इसमें त्रिकुटा, त्रिफला, नागरमोथा,वायविडंग,आमला, गिलोय,चीता, निसोत, दन्ती, चव्य,जमीकन्द,मानकन्द,पारा और गंधक प्रत्येक दोदो तोले, तथा शुद्ध किये हुए जमालगोटेकी अन्तर्जिह्वा १००० सबका चूर्णकर मिला देवै।इसको दोमासेभर खावै और ऊपरसे उष्ण जलपीवे।इससे जठराग्नि वडवानलकी समान दीपन होतीहै, धातु, आयु और बलको वृद्धि होती है, तथा आमवात,शिरोवात, सन्धिवात, भगन्दर, जानु और जंघाश्रितवात, कटीग्रह, अश्मरी, मूत्रकृच्छ्र,भ्रम, तिमिर, उदररोग, अम्लपित्त,कोढ,प्रमेह,गुदनिर्गम, पांचप्रकारकी खाँसी, श्वाँस, क्षय, विषमज्वर, प्लीहा, श्लीपद, गुल्म, पाण्डुरोग, कामलारोग, सुजन, अंत्रवृद्धि, शूल और बवासीर नष्ट होती है। यह मेद, कफ और आमसे उत्पन्न हुए रोगरूपी हस्तियोंके मदको दूर करनेके लिये सिंहनाद है। यह योग अमृतकी समान है।

दग्धमनिर्गतधूपंमृगशृंगंगोघृतेनसहपीतम्।
हृदयनितम्बजशूलंहरतिशिखीदारुनिवहमिव॥

अर्थ-हिरनके सींगकी भस्म गायके घीके साथ पीनेसे हृदयशूल और नितम्बशूल दूर होता है। अब हिरनके सींगकी भस्म बनानेकी विधि कहते हैं (प्रथम हिरनके सींगको छीलकर पीस लेवै, फिर उस पिसे हुए हिरनके सींगको एक नवीन मट्टीकी हांडीमें रखकर हांडीके मुखपर शराव ढकके गीली मिट्टीसे बंद कर देवै और नीचै अग्नि जला देवै, जब जलकर भस्म हो जाय तब ग्रहण कर लेवै)॥

अभिष्यन्दकरायेचयेचान्येगुरुपिच्छिलाः।
वर्जनीयाःप्रयत्नेनआमवातार्दितैर्नरैः॥

अर्थ-अभिष्यन्दकारी, भारी, और पिच्छिल द्रव्य आमवात रोगमें त्यागने चाहिये॥

परग्रन्थे।

पलशतंरसोनस्यातिलस्यकुडवन्तथा।

हिंगुत्रिकटुकंक्षारौद्वौपश्चलवणानिच ॥
शतपुष्पातथाकुष्ठंपिप्पलीमूलचित्रकौ ।
अजमोदायवानीचधान्यकश्चैवबुद्धिमान् ॥
प्रत्येकन्तुपलश्चैषांश्लक्ष्णचूर्णानिकारयेत् ।
घृतभाण्डेतथाचैतत्स्थापयेद्दिनषोडश ॥
प्रक्षिप्यतैलमानीश्चप्रस्थार्द्धंकांजिकस्यच ।
खादेत्कर्षप्रमाणश्चतोयंमद्यंपिबेदनु ॥
आमवातेतथावातेसर्वाङ्गैकांगसंश्रये ।
अपस्मारेऽनलेमन्देकासेश्वासेज्वरेषुच ।
सोन्मादेवातभग्नेचशूलेजन्तुषुशस्यते ॥
क्षारौयवक्षारसर्जिकाक्षारौयवान्याभागद्वयंके-
चिदजमोदांफोफान्धीमेवगृह्णन्तिमानीपलाष्टकम् ।
रसोनश्चतिलंनिस्तुषंकृत्वामिश्रयित्वास्निग्धे
भाण्डेकृत्वाशुधान्यराशौस्थापयेत् ।
कर्षंकर्षार्द्धंवाखादित्वातप्तजलानुपानम् ।
रसोनपिण्डाद्युपयोगजातेदाहेविदध्याद्वपुषःप्रलेपनम् ।
धत्तूरपत्रंस्वरसेनपिष्टंनागेश्वरचूर्णनवनीतयुक्तम् ॥

इति रसोनपिण्डः ।

अर्थ–लशुन १०० एक सौ पल, तिल आधसेर, हींग, त्रिकुटा, जवाखार, सज्जी, पाचोंनोन, सोंफ, कूठ, पीपरामूल, चीता, अजवायन, अजमोद और धनिया यह प्रत्येक एक एक पल लेकर सबका बारीक चूर्ण कर घीके चिकने बासनमें भर तिसमें बत्तीस तोले तेल और बत्तीस तोले कांजी मिलाके रख देवै, १६ सोलह दिन बीत जानेपर इसमेंसे एक तोला या दो तोले नित्य खावै और ऊपरसे गरम जल या मदिरा पीवै । इससे आमवात, वात, सर्वांगवात, एकांगवात, अपस्मार, मंदाग्नि, खांसी, श्वास, ज्वर, उन्माद, वातभग्न और शूल दूर होवै ।

रसोनस्यशतंक्षुण्णंतदर्द्धंनिस्तुषात्तिलात् ।
पात्रेगव्यस्यतक्रस्यपिष्टैर्द्रव्यैःसमंक्षिपेत् ॥
त्रिकटुधान्यकंचव्यंचित्रकंगजपिप्पलीम् ।
अजमोदांत्वगेलाश्चग्रन्थिकश्चपलांशिकम् ॥
शर्करायाःपलान्यष्टौपंचाजाज्याःपलानिच ।
कृष्णाजाज्याश्चचत्वारिमधुकस्यगुडस्यच ॥
आर्द्रकस्यचचत्वारिसर्पिषोष्टौपलानिच ।
तिलतैलस्यतावन्तिशुक्तस्यापिचविंशतिः ॥
सिद्धार्थकस्यचत्वारिराजिकायास्तथैवच ।
कर्षप्रमाणंदातव्यंहिंगुलवणपंचकम् ॥
एकीकृत्यदृढेभाण्डेधान्यमध्येनिधापयेत् ।
द्वादशाहात्समुद्धृत्यप्रातःखादेद्यथाबलम् ॥
सुरासौवीरकंसीधुमधुचानुपिबेन्नरः ।
जीर्णेयथेप्सितंभोज्यंदधिपिष्टविवर्जितम् ॥
आमवातार्दिताद्धांङ्गसर्वाङ्गैकाङ्गमारुतान् ।
मासात्सर्वगदान्हन्तिवातपित्तकफोद्भवान् ॥
प्रमेहोदरकुष्ठार्शःशोथगुल्मक्षयज्वरान् ।
अग्निसंधानकृद्वृष्यंदृष्ट्यायुर्बलवर्णदम् ॥

पात्रंशरावः ।

मधुकस्यगुडस्येत्यत्रमधुनःकुडवन्तथेतिपाठान्तरंतेनापिव्यवहारःशुक्ताभावेकांजिकम् ।

इति बृहद्रसोनपिण्डः ।

अर्थ—लशुनका कल्क सौपल, तुषरहित अर्थात् धुले हुए तिल पचास पल, त्रिकुटा, धनिया, चव्य, चीता, गजपीपल, अजमोद, दालचीनी, इलायची और पीपलामूल प्रत्येक चार चार तोले, बूरा आठ पल,

जीरा २० तोले, मुलैठी सोलह तोले, गुड सोलह तोले, अदरख सोलह तोले, गायका घी बत्तीस तोले, तिलका तेल बत्तीस तोले, काँजी अस्सी तोले, सफेद सरसों सोलह तोले, राई सोलहतोले, हींग दो तोले, और पाँचोनोन प्रत्येक दो दो तोले लेवै, सबका चूर्णकर एक पात्रमें गायका मट्ठाभर उसमें यह चूर्णडाल पात्रका मुख बन्द करकै धानोंके ढेरमें बारह दिन तक गाड़ देवै, पश्चात् निकालकर शक्त्यनुसार प्रातःकाल खावै और ऊपरसे सुरा, कांजी, सीधुनामवाली मदिरा और सहत इनमेंसे किसी एकका अनुपान करै। और जीर्ण होजाने पर यथेष्ट भोजन करै। और दही तथा पिष्टि छोड देवै। यह आमवात, अर्द्धांगवात, सर्वांगवात, एकांगवात, वातपित्त और कफसे उत्पन्न हुए रोग, प्रमेह, उदररोग कोढ, बवासीर, सूजन, क्षय और ज्वर इन सब रोगोंको एक महीनेमें दूर करदेताहै। भग्नसंधानकारक वीर्यवर्द्धक तथा दृष्टि, आयु, बल और वर्णको बढ़ानेवाला है॥

सैंधवंत्रिफलारास्नापिप्पलीगजपिप्पली।
स्वर्जिकामरिचंकुष्ठंशुण्ठीसौवर्चलंविडम्॥
यवान्योपुष्कराजाजीमधुकंशतपुष्पिकाम्।
पलार्द्धिकैःपचेदेतैःप्रस्थमेरण्डतैलतः॥
प्रस्थाम्बुशतपुष्पायाःप्रत्येकंमस्तुकांजिके।
दत्त्वाद्विगुणितेपानेतत्रसम्यक्प्रयोजितम्॥
आमवातहरंश्रेष्ठंसर्ववातघ्नमग्निदम्।
कटीजानूरुसन्धिस्थेपार्श्वहृद्वङ्क्षणाक्षये।
शस्तंवातान्त्रवृद्धौचसैन्धवाद्यमिदंमहत्।

इति बृहत्सैन्धवाद्यंतैलम्।

अर्थ—अंडीका तेल दोसेर, सौंफका अर्क दोसेर, दहीका तोड चारसेर, कांजी चारसेर, और कल्कके लिये सैंधानोन, त्रिफला, रायसन, पीपल, गजपीपल, सज्जी, काली मिरच, सोंठ, कालानोन, विड़नोन, अजमोद, पोहकरमूल, जीरा, मुलैठी और सोंफ, प्रत्येक दो दो तोले कूठ और अजवायन चार चार तोले लेवै। सबको विधिपूर्वक मिलाकर

सिद्ध करै। इसको पीनेसे आमवात तथा सर्वप्रकारकी वात दूर होजाती है, अग्निदीपन होतीहै तथा कटी, जानु, ऊरु सन्धि, पार्श्व और वंक्षणमें स्थित हुई वात दूर होजातीहै। यह बृहत्सैन्धवाद्यतैल वातान्त्रवृद्धि रोगोंको अत्यन्त हितकारीहै ॥

सैन्धवंश्रेयसीरास्नाशतपुष्पायवानिका।
स्वर्जिकामरिचंकुष्ठंशुण्ठीसौवर्चलंविडम् ॥
वचाजमोदाजरणपौष्करंमधुकंकणा।
एतान्यर्द्धपलांशानिश्लक्ष्णंपिष्ट्वाप्रदापयेत् ॥
प्रस्थमेरण्डतैलस्यप्रस्थाम्बुशतपुष्पजम्।
काञ्जिकंद्विगुणंदत्त्वामस्तुचद्विगुणन्तथा ॥
सिद्धमेतत्प्रयोक्तव्यमामवातहरंपरम्।
पानाभ्यंजनबस्तौचकुरुतेऽग्निबलंभृशम् ॥
वातार्त्तेवङ्क्षणेशस्तंकटीजानूरुसान्धिजे।
शूलेहृत्पार्श्वजेवृद्धौकृच्छ्रेऽश्मरीप्रपीडिते ॥
बाह्यायामार्दितेवातेत्वन्त्रवृद्धिनिपीडिते।
अन्यांश्चानिलजान्रोगान्नाशयत्याशुदेहिनाम् ॥

इतिबृहत्सैन्धवाद्यंतैलम्।

इति आमवाताध्यायः।

अर्थ-सैंधानोंन, हरड, रायसन, सोंफ, अजवायन, सज्जी, कालीमिरच, कूठ, सोंठ, कालानोंन, विरियासंचरनोंन, बच, अजमोद, जीरा, पोहकरमूल, मुलैठीऔर पीपल, यह प्रत्येक दोदो तोले लेकर सबको बारीक पीसलेवै, फिर दोसेर अंडीका तेल, दोसेर सोंफका क्काथ, चारसेर दहीका पानी लेवै, सबको मिलाकर सिद्ध करै। इस तेलको पान, अभ्यंजन और बस्तिकर्म्ममें प्रयोग करै। यह तेल आमवातनाशक और अग्निवर्धक है तथा वंक्षण, कटि, जानु संधि, हृदय और पसली, इनका शूल, मूत्रकृच्छ्र, पथरी, बाह्यामवात, अन्त्रवृद्धि और अन्यान्य वातरोगोंको दूर करै है ॥

इति आमवाताधिकारः समाप्तः।

अथ शूलचिकित्सामाह ।

वमनंलंघनंस्वेदःपाचनंफलवर्त्तयः ।
क्षारचूर्णानिगुटिकाः शस्यन्तेशूलशान्तये ॥
पुंसःशूलाभिपन्नस्यस्वेदएवसुखावहः ।
पायसैः कृशरैःपिष्टैःस्निग्धैर्वापिसितोत्करैः ॥

अर्थ-वमन, लंघन, स्वेद, पाचन, फलवर्त्ती, क्षार, चूर्ण और गुटिका यह सब शूलरोगमें शान्तिके लिये प्रयोग करै। शूलरोगयुक्त मनुष्यको स्वेदही सुखकारक है, तथा खीर, खिचड़ी, पिट्ठी, स्निग्ध और खाँड-युक्त द्रव्यशूलरोगमें हितकारीहैं ॥

शूलेतुवातिकेऽभ्यङ्गस्वेदमर्द्दनवस्तयः ।
स्निग्धोष्णमनुपानञ्चसस्नेहमुपनाहनम् ॥
बिल्वमूलतिलैरण्डकांजिकैर्वाथवातिलैः ।
गुटिकांभ्रामयेदुष्णांवातशूलविनाशिनीम् ॥
नाभिलेपाज्जयेच्छूलंमदनःकांजिकान्वितः ।
बलापुनर्नवैरण्डबृहतीद्वयगोक्षुरैः ॥
सहिंगुलवणक्काथः सद्योवातरुजापहः ।
तुम्बुरूण्यभयाहिंगुपुष्करंलवणत्रयम् ॥
पिबेद्यवाम्बुनावातगुल्मशूलापतन्त्रकी ।
यवानीहिंगुसिन्धूत्थक्षारसौवर्चलाभयाः ॥
सुरामण्डेनपातव्यावातशूलनिषूदनाः ।
विश्वमेरण्डजंमूलंक्काथयित्वाजलंपिबेत् ॥
हिंगुसौवर्चलोपेतंसद्यःशूलनिवारणम् ।
विश्वैरण्डयवक्काथःसद्यः शूलनिवारणः ॥

अर्थ-वातजन्यशूलरोगमें अभ्यंग, स्वेद, मर्दन, बस्ति, स्निग्ध और उष्ण अनुपान तथा स्नेहयुक्त उपनाहस्वेद हितकारकहै । बेलकी

जड, तिल, अण्डकी जड, इनको कांजीमें पीसकर गोली बना अथवा तिलोंकी गोली बना गरमकर स्वेददेवै तौ वातजशूल दूर होवै। मैनफलको कांजीमें पीसकर नाभिपै लेपकरनेसे वातशूल नष्ट होता है। खिरैटी, पुनर्नवा, अंड़कीजड़, बृहती, कटेरी और गोखरू इनके काढ़ेमें हींग और सैंधेनोनको डालकर पीनेसे वातजनितशूल रोग दूर होता है। धनिया, हरड, हींग, पोहकरमूल, कालानोन, सैंधानोन, और विरियासंचरनोन इनका क्काथ बना जवोंके जलकेसाथ पीनेसे वातजनितगुल्म, शूल और अपतन्त्रक वातरोग दूर होताहै। अजवायन, हींग, सैंधानोन, जवाखार, कालानोन, और हरड़, इनका चूर्ण सुराके मंडके साथ पीनेसे वातजशूल नष्ट होताहै। सोंठ और अण्डकी जड़के क्काथमें हींग और कालानोन डालकर पीनेसे अथवा सोंठ, अण्ड और जौंका क्काथ पीनेसे तत्काल शूल दूर होताहै॥

गुडःशालिर्यवाःक्षीरसर्पिष्पानंविरेचनम्।
जाङ्गलानिचमांसानिभेषजंपित्तशूलिनाम्॥

अर्थ-गुड, शालिधान, जौ, दूध, घी, और जाङ्गलदेशके जीवोंका मांस इनका भक्षण करना, और विरेचन यह पित्तशूलरोगवालोंकी औषधी है॥

प्रातर्वरीरसःपीतःसक्षौद्रोदाहशूलहा॥

अर्थ-प्रातःकाल शतावरका रस सहतकेसाथ पीनेसे दाहयुक्तशूलरोग दूर होताहै॥

बृहत्यौगोक्षुरैरण्डकुशकाशेक्षुबालिका।
पीताःपित्तभवंशूलंसद्योहन्तिसुदारुणम्॥

अर्थ-बृहती, कटेरी, गोखरू, अंडकीजड, कुश, काँस और इक्षुबालिका (एक प्रकारकी ईख, जो कि ईखकी समान होती है, जिसको वंगदेशमें आनाखु और खागड़ा कहतेहैं), इनका क्काथ पीनेसे तत्काल दारुणपित्तजशूल दूर होता है॥

त्रिफलानिम्बयष्ट्याह्वकटुकारग्वधैःस्मृतम्।
पाययेन्मधुमिश्रं वा दाहशूलोपशान्तये॥

अर्थ-त्रिफला, नीम, मुलैठी, कुटकी, और अमलतास इनके काढेमें सहत मिलाके पीनेसे दाह और शूल शान्त होताहै ॥

कफशूलेबस्तिनस्यंलंघनंकटुरूक्षकम् ।
पंचमूलकृतापेयादीपनंकफशूलनुत् ॥
अर्द्धशृतेनकल्केनवा ।

अर्थ-कफजशूल रोगमें बस्ति, नस्य, लंघन, कटु और रूक्षद्रव्य हितकारकहै । पंचमूलके अर्द्धावशिष्ट क्वाथके अथवा कल्कके साथ बनाई हुई पेया पीनेसे जठराग्नि दीपन होतीहै और कफजशूल दूर होताहै ॥

लवणत्रयसंयुक्तंपंचकोलंसरामठम् ।
सुखोष्णेनाम्बुनापेयंकफशूलनिवारणम् ॥

अर्थ-सैंधानोन, कालानोन, विरियासंचरनोन, पंचकोल और हींग इनका बारीक चूर्णकर सुखोष्णजलके साथ पीनेसे कफजशूल दूर होताहै॥

बिल्वमूलमथैरण्डंचित्रकंविश्वभेषजम् ।
हिंगुसैन्धवसंयुक्तंसद्यःशूलनिवारणम् ॥

अर्थ-बेलकीजड, अण्डकीजड, चीता और सोंठ, इनके क्वाथमें सैंधानोन और हींग डालकर पीनेसै तत्काल शूल नष्ट होताहै ॥

मातुलुङ्गरसोवापिशिग्रुक्काथस्तथापरः ।
सक्षारोमधुनापीतःपार्श्वहृद्बस्तिशूलनुत् ॥

अर्थ-बिजोरेके रसमें अथवा सैजिनेके काथमें जवाखार और सहत-डालके पीनेसे पार्श्व, हृदय और बस्तिशूल आराम होताहै ॥

दीप्यकंसैन्धवंपथ्यानागरञ्चचतुःसमम् ।
चूर्णंशूलंजयत्याशुमन्दस्याग्नेश्चदीपनम् ॥
इति तप्तजलेनपेयम् ।

अर्थ-अजमोद, सैंधानोन, हरड और सोंठ, सब समान भागले चूर्णकर गरम जलकेसाथ पीनेसे शूल निर्मूल होजाताहै और अग्नि-प्रदीपन होती है ॥

विश्वोरुबूकदशमूलयवाम्भसातु
द्विक्षारहिंगुलवणत्रयपुष्कराणाम्।
चूर्णंपिबेद्धृदयपार्श्वकटीग्रहाम-
पक्वाशयांसभृशरुग्ज्वरगुल्मशूली॥
अत्रचूर्णापेक्षीचतुर्द्रवः।
इति बृहद्विश्वादि।

अर्थ-सोंठ, अण्डकीजड, दशमूल और जौ, इनके चौगुने काथमें जवाखार, सज्जी, हींग, सैंधानोन, कालानोन, विरियासंचरनोन, और पोहकरमूलका चूर्ण मिलाकर सेवनकरनेसे हृदय, पार्श्व, कटि और आमशूल, पक्वाशय और स्कन्धदेशकी वेदना, ज्वर, गुल्म और शूल दूर होताहै॥

विदारीदाडिमरसःसव्योषलवणान्वितः।
क्षौद्रयुक्तोजयत्याशुशूलंदोषत्रयोद्भवम्॥

अर्थ-विदारीकन्द, और अनारके रसमें त्रिकुटा, सैन्धानोनका चूर्ण डालके सहतकेसाथ पीनेसे सान्निपातिक शूल दूर होताहै॥

एरण्डबिल्वबृहतीद्वयमातुलुंग-
पाषाणभित्त्रिकण्टकमूलकृतःकषायः॥
सक्षारहिंगुलवणोरुबुतैलमिश्रः
श्रोण्यंसमेढ्र्यहृदयस्तम्बरुक्षपेयः॥
इति एरण्डसप्तकः।

अर्थ-अण्डकीजड, बेल, कटेरी, कटाई, बिजोरा, पाषाणभेद, और गोखरू, इनके काढेमें हींग, सैंधानोन, जवाखार, और अण्डीका तेल मिलाकर पानकरनेसे कटी, संधि, मेढ्र और हृदयशूल दूर होताहै॥

तुम्बुरूण्यभयाहिंगुपौष्करंलवणत्रयम्।
यवानीचयवक्षारोविडंगानिसमानिच॥

त्रिवृत्त्रिगुणितंचूर्णंपिबेदुष्णेनवारिणा ।
आनाहमुदराण्यष्टौविद्रधिंगुल्ममेवच ॥
निहन्तिसर्वंइतितुम्बर्वाद्यचूर्णंशूलानितुम्बुर्वाद्योऽतिविश्रुतः ॥

अर्थ–तुम्बुरु, हरड, हींग, पोहकरमूल, कालानोंन, सैंधानोंन विरियासंचरनोंन, अजवायन और वायविडंग, यह सब समान भाग और निसोत तीन भाग लेवै, सबका बारीक चूर्ण कर गरमजलके साथ पीवै तौ आनाह, आठप्रकारके उदररोग, विद्रधि, गुल्म और सर्वप्रकारके शूल दूर होवै ॥

शुद्धलोहमलाच्चूर्णंषट्पलंपंचकार्षिकम् ।
हरीतक्याःकठिन्याश्चरसगंधकयोःपृथक् ॥
अर्द्धकर्षंततःकर्षंचित्रकंनागरंकणा ।
सूक्ष्मैलातेजपत्रञ्चवाट्यालंभद्रमुस्तकम् ॥
यवानीधान्यकंधूपंविभीतक्यामलक्यपि ।
विडंगंशंखनाभिंचअर्जुनाशनयोस्त्वचः ॥
अपामार्गभवंमूलं सर्वमेकीकृतंशुभम् ।
पीठोपरिपदं न्यस्यप्रस्तये घृतभाजने ॥
भुक्तोपरिचतच्चूर्णंकर्षंकर्षार्द्धमाचरेत् ।
तप्तोदकानुपानञ्चताम्बूलंभक्षयेत्ततः ॥
ततोभूमौपदंदत्त्वाभूमेःकिंचिद्यथासुखम् ।
प्रत्यहंभक्षयेद्धत्त्यावाह्निसंदीपनंपरम् ॥
शूलमष्टविधंहन्तिविशेषात्परिणामजम् ।
अन्नद्रवकृतंशूलंगुल्मशूलञ्चनाशयेत् ॥
कटीपार्श्वभवंशूलंयकृत्प्लीहकृतञ्चयत् ।
शूलानामपिसर्वेषामौषधंनास्तितत्परम् ॥
कामलापाण्डुरोगघ्नंहलीमकाविनाशनम् ।

मानवानांकृपाहेतोर्देवदेवेननिर्मितम् ॥
चित्रकाद्यमिदंचूर्णसर्वशूलान्तकंमतम् ॥

इति सर्वेश्वरचूर्णम् ।

अर्थ-त्रिकुटा, त्रिफला, शम्बूकके मुखका चूर्ण, जवाखार, कामरुदेशकी सेलखड़ी (असगंध और लालसेलखड़ी), इन्द्रजव, और सतोनाका खार प्रत्येकसमान, गोमूत्र और कलमी शाकके रससै शुद्ध किया हुआ मण्डूर सब औषधियोंसे दुगुना लेकर सबका एकत्र चूर्ण करले । इसको सर्वेश्वरचूर्ण कहतेहैं, इसको भोजनके पूर्व, मध्य और अन्तमें भक्षणकरै । अनुपान-शुष्कपत्र, जल और गायका अध औंटा हुआ गरमागरम दूध है । इसको सेवनकरनेसे मनुष्य बहुतदिनोंके पुराने, महादुस्तर और असाध्य शूलसै छूट जाते हैं, तथा भरकै रखदेवै । इसको भोजनके पश्चात् कर्ष या अर्द्धकर्ष प्रमाण गरम जलके साथ खावै । तदनन्तर पानखाय और कुछ देर पृथ्वीमें पांवधर सुखपूर्वक बैठे । इसप्रकार प्रतिदिन खावै । इससे आठप्रकारके शूल, विशेषकरकै परिणामशूल, अन्नद्रवकृतशूल, गुल्मशूल, कटी और पार्श्वोद्भवशूल, यकृत और प्लीहासे उत्पन्न हुआ शूल, कामला, पाण्डुरोग और हलीमकरोगको दूर होता है । यह शूलरोगकी एकही औषधि है । यह चित्रकाद्यचूर्ण देवादिदेव शिवजीने मनुष्योंके हितके लिये निर्माण कियाहै ॥

त्रिकटुत्रिफलाचूर्णचूर्णशम्बूकजाननम् ।
यवक्षारंतथारक्तकठिनीकामरूपिणी ॥
शक्रचूर्णसमाधिकंक्षारंदानदलोद्भवम् ।
यावन्त्येतानिचूर्णानिमण्डूरंद्विगुणन्ततः ॥
मन्डूरंद्विगुणंकार्यंगोमूत्रैःसप्तचैवहि ।
कलम्बीस्वरसैःशुद्धंशोधयेत्सुविचक्षणः ॥
एकीकृत्यप्रयत्नेनचूर्णसर्वेश्वराह्वयम् ।
प्राङ्मध्यान्तक्रमेणैवभोजनस्यप्रयोजयेत् ॥

मात्रयाचानुपानञ्चशुष्कपत्रजलेपयः ।
गव्यमर्द्धशृतंकृत्वाशूलादन्तकमान्वितात् ॥
चिरजातसर्वतोधीमान्दुस्तरान्मुच्यतेनरः ।
पक्तिशूलात्तथैवान्नद्रवशूलाच्चसर्वशः ॥
मुच्यतेमानवोयाद्दग्विष्णुमाराधनेभवात् ।
प्लीहगुल्मोदरादींश्चमन्दाग्नित्वमरोचकम् ॥
कासंपंचविधंचापिऊरुस्तम्भामवातकैः ।
हन्यादेवप्रयोगोऽयमश्विभ्यांनिर्मितःपुरा ॥

इति चित्रकाद्यंचूर्णम् ।

अर्थ–शुद्ध लोहेके मलकाचूर्ण छैपल, हरड़ और सेलखड़ी प्रत्येक दश तोले, शुद्धपारा एक तोला, शुद्ध गंधक एक तोला, चीता दो तोले, सोंठ दो तोले, पीपल दो तोले, छोटी इलायची दो तोले, तेजपात दो तोले, खिरैटी दो तोले, नागरमोथा दो तोले, अजवायन दो तोले, धनिया दो तोले, राल दो तोले, आमला दो तोले, वायविडंग दो तोले, शंखनाभि दो तोले, अर्जुनवृक्षकी छाल दो तोले, असनवृक्षकी छाल दो तोले, और चिरचिरेकी जड़ दो तोले लेकर सबका बारीक चूर्णकर घीके चिकने बासनमें रखकर प्रति दिन खानेसे पक्तिशूल और अन्नद्रवकृत शूलसे मनुष्य इसप्रकार निर्मुक्त होजातेहैं जैसे विष्णु-भगवान्के आराधनसे इस असारसंसारसे निर्मुक्त होजाते हैं। तथा प्लीहा, गुल्म, उदररोग, मन्दाग्नि, अरुचि, पाँचप्रकारकी खाँसी, ऊरु-स्तम्भ, और आमवात रोग दूर होजाता है। यह योग पूर्वकालमें अश्विनी-कुमारोंने निर्माण किया है ॥

शंखचूर्णसलवणंसहिंगुव्योषसंयुतम् ।
उष्णोदकेनतत्पीतंशूलंहन्तित्रिदोषजम् ॥

अर्थ–शंख, सैंधानोन, हींग और त्रिकुटा इनका चूर्ण बनाकर गरम जलके साथ सेवनकरनेसे त्रिदोषज शूल आराम होताहै ॥

गोमूत्रशुद्धमण्डूरंत्रिफलाचूर्णसंयुतम् ।

विलिहन्मधुसर्पिभ्यांशूलंहन्तित्रिदोषजम् ॥
सर्वचूर्णसमंमण्डूरंग्राह्यंप्रधानत्वात् ।

इति त्रिफलामण्डूरम् ।

अर्थ-त्रिफला प्रत्येक एक भाग और गोमूत्रमें शुद्ध किया हुआ मण्डूर तीन भाग लेव, सबका एकत्र चूर्ण बनाकर सहत और घीके साथ चाटनेसे त्रिदोषज शूल नष्ट होताहै ॥

बीजपूरकमेरण्डंरास्नांगोक्षुरकंबलाम् ।
पृथक्पंचपलान्भागान्यवप्रस्थसमायुतान् ॥
वारिद्रोणेनसंसाध्यंयावत्पादावशेषितम् ।
घृतप्रस्थंपचेत्तेनकल्कंदत्त्वाक्षसम्मितम् ॥
तुम्बुरूण्यभयाव्योषहिंगुसौवर्चलंविडम् ।
सैन्धवंयावशूकञ्चस्वर्जिकामम्लवेतसम् ॥
पुष्करंदाडिमंचैववृक्षाम्लंजीरकद्वयम् ।
मस्तुप्रस्थद्वयंसिद्धंततोमृद्वग्निनापचेत् ॥
पानमेतत्प्रशंसन्तिशूलंहन्यात्रिदोषजम् ।
वातशूलंयकृच्छूलंगुल्मप्लीहापहंपरम् ॥
हृच्छूलंपार्श्वशूलञ्च अंगशूलञ्चयद्भवेत् ।
बलवर्णकरंहृद्यमग्निसंदीपनंपरम् ॥

इति बीजपूराद्यंघृतम् ।

अर्थ-गायकाघी दोसेर, दहीका तोड चारसेर, काथके लिये विजौरा नीबू, अण्ड, रास्ना, गोखरू, और खिरैटी ५ पल, जौ दोसेर, पाकके लिये जल ३२ बत्तीस सेर, शेष आठसेर रक्खे, कल्कके लिये तुम्बुरु, हरड, त्रिकुटा, हींग, कालानोन, विरियासंचरनोन, सैंधानोन, जवाखार, सज्जी, अम्लवैंत, पोहकरमूल, अनार, विषांबिल, जीरा और कालाजीरा, प्रत्येक समान और सब बीस तोले लेवै । सबको यथाविधिसे मिलाकर मन्दाग्निसे पकावै । जब सिद्ध होजाय तब उतारकर

उत्तमपात्रमें भरके रख देवै । इसको पीनेसे- त्रिदोषशूल, वातशूल, यकृच्छूल, गुल्म, प्लीहा, हृदयशूल, पार्श्वशूल और अंगशूल, नाश होताहै । यह- बल, वर्ण, इनको करनेवाला, हृदयको हितकारी, और अग्निको दीपनकरनेवाला है ॥

रास्नाश्वगन्धाकपिकच्छुभूमिकूष्माण्डगोकण्टकशालपर्णी ।
छिन्नारुहैरण्डबलाशताह्वपुनर्नवानांविधिनोद्धृतानाम् ॥
प्रत्येकशःपंचपलंगृहीत्वापचेद्घटेऽपांकृतपादशेषे ॥
शतावरीरसंपूतंदत्त्वात्रपलषोडशम् ।
घृतप्रस्थंविपक्तव्यंतैलमेरण्डमेववा ॥
दत्त्वाष्टवर्गकल्कञ्चगुग्गुलोर्वापलाष्टकम् ।
सिद्धंघृतंचतैलंवादद्याद्वातगदातुरे ॥
एकजंद्वन्द्वजंचैवसर्वगञ्चविशेषतः ।
आमवातगदंहन्तिघृतमेतदनुत्तमम् ॥
पार्श्वशूलञ्चहृच्छूलंकटिशूलञ्चनाशयेत् ।
पादमन्याभिसन्धीनांशूलंहन्तिनसंशयः ॥

इति रास्नाद्यंघृतंतैलञ्च ।

अर्थ-गायकाघी अथवा अंडका तेल दोसेर, शतावरका रस दो सेर, क्वाथके लिये रास्ना, असगंध, कौंछ, विदारीकन्द, गोखरू, शालिपर्णी, गिलोय, अण्ड, खिरेटी, सौंफ और पुनर्नवा प्रत्येक पांच पल, जल ३२ बत्तीस सेर, शेष आठसेर रक्खै, और कल्कके लिये (काकोली, क्षीरकाकोली, मेदा, महामेदा, ऋद्धि, वृद्धि, जीवक, ऋषभक) या गूगल एकसेर लेवै । सबको मिलाकर घृत अथवा तेल सिद्ध करै । इस घृत या तेलको सेवनकरनेसे सर्व प्रकारके वातरोग और आमवातरोगको दूर करैहै । तथा पार्श्वशूल, हृदयशूल, कटिशूल, पाद, मन्या और संधियोंके शूलको हरैहै ॥

मृतःसूताभ्रकंचाम्लवेतसंताम्रगंधकम्
विषंफलत्रयंतुल्यंचूर्णमर्द्यादिनावधि ॥

विषमुण्डतिकावासाविजया रक्तशालिनी ।
बृहतीचमहाराष्ट्रीधत्तूरंपद्मपत्रकम् ॥
अन्तमत्यमृता जम्बुर्गव्यंनीलोत्पलद्रवैः ।
समांशंपंचलवणंदत्त्वार्द्रकरसेनच ॥
दिनंपेष्यंततःकुर्याद्वटिकांचणमात्रकम् ।
प्रातर्मध्याह्नरात्रौचभक्षयेद्वटिकात्रयम् ॥
मांसेक्षुपिष्टगुर्वन्नंगोपयश्चपिबेच्छनैः ।
भक्षयेद्वातशूलार्त्तःसोऽयमग्निरसोत्तमम् ॥
हरीतकीप्रतिविषाहिंगुसौवर्चलंवचा ।
कलिंगेन्द्रयवातुल्यंपाययेदुष्णवारिणा ॥
कर्षैकमनुपानंस्याद्वातशूलहरंपरम् ॥

इति अग्निमुखरसः ।

अर्थ–पारेकी भस्म, अभ्रककी भस्म, अमलवेंत, तांबेकी भस्म, शुद्ध गंधक, शुद्ध तेलिया और त्रिफला, यह सब समान भाग लेकर एक एक दिन विषतुण्डिका, वासा, भांग, रक्तशालिनी, बृहती, जलपीपल, धतूरा, कमलके पत्र, शालिपर्णी, गिलोय, जामन, गोबर और नीलोत्पलके रसमें खरल करै । फिर इसमें समान भाग पंचलवण मिलाकर एक दिन अदरखके रसमें खरल करै । पश्चात् चनेकी बराबर गोलियां बनालेवै । एक गोली प्रातःकाल, एक गोली दुपहरको और एक गोली रातको भक्षण करै, इसप्रकार प्रतिदिन तीन गोली खावै । अनुपान–हरड, अतीस, हींग कालानोंन, वच, कुडेकीछाल और इन्द्रजवका चूर्ण दोतोला गरम जलके साथ । इसपर मांस, ईख, पिट्ठी भारी अन्न और गायका दूध पीवै । यह अग्निमुखरस वातशूलको दूर करैहै ॥

भस्मसूतसमंचाभ्रंशिलागंधकतालकम् ।
हिंगुकंकुष्ठमुस्तञ्चतुल्यंचूर्णविभावयेत् ॥

स्नुह्युन्मत्तस्यनिर्गुण्डीमहाराष्ट्रीद्रवैःपुनः ।
प्रतिद्रावैर्दिनंभाव्यंशुष्कंतद्गोलकंकुरु ॥
वस्त्रेबद्धामृदालेप्यंशुष्कन्तुसंपुटेपचेत् ।
चतुर्यामार्धमात्रेषुतदामाय विचूर्णयेत् ॥
गुंजाष्टंघृतशुण्ठीभ्यांलेह्यश्चोदयभास्करः ।
वातशूलप्रशान्त्यर्थंतिलक्षारंसकुष्टकम् ॥
मधुनालेहयेच्चानुमलंवाकाकतुण्डजम् ।

इति उदयभास्कररसः ।

अर्थ—पारेकी भस्म,अभ्रककी भस्म, मैनशिल, गंधक, हरिताल, हींग, मुरदारसिंह नागरमोथा, यह सब समान भाग लेकर थूहर, धतूरा, सम्हालु और जलपीपके रसमें एक एक दिन खरल कर गोला बना सुखादेवै, पश्चात् इस गोलेको वस्त्रमें बांध मट्टीका लेपकर ४॥ साढ़ेचार प्रहर तक पुटपाककरे। शीतल होने पर चूर्ण करलेवै । आठ गुंजाभर इस उदयभास्कर रसको सोंठके चूर्णके तथा सहतके साथ चाटै तौ वात शूल दूर होवै।अनुपान तिलोंका खार और कूटका चूर्ण या कौआठोडीकी जलका चूर्ण सहतके साथ ॥

शुद्धसूतंसमंगंधंमृताकारोमनःशिला ।
सैन्धवंमाक्षिकंतालंधत्तूरंहिंगुसूरणम् ॥
महाराष्ट्रयर्कनिर्गुण्डीवासैरण्डद्रवैर्दिनम् ।
मर्द्यंरुद्धापुटेपच्यात्कुक्कुटाख्येसमुद्धरेत् ॥
अष्टगुंजांलिहेत्क्षौद्रैर्भूदारोवातशूलजित् ।
हिंगुसौवर्चलंशुंठीमक्षमुष्णाम्बुनाप्यनु ॥

इति भूदारोरसः ।

अर्थ—शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, तांबेकी भस्म, लौहेकी भस्म, मैनफल, सैंधानोंन, सोनामाखी, हरिताल, धतूरा, हींग और जमीकन्द, यह सब समान भाग लेकर जलपीपल, निर्गुण्डी, वासा और अण्डके रस-में एक एक दिन खरलकर कुक्कुटपुटमें पकावै । आठ घुघुची

भर इस भूदाररसको सहतके साथ चाटै तौ वातशूल दूर होय. अनुपान-हींग, कालानोंन और सोंठका चूर्ण दो तोले भर गरम जलके साथ पीवै ॥

इति भूदारोरसः ।

मृतसूतस्यभागैकंभागैकं शोधितांशिलाम् ।
दिनंजम्बीरजैर्द्रावैर्मर्द्यंरुद्ध्वाधमेल्लघु ॥
शिलाबद्धोरसोनामगुंजैकंपित्तशूलजित् ।
एकंहिंगुशतंपथ्यात्रिशुण्ठीद्विसुवर्चला ॥
एतच्चूर्णञ्चकर्षैकमनुस्याच्छूलशान्तये ॥

इति शिलाबद्धरसः ।

अर्थ-पारेकीभस्म एकभाग, शुद्धमैनाशिल एकभाग लेकै दोनोंको जम्बीरीनीबूकेरसमें एकदिन खरलकर लघुपुटमेंरखके फूँकदेवे। इस शिलाबद्धरसको एकगुंजाभर खानेसे पित्तशूल दूर होताहै । अनुपान एकभाग हींग, सौभाग हरड़, तीनभाग सोंठ और दो भाग कालानोन इनका चूर्ण बनाकर दो तोले खावै ॥

विषकर्षवचाकर्षत्रिकटुत्रिफलाचषट् ।
भार्गीमुस्ताविडंगानांप्रतिकर्षञ्चचूर्णयेत् ॥
गुडेनसर्वतुल्येनगुटिकाचणमात्रका ।
शूलसिंहप्रयोगोऽयंकफशूलहरंभवेत् ॥
एरण्डतैलशुण्ठीभ्यांहिंगुसौवर्चलान्वितम् ॥
उष्णोष्णकैःपिबेच्चानुरसोवानन्दभैरवः ॥

इतिशूलसिंहरसः ।

अर्थ-विष, वच, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आमला, भारंगी, नागरमोथा, और वायविडंग प्रत्येक एक२ कर्ष लेकर सबका चूर्ण करले और सब चूर्णकी बराबर गुड मिलाकर चनेकी समान गोली बना लेवै। यह शूलसिंहरस कफशूलको नष्ट करैहै । अनुपान-हींग और कालेनोनको अंडीके तेल और सोंठकेसाथ या गरम जलकेसाथ पान करै ॥

शुद्धसूतंमृतंताम्रंशिलामाक्षिकतालकम् ।
चूर्णयेल्लवणंपंचएतद्दशकतुल्यकम् ॥
सूततुल्यंवत्सनाभंचूर्ण्यंभाव्यंदिनावधि ।
विषमुष्ट्याजयन्त्यावाविजयारक्तशाकिनी ॥
शोभांजनंमहाराष्ट्रीद्रवैर्धुस्तूरजैस्तथा ।
रुद्धातुसंपुटेपच्यात्समुद्धृत्यविचूर्णयेत् ॥
सर्वाङ्गसुन्दरोनामरसोगुंजा चतुष्टयम् ।
भक्षयेद्धिंगुशुण्ठीभ्यांकफशूलञ्चगुल्मनुत् ॥
व्योषंसौवर्चलंहिंगुकरञ्जबीजसंयुतम् ।
पिबेदुष्णाम्बुनाचानुकफशूलहरंपरम् ॥

इति सर्वांगसुन्दररसः ।

अर्थ-शुद्ध पारा, तांबेकी भस्म, मैनशिल, सोनामाखी, हरिताल, पांचोंनोंन और वत्सनाभविष,सब समान भाग लेकर चूर्ण बना कुचिला, जयन्ती, भांग, रक्तशाकिनी, सैंजिना, जलपीपल और धतूरेकेरसकी प्रतिदिन भावना देकर पुटपाक करै, फिर शीतल होजानेपर तोड़कर चूर्ण करले तौ सर्वांगसुन्दररस सिद्धहो । यह सर्वाङ्गसुन्दररस हींग और सोंठकेसाथ खानेसे-कफ शूल और गुल्मको दूर करैहै । मात्रा चार रत्तीकी है, अनुपान-त्रिकुटा, कालानोन, हींग, और करंजके बीजोंका चूर्ण गरम जलके साथ पान करै ॥

रसगंधकलौहानांपलार्द्धेनसमन्वितम् ।
टंकणंरामठं शुंठीत्रिकटुत्रिफलाशठी ॥
त्वगेलापत्रतालीशंजातीफललवंगकम् ।
यवानीजीरकंधान्यंप्रत्येकंतोलकंशुभम् ॥
माषैकावटिकाकार्याछागीदुग्धप्रपेषिता ।
गणेशयोगिनीशम्भुहरिसूर्यान्प्रपूज्यच ॥
शीतनीरानुपानेनच्छागीदुग्धेनवापुनः ।

एकैकाभक्षिताचेयंवटिकाशूलवज्रिणी ॥
शूलमष्टविधंहन्तिप्लीहगुल्मोदरंज्वरम् ।
अष्ठीलानाहमेहांश्चमूत्ररोगंहलीमकम् ॥
अम्लपित्तामवातंचकामलांपाण्डुरोगकम् ।
शोथंमलग्रहंवृद्धिंश्लीपदञ्चभगन्दरम् ॥
कासंश्वासंव्रणंकुष्ठंकृमिहिक्कामरोचकम् ।
अर्शांसिग्रहणींदुष्टांसर्वातीसारनाशनम् ॥
विषूचीकण्डुमन्दाग्निपिपासांपीनसंगदम् ।
एकजंद्वन्द्वजंवापिदोषत्रयसमुद्भवम् ॥
बुद्धिकान्तिप्रदानित्यंसेविताचचिरायुषी ।
गुरुणाचन्द्रनाथेनमह्यमेषाप्रकीर्त्तिता ॥
संसारलोकरक्षार्थंविचिन्त्यपरिनिर्मिता ॥

इति शूलवज्रिणीवटिका ।

अर्थ–पारा,गंधक,लोहा प्रत्येक दो दो तोले,सुहागा,हींग,सोंठ,त्रिकुटा, त्रिफला, कचूर, दालचीनी, इलायची, तेजपात, तालीसपत्र, जायफल, जीरा,लौंग अजवायन,धनियाँ प्रत्येक एक एक तोला लेवै,सबको बकरी-के दूधमें पीसकर एक एक मासेकी गोली बनालेवै । इसको शूलवज्रिणी-वटिका कहतेहैं। गणेश, योगेश्वरी, शंकर, हरि और सूर्यदेवका पूजनकर प्रतिदिन एक गोली शीतलजलके अथवा बकरीके दूधके साथ खावै । यह शूलवज्रिणीवटिका–आठप्रकारके शूल, प्लीहा, गुल्म, उदररोग, ज्वर, आष्ठीला, आनाह, प्रमेह, मूत्ररोग, हलीमक, अम्लपित्त, आमवात, कामला, पाण्डुरोग, सूजन, गलग्रह, वृद्धिरोग, श्लीपद, भग-न्दर, कास, श्वास, व्रण, कूष्ठ, कृमि, हिक्का, अरुचि, अर्श, दुष्टसंग्र-हणी, सर्वप्रकारके अतिसार, विषूचिका, कण्डू, मंदाग्नि, पिपासा, पीनस, एक दोषसे उत्पन्न हुए, दो दोषसे उत्पन्न हुए, और तीन दोषसे उत्पन्न हुए रोगोंको दूर करै है । बुद्धि और कान्तिको बढ़ाने-वाली है । इसको नित्यसेवनकरनेसै मनुष्य दीर्घायु होते हैं। यह शूल-

वज्रिणी वटिका संसारके मनुष्योंकी रक्षाके लिये श्रीमान् गुरु चन्द्रनाथजीने विचारकर निर्म्माणकी है ॥

शुद्धसूतंसमंगंधंरसार्द्धंमृतताम्रकम् ।
दिनैकंशाकजैर्द्रावैर्मर्द्यंश्चक्षीरिणीद्रवैः ॥
रुद्ध्वालघुपुटेचैवपच्यादाग्निमुखोरसः ।
यवानीन्द्रयवापाठाबिल्वशुण्ठीरसांजनम् ॥
चूर्णंशूलहरंचानुपिबेदुष्णाम्बुनासह ।
इति अग्निमुखोरसः ।

अर्थ–शुद्धपारा दो भाग, शुद्धगंधक दो भाग, ताँबेकी भस्म एक भाग लेवै, इन सबको एकत्र कर एक दिन शाकवृक्षके रसमें और एक दिन खिरनीके रसमें खरल करे, पश्चात् लघुपुटमें फूंक देवे तौ अग्निमुख रस सिद्धहो । इसको भक्षण कर ऊपरसे अजवायन, इन्द्रजौ, पाढ़, बेल, सोंठ और रसौंतका चूर्ण गरमजलके साथ पीवै तो शूल दूर होवै ॥

मृतताम्रंपलैकन्तुचिंचाक्षारपलाष्टकम् ।
हिंगुहरीतकींव्योषंकरंजबीजचोरकम् ॥
प्रत्येकंपलमात्रन्तुचूर्णंकोष्णोदकोपिबेत् ।
कर्षैकंशूलशान्त्यर्थंसर्वोपद्रवसंयुतम् ॥

अर्थ–ताँबेकी भस्म एकपल, इमलीका खार आठ पल, हींग एक पल, हरड एकपल, सोंठ एकपल, पीपल एकपल, मिरच एकपल, करंजके बीज एकपल, चोरकद्रव्य एकपल लेवै, सबका चूर्ण कर एककर्षप्रमाण गरम जलके साथ पीनेसे सर्वोपद्रवसंयुक्त शूल रोग शान्त होताहै ।

शुद्धसूतंद्विधागंधंयामैकंमर्दयेद्दृढम् ।
द्वयोस्तुल्यंशुल्बपत्रसंपुटेतंनिरोधयेत् ॥
ऊर्द्ध्वाधोलवणंदत्त्वासद्भाण्डेधारयेद्भिषक् ।
रुद्ध्वागजपुटेपच्यात्स्वाङ्गशैत्यंसमुद्धरेत् ॥

संपुटंचूर्णयेच्छ्लक्ष्णंपर्णखण्डेद्विगुंजकम्।
भक्षयित्वानुपानंचहिंगुशुण्ठीचजीरकम्॥
वचामरिचचूर्णञ्चकर्षमुष्णाम्बुनापिबेत्।
असाध्यंनाशयेच्छूलंरसोऽयंशूलकेसरी॥

इतिशूलकेसरी रसः।

अर्थ-शुद्धपारा एक भाग और शुद्धगंधक दो भाग लेकर दोनोंको एकत्र खरल करै, फिर तीन भाग ताँबा लेकर तिसका सम्पुट बनाय उस सम्पुटमें पूर्वोक्त खरल किये हुए पारे और गन्धकको रखकै ढक-देवै, फिर इसको नोनसे भरी हुई हांडीमें गाड़, हाँडीका मुख बन्द कर गजपुटमें धरके फूंक देवै। स्वांगशीतल होनेपर उसको बाहर निकालकर सम्पुटको बारीक पीसकै चूर्ण बना लेवै तौ शूलकेस-रीरस सिद्धहो। इसको दो रत्तीभर पानपै रखकै खावै और ऊप-रसै हींग, सोंठ, जीरा, वच और कालीमिरचका चूर्ण एक कर्ष-प्रमाण गरम जलके साथ पान करै। यह शूलकेसरी रस असाध्य शूलकोभी दूर करै है॥

तोलकाश्चतुरःसूतादष्टौगंधाश्मनस्तथा।
समादायततःकार्यपलंताम्रस्यसंपुटम्॥
एकस्मिन्नथपात्रेद्वौकृत्वागंधकपारदौ।
अनेनताम्रपात्रेणपिधातव्यंदृढंततः॥
क्षिप्त्वास्थाल्याञ्चलवणंततःक्षिप्त्वारसंपुटेत्।
तस्योपरिपुटंक्षिप्त्वारुद्धास्थाल्यामथापिच॥
निरुध्यातिप्रयत्नेनपुटेद्गजपुटेनच।
स्वांगशीतलतांज्ञात्वासंपुटंपरिचूर्ण्यच॥
निहंत्यष्टविधंशूलंगुल्मप्लीहयकृद्गदम्।
मन्दाग्निग्रहणीपाण्डुंकामलाञ्चहलीमकम्॥
श्लेष्मवातोत्थरोगांश्चज्वरानपितथाविधान्।

हरीतक्यनुपानेनज्ञातव्योऽयंभिषग्वरैः ॥
पथ्यंदोषानुसारेणशास्त्रप्रोक्तंप्रदापयेत् ॥

इति शूलगजकेसरीरसः ।

अर्थ-पारा, चार तोले, गन्धक आठतोले लेकर दोनोंकी कज्जली करै, फिर आठतोले तांबा लेकर तिसका सम्पुट बना उससम्पुटमें उपरोक्त कज्जली रख दूसरे पात्रसे आच्छादित करकै नोनकी भरीहुई हांडीमें स्थापन करै, और उस हांडीको मुख बन्द करदेवै, पश्चात् गजपुटमें फूँकदेवै, फिर स्वांगशीतल होजानेपर सम्पुटको पीसकर चूर्ण करलेवै, तौ शूलगजकेसरी रस सिद्ध हो । इसको हरडकेसाथ सेवन करनेसे, आठ प्रकारके शूल, गुल्म, प्लीहा, यकृत, मंदाग्नि, संग्रहणी, पाण्डुरोग, कामला, हलीमक, कफवातोत्पन्नरोग और सर्वप्रकारके ज्वर दूर होते हैं । पथ्य-दोषानुसार करावै ॥

शुद्धंसूतंमृतंतीक्ष्णंपंचमंभागसम्मितम् ।
चूर्णतयोर्भावयित्वाशतावर्यारसेनच ॥
धात्र्यागुडूच्यास्त्रिदिनंखल्वेमर्द्यंपुनःपुनः ।
गुंजाचतुष्टयंखादेद्घृतेनमधुनापयः ॥
अनुपानंपिबेत्प्राज्ञःसर्वशूलनिवारणम् ।
वातरोगान्पित्तरोगान्कफरोगान्सुदुस्तरान् ॥
त्वग्दोषदेहकार्श्यंश्चदाहमुग्रंनिवारयेत् ।
गौड़ारसःसमुद्दिष्टोबलवर्णाग्निवर्द्धनः ॥

इति गौडारसः ।

अर्थ-शुद्धपारा एक भाग और लोहेकी भस्म पांच भाग, दोनोंको शतावरीके रसमें, आमलेके रसमें और गिलोयके रसमें क्रमसे एक एक दिन भावना देकर खरल करे । इसको चारगुंजाभर खावै और ऊपरसे घी, सहत तथा दूध पीवै तौ यह 'गौडारस' सर्वप्रकारके शूल, सर्वप्रकारके वातरोग, पित्तरोग, कफरोग, त्वचाके विकार, शरीरकी कृशता और उग्रदाहको दूर करै । तथा बल, वर्ण और अग्निकी बढ़ावै है ॥

सूतंगंधंसमंशुद्धंसूतांशंमृतताम्रकम्।
सौवर्चलञ्चसूतांशंजम्बीरैर्दिनसप्तकम्॥
मर्दयेदातपेतीक्ष्णंरुद्ध्वालघुपुटेत्रयम्।
दत्त्वादायतुतच्चूर्णंसमंत्रिकटुकंपचेत्॥
षण्मुखोऽयंरसोनामत्रिगुञ्जेनामशूलजित्।
एरण्डतैलषड्भागंलशुनस्यदशाष्टकम्॥
एकंहिंगुत्रिसिन्धूत्थंसर्वमेकत्रकारयेत्।
त्रिनिष्कंभक्षयेच्चानुआमशूलप्रशान्तये॥

इति षण्मुखोरसः।

अर्थ-शुद्धपारा, शुद्धगंधक, तांबेकी भस्म और सज्जी, यह सब समान भाग लेकर सात दिनतक जम्भीरी नीबूके रसके द्वारा तेज-धूपमें खरल करै, पश्चात् सूखजानेपर लघुपुट देवै इसप्रकार तीनपुट देवै, फिर इसमें बराबरका त्रिकुटेका चूर्ण मिलालेवै। इसको षण्मुखरस कहतेहैं।इसको तीन रत्ती प्रमाण खानेसे सर्वप्रकारके आमशूल दूर होतेहैं। अनुपान-अण्डीका तेल छे भाग, लशुन १८ अठारह भाग, हींग एक भाग और सैन्धवनोंन तीन भाग एकत्र मिलाकर बारह मासे प्रमाण भक्षण करै॥

त्रिकत्रयसमायुक्तंतालमूलीशतावरी।
लोहोनिहन्तिशूलानिदारुणान्ययसोरजः॥

इति त्रिकत्रयाद्यंतैलम्।

अर्थ-हरड, बहेडा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल, नागरमोथा, वायविडंग, चीता, मुसली, सतावर, यह सब समान भाग और सबकी बराबर लोहेका चूर्ण लेवै। सबको एकत्र पीसकै चूर्ण करले। यह-त्रिकत्रयाद्य लौह सर्वप्रकारके शूलोंको निर्मूल करैहै॥

त्रिफलायास्तथाधात्र्याश्चूर्णंवाकाललौहजम्।
शर्कराचूर्णसंयुक्तंसर्वशूलेषुलेहयेत्॥

पुनरुक्तत्वाद्धात्र्याभागद्वयंग्राह्यम् ॥
सर्वचूर्णसमंलौहचूर्णम् ।

इति शर्करालौहम् ।

अर्थ-हरड एक भाग, बहेडा एक भाग, आमला दो भाग और काल-लोहेका चूर्ण चार भाग लेवै, सबको एकत्र पीसकै चूर्ण बनाले, फिर इस चूर्णमें बराबरकी मिश्री मिलाकर सेवन करैतौ सर्वप्रकारके शूल दूर होवै ॥

अभ्रंताम्रंरसंलौहंप्रत्येकंसंस्कृतंपलम् ।
सर्वमेतत्समाकृत्यगृह्णीयात्कुशलोभिषक् ॥
आज्येपलद्वादशकेदुग्धेऽपिघृतसंक्षये ।
पक्त्वातत्रक्षिपेच्चूर्णंसुपूतंघनवाससा ॥
विडंगत्रिफलावह्नित्रिकटूनान्तथैवच ।
पिष्ट्वापलोन्मितानेतान्यथासंमिश्रितान्नयेत् ॥
ततःपिष्टेषुभाण्डेषुस्थापयेच्चविचक्षणः ।
आत्मनःशोभनेचाह्निपूजयित्वापरंगुरुम् ॥
घृतेनमधुनामर्द्यभक्षयेन्माषकोन्मितान् ।
अष्टौमाषान्क्रमेणैववर्द्धयेच्चसमाहितः ॥
अनुपानञ्चदुग्धेननारिकेलोदकेनवा ।
जीर्णेलोहितशाल्यन्नंमुद्गमांसरसादयः ॥
रसायनविरुद्धानिचान्यान्यपिनकारयेत् ।
हृच्छूलंपार्श्वशूलञ्चआमवातंकटीग्रहम् ॥
गुल्मशूलंशिरःशूलंयकृतप्लीहौविशेषतः ।
अग्निमान्द्यंक्षयंकुष्ठंकासंश्वासंविचर्चिकाम् ।
अश्मरीमूत्रकृच्छ्रञ्चयोगेनानेननाशयेत् ॥

इति चतुःसमं लौहम् ।

अर्थ-अभ्रककीभस्म, ताँबेकीभस्म, पारेकीभस्म, लोहेकीभस्म, और शुद्ध गंधक प्रत्येक एक एक पल लेकर बारहपल घी और दूधके साथ पकावै, फिर इसको गाढ़वस्त्रमें छानकर इसमें चार चार तोले वायविडंग, हरड, बहेड़ा, आमला, चीता, सोंठ, मिरच और पीपलका चूर्ण मिलादेवै। फिर इसको खूब चलाकर चिकने बासनमें भरकै रखदेवै पश्चात् शुभदिनमें अपने परं गुरुका पूजन कर घृत और सहतके साथ मिलाके खावै। पहिले दिन एक मासे प्रमाण खावै, दूसरे दिन दो मासे खाय, इसप्रकार प्रतिदिन एक एक माषा बढ़ाकै आठ मासे तक खावै। ऊपरसे दूध और नारियलका जलपीवै। इस औषधिके जीर्ण होनेपर लाल शालिधानोंका भात, मूंग, और मांसरस खावै। इसपै रसायन विरुद्धद्रव्य कदापि भक्षण नहीं करै। यह-हृदयशूल, पार्श्वशूल, आमवात, कटीग्रह, गुल्म, शूल, शिरःशूल, यकृत्, प्लीहा, मन्दाग्नि, क्षय, कोढ़, खाँसी, श्वास, विचर्चिका, पथरी, और मूत्रकृच्छ्रादि रोगोंको दूर करै है॥

व्यायामंमैथुनंमद्यंलवणंकटुवैदलम्।
वेगरोधंशुचंक्रोधंवर्जयेच्छूलवान्नरः॥

इति शूलाध्यायः।

अर्थ-व्यायाम, मैथुन, मद्य, लवण, कटुरसवाले द्रव्य, विदल अन्न, मलमूत्रादिकोंके वेगका धारण, शोक और क्रोध यह सब शूलरोगी त्याग देवै॥

अथ परिणामशूलचिकित्सामाह।

वमनंतिक्तमधुरैर्विरेकश्चात्रशस्यते।
बस्तयश्चहिताःशूलेपरिणामेसमुद्भवे॥

अर्थ-तिक्त और मधुरद्रव्योंके द्वारा वमन तथा विरेचन, और बस्तिप्रयोग, यह सब परिणामशूलमें हितकारी है॥

विडंगव्योषदन्त्यग्नित्रिवृच्चूर्णंगुडैःकृतम्।
मोदकःसर्वजंपक्तिशूलंहंत्यग्निदीपनम्॥

अर्थ-वायविडंग, सोंठ, मिरच, पीपल, दन्ती, चीता, और निसोत,

सब समानले चूर्णकर गुड़में मिलाके लड्डू बनालेवै। इनको गरमजलके साथ खानेसे यह मोदक सर्वप्रकारके पक्तिशूलोंको हरै है। तथा अग्निको दीपन करै है॥

नागरतिलगुडकल्कंपयसासंसाध्ययःपुमानद्यात्।
उग्रंपरिणतिशूलंतस्याभ्युपैतिसप्तरात्रेण॥

अर्थ-सोंठ, तिल और गुड़ इनका कल्क दूधमें पकाकर सेवन करनेसे सात रात्रियोंके भीतर परिणामशूल दूर होता है॥

शम्बूकजंभस्मपीतंजलेनोष्णेनवारिणा।
पक्तिजंविनिहंत्याशुशूलंविष्णुरिवासुरान्॥

अर्थ-घोंघेकी भस्म गरम जलके साथ पीनेसे परिणामशूल दूर होताहै

रसोनपत्रस्वरसःपीतोमधुनापिदुस्तरंशूलम्।
परिणामजंनिहन्यात्पित्तप्रबलंत्रिरात्रेण॥

अर्थ-लशुनके पत्तोंके रसमें सहत मिलाकर पीनेसे पित्तप्रबल परिणाम-शूल तीन दिनमें दूर होता है॥

पिप्पलीक्काथकल्काभ्यांसिद्धंसर्पिःसमाक्षिकम्।
पक्तिशूलंप्रवृद्धञ्चहन्तिक्षीरानुपानतः॥
शीतमधुपानादिकम्।

इति पिप्पलीघृतम्।

अर्थ-गायका घी एक सेर ऽ१, पीपलका क्काथ चार सेर ऽ४, और कल्कके लिये पीपल पावभर ऽ। सबको मिलाकर घृत सिद्ध करै। पश्चात् इस घृतको सहतके साथ सेवन करै और ऊपरसे दूधका पान करै तो अत्यंत बढाहुआ परिणामशूल नष्ट होवै॥

कुड़वंनारिकेलस्यश्लक्ष्णंदृषादिपेषितम्।
शुद्धखंडस्यकुडवंसर्वमेतच्चतुर्गुणे॥
आलोड्यनारिकेलस्यजलेमृद्वग्निनापचेत्।
धन्याकंपिप्पलीमुस्तंचातुर्जातंसुचूर्णितम्॥

शाणप्रमाणंतद्गाह्यंशीतीभूतेक्षिपेद्बुधः।
नारिकेलस्यखण्डोऽयंपुंसोनिद्राबलप्रदः॥
अम्लपित्तंक्षयंश्वासंशूलञ्चपरिणामजम्।
नाशयेद्रक्तपित्तञ्चशुष्कंदार्वनलोयथा॥
पलेसर्पिषिभृष्टञ्चशस्यंचाद्यौमधुप्रभम्॥

इतिनारिकेलखण्डम्।

अर्थ-पीसकर घीमें भुनी हुई नारियलकी गिरी एकसेर, बूरा एकसेर, दोनोंको चौगुने नारियलके जलमें मन्द मन्द अग्निसे पचावै, जब पककर शीतल हो जाय तब इसमें धनिया, पीपल, नागरमोथा, दालचीनी, इलायची, तेजपात और नागकेशर प्रत्येकका चार चारमासे चूर्ण डालदेवै और करछीसे एकमें एक करदेवै। यह नारिकेलखण्ड-मनुष्योंको निद्रा और बलको देनेवालाहै। तथा अम्लपित्त, क्षय, श्वास, परिणामशूल, और रक्तपित्तको दूर करै है॥

नारिकेलपलान्यष्टौशर्कराप्रस्थमेवच।
तज्जलंपात्रमेकन्तुसर्पिष्पंचपलानिच॥
शुण्ठीचूर्णस्यकुडवंप्रस्थार्द्धंक्षीरमेवच।
सर्वमेकीकृतंपात्रेशनैर्मृद्वग्निनापचेत्॥
तुगात्रिकटुकंमुस्तंचातुर्जातकधान्यकम्।
द्विकणाकर्षयुग्मन्तुजीरकंचपृथक्पृथक्॥
श्लक्ष्णचूर्णानिनिक्षिप्यस्थापयेत्स्निग्धभाजने।
खादेत्प्रतिदिनंशाणंयथेष्टाहारसेविनः॥
सर्वदोषोद्भवंशूलमामवातंविनाशयेत्।
परिणामभवंशूलमम्लपित्तञ्चनाशयेत्॥
बलपुष्टिकरञ्चैववाजीकरणमुत्तमम्।
रक्तपित्तहरंश्रेष्ठंछर्दिहृद्रोगनाशनम्॥
अग्निसन्दीपनकरंसर्वरोगनिषूदनम्।

धन्वन्तरिकृतंह्येतन्नारिकेलमिदंमहत् ॥

इति बृहन्नारिकेलखण्डम् ।

अर्थ–नारियलकी गीरी एक सेरऽ१,बूरादोसेरऽ२, नारियलकाजल आठ सेर ऽ८, घी वीस तोले२०,सोंठका चूर्णआध सेर ऽ॥, गायकादूध एक सेर ऽ१ लेवै, सबको एक पात्रमें करकै धीरै धीरै मन्द मन्द अग्निसे पकावै, पकते पकते जब गाढ़ा होजाय तब वंशलोचन, सोंठ, मिरच, पीपल, नागरमोथा, दालचीनी, इलायची, नागकेसर, तेजपात, धनिया, पीपल, गजपीपल और जीरा, प्रत्येकका चूर्ण दो दो तोले डाल देवै और करछीसे चलाकर एकमएक कर देवै, फिर चूलेपैसे उतारकर चिकने बासनमें भरके रखदेवै। फिर इसमेंसे प्रतिदिन चारमासे खावै और यथेष्ट भोजन करै। यह बृहन्नारिकेलखण्ड–सर्वदोषोत्पन्नशूल, आमवात परिणामशूल, अम्लपित्त, रक्तपित्त, वमन और हृदयरोगको दूर करै है,, बल और पुष्टिको करै है, उत्तम वाजीकरण है, और अग्निको दीपन करै है, तथा सर्वप्रकारके रोगोंको दूर करै है, यह बृहन्नारिकेल खण्ड श्रीमान् धन्वन्तरिजीने निर्माण किया है ॥

स्विन्नपीडितकूष्माण्डात्तूलार्द्धंभृष्टमाज्यतः ।
प्रस्थार्द्धंखण्डतुल्यन्तुपचेदामलकीरसात् ॥
प्रस्थेसुस्विन्नकूष्माण्डरसप्रस्थे विघट्टयेत् ।
दर्वीपाकंगतेतस्मिंश्चूर्णीकृत्यविनिक्षिपेत् ॥
द्वेद्वेपलेकणाजाजीशुण्ठीनांमरिचस्यच ।
पलंतालीशधन्याकंचातुर्जातकमुस्तकम् ॥
एतत्प्रमाणंप्रत्येकंप्रस्थार्द्धंमाक्षिकस्यच ।
पक्तिशूलंनिहन्त्येतद्दोषत्रयकृतञ्चयत् ॥
छर्द्यम्लपित्तमूर्च्छाश्चश्वासकासमरोचकम् ।
हृच्छूलंरक्तपित्तंचपृष्ठशूलञ्चनाशयेत् ॥
रसायनमिदंश्रेष्ठंखण्डामलकसंज्ञितम् ।

इति खण्डामलकी ।

अर्थ-प्रथम पेठेको उसेकर निचोड़लेवै, ऐसा पेठा घीमें भुनाहुआ ५० पचासपल, आमलोंका रस ६४ चौसठ तोले, पेठेका रस ६४ चौसठ तोले सबको मिलाकर पकावै और करछीसे चलाता जाय, जब गाढ़ा होजाय तब इसमें पीपल, जीरा, सोंठ और कालीमिरचका चूर्ण दो दो पल, तालीशपत्र, धनिया, दालचीनी, इलायची, नागकेशर, तेजपात, और नागरमोथा प्रत्येकका चूर्ण एक एक पल और सहत बत्तीस तोले मिला देवै। इसको सेवनकरनेसे त्रिदोषोद्भव, परिणामशूल, अम्लपित्त, छर्दि, मूर्छा, स्वांस, खाँसी, अरुचि, हृदयशूल, रक्तपित्त और पृष्ठशूलको यह खण्डामलकनामवाली उत्तम रसायन दूर करै है ॥

सामुद्रंसैन्धवंक्षारौरुचकंरोमकंविडम् ।
दन्तीलौहरजःकिट्टंत्रिवृच्छूरणकंसमम् ॥
दधिगोमूत्रपयसामन्दपावकपाचितम् ।
तद्यथाग्निबलंचूर्णंपिबेदुष्णेनवारिणा ॥
जीर्णेजीर्णेचभुञ्जीतमांसादिघृतसाधितम् ।
नाभिशूलंयकृच्छूलंप्लीहगुल्मकृतञ्चयत् ॥
विद्रध्यष्ठीलिकांहन्तिकफवातोद्भवंतथा ।
शूलानामपिसर्वेषामौषधंनास्तितत्समम् ॥
परिणामसमुत्थस्यविशेषेणान्तकृन्मतम् ॥

इति समुद्राद्यंचूर्णम्।

अर्थ-समुद्रनोन, सेंधानोन, जवाखार, सज्जी, कालालोन, सामर, विरिया, संचरनोन, दन्ती, लोहेकी भस्म, मण्डूर, निसोत, जमीकन्द, दही, गोमूत्र और दूध मिलाकर मंदमन्द अग्निसे पकावै। इस चूर्णको शक्त्यनुसार गरमजलके साथ सेवन करै। इसके जीर्णहोनेपर घृतसे सिद्ध किया हुआ मांसादिक भोजनकरै। यह समुद्राद्यचूर्ण-नाभिशूल, यकृत्शूल, प्लीहाशूल, गुल्मशूल, विद्रधि, अष्ठीलिका, कफ और वातसे उत्पन्न हुआ शूल, इनसबको हरैहै, इसकी समान शूलनाशक और दूसरी औषधि नहींहै, और परिणामशूल होतो विशेषकरकै विध्वंस करैहै। और कोई कोई वैद्य इसमें घृत मिलाकर समुद्राद्यघृत बनाते है।

विडंगचित्रकंचव्यंत्रिफलात्र्यूषणानिच ।
नवभागानिचैतानिलोहकिट्टसमानिच ॥
गोमूत्रंद्विगुणंदत्त्वामूत्रार्द्धिकगुडान्वितम् ।
शनैर्मृद्वग्निनापक्त्वासुसिद्धंपिंडतांगतम् ॥
स्निग्धेभाण्डेविनिक्षिप्यभक्षयेत्कोलमात्रया ।
प्राङ्मध्यान्तक्रमेणैवभोजनस्यप्रयोजितः ॥
योगोऽयंशमयत्याशुपक्तिशूलंसुदारुणम् ।
कामलांपाण्डुरोगञ्चशोथंमन्दाग्नितामपि ।
अर्शांसिग्रहणीदोषंकृमिगुल्मोदराणिच ।
नाशयेदम्लपित्तञ्चस्थौल्यंचैवापकर्षति ।
वर्जयेच्छुष्कशाकानिविदाह्यम्लगुरूणिच ।
पक्तिशूलान्तकोह्येषगुडोमण्डूरसंज्ञकः ॥
शूलार्तानांकृपाहेतोस्तारयापरिकीर्तितः ॥

इति तारामण्डूरम् ।

अर्थ—वायविडंग, चीता, चव्य, हरड, बहेडा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल, यहसब समानभाग, सबकी समानमण्डूरका चुर्ण, और सबसे दुगना गोमूत्र, गोमूत्रसे आधागुड लेवै, सबको एकत्र कर धीरै धीरै मन्दमन्द अग्निसे पकावे। जब सिद्ध होकर पिण्डसा होजाय तब एक चिकने बासनमें भरके रखदेवे । यह औषधी एक तोला प्रमाण भोजनके पूर्व, मध्य और अन्तमें खानेसे दारुण परिणाम शूल, कामला, पाण्डुरोग, सूजन, मन्दाग्नि, बवासीर, संग्रहणी कृमि, गुल्म, उदररोग, अम्लपित्त और स्थूलताको दूर करैहै । इसपर शुष्कशाक, दाहकारक द्रव्य, अम्लद्रव्य और भारीपदार्थ त्यागने चाहिये । यह गुड़-संज्ञकमण्डूर-विशेषकरकै परिणामशूलनाशक है । शूलरोगवाले मनुष्योंपर कृपाकरकै यह तारामण्डूर प्रकट कियाहै ॥

ततांवराम्बुसिक्तस्यमण्डूरस्यपलाष्टकम् ।
अष्टौवरीरसादुग्धाद्दध्नोधात्रीरसादपि ॥

सर्पिश्चतुष्पलंपक्काचतुःशाणंरजःपृथक् ।
क्षिपेन्मुस्तकणाजाजीधान्यपथ्याद्विजातकम् ॥
त्रिदोषपक्तिशूलाम्लपित्तरोचकवातनुत् ।
वराम्बुत्रिफलाक्काथः ।

इति बृहच्छतावरीमण्डूरम् ।

अर्थ–त्रिफलाके क्काथमें शुद्धमण्डूर आठपल, सतावरका रस ८ आठ-पल, दूध आठपल, आमलोंका रस आठपल, और घी चारपल डालके पकावै, जब पकते पकते गाढाहोजाय तब नागरमोथा, पीपल, जीरा, धनिया, हरड, दालचीनी और इलायची प्रत्येकका चूर्ण चार चार मासे डालकर करछीसे चलादेवै। यह बृहच्छतावरी मण्डूर–सान्निपातिकपक्तिशूल, अम्लपित्त, अरुचि और वातको दूर करै है ॥

शतावरीरसाद्दुग्धाद्दध्नोमण्डूरचूर्णकात् ।
पृथक्पृथक्पलान्यष्टौघृतात्पलचतुष्टयम् ॥
पक्काद्याद्दातपित्तोत्थंपक्तिशूलंजयेध्रुवम् ॥

इति शतावरीमण्डूरम् ।

अर्थ–शतावरकारस, दूध, दही और मण्डूरका चूर्ण प्रत्येक आठ आठपल, घृत चारपल सबको मिलाकर पकावै । यह शतावरीमण्डूर–त्रिदोषजनित परिणामशूल दूर करै है ॥

शतावरीरसप्रस्थेप्रस्थेचसुरभीजले ।
अजायाःपयसःप्रस्थेप्रस्थेधात्रीरसस्यच ॥
लोहकिट्टपलान्यष्टौशर्करापलषोडश ।
दत्त्वाचाष्टपलंसर्पिःपचेन्मृद्वग्निनाभिषक् ॥
सिद्धशीतेघनीभूतेचूर्णानीमानिदापयेत् ।
त्रिफलाव्योषयवानीपिप्पलीगजापिप्पली ॥
द्विजीरकघनानाञ्चश्लक्ष्णान्यक्षसमानिच ।
मधुनस्त्रिपलञ्चात्रसिद्धेशीतेप्रदापयेत् ॥

भक्षयेच्चत्वनापेक्षीभक्तस्यादौविचक्षणः ।
शूलंसर्वोद्भवंहन्तिपक्तिशूलंविशेषतः ॥
रक्तपित्ताङ्गदाहञ्चसाम्लपित्तंवमिन्तथा ।
हृच्छूलंपार्श्वशूलञ्चकुक्षिबस्तिगुदोद्भवम् ।
कासंश्वासंतथाशोषंग्रहणीदोषनाशनम् ।
यकृत्प्लीहोदरंगुल्मंराजयक्ष्मज्वरापहम् ॥
विष्टम्भनामदौर्बल्यमग्निमान्द्यंतथैवच ।
दुर्नामपाण्डुरोगंचकामलाञ्चहलीमकम् ॥
सर्वांश्चन्नाशयत्याशुभास्करस्तिमिरंयथा ॥
दुग्धेनिर्वापणंकार्यमण्डूरंवागवांजले ।
सप्तवाराष्टवारंवारुद्धानिर्मलतांव्रजेत् ॥

इति शर्करामण्डूरम् ।

अर्थ–सतावरका रस, गोमूत्र, बकरीका दूध, और आमलों-कारस प्रत्येक दो दो सेर, लोहेकी किट्ट एकसेर, बूरा दो सेर, और घी एक सेर लेवै, सबको मिलाकर मन्द मन्द अग्निसे पकावै, जब पककर गाढ़ा होजाय तब उतार लेवै, पश्चात् शीतल होनेपर इसमें हरड, बहेडा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल, अजवायन, पीपल, गजपीपल, जीरा, कालाजीरा और नागरमोथा, प्रत्येकका चूर्ण दो दो तोले और सहत बारह तोले मिलादेवै । इसको भोजनकी आदिमें भक्षणकरनेसे सर्वप्रकारके शूल, विशेषकरके पक्तिशूल, रक्तपित्त, अंगदाह, अम्लपित्त, वमन, हृदयशूल, पार्श्वशूल, कुक्षिशूल, बस्तिशूल, गुदशूल, खांसी, श्वास, शोष, संग्रहणी, यकृत, प्लीहा, उदररोग, गुल्म, राजयक्ष्मा, ज्वर, विष्टम्भ, आम, दुर्बलता, मन्दाग्नि, बवासीर, पाण्डुरोग, कामला, हलीमक, इन सबरोगोंको यह शर्करामण्डूर दूर करैहै । लोह-किट्ट आठवार अथवा सातवार दूधमें, या गोमूत्रमें बुझाकर पुटनेसे शुद्ध होजाता है ॥

कुडवंपथ्याचूर्णद्विपलंगन्धाश्चलोहकिट्टञ्च ।
शुद्धरसस्यार्द्धपलंभृंगस्यकेशराजस्य ॥

प्रस्थोन्मितश्चदत्त्वापात्रेलोहेचदण्डसंघृष्टम्।
शुद्धंघृतमधुयुक्तंमृदितंस्थाप्यंचभाजनेस्निग्धे॥
उपयुक्तमेतदचिरान्निहन्तिकफपित्तजान्रोगान्।
शूलंतथाम्लपित्तंग्रहणीकामलामुग्राम्।
भृंगराजकेशराजयोःप्रत्येकंरसप्रस्थम्॥

इतिरसमण्डूरम्।

अर्थ-हरड़का चूर्ण सोलह तोले, गंधक और मण्डूर प्रत्येक दो दो पल, शुद्धपारा दो तोले, भांगरेका रस और कुकुर भांगरेकारस प्रत्येक दो दो सेर, इन सबको लोहेके पात्रमें एकत्र कर लोहेके दण्डेसे घोटै, जब घोटते घोटते सूख जाय तब इसमें घी और सहत मिलाकर खूब मर्द्दन करै, पश्चात् इसको चिकनेबासनमें भरकर रख देवै। यह रसमण्डूर कफ-पित्तसे उत्पन्न हुए रोगोंको, शूलको, अम्लपित्तको, संग्रहणीको और उग्रकामला रोगको दूर करै है॥

टंकणंहरिणशृंगंस्वर्णशुद्धंमृतंरसः।
आर्द्रकस्यद्रवैश्चाह्निमर्द्यंरुद्ध्वापुटेपचेत्॥
त्रिनेत्राख्यरसोनाममाषैकंमधुसर्पिषा।
सैन्धवंजीरकंहिंगुमध्वाज्याभ्यांलिहेदनु॥
पक्तिशूलहरंख्यातोमासमात्रान्नसंशयः॥

इति त्रिनेत्राख्योरसः।

अर्थ-सुहागा, हरिणका सींग, शुद्धसोना और पारेकी भस्म, सबको समान भाग लेकर अदरखके रसमें एक दिन खरलकर मट्टीके शराव-सम्पुटमें रख कपरौटीकर पुटपाक करै, शीतल होनेपर निकालकर चूर्ण करले, इसको त्रिनेत्राख्यरस कहतेहैं। यह रस एक मासे प्रमाण घृत और सहतके साथ सेवन करै। और ऊपरसे सैंधानोंन, जीरा, हींग, इनका चूर्ण सहत और घृतमें मिलाकर खावै तौ यह त्रिनेत्राख्य रस परिणामशूलको एक महीनेमें दूर करताहै॥

मण्डूरस्यपलान्यष्टौशतावर्यारसन्तथा।

क्षीराज्यदधिप्रत्येकंपिष्ट्वाचतुष्पलंपिबेत् ॥
यावत्पित्तंतदुत्तार्यनिष्कैकंभोजयेत्सदा ।
प्रातःसन्ध्यांसदाखादेत्पक्तिशूलप्रशान्तये ॥
वातजंपित्तजंमिश्रममृताख्योहिमृत्युजित् ।

इति अमृतमण्डूरम् ।

अर्थ-मण्डूर आठ पल, सतावरका रस आठ पल, दूध, घी और दही प्रत्येक चारचार पल लेकर एकत्र पीस लेवै । इसको प्रतिदिन प्रातःकाल और संध्यासमय आठ मासे भर खावै तौ परिणामशूल दूरहोवै, तथा वातज पक्तिशूल और पित्तज पक्तिशूलभी दूरहोता है । यह अमृतमण्डूर मृत्युकोभी दूरकरताहै ॥

पथ्यालोहरजःशुण्ठीतच्चूर्णमधुसर्पिषा ।
परिणामोद्भवंशूलंसाद्याहन्तित्रिदोषजम् ॥

इतिपथ्याद्यं लौहम् ।

अर्थ-हरड़काचूर्ण, लोहेकाचूर्ण और सोंठकाचूर्ण प्रत्येक समान भाग लेकर सहत और घीके साथ सेवनकरनेसे कफज, पित्तज, और वातज परिणामशूल दूरहोताहै ॥

कृष्णाभयालोहचूर्णलेहयेन्मधुसर्पिषा ।
परिणामोद्भवंशूलंसद्योहन्तित्रिदोषजम् ॥

इति कृष्णाद्यंलौहम् ।

अर्थ-पीपल, हरड, औरलोहेका चूर्ण प्रत्येक समान भाग लेकर सहत और घीके साथ सेवनकरनेसै तत्काल त्रिदोषजनित परिणामशूल दूरहोताहै ॥

द्व्याढकंत्रिफलायाश्चचतुर्गुणजलेपचेत् ।
पादावशिष्टंविज्ञायकषायमवतारयेत् ॥
सुतप्तंनिर्वपेत्प्राज्ञोगुडूच्यार्द्धशतन्तथा ।
सर्पिषःषोडशपलंतच्चूर्णैःसहयोजयेत् ॥
गुडूचीकन्दकदलीतालमूलीयवासकम् ।

चित्रकंपिप्पलीमूलंचविकाजीरकद्वयम् ॥
त्वगेलऽरुष्करोव्योषद्विक्षारलवणत्रयम् ।
विडंगंटंकणक्षारौयवानीद्विपालिकांशिकान् ॥
लोहंपचेत्तदैकध्यंयावत्सान्द्रत्वमागतम् ।
भक्षयेन्मधुसर्पिभ्यांयथासानुश्चभोजनम् ॥
वातजंपित्तजंशूलंकफजंद्वन्द्वजंतथा ।
परिणामसमुत्थञ्चसन्निपातसमुद्भवम् ॥
अष्टादशविधंकुष्ठंपाण्डुरोगंभगन्दरम् ।
मन्दाग्निगुदजञ्चैवजयेदेतन्नसंशयः ॥
सुतप्तंजारणपुटनादिशोधितम् ।

इति बृहत्त्रिफलाद्यंलौहम् ।

अर्थ–सोलह सेर त्रिफलाको चौगुने जलमें पकावै, जब चौथाई भाग जल शेष रहै तब उतारकर छान लेवै, फिर इस काढेमें सवा-छहसेर कान्तलोहेका चूर्ण, सवाछैसेर गिलोयका रस, दोसेरघी, तथा गिलोय, केलाकन्द, मुसली, अडूसा, चीता, पीपरामूल, चव्य, काला जीरा, सफेदजीरा, दालचीनी, इलायची, भिलावा, सोंठ, मिरच, पीपल, जवाखार, सज्जी, कालानोन, सैंधानोंन, विरियासंचरनोंन, वायविडंग, सुहागा और अजवायन, प्रत्येक आठ आठतोले बारीकचूर्ण मिलाकर पकावै, जबतक यह खूब गाढ़ा नहोय तब तक पकावै । इस त्रिफलाद्य लोहको सहत और घीकेसाथ सेवनकरै । इससे वातजशूल, पित्तजशूल कफजशूल, द्वन्द्वजशूल, परिणामशूल, सान्निपातिकशूल, अठारह प्रकारके कोढ़, पाण्डुरोग, भगन्दर, मन्दाग्नि और बवासीर दूरहोती है ॥

धात्रीचूर्णस्याष्टपलानिचत्वारिलौहचूर्णस्य ।
यष्टीमधुकरजश्चद्विपलंदद्यात्पट्टघृष्टम् ॥
अमृताक्काथेनैतद्भाव्यंचूर्णन्तुसप्ताहम् ।
चण्डातपेसुशुष्कंभूयःपिष्ठानवेघटेस्थाप्यम् ॥
मधुघृतमधुनासंयुक्तंभक्तादौमध्यतोऽन्तेन ।

त्रीनपिवारान्खादेत्पथ्यंदोषानुबन्धने ॥
भक्तादौनाशयतिव्याधीन्पित्तानिलोद्भूतान् ।
मध्येऽह्नो विष्टम्भंजयतिचनृणांविदह्यतेनानुम् ॥
पानानुकृतान्दोषान्भुक्तान्तेशीततोजयति ।
एवंजीर्यतिचानुशूलंनृणांसुकष्टमपिहन्ति ॥
हरतिचसहसायुक्तोयोगश्चायंजरत्पित्तम् ।
चक्षुष्यःपलितघ्नः कफपित्तसमुद्भवाञ्जयेद्रोगान् ॥
प्रसादयत्यपिरक्तंपाण्डुत्वंकामलांजयति ॥

इति धात्रीलौहम् ।

अर्थ-आमलोंका चूर्ण आठ पल, लोहेका चूर्ण चारपल, मुलैठीका चूर्ण दो पल, सबको मिलाकर सात दिन तक गिलोयके रसकी भावना देवै, पश्चात् तेज धूपमें सुखाकर बारीक पीसकै एक नवीन घडेमें भरके रखदेवै। इसको सहत और घीमें मिलाकर भोजनके आदि मध्य और अन्तमें इसप्रकार तीन वार खावै और पथ्यसै रहै। यह भोजनके पूर्वमें भक्षण कियाहुआ पित्त और वातसै उत्पन्न हुए रोगोंको विध्वंसकरैहै। भोजनके मध्यमें भक्षण किया हुआ विष्टम्भको दूर करैहै, और भोजनके अन्तमें भक्षण किया हुआ पानसे उत्पन्नहुए विकारोंको हरताहै। यह जीर्ण होनेपर अत्यन्तकष्टयुक्तशूलको नष्ट करै है। यह योग-पित्तनाशक, नेत्रोंको हितकारी, विनासमय बालोंके श्वेत हो जानेको हरै है, तथा कफपित्तसे उत्पन्न हुवे रोग, रुधिरविकार, पाण्डुता और कामलारोगको दूर करैहै ॥

शुण्ठीशमीवारिपुनर्नवानांजलंसशम्बूकजभस्मपीतम् ।
सैरंडतैलंजयतिप्रसह्यशूलंसमस्तंपुरुषस्यासिद्धम् ॥

अर्थ-सोंठ, शमी, सुगन्धवाला और पुनर्नवा, इनके क्वाथमें घोंघेकी भस्म और अण्डीका तेल डालकर पीनेसे सर्वप्रकारके शूल दूर होते हैं ॥

हिंगुसौवर्चलंपाठाद्वौक्षारौलवणत्रयम् ।
चूर्णीकृतंविधातव्यंवटकंलशुनेरसे ॥

हृच्छूलेपार्श्वशूलेचमन्यास्तम्भेचदारुणे।
प्रयोज्यकुक्षिशूलेचभिषजासिद्धिमिच्छता॥

इतिहिंगाद्योवटकः।

अर्थ-हींग, कालानोन, पाढ़, सज्जी, जवाखार, सैंधानोन, संचरनोन, और विरिया संचरनोन, इन सबको पीस लशुनके रसमें भिजो बडे बना लेवे। इन वडोंको सेवनकरनेसै-हृदयशूल, पार्श्वशूल, मन्यास्तम्भ, और कुक्षिशूल दूर होताहै॥

फलतिक्ताव्योषगुडशर्करात्रिवृतार्द्धिकाः।
मोदकंभक्षयेच्चानुपिबेत्कोष्णंजलंपुनः॥
पार्श्वशूलेऽरुचौकासेज्वरेचानिलसम्भवे॥

इति त्रिफलामोदकः।

इति पक्तिशूलाऽध्यायः।

अर्थ-हरड़, बहेड़ा, आमला, कुटकी, सोंठ, मिरच और पीपल, इनका चूर्ण समान भाग, शर्करा और निसोतका चूर्ण सबसे आधा भाग, तथा गुड सबसै दुगुना डालकर मोदक बनाके भक्षण करै और ऊपरसै गरमजल पीवैतौ पार्श्वशूल, अरुचि, खाँसी, और वातज्वर दूर होताहै॥

इति परिणामशूलाऽध्यायः।

जीर्णेजीर्यत्यजीर्णेवायच्छूलमुपजायते।
पथ्यापथ्यप्रयोगेणभोजनाभोजनेनच॥
नशमंयातिनियमाद्योऽन्नद्रवउदाहृतः।
अन्नद्रवाख्यशूलेषुतावन्नस्वास्थ्यमश्नुते॥
यावत्कटुकपीताम्लमन्नंनच्छर्दयेद्द्रवम्।
जातमात्रेजरत्पित्तेशूलमाशुविनाशयेत्।
पित्तार्त्तंवमनंकृत्वाकफार्त्तंश्चविरेचनम्।
अन्नद्रवेचतत्कार्य्यंजरत्पित्तेयदीरितम्॥
आमपक्वाशयेशुद्धेगच्छेदन्नद्रवःशमम्॥

अर्थ–भोजनके पच जानेपर, या पचनेसमय अथवा अजीर्णमें जो शूल उत्पन्न होवे, वह शूल पथ्यापथ्यप्रयोगसे, वा भोजन करनेसैं अथवा भोजन करनेके नियमसे शान्त होवे, उसको अन्नद्रवशूल कहते हैं। अन्नद्रवशूलमें जबतक चरपरे, पीले, खट्टे, अन्नद्रवको वमन नहीं करै, तबतक चैन नहीं पडताहै ॥ जरत्पित्तशूल उत्पन्न होतेही मनुष्यको मार देता है, इस कारण पित्तसे पीडितमनुष्यको वमन करावै, और कफसे पीडित जरत्पित्तशूलवालेको विरेचन करावै, जो चिकित्सा जरत्पित्तमें कही है वही अन्नद्रवशूलमें करे और जो यत्न अन्नद्रवमें कहा है वह जरत्पित्तमें; करे जब रोगीका आमाशय और पक्काशय और शुद्ध हो जाता है तब अन्नद्रवशूल शांतहोताहै ॥

माषेण्डरींसरुचकांसुस्विन्नांवह्निपाचिकाम् ।
तादृशींसर्पिषाखादेदन्नद्रवनिपीडितः ॥
लिह्याद्धात्रीफलचूर्णमयश्चूर्णसमायुतम् ।
यष्टीचूर्णेनवायुक्तंलिह्यात्क्षौद्रेणतद्गदे ॥
श्यामाकतण्डुलैःसिद्धंसिद्धंतण्डुलकोद्रवैः ।
प्रियंगुतण्डुलैःसिद्धंपायसंशर्करान्वितम् ॥
गौडिकंसूरणंकन्दंकूष्माण्डञ्चापिभक्षयेत् ।
कलाययवसक्तून्वासक्तून्वालाजसंभवान् ॥
कुलत्थसक्तुमथवाऽथवादुग्धसरेणतु ।
चणकानामथोसक्तून्कोद्रवस्यौदनंयथा ।
गोधूममण्डकंतत्रसर्पिषागुडसंयुतम् ॥
ससितंशीतदुग्धेनसूदितंवाहितंचयत् ।
पटोलपत्रयूषेणखादेत्कणिकसक्तुकान् ॥
भृष्टान्वाचणकान्खादेद्दुजावान्वापिपिष्टितान् ।
कलायान्वानिराहारस्तृषितःक्षीरपोभवेत् ॥
कलाययवगोधूमश्यामाकाःककुभस्यच ।
एर्वारुबीजतोयेनपिबेद्वालवणाकृतम् ॥

शर्करेक्षुरसंक्षीरद्राक्षारसमथापिवा।
सर्वथोपप्रयुञ्जीतमूत्रकृच्छ्राश्मरीभिदाम्॥

अर्थ-अन्नद्रवसे पीडित मनुष्योंको लवणयुक्त, भलेप्रकार अग्निसै पकाये हुये उडदोंके बड़े घीके साथ खाने चाहिये। आमलोंका चूर्ण और लोहेका चूर्ण दोनोंको सहतमें मिलाकर चाटनेसे, अथवा मुलैठीके चूर्णमें सहत मिलाकर चाटनेसै अन्नद्रवशूल दूर होताहै। समेके चावलोंकी, या कोदोंके चावलोंकी अथवा कंगनीके चावलोंकी बनाई हुई खीर बूरा मिलाकर भक्षण करनी अन्नद्रवशूलवाले रोगियोंको हितकारीहै। ईख, सूरणकन्द, पेठा, मटर, जौकेसत्तू, खीलोंके सत्तू, कुलथीके सत्तू और चनेके सत्तू, कुदईका भात इनको दधि और दूध केसरके साथ सेवन करना चाहिये। गेहूंके मण्डकको घृत और गुड़ तथा बूरामिले हुए ठंडे दूधमें मलके या औटाकर खावै। कणिक (सूजी) के सत्तू अथवा भुनेहुए चनोंके सत्तू या मटरके सत्तू परवलके यूषके साथ भोजन करै, और ऊपरसे दूधपीवै। मटर, जौ, गेहूं, समा और अर्जुनवृक्षकी छाल इनको ककडीके बीजोंके जल और लवणके साथ पीनेसै अथवा मिश्री, ईखकारस और दूध वा दाखोंका रस पीनेसै मूत्रकृच्छ्र और अश्मरी रोग दूर होताहै॥

अन्नद्रवोदुश्चिकित्स्योदुर्विज्ञेयोमहागदः।
तस्मात्तस्यप्रशमनेपरंयत्नंसमाचरेत्॥
अन्नद्रवेजरत्पित्तेवह्निर्मन्दोभवेद्यतः।
तस्मात्तत्रानुपानानिमात्राहीनानिकारयेत्॥
कलाययवगोधूमश्यामाकाःकोरदूषकाः।
राजमाषाःस्थूलमाषाःस्थूलस्थाःकंगुशालयः॥
भोजनार्थेप्रशस्ताश्चपुराणाःसाप्रियङ्गवः।
दधिलुप्तसरंक्षीरंगव्यमाजंसमाहिषम्॥
घृतंपुराणंशाकार्थेवास्तुकोनिम्बपल्लवाः।
कर्कोटकाचवेल्लानांपत्राणिस्वरस्यच॥
यानिकानिप्रयोज्यानिकासमर्द्दलानिच।

बर्हिणोहरिणामत्स्यारोहिताःसकपिञ्जलाः ॥
भूतीकृताःशस्ततरारसार्त्तेचोपपादिताः ॥

अर्थ-अन्नद्रवशूल महा असाध्य, दुर्विज्ञेय (जाननेमें नहीं आवै) और महारोगहै, इसकारण इसको शीघ्रही बडे यत्नोंसे शान्त करै । जरत्पित्त और अन्नद्रवशूलरोगमें अत्यन्त अग्नि मन्द होजातीहै । इसकारण इसरोगमें अन्न और पान सकल अल्प देनेचाहिये । मटर, जौ, गेहूं, समा, कोदों, लोबिया, उडद, कंगनी, शालि, और प्रियंगू (चोवा) यह सब पुराने अन्न अन्नद्रवशूलरोगमें भोजनके लिये हितकारीहै । दधिमिश्रित दूध, गायकाघी, भैंसकाघी, पुरानाघी, बथुआ, नीमकेपत्ते, ककोडे, करेले, इनके पत्ते और स्वरस, तथा कसौंदीकेपत्ते, इन सबका शाक, मयूर, हिरण, रोहितमछली, और कपिंजलपक्षीके मांसका रस, अन्नद्रवशूलरोगमें हितकारीहै ।

गुडामलकपथ्यानांचूर्णप्रत्येकशःपलम् ।
त्रिपलंलोहकिट्टस्यतत्सर्वंमधुसर्पिषा ॥
समालोड्यततःखादेदक्षमात्रप्रमाणतः ।
आद्यमध्यावसानेषुभोजनस्यनिहन्तितत् ।
अन्नद्रवंजरत्पित्तमम्लपित्तंसुदारुणम् ।
परिणामसमुत्थस्यशूलंसंवत्सरोत्थितम् ॥
इति गुडमण्डूरम् ।

अर्थ-गुड चारतोले, आमलोंका चूर्ण चारतोले, हरडका चूर्ण चार तोले, मण्डूरकी भस्म बारह तोले लेवै, सबको सहत और घीमें मिलाकर दो तोले प्रमाण भोजनके पूर्व, मध्य और अन्तमें भक्षण करै । इससै अन्नद्रवशूल, जरत्पित्त, दारुण अम्लपित्त, और एक वर्षका परिणाम शूल दूर होताहै ॥

विडंगमुस्तात्रिफलागुडूचीदन्तीत्रिवृद्वह्निकटुत्रिकाणि ।
प्रत्येकमेषांपिचुभागचूर्णपलानिचत्वार्ययसोमलस्य ॥
गोमूत्रशुद्धस्यपुरातनस्ययद्वायसस्तानिशिवाटिकायाः ।

कृष्णाभ्रकाच्चूर्णपलंविशुद्धंनिश्चन्द्रकाच्छ्लक्ष्णमतीवसूतात्
पादोनकर्षंस्वरसेनखल्वशिलातलेमन्यमुनीदलस्य।
संमर्द्ययत्नादतिशुद्धगन्धपाषाणचूर्णेनविचूर्णितेन॥
युक्त्याततःपूर्वरजांसिदत्त्वासर्पिर्मधुभ्यामवमृद्ययत्नात्।
संस्थापयेत्स्निग्धघटेविशुद्धेततःप्रयोज्योऽस्यरसायनस्य॥
प्राङ्माषकोद्वावथमाषकौवागव्यश्चपथ्यंशिशिरंजलंवा।
पिबेदयंयोगवरःप्रभूतकालप्रनष्टानलदीपकःस्यात्॥
योगोपिहन्यात्परिणामशूलंतथापिचान्नद्रवसंज्ञकञ्च।
यक्ष्माम्लपित्तंग्रहणींप्रदुष्टांजीर्णज्वरंलोहितपित्तकुष्ठे॥
नसन्तितेयान्ननिहन्तिरोगान्योगोत्तमःसम्यगुपास्यमानः।

इति विद्याधराभ्रकम्।

अर्थ-वायविडंग, नागरमोथा, त्रिफला, गिलोय, दन्ती, निसोत, चीता और त्रिकुटा, प्रत्येकका चूर्ण दोदो तोले, गोमूत्रमें भावनादेकर सिद्ध कियाहुआ लोहमल या लोहपात्रिका चारपल निश्चंद्रकृष्णाभ्रकका चूर्ण चारतोले, और शुद्धपारा डेढ़तोले लेकर सबको अगस्तियाके पत्तोंके रसमें खरलकरै, पश्चात् सूख जानेपर इसमें १॥ डेढ़तोले शुद्धगंधकका चूर्ण मिलादेवै, फिर सहत और घीमें घोटकर एकचिकने बासनमें भरकर रखदेवै। अग्निका बलाबल विचारकर एकमासा या दोमासे गायके दूध या शीतल जलके साथ सेवन करै। इससै मन्दाग्नि, परिणामशूल, अन्नद्रवशूल, राजयक्ष्मा, अम्लपित्त, दुष्टसंग्रहणी, जीर्णज्वर, रक्तपित्त, और कुष्ठरोग दूर होताहै॥

लौहस्यरजसोभागास्त्रिफलायास्तथात्रयः।
गुडस्याष्टौतथाभागागुडान्मूत्रंचतुर्गुणम्॥
एतत्सर्वन्तुविपचेद्गुडपाकविधानवित्।
लिहेच्चतद्यथाशक्तिशूलंचान्नद्रवंजयेत्॥
लौहस्यैकभागः।

इति लौहगुटिका।

अर्थ-लोहेकाचूर्ण एकभाग, त्रिफला तीनभाग, गुड़ आठभाग, और गोमूत्र बत्तीसभाग, सबको एकत्रकर गुडपाककी विधिसै पकावै । इसको यथाशक्त्यनुसार सेवनकरै तौ अन्नद्रवशूल दूरहोवै ॥

कलायचूर्णभागौद्वौलोहचूर्णस्यचापरः ।
कारवेल्लपलाशानांरसेनैवविमर्दयेत् ॥
कर्षमात्रांततश्चैकांभक्षयेद्गुटिकांनरः ।
मण्डानुपानात्साहन्तिजरत्पित्तंसुदुर्जयम् ॥
अत्रकलायोवर्तुलकलायः ।
लोहस्यैकभागःमाषकादिक्रमेणभक्षणीयम् ।
इतिकलायगुटिका ।
इतिअन्नद्रवजरत्पित्ताऽध्यायः ।

अर्थ-मटरकाचूर्णदो तोले, लोहेकाचूर्ण एक तोला, दोनोंको करेलेके पत्तोंके रसमें खरलकर दोदो तोलेकी गोली बना लेवै, एक गोली प्रतिदिनखावै और ऊपरसै माड़ पीवै । इससै दुर्ज्जयजरत्पित्तरोग दूरहोताहै
इतिअन्नद्रवजरत्पित्ताधिकारः ।

अथउदावर्त्तचिकित्सामाह ।

त्रिवृत्सुधापत्रतिलादिशाकग्राम्यौदकानूपरसैर्यवान्नम् ।
अन्यैश्चसृष्टानिलविड्विबद्धात्तथाप्रसन्नागुडसीधुपायी ॥
प्रसन्नासुरामण्डःगुडकृत्सीधुगुडसीधु ।
आस्थापनंमारुतजेस्विन्नस्यपरिशस्यते ॥
पुरीषजेतुकर्त्तव्योविधिरानाहिकस्तुयः ॥
आनाहिको विधिः ।
इतिफलवर्त्यादिः ।

अर्थ-निसोत, थूहरकेपत्ते, तिलादिकाशाक, तथा ग्राम्यजलचर और अनूपदेशके जीवोंके मांसका रस, यवान्न, सुरामण्ड, और गुड़सै बनाई

हुई सीधू तथा अन्यान्य वायुनिःसारक द्रव्य उदावर्त्तरोगमें हितकारी है। वातज उदावर्त्तमें स्निग्ध और स्विन्नमनुष्योंकेलिये आस्थापन (निरूहवस्ति) और पुरीषज उदावर्त्तमें आनाहिक विधि (फलवर्त्त्यादि) करनी चाहिये ॥

क्षारवैतरणौबस्तीयुज्यात्तत्रचिकित्सकः।
सर्पिस्तैलरजःक्वाथंकल्कैरन्यतमेनच ॥
उदावर्त्तोदरानाहविषगुल्मविनाशनः ॥

अर्थ-क्षार, वैतरणनिरूहवस्ति- अनुवासनवस्ति, घृत, तेल, चूर्ण, क्वाथ, कल्क और अन्यान्यरोगोंके द्वारा उदावर्त्त, आनाह, विषदोष और गुल्मरोग नष्ट होता है ॥

त्रिवृत्कृष्णाहरीतक्योद्विचतुष्पंचभागिकाः।
गुटिकागुडतुल्यास्तुविड्विबन्धगदापहाः ॥

अर्थ-निसोत दो भाग, पीपल चार भाग और हरड पांच भाग तथा सबकी समान गुड लेवै, सबको मिला गोली बनाकर खानेसे विड्बन्धरोग दूर होताहै ॥

खण्डपलंत्रिवृतासममुपकुल्याकर्षचूर्णितं श्लक्ष्णः।
प्राग्भोजनेचसमधुरितान्मोदकंलिहन्प्राज्ञः ॥
एतद्गाढपुरीषेपित्तेचाविनियोज्यम्।
स्वादुर्नृपयोग्योऽयंचूर्णनाराचकोनाम्ना ॥

इति नाराचचूर्णम्।

अर्थ-खांड एक पल, निसोतका चूर्ण एक कर्ष, पीपलका चूर्ण एक कर्ष, इन सबको सहतमें मिलाकर भोजनके पहिले भक्षण करै तौ गाढपुरीष, पित्त और कफ दूर होवै । यह नाराचचूर्ण राजाओंके सेवने योग्य है ॥

सव्योषंपिप्पलीमूलंत्रिवृन्दन्तीसचित्रकम्।
तच्चूर्णंगुडसंमिश्रंभक्षयेत्प्रातरुत्थितः ॥
एतद्गुडाष्टकंनामबलवर्णाग्निवर्द्धनम् ॥

प्लीहोदावर्त्तगुल्मघ्नंशोथपाण्डुज्वरापहम् ॥
इति गुडाष्टकम् ।

अर्थ-पीपल, कालीमिरच, सोंठ, पीपलामूल, निसोत, दन्ती और चीतेकी जड, इन सबका चूर्ण समान भाग और सबकी समान गुड मिलाकर प्रातःकाल सेवन करै । यह गुडाष्टक-बल, वर्ण और अग्निको बढ़ानेवालाहै, तथा प्लीहा, उदावर्त्त, गुल्म, सूजन, पाण्डु और ज्वरको दूर करैहै ॥

हिंगुमाक्षिकसिन्धूत्थैःपक्त्वावर्त्तिंसुवार्जिताम् ।
घृतयुक्तांगुदेदद्यादुदावर्त्तविनाशिनीम् ॥

अर्थ-हींग चारमासे, सहत आठ तोले, सैन्धानोंन चारमासे, इन सबको एकत्र कर गुड़पाकविधिसे पकाके बत्ती बनालेवै, इन बत्तियोंको घिसे चुपडकर गुदामें चढानेसे दस्तहोकर उदावर्त्त रोग दूर होजायगा ॥

त्रिवृद्धरीतकीश्यामास्नुहीक्षीरेणभावयेत् ।
वटिकामृतपीतास्ताःश्रेष्ठाश्चानाहभेदिकाः ॥
इतिश्यामाश्याममूलैवत्रिवृत् ।

अर्थ-कालानिसोत, और हरड दोनों बराबर लेकर चूर्ण बनाले, पश्चात् थूहरके दूधकी भावना देकर गोली बना दूधकेसाथ सेवनकरनेसे आनाहरोग दूर होताहै ॥

स्थिरादिवर्गस्यपुनर्नवायाःशम्याकपूतीककरञ्जयोश्च ।
सिद्धःकषायेद्विपलांशिकानांप्रस्थोघृतात्स्यात्प्रतिबद्धवाते
इतिस्थिरादिवर्गः ।

इति स्थिरादिघृतम् ।

अर्थ-गायका घी दोसेर, जल आठसेर, और स्थिरादिवर्ग, पुनर्नवा, श्योनाक, पूतिकरञ्ज, तथा डहर, करंज, प्रत्येक आठ आठ तोले, पाकके लिये जल बत्तीससेर और शेष आठ रक्खै । यथा विधिसे घृतको सिद्ध करै । यह घृत वातकी बद्धताको दूर करैहै ॥

मूलकंशुष्कमार्द्रञ्चवर्षाभूमूलपञ्चकम् ।

आरेवतपलञ्चापिपिष्ट्वातेनपचेद्घृतम् ॥
तत्पीयमानंशमयेदुदावर्त्तमशेषतः ॥
स्वल्पपंचमूलंस्वल्पमिदम् । आर्द्रआर्द्रकम् ।

इति शुष्कमूलाद्यंघृतम् ।

अर्थ-गायका घी एक सेर, जल चारसेर, तथा कल्कके लिये सूखी मूली, अदरख, पुनर्नवा, स्वल्पपंचमूल, और अमलतासका गूदा, प्रत्येक दोदो तोले लेवै। यथा विधिसे घृतको पकावै। इस घृतको पीनेसे उदावर्त्त रोग दूर होता है ॥

त्रिवृत्खण्डश्चपलिकंकर्षंकृष्णारजोमधु ।
विष्टम्भेकफपित्तेचनाराचाख्यंनृपोचितम् ॥
कर्षंकर्षार्द्धवामधुनालिह्यात् ।

इति नाराचयोगः ।

इति आनाहोदावर्त्ताध्यायः ।

अर्थ-निसोतका चूर्ण चार तोले, खाँड चार तोले, पीपलका चूर्ण दो तोले लेवै पश्चात् सबको मिलाकर सहतके साथ चाटनेसे-कफ और पित्तजनित विष्टम्भरोग दूर होताहै। यह नाराचयोग राजा-ओंके सेवने योग्य है ॥

इतिआनाहोदावर्त्ताधिकारः ।

अथ गुल्मचिकित्सा ।

लंघनंदीपनंस्निग्धमुष्णवातानुलोमनम् ।
बृंहणंयद्भवेत्सर्वंतद्धितंसर्वगुल्मिनाम् ।

अर्थ-लंघन, दीपन, स्निग्ध, उष्ण, वातानुलोमक और सर्व प्रकाकारके पुष्टिकारक द्रव्य गुल्मरोगवालोंको हितकारीहै ॥

स्निग्धस्याभिषजास्वेदःकर्त्तव्योगुल्मशान्तये ।
स्रोतसांमार्दवंकृत्वाजित्वामारुतमुल्बणम् ॥

अर्थ-गुल्मरोगीको प्रथम स्निग्ध करके पश्चात् स्वेद देवै। कारण

यह है कि–स्वेद, स्निग्धमनुष्योंके स्रोतोंमें मृदुता उत्पन्न करके कुपित वायुको शान्तकर विबन्धादिकको नष्टकर गुल्मरोगको दूर कर देताहै ।

स्निग्धस्यस्वेदनंकुर्यात्कुम्भीपिण्डेष्टकादिभिः ।
शाल्वणाद्युपनाहश्चसुखोष्णंगुल्मशान्तये ॥
भित्त्वाविबन्धंस्निग्धस्यस्वेदोगुल्ममपोहति ॥

इतिपिण्डमांसादिपिण्डः ।

अर्थ–गुल्मरोगीको स्निग्धकरकै कुम्भ मांसपिण्ड और इष्टकादि द्वारा शाल्वणकेसाथ उपनाह स्वेददेनेसै गुल्मरोग दूरहोताहै ॥ वातनाशक काथसै कुम्भीको परिपूर्णकर पृथ्वीमें खोदकर गाड़देवे और उसके उपर शय्याको कराय स्वेददेनेसै गुल्मरोग शान्त होताहै ॥

मातुलुंगरसोहिंगुदाडिमंविडसैन्धवम् ।
सुरामण्डेनपातव्यंवातगुल्मरुजापहम् ॥

अर्थ–विजौरेका रस, हींग, अनार, विडनोन और सैन्धानोन, सबको एकत्रकर सुरामण्डके साथ पीनेसै वातगुल्मरोग दूर होताहै ॥

हिंगुत्रिकटुकंपाठांहपुषामभयाशठीम् ।
अजमोदाश्वगन्धेचतिन्तिडीकाम्लवेतसम् ॥
दाडिमंपौष्करंधान्यमजाजीचित्रकंवचाम् ।
द्वौक्षारौलवणेद्वेचचव्यंचैकत्रचूर्णयेत् ॥
चूर्णमेतत्प्रयोक्तव्यमनुपानेष्वनव्ययम् ।
प्रागुक्तमथवापेयंमद्येनोष्णोदकेनवा ॥
पार्श्वहृद्वस्तिशूलेषुगुल्मेवातकफात्मके ।
आनाहेमूत्रकृच्छ्रेचशूलेचगुदयोनिजे ॥
ग्रहण्यर्शोविकारेषुप्लीहपाण्ड्वामयेऽरुचौ ।
उरोविबन्धेहिक्कायांकासेश्वासेगलग्रहे ।
भावितंमातुलुंगस्यचूर्णमेतद्रसेनवा ।
बहुशोगुटिकाःकार्याःकार्मुकाःस्युस्ततोऽधिके ॥

इति हिंग्वादिचूर्णम् ।

अर्थ-हींग, सोंठ, मिरच, पीपल, पाढ़, हाऊबेर, हरड़, कचुर, अजमोद, असगंध, इमली, अमलवेंत, अनार, पोहकरमूल, धनिया, जीरा, चीता, वच, सज्जी, जवाखार, सैंधानोन, कालानोन, और चव्य, इन सबका बारीक चूर्ण बना बिजोरे नींबूके रसकी भावना देकर गोली बनालेवै। इसको पूर्वोक्त अनुपान, अथवा मदिरा, या उष्णोदकके साथ पान करनेसे-पार्श्वशूल, हृदयशूल, बस्तिशूल, वातकफात्मकगुल्म, आनाह, मूत्रकृच्छ्र, गुदशूल, योनिशूल, संग्रहणी, बवासीर, प्लीहा, पाण्डुरोग, अरुचि, उरोरोग, विबन्ध, हिक्का, खाँसी, श्वास, और गलग्रह यहसब रोग दूरहोतेहैं॥

पूतिकपत्रगजचिर्भटचव्यवह्नि-
व्योषश्चसंस्तररचितंलवणोपधानम्।
दग्धाविचूर्णयदधिमस्तुयुतंप्रयोज्यम्
गुल्मोदरश्वयथुपाण्डुगदोद्भवेषु॥
पूतिकोनाटकरंजस्तस्यमूलंगजचिर्भटंगोरक्षकर्कटी।
लवणंसैन्धवंतच्चपूतिकमत्रापिसमम्।
इति सर्वमन्तर्धूमेनदाग्धव्यम्।

अर्थ-दुर्गंधित करञ्जकी जड, तेजपात, बडी इन्द्रायनकी जड, चव्य, लालचीता, सोंठ, मिरच, पीपल, और सैंधानोन, इन सबको दग्ध करकै चूर्णबनालेवै इस चूर्णको दहीके पानीके साथ सेवन करनेसै गुल्म, उदरोग, सूजन और पाण्डुरोग दूर होताहै॥

शठींपुष्करमूलञ्चदन्तींचित्रकमाढकीम्।
शृंगबेरंवचाञ्चैवपलिकानिसमाहरेत्।
त्रिवृतायाःपलञ्चैकंकुर्यात्रीणिचहिंगुलः।
यवक्षारपलेद्वेचद्वेपलेचाम्लवेतसात्॥
यवान्यजाजीमरिचंधान्यकंचेतिकार्षिकम्।
उपकुंच्यजमोदाभ्यांपृथगर्द्धपलंभवेत्॥
मातुलुंगरसेनैतद्गुटिकांकारयेद्भिषक्।

तासामेकांपिबेद्द्वेवातिस्त्रोवाथसुखाम्बुना ।
अम्लैर्मद्यैश्वयूषैश्चघृतेनपयसाथवा ।
एषाकांकायनेनोक्तागुटिकागुल्मनाशिनी ।
अर्शोहृद्रोगशमनीकृमीणाञ्चविनाशिनी ।
गोमूत्रयुक्ताशमयेत्कफगुल्मचिरोत्थितम् ॥
क्षीरेणपित्तगुल्मन्तुमद्यैरम्लैश्चवातिकम् ।
त्रिफलारसमूत्रैश्चनियच्छेत्सान्निपातिकम् ॥
रक्तगुल्मन्तुनारीणामुष्ट्रीक्षीरेणपाययेत् ॥
उपकुंचिकाकृष्णजीरा ।

इति कांकायनगुटिका ।

अर्थ–कचूर, पोहकरमूल, दन्ती, चीता, अड़हर, अदरख और बच, प्रत्येक चार चार तोले, निसोत चार तोले, सिग्रफ बारह तोले, जवाखार आठ तोले, अम्लवेत आठ तोले, अजवायन, जीरा, काली मिरच और धनिया प्रत्येक एक एक तोला, कालाजीरा और अजमोद प्रत्येक दोदो तोले लेवै, सबका बारीक चूर्णकर विजोरेके रसमें गोलीबनालेवै। एक गोली या दो गोली अथवा तीन गोली, उष्णोदक, अम्लद्रव्य, मूंग आदिकेयूष, घी अथवा दूधके साथ सेवन करै। यह कांकायन मुनिप्रोक्त कांकायन गुटिका–गुल्म, बवासीर, हृदयरोग, कृमि आदिरोगोंको दूर करै है। यह गोली गोमूत्र-के साथ बहुत दीनोंके कफगुल्मको, दूधकेसाथ पित्तगुल्मको, मदिराके साथ वातगुल्मको, त्रिफलेकेरस और गोमूत्रकेसाथ सान्निपातिक गुल्म-को, तथा ऊंटनीके दूधकेसाथ पीवैतौ स्त्रियोंके रक्तगुल्मको यह कांकायन-गुटिका दूर करतीहै ॥

हपुषाव्योषपृथ्वीकाचव्यचित्रकसैन्धवैः ।
साजाजीपिप्पलीमूलदीप्यकैर्विपचेद्घृतम् ॥
सकोलमूलकरसंसक्षीरंदधिदाडिमम् ।
तत्परंवातगुल्मघ्नंशूलानाहविबन्धनुत् ॥
योन्यर्शोग्रहणीरोगश्वासकासारुचिज्वरान् ।

पार्श्वहृद्बस्तिशूलञ्चघृतमेतद्व्यपोहति ॥
कोलस्यमूलकक्काथस्तथार्द्रस्यरसस्तथा।
दाडिमबीजस्वरसःक्काथोवास्वरसाभावे ॥
पंचद्रवाणिप्रत्येकंस्नेहसमानिचतथा ॥

इति हपुषादिघृतम्।

अर्थ–गायकाघी एकसेर, बेरीका क्काथ एकसेर, मूलीका क्काथ एकसेर, दूध एकसेर, दही एकसेर, अनारका रस एकसेर और कल्कके लिये हाऊ, बेर, सोंठ, पीपल, कालीमिरच, बडी इलाची, चव्य, चीता, सैंधानोन-जीरा, पीपलामूल, और अजवायन प्रत्येक एक एक तोले। यथा विधि-सै घृतको सिद्धकर सेवन करनेसै वातगुल्म, शूल, आनाह, विबन्ध, योनि-रोग, बवासीर, संग्रहणी, श्वास, खाँसी, अरुचि, ज्वर, पार्श्वशूल, हृदय-शूल, बस्तिशूल, इन सब रोगोंको यह हपुषादिघृत दूर करैहै ॥

द्राक्षामधुकखर्जूरंविदारींसशतावरीम्।
परुषकाणित्रिफलांसाधयेत्पलसंमितान्।
जलाढकेपादशेषेरसमामलकस्यच।
घृतमिक्षुरसंक्षीरमभयाकल्कपादिकम् ॥
साधयेच्चघृतंसिद्धंशर्कराक्षौद्रपादिकम्।
प्रयोगात्पित्तगुल्मघ्नंसर्वपित्तविकारनुत् ॥

इति द्राक्षाद्यंघृतम्

अर्थ–उत्तम गायका घी दो सेर, आमलोंकारस दो सेर, ईखका रस दो सेर, गायका दूध दोसेर, क्काथके लिये दाख, मुलैठी, खजूर, विदा-रीकन्द, शतावर, फालसा, हरड़, आमला और बहेडा, प्रत्येक चार चार तोले, पाकके लिये जल आठ सेर, शेषदो सेर, और कल्कके लिये कुटी हुई हरड आधसेर, । यथा विधिसै घृतको सिद्धकर पावभर बूरा और पावभर सहत मिलालेवै। यहघृत–पित्तगुल्म, और सर्व पित्तके विकारोंको दूर करैहै ॥

सद्यःशमंनयतियेचकफानिलोत्था
भार्गाख्यषट्पलघृतंप्रवदन्तितज्ज्ञाः।

मगधजापिप्पलीतस्याःफलंमूलञ्च।
ज्वलनश्चित्रकमूलंयावकोयवक्षारः॥
क्वाथश्चतुर्गुणःक्षीरंस्नेहसमंदधिचतुर्गुणम्
किंवाक्वाथदध्नीप्रत्येकंद्विगुणे॥

इति भार्गीषट्पलकंघृतम्।

अर्थ-गायकाघी दोसेर,दूध दोसेर,दही आठसेर,और दशमूल,अंडकी-जड तथा भारंगी, इनका क्वाथ आठ सेर,अथवा दही और दशमूलादि-का क्वाथ प्रत्येक चार चार सेर, तथा पीपलामूल, चव्य, सोंठ, चीता, और जवाखार प्रत्येक छै छै पल लेवै। सबको मिलाकर यथा विधिसै घृतको सिद्ध करै। यह घृत-गुल्म, उदररोग, अरुचि, भगंदर, मंदाग्नि, श्वास, खांसी, ज्वर,क्षय, शिरोरोग, संग्रहणी, और कफवातोद्भवरोगोंको तत्काल नष्ट करैहै॥

जलद्रोणेविपक्तव्याविंशतिःपंचचाभया।
दन्त्याःपलानितावन्तिचित्रकस्यतथैवच॥
तेनाष्टभागशेषेणपचेद्दन्तीसमंगुडम्।
तच्चोभयात्रिवृच्चूर्णात्तैलाच्चापिचतुष्पलम्॥
पलमेकंकणाशुण्ठ्योःसिद्धेलेहेऽथशीतले।
क्षौद्रतैलसमंदद्याच्चातुर्जातपलन्तथा॥
ततोलेहपलंलीढ्वाजग्ध्वाचैकांहरीतकीम्।
सुखंविरिच्यतेस्निग्धादोषप्रस्थमनामयः॥
प्लीहश्वयथुगुल्मार्शोहृत्पाण्डुग्रहणीगदाः।
शाम्यन्त्युत्क्लेशविषमज्वरकुष्ठान्यरोचकाः॥

इति दन्तीहरीतकी।

अर्थ-पोटलीमें बँधी हुई हरड पचीसपल, दन्तीकी जड पचीस पल और चीतेकी जड पचीस पल लेकर बत्तीस सेर जलमें पकावै जब चार सेर जल शेष रहै तब उतारकर छानलेवै और पोटलीको खोलकर हरडों-को निकाललेवै, पश्चात् इस काढेमें पचीसपल गुड, पचीसपल काढेमें

की, निकाली हुई हरड़, सोलह तोले निसोतका चूर्ण, सोलह तोले तेल, पीपल और सोंठ चार तोले डालकर अवलेह सिद्ध करै, जब शीतल होजाय तब सहत सोलह तोले और चातुर्जातक (दालचीनी, इलायची, नागकेशर, तेजपात) का चूर्ण चार तोले मिलादेवै। पश्चात् अवलेहको चार तोले भर और एक हरड सेवन करै । इससे कोठा स्निग्ध होकर सुखपूर्वक दस्त होने लगतेहैं । तथा प्लीहा, सूजन, गुल्म, बवासीर, हृदयरोग, पाण्डुरोग, संग्रहणी, उत्क्लेश, विषमज्वर, कुष्ठ और अरोचक रोग दूर होताहै ॥

स्नुहीत्वक्खादिरंकाष्ठंकोष्ठोदुम्बरजंफलम् ।
वल्कलञ्चपृथक्पंचपलमष्टगुणेजले ॥
पक्कापादावशेषेणलौहपंचपलंपचेत् ।
पिण्डीभावेद्रवेकिंचिदवशिष्टेतुनिक्षिपेत् ॥
शोभाञ्जनकमूलस्यकल्केनावृत्यपाचितम् ।
करीषाग्नौसमुद्धृत्यहरितालंपलद्वयम् ॥
चूर्णितद्विपलंतच्चगुग्गुलोर्घृतपिष्टितम् ।
एकीकृत्यपचेद्भूयोयावल्लेहत्वमागतम् ॥
गुल्मेकुष्ठेक्षयेस्थौल्येशोथेशूलेचपाकजे ।
पाण्डुरोगेप्रमेहेचवातरोगेतथैवच ॥
सिद्धमेतत्प्रयुञ्जीतवलीपालितनाशनम् ॥

इति लौहगुग्गुलुः ।

अर्थ-थूहरकीछाल, खैरकी लकडी, गूलरकी छाल और फल, प्रत्येक पांच पांच पल लेकर आठगुने जलमें पकावै जबजल चौथाई भाग शेषरहे तब उतारकर वस्त्रमें छानलेवै, पश्चात् इस काढ़ेमें पांच पल लोहेका चूर्ण डालकर पकावै जब कुछ कुछ गाढ़ होजाय तब सैंजनेकी जड़का कल्क अन्नेउपलोंकी अग्निसे पुटपाक किया हुआ आठ तोले, हरिताल आठ तोले, और घीसे पिसा हुआ गूगल आठ तोले सबको मिलाकर लेहवत् पकावै। इसको सेवनकरनेसे-गुल्म, कोढ,क्षय, स्थूलता,

सूजन, शूल, पकाहुआ शूल, पाण्डुरोग, प्रमेह, वातरोग और वलीपलितरोग दूर होताहै ॥

रौधिरस्यतुगुल्मस्यगर्भकालव्यतिक्रमे ।
स्निग्धस्विन्नशरीरायदद्यात्स्निग्धविरेचनम् ॥

अर्थ-रक्त (आर्त्तव) जनित गुल्मरोगमें गर्भकालको छोड़कर अर्थात् ग्यारह मासके भीतर भी गर्भ प्रसूत न होय तौ निश्चय रक्तगुल्म जानकर स्त्रियोंको स्निग्ध और स्विन्न करके विरेचनके लिये स्नेहयुक्त जुल्लाब देवै ॥

कम्पिल्लस्यरजःश्रेष्ठंससितंमधुरेचनम् ॥
शताह्वाचिरबिल्वत्वग्दारुभार्गीकणोद्भवः ॥
कल्कःपीत्वाहरेद्गुल्मंतिलक्काथेनरक्तजम् ।
तिलक्काथोगुडव्योषहिंगुभार्गीयुतोभवेत् ॥
पानंरक्तभवेगुल्मेनष्टेपुष्पेचयोषितम् ॥
सक्षारत्र्यूषणंमद्यंप्रपिबेदस्रगुल्मिनी ॥
क्षारोघण्टापाटल्यादः ।
पलाशक्षारतोयेनसिद्धंसर्पिःपिबेच्चसा। ।
उष्णैरुष्णवीर्यैः ।
नप्रभिद्येतयद्येवंदद्याद्योनिविशोधनम् ।
क्षारेणयुक्तंफलकंस्नुहीक्षीरेणवापुनः ॥
क्षारेणपलाशस्यफलकंतिलपिण्डकम् ।
सूक्ष्मवस्त्रंप्रक्षयित्वावर्त्तिंकृत्वायोनौ धारयेत् ।
किण्वंसगुडक्षारंदद्याद्योनिविशोधनम् ।
किण्वंसुराबीजंजलेनवर्त्तिः ।
रुधिरेतिप्रवृत्तेतुरक्तपित्तहरीक्रिया ॥

अर्थ-कबीलेका चूर्ण, मिश्री और सहत मिलाकर सेवनकरनेसे रक्त गुल्मवाली स्त्रियोंके उत्तम रीतिसे दस्तहोतेहैं। सोया, करंजकी छाल देवदारु, भारंगी और पीपलको तिलोंके काथमें पीसकर सेवनकरने

आर्त्तवजनित गुल्मरोग शान्त होताहै। गुड़, पीपल, काली मिरच, सोंठ, हींग, और भारंगी तिलोंके क्वाथमें पीसकर पीनेसै स्त्रियोंके रक्त-गुल्म रोग नष्ट होताहै और नष्टपुष्प फिरसे उदित होजाताहै। खार और त्रिकुटेका चूर्ण मद्यकेसाथ पानकरनेसै रक्तगुल्म आराम होताहै। घण्टापाढ़ल आदिकेक्षारके जलसै और ढ़ाकके क्षारके जलसै बनायाहुवा घी पीनेसैभी आर्त्तवजनित गुल्मरोग दूर होताहै। आर्त्तवजनित गुल्म-रोगमें उष्ण औषधियोंके द्वारा जुल्लाव देना अत्यंत हितकारी है। जो जुल्लाव न देवैतौ योनिको शुद्धकरनेवाली औषधि प्रयोगकरे, पलाश आदिके क्षार अथवा थूहरके दूधके द्वारा फलवर्त्ति बनाकर उससै योनिको शुद्धकरै। पलाशका क्षार और तिल एकत्र पीसके पिण्ड बनालेवै, उस पिण्डको बारीक वस्त्रपै ल्हेशकरि बत्ती बना योनिमें धारणकरनेसै दूषितरक्त निकलकर योनि शुद्ध होजातीहै। सुराबीज, गुड़ और क्षार इनको मिलाकर जलके साथ बत्ती बना योनिमें धारणकरनेसै योनि शुद्ध होजातीहै। जो योनिके द्वारा अधिक रक्तस्राव होयतौ रक्तपित्त-नाशक क्रिया करनी चाहिये॥

भल्लातकान्कल्ककषायपक्वंसर्पिःपिबेच्छर्करयाविमिश्रम्॥
तद्रक्तगुल्मंविनिहन्तिपीतंबलासगुल्मंमधुनासमेतम्॥
सिद्धशीतेशर्कराप्रक्षेप्या।
कफगुल्मेशर्करास्थानेमधुपादिकम्।

इति भल्लातकघृतम्।

अर्थ–गायका घी एकसेर, भिलावेका क्वाथ चारसेर, और कल्कके लिये कुटा हुआ भिलावा पावभर, सबको मिलाकर घृत सिद्ध करै। इस घृतमें बूरा मिलाकर पीनेसै रक्तगुल्म और सहत मिलाकर पीनेसै–कफ-गुल्म रोग नाश होताहै॥

मारितंसूतताम्राभ्रंगंधकंमाक्षिकंसमम्।
मर्द्दयेच्चित्रकद्रावैर्येवक्षारयुतंदिनम्।
त्रिगुञ्जंभक्षयेन्नित्यंनागवल्लीदलेनवा।
वातगुल्महरःख्यातोरसोऽयं शिखिवाडवः।
हिंगुसौवर्चलत्र्यूषासिन्धुदाडिमदीप्यकैः।

प्रतिचूर्णंकर्षमात्रंप्रस्थंप्रस्थंघृतंदधि ॥
पाच्यंघृतावशेषंतंकर्षार्द्धमनुपानतः ।
वातगुल्मञ्चशूलञ्चआनाहञ्चविनाशयेत् ॥

इतिशिखिवाडवरसः ।

अर्थ–पारेकी भस्म, ताँबेकी भस्म, अभ्रककी भस्म, गंधक, सोनामाखी और जवाखार, इन सबको एकत्र कर एकदिन चीतेके रसमें खरल करै । इसको प्रतिदिन तीन रत्तीभर पानमें रखकै खावैतौ यह शिखिवाडवरस वातगुल्मको निश्चय नष्ट करदेवै । हींग, कालानोन, सोंठ, पीपल, कालीमिरच, सैंधानोन, अनार, और, अजवायन, प्रत्येकका चूर्णदो तोले, घृतदो सेर, दही दोसेर, इन सबको एकत्रकर यथाविधिसै पकावै, जब केवल घृतही शेष रहै तब उतारलेवै । इसको एकतोलाभर शिखिवाडवरसके ऊपरसै पीवैतौ वातगुल्म, शूल, और आनाह रोग दूर होवै ॥

शुद्धसूतंसमंगंधंसूतांशंमृतताम्रकम् ।
पंचांशंशाकवृक्षस्यद्रवैर्मर्द्यंदिनद्वयम् ॥
सर्पाक्ष्योऽथद्रवैश्चाह्निरुद्ध्वालघुपुटेपचेत् ।
पंचधाभूधरेवाथचूर्णंजैपालतुल्यकम् ॥
त्रिगुंजंभक्षयेच्चाज्यैःपित्तगुल्मप्रशान्तये ।
द्राक्षाहरीतकीक्राथमनुपानंप्रकल्कयेत् ॥
रसउद्दामरोनामपित्तगुल्मंनियच्छति ॥

इति उद्दामररसः ।

अर्थ–शुद्धपारा एक भाग, शुद्धगंधक एकभाग, और तांबेकी भस्म चौथाई भाग, इन सबको पांचभाग शाकवृक्षके रसमें दो दिन और सर्पाक्षीके रसमें एक दिन खरल करै, फिर सम्पुटमें रख पांच लघुपुट देवै, अथवा पांचवार भूधरयंत्रमें पकावै । पश्चात् शीतल होनेपर पीसके चूर्णकरले और चूर्णकी बराबर शुद्ध जमालगोटा मिलादेवै । इसको तीन गुंजाप्रमाण घीके साथ खावै और ऊपर दाख और हरडोंके काथका अनुपान करै तौ यह उद्दामरनामवाला रस पित्तगुल्मको नष्ट करै ॥

ताम्रंसूतंसमंगंधंजैपालंत्रिफलासमम् ।
त्रिकटुकंपेषयेत्क्षौद्रैर्निष्कंगुल्महरंलिहेत् ॥
उष्णोदकंपिबेच्चानुनाराचोयंमहारसः ॥

इति नाराचरसः ।

अर्थ-तांबा, पारा, गंधक जमालगोटा, हरड, बहेडा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल, इन सबको समान भाग लेकर सहतमें पीसलेवै, इसको चारमासेभर भक्षण करै और ऊपरसे गरमजल पीवै तौ यह नाराचरस-गुल्मरोगको निश्चय दूर करदेताहै ॥

गंधकंतालकंताप्यंमृतताम्रंमनःशिला ।
शुद्धसूतंचतुल्यांशंमर्दयेद्भावयेद्दिनम् ।
पिप्पल्यास्तुकषायेणवज्रीक्षीरेणभावयेत् ।
निष्कार्द्धंभक्षयेत्क्षौद्रैर्गुल्मंप्लीहंविनाशयेत् ॥
रसोविद्याधरोनामगोमूत्रञ्चपिबेदनु ॥

इति विद्याधररसः ।

अर्थ-शुद्ध गंधक, शुद्ध हरिताल, शुद्ध सोनामाखी, तांबेकी भस्म, मैनशिल और शुद्ध पारा यह सब समान भाग लेकर पीपलके काढेमें और थूहरके दूधमें भावना देकर एक दिन खरल करै। इसको दो मासे भर सहतके साथ खावै और ऊपरसे गोमूत्र पीवै तौ यह विद्याधरनाम-वालारस गुल्म और प्लीहादिरोगोंको दूर करै ॥

मृतंसूतंमृतंताम्रंताप्यंकांचनींमर्दयेत् ।
अर्कवज्रीरसैनैवदिनान्तेवटकीकृतम् ॥
गुंजैकंगुडसंयुक्तंतथागंधसुवर्चलम् ।
निष्कैकंगुल्मशांत्यर्थंरसःकांचनमोहनः ॥
विशालाकटुकामुस्तंकुष्ठमिन्द्रयवंसमम् ।
चूर्णयेद्देवदारुञ्चकर्षैकंमधुनालिहेत् ॥
गुल्मोदरज्वरस्तापमनुपानंनिहन्त्यलम् ॥

अर्थ-पारेकीभस्म, ताँबेकीभस्म, सोनामाखी, हलदी, गंधक और कालानोन, इन सबको एकत्रकर आकके दूधमें एकदिन खरलकर रात्रिमें एकएक गुंजाभरकी गोली बनालेवै । चारमासे भर इसको गुड़-केसाथ भक्षणकरै और ऊपरसै इन्द्रायन, कुटकी, नागरमोथा, कूठ, इन्द्रजौ, और देवदारु इनका चूर्ण सहतमें मिलाकर दो तोलेभर खावै तौ गुल्म, उदररोग, ज्वर और दाह दूर होवै ॥

पित्तश्लेष्मोत्थितेगुल्मेदेयोनाराचकोरसः ॥

अर्थ-पित्तश्लेष्मसै उत्पन्न हुए गुल्मरोगमें नाराचरस देना चाहिये॥

पारदंशिखितुत्थञ्चजैपालंगंधकंसमम् ।
आरग्वधफलंकृष्णावज्रीदुग्धेनमर्दयेत् ॥
धात्रीफलरसैःखादेत्स्त्रीणांरक्तदरंहरेत् ॥
चिंचाफलरसंचाशुपथ्यंदध्योदनंहितम् ॥

अर्थ-पारा, नीलाथोथा, जमालगोटा, गंधक, अमलतास और पीपल इनसबको एकत्रकर थूहरके दूधमें खरलकरै, फिर इसको आमलोंके रसमें मिलाकर खानेसै स्त्रियोंको रक्तप्रदररोग दूर होताहै ।

इसके ऊपर इमलीका रस, और दहीके साथ भातका भक्षण करना पथ्य है ।

रक्तदरंहरेत्सैवकठिनंलेपनेनतु ॥

अर्थ-खडिया मिट्टीका पेटपर लेप करनेसैभी रक्तप्रदर रोग दूर होता है ॥

रुधिरेतुप्रवृत्तेऽपिरक्तपित्तहरीक्रिया ।
कार्यावातरुजार्तानांसर्ववातहरीक्रिया ॥

अर्थ-रक्तस्राव अधिक होय तौ रक्तपित्तनाशक क्रिया करनी चाहिये । और स्त्रियोंके उदरमें वातजनित वेदना होय तौ सर्ववातनाशक क्रिया करनी चाहिये ॥

धात्रीफलानांस्वरसैःषट्पलंविपचेद्घृतम् ।
शर्करासैन्धवोपेतंतद्धितंसर्वगुल्मिनाम् ॥

इति धात्रीषट्पलकंघृतम् ।

अर्थ-आमलोंके रसमें चौवीस तोले घृतको पकावै,फिर इसमें मिश्री और सैंधानोन मिलाकर सेवन करनेसे सर्वप्रकारके गुल्म रोग दूर होतेहैं॥

वचाहरीतकीहिंगुसैन्धवंसाम्लवेतसम् ।
यवक्षारंयवानीञ्चपिबेदुष्णाम्बुनाभृशम् ॥
एताद्धिगुल्मनिचयंसशूलंसपरिग्रहम् ।
भिनत्तिसप्तरात्रेणवह्नेर्वृद्धिङ्करोतिच ॥

अर्थ-वच, हरड, हींग, सैंधानोंन, अमलवेंत, जवाखार और अजवायन इन सबको समान भागले चूर्णकर गरम जलके साथ पीनेसे-शूलसहित गुल्मरोग सातदिनमें दूर होजाताहै और अग्निकी वृद्धि होतीहै ॥

हिंगुत्रिकटुकवचाजमोदाधन्याजगन्धा-
दाडिमतिन्तिडीकपाठाचित्रकचव्यसैन्धव-
विडसौवर्चलयवक्षारस्वर्जिकाः ।
पिप्पलीमूलाम्लवेतसंशठीपुष्करहपुषा-
जाजीपथ्याःसंचूर्ण्यमातुलुङ्गाम्लेन
बहुशःपरिभाव्याक्षमात्रागुटिकाःकारयेत् ॥
ततःप्रातरेकैकांभक्षयेत् ।
एषखलुयोगोगुल्मश्वासकासचोरक-
हृद्रोगपार्श्वोदरबस्तिशूलानाहमूत्रकृ-
च्छ्राशःप्लीहपाण्डुरोगान्हन्ति ॥
दूलीप्रतिदूल्याश्चात्यर्थमुपयुज्यते ।

इति हिंग्वाद्यंचूर्णम् ।

अर्थ-हींग, सोंठ, मिरच, पीपल, वच, अजमोद, धनिया, तिलवन, अनार, इमली, पाढ़, चीता, चव्य, सैंधानोन, विरियासंचरनोंन, कालानोन, जवाखार, सज्जीखार, पीपलामूल, अमलवेंत, कचूर, पोहकरमूल, हाऊबेर, जीरा और हरड़, इनसबको एकत्र पीस चूर्णकर विजौरे नीबूके रसकी वारंवार भावना देकर दो दो तोले भरकी गोली बनालेवै। प्रतिदिन प्रातःकाल एक गोली खावै । इससे गुल्म, श्वास, खांसी,

अरुचि, हृदयरोग, पार्श्वशूल, उदरशूल, बस्तिशूल, आनाह, मूत्रकृच्छ्र, ववासीर, प्लीहा, और पाण्डुरोग दूर होजाताहै ॥

कह्लारमुत्पलंपद्मकुमुदंमधुयष्टिका ।
पक्काम्बुनाथतत्क्काथेजीवनीयोपकल्कितम् ॥
घृतंपक्कंनवंपीतंरक्तपित्तास्रगुल्मनुत् ।
दाहतृष्णाज्वरछर्द्दियोनिदोषहरंपरम् ॥

इति कल्हाराद्यंघृतम् ।

अर्थ-गायका घी दोसेर, कल्कके लिये जीवनीयदशक आध सेर और काथके लिये सफेदकमल, नीलोत्पल, कमल, कमोदिनी और मुलैठी दोसेर, जल बत्तीस सेर, शेष आठ सेर रक्खै । सबको मिलाकर यथाविधिसे घृतको सिद्ध करै । इस घृतको पीनेसे-रक्तपित्त, रक्तगुल्म, दाह, तृषा, ज्वर, वमन, और योनिके विकारोंको दूर करैहै ॥

वल्लूरंमूलकंमत्स्याञ्छुष्कशाकानिवैदलम् ।
नखादेच्चानुपंगुल्मीमधुराणिफलानिच ॥

इति बल्लूरंशुष्कमांसम् ।

इति गुल्मरोगाध्यायः ।

अर्थ-शुष्कमांस, मूली, मछली, शुष्कशाक, वैदल अन्न, अनूपदेशके जावाका मांस, और मधुफल, यह सब गुल्मरोगवाले मनुष्योंको कदापि भक्षण करने नहीं चाहिये ॥

इति गुल्मरोगाधिकारःसमाप्तः ।

अथ हृद्रोगचिकित्सामाह ।

हृद्रोगिणंस्नेहयित्वावमयेद्रेचयेत्तथा ।
सुचिरोत्थंलंघयेच्चहृद्रोगंवातिकंविना ।
पिप्पल्येलावचाहिंगुयवक्षारोऽथसैंधवम् ।
सौवर्चलमथोशुण्ठीचाजमोदावचूर्णितम् ॥
फलधान्याम्बुकौलत्थंदधिमद्यासवादिभिः ।
पाययेच्छुद्धदेहश्चस्नेहेनान्यतमेनवा ॥

अर्थ-हृदयरोगीको स्निग्धकरकै बमन और विरेचन करावै, और

वातिक हृदयरोगको छोडकर बाकीके बहुत पुराने सर्वप्रकारके हृदयरोगोंमें लंघन कराने चाहिये । पीपल, इलायची, हींग, जवाखार, सैंधानोंन, कालानोंन, सोंठ और अजमोद, इनसबका एकत्र चूर्णकर त्रिफलेके काढेके साथ, कांजिकेसाथ, कुलथीके यूषके साथ, दधि, मदिरा, आसव अथवा अन्य किसास्नहक साथ वमन विरेचनादिके द्वारा शुद्धदेहवाले हृदयरोगीको पान करावै ॥

शीताप्रदेहाःपरिसेचनानितथाविरेकोहृदिपित्तदुष्टे ।
द्राक्षासिताक्षौद्रपरूषकैःस्याच्छुद्धेचपित्तेह्यनुपानकंस्यात्॥
अर्जुनस्यत्वचासिद्धंक्षीरंयोज्यं च पैत्तिके ।
सितयापंचमूल्याचबलयामधुकेनवा ॥
घृतेनदुग्धेनगुडाम्भसावापिबन्तिचूर्णंककुभस्यतोये ।
हृद्रोगजीर्णज्वररक्तपित्तंहत्वाभवेयुश्चिरजीविनस्ते ॥

अर्थ-पैत्तिक हृदयरोगमें शीतललेप, जलका सींचना, और विरेचन यह उपचारकरै । वमन, विरेचन आदिसे शुद्ध किये हुए हृदयरोगीको दाख, मिश्री, सहत और फालसा इनको एकत्रकर खानेको देवै । अर्जुनकीछाल, अथवा पंचमूल या मुलैठी, अथवा खिरैटीकेसाथ दूधको औटाकर मिश्री मिलाके पीनेसै पित्तज हृदयरोग दूर होता है । घी, दूध, या गुड़के सरबतके साथ अर्जुनवृक्षकी छालके चूर्णको पीनेसे हृद्रोग, जीर्णज्वर, और रक्तपित्तरोग दूर होताहै,और मनुष्य दीर्घजीवी होजातेहैं।

वचानिम्बकषायाभ्यांवान्तंहृदिकफोत्थिते ।
गोधूमककुभचूर्णंछागपयोगुडसर्पिषापक्वम् ॥
मधुशर्करयाविमिश्रंशमयतिहृद्रोगमुद्धतंपुंसाम् ।
दशमूलीकषायास्तुसयवक्षारसैन्धवम् ॥
कासंश्वासंचहृद्रोगंगुल्मशूलञ्चनाशयेत् ॥
हिंगूग्रगन्धाविडविश्वकृष्णाकुष्ठाभयाचित्रकयावशूकम् ।
पिबेत्ससौवर्चलपुष्कराढ्यंयवाम्भसाशूलहृदामयघ्नम् ॥

अर्थ-कफज हृदयरोगमें वच और नीमके काथके द्वारा वमन

करावै । गेहूं और कोहका चूर्ण बकरीके दूधमें गुड़ और घृत डालकै पकावै, फिर इसमें सहत और मिश्री मिलाकर सेवन करनेसै प्रबल-हृदयरोग दूर होताहै । दशमूलके काढ़ेमें जवाखार, और सैंधानोन मिलाकर पीनेसै-खाँसी, श्वास हृदयरोग, गुल्म और शूलरोग दूर होताहै । हींग, वच, विरियासंचरनोन, सोंठ, पीपल, कूठ, हरड़,चाता, जवाखार, कालानोन और पोहकरमूल इनका चूर्ण जौके काढ़के साथ पीनेसै-शूल और हृदयरोग दूर होताहै ॥

मुख्यंशतार्द्धञ्चहरीतकीनांसौवर्चलस्यापिपलद्वयञ्च ।
पक्वंघृतंवल्लभकेतिनाम्नाहृद्रोगशूलोदरमारुतघ्नम् ॥
मुख्यंप्रशस्तम् ।

इतिवल्लभघृतम् ।

अर्थ-हरड़ पचास, कालानोन आठ तोले, इनके द्वारा घृतको पकाकर सेवन करनेसै हृदयरोग, शूल, उदररोग, और वातको यह वल्लभघृत दूर करै है ॥

पाठावचाशठीक्षारपथ्याग्निव्योषदाडिमम् ।
महार्द्रकञ्चत्रिफलाकुष्ठयासाम्लवेतसम् ॥
मातुलुंगस्यमूलञ्चचूर्णमुष्णाम्बुनापिबेत् ।
मद्येनवाजयेद्गुल्मंहृद्रोगंशूलमाशुतत् ॥

इति पाठाद्यंचूर्णम् ।

अर्थ-पाढ़, वच, कचूर,जवाखार, हरड़, चीता, सोंठ, मिरच, पीपल, अनार, महार्द्रक (इमली), हरड़, बहेड़ा, आमला, कूठ, जवासा, अमलवैंत और विजोरेकी जड़, इनका एकत्र चूर्णकर गरमजलके अथवा मदिराकेसाथ पीनेसै गुल्म, हृदयरोग, और शूलका नाश होताहै ॥

श्वदंष्ट्राशीरमंजिष्ठाबलाकाश्मर्यकट्फलम् ।
दर्भमूलंपृश्निपर्णीपलाशर्षभकौस्थिरा ॥
पलिकान्साधयेत्तेषांरसेक्षीरचतुर्गुणे ।
कल्कैःस्वगुप्तर्षभकौजीवन्तीजीवकैःसमैः ॥
शतावर्यार्द्धिमृद्वीकाशर्कराश्रावणीबिसैः ।

प्रस्थःसिद्धोघृताद्वातपित्तहृद्रोगशूलनुत् ॥
मूत्रकृच्छ्रप्रमेहार्शःकासश्वासक्षयापहः ।
बल्यःस्त्रीमद्यभाराध्वक्षीणानांबलमांसदः ॥
श्रावणीमुण्डिरी बिसंमृणालम् ।

इति श्वदंष्ट्राद्यंघृतम् ।

अर्थ-गायकाघी दोसेर, दूध आठ सेर, क्वाथके लिये गोखुरू, खस, मजीठ, खिरैटी, कुम्भेर, शोनाक, कुशाकीजड, पृश्निपर्णी, ढाक, ऋषभक और शालिपर्णी, यह प्रत्येक चारचार तोले, पाकके वास्ते जल सोलह सेर, शेष चार सेर, और कल्कके लिये कौंछ, ऋषभक, जीवन्ती, जीवक, सतावर, दाख, किसमिस, मिश्री, गोरखमुण्डी, और कमलकी नाल प्रत्येक दोदो तोले लेवै, सबको मिलाकर यथाविधिसै घृत सिद्धकरै। इस घृतको सेवन करनेसै वातपैत्तिक हृदयरोग, शूल, मूत्रकृच्छ्र, प्रमेह बवासीर, खांसी, श्वाँस, और क्षयरोगका क्षय होताहै। अत्यन्त बलकी वृद्धि होतीहै। यह घृत मैथुन, मद्यपान, भारवहन (बोझढ़ोना या बोझ लादना) और पथभ्रमण (मार्ग चलना) द्वारा क्षीण मनुष्यों-के बल और मांसको बढाताहै ॥

घृतंबलानागबलार्जुनाम्बुसिद्धंसयष्टीमधुकल्कपादम् ।
हृद्रोगशूलक्षतरक्तपित्तकासानिलासृक्शमयत्युदर्णिम्॥
अम्बु क्वाथः ।

इति बलाद्यंघृतम् ।

अर्थ-गायकाघी एकसेर, खिरैटी, गंगेरन और अर्जुनका काढ़ा चार-सेर, और मुलैठीका कल्क पावभर, लेवै, सबको मिलाकर घृतको सिद्ध-करै। यह घृत-हृदयरोग, शूल, क्षत, रक्तपित्त, खाँसी, वातरक्त, इनको दूर करै है।

पार्थस्यकल्कस्वरसेन सिद्धं शस्तं घृतं सर्वहृदामयेषु ॥
स्वरसाभावे क्वाथः ।

इति अर्जुनघृतम् ।

अर्थ-अर्जुनके कल्क और स्वरससै सिद्ध कियाहुआ घी सर्वप्रकारके हृदयरोगमें देना चाहिये ॥

शुद्धसूतंसमंगंधंधात्रीफलद्रवैर्दिनम् ।
यष्टीखर्ज्जूरद्राक्षाणांक्काथेनमर्द्दयेद्दिनम् ॥
पंचसाररसोनामभक्षयेन्माषमात्रकम् ।
धात्रीचूर्णसिताचानुपित्तहृद्रोगजिद्भवेत् ॥

इति पंचसाररसः ।

अर्थ–पारा और गंधक समान भाग लेकर आमलोंके रसमें एकदिन खरल करै, फिर मुलैठी, खजूर और दाखोंके काढेमें एकदिन खरल करै तौ पंचसारनामवाला रस सिद्धहो। इसको एक मासाभर खावै और ऊपरसै आमलोंका चूर्ण मिश्री मिलाकर भक्षणकरै। इससै पित्तज हृदयरोग दूर होताहै ॥

शुद्धसूतसमंगंधंमृतंताम्रंद्वयोःसमम् ।
मर्दयेत्रिफलाद्रावैःकाकमाचीद्रवैर्दिनम् ॥
चणमात्रांवटींखादेद्रसोऽयंहृदयार्णवः ।
काकमाचीफलंशुष्कंत्रिफलाफलसंयुतम् ॥
द्वात्रिंशच्चपलंतोयंक्काथमष्टावशेषकम् ।
अनुपानंपिवेच्छान्त्यैहृद्रोगेचकफोत्थिते ॥

इतिहृदयार्णवरसः ।

अर्थ–शुद्धपारा एकभाग, शुद्ध गंधक एकभाग, ताँबेकी भस्म दोभाग, इनको एकदिन त्रिफलेके क्काथमें और एकदिन मकोयके रसमें खरल करके चनेकी बराबर गोली बनालेवै। एक गोली प्रतिदिन खावै और उपरसै मकोयके सूखेपत्ते, और त्रिफलेका बत्तीस पल जलमें अष्टावशेष काढ़ा कर पीवै तौ कफज हृदय-रोग दूर होवै ॥

चतुर्विंशतिपलंक्षीरंगवामथपचेच्छनैः ।
द्विरष्टपलकंयावत्तावत्कुर्यात्सुशीतलम् ॥
कर्षैकंपिप्पलीचूर्णंक्षिप्त्वापेयंहितंपरम् ।
सर्वदोषोत्थहृद्रोगंज्वरंश्वासंक्षयंजयेत् ।

अर्थ-चौवीसपल गायके दूधको मन्दाग्निसे धीरै धीरै पकावै, जब आधा दूध औटकर शेष रहै तब उतारकर शीतल करले, फिर इसमें दो तोले पीपलका चूर्ण डालकर पीवैतौ सर्वप्रकारके हृदय-रोग, ज्वर, श्वास, और क्षयरोग दूर होवै।

निष्कत्रयंशुद्धसूतंनिष्कद्वादशगंधकम्।
गुंजाबीजत्र्षण्णिष्कंनिम्बबीजंजयातथा॥
प्रत्येकंनिष्कमात्रन्तुसमंजैपालबीजकम्।
जयाजंबीरधत्तूरकाकमाचीद्रवैर्दिनम्॥
मर्द्यंसर्वरसंकुर्याद्घृतैर्गुंजाद्वयंलिहेत्।
गुंजाभद्ररसोनामहिंगुसैन्धवसंयुतम्॥
शमयत्येवकिंचित्रमूरुस्तम्भादिदुःसहम्॥

अर्थ-शुद्धपारा बारहमासे, शुद्धगंधक अड़तालीस मासे, चोंटली चौवीसमासे, नीमके बीज चारमासे, भांग चारमासे, जमालगोटा चार-मासे, इन सबको एकत्रकर जयन्ती, जम्भीरीनीबू, धतूरा, और मको-यके रसमें एक एक दिन खरल करै। इसको दो गुंजाभर घृत, हींग और सैंधेनोनके साथ सेवनकरनेसै-ऊरुस्तम्भादिरोग दूर होते हैं।

अर्कक्षीरेणसिन्धूत्थंलेपोवक्षसिदापयेत्॥

अर्थ-आकके दूधमें सैंधानोन पीसकर वक्षःस्थलमें लेप करनेसै हृदयरोग दूर होताहै॥

पद्मकेशरकंद्राक्षानिम्बबीजंजयातथा।
तुल्यंचतुर्गुणंक्षीरंक्षीरात्तोयंचतुर्गुणम्॥
क्षीरावशेषंपचेत्सर्वंसक्षौद्रंपाययेद्भिषक्।
उदराणिक्षतंवक्षोहृद्रोगंरक्तपित्तनुत्॥

इति गुंजाभद्ररसः।

अर्थ-कमलकी केशर, दाख, नीमके बीज और जयन्ती यह सब समान भाग, इससै चौगुणा दूध, और दूधसे चौगुना जल मिलाकर मन्द मन्द अग्निसै पचावै, जब दूध बाकी रहै तब उतारकर छानलेवै,

पश्चात् इसमें सहत मिलाकर पीनेसे उदररोग, क्षत, वक्षरोग, हृदयरोग, और रक्तपित्त रोग दूर होता है॥

चूर्णपुष्करजंलिह्यान्माक्षिकेणसमायुतम्।
हृच्छूलश्वासकासघ्नंक्षयहिक्कानिवारणम्॥

इति हृद्रोगाऽध्यायः।

अर्थ–पोहकरमूलके चूर्णमें सहत मिलाकर चाटनेसै हृदयशूल, श्वाँस, खाँसी, क्षय और हिक्कारोग दूर होताहै॥

इतिहृद्रोगाधिकारः समाप्तः।

अथोरोग्रहाधिकारः।

अत्यभिस्यन्दिगुर्वन्नशुष्कपूत्यामिषाशनात्।
स्वास्रंमांसंयकृत्प्लीह्नोःसद्योवृद्धिंयदागतम्॥
उरोग्रहंतदाकुक्षौकुरुतःकफमारुतौ।
संस्तम्भंसज्वरंघोरंरूक्षंस्पर्शासहंगुरुम्॥
आध्मानारुचिहृच्छोथवातविण्मूत्ररोधिता।
तंद्रारोधकशूलानितत्रलिंगानिनिर्दिशेत्॥

अर्थ–अत्यन्त अभिष्यन्दि पदार्थ, भारी अन्न, और सूखे तथा दुर्गन्धितमांसको भक्षणकरनेसै–मांसरुधिरके संयोगसै यकृत और प्लीहा जिससमय वृद्धिको प्राप्त होतेहैं, उसीसमय कफ और वात कुक्षिमें जाकर उरोग्रहरोगको उत्पन्न करते हैं। स्तम्भ, ज्वर, रूक्षता, स्पर्शको न सहसकै, गुरुता, आध्मान, अरुचि, हृदयमें सजन, अधोवायुका अवरोध, मलमूत्रकारोध, तन्द्रा, और शूल यह सब लक्षण उरोग्रह-रोगमें उत्पन्न होते हैं॥

अत्राशुस्वेदनंकुर्याद्दहनंरक्तमोक्षणम्।
तीक्ष्णैर्निरूहणंवैकंक्रमाल्लंघनमादरात्॥
पुत्रजीवकशिग्रुत्वक्सूर्यावर्त्तदलोद्भवाः।
रसाएकैकशःकोष्णाद्विशोवारामठान्विताः॥

सपंचलवणाःपेयास्त्रिवृद्गुडसकल्किताः ।
तन्निवृत्तंयथाशास्त्रंमूत्रतैलसुरासवैः ॥
चव्याम्लवेतसक्षारान्सरामठसचित्रकान् ।
पिबेत्तैलारनालाभ्यामुरोग्रहनिवृत्तये ॥
यथातुरस्यात्रकृतस्यकर्मव्याधेर्विरोधोनभवेन्मनागपि ।
यथाबलंवीक्ष्यचशुद्धविग्रहंतथाविधंपथ्यमपिप्रयोजयेत् ।
इति उरोग्रहनिदानचिकित्साधिकारः ।

अर्थ–इस उराग्रह रोगके उत्पन्न होतेही स्वेद, लोहादिकी शलाकाके द्वारा दहन, रक्तमोक्षण, तीक्ष्णद्रव्योंके द्वारा बस्तिकर्म्म और लंघन यह क्रमसे उपचार करै । पतजिया, सैंजिनेकी छाल, हुलहुलके पत्ते इनमें एकके या दोके रसको गरमकर हींग और पांचों नोन मिलाकर पीनेसै उरोग्रहरोग शान्त होताहै, अथवा निसोत और गुड एकत्रकर गोमूत्र, तेल, सुरा या आसवके साथ पीसकर सेवन करनेसै–वा चव्य, अम्लवैंत, जवाखार, हींग, और चीता समानभागलेकर तेल और कांजीके साथ पान करनेसै–उरोग्रह दूर होताहै । उरोग्रहरोगीको बलके अनुसार वमन विरेचनादिके द्वारा शुद्धकर रोगके अविरोधि पथ्य देवै ॥
इति उरोग्रहाधिकारः समाप्तः ।

अथ मूत्रकृच्छ्राचिकित्सामाह ।

स्वेदाभ्यंजनसेकादिनिरूहोत्तरवस्तयः ।
स्थिराद्यैर्मारुतघ्नैश्चक्काथाद्यावातकृच्छ्रिणाम् ॥

अर्थ–स्वेद, अभ्यंग, सेकादि, निरूहबस्ति, उत्तरबस्ति और वातनाशक शालिपर्णीआदिका क्वाथ, वातजमूत्रकृच्छ्ररोगवाले मनुष्योंको हितकारी है ॥

तैलकुचकमूलंपिष्ट्वाव्युषितेनवारिणातस्य ।
स्वरसोनिपीतमात्रःशमयातिमूत्रस्यसंरोधम् ।

अर्थ–तैलकुचक (कन्दूरी) की जड़को बासी जलमें पीसकरके उसके स्वरसको पीनेसै मूत्ररोध दूर होताहै ।

अश्वगंधामृताशुण्ठीधात्रीगोक्षुरजंजलम् ।
वातजंमूत्रकृच्छ्रश्चशूलश्चाशुविनाशयेत् ॥

अर्थ-असगंध, गिलोय, सोंठ, आमला और गोखुरोंका क्वाथ पीनेसै वातजमूत्रकृच्छ्र और शूल दूर होता है ॥

एरण्डतैलासिंधूत्थरुबुक्काथंसवातिके ।

अर्थ-अंडके क्वाथमें अंडीका तेल और सैंधानोन डालकर पीनेसै वातज मूत्रकृच्छ दूर होता है ॥

एर्वारुबीजकल्कोवाकांजिकेनच सैन्धवः ॥

अर्थ-ककडीके बीजोंको कांजीमें पीस सैंधानोन डालकर पीनेसै वातजमूत्रकृच्छ्र दूरहोवै ॥

सेकावगाहाःशिशिराप्रदेहाःस्नेहोविधिर्बस्तिपयोविकाराः ।
द्राक्षाविदारीक्षुरसैर्युतैश्चकृच्छ्रेषुपित्तप्रभवेषुकार्या ॥

अर्थ-सेक, अवगाहन, शीतललेप, स्नेह, बस्तिकर्म, दूधके विकार (माखन मट्ठा इत्यादि) और दाखोंका रस, विदारीकन्दका रस, और ईखका रस यह सब उपचार पित्तके मूत्रकृच्छ्रमें करने चाहिये ॥

कुशःकाशःशरोदर्भइक्षुश्चेतितृणाह्वयम् ।
पित्तकृच्छ्रहरंपंचमूलंबस्तिविशोधनम् ॥
एतत्पीतंपयःसिद्धंमेढ्रगंहन्तिशोणितम् ॥

अर्थ-कुश, काँस, डाभ, रामसर, और ईख, इन पाँचोंकी जड़को तृण पंचमूल कहते हैं। यह-पित्तके मूत्रकृच्छ्रको दूर करे है और बस्तिको शुद्ध करै है। इसी पंचमूलको दूधमें औटाकर पीनेसै लिंगसे रुधिरका निकलना बन्द होजाताहै ॥

शतावरीकासकुशश्वदंष्ट्राविदारिशालूककशेरुकाणाम् ।
क्वाथंसुशीतंमधुशर्कराभ्यांपिबञ्जयेत्पैत्तिकमूत्रकृच्छ्रम् ॥

अर्थ-सतावर, काँस, कुशा, गोखरू, विदारीकन्द, भसींडे, और कसेरु, इनका क्वाथ करै, जब ठंडा होजाय तब उसमें सहत और मिश्री मिलाकर पीवै तौ पैत्तिकमूत्रकृच्छ्र दूर होवै ॥

हरीतकीगोक्षुरराजवृक्षपाषाणजिद्बिल्वयवासकानाम् ।
क्वाथंपिबेन्माक्षिकसंप्रयुक्तंकृच्छ्रेसदाहेसरुजेविबन्धे ॥

इतिपाषाणजित्कुलत्थम् ।

अर्थ-हरड़, गौखरू, अमलतास, कुलथी, बेल और जवासा, इनके काढ़ेमें सहत डालकर पनिसै दाह और पीड़ायुक्त मूत्रकृच्छ्ररोग दूर होता है ॥

यवान्नक्षारतीक्ष्णोष्णंतैलाज्यंतिक्तकैःशृतम् ।
मूत्रेणसुरयावापिकदलीस्वरसेनवा ॥
कफपित्तविनाशायश्लक्ष्णंपिष्ट्वात्रुटिंपिबेत् ।

त्रुटिंसूक्ष्मेलाम् ।

शुण्ठीगोक्षुरतोयंवाकफकृच्छ्रविनाशनम् ॥

यवक्षारंप्रक्षिपन्तिवृद्धाः ।

बृहतीधावनीपाठायष्टीमधुकलिंगकाः ।
पाचनीयोबृहत्यादिःकृच्छ्रदोषत्रयापहः ॥

धावनीपृश्निपर्णी ।

गुडेनामिश्रितंक्षीरंकदुष्णंकामतःपिबेत् ।
मूत्रकृच्छ्रेषुसर्वेषुशर्करावातरोगनुत् ॥
त्रिकण्टकारग्वधदर्भकाशदुरालभापर्वतभेदपथ्याः ।
निघ्नन्तिपीतामधुनाश्मरीञ्च संप्राप्तमृत्योरपिमूत्रकृच्छ्रम् ॥

आसन्नमृत्योरित्यर्थः ।

शिलातुल्यायवक्षारःसर्वकृच्छ्रनिवारणः ।
कण्टकारीरसोवापिसक्षौद्रःकृच्छ्रनाशनः ॥

अर्थ-यवान्न, खार, तीक्ष्णपदार्थ, उष्णद्रव्य, तैल, घृत, और कडवे पदार्थ इनको औटाकर, अथवा गोमूत्र या मदिरा वा केलेके रससै छोटी इलायचीको बारीक पीसकर पीनेसे कफ और पित्तजन्य मूत्रकृच्छ्र दूर होताहै । सोंठ और गोखुरुओंके क्वाथमें जवाखार

डालकर पीनेसै कफजमूत्रकृच्छ्र दूर होताहै । बृहती, पृश्निपर्णी (किसीके मतसै कटेरी), पाठ, मुलैठी, और इन्द्रजौ इनका काढ़ा पीनेसै त्रिदोषजन्य मूत्रकृच्छ्र दूर होताहै । इसको बृहत्यादिपाचन कहतेहैं । किंचित् गरमदूधमें गुड़ मिलाकर पीवै तौ सर्वप्रकारके मूत्रकृच्छ्र, शर्करामेह और वातरोग दूर होवै । गोखरू, अमलतास, दाभकी जड, कांसकी जड, जवासा, पाखानभेद, और हरड़, इनके क्वाथमें सहत मिलाकर पीनेसे असाध्यमूत्रकृच्छ्र और पथरीरोग दूर होताहै । मैनशिल और जवाखारको बराबर भाग मिलाकर सेवन करनेसै-सर्वप्रकारके मूत्रकृच्छ्र दूर होतेहैं । कटेरीके रसमें सहत मिलाकर पीनेसै मूत्रकृच्छ्ररोग दूर होताहै ॥

सरक्तेमूत्रकृच्छ्रेतुपैत्तिकंविधिमाचरेत् ॥

अर्थ-रक्तजमूत्रकृच्छ्रमें पैत्तिक मूत्रकृच्छ्रोक्त विधि करनी चाहिये ॥

शतावरीकाशकुशश्वदंष्ट्राविदारिकेक्ष्वामलकेषुसिद्धम् ।
सर्पिःपयोवासितयाविमिश्रंकृच्छ्रेषुपित्तप्रभवेषुकुर्यात् ॥

इति शतावरीघृतंक्षीरञ्च ।

अर्थ-सतावर, काँस, कुशा, गोखरू, विदारीकन्द, ईखकी जड, और आमला इनके कल्कसै घृत या दूधको सिद्धकर मिश्री मिलाकर सेवनकरनेसै-पित्तजन्य मूत्रकृच्छ्ररोग दूर होताहै ॥

त्रिकण्टकैरण्डकुशाद्यभीरुकर्कारुकेक्षुस्वरसेनसिद्धम् ।
सर्पिर्गुडार्द्धांशयुतंप्रदेयंकृच्छ्राश्मरीमूत्रविघातहेतोः ॥

इति त्रिकंटकादिघृतम् ।

अर्थ-गोखरू, अण्ड, कुशादि पंचमूल, सतावर, पेठा और ईख इनके स्वरसमें घृतको सिद्धकरै, इस घृतसे आधाभाग गुड मिलाकर पीवै तौ मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी और मूत्राघातरोग दूर होवै । जो त्रिकण्टकादि औषधियोंका स्वरस नमिलै तौ क्वाथ लेना चाहिये ॥

पुनर्नवामूलतुलादशमूलंशतावरी ।
बलातुरगगंधाचतृणमूलंत्रिकण्टकम् ॥

विदारिगन्धानागाह्वगुडूच्यतिबलातथा।
पृथग्दशपलान्भागानपांद्रोणेविपाचयेत् ॥
तेनपादावशेषेणघृतस्याढ्ढाढकंपचेत्।
मधुकंशृंगवेरञ्चद्राक्षासैन्धवपिप्पली ॥
द्विपलीनांपृथग्दद्याद्यवान्याःकुडवंतथा।
त्रिंशद्गुडपलान्यत्रतैलमेरण्डकस्य च ॥
प्रस्थंदत्त्वासमालोड्यसम्यङ्मृद्वग्निनापचेत्।
एतदीश्वरपुत्राणांप्राग्भोजनमनिन्दितम् ॥
राज्ञांराजसमानानांबहुस्त्रीपतयश्चये।
मूत्रकृच्छ्रेकटिस्तम्भेतथागाढपुरीषिणाम् ॥
मेढ्रवंक्षणशूलेचयोनिशूलेचनशस्यते।
यथोक्तानाञ्चगुल्माणांवातशोणितिकाश्चये ॥
बल्यंरसायनंशीतंसुकुमारकुमारकम् ॥
दशमूलस्यामिलित्वादशपलानि।
एवंतृणपंचमूलस्य।
द्रोणेजलद्रोणद्वयम्।
द्रव्यतुलात्वंयस्याविद्यमानत्वात्।
द्विपलीनांप्रत्येकंद्विपलप्रमाणम्।
घृतस्यप्रस्थद्वयम्।
घृततैलान्येकीकृत्यपाकः।

इति सुकुमारयमकम्।

अर्थ–गायका घी चारसेर,गुड़ तीसपल,अण्डकातेल दोसेर काथकेलिये पुनर्नवेकी जड़ साढ़ेबारहसेर, दशमूल, सतावर, खिरैटी, असगन्ध, तृणपंचमूल, गोखरू, विदारीकन्द, नागकेशर, गिलोय,और कंघी प्रत्येक दशदशपल, जल चोसठसेर, शेष सोहलहसेर, कल्कके लियेमहुवा, अदरख, दाख, सैंधानोन, और पीपल प्रत्येक दोदोपल और अजवायन

आधसेरलेवै, सबको विधिपूर्वक मिलाकर मन्दमन्द अग्निसे पकावै । यह राजा तथा राजाओंके समान और बहुतस्त्रीवाले मानुष्योंको सेवन करना चाहिये । मूत्रकृच्छ्र, कटिस्तम्भ, गाढ़पुरीष, मेढ्र, वंक्षणशूल, योनि-शूल, गुल्म और वातरक्तको दूरकरैहै । बलकारक रसायन और शीतलहै।

अयोरजःश्लक्ष्णचूर्णंमधुनासह योजितम् ।
मूत्रकृच्छ्रंनिहन्त्येतत्त्रिभिर्लौहैर्नसंशयः ॥

इति मूत्रकृच्छ्रहरलौहम् ।

अर्थ–तीनभाग लोहेके चूर्णमें एकभाग सहतमिलाकर सेवनकरनेसे निःसन्देह मूत्रकृच्छ्र रोग दूरहोताहै ॥

शतावरीरसैःपिष्ट्वामृतसूतश्चताम्रकम् ।
शिखितुत्थंचतुल्यांशंदिनैकंमर्दयेद्दृढम् ॥
तद्गोलंसार्षपेतैलेपाच्यंयामश्चचूर्णयेत् ।
मूत्रकृच्छ्रात्मकःक्षौद्रैर्लिहन्गुंजाचतुष्टयम् ॥
भक्षयेन्नात्रसन्देहोमूत्रकृच्छ्रंनिहन्त्यलम् ।
तुलसीतिलपिण्याकंबिल्वमूलंतुषाम्बुना ॥
कर्षैकमनुपानेनसुरयावासुवर्चलैः ।

इति मूत्रकृच्छ्रान्तकोरसः ।

अर्थ–पारेकीभस्म, तांबेकीभस्म, और शुद्ध नीलाथोथा, इनको समान भागलेकर एक दिन सतावरके रसमें खरल करै, पश्चात् इसका गोला बनाकर सरसोंके तेलमें एक प्रहर तक पकावै. शीतल होनेपर चूर्ण करलेवै तौ मूत्रकृच्छ्रान्तकनामवाला रस तैयार हो । इसको सहतमें मिलाकर चार रत्तीभर खावै तौ निश्चय मूत्रकृच्छ्ररोग दूर होवै। इसके ऊपर तुलसी, तिलोंकी खल, और बेलकी जड इनको तुषाम्बु-नामक कांजीमें मिलाकर एक कर्ष प्रमाण पीवै, अथवा सुरामें सैंधानोन डालकर पान करै ।

रसभस्मैकभागश्चचत्वारःशुद्धगंधकाः ।
पिष्ट्वावराटिकापूर्य्यारसपादेनटङ्कणम् ॥
क्षीरपिष्टेन रुद्धास्यंभाण्डेरुद्ध्वापुटेपचेत् ।

स्वांगशैत्यंविचूर्ण्याथलघुलोकेश्वरोरसः ॥
चतुर्गुञ्जाघृतैर्देयंमरिचैःसहबुद्धिमान् ।
धात्रीमूलफलैःकल्कमजाक्षीरेणपाययेत् ॥
शर्कराभावितं वातु पीत्वाकृच्छ्रहरःपरः ।

इति लघुलोकेश्वरोरसः ।

अर्थ-पारेकीभस्म एकभाग, शुद्ध गंधक चारभाग दोनोंको एकत्र खरल-कर कौडीमेंभर पारेसे चौथाई भाग सुहागा लेकर दूधमें पीसके कौडी-के मुखको बंदकर कौडीको भांड़में रख भांडका मुख बंदकर पुट देवै,स्वांगशीतल होनेपर चूर्णकरले इसको लघुलोकेश्वर रस कहतेहैं । इसको चार रत्तीभर घी और कालीमिरचोंके साथ सेवन करै, पश्चात् आमले-की जड़ और आमलोंको बकरीके दूधके अथवा बूराके साथ सेवन करे तो मूत्रकृच्छ्ररोग दूर होवै ॥

यष्टीगोक्षुरकंपथ्याविदारीचकसेरुकम् ।
कषायंससिताक्षौद्रंरसभस्मयुतंपिबेत् ।
मूत्रकृच्छ्रंहरत्याशुसप्ताहात्पित्तसंभवम् ॥

इति मूत्रकृच्छ्ररोगाध्यायः ।

अर्थ-मुलैठी, गोखरू, हरड, विदारीकन्द और कसेरु, इनके काढ़ेमें मिश्री, सहत और पारेकी भस्म मिलाकर पीनेसै सातदिनमें पित्तजन्य मूत्रकृच्छ्ररोग दूर होताहै ॥

इति मूत्रकृच्छ्राधिकारः ।

अथ मूत्राघातचिकित्सामाह ।

मूत्राघातान्यथादोषंमूत्रकृच्छ्रहरैर्जयेत् ।
बस्तिमुत्तरबस्तिश्चदद्यात्स्निग्धंविरेचनम् ॥
जलेनखादिरीबीजंमूत्राघाताश्मरीहरम् ।
मूलंरुद्रजटायाश्चतक्रपीतंतदर्थकृत् ॥
कल्कमेर्वारुबीजानामक्षमात्रंससैन्धवः ।

धान्याम्बुयुक्तंपीत्वाचमूत्राघाताद्विमुच्यते ॥
तोयेनत्रिफलाकल्कःपातव्यःसैन्धवान्वितः ।
स्वरसःकण्टकार्याश्चकेवलोमधुनापिवा ॥
गोधावत्यामूलंक्वथितंघृततैलगोरसैर्मिश्रम् ।
पीतंनिरुद्धमरिचाद्भिनत्तिमूत्रस्यसंघातम् ॥

अर्थ–मूत्राघातरोगको दोषोंके अनुसार मूत्रकृच्छ्रनाशक औषधादिसे नष्ट करै। इसमें बस्ति, उत्तरबास्ति, और स्निग्ध विरेचन देवै । छुई-मुईके बीजोंको जलमें पीसकर पीनेसै मूत्राघात और पथरीरोग दूर होताहै। शंकरजटाकी जड़को मट्ठेके साथ पीनेसेभी मूत्राघात और पथरी रोग दूर होताहै। दो तोले ककडोंके बीजोंका कल्ककर सैंधा-नोन मिला काँजीके साथ पीनेसै मूत्राघातरोग दूर होताहै । त्रिफलेको जलमें पीसकर सैंधानोन डालकर सेवनकरनेसै मूत्राघातरोग दूर होताहै। अथवा केवल कटेरीके रसमें सहत मिलाकर पीनेसै मूत्राघातरोग दूर होताहै। वटपत्रीकी जड़के काथमें घृत, तेल और गायका दूध मिलाकर पीनेसै निःसन्देह बहुतशीघ्र मूत्राघातरोग दूर हो जाता है ॥

चित्रकंशारिवाचैवबलाकालानुशारिवा ।
द्राक्षाविशालापिप्पल्यस्तथाचित्रानतम्भवेत् ॥
तथैवमधुकंदद्याद्द्यादामलकानिच ।
घृताढकंपचेदेतैःकल्कैरक्षसमन्वितैः ॥
क्षीरद्रोणेजलद्रोणेतात्सिद्धमवतारयेत् ।
शीतंपरिस्रुतश्चैवशर्कराप्रस्थसंयुतम् ॥
तुगाक्षीर्य्याश्चतत्सिद्धंमातिमान्प्रातिमिश्रयेत् ।
ततोमितंपिबेत्कालेयथादोषंयथाबलम् ॥
वातरेताःपित्तरेताःश्लेष्मरेताश्चयोभवेत् ।
रक्तरेताग्रन्थिरेताःपिबेदिच्छन्नरोगिताम् ॥

जीवनीयञ्चवृष्यञ्चसर्पिरेतन्महागुणम्।
प्रजाहितञ्चधन्यञ्चसर्वरोगापहंशिवम्॥
सर्वैरेतत्प्रयुञ्जानंस्त्रीगर्भंलभतेऽचिरात्।
असृग्दोषान्जयेच्चापियोनिदोषांश्चसंहतान्॥
मूत्रदोषेषुसर्वेषुकुर्यादेतंश्चिकित्सितम्।

इति चित्रकाद्यंघृतम्।

इति मूत्राघाताध्यायः।

अर्थ-गायकाघी आठसेर, दूध बत्तीस सेर, जल बत्तीस सेर और कल्कके लिये चीता, अनन्तमूल, खिरैटी, हारसिंगार, दाख, पीपल, इन्द्रायन, मूषाकर्णी, तगर, मुलैठी और आमला, प्रत्येक दोदो तोलेलेवै। सबको मिलाकर यथाविधिसै घृतको सिद्धकरै जब सिद्ध होकर शीतल होजाय तब दोसेर मिश्री और दोसेर वंशलोचन मिला देवै। दोष और बलको विचार कर इसका सेवन करै। यह घृत-वातसे, पित्तसे, कफसे और रुधिरसे बिगड़े हुए वीर्य्य तथा ग्रन्थियुक्तवीर्यके विकारोंको विनष्ट करै है। जीवन, वीर्य्यवर्द्धक, महागुणवान्, सन्तानको बढ़ानेवाला, धन्य, और सर्वरोगनाशक है। इसको सेवनकरनेसै स्त्री गर्भको धारण करती है, तथा रुधिरके विकार, योनिदोष, और सर्व प्रकारके मूत्रके विकारोंको दूर करै है॥

इतिमूत्राघाताऽधिकारः।

अथ अश्मरीचिकित्सामाह।

अश्मरीदारुणाव्याधिस्त्ववघातेनतंजयेत्।
भिन्द्यात्प्रवृद्धंप्राग्रूपेमूत्रकृच्छ्रक्रमोमतः॥

क्रमःस्नेहाभ्यङ्गादिः।

अर्थ-अश्मरीरोग अत्यंत भयानकहै। जब तकयह नवीन है तबतक अवघातसै नष्ट करै। जब बढ़ जावै तब अस्त्रादि-द्वारा भेदे। और इसके पूर्वरूपमें मूत्रकृच्छोक्त स्नेहाभ्यंगादि उपचार करै॥

विशीर्णधारंमूत्रस्यगंधंकृच्छ्रंज्वरोऽरुचिः ।
नातिपीतोभवेद्वातेसकृदल्पञ्चमूत्राति ॥

अर्थ-वातजन्यपथरीरोगमें अत्यन्त कष्टसे फटी धारवाला, दुर्गन्धयुक्त मूत्र उतरे, ज्वर, अरुचि और किंचित् पीतवर्ण बहुत थोडा मूत्र आवे.

वरुणस्यत्वचंशुण्ठीगोक्षुरंक्काथयेज्जले ।
गुडक्षारयुतंपीत्वाचिरवाताश्मरींजयेत् ॥

अर्थ-वरनाकी छाल, सोंठ और गोखरू, इनके काथमें गुड और जवाखार डालकर पीनेसै बहुतदिनोंकी वाताश्मरी दूर होतीहै ॥

शुण्ठ्यग्निमन्थपाषाणशिग्रुवरुणगोक्षुरैः ।
सपथ्यारग्वधैःक्काथःसहिंगुक्षारसैन्धवः ॥
कृच्छ्राश्मरीकटीकोष्ठमेढ्वातापहोऽग्निदः ॥

पाषाणःकुलत्थः ।

इति शुंठ्यादिः ।

अर्थ-सोंठ, अरणी, कुलथी, सैंजिना, वरना, गोखरू, हरड और अमलतासके काढ़ेमें हींग, सैंधानोन, और जवाखार डालकर पीनेसे मूत्रकृच्छ्र, पथरी, कटी, कोढ़, और मेढ्वात दूर होतीहै, तथा अग्निकी वृद्धि होतीहै ॥

वरुणत्वक्कषायन्तुपीतश्चगुडसंयुतम् ।
अश्मरींपातयत्याशुबास्तिशूलञ्चनाशयेत् ॥
त्रिकण्टकस्यबीजानांचूर्णमाक्षिकसंयुतम् ।
अविक्षीरेणसप्ताहंपेयमश्मरिभेदनम् ॥

अर्थ-वरनाकी छालके काढ़में गुड मिलाकर पीनेसै पथरी पतित होजाती है और बस्तिशूल नष्ट होताहै । गोखुरूओंका चूर्ण सहतमें मिलाकर भेड़के दूधकेसाथ पीनेसै सातदिनमें पथरीरोग दूर होजाताहै॥

मूत्रविरोधेकर्पूरचूर्णलिंगेप्रवेशयेत् ॥

अर्थ-मूत्ररोध होय तौ कपूरका चूर्ण लिंगमें प्रवेश करै ॥

स्त्रीणामपिप्रसंगेनशोणितंयस्यसिच्यते ।

मैथुनोपरमश्चास्यबृंहणीयोहितोविधिः ॥

अर्थ-जिसके अत्यन्तस्त्रीप्रसंगसे लिंगकेद्वारा रुधिर गिरने लगे, उनके लिये मैथुन, पुंमैथुन, और बृंहणीयविधि विशेष हितकारी है ॥

वरुणस्यतुलांक्षुण्णांजलद्रोणेविपाचयेत् ।
पादशेषंपरिस्राव्यघृतप्रस्थंविपाचयेत् ॥
वरुणंकदलीबिल्वंतृणजंपंचमूलकम् ।
अमृताचाश्मजंपथ्याबीजश्चत्रपुषोद्भवम् ॥
शतपर्वातिलक्षारंपलाशक्षारमेवच ।
यूथिकायाश्चमूलानिकार्षिकाणिसमावपेत् ॥
अस्यमात्रांपिबेज्जन्तुर्देशकालाद्यपेक्षया ।
जीर्णेचास्मिन्पिबेत्पूर्वंगुडंजीर्णन्तुमस्तुना ॥
अश्मरींशर्कराञ्चैवमूत्रकृच्छ्रञ्चनाशयेत् ॥

इति वरुणाद्यं घृतम् ।

अर्थ-साडेबारहसेर वरनाकी छालको कूटकर बत्तीससेर जलमें औटावै जब आठसेर जल शेषरहै तब उतारकर छानलेवै, पश्चात् इसमें दोसेर गायकाघी, बरनाकीछाल, केला, तृणपंचमूल, बेल, गिलोय, शिलाजीत, हरड़, खीरेकेबीज, दूब, तिलोंका खार, ढाकका खार, और जुहीकीजड़ प्रत्येक दोदो तोले डालकर पकावै । देश, काल और अग्निका बलाबल विचारकर इसका सेवनकरै । इसके जीर्णहोनेपर पुरानागुड दहीके तोडकेसाथ खावै । यह घृत-पथरी, शर्करा, और मूत्रकृच्छ्ररोगको दूरकरै है ॥

शरादिपंचमूल्यावाकषायेणपचेद्घृतम् ।
प्रस्थंगोक्षुरकल्केनसिद्धमद्यात्सशर्करम् ॥
अश्मरीमूत्रकृच्छ्रघ्नंरेतोमार्गरुजापहम् ॥

इति शरादिपंचमूल्यादिघृतम् ।

अर्थ-गायका घी दो सेर, शरादिपंचमूलका क्वाथ आठसेर, और गोखुरुओंका कल्क आधसेर, सबको मिलाकर घृतको सिद्धकरै । शीतल

होनेपर अनुमानमाफिक मिश्री मिलादेवै । इसको सेवनकरनेसे–पथरीरोग, मूत्रकृच्छ्र और मेदूरोग दूर होताहै ॥

शुद्धसूतंद्विधागंधंद्रवैःश्वेतपुनर्नवैः ।
मर्द्दयित्वादिनंखल्वेरुद्धातंभूधरेपचेत् ॥
दिनान्तेतत्समुद्धृत्यचूर्णयेदतिचिक्कणम् ।
पाषाणभेदसंयुक्तंचूर्णतुल्यंद्विमाषकम् ॥
भक्षणादश्मरींहन्तिरसःपाषाणवज्रकः ।
गोपालकर्कटीमूलक्काथंमधुयुतंपिबेत् ॥
गोकण्टकशुभाभद्रामूलक्काथंपिबेन्निशि ॥

इतिपाषाणवज्रकोरसः ।

अर्थ–शुद्धपारा एकभाग, गंधकदोभाग, दोनोंको सफेदपुनर्नवाके रसमें एकदिन खरल करकै भूधरयंत्रमें पकावैं, शीतल होनेपर बारीक चूर्ण करले, फिर इसमें पाषाणभेदका चूर्ण मिलाकर प्रतिदिन दो मासे खावै । यह पाषाणभेदरस–शीघ्रही पथरीरोगको दूर करदेताहै । इसके ऊपर गोपालककड़ीका क्काथ सहत मिलाकर पीवै, रात्रिमें गोखरू, वंशलोचन, और नागरमोथेकी जड़की क्काथ पानकरै ॥

ताम्रभस्ममजाक्षीरैःपाच्यंतुल्यैःकृतेद्रवे ।
तत्ताम्रंशुद्धसूतञ्चगंधकञ्चसमंसमम् ॥
निर्गुण्ड्युत्थैर्द्रवैर्मर्द्यंदिनंतद्गोलमुद्धरेत् ।
दिनैकंवालुकायन्त्रेपाच्यंयोज्यंद्विगुंजकम् ॥
बीजपूरस्यमूलञ्चपिष्टातंचानुपाययेत् ।
रसस्त्रिविक्रमोनाममासैकमश्मरीप्रणुत् ॥

इति त्रिविक्रमरसः ।

अर्थ–बकरीके दूधमें ताँबेकी भस्म पकावै, यह ताँबेकी भस्म, शुद्ध पारा और गंधक, तीनों समान भागले एकदिन निर्गुण्डीके रसमें खरल कर गोलाबना दिनभर वालुकायंत्रमें पकावै, स्वांगशीतल होनेपर

चूर्ण करले; इसको दो रत्तीभर खावै और ऊपरसे विजौरेकी जडको जलमें पीसकर पीवै तौ एक महीनेमें यह त्रिविक्रमनामवाला रस पथरीको दूर कर देवै ॥

शुद्धसूतंद्विधागंधंशिखितुत्थंरसोपमम्।
श्वेतापुनर्नवावासागिरिकर्णीरसोद्भवैः ॥
प्रतिद्रावैर्दिनैकंमर्द्यंशुष्कंतच्चारुसंपुटे।
स्वेदयेद्दोलिकायन्त्रेदिनैकंतंविचूर्णयेत् ॥
रसःपाषाणभिन्नामाद्विगुंजोह्यश्मरीहरः।
कुलत्थक्काथसंपीतमनुपानंप्रशस्यते ॥
सघृतैर्गोक्षुरक्काथंरात्रौतैलेनलेहयेत् ॥

इति पाषाणभेदरसः।

इत्यश्मरीरोगाऽध्यायः।

अर्थ-शुद्धपारा एकभाग, गंधक दोभाग, नीला थोथा एकभाग, तीनोंको एकत्रकर सफेद पुनर्नवा, अडूसा और अपराजिताके रसमें एकएक दिन खरलकर सुखालेवै। फिर संपुटमें रख एकदिन दोलायंत्रमें पकावै, स्वांगशीतल होनेपर चूर्ण करले। इसको दो रत्तीभर भक्षण करै, और उपरसे कुलथीका काथ पीवै, और रात्रिमें गोखुरुओंके काढ़ेमें तेल और घी मिलाकर पीवै, तौ यह पाषाणभित् रस-बहुत शीघ्र पथरीरोगको दूर कर देता है ॥

इति पथरीरोगः समाप्तः

अथ प्रमेहचिकित्सामाह।

यैर्हेतुभिर्येप्रभवन्तिमेहास्तेषुप्रमेहेषुनतेनिषेव्याः।
हेतोरसेवाविहितायथैवजातस्यरोगस्यभवेच्चिकित्सा ॥

अर्थ-जिन आहारविहारादिसे मेहरोग उत्पन्न होतेहैं, वह संपूर्ण आहार विहारादि मेहरोगवाले रोगीको अवश्य २ त्याग करने चाहिये। कारण यह है कि रोगोत्पादक हेतुओंका त्याग करनाही रोगकी एक प्रकारकी चिकित्सा है ॥

श्यामाककोद्रवोद्दालगोधूमचणकाढकी ।
कुलत्थाश्चहिताभोज्येपुराणामेहिनांसदा ॥
रूक्षमुद्वर्त्तनंगाढंव्यायामंनिशिजागरम् ।
यच्चान्यच्छ्लेष्मपित्तघ्नंबाह्यमान्तरिकंहितम् ॥

अर्थ-समा, कोदों, वनकोदों, गेहूं, चने, अड़हर और कुलथी, यह सब पुराने अन्न प्रमेहरोगवालोंको सदैव हितकारी हैं। रूक्षद्रव्य, गाढ़ा उबटन, कसरत, रात्रियोंमें जागना और अन्यान्य बाह्य तथा आन्तरिक कफ और पित्तनाशक क्रिया प्रमेहरोगमें विशेष हितकारीहै ॥

दूर्वाकसेरुपूतीककुम्भीकप्लवशैवलम् ।
जलेनक्वथितंपीतंशुक्रमेहहरंपरम् ॥

अर्थ-दूर्वा, कसेरु, दुर्गन्ध करंज, जलकुम्भी, केवटी, मोथा और सिवार इनके काढ़ेमें सहत मिलाकर पीनेसै-शुक्रमेह दूर होता है ॥

क्षौद्रेणामलकंखादेच्छुक्रमेहहरंपरम् ॥

अर्थ-आमलोंके चूर्णको सहतके साथ खानेसे शुक्रमेह नष्ट होताहै ॥

त्रिफलारग्वधद्राक्षाकषायोमधुसंयुतः ।
पीतोनिहन्तिफेनाख्यंप्रमेहंनियतंनृणाम् ॥

अर्थ-त्रिफला अमलतास, और दाख, इनके काढ़ेमें सहत मिलाकर पीनेसे फेनाख्य मेह शान्त होता है ॥

हरीतकीकट्फलमुस्तलोध्राःपाठाविडंगार्जुनधन्वनश्च ।
उभेहरिद्रेतगरंविडंगकदम्बशालार्जुनदीप्यकाश्च ॥
दार्वीविडंगःखदिरोधवश्चसुराह्वकुष्ठागुरुचन्दनानि ।
दार्व्यग्निमन्थेत्रिफलासपाठापाठाचमूर्वाचतथाश्वदंष्ट्रा ॥
यवान्युशीराण्यभयागुडूचीजम्बाभयाचित्रकसप्तपर्णाः ।
पादैःकषायाःकफप्रमेहिणांभेदोपादिश्यामधुसंप्रयुक्ताः ॥

अर्थ-हरड, कायफल, नागरमोथा, और लोध, इनका क्काथ बनाकर पीनेसे उदकप्रमेह नष्ट होता है । पाढ़, वायबिडंग, अर्जुनकी छाल और धन्वनवृक्षकी छाल, इनका काढ़ा पीनेसे इक्षुमेह दूर होता है ।

हलदी, दारुहलदी, तगर और वायविडंगका क्वाथ पान करनेसे सान्द्रप्रमेह दूर होता है। कदम, साल, अर्जुन और अजवायनका काढ़ा पीनेसे सुरामेह नष्ट होता है । दारुहलदी, वायविडंग, खैर, और धववृक्षकी छालका क्वाथ पीनेसे विषमेह नष्ट होता है। देवदारु, कूठ, अगर और चन्दनका क्वाथ पान करनेसे शुक्रमेह विनष्ट होताहै । दारुहलदी, अरणी, त्रिफला और पाढका काढा पीनेसै सिकतामेह दूर होताहै। पाढ, मूर्वा और गोखरूका क्वाथ पानकरनेसै शीतमेह नष्टहोताहै । अजवायन, खस, हरड और गीलोयका काढा पीनेसै शनैः प्रमेह दूर होताहै । और जामुन, हरड, चीता तथा सतवनकी छालका काढा पीनेसैं लालाप्रमेह दूर होताहै । उदकादि मेहनाशक इनदशों काढोंमें मधुप्रक्षेप और सहत मिलाना चाहिंये ॥

अश्वत्थाच्चतुरङ्गुलान्न्यग्रोधादेःफलत्रयात् ।
सजिङ्गीरक्तसाराच्चक्काथाःपंचसमाक्षिकाः ॥
नीलहारिद्रशुक्राख्यक्षारमंजिष्ठकाह्वयान् ।
मेहान्हन्युःक्रमादेते सक्षौद्रो रक्तमेहजित् ॥
न्यग्रोधादिपंच ।
जिङ्गीमंजिष्ठारक्तसारोरक्तचन्दनः ।
आसामेकोयोगः।
सक्षौद्रइत्यादिरक्तमेहेक्काथः ।
खर्जूरकाश्मर्यतिन्दुकास्त्यमृताकृतः ॥
खर्जूरकाश्मर्य्योःफलंतिन्दुकःतिन्दुकस्यफलमज्जा ॥

अर्थ—पीपलकी छालका क्वाथ पानकरनेसे नीलमेह नष्ट होता है । अमलतासका क्वाथ पीनेसे हारिद्रमेह दूर होता है । वटादिपंचवृक्षका क्वाथ पान करनेसे शुक्रमेह नष्ट होता है । त्रिफलाका क्वाथ पान करनेसे क्षारमेह नष्ट होता है। मजीठ और लालचंदनका क्वाथ पान करनेसे मांजिष्ट मेह दूर होता है और पीपल, अमलतास, वटादिपंचवृक्ष, त्रिफला, मजीठ और लालचंदन, इन सबका काढ़ा पीनेसे रक्तमेह

नष्ट होता है । इन सब काढोंमें सहत डालना चाहिये । खजूर, कुम्भेर, तैंदूकमिज्जा और गिलोयका काढा पीनेसे सर्वप्रकारके प्रमेह विनष्ट होते हैं ॥

लोध्राज्र्जुनोशीरकुचन्दनानामरिष्टसेव्यामलकाभयानाम् ।
धात्र्यर्जुनारिष्टकवत्सकानांनीलोत्पलैलातिविषार्जुनानाम् ॥
चत्वारएतेविहिताःकषायाःपित्तप्रमेहेमधुसंप्रयुक्ताः ॥

अर्थ-लोध, अर्जुन, खस, और लालचंदन इनके काढेमें या नीमकी छाल, खस, आमला और हरड,इनके काढेमें अथवा आमला, अर्जुनकी छाल, नीमकीछाल और कुड़ेकीछाल, इनके काढेमें या नीलोत्पल, इलायची, अतीस, और अर्जुनकीछाल इनके काढ़ेमें सहत मिलाकर पीनेसै पित्तप्रमेह दूर होताहै ॥

(कुटजस्यत्वक्असाध्येऽपियापनार्थेयोगायथा)
छिन्नावह्निकषायेण पाठाकुटजरामठम् ।
तिक्तांकुष्ठंचसंचूर्ण्यसर्पिर्मेहीपिबेन्नरः ॥

पाठादीनांप्रक्षेपः ।

कदरखादिरपूगक्काथंक्षौद्राह्वयेपिबेत् ।
कदरोविटखादिरः । पूगस्यफलम् ।
अग्निमन्थकषायन्तुवसामेहेप्रयोजयेत् ॥
पाठाशिरीषदुस्पर्शमूर्वाकिंशुकतिन्दुकम् ।
कपित्थानांभिषक्क्काथंहन्तिमेहेप्रयोजयेत् ॥

इतितिन्दुककपित्थयोःफलम् ।

अर्थ-गिलोय और चीतेके क्काथमें पाढ, कुडा, हींग, कुटकी और कूठका चूर्ण डालकर पीनेसै सर्पिमेह दूर होताहै । दुर्गंध-खैर, खैर और सुपारीका काढ़ा पीनेसै क्षौद्रमेह दूर होता है । अरणीका क्काथ पान करनेसै वसामेह विनष्ट होताहै । पाढ़, सिरस, जवासा, चुरनहार,ढाक,तैंदू और कैथका क्काथ पानकरनेसै हस्तिमेह नष्ट होताहै॥

सिद्धानितैलानिघृतानिचैवयोज्यानिमेहेष्वनिलात्मकेषु ।

मेदःकफश्चैवकषाययोगैःस्नेहैश्चवायुःशममेतितेषाम् ॥

अर्थ-वातज प्रमेहमें सिद्ध तैल और घृत सेवन करने चाहिये। मेद और कफ कषाययोगोंके द्वारा और वायुस्नेहके द्वारा शमन होतीहै ॥

गुंडारोचानिकासप्तपर्णशालविभीतकात् ।
रोहीतकात्कपित्थाच्चपुष्पाणिकुटजादपि ॥
चूर्णानिमधुनालिह्यात्प्रमेहेकफपित्तजे ।
कार्षिकाणिपिबेत्पिष्वारसेनामलकस्यवा ॥
त्रिफलामुस्तकंदारुहरिद्रादेवदारुच ।
तत्क्वाथंमधुसंयुक्तंपिबेत्सर्वप्रमेहजित् ॥
सर्वमेहहरोधात्र्यारसःक्षौद्रनिशायुतः ।
कषायस्त्रिफलादारुमुस्तकैरथवाकृतः ॥
अत्रक्षौद्रहरिद्राप्रक्षेपोनास्ति ।
गोधावतीजटायाःक्काथोघृतदुग्धतैलसंस्निग्धः ।
दुर्जयमेहान्हन्यात्प्रातःपीतोनसन्देहः ॥
पलत्रिकंदारुनिशांविशालां
मुस्तञ्चनिष्क्काथ्यनिशांशकल्कम् ।
पिबेत्कषायंमधुसंयुतंचसर्वप्रमेहेषुसमुत्थितेषु ॥
अंशशब्दोऽर्थाभिधायी निशायाअंशतुर्थ-
भागःकल्कोयमित्यर्थः ।
अंशश्चतुर्थोभागः ।
कटंकटेरीमधुकत्रिफलाचित्रकैःसमैः ।
सिद्धःकषायःपातव्यःप्रमेहाणांविनाशनः ॥
मधुनात्रिफलाचूर्णमथवाश्मजतूद्भवम् ।
लोहंजम्ब्वाभयोत्थंवालिह्यान्मेहनिवृत्तये ॥

अर्थ-कवीला, सतवन, साल, बहेडा, रोहेडा, कैथ, और, कुडेके फूलोंका चूर्ण दो तोले सहतके साथ अथवा आमलोंके रसके साथ

पनिसै कफपैत्तिक प्रमेह विनष्ट होताहै । हरड, आमला, बहेडा, नागरमोथा, दारुहलदी और देवदारु इनके काढ़ेमें सहत डालकर पीनेसै सर्वप्रकारके प्रमेह दूर होजातेहैं। त्रिफला, देवदारु, और नागरमोथेका क्वाथ पान करनेसैभी सर्वप्रकारके प्रमेह दूर होजातेहैं। हंसपदी लताकी जडके क्वाथमें घृत, तैल और दूध मिलाकर प्रातःकाल पीनेसै असाध्य प्रमेहभी दूर होजाताहै। त्रिफला, दारुहलदी, इन्द्रायन और नागरमोथा इनके काढेमें चतुर्थांश हलदीका चूर्ण और किंचित् सहत डालकर पीनेसै सर्वप्रकारके प्रमेहरोग नष्टहोजातेहैं। दारुहलदी, मूलैठी, त्रिफला, और चीता इनका काढ़ा पीनेसै सर्वप्रकारके प्रमेह दूर होतेहैं। त्रिफलेका चूर्ण अथवा शिलाजीतका चूर्ण या लोह, जामुन और हरडका चूर्ण सहत मिलाकर चाटनेसै सर्वप्रकारके प्रमेहरोग दूर होजातेहैं ॥

न्यग्रोधोदुम्बराश्वत्थस्योनाकारग्वधाऽसनम् ।
आम्रजम्बुकपित्थश्चपियालंककुभंधवम् ॥
मधुकंमधुकोलोध्रंवरुणंपारिभद्रकम् ।
पटोलमेषशृंगीचदन्तीचित्रकमाढकी ॥
करञ्जत्रिफलाशक्रभल्लातकफलानिच ।
एतानिसमभागानिश्लक्ष्णचूर्णानिकारयेत् ॥
न्यग्रोधाद्यमिदंचूर्णमधुनासहलेहयेत् ।
फलत्रयरसश्चानुपिबेन्मूत्रंविशुध्यति ॥
एतेनविंशतिर्मेहामूत्रकृच्छ्राणियानिच ।
प्रशमंयान्तियोगेनपीडकानचजायते ॥
न्यग्रोधाद्यमिदंत्वत्रआम्रजम्बास्थिगृह्यते ।

इति न्यग्रोधाद्यंचूर्णम् ।

अर्थ-बड, गूलर, पीपल, श्योनाक, अमलतास, असन, आम, जामुन कैथा, चिरोंजी, कोह, धो, महुआ, मुलैठी, लोध, बरना, फरहद, पटोल मेढाशिंगी, दन्ती, चीता, अडहर, करञ्ज, हरड, बहेडा, अमला, इन्द्रजौ, और भिलावा, इनसबको समान भाग लेकर बारीक चूर्णकरले, इसको न्यग्रोधादिचूर्ण कहतेहैं। इसमें बराबरका सहत मिला सेवन करै और

ऊपरसे त्रिफलेका क्काथ पीवै तौ मूत्रशुद्धहो, वीस प्रकारके प्रमेह और मूत्रकृच्छ्ररोग दूर होवे, इसको सेवनकरनेसे प्रमेहजनित पिड़का उत्पन्न नहीं होते हैं। यहाँ आम और जामुनकी गुठली लेनी चाहिये ॥

त्रिकण्टकाश्मर्यकसोमवल्कैर्भल्लातकैःसातिविषैःसलोध्रैः।
वचापटोलार्जुननिम्बमुस्तैर्हरिद्रयापद्मकदीप्यकैश्च ॥
मंजिष्ठपाठागुरुचन्दनैश्चसर्वैःसमस्तैःकफवातजेषु।
मेहेषुतैलंविपचेद्घृतंचपैत्तेषुमिश्रंत्रिषुलक्षणेषु ॥

इति त्रिकण्टकाद्यंघृतंतैलंच।

अर्थ-गायका घी अथवा तिलका तेल प्रत्येक अथवा दोनों मिले हुए दोसेर, गोखरू, कुम्भेर, सफेदखैर, भिलावा, अतीस, लोध, बच पटोल, अर्जुन, नीम, नागरमोथा, हलदी, पद्माख, अजवायन, मजीठ, पाढ़, अगर और लालचन्दन सब औषधियोंका कल्क आधसेर लेवै। यह तेल या घृत अथवा घी और तेल, दोनों कल्कमें मिलाकर सिद्धकरै। इसको सेवनकरनेसे पैत्तिकमेह और सान्निपातिकमेह नष्ट होता है ॥

दाडिमस्यचबीजानिकृमिघ्नस्यचतण्डुलाः।
रजनीचविकाजाजीनागरंत्रिफलाकणा ॥
त्रिकण्टकस्यबीजानियवानीधान्यकन्तथा।
वृक्षाम्लंबदरंचैवसिन्धूद्भवसमायुतैः ॥
अम्लवेतसकंद्राक्षायष्टीमधुकपाकलैः।
दार्वीत्वचांशिलाधातुनीलोत्पलरसांजनैः ॥
एतैःकल्कैरक्षमात्रैर्घृतप्रस्थंविपाचयेत्।
भोज्येपानेप्रदातव्यंसर्वर्तुषुचमात्रया ॥
प्रमेहान्विंशतिश्चैवमूत्राघातांस्तथाश्मरीम्।
कृच्छ्रान्सुदारुणांश्चैवहन्यादेतन्नसंशयः ॥
विबन्धानाहशूलघ्नंकामलाज्वरनाशनम्।

दाडिमाद्यंघृतन्नामअश्विभ्यांनिर्मितंपुरा ॥
शिलाधातुःशिलाजतुतच्चशोधितंग्राह्यम् ।
इति दाडिमाद्यंघृतम् ।

अर्थ–अनारदाना, वायविडंग, हलदी, चव्य, जीरा, हरड़, सोंठ बहेड़ा, आमला, पीपल, गोखरूओंके बीज, अजवायन, धनिया, विषांविल, बेर, सैंधानोन, अमलवैंत, दाख, मुलैठी, कूठ, दारुहलदी, दालचीनी, शुद्धशिलाजीत, नीले कमल और रसौत, प्रत्येकका एक तोला कल्क लेकर चौंसठ तोले घृतको पकावै । इसको सर्वऋतुओंमें भोजन और पानमें मात्रासे सेवनकरनेसे वीसप्रकारके प्रमेह, मूत्राघात, पथरी, दारुणमूत्रकृच्छ्र, विबन्ध, आनाह, शूल, कामला और ज्वर दूर होताहै। यह दाडिमाद्य घृत श्रीमान् अश्विनीकुमारोंने निर्माण किया है ॥

दशमूलकरंजौद्वौदेवदारुहरीतकी ।
वर्षाभूर्वरुणोदन्तीचित्रकंसपुनर्नवम् ॥
सुधानीपकदम्बाश्चबिल्वंभल्लातकानिच ।
शठीपुष्करमूलश्चपिप्पलीमूलमेवच ॥
पृथग्दशपलान्भागानेतांस्तोयार्मणेपचेत् ।
यवकोलकुलत्थानांप्रस्थंप्रस्थंचदापयेत् ॥
तेनपादावशेषेणघृतप्रस्थंविपाचयेत् ।
निचूलंत्रिफलाभार्गीरोहिषंगजपिप्पली ॥
शृंगवेरंविडंगानिवचाकंपिल्लकंतथा ।
गर्भेणानेनसिद्धंस्यात्पाययेच्चयथाबलम् ॥
एतद्धान्वन्तरंनामविख्यातंसर्पिरुत्तमम् ।
गुल्मकुष्ठप्रमेहांश्चश्वयथुंवातशोणितम् ॥
प्लीहोदरंतथाशींसिविद्रधिंपिडिकाश्चयाः ।
अपस्मारंतथोन्मादंसर्पिरेतन्नियच्छति ॥

अर्थ-गायकाघी चारसेर, क्राथके लिये दशमूल, लालफलकी करंज, सफेद फलकी करंज, देवदारु, हरड़, लालपुनर्नवा, वरना, दन्ती, चीता सफेदपुनर्नवा, थूहर, कदम, बड़ीकदम्ब, बेल, भिलावा, कचूर, पोहकर-मूल और पीपलामूल, प्रत्येक औषधि दशदशपल, और जो, बेर, तथा कुलथी प्रत्येक सोलै सोले पल पाकके लिये, जल २१० दोसौ दशसेर, शेष५२बावनसेर चारपल, और कल्कके लिये हिज्जलकी जड़, त्रिफला, भारंगी, सुगंधतृण, गजपीपल, अदरख, वायविडंग, वच और कबीला यह सब औषधि चारसेर लेवै । सबको मिलाकर यथाविधिसे घृत सिद्धकरै । अग्निका बलाबल विचारकर इसका सेवन करै, यह उत्तम घृत धान्वन्तर नामसे विख्यात है। इसको सेवनकरनेसै गुल्म, कोढ़, प्रमेह, सूजन, वातरक्त, प्लीहा, उदररोग, बवासीर, विद्रधि, पिडका, अपस्मार और उन्मादरोग दूर होताहै ।

दन्तीचित्रकमूलानामष्टावष्टौपलानिच ।
अभयाविंशतिर्देयाषट्पलंदेवदारुच ॥
कदम्बनीपवरुणसम्पाकाम्रपुनर्नवाः ।
चिरबिल्वश्चसर्वेषांषट्पलानिपृथक्पृथक् ॥
द्वेपंचमूल्यौसंकूटचपृथगाढकसम्मिते ।
पक्त्वाचतुर्गुणेतोयेपादशेषेघृताढकम् ॥
विपचेत्पंचलवणैःपंचकोलैश्चकार्षिकैः ।
बृहद्धान्वन्तरमिदंघृतंविंशतिमेहनुत् ॥
गुल्मश्वयथुकुष्ठार्शःश्वासहिक्कोदरापहम् ।
आग्नेयंबृंहणंचैवहन्तिनानाऽयथानृणाम् ॥
रसायनमिदंसार्पिःश्रेष्ठंब्रह्माभिपूजितम् ॥

इति बृहद्धान्वन्तरं घृतम् ।

अर्थ-घृत आठ शेर,क्राथकेलिये दन्तीकी जड़ आठ पल, चीतेकी जड़ आठपल. हरड वीसपल, देवदारु छैपल, कदम्ब, बडीकदम्ब, वरना-कीछाल, आमकी छाल, पुनर्नवा और कांजुआ प्रत्येक छै छैपल, स्वल्प-

पंचमूल और बृहत्पंचमूल प्रत्येक आठ सेर, जल सब औषधियोंसे दुगुना शेष चतुर्थांश, और कल्ककेलिये पंचलवण और पंचकोल प्रत्येक दो दो तोले, सबको मिलाकर यथाविधिसे घृतको सिद्ध करै । इसको सेवनकरनेसै वीसप्रकारके प्रमेह, गुल्म, सूजन, कोढ़, ववासीर, श्वास, हिचकी, उदररोग और अनेकप्रकारके रोग दूर होतेहैं । यह बृहद्धान्वन्तर घृत अग्निको दीपनकरनेवाला, पुष्टिकारक और श्रेष्ठ रसायनहै और ब्रह्माकरकै पूजितहै ॥

शिलाजतुपलान्यष्टौसितायाश्चपलाष्टकम् ।
बृहत्यास्तुफलंमूलंशृङ्गी धात्रीकणातुगा ॥
पृथगेषांपलञ्चातुजातस्यमिलितंतुगा ।
संचूर्ण्यमिलितंकृत्वा निहन्तिमधुनालिहन् ॥
प्रमेहशुक्रदोषासृक्श्वासकासक्षयाश्मरीम् ।
मूत्राघाताग्निमान्द्यामगुल्मप्लीहाग्निमारुतम् ॥
जीर्णज्वरारुचिहरोलेहएषशिलाजतोः ॥
शिलाजतुशिवागुडिकान्यायेनशोधितभावितंग्राह्यम् ॥

इति शिलाजतुलेहः ।

अर्थ–शुद्धशिलाजीत आठपल, सफेद बूरा आठपल, बृहतीकीजड़ और फल, काकडाशिंगी, आमला, पीपल, और वंशलोचन प्रत्येक एक एक पल, दालचीनी एकतोला, इलायची एकतोला, नागकेशर एक तोला, तेजपात एकतोला, इन सबका बारीक चूर्णकर सहतमें मिलाकर चाटे तौ प्रमेह, शुक्रदोष, रक्तदोष, खाँसी, श्वास, क्षय, पथरी, मूत्राघात, मंदाग्नि, आम, गुल्म, प्लीहा, अग्नि, वात, जीर्णज्वर, और अरुचि दूर होवै ॥

दशमूलीशठीदन्तीदेवदारुपुनर्नवा ।
मूलंस्नुह्यर्कयोःपथ्याभूकन्दश्चसपुष्करम् ॥
करञ्जंवारुणंमूलंपिप्पलीचसमंसमम् ।
प्रतिदशपलंयोज्यंकुलत्थबदरीयवाः ॥
प्रत्येकंषोडशपलंसर्वमेकत्रपाचयेत् ।

तेषामष्टगुणेतोयेपादशेषं समाहरेत् ॥
वस्त्रपूतं कषायन्तंपुनःपाच्यमिमैःसह ।
चव्यंद्विपिप्पलीभार्गीवचात्रिवृद्विडंगकम् ॥
लोध्रंकाम्पिल्वकंशुण्ठीप्रत्येकंपलसम्मितम् ।
चूर्णितंयोजयेत्तत्रघृतप्रस्थयुतंपचेत् ॥
घृतावशेषमुत्तार्यकर्षमात्रंप्रयोजयेत् ।
प्रमेहोपद्रवाणाञ्चशमनंपवनांहितम् ॥
पिडकाव्रणगण्डानांसर्वोपद्रवशान्तिकृत् ।
स्वभावितंसारसारैरविचन्द्रांशुशोधितम् ॥
पानीयशालिभुंजानो जांगलानां रसैःशुभैः ।
सर्वानितिहरेन्मेहान्सर्वोपद्रवकंजयेत् ॥
अस्यपत्रिकादशमूलादिद्वाविंशद्रव्याणांमिलि-
त्वा३९२पलपाकार्थपानीय२८१६पल,शेष१०४पल।
कल्कार्थंचव्यादिशुण्ठीनांमिलित्वाचूर्ण१०पल ॥

इतिदशमूलघृतम् ।

अर्थ-दशमूल, कचूर, दन्ती, देवदारू, पुनर्नवा, थूहरकीजड, आककी जड़, हरड जंगलीजमीकन्द, पोहकरमूल, करंज, वरनाकी जड़, और पीपल, प्रत्येक दशदशपल, कुलथी, बेर, और जौ प्रत्येक सोलह सोलह पल लेकर सबसै आठगुने जलमें पकावै जब चौथा भाग जल शेष रहै तब उतारकर वस्त्रमें छान लेवै, पश्चात् इसमें चव्य, पीपल, गजपीपल, भारंगी, वच, निसोत, वायविडंग, लोध, कवीला और सोंठ, प्रत्येकका चूर्ण एक एक पल, और गायका घी दो सेर मिलाकर पकावै। जब केवल घृत शेष रहै तब उतारले। दो तोले भर प्रतिदिन इसको खावै। यह घृत प्रमेहके उपद्रवोंको शान्त करै, वातरोगमें हितकारी, तथा पिड़का, व्रण और गलगंडादिके सब उपद्रवोंको शमन करै है। इस घृतको चावलोंके जलके और जांगलदेशके जीवोंके मांसरसके साथ सेवन करै। यह घृत-सर्वोपद्रवसंयुक्त सर्वप्रकारके प्रमेहरोगोंको दूर करैहै, ॥

जयन्तीलाजयावाथमधुनासर्वमेहजित् ॥

अर्थ-जयन्ती और खीलोंके चूर्णको सहतमें मिलाकर चाटनेसे प्रमेह रोग दूर हो जाते हैं ॥

विडंगत्रिफलामुस्तैःपिप्पल्यानागरेणच ।
जीवकाद्यायुतोहन्तिप्रमेहानतिदारुणान् ॥
लोहोमूत्रविकारांश्चसर्वानेवनसंशयः ॥
सर्वचूर्णसमंलौहचूर्णग्राह्यम् ।

इति विडंगादिलौहम् ।

अर्थ-वायविडंग, त्रिफला, नागरमोथा, पीपल, सोंठ और जीवनीय-दशक, यहसब औषधि समानभाग लेकर चूर्ण करले और सब चूर्णकी बराबर लोहेका चूर्ण मिलालेवै । यह विडंगादिलोह-अत्यन्त दारुण प्रमेहोंको और सर्व मूत्रविकारोंको दूर करै है ॥

श्वदंष्ट्रात्रिफलामुस्तगुडूचीफल्गुपल्लवान् ।
दर्भकुशश्चमंजिष्ठांरोहिषस्यचपल्लवान् ॥
बलापुनर्नवाश्यामाशारिवेदेवदारुच ।
पिप्पलीनागरश्चैवविडंगमरिचानिच ॥
पाठाकम्पिल्लकंभार्गीद्वेहरिद्रेनिदिग्धिकाम् ।
एरण्डमूलंदन्तीचचित्रकंकटुरोहिणीम् ॥
एतानिसमभागानिश्लक्ष्णचूर्णानिकारयेत् ।
द्विगुणंसर्वचूर्णेभ्योलौहचूर्णप्रदापयेत् ॥
माषकात्रितयंतस्माच्चतुष्टयमथापिवा ।
पिबेदुष्णेनतोयेनमद्येनापिचमद्यपः ॥
मेहशूलोदरंप्लीहशोथार्शःपाण्डुरोगनुत् ।
गोमूत्रपिष्टैरेतैश्चवटिकास्तद्गदापहाः ॥
फल्गुश्चकोष्ठोडुम्बरीस्तस्याःपल्लवः ।

इति श्वदंष्ट्रादिलौहः ।

अर्थ-गोखरू, त्रिफला, नागरमोथा, गिलोय, कठूमरकेपत्ते, दाभ, कुशा, मजीठ, सुगंधरोहिषतृणोंके पत्ते, खिरैटी, पुनर्नवा, निसोत, कालीसर, गोरीसर, देवदारु, पीपल, सोंठ, वायविडंग, कालीमिरच, पाठ, कबीला, भारंगी, हलदी, दारुहलदी, कटेरी, अण्डकीजड़, दन्ती,

चीता, और कुटकी, इन सब औषधियोंको समान भागलेकर बारीक चूर्ण करले, सब चूर्णसे दुगुना लोहेका चूर्ण मिला लेवै । यह तीन मासे या चार मासे भर गरमजलके साथ अथवा मदिरा पीने-वाला मदिराके साथ सेवन करै । इससे प्रमेह, शूल, उदररोग, प्लीहा, सूजन, बवासीर, और पाण्डुरोग यह सब दूर हो जाते हैं । और इस चूर्णकी गोमूत्रमें गोली बनाकर खानेसे उपरोक्त गुणोंको करै हैं ॥

कृमिरिपुदहनव्योषत्रिफलाऽमरदारुचव्यभूनिम्बम् ।
मागधीमूलमुस्तंसशठित्वचंमाक्षिकंचैव ॥
लवणक्षारनिशायुक्तस्तुम्बुरुगजकणातिविषाः ॥
कर्षांशिकान्येवसमानिकुर्यात्पलाष्टकंचाश्मजतोर्विदध्यात् ।
निष्पत्रशुद्धस्यपुरस्यविद्वान्पलद्वयंलौहरजस्तथैव ॥
सिताचतुष्कंपलमत्रवांश्यानिकुम्भकुम्भात्रिसुगन्धियुक्तम् ॥
चन्द्रप्रभेयंगुटिकाप्रयोज्याअर्शांसिनिर्णाशयतेषडेव ॥

किंचिद् दशमूलक्काथे चतुर्गुणे उष्णे पत्रादिरहितानिरवकरगुग्गुलुं प्रक्षिप्याऽऽलोड्य वस्त्रपूतं विधाय प्रचण्डातपे विशोष्य पिष्टितगुग्गुलोः पलद्वयं ग्राह्यम् । तथा नागार्जुनोक्तामृतसारलौहोक्तजारणपुटनादिशोधितयथाव्याधिप्रत्यनीकद्रव्य-विशेषपुटितकान्तवज्रादिलौहचूर्णस्य पलद्वयम् । तथा शिलाजतुनस्त्रिफला-दशमूलानि क्काथे उष्णे प्रक्षिप्य केवलोष्णजल एव वा प्रक्षिप्य प्रचण्डातपता पितास्यार्द्धीभूतसरं गृहीत्वा शोधितस्याष्टपलान्यादाय रसायनाधिकारोक्तशिवा-गुटिकोक्तक्रमेण त्रिफलादशमूलगुडूचीक्काथादिभिर्भाव्य शिलाजतुसमैः प्रचण्डा-तपशोषणं तथा तथैवोक्तकाकोल्याद्यष्टाविंशतिद्रव्ययथोक्तक्काथार्द्धभावितस्य च तथा विशेषतः । सालसारादिगणक्काथेन चरकोक्तमहाकषायजीवनीयादि-दशगणमध्ये यथाव्याधिप्रत्यनीकगणक्काथेन च तथा वाग्भटोक्तयथादोषभेदोक्त-भावनद्रव्यक्काथैश्च भावनं कर्तव्यम् । तदनु लोहचूर्णगुग्गुलुभ्यां शिलाजतु मिश्र-यित्वा पुनः शिवागुटिकोक्तकाकोल्याद्यष्टाविंशतिद्रव्यक्काथेन विशेषतः सालसारादिगणक्काथादिभिश्च मिलित्वा भावनां विधाय विडंगचित्रकाद्यौषधचू-र्णानि संयोज्य धान्यपटोलक्काथाष्टपलैर्विमृद्य किलादिषुपिष्ट्वा च्छायाशुष्काःकार्याः । किञ्च सिताचतुष्कमिति पलचतुष्टयमित्यर्थः ॥ निकुम्भो दन्ती कुम्भास्त्रिवृता एतयोर्मिलित्वा पलमेकं पाठान्तरदर्शनात् त्रिसुगन्धेन मिलित्वा पलमेकम् ।

वांशी वंशलोचना ।

किंच शिलाजतु भावनार्थं शिलाजतु समंगृहीत्वा चतुर्गुणं जलं दत्त्वा चतुर्भा गावशिष्टं कृत्वा तेन भावनमित्येकः पक्षः।वाग्भटमतेन क्काथ्यद्रव्यं शिलाजतु सममेव गृहीत्वाष्टगुणं जलं दत्त्वाष्टभागावशेषं कृत्वा तेन भावनमित्युभयथैव व्यवहारः॥

भगन्दरंपाण्डुचकामलाञ्चनिर्णष्टवह्नेःकुरुतेचदीप्तिम् ।
हन्त्यामयान्पित्तकफानिलोत्थान्नाड़ीगतेमर्मगतेव्रणेच ॥
ग्रन्थ्यर्बुदेविद्रधिराजयक्ष्मणोमेहेभगाख्येप्रबलेप्रयोज्यः ।
शुक्रक्षयेचाश्मरिमूत्रकृच्छ्रेशुक्रप्रवाहेऽप्युदरामयेच ॥
भक्तस्यपूर्वंसततंप्रयोज्यातक्रानुपानाप्यथमस्तुपाना ।
आजरसोजाङ्गलजोरसोवापयोऽथवाशीतजलानुपानम् ॥
बलेननागस्तुरगोजवेनदृष्ट्यासुपर्णःश्रवणैर्वराहः ॥
शुक्रदोषान्निहन्त्यष्टौप्रमेहांश्चैवविंशतिः ।
वलीपलितनिर्मुक्तोवृद्धोऽपितरुणायते ॥
नपानभोज्यंपरिहार्य्यमस्तिनशीतवातातपमैथुनेच ।
शम्भुंसमभ्यर्च्यकृतप्रणामात्प्राप्तागुटीचन्द्रमसःप्रसादात् ॥
(अत्रवचाद्यागेनपाठस्तन्त्रान्तरविरुद्धः
माक्षिकंस्वर्णमाक्षिकम् ।
पाठान्तरेताप्यमित्युक्तेः । युगशब्दस्यत्रिष्वेवसम्बन्धः ।
तेनसैन्धवसौवर्चलेयवक्षारसर्जिकाक्षारौ ।
हरिद्रादारुहरिद्रेग्राह्ये ।)

इति चन्द्रप्रभागुटिका ।

अर्थ–वायविडंग, चीता, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आमला, देवदारु, चव्य, पीपरामूल, चिरायता, नागरमोथा, कचूर, वच, सोनामाखी, कालानोंन, सैंधानोन, जवाखार, सज्जीखार, हलदी, दारुहलदी, धनिया, जलपीपल और अतीस प्रत्येक दो दो तोले, शुद्ध शिलाजीत बत्तीस तोले, शुद्ध गूगल आठ तोले, लोहेका चूर्ण आठ तोले, मिश्री सोलह तोले, वंशलोचन चार तोले, निसोत और दन्ती चार तोले, और मिलेहुए त्रिसुगंध (दालचीनी, इलायची, तेजपात,) चार तोले, इनसबको एकत्रकर यथाविधिसे गोली बनाले । यहचंद्रप्रभा नामवाली गोली–छै प्रकारकी बवासीर, भगन्दर, पाण्डुरोग, कामला, मंदाग्नि,

पित्तकफसे उत्पन्न हुए रोग, नाडीव्रण, मर्मगतव्रण, ग्रन्थि, अर्बुद, विद्रधि, राजयक्ष्मा, प्रमेह, शुक्रक्षय, पथरी, मूत्रकृच्छ्र, शुक्रप्रवाह, और उदरादि रोगोंकों दूर करैहै । इन गोलियोंको भोजनसे पहिले खावै और तक्र या दहीका पानी अथवा बकरे के मांसका रस, या जांगलदेशके जीवोंके मांसके रस, किंवा दूध या शीतलजलका अनुपान करै । इन गोलियोंको सेवनकरनेसै मनुष्य बलमें हाथीकी समान, वेगमें घोडेकी समान, दृष्टिमें गरुडकी समान, और श्रवणमें वराहकी समान होजातेहैं। तथा आठप्रकारके शुक्रदोष, वीस प्रकारके प्रमेह, और वलीपलितरोगोंसे मुक्त हो जाते हैं और वृद्धमनुष्यभी इसके प्रभावसे तरुणताको प्राप्त होते हैं। भोजन और पानका परहेज नहीं है, और शीत, वात, आतप और मैथुनकाभी परहेज नहीं है ॥

लौहोरसायनोऽप्यत्रपाण्डुभ्यःश्रेष्ठउच्यते ।
व्यायामजातमखिलंभजन्मेहान्व्यपोहति ॥
पादत्रच्छत्ररहितोभैक्षाशीमुनिवद्यतः ।
योजनानांशतंगच्छेदधिकंवानिरन्तरम् ॥
मेहान्जेतुंवनेचापिनीवारामलकाशनः ॥

अर्थ--लोहरसायन पाण्डुरोगकी अपेक्षा इस प्रमेह रोगमें विशेष उपकारी है । अधिकतर कसरत करनेसे प्रमेहरोग विनष्ट होता है। प्रमेहरोगी पादुका (जुते) और छत्रहीन होकै भिक्षामांगे तथा मुनियोंकी समान आचरण करे,निरंतर शतयोजन अथवा अधिक गमन करै, और वनमें जाकर नीवार धान और आमलोंका भोजन करै ॥

नवान्नदधिमद्याम्बुगुडक्षीरनिषेवणात् ।
दूषयन्तिमलंमेदःशुक्रमज्जावसारसः ॥
विंशतिमेहाःप्रजायन्तेदशसाध्याःकफोत्थिताः ।
पित्तोत्थिताश्चषड्याप्यायह्यसाध्यामारुतोत्तराः ॥
आस्यस्वादुस्तृषादाहोदन्तानांमलसंचयः ।
देहचिक्कणतापीतादाहश्चपाणिपादयोः ॥

प्रभूताविलमूत्रत्वंमेहलक्षणमग्रजम् ।
उदकेक्षुरसंसान्द्रंसुरासिकताशुक्रजम् ॥
पीतंपिष्टकलालाख्यंबहुमूत्रंततःपरम् ।
क्षारंहरितरक्तश्चमांजिष्ठंस्याच्चतुर्दश ॥
नीलंकालंवसामज्जाक्षौद्रंविद्यादशोत्तरम् ॥
हन्तिमेहंविंशतमंयातेवर्णेबलक्षयात् ।

अर्थ-नवीन अन्न, दही, मदिरा, जल, गुड़, और दूध इन द्रव्योंको अधिकतर सेवनकरनेसै शरीरमें स्थित मल, मेद, शुक्र, मज्जा, वसा और रस दूषित होकर वीसप्रकारके प्रमेहोंको उत्पन्न करतेहैं, उनमें कफसै उत्पन्नहुए दश प्रमेह साध्यहैं, पित्तसै उत्पन्नहुए छै प्रमेह याप्यहैं और वातसै उत्पन्न हुए चार प्रमेह असाध्यहैं । मुखमें मधुरता, तृषा, दाह, दातोंमें मेल इकट्ठाहोना, शरीरमें चिकनापन और पीलापन, हाथ और पैरोंमें दाह, मूत्रकी अधिकता और अनिर्म्मलता यह सब प्रमेहके पूर्वके लक्षणहैं । उदकमेह, इक्षुमेह, सान्द्रमेह, सुरामेह, सिकतामेह, शुक्रमेह, पीतमेह, पिष्टमेह, लालामेह, बहुमूत्रमेह, क्षारमेह, हरितमेह, रक्तमेह, मांजिष्ठमेह, नीलमेह, कालमेह, वसामेह, मज्जामेह, क्षौद्रमेह, और हस्तिमेह इसप्रकार यह वीस प्रमेहरोग वर्ण और बलके क्षय होनेसै उत्पन्न होतेहैं ॥

स्वच्छंबहुसितंशीतंनिर्गन्धमुदकोपमम् ।
मेहंह्युदकमेहेनकिंचिदाविलपिच्छिलम् ॥

इति उदकमेहः ॥

अर्थ-स्वच्छ, बहुतसफेद, शीतल, गंधरहित, जलकीसमान और किंचित् गाढ़ा, और पिच्छिल मूते इसको उदकमेह कहतेहैं ॥

मेहिनोबलिनःकुर्यादादौवमनरेचने ॥

अर्थ-बलवान्मेहरोगीको प्रथम वमन और विरेचन करावै ॥

भस्मसूतंमृतंकान्तंतीक्ष्णभस्माशिलाजतु ।
शुद्धंताप्यंशिलाव्योषंत्रिफलांकोलबीजकम् ॥
कपित्थंरजनीचूर्णतुल्यंभाव्यन्तुभृंगिणा ।

विंशद्वारंविशोष्याथमधुयुक्तंलिहेत्सदा ॥
निष्कमात्रंहरेन्मेहान्मेघबन्धोरसोमहान् ।
महानिम्बस्यबीजानिषणिनिष्कंपेषितानिच ॥
पलंतण्डुलतोयेनघृतानिष्कद्वयेनच ।
एकीकृत्यपिबेच्चानुहन्तिमेहंचिरोत्थितम् ॥

इति मेघबन्धरसः ।

अर्थ-पारेकी भस्म, कान्तलोहेकी भस्म, तीक्ष्णलोहेकी भस्म, शिलाजीत, शुद्ध सोनामाखी, मनशिल, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आमला, अंकोलके बीज, और कैथ तथा हलदी, यह सब समान भाग ले एकत्र चूर्णकर भांगके रसमें वीसवार भावना देवै, पश्चात् इसमें सहत मिलाकर आधातोला नित्य खावै, और ऊपरसै तीन तोले बकायनके बीज चार तोले चावलोंके जलमें पीसकर एकतोला घृत मिलाकर अनुपान करै तौ यह मेघबन्धरस बहुतादिनोंके प्रमेहरोगको दूरकरै॥

इक्षोरससमरूपंमधुरंचेक्षुमेहकम् ॥

इति इक्षुमेहः ।

अर्थ-ईखके रसकी समान रंगवाला और स्वादमें मीठा मूत्र उतरे, इसको इक्षुमेह कहतेहैं ।

गंधकंगुडसंयुक्तंकर्षंभुक्त्वाप्रमेहजित् ।

अर्थ-शुद्धगंधकको गुड़में मिलाकर एक तोलेभर प्रतिदिन खाय तौ प्रमेहरोग दूर होवै ॥

वंगभस्ममृतंसूतंतुल्यंक्षौद्रैर्विमर्दयेत् ।
द्विगुंजंलेहयेन्नित्यंहन्तिमेहंचिरोत्थितम् ॥
गुंजामूलंपिबेच्चानुक्षीरैरेवप्रशाम्यति ॥

इति वंगेश्वरोरसः ।

अर्थ-वंगकी भस्म, पारेकीभस्म, दोनों समान भाग लेकर बराबरके सहतमें मर्दनकरकै नित्य नित्य गुंजाभर सेवन करै, और ऊपरसै चोंटलीकी जडको दूधमें पीसकर पीवै तौ बहुत दिनोंका प्रमेहरोग दूर होवै॥

सान्द्रंभवेत्पर्युषितंसान्द्रमेहंतदुच्यते ॥

इति सान्द्रमेहः ।

अर्थ-मूत्रको रातमें रखदेवै जो वह मूत्र दूसरे दिन गाढ़ा होजावै तौ सान्द्रप्रमेह जानना ॥

पंचवक्ररसोऽप्यत्रदेयंगुंजाद्वयंहितम् ।
चित्रकंत्रिफलाक्काथंसुशीतञ्चमधुप्लुतम् ॥
अनुपानंप्रदातव्यंसुरामेहप्रशान्तये ।
दार्वीमुस्तादेवदारुत्रिफलाक्कथितेजले ॥
योजयेदनुपानेनमेघवन्धरसोऽपि वा ॥

अर्थ-यहां पंचवक्ररस दोगुंजाप्रमाण भक्षणकरै, और ऊपरसे चीता, हरड़, आमला, और बहेड़ा, इनका काढा बना शीतलकर सहत मिलाकर पीवै तौ सुरामेह दूर होवै । अथवा मेघचन्धरस भक्षण करै, और ऊपरसे दारुहलदी, नागरमोथा, देवदारु, हरड़, आमला और बहेडा, इनका काढ़ा पीवै तौ-सुराप्रमेह नष्ट होवै ॥

सुरामेहीसुरातुल्यमुपर्यच्छमधोघनम् ॥

इति सुरामेहः ।

अर्थ-जिसका मूत्र सुराकीसमान ऊपर तौ स्वच्छ और नीचे गाढ़ा होय तौ उसको सुरामेह जानना ॥

मार्कण्डीत्रपुषंशीषंसुदग्धंमृगशृङ्गकम् ।
कार्पासबीजंमज्जाचतुल्यमङ्कोलबीजकम् ॥
पेषयेन्माहिषीतक्रैर्दिनैकंवटकीकृतम् ।
मासद्वयंसदाखादेन्मृगमालाप्रमेहजित् ॥
अक्षपाठाभयादार्वीकषायमनुपाययेत् ॥

इति मृगमालारसः ।

अर्थ-भुई खखसा, सीसा, अगर, हिरनके सींगकी भस्म, विनौलोंकी मींग, और अंकोलके बीज यह सब समान भागलेकर एक दिन भैंसके तक्रमें पीसकर दोदोमासेकी गोली बनालेवै, एक गोली प्रतिदिन खावै, और ऊपरसै बहेडा, पाढ़, हरड, और दारुहलदीका काढ़ा पीवै । यह मृगमाला रस प्रमेहको दूरकरैहै ॥

त्रिनिष्कंकेतकीमूलंघृष्ट्वाजलेनपाययेत्।
जयन्त्यावाजयायुक्तंमेहंहन्तिसमुत्कटम् ॥

अर्थ-१२ मासे केतकीकी जड़को जलमें पीसकर जयंती या अरणी-केसाथ सेवन करनेसै-उत्कट प्रमेहरोग नष्ट होताहै ॥

मृत्साणून्सिकतामेहीसिकतारूपिणोमलान् ॥

इति सिकतामेहः।

अर्थ-जिस प्रमेहमें छोटे छोटे वालू रेतकीसमान कण मूते, उसको सिकतामेह कहतेहैं ॥

मृतनागस्यभागैकंभागैकेनशुभाभया।
दार्वीकोलफलंधात्रीमुष्कबीजंपलंपलम् ॥
कनकस्यफलंचैवपिष्ट्वातद्गुटिकाकृता।
नागेन्द्रगुटिकाख्यातातक्रैःपीत्वातिमेहजित् ॥
निशामृताद्विनिष्कञ्चमधुनालेहयेदनु।
देवविद्यावटीचात्रअनुपानञ्चयोजयेत् ॥

इति नागेन्द्रगुटिका।

अर्थ-सीसेकीभस्म, वंशलोचन, हरड़, दारुहलदी, बेर, आमला, मोखाके बीज और कनक धतूरेके फल प्रत्येक एक एक पल लेकर जलसे पीसकर गोली बनाले, इन गोलियोंको तक्रके साथ खावै, पश्चात् हलदी और गिलोयको सहतमें मिलाकर आठ मासे चाटै, अथवा इसीप्रकार अनुपानकेसाथ देवविद्यावटी सेवनकरै, इससै प्रमेहरोग दूर होताहै ॥

शुक्राभंशुक्रमिश्रंवाशुक्रमेहीप्रमेहति ॥

इति शुक्रमेहः।

अर्थ-शुक्रकीसमान अथवा शुक्रमिला मूत उतरे, उसको शुक्रमेह कहतेहैं।

पारदाभ्रकयोर्भस्ममृतंलौहाष्टमंसमम्।
टंकणञ्चैवमध्वाज्यंप्रत्येकंसूततुल्यकम् ॥
चण्डालीराक्षसीपुष्पैर्दिनंमर्द्यंनिरुध्यच।

मूषायामन्तरेपक्कंदिनैकंतञ्चचूर्णयेत् ॥
मेहद्विरदसिंहोऽयंरसःक्षौद्रैर्द्विमाषकम् ।
लिहेच्चानुपिबेत्तक्रैर्निष्कैकंटकणंसदा ॥
पंचवक्त्ररसोऽप्यत्रदेयंशुक्रप्रमेहजित् ॥

इति मेहद्विरदसिंहो रसः।

अर्थ–पारे और अभ्रककी भस्म प्रत्येक एक एक तोला, लोहेकी भस्म आठ तोले, सुहागेकी खीलै, सहत और घृत प्रत्येक एक एक तोला, इन सबको एकत्र कर शिवलिंगी और चोरक गंधद्रव्यके फूलोंके रसमें एक दिन खरल करकै मूषामें रख मुख बंदकर दिनभर पकावै, जब शीतल हो जाय तब चूर्ण करले, तौ मेहद्विरदसिंहनामक रस तैय्यार हो। इसको सहतके साथ दो मासे खावै, पश्चात् चार मासे सुहावेकी खीलोका चूर्ण तक्रके साथ पीवै, इस औषधिको सेवन करनेसै अथवा पंचवक्त्ररसको करनेसै शुक्रमेह दूर होता है ॥

शीतमेहीसुबहुशोमधुरञ्चातिशीतलम् ॥

इति शीतमेहः ।

अर्थ–वारंवार मधुर और अत्यन्त शीतलमूत्र उतरे, उसको शीतमेह कहतेहैं ॥

सूतंमृताभ्रवंगाभ्यांतुल्यभागंप्रकल्पयेत् ।
महानिम्बोत्थबीजस्यचूर्णयोज्यंत्रिभिःसमम् ॥
मधुनालेहयेन्माषंलालामेहस्यशान्तये ।
सक्षौद्ररजनींवात्रलिह्यान्निष्कत्रयंसदा ॥
असाध्यंनाशयेन्मेहंनित्यारोग्येश्वरोरसः ॥

इति नित्यारोग्येश्वरो रसः ॥

अर्थ–पारा, अभ्रककीभस्म, और वंग यह तीनों समान भाग और वकायनके बीजोंका चूर्ण तीनोंकी बराबर लेवै, सबको मिलाकर सहतके साथ प्रतिदिन एकमासे भक्षण करैतौ लालामेह दूर होवे । यहां १॥

देढ़ तोला हलदीके चूर्णको सहतमें मिलाकर चाटै। यह नित्यारोग्येश्वर रस असाध्यप्रमेहकोभी नष्ट करदेताहै॥

पाठार्जुनविडंगानांकषायंमधुसंयुतम्।
अनुपानंप्रयुंजीतमेहंहन्तिचिरन्तकम्॥
गुंजामूलंपिबेत्क्षीरैरनुपानंप्रशस्यते॥

अर्थ-पाढ़, अर्जुनकी छाल, और वायविडंग, इनके काढ़ेमें सहत डालकर पीनेसे अथवा चौटलीकी जड़को दूधमें पीसकर पीनेसै बहुतदिनोंका प्रमेहरोग नष्ट होताहै॥

शनैःशनैःशनैर्मेहीमन्दंमन्दंप्रमेहति॥

अर्थ-धीरै धीरै थोडा थोडा मूते, उसको शनैर्मेह कहते हैं॥

लालातन्तुयुतंमूत्रंलालामेहेनपिच्छिलम्॥

इति लालामेहः।

अर्थ-लारके समान तंतुयुक्त और पिच्छिल मूत्र उतरे, उसको लालामेह कहते हैं॥

प्रमेहगजसिंहोऽत्रदेयस्तदनुपानकम्।
पंचवक्त्ररसोऽप्यत्रमहानिम्बस्यबीजकम्॥
अनुपानंप्रदातव्यंतस्यमेहस्यशान्तय।

अर्थ-प्रमेहाद्रिदासिंहरस अनुपानके साथे, अथवा पंचवक्र रस बकायनके बीजोंके अनुपानके साथ सेवन करनेसै शनैर्मेह और लालामेह नष्ट होता है॥

संहृष्टरोमाविष्टेनापिष्टवद्बहुलंसितम्॥

इति पिष्टमेहः॥

अर्थ-पिसे चावलोंके पानीकी समान सफेद और बहुतमूते तथा मूतनेके समय रोमाँच हो आवे, उसको पिष्टप्रमेह जानना॥

वंगभस्ममृतंसूतंतुल्यंक्षौद्रैर्विमर्दयेत्।
द्विगुंजंलेहयेन्नित्यंहन्तिमेहंचिरन्तनम्॥

अर्थ-वंगकीभस्म, और पारेकी भस्म दोनों समान भाग लेकर सह-

तमें मर्दन कर दो गुंजाप्रमाण प्रतिदिन सेवन करै तौ बहुत दिनोंका प्रमेह दूर होवै ॥

शोषस्तापोऽङ्गकार्श्यंश्चबहुमूत्रंतृषाभ्रमः ।
अस्वास्थ्यंसर्वगात्रेषुमेहोऽयंबहुमूत्रजः ॥

इति बहुमूत्रम् ।

अर्थ-शोष, ताप, अंगकृशता, बहुमूत्र, पियास,भ्रम और सर्वशरीरमें पीड़ा होय, उसको बहुमूत्र प्रमेह कहते हैं ॥

मृतंसूतंमृतंवंगंमृतलौहाभ्रकंसमम् ।
मर्दयेन्मधुनाचाह्निरसोऽयंतारकेश्वरः ॥
माषमेकंलिहेत्क्षौद्रैर्बहुमूत्रंप्रणाशयेत् ।
उदुम्बरफलंपक्कंचूर्णितंकर्षमात्रतः ॥
संलेह्यंमधुनासार्द्धमनुपानंसुखावहम् ।

इति तारकेश्वररसः ।

अर्थ-पारेकीभस्म, वंगकीभस्म, लोहेकीभस्म, अभ्रककी भस्म यह सब समान भाग लेकर एकदिन सहतके साथ खरल करै तौ तारकेश्वर रस सिद्धहो, इसको एक मासेभर सहतके साथ खानेसै बहुमूत्ररोग दूर होताहै। इसके ऊपर पक्के गूलरोंका चूर्ण दो तोले सहतके साथ खावै॥

पंचवक्त्ररसोऽप्यत्रदेयंगुंजाद्वयंहितत् ।
महानिम्बस्यबीजानिषण्निष्कंपेषितानिच ॥
पलंतण्डुलतोयेननिष्कद्वयघृतेनच ।
एकीकृत्यपिबेन्नित्यमनुपानंप्रमेहजित् ॥

अर्थ-दोगुंजा पंचवक्त्ररसको सेवन कर पश्चात् बकायनके बीज तीन तोले, चावलोंका जल चार तोले, घृत एकतोला, इनसबको मिलाकर पान करै तौ प्रमेह रोग दूर होवै ॥

गंधवर्णरसस्पर्शैः क्षारेणक्षारतोयवत् ॥

इति क्षारमेहः ।

अर्थ-खारी जलकी समान गंधवर्ण रस और स्पर्शहो, उसको क्षारमेह कहते हैं ॥

मृतसूतञ्चकाशीशमेलाजातीफलंजटा ।
मधुकंमधुयष्टीचधात्रीदाडिमशर्करा ॥
कर्पूरंखादिरंसारंशताह्वाकण्टकारिका ।
अम्लवेतसतुल्यांशंदिनैकंलांगलीद्रवैः ॥
भावयेन्मेषीदुग्धैश्चनागवल्ल्यादिनंदिनम् ।
वटिकाबदराकारानाम्नाचंद्रप्रभावटी ॥
भक्षयेत्तीव्रमेहार्तोमेहान्हन्तिसुदुस्तरान् ।
धात्रीपटोलपत्राणांकषायंवाघृतान्वितम् ॥
सक्षौद्रंपाययेच्चानुसर्वमेहप्रशान्तये ॥

इति चंद्रप्रभावटी ।

अर्थ-पारेकीभस्म, कसीस, इलायची, जायफल, बालछड, महुआ मुलैठी, आमला, अनार, मिश्री, कपूर, खैरसार, सोया, कटेरी, और अमलवैंत, यह समान भागलेकर एक दिन कलिहारिके रसमें, एक दिन भैंसके दूधमें और एकदिन पानोंके रसमें भावना देकर बेरकी बराबर गोली बनालेवै। इसको चंद्रप्रभावटी कहतेहैं, यह दुस्तरप्रमेहरोगको दूर करैहै। इसके ऊपर आमला और पटोलपत्र इनका क्वाथ सहत और घृतके साथ पीवै तौ सर्वप्रकारके प्रमेह रोग दूर होवै ॥

हारिद्रमेहीकटुकंहारिद्रासन्निभंदहत् ॥

इति हारिद्रामेहः ।

अर्थ-कटुरसान्वित, हलदीकी समान रंगवाला और दाहयुक्त मूते, उसको हारिद्रमेह कहतेहैं ॥

मृतंसूतंमृतंवंगमर्जुनस्यत्वचंसिता ।
तुल्यांशंमर्दयेत्खल्वेशाल्मलीमूलजद्रवैः ॥
दिनान्तेवटिकाकार्यामाषमात्राप्रशान्तये ।
द्रवैःशाल्मलिमूलानांवेदविद्यावटीतथा ॥

अर्थ-पारेकीभस्म, वंगकीभस्म, अर्जुनकी छाल, और मिश्री इनको समान भागलेकर सेमरकी जडके रसमें एकदिन खरलकरै, रातको

एक मासेकी गोली बनालेवै, एक गोली प्रतिदिन खावै, अथवा सेमलका जडके रसकेसाथ वेदविद्यावटी सेवनकरै तौ हारिद्रमेह नष्ट होताहै ॥

विस्रमुष्णंसलवणंरक्ताभंरक्तमेवच ॥

इति रक्तमेहः ।

अर्थ-दुर्गन्धयुक्त. गरम, नमकीन और रुधिरकीसमान लालमूत्र उतरे, उसको रक्तमेह कहतेहैं ॥

वीरकाष्ठकषायश्चबोलयुक्तंपिबेद्नु ।
वासायामूलकंक्काथंसघृतंपाययेन्निशि ॥
विद्यावागीश्वरोऽप्यत्रतद्द्रव्यश्चानुपाययेत् ।
रक्तमेहप्रशान्त्यर्थंयोज्यंवामृतवज्रकम् ॥
द्विकर्षमूषलीमूलंचूर्णंक्षौद्रसितायुतम् ।
कर्षैकंलेहयेच्चानुरक्तमेहप्रशान्तये ॥

अर्थ-अर्जुनकी छालके काढेको बोलकेसाथ पीवै, अथवा अडूसेकी जड़का क्काथ रात्रिमें घीकेसाथ पीकर विद्यावागीश्वररसको सेवनकरै, या हीरेकी भस्मको सेवनकरै, किंवा दो तोले मुसलीके चूर्णको सहतके और चीनीकेसाथ सेवनकरनेसे रक्तमेह नष्ट होता है ॥

विस्रंमांजिष्ठमेहेनमांजिष्ठासलिलोपमम् ॥

इति मांजिष्ठामेहः ।

अर्थ-दुर्गन्धित और मजीठके क्काथके समान मूत उतरे, उसको मांजिष्ठमेह कहतेहैं ॥

मंजिष्ठाचन्दनंकर्षःक्काथश्चाप्यनुपाययेत् ।
मृगमालारसोऽप्यत्रदेयंगुंजाद्वयंहितम् ॥

अर्थ-दो रत्तीभर मृगमाला रसको भक्षण कर पश्चात् मजीठ और लालचन्दनके क्काथका पान करै तौ मांजिष्ठमेह दूर होवै ॥

नीलमेहेननीलाभंकालमेहमयोनिभम् ।

इति नीलमेहः ।

अर्थ-नीलामूत्रउतरे, उसको नीलमेह कहते हैं। लोहेकी रंगकी समान मूत्र उतरे, उसको कालमेह कहते हैं ॥

मृतसूताभ्रकंतुल्यंधात्रीफलनिजैर्द्रवैः ।
सप्ताहंभावयेत्खल्वेयोगोऽयंहरिशंकरः ॥
माषमेकंवटींखादेन्नीलकालप्रशान्तये ।
महानिम्बस्यबीजानिपूर्ववत्तण्डुलोदकैः ॥
सघृतंपाययेच्चानुअसाध्यंसाधयेत्क्षणात् ।
अनेनैवानुपानेनपंचवक्त्ररसोहितः ॥

इति हरिशंकररसः ।

अर्थ-पारेकी भस्म और ताँबेकी भस्म समानभाग ले सातदिन आमलोंके रसमें खरलकरभावना देवै, इसको हरिशंकर रस कहतेहैं । इसकी एक एक मासेकी गोली बनाकर एकगोली प्रतिदिन खावै तौ नीलमेह और कालमेह नष्ट होवे । और इस हरिशंकर रसपर वकायनके बीज चावलोंके जलमें पीसकर घीकेसाथ अनुपान करै । इसी अनुपानके साथ पंचवक्त्र-रसका सेवनकरना हितकारीहै ॥

वसामेहीवसामिश्रंवसाभंमूत्रयेन्मुहुः ॥

इति वसामेहः ।

अर्थ-चर्बीयुक्त और चर्बीके रंगकीसमान वारंवार मूते, उसको वसामेह कहतेहैं ॥

सूतंवंगंमृतंतुल्यंमृताभ्रंसूतकात्त्रिधा ।
लशुनंसर्वतुल्यांशंनिष्कमेकंविचूर्णयेत् ॥
बदराभांवटींकुर्यान्नाम्नामेहकुलान्तकः ।
लशुनंछागमत्रेणवसामेहीचपाययेत् ॥

इति मेहकुलांतकरसः ।

अर्थ-पारेकी भस्म एकभाग, वंगकी भस्म एकभाग, अभ्रककीभस्म दो भाग, लशुन छै भाग, इन सबको एकत्र पीसकर बेरकी बराबर गोली बना लेवै, इसको मेहकुलान्तक रस कहते हैं ॥ इस रसको सेवन करनेके पश्चात् लशुनको बकरीके मूत्रमें पीसकर पीवै, इससे वसामेह नष्ट होताहै ॥

पंचवक्ररसोऽप्यत्रमहानिम्बस्यबीजकम् ।
तण्डुलोदकपानेनसघृतैर्मेहजिद्भवेत् ॥

अर्थ--पंचवक्ररसको सेवन करै पश्चात् बकायनके बीजोंको चावलों-के जलमें पीसकर घृत मिलाकर सेवन करै तौ वसामेह नष्ट होवै ॥

मज्जाभंमज्जमिश्रंवामज्जमेहीमुहुर्मुहुः ॥

इति मज्जमेहः ।

अर्थ-मज्जाकी समान अथवा मज्जामिश्रित मूत्र वारंवार उतरै उसको मज्जामेह कहतेहैं ॥

वसामेहिचिकित्सायातांचिकित्सांप्रयोजयेत् ॥

अर्थ--जो चिकित्सा वसामेहमें कहीहै वही चिकित्सा मज्जामेहमें करनी ॥

कषायंमधुरंरूक्षंक्षौद्रवत्क्षौद्रमेहकम् ॥

इति क्षौद्रमेहः ॥

अर्थ--कषेला, मीठा, रूखा और सहतकी समान मूते, उसको क्षौद्रमेह कहतेहैं ॥

मृतंसूतंमृतंवंगमर्जुनस्यत्वचंसिता ॥
तुल्यांशंमर्दयेत्खल्वेशाल्मल्यामूलजैर्द्रवैः ॥
दिनान्तेवटिकाकार्यामासमात्रप्रमेहहा ।
एषाइन्द्रवटीनाम्नामधुमेहप्रशान्तये ॥
त्रुटिंशाल्मलिमूलानांमधुनाचानुपाययेत् ।
प्रमेहगजसिंहोऽत्रदेयोवानन्दभैरवः ॥
अनेनैवानुपानेनवेदविद्यावटीह्यपि ॥

अर्थ-पारेकी भस्म, वंगकी भस्म, अर्जुनकीछाल, और मिश्री, यह सबसमान भाग लेकर एकदिन सेमलकी जड़के रसमें खरल करके एकएक मासेकी गोली बनालेवै, इसको इन्द्रवटी कहते हैं, प्रतिदिन एक गोली खावै, और ऊपरसे सैमलकी जड और छोटी इलायची

सहतके साथ पीसकर सेवन करै तौ क्षौद्रमेह (मधुमेह) दूर होवै। प्रमेह गजसिंहरस, आनन्दभैरवरस, अथवा वेदविद्यावटी, उक्त अनुपानके साथ सेवन करनेसै भी मधुमेह नष्ट होताहै॥

हस्तीमत्तइवाजस्रंमूत्रंवेगविवर्जितम्।
खलसीकंविदग्धश्चहास्तिमेहस्यलक्षणम्॥

इति हस्तिमेहः।

अर्थ-मत्तहाथीकी समान पुनः पुनः वेगरहित, तारसंयुक्त और रुकरुकके मूते, उसको हस्तिमेह कहते हैं॥

शुद्धसूतंचतुर्भागंसूतार्द्धंमृतताम्रकम्।
गंधकंश्चद्वयोस्तुल्यंमस्तुनामर्दयेद्दिनम्॥
गोलकंबद्धयेद्वस्त्रेवालुकायंत्रगंपचेत्।
मन्दाग्निनापचेत्तावद्यावत्तप्ताश्चवालुकाः॥
स्पर्ष्टुंनशक्यतेतापमथोद्धृत्यविचूर्णयेत्।
धात्रीफलरसेभाव्यंसप्तधागोक्षुरस्यच॥
श्लक्ष्णचूर्णततःकृत्वाविंशद्भागान्प्रकल्पयेत्।
भागैकंपूर्वजंचूर्णसर्वक्षीरेणगोलयेत्॥
निष्कद्वयंवटींकुर्याद्घृतमध्येविपाचयेत्।
स्वांगशीतलतांखादेत्प्रत्यहंपाचितांघृतैः॥
महिषीक्षीरकर्षैकमनुपानश्चसर्वदा।
हरगौरीसृष्टिरसः सर्वमेहकुलान्तकः॥
दुग्धौदनंघृतंपथ्यंशाकंचिंचाफलम्भवेत्॥

अर्थ-शुद्धपारा चार भाग, ताँबेकी भस्म दो भाग, गंधक छै भाग इनको दहीके तोड़में एकदिन खरलकर गोलाबना वस्त्रमें बाँध मंद मंद अग्निसै वालुकायंत्रमें पकावै, जबतक वालुका अत्यंत गरम और हाथ नहीं धरा जाय ऐसी न हो जावै तबतक पकावै, फिर निकालकर चूर्ण करले, फिर इसको आमलोंके और गोखरूओंके रसमें सातवार भावना देकर बारीक चूर्ण करले, पश्चात् इसके वीस भाग करले।

एक भागको दूधमें मिलाकर गोला बना लेवै, उस गोलेकी आठ आठ मासेकी गोली बनाकर घीमें पकावै, जब स्वयं शीतल होजाय तब एक गोली प्रतिदिन खावै, अनुपान दो तोले भैंसका दूध। यह हरगौरी-सृष्ट रस सर्वप्रकारके प्रमेहरोगोंको दूर करै है। दुग्धान्न, घृत, शाक, और इमली इसपर पथ्य है॥

निशागोक्षुरकारिष्टसोमवल्कलजांगुलैः।
लोध्रपद्मसमंजिष्ठाचंदनागुरुदीप्यकैः॥
पटोलमुस्तभल्लातैर्युक्तंतैलंविपाचयेत्॥

अर्थ-तेल एकसेर, जल चार सेर, और कल्कके लिये हलदी, गोखरू, नीम, सफेदखैर, कड़वी तोरई, लोध, पद्माख, मजीठ, लालचन्दन अगर, अजवायन, पटोल, नागरमोथा, और भिलावा, यह सब पावभर यथाविधिसे तैलको सिद्धकर शरीरमें मर्दन करनेसे-वातज, कफज और पित्तज प्रमेह दूर होते हैं। परन्तु त्रिदोषज अर्थात् सान्निपातिक प्रमेहके दूर करनेके लिये तेल एकसेर लेवै, घृत और तेल मिले हुए एकसेर अर्थात् घृत आधसेर, तेल आधसेर, डालकर पकावै, इसको यमक कहतेहैं॥

अविपाकोरुचिश्छर्दिर्निद्राकासःसपीनसः।
उपद्रवाःप्रजायन्तेमेहिनांकफजन्मनाम्॥

अर्थ-अन्नका परिपाक न होना, अरुचि, वमन, निद्रा, खाँसी और पीनस यह सब उपद्रव कफजप्रमेहरोगमें उत्पन्न होते हैं॥

बस्तिमेहनयोस्तोदोमुष्कावदरणंज्वरः।
दाहतृष्णाम्लिकामूर्च्छाविड्भेदःपित्तजन्मनाम्॥

अर्थ-बस्ति और लिंगमें पीड़ा होवै, अण्डकोषोंका पककर फट-जाना, ज्वर, दाह, तृषा, खट्टी डकार, मूर्च्छा और मलभेद, यह उपद्रव पित्तज प्रमेहमें होतेहैं॥

वातजानामुदावर्त्तंघर्मंहृद्ग्रहलोलता।
शूलमुन्निद्रताशोषःकासःश्वासश्चजायते॥

अर्थ-उदावर्त्त, घर्म्म, हृदयमें पीड़ा, लोलता, शूल, निद्रानाश, शोष, खाँसी और श्वाँस यह उपद्रव वातजप्रमेहमें होतेहैं॥

यथोक्तोपद्रवारिष्टमतिप्रश्रुतमेवच ।
पिडकापीडितंगाढंप्रमेहोहन्तिमानवम् ॥

अर्थ-ऊपर कहे हुए अविपाकादि सर्व उपद्रव होवैं,और अत्यन्त शुक्र-स्रावित तथा पिड़कायोंसै अधिकतर पीडितहो, ऐसा प्रमेहरोगी निश्चय मरणको प्राप्त होता है ॥

उपद्रवाणांशान्त्यर्थंघृतमत्रैवकथ्यते ।
दशमूलीशठीदन्तीदेवदारुपुनर्नवा ॥
मूलंस्नुह्यर्कयोःपथ्याभूकदम्बश्चपुष्करम् ।
करञ्जंवारुणंमूलंपिप्पलीचसमंसमम् ॥
प्रतिदशपलंयोज्यंकुलत्थबदरीयवाः ।
इत्येवंषोडशपलंसर्वमेकत्रपाचयेत् ।
अष्टत्रिंशद्गुणेतोयेपादशेषंसमाहरेत् ॥
वस्त्रपूतःकषायःसपुनःपाच्यइमैःसह ॥
चव्यंद्विपिप्पलीभार्गीवचात्रिवृद्विडङ्गकम् ।
लोध्रकंपिण्याकंशुण्ठीप्रत्येकंपलमात्रकम् ॥
चूर्णितंयोजयेदत्रघृतप्रस्थयुतंपचेत् ।
घृतावशेषमुत्तार्यकर्षमात्रंप्रयोजयेत् ॥
प्रमेहोपद्रवाणाञ्चशमनंपरमंहितम् ।
पिडकाव्रणकासश्चसर्वोपद्रवशान्तिकृत् ॥

इति दशमूलघृतम् ।

अर्थ-अब पूर्वोक्त उपद्रवोंके शान्त करनेके लिये यहां घृत कहतेहैं। गायका घी दोसेर, क्काथकै लिये दशमूल,कचूर,दन्ती, देवदारु, पुनर्नवा, थूहरकी जड, आककीजड, हरड, भूमिकदम्ब, पोहकरमूल, करंजमूल, वरनाकी जड और पीपल दश दश पल,कुलथी,बेर,जौ,यह प्रत्येक सोलह सोलह पल, जल सबसे अडतालीस गुना, शेष चतुर्थांश और कल्कके लिये पीपल, गजपीपल, चव्य, भारंगी, वच,निसोत, वायविडंग, लोध,

तिलोंकी खल और सोंठ, प्रत्येक चार चार तोले। सबको मिला यथाविधिसे घृतको सिद्ध करे, यह घृत प्रमेहजनित पिडका, व्रण और कासादि सम्पूर्ण उपद्रवोंको शान्त करैहै ॥

सुभावितंसारजलैलाहिपिष्ट्वाशिलोद्भवाः ।
शालिंघृतैश्चभुञ्जानःशालिंजांगलजैरसैः ॥

अर्थ–सारजलमें छोटी इलायची और शिलाजीतको पीसकर सेवन करै, और घृत तथा जांगलदेशके जीवोंके मांसरसके साथ शालिधानोंके भातका भोजन करै ॥

गोक्षुरबीजंत्रिफलापत्रमेलारसांजनम् ।
धन्याकश्चविकाजीरंतालीशंटङ्कदाडिमौ ॥
प्रत्येकार्द्धपलंदत्त्वागुग्गुलोःकार्षिकन्तथा ।
रसाभ्रलोहगंधानांप्रत्येकञ्चपलंक्षिपेत् ॥
सर्वमेकीकृतंवैद्योदण्डयन्त्रैर्विमर्दयेत् ।
घृतभाण्डेतुसंस्थाप्यमासमेकन्तुखादयेत् ॥
दाडिमस्वरसेनैवच्छागीदुग्धेनवाम्भसा ।
चन्द्रनाथेनगदितावटिकाशुक्रमातृका ॥
विंशन्मेहान्निहन्त्याशुवातपित्तसमुद्भवान् ।
द्वन्द्वजान्सन्निपातोत्थान्मूत्रकृच्छ्राश्मरीगदान् ॥
बलवर्णाग्निजननीज्वरदोषनिषूदनी ॥

इति शुक्रमातृकावटिका ।

अर्थ–गोखुरुके बीज, त्रिफला, तेजपात, छोटीइलायची, रसौत, धनिया, चव्य, जीरा, तालीशपत्र, सुहागा, और अनार प्रत्येक दो दो तोले, गूगल एकतोला, पारा, अभ्रक, लोहा और गंधक, प्रत्येक चार चार तोले, सबको एकत्र पीसकर घृतके बासनमें रख देवै। इसको प्रतिदिन एकमासे भर बकरीके दूधके साथ अथवा अनारके रसके साथ या जलके साथ सेवन करे । यह शुक्रमातृकावटिका श्रीचंद्रनाथने कहीहै। यह–तीसप्रकारके प्रमेह, वातपित्तोद्भव प्रमेह, द्वन्द्वज, सन्निपा-

तोद्भव प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र और पथरीको दूर करैहै । यह वटिका-बल, वर्ण और अग्निको बढ़ानेवाली है तथा ज्वरको दूर करैहै ॥

शालार्जुनकलोध्राणांकदम्बागुरुचन्दनम् ।
अग्निमन्थनिशाद्वन्द्वंधात्रीदाडिमगोक्षुरम् ॥
जम्बूवीरणमूलञ्चभागमेषांपलार्द्धकम् ।
रसगंधकधन्याभ्रमेलापत्रंचपद्मकम् ॥
लौहंरसांजनंपाठाविडंगंटङ्कजीरके ।
प्रत्येकंपलिकंभागंपलार्द्धंगुग्गुलोरपि ॥
घृतेनवटिकाकृत्वाखादेत्षोडशरक्तिकाम् ।
गहनानन्दनाथेनरसोयत्नेननिर्मितः ॥
सोमेश्वरोमहातेजावातमेहंनिहन्त्यलम् ।
एकजंद्वन्द्वजंचोग्रंसन्निपातसमुद्भवम् ॥
मूत्राघातंमूत्रकृच्छ्रंकामलाञ्चहलीमकम् ।
भगंदरोदराशांसिविविधाःपीडकाव्रणम् ॥
विस्फोटार्बुदकण्डूश्चरक्तपित्ताम्लपित्तके ।
यकृत्प्लीहोदरंगुल्मशूलार्शःकासविद्रधीन् ॥
बलवर्णाग्निजनकोग्रहवैगुण्यनाशनः ।
छागीदुग्धानुपानेननारिकेलजलेनवा ॥
शीतेनपाकतैलेनयवयूषादियोगतः ।
कुर्याद्युक्त्यापवित्रोऽपियुक्त्यावात्रुटिवर्द्धनम् ॥

इति सोमेश्वररसः ।

अर्थ-सालकी छाल, अर्जुनकी छाल, लोध, कदम, अगर, चन्दन, अरणी, हलदी, दारुहलदी, आमला, अनार, गोखरू, जामन, और खस प्रत्येक दोदो तोले, पारा, गन्धक, धान्याभ्रक, इलायची, तेजपात, पद्माख, लोहा, रसौत, पाढ़, वायविडंग, सुहागा, और जीरा प्रत्येक चारचार तोले, गूगल दो तोले, सबको भलेप्रकारसे पीसकर घीमें

मिलाके सोलह सोलह रत्तीकी गोली बनालेवै, यह सोमेश्वररस श्रीमान् गहनानन्दनाथनें बड़े यत्नोंसे निर्माण कियाहै । यह सोमेश्वररस महातेजस्वीहै, तथा वातजमेह, एकदोषोंसे उत्पन्न हुआमेह, दोदोषोंसे उत्पन्न हुवामेह, तीनोंदोषोंसे उत्पन्नहुआ मेह, उपद्रवयुक्त, बहुतदिनोंका मेह, मूत्राघात, मूत्रकृच्छ्र, कामला, हलीमक, भगन्दर, उदररोग, बवासीर, अनेकप्रकारकी पिड़का, व्रण, विस्फोटक, अर्बुद, कण्डू, रक्तपित्त, अम्लपित्त, यकृत, प्लीहोदर, गुल्म, शूल, अर्श, खाँसी, और विद्रधिरोगको दूरकरैहै । बल, वर्ण, और अग्निको बढ़ानेवाला, और ग्रहबाधाको हरनेवालाहै । अनुपान–बकरीका दूध, अथवा नारियलका जल, या शीतल सिद्धतैल वा जौ आदिका यूषहै ॥

रसांजनंविडंदारुबिल्वगोक्षुरदाडिमाः ।
भूनिम्बापिप्पलीमूलंत्रिकण्टात्रिफलात्रिवृत् ॥
प्रत्येकंतोलकंदेयंलोहचूर्णन्तुतत्समम् ।
पलैकंगुग्गुलुंदत्त्वाघृतेनवटिकांकुरु ॥
माषैकानिर्मिताचेयंमेहमुद्गरसंज्ञिनी ।
श्रीमद्गहननाथेनलोकनिस्तारकारिणा ॥
अनुपानंप्रकर्त्तव्यंछागीदुग्धंजलञ्चवा ।
विंशन्मेहंनिहन्त्याशुमूत्रकृच्छ्रंहलीमकम् ॥
अश्मरीकामलापाण्डुमूत्राघातमरोचकम् ।
षडर्शांसिव्रणंकुष्ठंभगन्दरमसूरिका ॥
सुखिनेयादिकर्त्तव्यात्रिसुगन्धिसमन्विताः ॥
गोक्षुरंगोक्षुरबीजम् ।

इति मेहमुद्गरवटिका ॥

अर्थ–रसौत, विडनोन, देवदारु, बेल, गोखुरु, अनार, बकायन, पीपरामूल, बड़ीकटेरी, अग्निदौन, जवांसा, हरड़, बहेड़ा, आमला, और निसोत, प्रत्येक एकएक तोला, सबकी बराबर लोहेका चूर्ण और गूगल चार तोले लेवै, सबको एकत्र पीसकर घृतके योगसै एकएक मासेकी

गोली बनावै; इसको मेहमुद्गरवटिका कहतेहैं । यह गहनानन्द वैद्यने लोगोंको आरोग्यकरनेके लिये रचीहै । एकगोली प्रतिदिन बकरीके दूधके या जलके साथ खावै । यह गोली-वीसप्रकारके प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, हलीमक, पथरी, कामला, पाण्डुरोग, मूत्राघात, अरोचक, छै प्रकारकी बवासीर, व्रण, कुष्ठ, भगन्दर और मसूरिका रोगको दूरकरैहै । और जो यह सुखीमनुष्यके लिये बनावै तौ इसमें दालचीनी, इलायची और तेजपातका चूर्ण डालदेवै ॥

कणामधुककुष्ठैलारेणुकारजनीद्वयैः ।
समंगाशारिवालोध्रधातकीभिर्विपाचितम् ॥
शोधनंरोपणंतैलंपिडकायांप्रशस्यते ॥
कणाभिःकल्कः ।
इतिजलं चतुर्गुणम् ।

अर्थ-पीपल, मूलैठी, कूठ, इलायची, रेणुका, हलदी, दारुहलदी, मजीठ, अनन्तमूल, लोध और धायके फूल, इनके कल्कसै सिद्ध किया हुआ तैल-शोधन, रोपण और प्रमेहजनित पिड़काओंको दूरकरैहै ॥

त्रिफलामुस्तकंदारुहरिद्रादेवदारुच ।
तत्क्वाथंमतिमान्मेहान्बहुपत्ररजंजयेत् ॥

अर्थ-त्रिफला, नागरमोथा, दारुहलदी, देवदारु, इनके काढ़ेमें अभ्रकका चूर्ण डालकर पीनेसै वीसप्रकारके प्रमेह-दूरहोतेहैं ॥

लोध्रमूर्वाशठीबिल्वभार्गीकुष्ठविडंगकम् ।
प्रियंग्वतिविषावह्निभूनिम्बकटुरोहिणी ॥
चातुर्जातकयुग्मञ्चकन्दुकंचेन्द्रवारुणी ।
यवानीपुष्करंपाठाग्रन्थिचव्यंफलत्रयम् ॥
कर्षसममम्लकरसेक्वाथेपादावशेषिते ।
सुशीतलेविनिक्षिप्यतस्मिन्प्रस्थद्वयंमधु ॥
पक्षैकंरक्षयेद्भूमौसिद्धंरुद्रासनंभवेत् ।
प्रमेहार्शांसिकुष्ठानिपाण्डुत्वंग्रहणीकृमीन् ॥

अर्थ-लोध, मूर्वा, कचूर, बेल, भारंगी, कूठ, वायविडंग, फूलप्रियंगू, अतीस, चीता, चिरायता, कुटकी, चातुर्जात (इलायची, नागकेशर, तेजपात, दालचीनी) दोभाग, कन्द, इन्द्रायन, अजवायन, पोहकरमूल, पाढ़, पीपरामूल, चव्य, हरड, बहेडा, और आमला प्रत्येक दो दो तोले, आठसेर नींबू या इमलीके रसमें पकावै जब दो सेर जल शेषरहै तब उतारले, शीतल होनेपर चौसठतोले सहत मिलादेवै । फिर इसको पन्द्रह दिनतक पृथ्वीमें गाड देवै तौ रुद्रासन सिद्धहो, यह रुद्रासन-प्रमेह, बवासीर, कोढ, पाण्डुरोग, संग्रहणी और कृमिरोगको दूरकरैहै ॥

जातःप्रमेहीमधुमेहिनोवानसाध्यरोगःसहिबीजदोषात् ।
येचापिकेचित्कुलजाविकाराभवन्तितांश्चप्रवदन्त्यसाध्यान् ।

अर्थ-मधुमेहवाले मनुष्यसे उत्पन्न हुआ जो प्रमेहवान् मनुष्य उसका प्रमेह बीजके दोषके कारण साध्य नहींहै और जो जिसके कुलमें परंपरासे विकार चलेआतेहैं वहभी साध्य नहीं है ॥

इति श्रीदमायुर्वेदोद्धारकशालिग्रामवैश्यकृते रसरत्नाकरे रसचन्द्रिका-भाषायां प्रमेहचिकित्सानामकद्वादशोपदेशः ॥ १२ ॥

अथ त्रयोदशोऽध्यायः ।

अथ स्थौल्यचिकित्सामाह ।

श्रमचिन्ताव्यवायाध्वक्षौद्रजागरणप्रियः ।
हन्त्यवश्यमतिस्थौल्यंयवश्यामाकभोजनः ॥
व्यायामयुक्तोऽजीर्णाशीयवगोधूमभोजनः ।
सन्तर्पणकृतैर्दोषैःस्थौल्ययुक्तोविमुच्यते ॥
प्रशस्तश्चप्रियङ्गुश्चश्यामाकयवकायवाः ।
चूर्णकाकोद्रवायुक्तैःकुलत्थैश्चतथाहितैः ॥
आढकीनाञ्चबीजानिपटोलामलकैःसह ।
भोजनान्तेप्रशस्यन्तेपानानुष्णमधूदकम् ॥
अरिष्टांश्चानुपानार्थंमेदोमांसकफापहान् ।

अतिस्थौल्यविनाशायप्रविभज्यप्रयोजयेत् ॥
अस्वप्नश्चव्यवायश्चव्यायामंचिन्तनानिच ।
स्थौल्यमिच्छन्परित्यक्तुंक्रमेणातिविवर्द्धयेत् ॥
प्रातरभ्युषितंवारिसेवितंस्थौल्यनाशनम् ।
केचित्क्षारत्वेनकर्षणत्वात्कौपंजलमाहुः ॥
उष्णमन्नस्यमण्डंवापिबन्कृशतनुर्भवेत् ॥

अर्थ-परिश्रम, चिन्ता, मैथुन, मार्गचलना, मधुपान, रात्रिमें जागना, जौ और समेकाभोजन यह सब स्थूलताको अवश्य दूर करैहै। कसरत करनेवाला और अजीर्णमें भोजन करनेवाला मनुष्य जौ और गेहूँका भोजनकरै तौ सन्तर्पण दोषसे उत्पन्न हुई स्थूलता नष्ट होजावै। कंगनी, समा, यवक, यव, चूर्णक, और कोदौ, इन सबधान्योंका अन्न पटोल, आमला, कुलथी और अड़हरके यूषके साथ भोजनकरै, भोजनके अंतमें किंचित् गरमजलके साथ सहतको पीवै ॥

व्योषाग्नित्रिफलामुस्तविडंगंगुग्गुलुंसमम् ।
खादेत्सर्वाञ्जयेद्व्याधीन्मेदःश्लेष्मामवातजान् ॥

इति व्योषाग्निगुग्गुलुः ।

अर्थ-सोंठ, मिरच, पीपल, चीता, हरड, बहेड़ा, आमला, नागरमोथा, वायविडंग, और गूगल, इन सबको समानभागलेकर सेवन करनेसे मेद, कफ, वात, और आमवातजनित मेदरोग दूर होताहै ॥

त्रिफलातिविषामूर्वात्रिवृच्चित्रकवासकैः ।
निम्बारग्वधषड्ग्रन्थासप्तपर्णनिशाद्वयैः ॥
गुडूचीन्द्रसुराकृष्णाकुष्ठसर्षपनागरैः ।
तैलमेभिः समैःपक्कंसुरसादिरसाप्लुतम् ॥
पानाभ्यंजनगण्डूषनस्यबस्तिषुयोजितम् ।
स्थूलतालस्यकण्ठादीञ्जयेत्कफकृतान्गदान् ॥

इति त्रिफलाद्यंघृतम ।

अर्थ-तिलका तेल चारसेर,क्राथके वास्ते सुरसागणकी औषधि चौस-

ठपल, जल ५१२ पल, शेष बत्तीसपल रक्खे, और कल्कके लिये हरड, बहेडा, आमला, अतीस निसोत, चीता, अडूसा, नीम, अमलतास, वच, सतवन, हलदी, दारुहलदी, गिलोय, इन्द्रजौ, कपूरकचरी, पीपल, कूठ, सरसों और सोंठ यह सब एकसेर, सबको मिलाकर यथाविधिसे तेलको सिद्धकरै। इस तेलका पान, अभ्यंजन, गंडूष, नस्य और बस्तिमें व्यवहार करनेसै स्थूलता, आलस्य, कण्ठ, आदिके रोग और कफकृतरोग दूर होतेहैं ॥

चिंचापत्रस्वरसंम्रक्षितकल्कादियोजितंजयाति।
दुग्धहरिद्रोद्वर्त्तनमचिराद्देहस्यदौर्गन्ध्यम् ॥
तिन्तिडीपत्रस्वरसेप्रथमतःकल्कादिभक्षणंकृत्वा।
पिष्ट्वादुग्धहरिद्रोद्वर्त्तनम्?।
हरीतकीलोध्रमरिष्टपत्रचूतत्वचोदाडिमवल्कलञ्च।
एषोऽङ्गरागःकथितोऽङ्गनानांजम्ब्वाःकषायश्चनराधिपानाम्

अर्थ-इमलीके पत्तोंके रसमें कल्कादि म्रक्षण पूर्वक पीसके दूध और हरिद्राके द्वारा उद्वर्त्तन करनेसे बहुत दिनोंकी देहकी दुर्गन्ध दूर होतीहै हरड़, लोध, नीमके पत्ते, आँमकी छाल, और अनारकी छाल, इनका उबटन और जामुनका क्काथ स्त्रियोंको और राजाओंको प्रशस्तहै ॥

शुद्धसूतंसमंगंधंताम्रंतालंसमंसमम्।
अर्कक्षीरैर्दिनंमर्द्यंक्षौद्रैर्लेह्याद्विगुंजकम् ॥
पलंक्षौद्रंपलंतोयमनुपानंपिबेत्सदा।
वाडवाग्निरसोनामस्थौल्यश्चापिनियच्छाति ॥

इति वाडवाग्निरसः।

अर्थ-शुद्धपारा, गंधक, ताँबा और हरिताल, इन सबको समानभाग लेकर एक दिन आकके दूधमें खरलकर सहतमें मिला दो रत्तीभर भक्षण करै, ऊपरसे चारतोले सहत, और चारतोले जलका अनुपान करै। यह वाड़वाग्निरस स्थूलताको दूर करैहै ॥

गुग्गुलुस्तालमूलीचात्रिफलाखादिरंवृषम्।

त्रिवृतालम्बुषाचैवनिर्गुण्डीचित्रकंस्नुही ॥
एषांदशपलान्भागांस्तोयंपंचाढकेपचेत् ।
पादशेषंततःकृत्वाकषायमवतारयेत् ॥
पलद्वादशकंदेयंतीक्ष्णलोहंसुचूर्णितम् ।
पुराणसर्पिषःप्रस्थंशर्कराष्टपलान्वितम् ॥
पचेत्ताम्रमयेपात्रेसुशीतेचावतारयेत् ।
प्रस्थार्द्धंमाक्षिकंदेयंशिलाजतुपलद्वयम् ॥
एलात्वचःपलार्द्धंश्चविडंगानिपलत्रिकम् ।
मरिचंचांजनंकृष्णाद्विपलंत्रिफलान्वितम् ॥
पलद्वयन्तुकाशीशंश्लक्ष्णचूर्णीकृतंबुधैः ।
चूर्णंकृत्वासुमथितंस्निग्धभांडेनिधापयेत् ॥
ततःसंशुद्धदेहस्तुभक्षयेदक्षमात्रकम् ।
अनुपानंपिबेत्क्षीरंजांगलानांरसंतथा ॥
वातश्लेष्महरंश्रेष्ठंकुम्भमेहोदरापहम् ।
कामलापाण्डुरोगञ्चश्वयथुंसभगन्दरम् ॥
मूर्च्छामोहविषोन्मादगराणिविविधानिच ।
स्थूलानांकर्षणंश्रेष्ठंमेदुरेपरमौषधम् ॥
कर्षयेच्चातिमात्रेणकुक्षिपातालसन्निभाम् ।
बल्यंरसायनंमेध्यंवाजीकरणमुत्तमम् ॥
श्रीकरंबुद्धिजननंवलीपलितनाशनम् ।
नाश्नीयात्कदलीकन्दंकांजिकंकरमर्दकम् ॥
करीरंकारविल्वञ्चपट्ककाराणिवर्जयेत् ॥

इति लोहरसायनम् ।

अर्थ–गूगल, मुसली, हरड़, बहेड़ा, आमला, खैर, अडूसा, निसोत, गोरखमुण्डी, सम्हालू, चीता, और थूहर, यह प्रत्येक दश दश पल लेकर

पाँच आढ़क जलमें पकावै, जब जल सवा आढ़क शेष रहै तब उतारकर छान लेवै, पश्चात् इसमें बारह पल लोहेका चूर्ण सोलह पल पुराना घी, और आठ पल बूरा मिलाकर ताँबेके वासनमें पकावै, शीतल होनेपर उतारले। फिर इसमें सोलह तोले सहत आठ तोले शिलाजीत, दो तोले दालचीनी, दो तोले इलायची, बारह तोले वायविडंग, काली मिरच, रसौत, पीपल और त्रिफला, प्रत्येक दो दो पल, और दो पल कसीस, इन सबका चूर्ण मिलाकर करछीसे एकमएक करले, फिर इसको चिकने वासनमें भरके रखदेवै। पश्चात् वमन विरेचनादिके द्वारा शुद्ध होकर इसमेंसे दो तोले खावै, ऊपरसे दूध और जांगल देशकी जीवोंके मांसके रसका अनुपान करै। यह वातश्लेष्म, कुष्ठ, प्रमेह, उदररोग, कामला, पाण्डुरोग, सूजन, भगन्दर, मूर्च्छा, मोह, विषोन्माद, अनेक प्रकारके विषविकार, स्थूलता, इनको दूर करै है और मेदरोगकी परम औषधि है। बलकारक, रसायन, मेधाजनक, उत्तम वाजीकरण, लक्ष्मीको बढ़ानेवाली और वलीपलितनाशक है। इस लोह रसायनके ऊपर केला, कन्द, कांजी, करौंदा, करिल, करेला यह छै ककार छोड देवै ॥

विडंगनागरक्षारकाललौहरजोमधु ।
यवामलकचूर्णञ्चप्रयोगःस्थौल्यनाशनः ॥

काललौहवज्रादिजारितपुटितंसर्वेषांसमभागमितिनिश्चलकरः । लौहस्यमहावीर्यत्वेनप्राधान्यान्मिलितसर्वचूर्णसमत्वंयुक्तमिति त्रिविक्रमदेवः ।

मधुनावलेहः ।

इति विडंगादिलौहम् ।

अर्थ-वायविडंग, सोंठ, जवाखार, जौ और आमला, यह सब समान भाग और सबकी बराबर लोहेका चूर्ण लेवै, सबको एकत्र पीसकर सहतके साथ सेवन करनेसे स्थूलता नष्ट होती है ॥

त्र्यूषणंत्रिफलाचव्यंचतुर्लवणमभ्रकम् ।
वागुजीलौहचूर्णञ्चभक्षयेन्मधुसर्पिषा ।
परंस्थौल्यहरंवह्निबलवर्णविवर्द्धनम् ।

श्रेष्ठंरसायनंमेहकुष्ठघ्नंयन्त्रणांविना ॥
चतुर्लवणंकडकचांविनासर्वचूर्णसमम् ।
लौहंनवायसादिवत्क्रिया ।
इति त्र्यूषणादिलौहम् ।

अर्थ—सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेड़ा, आमला, चव्य, सैंधानोन, कालानोन, विडनोन, समुद्रनोन अभ्रक, बापची, यह सब समान भाग, और सबकी बराबर लोहेका चूर्ण, इन सबको एकत्र पीसकर सहत और घीकेसाथ सेवनकरै । यह—स्थौल्यताको दूरकरैहै, अग्निको बढानेवाला, बलवर्णवर्द्धक, श्रेष्ठ, रसायन; तथा मेह और पीडारहित कुष्ठको हरैहै ॥

त्रिकत्रयत्रिवृद्दन्तीशशीभल्लातकानिच ।
लौहंस्थौल्यंनिहन्त्याशुमहावायुरिवाम्बुदम् ॥
त्रिकत्रयंपूर्वोक्तंशशीकर्पूरम् ॥
इति त्रिकत्रयाद्यंलौहम् ।

इति स्थौल्याधिकारः ॥

अर्थ—हरड, बहेडा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल, नागरमोथा, वायविडंग, चीता, निसोत, दन्ती, कपूर और भिलावा, यह सब समानभाग, और सबकी बराबर लोहेका चूर्ण लेवै, सबको एकत्र पीसकर सेवनकरनेसै स्थूलता दूरहोतीहै ॥

इतिस्थौल्याधिकारः ॥

अथोदरचिकित्सामाह ।

सर्वमेवोदरंप्रायोदोषसंहतिजंमतम् ।
अतोवातादिशमनीक्रियासर्वाप्रशस्यते ॥
वह्निमन्दत्वमायातिकुक्षौदोषप्रपूरिते ।
अजीर्णान्मलिनैश्चान्नैर्मन्दाग्नौमलसंचयात् ॥
रुद्ध्वास्वेदाम्बुवाहीनिजनयत्युदरंनृणाम् ।
आध्मानमामताव्यश्चगतिरल्पाकृशाङ्गता ॥

शोथःसदनमंगानांदाहस्तन्द्राविवर्णता।
संगोविड्वातपद्भ्याञ्चश्वयथुश्चाशुलक्षणम्॥

इति पूर्वरूपम्।

अर्थ-सर्वप्रकारके उदररोग दोषोंके संचय होनेसै होतेहैं, इसकारण इसमें वातादि त्रिदोषोंको शान्तकरनेवाली चिकित्साकरै। वातादि दोष कोखमें पूरित होजानेसै अग्नि मंद होतीहै, वह मंदाग्नि अजीर्णसै, मलिन अन्न भक्षण करनेसै, और मलसंचयसे, स्वेदवह अम्बुवह स्रोतोंको रोक करके उदररोगको उत्पन्न करतीहै। आध्मान; आमता, अल्पगति, कृशाङ्गता, शोथ, अवसन्नता, दाह, तन्द्रा, विवर्णता, मलरोध, अधोवायुका रोध, और पैरोंमें सूजन, यह सब उदररोगके पूर्व लक्षण है॥

वातोदरीपिबेत्तक्रंपिप्पलीलवणान्वितम्।
शर्करामरिचोपेतंस्वादुपित्तोदरीपिबेत्॥
यवानीसैन्धवाजाजीव्योषयुक्तंकफोदरी।
पिबेन्मधुयुतंतक्रंव्यक्ताम्लंनातिपेलवम्॥

नातितनु।

मधुतैलवचाशुण्ठीशताह्वाकुष्ठसैन्धवैः।
युक्तंप्लीहोदरीजातंसव्योषन्तूदकोदरी॥
बद्धोदरीतुहपुषादीप्यकाजाजिसैंधवैः।
पिबेच्छिद्रोदरीतक्रंपिप्पलीक्षौद्रसंयुतम्॥
त्र्यूषणक्षारलवणैर्युक्तंत्रैदोषिकोदरी॥

अर्थ-वातोदररोगी पीपलका चूर्ण और सैंधानोन मिलाकर तक्र पीवै। पीत्तोदररोगी शर्करा और कालीमिरचोंका चूर्ण डालकर तक्र पान करै। कफोदररोगी अजवायन, सैंधानेन, जीरा और त्रिकुटेका चूर्ण तथा सहत मिलाकर खट्टा तक्र पीवै। प्लीहोदररोगी सहत, तेल, वच, सोंठ, सौंफ, कूठ और सैंधानोन मिलाकर तक्रपान करै। जलोदररोगी त्रिकुटेका चूर्ण मिलाकर तक्र पीवै। बद्धोदर रोगी हाऊबेर, अजवायन, जीरा और सैंधेनोनका चूर्ण डालकर तक्र पीवै। छिद्रोदररोगी पीपलका चूर्ण और सहतके साथ तक्र पीवै।

और सन्निपातोदररोगी त्रिकुटा, जवाखार, और सैंधानोन डालकर तक्रपान करै ॥

सामुद्रसौवर्चलसैन्धवानिक्षारंयवानीमजमोदकञ्च ।
सपिप्पलीचित्रकशृंगवेरंहिंगुंविडंचेतिसमानिकुर्यात् ॥
एतानिचूर्णानिघृतप्लुतानिभुंजीतपूर्वंकवलंप्रशस्तम् ।
वातोदरीगुल्ममजीर्णयुक्तंवायुप्रकोपंग्रहणीञ्चदुष्टाम् ॥
अर्शांसिदुष्टानिचपाण्डुरोगंभगन्दरांश्चैवनिहन्तिसद्यः ॥

इति सामुद्रादिचूर्णम् ।

अर्थ-समुद्रनोन, कालानोन, सैंधानोन, जवाखार, अजवायन, अजमोद, पीपल, चीता, अदरख, हींग, और विडनोन, यह सब औषधि समान भाग लेकर चूर्ण करले, इस चूर्णको घीमें मिलाकर भोजनके पहिले ग्रासमें भक्षण करै। इससे वातोदर, गुल्म, अजीर्णादि नानाप्रकारके रोग, वायुप्रकोप, दुष्टसंग्रहणी, दुष्टबवासीर, पाण्डुरोग और भगंदर रोग दूर होता है ॥

पित्तोद्भवेतुबलिनंपूर्वमेवविरेचयेत् ।
अथवानिर्बलंक्षीरबस्तिशुद्धंविरेचयेत् ॥

अर्थ-पित्तोदर रोगी जो बलवान् होय तौ प्रथम जुल्लाव देवै, और जो निर्बल होय तौ क्षीरबस्तिके द्वारा दस्त करावै ॥

यवानीहपुषाधान्यात्रिफलासोपकुंचिका ।
कारवीपिप्पलीमूलमजगंधाशठीवचा ॥
शताह्वाजीरकंव्योषंस्वर्णक्षीरीचचित्रका ।
द्वौक्षारौपौष्करंमूलंकुष्ठंलवणपंचकम् ॥
विडंगंचसमांशानिदन्त्याभागत्रयंतथा ।
त्रिवृद्विशालेद्विगुणेसातलास्याच्चतुर्गुणा ॥
एतन्नारायणाख्यंचचूर्णंरोगगणापहम् ।
नैनत्प्राप्यातिवर्त्तन्तेरोगाविष्णुमिवासुराः ॥

तक्रेणोदरिभिःपेयोगुल्मिभिर्बदराम्बुना।
आनद्धवातेसुरयावातरोगेप्रसन्नया॥
दधिमण्डेनविट्संगेदाडिमाम्बुभिरर्शसिः।
परिकर्त्तेचवृक्षाम्लैरुष्णाम्बुभिरजीर्णके॥
भगंदरेपाण्डुरोगेश्वासेकासेगलग्रहे।
हृद्रोगेग्रहणीरोगेकुष्ठेमन्देऽनलेज्वरे॥
दंष्ट्राविषेमूलविषेसागरेकृत्रिमेविषे।
तथार्हस्निग्धकोष्ठेनपेयमेतद्विरेचनम्॥

इति नारायणचूर्णम्।

अर्थ–अजवायन, हाऊबेर, धनिया, त्रिफला, कलौंजी, कालाजीरा, पीपरामूल, वनतुलसी, कचूर, वच, सोया, जीरा, सोंठ, मिरच, पीपल, सत्यानाशी, कटेरी, चीता, जवाखार, सज्जी, पोहकरमूल, कूठ, पाँचोंनोन, और वायविडंग, सब समान भाग, दन्ती तीन भाग निसोत दो भाग, इन्द्रायन दो भाग, और सातला चार भाग, इन सबको एकत्र पीसकर बारीक चूर्ण करले। यह नारायणनामवाला चूर्ण सर्व रोगोंको नष्ट करै है। इसको तक्रके साथ सेवन करनेसे उदर-रोग, बेरके काढ़के साथ सेवन करनेसै–गुल्मरोग, सुराके साथ सेवन करनेसे--आनद्धवात, प्रसन्नानामवाली मदिराके साथ पीनेसै–वात-रोग, दधिमंडके साथ सेवन करनेसै–मलबद्धता, अनारके रसके साथ सेवन करनेसै–बवासीर, विषांविल नीबूके रसके साथ सेवन करनेसै–परिकर्त्तिका (उदरमें कतरनीकी समान पीडा) और प्रथम स्निग्ध कोष्ठ करके गरम जलके साथ सेवन करनेसै– अजीर्ण, भगन्दर, पाण्डुरोग, श्वास, खाँसी, गलग्रह, हृदयरोग, संग्रहणी, कोढ, मन्दाग्नि, ज्वर, जंगमविष, स्थावर विष, और कृत्रिम विष, यह सब रोग दस्त होकर दूर होजातेहैं॥

पुनर्नवानिम्बपटोलशुण्ठीतिक्तामृतादार्वभयाकषायः।
सर्वांगशोथोदरकासशूलश्वासान्वितंपाण्डुगदंनिहन्ति॥

अर्थ–पुनर्नवा, नीम, पटोल, सोंठ, कुटकी, गिलोय, देवदारु, और,

कालाजीरा, कपूर, सोंठ, भारंगी, कालीमिरच, अमलवैत, मंडूर, हरड़, सोंठ, दालचीनी, इलायची, नागकेशर, तेजपात, करंज, अमलतास, पाचोंनोन, सैजिनेकी छाल और जड़, इन्द्रायनके पत्ते, इमली, तिलकांड, तालमखाना, और चिरचिटा इन छहों औषधियोंका खार, यह सब समानभाग लेकर बारीक चूर्ण पीस विजोरे नीबूके रसकी तीन भावना देवै, फिर नागरमोथेके काढ़ेकी तीन भावना देवै, पश्चात् अदरखके रसकी तीन भावना देवै तौ बृहदग्निमुख नामवाला चूर्ण तैयार हो। मात्रा दो तोलेकी। अनुपान-गोमूत्र या सुरा अथवा कांजी है. यह साध्यासाध्य उदररोग, और त्रिदोषज गुल्मरोगको नष्ट करै है ॥

शुद्धसूतंद्विधागंधंमृताभ्रंसैन्धवंविषम्।
कृष्णजीरंविडंगञ्चगुडूचीसत्वमेवच ॥
वचाचैवयवक्षारंप्रत्येकंस्याद्रसार्द्धकम्।
निर्गुण्डिकाद्रवैश्चाह्निबीजपूररसैर्दिनम् ॥
मर्द्दयेच्छोषयेत्सोऽयंरसस्त्रैलोक्यसुन्दरः।
गुंजाद्वयंघृतेलेह्यंवातोदरकुलान्तकम् ॥
पलैकंचित्रकंश्लक्ष्णंद्विगोमूत्रशकृज्जलैः।
पाच्यंपादावशेषञ्चघृतप्रस्थंविपाचयेत् ॥
पलैकञ्चयवक्षारंपिष्ट्वापक्त्वावतारयेत्।
तत्कार्षिकंपिबेच्चानुस्निग्धमुष्णञ्चभोजयेत् ॥

इति त्रैलोक्यसुन्दररसः।

अर्थ-शुद्धपारा एकभाग, गंधकदोभाग, और सैंधानोन, अभ्रककी भस्म, मीठा, कालाजीरा, वायविडंग, गिलोयका सत्व, वच और जवाखार, प्रत्येक १॥ डेढ़भाग, इन सबका बारीक चूर्णकर एक दिन सम्हालूके रसमें और एकदिन विजौरे नीबूके रसमें खरलकर सुखालेवै तौ त्रैलोक्यसुन्दर रस तैयार हो। इसको दो गुंजाभर घृतके साथ खावै, इससे वातोदर दूर होताहै। घृत दोसेर, गोमूत्र चारसेर, गोबरका रस चार सैर, और कल्कके लिये चीतेकी जड़का चूर्ण चार तोले और जवा-

खार चार तोले । सबको मिलाकर घृत सिद्धकर त्रैलोक्यसुन्दर रसपै अनुपान करै ॥

रसेनताम्रायसभस्मगंधंशिलाहरिद्राजयपालतुल्यम् ।
शिलाजतुंटंकणकञ्चसर्वंविमर्द्यसम्यक्परिभावयेच्च ॥
निर्गुण्डिकात्र्यूषणभृंगराजाचित्राकेतोयेनादिनप्रमाणम् ।
क्काथेननिम्बस्यदिनप्रमाणंसिद्धोरसःस्यादुदरारिसंज्ञः ॥
यथाशनिर्भूधरपक्षपातितथारसोऽयंह्युदरंनिहन्ति ॥

इति उदराररिसः ।

अर्थ-पारेकी भस्म, ताँबेकी भस्म, लोहेकी भस्म, गंध, मैनशिल, हलदी, जमालगोटा, शिलाजीत, और सुहागा, यह सब समानभाग लेकर बारीक चूर्ण बना सम्हालू, सोंठ, मिरच, पीपल, भांगरा, चीता, और आकके रसमें एकदिन खरल करै फिर नीमके काढ़ेमें एकदिन खरल करै तौ उदरारिनामवाला रस तैय्यार हो । जैसे वज्र पर्वतोंके शिखरोंको तोड़ डालताहै वैसेही यह उदरारि रस उदररोगोंको नष्ट करता है ॥

शुद्धसूतंसमंगंधंमृतायःसशिलाजतु ।
रसमानंप्रकर्त्तव्यंरसस्यद्विगुणंविषम् ॥
त्रिकटुश्चित्रकंकुष्ठंनिर्गुण्डीमुसलीरजः ।
अजमोदादशांशेनप्रत्येकञ्चप्रकल्पयेत् ॥
पंचांगनिम्बक्काथेनभावनाचैकविंशतिः ।
भृंगराजरसेसप्तदत्त्वाक्षौद्रेणलोडयेत् ॥
भक्षयेद्वदरीमात्रांवटिकांतांदिवानिशि ।
श्लेष्मोदरंनिहन्त्याशुनाम्नावैश्वानरीवटी ॥
देवदारुवह्निमूलकल्कंक्षीरानुपाययेत् ।
भोजनंव्योषदुग्धंचकुलत्थेनरसेनवा ॥

इति वैश्वानरी वटी ।

अर्थ-शुद्धपारा, शुद्धगन्धक, लोहेकीभस्म, और शिलाजीत, यह सब समानभाग, मीठा दो भाग, सोंठ, मिरच, पीपल, चीता, कूठ, सम्हालू,

मुसली, और अजमोद, यह प्रत्येक औषधि दशांशभाग लेवै, सबका बारीक चूर्णकर पंचांगनिम्ब (नीमके फल, फूल, पत्र, मूल, छालके) क्वाथमें इक्कीस भावना देवै, पश्चात् भांगरेके रसमें सातभावना देवै, फिर इसमें सहत मिलाकर बेरकी बराबर गोली बनालेवै, एकगोली रातमें तथा दिनमें भक्षण करै तौ कफोदर दूर होवे, इसको वैश्वानरवटी कहते हैं, अनुपान-देवदारु और चीतेकी जड़का कल्क दूधके साथ। त्रिकुटेका चूर्ण, दूध और कुलथीके रसके साथ भोजन करै ॥

रसेनगंधद्विगुणंशिलाचशिलाचबीजंजयपालकस्य ।
फलत्रयंत्र्यूषणकश्चचित्रंसर्वंविचूर्ण्यापिविभावयेच्च ॥
दन्तीस्नुहीभृंगरसेपृथक्चसंभाव्यसंशोष्यचसप्तवारान् ।
वयोबलंवीक्ष्यमिदंददीतजातेविवेकेचददीतपथ्यम् ॥
अल्पंसतक्रंशिशिरानुपायीजातेबलेतत्पुनरेवदद्यात् ।
तक्रेणरोगाःसमुपैतिशान्तिंसिद्धोरसोनामजलोदरारिः ॥

इति जलोदराररसः ।

अर्थ-पारा एकभाग, गंधक दोभाग, मैनशिल दोभाग, हलदी दो भाग, जमालगोटा दो भाग, हरड़ दो भाग, बहेडा, दो भाग, आमला दोभाग, सोंठ दोभाग, मिरच दोभाग, पीपल दोभाग, और चीता दो भाग, इन सबका बारीक चूर्णकर, दन्ती, थूहर और भांगरेके रसमें पृथक् पृथक् सात भावना देकर सुखालेवै। अवस्था और बलको विचारकर इस रसको सेवनकरै। अनुपान थोड़ासा तक्र और शीतल जलहै। यह जलोदरारि सिद्धरस तक्रके साथ शीघ्रही जलोदररोगको नष्टकरैहै ॥

हिंगुत्रिकटुत्रिफलादेवदारुनिशाद्वयम् ।
भल्लातकंशिग्रुफलंकटुकींचविकांवचाम् ॥
शुण्ठीतुल्यंपंचपटुतुल्यंदध्नाविपेषयेत् ।
अन्तर्धूमगतोदग्धःक्षारोयंवडवानलः ॥
त्रिदिनंमदिरायुक्तंपिबेद्वाकांजिकैःसह ।
मंदोष्णेनाथवापेयमुदरंगुल्मशूलनुत् ॥

इति वडवाग्निमुखरसः ।

अर्थ-हींग, त्रिकुटा, त्रिफला, देवदारु, हलदी, दारुहलदी, भिलावा, सैजिनेके बीज, कुटकी, चव्य, वच, सोंठ, पाँचोंनोन, यह सब समानभागलेवै, और सबकी बराबर दही लेवै, इन सब औषधियोंको दहीमें पीसकर अन्तर्धूममें दग्धकरै तौ बडवानलनामवाला क्षार सिद्धहो । इसको तीनदिन मदिराके साथ या कांजीके साथ अथवा शृतशीत जलके साथ सेवनकरै तौ उदररोग, गुल्म, और शूल नष्ट होताहै ॥

शुद्धसूतंसमंगंधंशुद्धतालंमनःशिला ।
तुल्यांशंचैत्रकंमूलंयवमासूरजैर्द्रवैः ॥
जम्बीरैश्चतथामर्द्यंतद्गोलंग्रावसंपुटे ।
रुद्धाबहिर्माषपिष्टैस्तयोर्लेप्यश्चसंपुटम् ॥
गोधूमपिष्टिकावाथविलिप्यावस्त्रमृत्तिका ।
विशोष्यपाचयेद्यन्त्रेद्विषडयामंसुवालुके ॥
क्रमवृद्ध्याग्निनापाच्यंस्वांगशीतंसमुद्धरेत् ।
दशमांशंविषंदत्त्वाविषांशंमृतताम्रकं ॥
ज्वालामुख्याद्रवैःसर्वंभावयित्वात्रिसप्तधा ।
त्र्यूषणश्चसजीराद्रद्रवैर्भाव्यंत्रिसप्तधा ॥
रसोह्यग्निकुमारोऽयंसेव्यंगुंजाद्वयंसदा ॥
ताम्बूलपत्रसंयुक्तमुदरंवातगुल्मजित् ।
काकजंघाकषायश्चह्यनुपानंसदापिबेत् ॥

इति अग्निकुमाररसः ।

अर्थ-शुद्धपारा, शुद्धगंधक, शुद्धहरिताल, शुद्धमैनशिल, और चीतेकी जड, इन सबको समानभाग लेकर यव और मसूरके क्वाथमें तथा जम्भीरीनीबूके रसमें खरलकर गोला बनालेवै, उस गोलेको पत्थरके सम्पुटमें रख ऊपरसे उड़दोंकी पिट्ठीका लेपकर बन्दकर देवै, अथवा गेहूंकी पिट्ठीसे लेपकर कपरौटी करै फिर सुखाकर आठ प्रहरतक वालुकायंत्रमें पकावै, क्रमसे बढ़ाकर अग्नि देवै, स्वांगशीतल होजानेपर निकालकर चूर्णकरले, फिर इसमें दशमाभाग विष, विषका चौथा

भाग मराहुआ तांबा मिलाकर कलिहारिके रसमें इक्कीसवार भावना देवै तौ अग्निकुमाररस सिद्धहो. इसको निरन्तर पानमें रखकर दो गुंजाभर खावै और ऊपरसै काकजंघाका अनुपान करै इससै वातगुल्म दूर होताहै ॥

चतुःसूतस्यगंधाष्टौरजनीत्रिफलाशिला ।
प्रत्येकंस्याद्विभागेनत्रिवृज्जैपालचित्रकम् ॥
प्रत्येकश्चैकभागंस्यात्त्र्यूषणंजीरदन्तिका ।
प्रत्येकमष्टभागंस्यात्श्लक्ष्णीकृत्यविचूर्णयेत् ॥
जयन्तीस्नुकपयोभृंगीतथाचैरण्डतैलकैः ।
प्रत्येकेनक्रमाद्भाव्यंसप्तवारंपृथक्पृथक् ॥
वह्निवीर्यरसोनामनिष्कमुष्णजलैःपिबेत् ।
विरेचनंभवेत्तेनतक्रभक्तंससैन्धवम् ॥
दिनान्तेदापयेत्पथ्यंवर्जयेच्छीतलंजलम् ।
नाभ्युत्तरेजलंस्राव्यंकुर्याद्धस्तिजलोदरम् ॥

इति वह्निवीर्य्योरसः ।

अर्थ–पारा चारभाग, गंधक आठभाग, हलदी, हरड,बहेड़ा, आमला, मैनशिल, प्रत्येक एक एकभाग, निसोत एकभाग, जमालगोटा एकभाग, चीता एकभाग, सोंठ, मिरच, पीपल, जीरा, दन्ती, प्रत्येक आठ आठ भागलेकर सबका बारीक चूर्ण करले, फिर इसको अरणी, थूहर, और भांगरेके रसकी तथा अण्डीके तेलकी पृथक् पृथक् सात भावना देवै तौ वह्निवीर्य नामवाला रस सिद्धहो, इसको चारमासेभर गरम जलके साथ सेवनकरनेसे जुल्लाब होजाताहै । दिनके अंतमें तक्र और सैंधनोनके साथ भात भोजनकरै । इसके ऊपर शीतल जल कदापि न पीवै । इसके सेवन करनेके पश्चात् नाभीकी उत्तरकी ओर जलस्राव करै । इससै जलोदररोग दूर होताहै ॥

गंधकंपारदंशुद्धंत्र्यूषणंजीरकद्वयम् ।
शठीशृंगीयवानीचपुष्करंरामठंतथा ॥

सैन्धवंयावशूकश्चटंकणंगजपिप्पली ।
जातीकोषाजमोदाचवचायासलवंगकौ ॥
धौतूरंकानकंबीजंकट्फलंचव्यकन्तथा ।
प्रत्येकंतोलकंचैषांश्लक्ष्णचूर्णानिकारयेत् ॥
पाषाणेविमलेपात्रेघृष्टंपाषाणमुद्गरैः ।
बिल्वमूलरसंदत्त्वाअर्कचित्रकदन्तिका ॥
शिखरीफंजिकावासानिर्गुण्डीगणिकारिका ।
धत्तूरंकृष्णजीरंचपारिभद्रकापिप्पली ॥
कण्टकार्यार्द्रकंतत्रमूलान्येतानिचाहरेत् ।
एवंमूलरसंदत्त्वाघृष्टमातपशोषितम् ॥
गुंजाप्रमाणवटिकांकारयेच्चचिकित्सकः ।
ततश्चतुर्वटींखादेन्नित्यमार्द्रकसंयुताम् ॥
उष्णतोयानुपानंचसर्वव्याधिनियच्छति ।
विंशतिंश्लैष्मिकांश्चैवसन्निपातान्सुदारुणान् ॥
प्रमेहान्विंशतिंचैवपंचगुल्मंतथापरम् ।
उदराष्टकदुर्नामआमवातंविनाशयेत् ॥
पंचपाण्ड्वामयान्हन्तिक्रिमिस्थौल्यामयापहा ।
यथाशुष्केंधनेवह्निस्तथाचाग्निविवर्द्धनम् ॥
श्लेष्मशैलेन्द्ररुद्रोऽयंरसेन्द्रःपरिकीर्त्तितः ॥

इति श्लेष्मशैलेन्द्ररसः ।

अर्थ–शुद्धगंधक, शुद्धपारा, सोंठ, मिरच, पीपल, जीरा, कालाजीरा, कचूर, काकडाशिंगी, अजवायन, पोहकरमूल, हींग, सैंधानोन, जवाखार, सुहागा, गजपीपल, जायफल, अजमोद, वच, जवासा, लौंग, कनक धतूरेके बीज, कायफल, और चव्य, प्रत्येक एकएक तोलालेकर सबका बारीक चूर्णकर उत्तमपत्थरके खरलमें डालकर पत्थरकी मूसलीसै खरलकरै, फिर इसमें बेलकी जडका रस, आक, दन्ती, पुनर्नवा,

भारंगी, अडूसा अरणी, कालाजीरा, पारिभद्र, पीपल, कटेरी, और अदरख, इन सबकी जडका रस डालकर घोटे फिर धूपमें सुखाकर चौटलीकी बराबर गोली बनाले, प्रतिदिन चारगोली अदरखके रसके साथ खावै, और ऊपरसै गरमजलका अनुपानकरै, इससै सर्वप्रकारके रोग, वीसप्रकारके प्रमेह, दारुणसन्निपात, २० प्रकारके कफरोग, पाँच-प्रकारके गुल्म, आठप्रकारके उदररोग, बवासीर, आमवात, पांचप्रकारके पाण्डुरोग, कृमिरोग, और स्थौल्यरोगको दूर करताहै। जिसप्रकार सूखे काष्ठमें अग्नि बढ़तीहै, उसीप्रकार यह श्लेष्मशैलेन्द्ररुद्ररस अग्निको बढावैहै ॥

विडंगंदाडिमंकुष्ठंनिम्बत्वग्दहनंवचा।
त्र्यूषंपाठादेवदारुनिशाव्याघ्रनखाभया॥
बिल्वकंरोहिणीचैलात्रिवृत्प्रत्येककार्षिकम्।
जैपालबीजचूर्णंचदन्तीमूलंपलंपलम्॥
ब्रह्मदण्डीरसप्रस्थंपलमाज्यंपुरातनम्।
पूर्वकल्कयुतंपाठ्यंमृद्वग्निनासुपाचितम्॥
भक्षयेद्बदराकारांनित्यंब्रह्मवटींशुभाम्।
चतुःषष्ट्युत्तरव्याधीन्साध्यासाध्यान्निहन्त्यलम्॥

इति ब्रह्मवटी।

अर्थ-वायविडंग, अनार, कूठ, नीमकीछाल, चीता, वच, सोंठ, मिरच, पीपल, पाढ़, देवदारु, हलदी, व्याघ्रनख, हरड़, बेल, कुटकी, इलायची, और निसोत, प्रत्येक दो दो तोले, जमालगोटेका चूर्ण, और दन्तीकी जड़, प्रत्येक चार चार तोले, ब्रह्मदंडीका रस चौसठ तोले, पुरानाघी चार तोले, इन सबको मिलाकर मृदु अग्निसे पकावै, पश्चात् बेरकी बराबर गोलियें बना लेवैं, इनको ब्रह्मवटी कहतेहैं। प्रति-दिन एक गोली खावै, इससै चौसठ प्रकारकी साध्यासाध्य उत्तर व्याधि नष्ट होती है॥

स्नुह्यर्कदन्तीधववह्निफञ्जीशोथारिपाशीशनकन्दकन्दः।

जामातृपालिन्धीमाणाग्निबाणावंडांगतालंखरमंजरीकः ॥
प्रत्येकशःक्षीरचतुष्पलांशस्तथापलाशस्यसमैःसमःस्यात् ।
चतुर्गुणेक्काथजलाष्टशेषेपचेद्विधिज्ञोविधिशुद्धलौहम् ॥
चूर्णीकृतंतत्पुटितंपुटेनतन्तुच्युतंषोडशिकंपलानाम् ।
वर्षाभुभल्लातकवह्निदन्तीत्रिवृद्गवाक्षीरविबुद्धमूलम् ॥
कंचुकीतालमूलीचपीवरीगिरिकार्णिका ।
नीलिनीचबृहत्पत्रंशम्याकबलमासनम् ॥
चतुष्पलांशंक्कथिताष्टशेषंस्नुह्यर्कदुग्धेनपलाष्टकेन ।
दत्त्वापचेत्ताम्रमयेचपात्रेपलैर्द्विरष्टहविषस्तथैव ॥
अमूनिचूर्णानिचसिद्धशीतेक्षिपेत्तथालौहरजःसमानि ।
लवणानिचसर्वाणिक्षाराःपंचोषणानिच ॥
मरिचंचाजमोदाचहिंगुभल्लातकानिच ।
चित्रकस्तालमूलीचगवाक्षीत्रिवृतामृता ॥
वर्षाभूशूरणोमाणोविडंगंदन्तिग्रन्थिकम् ।
पलंमाक्षिकचूर्णस्यकंगुष्ठस्यशिलाजतोः ॥
गुग्गुलोर्गन्धकस्यापिपारदस्यपलंपृथक् ।
शीतेपलाष्टकंक्षौद्रंदत्त्वामधुघृतान्वितम् ।
लौहचूर्णेनसंघृष्यलौहपात्रेचिरंभिषक् ॥
विधिज्ञोक्तेनविधिनाहिताहारविहारवान् ।
अनुपानंतथासात्म्यंकुर्वन्नित्यंनिरामयः ॥
उदरेषुचसर्वेषुशोथेषुविविधेषुच ।
अर्शोरोगविशेषेणगुल्मपाण्डौसकामले ॥
विधिनोक्तेनकुर्वाणोनरोरोगान्नविन्दति ॥

वन्हिर्भल्लातकम्।
सोथारिः पुनर्नवा।

अर्थ—थूहर, आक, दन्ती, धा, भिलावा, भारंगी, पुनर्नवा, वरना, चर्मकाराळु, वनजमीकन्द, हुलहुल, करियावासाऊ, मान कंद, चीता, शान्ता, पियावाँसा, चिरचिटा, और ढाक, प्रत्येकका क्षार, चार चार पल लेकर, चौगुने जलमें पकावै, जब आठमाभाग जल शेष रह जाय तब उतारले, पश्चात् शुद्ध लोहेको अग्निमें पकाकर वारंवार इस क्षार जलमें बुझाकर जारण करै। फिर पुनर्नवा, भिलावा, चीता, दन्ती निसोत, गोरक्षककड़ी, आककी जड, क्षीरकंचुकी, मुसली, सतावर, अपराजिता नीलकावृक्ष, वटपत्र, अमलास. खिरैटी और विजयसार प्रत्येक औषधि चार पल, जल सबसै चौगुना लेव, सबको मिलाकर औटावै, जब जल आठमा भाग शेष रहै तब उतार लेवै, फिर इस काथमें थूहरका दूध चार पल, आकका दूध चार पल, और गायका घी सोलहपल भिलाके ताँबेके पात्रमें पकावै, जब गाढ़ा होजाय तब पूर्वोक्त लोहको चूर्ण १६ पल, पाँचोंनोन, त्रिक्षार, पंचकोल, मिरच, अजमोद, हींग, भिलावा, चीता, मुसली, गोरखककडी, निसोत, गिलोय, पुनर्नवा, जमीकन्द, मानकन्द, वायविडंग, दन्तीकी जड, और पीपलामूल प्रत्येक-का चूर्ण एक पल, सोनामाखीका चूर्ण, मुरदासिंग, शिलाजीत, गूगल; गंधक, और पारा, प्रत्येक एक पल. शीतल होनेपर आ; पल सहत मिला देवै, सहत, घृत, और लोहेके चूर्णके साथ लोहेके पात्रमें घिस-कर उत्तम वासनमें भरके रखदेवै। मात्रानुसार सेवन करै। इसके ऊपर हित आहार और विहार करै। यथायोग्य अनुपान करै। इससै मनुष्य नीरोग हो जातेहैं। यह—सर्वप्रकारके उदररोग, विविध प्रकारके शोथ-रोग, अर्शरोग, गुल्म, पाण्डुरोग, और कामलादि रोगोंको दूर करैहै॥

गुल्मरामठटंकानिसैन्धवंधान्यजीरके।
यवानीमारिचंशुण्ठीलवंगैलाविडंगकम्॥
प्रत्येकंतोलकंचूर्णंलौहचूर्णन्तुतत्समम्।
रसस्यगंधकस्यापिपलैकंकज्जलीशुभा॥
घृतेनमधुनाखाद्योरसोवह्निकुमारकः।

यकृत्प्लीहोदरानाहंहन्तिगुल्मंहलीमकम् ॥
बलवर्णाग्निजननःकान्तिपुष्टिविवर्द्धनः ।
मासमेकंप्रकर्त्तव्यंयुक्त्यावात्रुटिवर्द्धनम् ॥
श्रीमद्गहननाथेनरचितोविश्वसंपदि ॥

इति वह्निकुमाररसः ।

अर्थ-गठिवन, हींग, सुहागा, सेंधानोन, धनिया, जीरा, अजवायन, कालीमिरच, सोंठ, लोंग, इलायची और वायविडंग, प्रत्येक एक एक तोला लेकर सबका बारीक चूर्ण करले, और लोहेका चूर्ण सबकी बराबर लेवै, पारे और गंधककी कज्जली चार तोले लेवै, सबको मिलाकर घृत और सहतके साथ सेवन करै तौ यह वह्निकुमारनामवाला रस यकृत, प्लीहा, उदररोग, आनाह, गुल्म और हलीमक रोगको दूर करैहै, बल, वर्ण और अग्निको बढ़ावैहै, कान्ति और पुष्टिको करैहै, इसको क्रमवृद्धिसे एक महीनेतक सेवन करे । यह श्रीमद् गहननाथ वैद्यने संसारके उपकारके लिये निर्माण कियाहै ॥

पिप्पलीमूलपिण्डाभात्रिकत्रयेन्दुसैन्धवैः ।
योजितोनियतंहन्तिलौहःसर्वोदरामयम् ॥

पिण्डाभोगंधरसः ।

इन्दुःकर्पूरम् । सर्वचूर्णसमंलौहचूर्णंग्राह्यम् ।

इति पिप्पल्यादि लौहम् ।

नवायसमत्र श्रेष्ठम् ।

अर्थ-पीपरामूल, बोल, नागरमोथा, वायविडंग, चीता, हरड़, बहेड़ा आमला, सोंठ, पीपल, मिरच, कपूर, और सैंधानोन, इन सबका चूर्ण एकभाग, और लौहेका चूर्ण सबकी बराबर लेवै, सबको बारीक पीसकर सेवन करै तौ सर्वप्रकारके उदररोग दूर होवै ॥

त्रिकटुत्रिफलादन्तीमार्गात्रिमदशुण्ठकैः ।
पुनर्नवासमायुक्तैर्युक्तोहन्तिसुदुर्जयम् ।
लौहःशोथोदरस्थौल्यंमेदोगदसमंसमम् ॥

मार्गोपामार्गः । शुण्ठको मूलकशुण्ठकः ।

इति त्रिकटूवाद्यंलौहम् ।

अर्थ-सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आमला, दन्ती, चिराचिटा, नागरमोथा, वायविडंग, चीता, सुखीमूली और पुनर्नवा, यह सब द्रव्य समान भाग लेकर सबका चूर्णकर सबकी बराबर लोहेका चूर्ण मिलाकर सेवन करनेसे शोथोदर, स्थूलता, और मेदरोग नष्ट होताहै ॥

पुनर्नवामृतावह्निगवाक्षीमानकंस्नुही ।
सूर्यावर्त्तार्कमूलञ्चपृथगष्टपलंजले ॥
पादशेषेशृतंद्रोणेसपूतेवस्त्रछानिते ।
विधिवन्मारितंपूतंपुटितंपुटनौषधैः ।
लौहचूर्णाष्टपालिकंपचेदाज्यसमंभिषक् ।
अर्कस्यद्विपलंक्षीरंस्नुहीक्षीरंचतुष्पलम् ॥
पलद्वयंकौशिकस्यगंधकस्यपलन्तथा ।
पलार्द्धंपारदंतत्रविधिवच्छोधितंक्षिपेत् ॥
सिद्धेऽवतारितेचूर्णंवक्ष्यमाणंनिधापयेत् ।
कंगुष्टवह्निकन्दानांगवाक्ष्याघंटकर्णजम् ॥
पलाशस्यचबीजानांकंचुकीतालमूलिका ।
त्रिफलायाःक्रिमिरिपोस्त्रिवृद्दन्तीभवन्तथा ॥
सूर्यावर्त्तागवाक्ष्यश्चवर्षाभूवज्रवल्लिचम् ।
एषांलौहसमांमात्रांभाण्डेस्निग्धेसुगोपिते ॥
संस्थापितेततःशुद्धोगुटीःकुर्याद्विचक्षणः ।
येचशोथाःसुदुर्वाराश्चिरकालानुबन्धिनः ॥
उदराःपाण्डुरोगाश्चकामलाःसहलीमकाः ।
अर्शोभगन्दरंगुल्मंक्रिमिकुष्ठहरंपरम् ॥
येचान्येविविधारोगाश्चिरकालानुबंधिनः ।

तेसर्वेंनाशमायान्तिप्रयोगादस्यशासनात् ॥
नातःपरतरंकिंचिच्छोथोदरविनाशनः।
अत्रपुनर्नवादीनामष्टद्रव्याणांप्रत्येकमष्टपलम् ॥

वज्रवल्लीअस्थियुक्।

इति शोथोदरारिलौहम्।

अर्थ-पुनर्नवा, गिलोय, चीता, गोरखककड़ी, मानकन्द, थूहर, सूर्यावर्त्त, और आककी जड, प्रत्येक आठ आठ पललेकर एक द्रोण जलमें औटावै, जब चौथाभाग जल शेषरहै तब उतारकर निर्मलवस्त्रमें छान लेवै, फिर इस क्वाथमें पुटपाकविधिसै माराहुवा लोहा आठपल, घी आठपल, आकका दूध दोपल, थूहरका दूध चारपल, गूगल दोपल, गंधक चारतोले, पारा दो तोले मिलाकर पकावै, जब पककर गाढा होजाय तब मुरदासिंग, चीता, जमीकन्द, गोरखककडी, घण्टाकर्ण, ढाकके बीज, क्षीरकंचुकी, मुसली, हरड, बहेडा, आमला, वायविडंग, निसोत, दन्ती, हुलहुल, इन्द्रायन, पुनर्नवा, और हाडजोडा इन सबका चूर्ण लोहेकी समान मिलाकर उत्तम चिकनेबासनमें भरके रखदेवै, पश्चात् इसकी गोलियें बनालेवै। यह-असाध्य शोथरोग, उदररोग, पाण्डुरोग, कामला, हलीमक, बवासीर, भगन्दर, गुल्म, क्रिमिरोग, कुष्ठरोग, और अन्यान्य असाध्य तथा बहुतदिनोंके रोगोंको दूरकरैहै। शोफोदरको दूर करनेवाली इससेपरै कोई दूसरी औषधी नहीं है ॥

औदकानूपजंमांसंशाकंपिष्टकृतंतिलाः।
व्यायामाध्वदिवास्वप्नंयानपानंविवर्जयेत् ॥
तथोष्णलवणाम्लानिविदाहीनिगुरूणिच।
नाद्यादन्नानिजठरीतोयपानंविवर्जयेत् ॥

इत्युदराध्यायः।

अर्थ-जलचरजीवोंका मांस, अनूपदेशके जीवोंका मांस, शाक, पिट्ठी, तिल, व्यायाम, मार्गचलना, दिनमें सोना, अश्वादिपै चढ़ना, मद्यपान,

उष्ण, लवण, अम्ल, दाहजनक और भारी द्रव्य तथा जलपान, यह सब उदररोगी त्याग देवै ॥

इति उदररोगाधिकारः ।

अथ यकृत्प्लीहोदरचिकित्सामाह ।

विदाह्यभिष्यन्दिरतस्यजन्तोःप्रदुष्यचात्यर्थमसृक्ककफश्च ।
प्लीहाभिवृद्धिंकुरुतःप्रसिद्धांप्लीहाह्वमेनंजठरंवदन्ति ॥
तद्वामपार्श्वेपरिवृद्धिमेतिविशेषतःसीदतिचातुरोऽत्र ।
प्लीहानिर्वेदनःश्वेतःकठिनःस्थूलएवच ॥
महापरिग्रहःशीतःश्लेष्मसंभवउच्यते ।
सज्वरःसपिपासश्चस्वेदनस्तीव्रवेदनः ॥
पीतमादौविशेषेणप्लीहापैत्तिकउच्यते ।
नित्यमाबद्धकोष्ठश्चनित्योदावर्त्तपीडितः ॥
वेदनाभिःपरीतश्चप्लीहावातिकउच्यते ।
क्रमोविदाहसंमोहोवैमल्यंगात्रगौरवम् ॥
रुक्तोदभ्रममूर्च्छाभिर्ज्ञेयंरक्तजलक्षणम् ।
त्रयाणामपिरूपाणिप्लीहासाध्येभवन्तिहि ॥
स्नेहस्वेदविरेकादिविधेयंप्लीहरोगिणे ।
अग्निकर्म्मचकुर्वीतभिषग्वातकफोत्थजे ॥

अर्थ-विदाही और अभिष्यन्दि द्रव्य भोजनकरनेवाले मनुष्योंके रक्त और कफ अत्यन्तदूषित होकर उदरके वामपार्श्वमें प्लीहाको बढ़ाकर शरीरमें अप्रसन्नता उत्पन्न करतेहैं, इसीको प्लीहारोग कहतेहैं। कफसे उत्पन्नहुई प्लीहा पीडारहित, सफेद, कठिन, स्थूल, दृढ़मूल और शीतल होतीहै। पित्तसे उत्पन्नहुई प्लीहा ज्वर, प्यास, घर्म्म, अत्यन्त पीडा, और पीतवर्णतायुक्त होतीहै। वातसे उत्पन्नहुए प्लीहारोगमें हरसमय मलबद्धता, उदावर्त्त, और पीडा होतीहै रुधिरसे उत्पन्नहुए प्लीहारोगमें कान्ति, दाह, मोह, विमलता अंगभार, पीडा, भ्रम, शूलकी समान पीडा, और मूर्च्छा होती है। जिसमें

तीनोंदोषोंके लक्षण मिले वह प्लीहारोग असाध्य होताहै । सर्व-प्रकारके प्लीहारोगमें स्नेह, स्वेद और विरेचनादि विधि तथा कफवातज प्लीहारोगमें अग्निकर्म्म विधि करनी चाहिये ॥

यवानिकाचित्रकयावशूकषड्ग्रन्थिदन्तीमगधोद्भवानाम् ।
प्लीहानमेतद्विनिहन्तिचूर्णमुष्णाम्बुनामस्तुचतत्रनित्यम् ॥

अर्थ-अजवायन, चीता, जवाखार, पीपलामूल, दन्ती और पीपल, इन सबका समानभाग चूर्ण गरम जल और दहीके पानीके साथ सेवन करनेसै प्लीहारोग दूर होताहै ॥

तालपुष्पभवःक्षारःसगुडःप्लीहनाशनः ॥

अर्थ-ताड़के फूलोंका खार गुड़के साथ सेवन करनेसै प्लीहारोग दूर होता है ॥

रसेनजम्बीरफलस्यशंखनाभीरजःपीतमवश्यमेव ।
कर्षप्रमाणंशमयेदशेषंप्लीहामयंकूर्म्मसमानमाशु ॥
सप्तरात्रान्निहन्त्याशुप्लीहानमतिदारुणम् ॥
प्लीहजिच्छरपुंखायाःकल्कस्तक्रेणसेवितः ॥

अर्थ-शंखनाभिका चूर्ण जम्भीरीनीबूके रसके साथ सेवनकरनेसै प्लीहारोग दूरहोता है । शरफोंके चूर्णको तक्रके साथ पीनेसै प्लीहारोग दूर होताहै ॥

पारिभद्रपलाशार्कस्नुह्यपामार्गचित्रकम् ।
वरुणाग्निमन्थमुष्कश्वदंष्ट्राबृहतीद्वयम् ॥
पूतिकास्फोटकुटजकोषातक्यःपुनर्नवाः ।
समूलपत्रशाखाश्चक्षोदयित्वाप्युलूखले ॥
तिलनालप्रदीप्ताग्निसुदग्धंभस्मशीतलम् ।
क्षारप्रस्थंगृहीत्वातुन्यसेत्पात्रेदृढेनवे ॥
जलद्रोणेविपक्तव्यंयावत्पादावशेषितम् ।
पूर्ववत्क्षारकल्केनसाधयेच्चविचक्षणः ॥

प्रस्थमेकंचलवणंतदर्द्धश्चहरीतकी ।
तुल्याम्बुभागंगोमूत्रंसाधयेन्मृदुनाग्निना ॥
किंचिद्द्रास्येनसान्द्रेणसम्यक्सिद्धन्तुरक्षयेत् ।
अजाजीत्र्यूषणंहिंगुयवानीपुष्करंशठी ॥
एतैरर्द्धपलैर्भागैश्चूर्णीकृत्यप्रदापयेत् ।
लवणञ्चाभयानामभक्षणीयंयथाबलम् ॥
व्याधीनवक्ष्यमतिमाननुपानंयथाहितम् ।
यावत्कोष्ठगतान्रोगान्निहन्त्याशुनसंशयः ॥
यकृत्प्लीहोदरानाहगुल्माष्ठीलाग्निसादजित् ।
प्रतितून्यार्त्तहृद्रोगशर्कराश्मविनाशनम् ॥
लवणंसैन्धवम् ।

इति अभयालवणम् ।

अर्थ-फरहद, ढाक, आक, थूहर, चिरचिटा, चीता, वरना, अगेथू मोखा, गोखरू, कटेरी कटाई, पूतिकरंज, लाल कचनार, कुड़ा, कडवी तोरई, और पुनर्नवा, इन सब औषधियोंको मूल, पत्र और शाखाओं-सहित लेकर ऊखलीमें कूटकर तिलकी लकडियोंकी अग्निमें जलावै, जब यह शीतल होजाय तब इसमेंसे दो सेर क्षार लेकर एक द्रोण जलमें उत्तमपात्रमें पकावै, जब चौथा भाग शेष रहै तब उतारकर, छानलेवै, फिर इस छनेहुए क्षारजलमें सैंधानोंन दो सेर, हरड़ एकसेर और गोमूत्र सोलह सेर, मिलाकर मंद मंद अग्निसे पकावै; जब गाढ़ा होजाय तब जीरा, सोंठ, पीपल, काली मिरच, हींग, अजवायन, पोहकरमूल, और कचूरका चूर्ण प्रत्येक दो दो तोले मिलादेवै। इस अभयालवणको बलाबलका विचारकर भक्षण करै। व्याधिको विचारकर अनुपान करै। यह अभयालवण सर्वप्रकारके कोष्ठगत रोग, यकृत्, प्लीहा, उदररोग, आनाह, गुल्म, आष्ठीला, मन्दाग्नि, प्रतूनिवात, हृदयरोग, शर्करा और पथरीरोगको दूर करैहै ॥

पलैकंगुडमादायापिप्पलीश्चतथैवच ।

हिंगुत्रिकटुकादीनांसैन्धवानांद्विमाषिकम् ॥
चित्रकश्चविडश्चैवद्वौक्षारौशिखरीन्तथा ।
तालपुष्पंकोकिलाक्षंचिचाक्षारंसफेनकम् ॥
स्नुहीक्षीरसमायुक्तंप्लीहज्वरविनाशनम् ॥

इति गुडपिप्पली।

अर्थ-गुड चारतोले, पीपल चारतोले, हींग, त्रिकुटा, सैंधानोन, चीता, विरिया संचरनोन, जवाखार, सज्जी, चिराचिटा, तालके फूल, तालमखाना, इमलीका क्षार, समुद्रफेन और थूहरका दूध, प्रत्येक दो दो मासे लेकर गुडपाकविधिसे पाक करकै सेवन करनेसे प्लीहज्वर विनष्ट होताहै ॥

चित्रकस्यतुलाक्काथेघृतप्रस्थंविपाचयेत् ।
आरनालन्तुद्विगुणंदधिमण्डंचतुर्गुणम् ॥
पंचकोलकतालीसक्षारैर्लवणसंयुतैः ।
द्विजीरकनिशायुग्ममरिचन्तत्रदापयेत् ।
प्लीहगुल्मोदराध्मानपांडुरोगारुचिज्वरान् ॥
वस्तिहृत्पार्श्वकटचूरुप्लीहोदावर्त्तपीनसान् ।
हन्यात्पीतंतदर्शोघ्नंशोथघ्नंवह्निदीपनम् ॥
पुनर्नवकरंजापिभस्मकश्चानियच्छति ॥

दधिमण्डो दधिमस्तु ।
क्षारो यवक्षारः ।
लवणंसैन्धवंकेचिच्चद्वौक्षारोपंचलवणानिददाति ।

इति चित्रकघृतम् ।

अर्थ-गायकाघी दो सेर, चीतेका क्वाथ १२॥ साढ़े बारहसेर, काँजी चारसेर, दहीका तोड़ आठसेर,और कल्कके लिये पंचकोल, तालीसपत्र, जवाखार, सज्जी, पाँचोंनोन, जीरा, कालाजीरा, हलदी, दारुहलदी, और कालीमिरच, प्रत्येक दोदो तोले लेवै, सबको मिलाकर यथाविधि-से घृतको सिद्ध करै। इसघृतको सेवन करनेसै प्लीहा, गुल्म, उदररोग,

आध्मान, पाण्डुरोग, अरुचि, ज्वर, बस्तिरोग, हृदयरोग, पसलियोंकी पीड़ा, कटिरोग, ऊरुरोग, प्लीहा, उदावर्त्त, पीनस, बवासीर, और सूजन दूर होतीहै, तथा अग्नि दीपन होतीहै ॥

रोहीतकात्पलशतंक्षोदयेद्बदराढकम् ।
साधयित्वाजलद्रोणेचतुर्भागावशेषितम् ॥
घृतप्रस्थंसमावाप्यच्छागीक्षीरंचतुर्गुणम् ।
तस्मिन्दद्यादिमान्सर्वांस्तानक्षसंमितान् ॥
व्योषंफलत्रिकंहिंगुयवानीतुम्बुरुंविडम् ।
अजाजीकृष्णलवणंदाडिमंदेवदारुच ॥
पुनर्नवांविशालांचयवक्षारंसपौष्करम् ।
विडंगंचित्रकंचैवहपुषांचविकांवचाम् ॥
एतैर्घृतंविपक्वञ्चस्थापयेद्भाजनेशुभे ।
पाययेच्चपलंमात्रांव्याधिबलमवेक्ष्यच ॥
रसकेनाथयूषेणपयसावापिभोजयेत् ।
उपयुक्तेघृतेतस्मिन्व्याधीन्हन्यादिमान्बहून् ॥
यकृत्प्लीहोदरञ्चैवप्लीहशूलंयकृत्तथा ।
कुक्षिशूलंयकृच्छूलंपार्श्वशूलमरोचकम् ॥
विबन्धशूलंशमयेत्पाण्डुरोगान्सकामलान् ।
छर्द्यतीसारशूलघ्नंतंत्रीज्वरविनाशनम् ॥
महारोहितकंनामप्लीहघ्नंतुविशेषतः ।

इति महारोहितकं घृतम् ।

अर्थ—गायकाघी दो सेर, बकरीका दूध आठसेर, काथके लिये रोहेड़ा साढे बारहसेर और सूखेबेर चारसेर, जल बत्तीस सेर, शेष चारसेर और कल्कके लिये सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आमला, हींग, अजवायन, धनिया, विरिया संचरनोन, जीरा, कालानोन, अनारकी छाल, देवदारु, पुनर्नवा, इन्द्रायण, जवाखार, पोहकरमूल, वायविडंग,

चीता, हाऊबेर, चव्य, और वच, प्रत्येक दो दो तोले लेवै । सबको मिलाकर यथाविधिसे घृतको सिद्धकर उत्तम बासनमें भरकै रखदेवै । इसको चार तोलेभर व्याधि और बलको विचारकर सेवन करै । मांसरस, मूगादिका यूष,और दूधके साथ भोजन करै । यह घृत नानाप्रकारके रोग, यकृत्, प्लीहा, उदररोग, प्लीहशूल, कुक्षिशूल, पार्श्वशूल, अरुचि, विबन्धशूल, पाण्डुरोग, कामलारोग, वमन, अतिसार, शूल और तंत्रीज्वरको दूर करै है । यह महारोहितक घृत विशेष करकै प्लीहारोगको दूर करै है ॥

सूतभस्मवंगभस्मपलैकैकंविमर्दयेत् ।
गंधकंत्रिफलाताम्रंप्रत्येकञ्चचतुष्पलम् ॥
अर्कक्षीरैर्दिनंमर्द्यंसर्वन्तंमेलकीकृतम् ।
रुद्ध्वाथभूधरेपच्यात्पुटकेनसमुद्धरेत् ॥
एषवंगेश्वरोनामप्लीहगुल्मोदरंजयेत् ।
घृतैर्गुञ्जाद्वयंलेह्यंनिष्कंश्वेतपुनर्नवा ॥
गवांमूत्रैःपिबेच्चानुरजनींवागवांजलैः ॥

इति वंगेश्वरो रसः ।

अर्थ-पारेकी भस्म एकपल, वंगकी भस्म एकपल, गंधक,त्रिफला,और ताँबा, प्रत्येक चार चार पल, सबको एकत्र कर एकदिन आकके दूधमें खरलकरै, पश्चात् गोला बनाकर भूधरयंत्रमें फूँक देवैतौ वंगेश्वर रस सिद्धहो । इसको दो रत्तीभर घृतके साथ सेवनकरै, पश्चात् चार मासे सफेद पुनर्नवेको अथवा हल्दीको गोमूत्रमें पीसकर पीवै तौ प्लीहा, गुल्म और उदररोग दूर होवै ॥

सूतेनवंगन्तुसमंनियोज्यंतत्तुल्यखण्डेनचगंधकेन ।
विमर्दयेदर्करसेनयोज्यंविलिप्यमूषाञ्चपुटंददीत ॥
देयोरसस्तेनविभावयेच्चरसोभवेद्वासुकिभूषणःसः ।
सप्लीहगुल्मस्यचनाशनायाविनिर्मितोभेषजरूपवज्रः ॥

इति प्लीहाशनिरसः ।

अर्थ-पारा, वंग,खांड,और गंधक,यह सब समान भागलेकर आकके दूधमें खरल कर गोला बनालेवै, पश्चात् इस गोलेसै मूषाके मध्यभागको लीपकर पुटदेवै, फिर आकके रसकी भावना देवै तौ वासुकीभूषण रस सिद्धहो, यह प्लीहा और गुल्मको नाश करनेके लिये भेषजरूप वज्र निर्माण कियाहै ॥

शुद्धंरसंपलंग्राह्यंगंधकंद्विपलंभवेत् ।
लौहंटंकंवचाकुष्ठंरामठंत्रिकटुंनिशाम् ॥
रसार्द्धभागमानेनसर्वमेकत्रकारयेत् ।
माणीलवघंटाकर्णानांत्रिफलानांरसेनच ॥
रक्तीषोडशमानेनवटिकापरिनिर्मिता ।
अग्निगर्भेयमुदिताप्लीहगुल्मोदरापहा ॥
शूलघ्नीयकृतंहन्यादष्ठीलांकामलानिच ।
हलीमकंचपाण्डुत्वंक्रिमिकुष्ठविनाशिनी ॥
चंद्रनाथेनगदितारसमंगलभूषिता ॥
लवंगयोगेकर्त्तव्यामहाग्निदायिनीमता ॥
आनाहकासशमनीव्रणविस्फोटनाशिनी ।
संग्रहग्रहणींहन्यात्श्लेष्मदोषोद्भवामपि ॥

इति अग्निगर्भावटिका।

अर्थ-शुद्धपारा एक पल, गंधक दोपल, लोहा, सुहागा, वच, कूठ, हींग, त्रिकुटा और हलदी प्रत्येक दोदो तोले ले सबका एकत्र चूर्ण कर मानकन्द, जमीकन्द, घंटाकर्ण और त्रिकुटेके रसमें खरल करै,पश्चात् सोलह सोलह रत्तीकी गोली बना लेवे, इनको अग्निगर्भा कहतेहैं। यह प्लीहा, गुल्म, शूल, उदररोग यकृत्, अष्ठीला, कामला, हलीमक,पाण्डरोग, क्रिमि और कुष्ठरोगको नष्ट करैहै। यह रसरूपी मंगलसै भूषित श्रीमान् चन्द्रनाथने कहीहै, इनको लवंगके साथ सेवन करनेसै अग्नि दीपन होतीहै, तथा आनाह, खांसी, व्रण, विस्फोट और कफसे उत्पन्न हुई संग्रहणी दूर होतीहै ॥

त्रिकत्रयसमायुक्तंरोहीतकयुतंत्वयः ॥
प्लीहानमग्रमांसञ्चयकृतंहन्तिदारुणम् ॥
अत्रत्रिकटुत्रिफलात्रिमदसर्वंचूर्णसमंलौहम् ॥

इति रोहिकाद्यंलौहम् ।

अर्थ-हरड़, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल, नागरमोथा, वायविडंग, चीता और रोहेडा, यह सब समान भाग और सबकी बराबर लोहेका चूर्ण एकत्र पीसकर सेवन करसे प्लीहा, अग्रमांस, और यकृत् रोग दूर होताहै ॥

लौहार्द्धमभ्रकंशुद्धंसूतमभ्रार्द्धभागिकम् ।
त्रिगुणामयसश्चूर्णात्रिफलांसार्द्धचाभ्रकात् ॥
द्विरष्टवारिणोभागमष्टशेषन्तुकारयेत् ।
तेनचाष्टावशेषेणसमेनाज्येनयत्नतः ॥
रसेनवकुपुत्रायाद्विगुणंक्षीरसम्मितम् ।
लौहमप्यापचेद्दार्व्यापात्रेचायसिमृन्मये ॥
दिव्यौषधिहतंलौहंपुटितंपुटनौषधैः ।
पचेत्पाकविधिज्ञस्तुवह्निनामृदुनाशनैः ॥
अभ्रकंनिहतंकृष्णसूतकंविधिमूर्च्छितम् ।
अयसश्चार्द्धभागैस्तुआदौपाकेविनिक्षिपेत् ॥
कन्दकापालिकाचव्यंविडंगंसबृहद्दलम् ।
शरपुंखाचपाठाचचित्रकंचमहौषधम् ॥
लवणानिचसर्वाणिसक्षारंवृद्धदारकम् ।
दीप्यकञ्चतथासिक्थंलौहाभ्रकसमंक्षिपेत् ॥
प्लीहोदरयकृद्गुल्मान्हन्तिक्षाराग्निभिर्विना ।
प्रयोगोऽयंमहावीर्योलौहोलौहाविदांवरः ॥
प्लीहोदरविनाशायदद्याद्वैद्रपुटपृथक् ।

मानेनघण्टाकर्णेनसूरणेनाधिकंपुनः ॥
मिलितलौहाभ्रकात्रिगुणात्रिफला ।
शतावरीरसंलौहाभ्रकाद्विगुणंक्षीरंच ॥
कन्दकापालिकेआकन्दःसूरणोवा ।

इति यत्कृत्प्लीहोदरलौहम् ।

अर्थ-लोहे और अभ्रकसे तिगुना त्रिफला लेकर १६ सोलहगुने जलमें पकावै जब आठमा भाग जल शेष रहे जाय तब उतारले, पश्चात् इसमें लोहे और अभ्रकसै दुगुना सतावरका रस और दूध, लोहा १ एक भाग, अभ्रक आधा भाग, पारा चौथाई भाग, और आककी जड़, चव्य, वायविडंग, पठानी लोध, शरफोंका, पाढ़, चीता, सोंठ, पाँचोंनोन, जवाखार, विधारा, अजवायन, और मोम प्रत्येक १॥ डेढ़ भाग, मिला देवै । पश्चात् इसको दोवार पुटपाककी विधिसे पकावै, और मानकन्द, जमीकन्द, और घंटाकर्णादि औषधियोंके रसमें भावना देवै । इसको सेवन करनेसै प्लीहा, गुल्म, और नानाप्रकारके (संसारमें प्लीहाको दूर करनेवाली अनेक औषधि हैं, परन्तु इस प्लीहोदरलोहके समान एकभी काम नहीं करती. यह प्लीहोदरलोह स्वयं ब्रह्माजीने रोगी मनुष्योंके हितार्थ निर्माण किया है) उदर रोग दूर होते हैं ॥

त्रिलोचनोहरिःपक्षीपार्वतीनागभूषणम् ।
दरदंतीक्ष्णपुष्पोचवसूरुधिरवासकाः ॥
विडंगसैंधवंहिंगुपटोलामृतमुस्तकम् ।
गोक्षुरंमरिचंवह्निचाविकैरण्डापिप्पली ॥
देवदारुसमंचूर्णंगुडेनवटकीकृतम् ।
उदरंकुक्षिरोगश्चप्लीहंगुल्मंविनाशयेत् ॥
नेत्ररोगंपार्श्वशूलंशिरःशूलंप्रमेहकम् ।
हृच्छूलमरुचिंसर्वंदुर्नामंचाश्मरींपराम् ॥
मूत्रकृच्छ्रंतथावातंसर्वमेतद्व्यपोहात ।

इतियकृत्प्लीहोदराऽध्यायः ।

अर्थ-पारा, गूगल, सोनामाखी, सोरठकी मट्टी, सीसा, हरिताल, सिंग्रफ, इस्पात्, रसौत, गंधक, ताँबा, अडूसा, वायविडंग, सैंधानोन, हींग, पटोल, गिलोय, नागरमोथा, गोखरू, काली मिरच, चीता, चव्य, अण्ड, पीपल, और देवदारु, यह सब समान भागले सबका बारीक चूर्णकर गुडमें मिलाकर गोलियें बना लेवै । इन गोलियोंको खानेसै-उदररोग, कुक्षिरोग, प्लीहा, गुल्म, नेत्ररोग, पार्श्वशूल, शिरःशूल, प्रमेह, हृदयशूल, अरुचि, बवासीर, पथरी, मूत्रकृच्छ्र, और वातरोग दूर होता है ॥

इति यकृत्प्लीहरोगाध्यायःसमाप्तः ।

अथशोथचिकित्सामाह ।

शूयन्तेयस्यगात्राणिस्वपन्तीवरुजन्तिच ।
पीडितान्युन्नमन्त्याशुवातशोथंतमादिशेत् ॥
यश्चाप्यरुणवर्णाभःशोथोनक्तंप्रशाम्यति ।
स्नेहोष्णमर्दनाभ्याञ्चप्रणश्येत्सतुवातिकः ॥

अर्थ-जिस शोथरोगीका गात्र सूज जावै, और सुन्न हो जावै, वेदनायुक्त तथा सूजनकी जगह दाबनेसै शीघ्रही ऊपरको उठ आवै, उसको वातिक सूजन कहते हैं । अन्यच्च । जिसकी सूजन लालरंगकी हो, रात्रिमें शांत हो जाय, तथा स्नेह और उष्ण मर्दनके द्वारा आराम हो जाय उसको भी वातज शोथ कहते हैं ॥

यःपिपासाज्वरार्त्तश्चपूयतेऽथविदह्यते ।
स्निह्यतेक्लिश्यतेगंधीसपैत्तश्वयथुःस्मृतः ॥
यःपीतमुखनेत्रत्वक्पूर्वंमध्यात्प्रशूयते ।
अनुत्वक्चातिसारीचपित्तशोथःसउच्यते ॥

अर्थ-प्यास, ज्वर, सूजनकी जगह राध टपकै, दाहहो, स्निग्ध, क्लिष्ट और दुर्गंध हो, उसको पित्तज शोथ कहतेहैं । अपिच । जिस शोथ-रोगीका मुख नेत्र और चर्म्म पीलाहो, मध्यसे लेकर पूर्वतक सूजन, पतले चर्मयुक्त और अतिसारसंयुक्त होवै तौभी पैत्तिक शोथ कहते हैं ॥

यःशीतलःसक्तनातिःपाण्डुःकण्डूयतेऽपिच ।

निपीडितोनोन्नमतिःश्वयथुःसकफात्मकः ॥
यस्यशस्त्रगणच्छेदाच्छोणितंनप्रवर्त्तते ।
कृच्छ्रेणापिच्छांस्रवतिसचापिकफसंभवः ॥

अर्थ-जो सूजन शीतल, नरम, पाण्डुवर्ण, खुजलीसंयुक्त, और दवानेसै ऊपरको न उठे उसको भी कफज सूजन कहते हैं। अपिच। जिस सूजनमें शस्त्रके छेदनेसै रक्तस्राव नहो और अत्यंत कष्टके साथ पिच्छिलपदार्थ निकले उसको कफज सूजन कहते हैं।

पटोलपत्रवेत्राग्रकाकमाचीसुवर्चला ।
शाकान्नेनिम्बवर्षाभूवालमूलकमेवच ॥
शुण्ठीपुनर्नवैरण्डपंचमूलीशृतंजलम् ।
वातिकेश्वयथौशस्तंपानाहारपरिग्रहे ॥

अर्थ-शाकके लिये पटोलपत्र, वेतका अग्रभाग, मकोयका साग, ब्रह्मसौंचली, नीम, पुनर्नवा, और कच्चीमूली। तथा सोंठ, पुनर्नवा, अण्ड और पंचमूल, इन सबको जलमें सिद्धकर शीतल करै, वह शृतशीतल जल वातके शोथमें पान और आहारके समय देना चाहिये।

पृश्निपर्णीघनोदीच्यशुण्ठीसिद्धन्तुपैत्तिके ।
श्लैष्मिकेपिप्पलीमूलंदारुनागरचित्रकैः॥
दशमूलंसदाशस्तंवातशोथेविशेषतः ।
वातजेतैलमैरण्डंविड्ग्रहेपयसापिबेत् ॥

अर्थ-पित्तज शोथमें पिठवन, मोथा, सुगंधवाला, और सोंठको औटाकर सिद्ध कियाहुआ जल, कफज शोथमें पीपरामूल, देवदारु, सोंठ और चीतेको औटाकर सिद्ध कियाहुआ जल,वातशोथमें दशमूलका काथ, तथा वातज मलरुद्ध शोथमें दूधके साथ अंडीका तेल हितकारी है।

क्षीराशनःपित्तकृतेतुशोथेत्रिवृद्गुडूचीत्रिफलाकषायः ।
पिबेद्गवांमूत्रविमिश्रितंवाफलात्रिकाचूर्णमथाक्षमात्रम् ॥
पुनर्नवाविश्वत्रिवृद्गुडूचीशम्याकपथ्यासुरदारुकल्कम् ।
शोथेकफोत्थेमहिषाक्षमूत्रयुक्तंपिबेद्वासलिलंतथैषाम् ॥

अजाजिपाठाघनपंचकोलव्याघ्रीरजन्यासुखतोयपीताः ।
शोथंत्रिदोषंविरजंप्रवृद्धंनिघ्नन्तिभूनिम्बमहौषधेच ॥
बिल्वपत्ररसंपातुःशोषणंश्वयथौत्रिजे ।
विट्संगेचैवदुर्नाम्निविदध्यात्कामलामपि ॥

अर्थ–पित्तज शोथरोगमें दूधका भोजन करै, तथा निसोत, गिलोय और त्रिफलेका क्काथ अथवा त्रिफलेका चूर्ण गोमूत्रके साथ पानकरै। कफशोथमें पुनर्नवा, सोंठ, निसोत, गिलोय, अमलतास, हरड़ देवदारु और भैंसिया गूगल गोमूत्रके साथ पीसकर अथवा इनका क्काथ बनाकर पान करै। जीरा, पाढ़, नागरमोथा, पंचकोल, कटेरी, हलदी, चिरायता और सोंठ, इनका क्काथ गरमागरम पीनेसै बहुत दिनोंका शोथज रोग दूर होताहै। त्रिदोषज शोथरोगमें बेलके पत्तोंका रस पान करनेसे मलरोध, बवासीर, और कामलारोग दूर होता है।

पथ्यामृताभार्गिपुनर्नवाग्निदार्वीनिशादारुमहौषधानाम् ।
क्काथंप्रपीयोदरपाणिपादरक्ताश्रितंहन्त्यचिरेण शोथम् ॥

इति पथ्यादिः ।

अर्थ–हरड़, गिलोय, भारंगी, पुनर्नवा, चीता, दारुहलदी, हलदी, देवदारु और सोंठ, इनका क्काथ पीनेसै उदर, हस्त, पाद और रक्तगत शोथरोग दूर होता है।

पुनर्नवानिम्बपटोलशुण्ठीतिक्तामृतादार्व्यभयाकषायः ।
सर्वांगशोथोदरपार्श्वशूलश्वासान्वितंपाण्डुगदंनिहन्ति ॥

इति पुनर्नवाष्टकम् ।

अर्थ–पुनर्नवा, नीम, पटोल, सोंठ, कुटकी, गिलोय, दारुहलदी और हरड़, इनका क्काथ पीनेसे सर्वांगगत शोथ, पार्श्वशूल, और श्वासयुक्त पाण्डुरोग दूर होता है।

सौवर्चलंयवक्षारंयवानीपंचकोलकम् ।
मरिचंदाडिमंपाठाधन्याकमम्लवेतसम् ॥
वारिबिल्वञ्चकर्षांशंक्काथयेत्सलिलाढके ।
तत्क्काथेनघृतप्रस्थंपाच्यंघृतावशेषकम् ॥

शोथार्शोगुल्ममेहार्त्तौघृतंसेव्यंप्रशान्तये ॥

इति सौवर्चलाद्यं घृतम्।

अर्थ-कालानोन, जवाखार, अजवायन, पंचकोल, कालीमिरच, अनार, पाढ़, धनिया, अमलवेंत, सुगंधवाला, और बेल, प्रत्येक दोदो तोले लेकर एक आढ़क जलमें औटावै, जब चौथा भाग जलशेष रहै तब उतारकर छान लेवै, पश्चात् इसमें एक प्रस्थ घृत मिलाकर पकावै, जब तैयार हो जाय तब सेवन करै इससे शोथ, बवासीर, गुल्म, प्रमेह, यह सब रोग दूर होतेहैं ॥

शुण्ठीपुनर्नवैरण्डपंचमूलंशृतंजलम्।
वातिकेश्वयथौशस्तंपानाहारेपरिग्रहे ॥

अर्थ-सोंठ, पुनर्नवा, अण्ड, और पंचमूल इनका क्वाथ पानाहारके समय पान करनेसे वातज सूजन दूर होती है.

पुनर्नवाचित्रकदेवदारुपंचोषणक्षारहरीतकीनाम्।
कल्केनपक्वंदशमूलतोयेघृतोत्तमंशोथनिषूदनञ्च ॥

इति पुनर्नवाद्यंघृतम्।

अर्थ-गायकाघी दो सेर, क्वाथके लिये दशमूल साठपल, पाकके लिये जल ५१२ पाँचसौ बारह पल, शेष बत्तीस पल, और कल्कके लिये पुनर्नवा,चीता, देवदारु, पंचोषण, जवाखार और हरड़, प्रत्येक चार चार तोले लेवै, सबको मिलाकर घृतको सिद्धकरै इसको सेवन करनेसे-शोथ रोग दूर होताहै ॥

मानकक्वाथकल्काभ्यांघृतप्रस्थंविपाचयेत्।
एकजंद्वन्द्वजंशोथंत्रिदोषञ्चव्यपोहति ॥

इति मानकघृतम्।

अर्थ-गायका घी दोसेर, मानकन्दका क्वाथ दो सेर, जल आठसेर, और कल्कके लिये मानकन्द आधसेर लेवै। सबको मिलाकर यथाविधिसै घृतको सिद्ध करै यह घृत एकज, द्वन्द्वज और त्रिदोषज शोथरोग दूर करताहै ॥

शुष्कमूलकवर्षाभूदारुरास्नामहौषधैः।

पंचमभ्यंजनंतैलंसशूलंश्वयथुंजयेत् ॥

इति शुष्कमूलाद्यंतैलम्।

अर्थ-तिलकातेल दोसेर, जल आठसेर और कल्कके लिये सूखीमूली, पुनर्नवा, देवदारु, रास्ना और सोंठ यह सब आधसेर लेवै। सबको मिलाकर तेलको सिद्ध करै। यह तेल शूलयुक्त शोथरोगको दूर करताहै ॥

मूलकंदशमूलञ्चकणामूलंपुनर्नवा।
प्रत्येकंप्रस्थमानञ्चवारिण्यष्टगुणेपचेत् ॥
तेनाष्टभागशेषेणतैलस्यार्द्धाढकंतथा।
दापयेत्तैलतुल्येनगोमूत्रंकुशलोभिषक् ॥
मूलकंचामृताशुण्ठीपटोलंचपलाबला।
पाठापुनर्नवामूलंवालोशीरञ्चशिग्रुकम् ॥
निर्गुण्डीन्द्रयवश्यामाकरञ्जंवासकन्तथा।
कणाहरीतकीशुण्ठीवचापुष्करमुस्तकम् ॥
रास्नाविडंगंचव्यञ्चहरिद्रेद्वेचधान्यकम्।
द्विक्षारंसैन्धवंपत्रंदेवदारुसपद्मकम् ॥
शठीकरिकणाबिल्वमंजिष्ठाचततःक्रमात् ॥
प्रत्येकार्द्धपलंचैषांपेषयित्वाततःक्षिपेत्।
अभ्यंगेनास्यतैलस्ययेगुणाःसन्तिताञ्छृणु।
नानाशोथाश्चनश्यन्तिवातपित्तकफोद्भवाः ॥
आमोद्भवाश्चयेकेचिद्विशेषेणजलाशयाः।
अवश्यंनिर्जलादेहाभविष्यन्तिनसंशयः ॥

इति बृहच्छुष्कमूलाद्यं तैलम्।

अर्थ-मूली, दशमूल, पीपरामूल, पुनर्नवा, प्रत्येक दो दो सेर लेकर आठगुने,जलमें पकावै,जब आठमा भाग शेषरहै तब उतारकर छानलेवै, पश्चात् इसमें अर्द्ध आढ़क तेल, अर्द्ध आढ़क गोमूत्र, मूली, गिलोय, सोंठ, पटोल, पीपल, खिरैटी, पाठ, पुनर्नवा, सुगन्धवाला, खस, सैंजिनेकी

जड़,निर्गुण्डी, इन्द्रयव, श्यामलता, करंज, अडूसा, पीपल, हरड़, सोंठ, वच, पोहकरमूल, नागरमोथा, रास्ना, वायविडंग, चव्य, हलदी, दारुहलदी, धनिया जवाखार, सज्जी, सैंधानोन, तेजपात, देवदारु, पद्माख, कचूर, गजपीपल, बेल और मजीठ, प्रत्येक दो दो तोले ले सबको पीसकर मिलादे, और उत्तम रीतिसे पाककरै इस तेलको शरीरादिकको मलनेसै नानाप्रकारके शोथरोग दूर होतेहैं ॥

द्विपंचमूलस्यकृतेकषायेकंसेऽभयानाञ्चशतंगुडाश्च ।
लेहेसुशीतेचविनीयचूर्णंव्योषंत्रिसौगन्ध्यसुखास्थितेच ॥
प्रस्थार्द्धमानंमधुनःसुशीतेकिंचिच्चचूर्णादपियावशूकात् ।
एकाभयांप्राश्यततश्चलेहाच्छुक्तिंनिहन्तिश्वयथुंप्रवृद्धम् ॥
श्वासज्वरारोचकमेहगुल्मप्लीहात्रिदोषोदरपाण्डुरोगान् ।
कार्श्यामवातावसृगम्लपित्तंवैवर्ण्यमूत्रानिलशुक्रदोषान् ॥

अर्थ–दशमूल चारसेर, हरड़ १०० एकसौ, जल बत्तीस सेर, शेष आठसेर, गुड़ सवाछहसेर, इनको पकावै,जबपकते पकते गाढ़ा होजाय तब इसमें त्रिकुटेका चूर्ण, . त्रिसुगंधिका चूर्ण और जवाखार, प्रत्येक चार तोले, और सहत आधसेर मिला देवै । प्रतिदिन एक हरड़ और कुछ लेह खावै तौ अत्यंत बढाहुआ शोथरोग, श्वाँस, ज्वर, अरुचि, प्रमेह, गुल्म, प्लीहा, त्रिदोषोदर, पाण्डुरोग, कृशता, आमवात, रुधिरविकार, अम्लपित्त, विवर्णता, मूत्र, वात और शुक्रके दोष दूर होते हैं ।

श्लक्ष्णचूर्णञ्चमण्डूरंगोमूत्रैःपाचयेद्दिनम् ।
वज्रवल्ल्यारसैःपेष्यंचिताकुड्मलसंयुतम् ॥
भक्षितंचाक्षमात्रञ्चह्यसाध्यंश्वयथुंजयेत् ॥

अर्थ–मण्डूरका उत्तमरीतिसे चूर्णकर गोमूत्रके साथ पका वज्रवल्लीके रसमें पीसकर चीतेकी कलियोंके चूर्णके साथ पीनेसै असाध्य शोथरोगभी दूर होता है ।

काकमाचीरसैःपेष्यंमृतलोहञ्चशोथजित् ।
हरीतक्याःकषायेणहस्तिपानाच्छिलाजतु ॥

अर्थ-मारेहुए लोहेको मकोयके रसके साथ या हरडके क्काथके साथ शिलाजितको पीनेसै शोथरोग दूर होताहै ॥

कटुकात्र्यूषणंदन्तीविडंगंत्रिफलातथा ।
चित्रकोदेवदारुश्चत्रिवृद्दारुणापिप्पली ॥
चूर्णान्येतानितुल्यानिद्विगुणंस्यादयोरजः ।
क्षीरेणतुल्यमेतच्चश्रेष्ठंश्वयथुनाशनम् ॥
सर्वचूर्णाद्द्विगुणंलौहम् ।

इति कटुकाद्यं लौहम् ।

अर्थ-कुटकी, सोंठ, मिरच, पीपल, दन्ती, वायविडंग, हरड, बहेड़ा, आमला, चीता, देवदारु, निसोत और गजपीपल, इन सबका चूर्ण एकभाग और लोहेका चूर्ण दोभाग लेवै, सबको मिलाकर दूधके साथ सेवन करनेसै शोथरोग दूर होता है ।

करञ्जपत्रलेपेनसारनालेनशोथजित् ॥
कोकिलाक्षकषायेणलेपःसर्वाङ्गशोथजित् ॥

अर्थ-करंजके पत्तोंको काँजीमें पीसकर लेप करनेसै अथवा तालमखानेको पीसकर लेपकरनेसै शोथरोग दूर होता है ।

माणकक्काथकल्काभ्यांघृतप्रस्थंविपाचयेत् ।
एकजंद्वन्द्वजंशोथंत्रिदोषञ्चव्यपोहति ॥
माणकस्यपलशतंजलद्रोणेविपाचयेत् ॥
तन्त्रान्तरदर्शनात् ।

इति माणकघृतम् ।

अर्थ-गायका घी दोसेर, मानकन्दका क्काथ आठसेर, और कल्कके लिये मानकन्द आधसेर लेवै, सबको मिलाकर घृतको सिद्धकरै । यह घृत-एकज, द्वन्द्वज और त्रिदोषज शोथरोगको दूर करै है ॥

खण्डखाद्येश्वरमताऽमृतसारनवायसम् ।
लोहान्येतानिसर्वाणियोजयन्तिभिषग्विदः ॥
भल्लातकयाजयेच्छोथंसतिलाकृष्णमृत्तिका ।

महिषीनवतीतंवालेपाद्दुग्धतिलान्वितम् ॥
लेपोऽरुष्करशोथंनिहन्तितिलदुग्धमधुकनवनीतैः ।
तत्तरुतलमद्भिर्वासालदलैर्वातिचिरेण ॥
सालदलस्यचूर्णमाहुः।
कान्तक्रामकलेपोवालेपोवातिलदुग्धयोः ।
भल्लातःश्वयथुंहन्तिपानंवातिलदुग्धयोः ॥
वानरकच्छुधूलीशोथेगोमयघर्षणलेपौ-
विहितौवृश्चिकपत्रीपीडाशोथेविधिनादुग्धस्थालीस्वेदः ॥
प्रायोभिघातादनिलःसरक्तःशोथंसवातंप्रकरोतिसद्यः ।
तत्राविसर्पत्वन्मात्रतन्वचकार्यंविषघ्नंविषजेतुकर्म ॥

इति मारुतरक्तनुत्तक्राकर्षणादि ।

अर्थ–खण्डखाद्य लोह, अमृतसार लोह, नवायसादि लोह, शोथरोगमें देने चाहिये । तिल, कालीमट्टी, और भिलावे इनके द्वारा लेप करनेसै अथवा भैंसके दूधकी नोनी, दूध और तिल इनको एकत्र पीसकर लेप करनेसै शोथरोग दूर होताहै । भिलावा, तिल, दूध, मुलैठी, और माखन, इनको एकत्र पीसकर लेप करनेसै अथवा भिलावेके वृक्षकी तलेकी मट्टी और सालके पत्तोंके चूर्णको एकत्र मिलाकर लेप करनेसै शोथरोग दूर होताहै । मोथेका लेप करनेसै अथवा तिलोंको दूधमें पीसकर लेप करनेसै किंवा तिल, भिलावे, इनको दूधमें पीसकर सेवन करनेसै शोथरोग दूर होताहै । कौंछकी फलियोंके लगानेसै उत्पन्न हुआ शोथ गोबरके घिसने तथा लेप करनेसै आराम होताहै । बिछवाघासके लगानेसै उत्पन्न हुआ शोथ दूधकी हाँडीको गरम करके स्वेद देनेसै शोथरोग दूर होता है । प्रायः अभिघातसंयुक्त वायु रुधिरके साथ मिलकर वातसंयुक्त शोथको उत्पन्न करती है । जो शोथ क्रमसे फैलै नहीं उसपै चर्मसंशोधकलेपादि करै । तथा विषज शोथरोगमें विषघ्न कर्म करै ॥

पिष्टान्नमम्लंलवणानिमद्यंशुल्वंदिवास्वप्नमजागरञ्च ।

स्त्रियोघृतंतैलपयोगुरूणिशोथंजिघांसुःपरिवर्जयेच्च ॥

इति शोथरोगाध्यायः ।

अर्थ-पिष्टान्न, खटाई, लवण, मदिरा, सूखामांस, दिनमें सोना, रात्रिजागरण, स्त्रीसंसर्ग, घृत, तैल, दूध, और भारी द्रव्य शोथरोगी त्याग देवै ॥

इति शोथाऽधिकारः ।

अथ ब्रध्नवृद्धिचिकित्सामाह ।

प्रपौण्डरीकमधुकरास्नाकुष्ठंपुनर्नवैः ।
सरलागुरुभद्राख्यैर्वातजंसंप्रलेपयेत् ॥
निचुलैरण्डमूलानियवगोधूमसक्तवः ।
एतैश्चवातजंस्निग्धैःसुखोष्णैःसंप्रलेपयेत् ॥
गुग्गुलुंरुबुतैलंवागोमूत्रेणपिबेन्नरः ।
वातवृद्धिंनिहन्त्याशुचिरकालानुबन्धिनीम् ॥
सक्षीरंवापिबेत्तैलंमासमेरण्डसंभवम् ।

पित्तानुबन्धे ।

पुनर्नवायास्तैलंवातैलंनारायणन्तथा ।
पानेबस्तौरुबोस्तैलंपेयंवादशकाम्भसा ॥

पुनर्नवायाःक्काथकल्कौ ।

दशकं दशमूलम् ।

इति वाते ।

अर्थ-पुण्डेरिया, मुलैठी, रास्ना, कूठ, पुनर्नवा, धूपसरल, अगर, और मोथा, इन सबको पीसकर लेप करनेसै वातज वृद्धिरोग दूर होताहै । हिज्जल, अंडकी जड़, जौ और गेहूँ इनके सत्तू स्निग्ध और उष्ण करके लेप करनेसै वातज अन्त्रवृद्धिरोग दूर होताहै । गूगल अथवा अंडीका तेल गोमूत्रके साथ पान करनेसे-वातज वृद्धिरोग दूर होता है । अण्डीका तेल दूधके साथ पीनेसै पित्तानुबंध वातजवृद्धि रोग दूर होताहै । पुनर्नवेका तेल और नारायणतेल पान और बस्तिकर्ममें प्रयोग करनेसै, अथवा अण्डीका तेल दशमूलके क्काथके साथ पीनेसैं वातजवृद्धिरोग दूर होताहै ॥

गैरिकाञ्जनमंजिष्ठामधुकोशीरपद्मकैः।
सचन्दनोत्पलैःस्निग्धैःपैत्तिकंसंप्रलेपयेत् ॥
पद्मोत्पलमृणालैश्चससर्जार्जुनवेतसैः।
सर्पिःस्निग्धैःसमधुकैःपैत्तिकंसंप्रलेपयेत् ॥

अर्थ–गेरू, अंजन, मजीठ, मुलैठी, खस, पद्माख, लालचंदन, और कमल यह सब औषधि समान भाग लेकर घृतके साथ पीसकर लेप करनेसे अथवा कमल, कुमुदिनी, मृणाल, सर्ज्जवृक्षकी छाल, अर्जुनवृक्षकी छाल, वेत और मुलैठी, इनको एकत्र घीके साथ पीसकर लेप करनेसे अण्डवृद्धिरोग दूर होताहै ॥

मुहुर्मुहुर्जलौकाभिःशोणितंरक्तजेहरेत्।
कुर्यात्पैत्तिकवत्सर्वमामेपक्केचबुद्धिमान् ॥
कुलत्थोषणपिण्याकैःपिष्टोष्णैश्चापनाहनम्।
देवदारुकषायश्चापिबेन्मूत्रेणमानवः ॥
त्रिकटुत्रिफलाक्काथंपिबेत्सक्षारसैन्धवम्।
कफामबद्धकोष्ठेषुविरेकः कफवृद्धिनुत् ॥
संपिष्टमारनालेनरूपिकामूलवल्कलम्।
लेपाद्वृद्ध्यामयंहन्तिबद्धमूलमपिध्रुवम् ॥
स्यात्तावच्चटकक्षारःक्षारोवाकुक्कलासजः।
सतैललवणोलेपःशीघ्रंदुर्जयवृद्धिनुत्।
वचासर्षपकल्केनप्रलेपोवृद्धिनाशनम् ॥

अर्थ–रक्तजवृद्धिरोगमें बारबार जोंके लगवावै, तथा आम और पक्कवृद्धि रोगमें पैत्तिकवृद्धिरोगकी समान उपचार करै। कुलथी, कालीमिरच, और तिलोंकी खल जलके साथ एकत्र पीसकर गरम करके स्वेददेनेसै, देवदारुका क्काथ गोमूत्रके साथ पीनेसे वृद्धिरोग दूर होताहै। त्रिकुटा और त्रिफला इनका क्काथ जवाखार और सैंधानोन प्रक्षेप देकर पान करनेसै कफ और आमसे उत्पन्नहुए वृद्धकोष्ठमें विरेचन होकर कफजन्य बद्धरोग दूर होताहै ॥ लाल आककी जड़की छाल कांजीके साथ

पीसकर लेपकरनेसे अंडवृद्धिरोग दूर होताहै । चटक पक्षीका क्षार वा कृकलास जन्तुका खार तेल और सैंधेनोनके साथ पीसकर लेप करनेसे अथवा वच और सरसोंको एकत्रपीसकर लेपकरनेसे वृद्धिरोग दूर होताहै.

गोमूत्रसिद्धांरुबुतैलमिश्रांहरीतकींसैन्धवचूर्णयुक्ताम् ।
खादेन्नरःकोष्णजलेनुपानंनिहन्तिवृद्धिंचिरजांप्रवृद्धाम् ॥
ऐन्द्रीमूलभवंचूर्णंरुबुतैलेनमर्दितम् ।
त्र्यहाद्गोपयसापीतंसर्ववृद्धिविनाशनम् ॥
गव्यंघृतंसैन्धवसंप्रयुक्तंशम्बूकभाण्डेनिहितंप्रयत्नात् ।
सप्ताहमादित्यकरैर्विपक्कंनिहन्तिकुरण्डमतिप्रवृद्धकम् ॥

इति घृतावपादिकंसैन्धवम् ।

अर्थ-हरडोंको गोमूत्रमें औटाकर अण्डीके तेल और सैंधेनोनके साथ मिलाकर सेवन करै, और ऊपरसै गरम जलका अनुपान करै तौ वृद्धिरोग दूर होवै । इन्द्रायनकी जड़का चूर्ण अंडीके तेलमें पीसकर गायके दूधके साथ पीनेसै तीनदिनमें सर्वप्रकारके वृद्धिरोग दूर होतेहैं । गायका घी एक भाग, सैंधानोन चौथाई भाग, इनको शम्पुटके भीतर खरल कर सातदिन सूर्यसै पकाकर सेवन करनेसै कुरण्डरोग दूर होताहै॥

शतमेरण्डमूलस्यपलेशुण्ठ्यायवाढकम् ।
जलद्रोणेविपक्तव्यंयावत्पादावशेषितम् ॥
तेनपादावशेषेणपयसातत्समेनच ।
प्रस्थमेरण्डतैलस्यतन्मूलञ्चचतुष्पलम् ॥
त्रिपलंशृंगवेरस्यगर्भंदत्त्वाविपाचयेत् ।
तत्पिबेन्नियतःशुद्धोनरःक्षीरान्नभुक्सदा ॥
अंत्रवृद्धिंनिहन्त्याशुतैलंगन्धर्वहस्तकम् ॥

इति गंधर्वहस्तकंतैलम् ।

अर्थ-अण्डीका तेल दोसेर, क्काथके लिये अण्डकी जड़ सवाछै सेर, सोंठ दोपल और जौ चारसेर,पाकके लिये बत्तीस सेर, शेष आठ सेर, दूध आठसेर, और कल्कके लिये अण्डकी जड़ चारपल और अदरख

तानपल, सबको मिलाकर तेलको सिद्ध करै। इसके ऊपर दूधके साथ भोजन करै, इससे अन्त्रवृद्धिरोग दूर होताहै ॥

ससैन्धवंघृताभ्यक्तंताम्रभाजनमातपे।
प्रतप्तमूर्णयाघृष्टात्तन्मलेनदिवानिशम् ॥
म्रक्षणादेवकुरण्डंनास्तीत्याहपुनर्वसुः।
रुद्रजटामूललिप्ताकरटव्यङ्कचर्म्मणा ॥
अंत्रवृद्धिःशमंयातिचिरजापिनसंशयः।
करटवीवृक्षमूषिकाअस्याअंकचर्मक्रोडचर्म्म ॥

अर्थ-सैंधेनोनको घृतमें मिलाकर एक तांबेके बासनमें लेप कर धूपमेंधर भेड़के रोमोंसै घिसकर लेपकरनेसै जो मल निकले इससे दिनरात घिसनेसे कुरण्डरोग दूर होताहै। रुद्रजटाकी जड़के द्वारा वृक्ष-मूषिकके क्रोडचर्म्मको लेपकर तिससै कुरण्डको बांधनेसै बहुत दिनोंका अंत्रवृद्धिरोग दूर होताहै ॥

शतपुष्पामृतादारुचंदनंरजनीद्वयम्।
जीरकेद्वेवचानागत्रिफलागुग्गुलुत्वचम् ॥
समांसीकुष्ठपत्रैलारास्नाशृंगीचचित्रकम्।
क्रिमिघ्नमश्वगंधाचशैलेयंकटुरोहिणीम् ॥
सैन्धवंतगरंचैवकुटजातिविषेतथा।
एतैश्चकार्षिकैःकल्कैर्घृतप्रस्थंविपाचयेत् ॥
वृषमुण्डीतिकैरण्डनिम्बपत्रभवोरसः।
कण्टकार्यास्तथाक्षीरंप्रस्थंप्रस्थंप्रदापयेत् ॥
सिद्धमेतद्घृतंपीतमंत्रवृद्धिंव्यपोहति।
वातवृद्धिंपित्तवृद्धिंमेदोवृद्धिमथापिवा ॥
मूत्रवृद्धिंश्लीपदञ्चयकृत्प्लीहानमेवच।
शतपुष्पाघृतञ्चैतद्धन्यादेतन्नसंशयः ॥

इति शतपुष्पाद्यं घृतम्।

अर्थ–सौंफ, गिलोय, देवदारु, हलदी, दारुहलदी, जीरा, कालाजीरा, वच, नागकेशर, त्रिफला, गूगल, दालचीनी, बालछड़, कूठ, तेजपात, इलायची, रास्ना, काकडाशिंगी, लालचीता, वायविडंग, असगंध, भूरिछरीला, कुटकी, सैंधानोन, तगर, कुड़ा और अतीस, प्रत्येकका दोदो तोले कल्क, अडूसेका रस, गोरखमुण्डीका रस, अण्डीका रस, नीमके पत्तोंका रस, कटेरीका रस और दूध, प्रत्येक दोदोसेर और गायका घी दोसेर लेवे, सबको मिलाकर यथाविधिसे घृतको सिद्धकरै। इस घृतको पीनेसै अंत्रवृद्धि, वातवृद्धि, पित्तवृद्धि, मेदोवृद्धि, मूत्रवृद्धि, श्लीपद, यकृत, प्लीहा, इनसबको यह शतपुष्पाद्यघृत दूरकरै है ॥

सैन्धवंमदनंकुष्ठंशताह्वांनिचुलंवचाम् ।
ह्रीबेरंमधुकंभार्गींदेवदारुसनागरम् ॥
कट्फलंपौष्करंमेदांचविकांचित्रकंशठी ।
विडंगातिविषेश्यामांरेणुकांनीलिनींस्थिराम् ॥
बिल्वाजमोदेकृष्णांचदन्तींरास्नांप्रपिष्यच ।
साध्यमेरण्डजंतैलंतैलंवाकफवातनुत् ॥
ब्रध्नोदावर्त्तगुल्मार्शःप्लीहमेहाढ्यमारुतान् ।
आनाहमश्मरीञ्चैवहन्यात्तदनुवासनात् ॥

इति बृहत्सैन्धवाद्यंतैलम् ।

अर्थ–सैंधानोन, मैनफल, कूठ, सोंफ, हिज्जल, वच, सुगंधवाला, महुवा, भारंगी, देवदारु, सोंठ, कायफल, पोहकरमूल, मेदा, चव्य, चीता, कचूर, वायविडंग, अतीस, कारिया वासाऊ, रेणुका, नीलका वृक्ष, शालिपर्णी, बेल, अजमोद, पीपल, दंती, और रास्ना, इन सबको पीसकर इनमें अण्डका तेल या सरसोंका तेल सिद्धकरै। यह तेल–कफ, वात, ब्रध्न, उदावर्त्त, गुल्म, बवासीर, प्लीहा, प्रमेह, वात, आनाह और पथरी रोग दूर करताहै ।

धत्तूरमूलसिद्धार्थगवांमूत्रेणपेषयेत् ।
प्रलेपनंत्रिभिःकुयात्कोष्णंब्रध्नहरंपरम् ॥
घृतंसौरेश्वरंयोज्यंब्रध्नवृद्धिनिवृत्तये ॥

अर्थ-धतूरेकी जड़ और सफेद सरसोंको गोमूत्रमें पीसकर कुछेक गरमकर लेपकरनेसै-ब्रध्नरोग दूर होताहै-सौरेश्वर घृतको पान करनेसैभी ब्रध्नरोग और वृद्धिरोग दूर होताहै।

मृतायःपुरुषःशुल्बःखगोदरदगंधकः।
गगनंपुष्परागश्चशोणितंचेश्वरोरगः॥
विडंगत्रिफलाहिंगुयवानीजीरकद्वयम्।
स्वर्जीफलवचाशृंगीमरिचंपिप्पलीद्वयम्॥
चव्यीदुरालभावह्निशुण्ठीद्रावैर्विमर्दयेत्।
अण्डवातान्त्रवृद्धीश्चकच्छूमुरुगदापहम्॥
येचअण्डगतारोगास्तान्सर्वानपकर्षति॥

इति एकादशायसम्।

अर्थ-लोहा, पारा, ताँबा, सोनामाखी, सिंग्रफ, गंधक, अभ्रक, पुष्परागमणि, केशर, पीतल, सीसा, यह सब समान ले पश्चात् इनको वायविडंग, त्रिफला, हींग, अजवायन, जीरा, कालाजीरा, सज्जी, जायफल, वच, काकड़ाशिंगी, कालीमिरच, पीपल, गजपीपल, चव्य, जवासा, चीता, और सोंठके रसमें खरलकर लेप करनेसै अंडवात, अन्त्रवृद्धि, कच्छू, ऊरुरोग, और सर्वप्रकारके अंडगत रोगोंको दूरकरैहै।

ससैन्धवकुष्ठकरेणवजाजीसत्रैफलारुष्करवालकश्च।
विडंगविश्वौषधचित्रकामृताभार्गीवचातस्करदेवदारुकम्॥
सनीलिनीसातिविषाजमोदायवानिकापिप्पलिमूलमुस्तकम्
चव्यंसकृष्णाशठिचंदनद्वयंसकट्फलावल्गुजाबिल्वजंस्थिरम्
दन्तीशताह्वाकटुकाजगंधासवाजिगन्धागजपिप्पलीनाम्।
मरीचत्रिजातलवंगगंधंजातीफलंशैलजजातिपत्री॥
कर्षैकमात्रंक्रमश्लक्ष्णचूर्णंपलाष्टकंगुग्गुलुनामधेयम्।
पलद्वयंलोहरजस्तथैवाशिलाजतुश्चैवपलंचतुष्कम्॥
सर्वैःसमश्चैवासिताचयोज्याविमर्द्यकृत्वावटिकाक्षमात्रम्।

प्रत्येकशोभक्ष्यमथोविधेयंमद्यंतथोष्णंपयसाचक्षीरम् ।
निहन्तिअभ्रानुदरंसकृच्छ्रंपाण्ड्वामयंकामलराजरोगम् ॥
प्लीहोदरंकुष्ठविकारजञ्चमूत्रामवातंश्वयथून्प्रकल्पम् ।
अत्यग्निकारिज्वरनाशनंपरंबलंसुपुष्टिंकुरुतेनराणाम् ॥
प्रमेहविंशंकफरोगविंशंचत्वारिंशत्पित्तगदंनिहन्यात् ।
अशीतिवातामयजान्विकारान्नश्यन्तितेसर्वमिदंनराणाम्

इति सैन्धवादिगुटिका ।

इति अभ्रवृद्धयध्यायः ॥

अर्थ-सैंधानोन, कूठ, रेणुका, जीरा, त्रिफला, भिलावा, वायविडंग, सोंठ, चीता, गिलोय, भारंगी, वच, भटेउर, देवदारु, नीलवृक्ष, अतीस, अजमोद, पीपरामूल, नागरमोथा, चव्य, पीपल, कचूर, सफेत चंदन, लालचंदन, कायफल, वापची, बेलगिरी, दन्ती, सोंफ, कुटकी, अजगंधा, असगंध, गजपीपल, कालीमिरच, दालचीनी, इलायची, तेजपात, लवंग, सैजिना, जायफल, भूरिछरीला, और जावित्री, प्रत्येक दो दो तोले, गूगल आठपल, लोहा दो पल, शिलाजीत, चार पल, इन सबको एकत्र पीस लेवै, और सबकी बराबर मिश्री मिलादेवै, पश्चात् जलसै मर्दन कर दो दो तोलेभरकी गोलियाँ बनालेवै, प्रतिदिन एकगोली मदिरा, गरम जल और दूधके साथ पान करनेसे-अभ्र, उदररोग, मूत्रकृच्छ्र, पाण्डुरोग, कामला, राजरोग, प्लीहोदर, कोढ़, मूत्ररोग, आमवात, और सूजनको दूर करै है। अत्यन्त अग्निजनक, ज्वरको दूर करनेवाला, वलकारक, पुष्टिकारक, बीसप्रकारके प्रमेह, चालीसप्रकारके पित्तरोग, अस्सीप्रकारके वातरोग, इन सबको यह दूर करैहै ॥

इति अभ्रवृद्धयध्यायःसमाप्तः ।

अथगलगंडगंडमालाचिकित्सामाह ।

यवमुद्गपटोलानिकटुरूक्षञ्चभोजनम् ।
छर्दिसरक्तमुक्तिश्चगलगंडेप्रयोजयेत ॥
निचुलंशिग्रुबीजानिदशमूलमथापिवा ।

वातजेगलगंडेतुसुखोष्णोलेपइष्यते ॥
सर्षपाञ्छिग्रुबीजानिशणबीजातसीयवान् ।
मूलकस्यचबीजानितक्रेणाम्लेनपेषयेत् ॥
गण्डातिग्रन्थयश्चैवगंडमालाःसुदारुणाः ।
प्रलेपात्तेनशाम्यन्तिविलयंयान्तिचाचिरात् ॥

अर्थ-जौ, मूंग, पटोल, कटु, और रूक्षद्रव्य तथा वमन और रक्तमोक्षण (फस्त) यह सब गलगंडरोगमें प्रयोग करै। हिज्जल और सैंजिनेके बीज अथवा दशमूलको पीसकर गरम करकै लेप करनेसै वातज गलगंडरोग दूर होताहै। सरसों, सैंजिनेके बीज, सनके बीज, अलसी, जौ और मूलीके बीजोंको एकत्रकर तक्र और काँजीके साथ पीसकर लेप करनेसै गण्डमाला, गलगण्ड और ग्रन्थिरोग निश्चय दूर होता है ॥

चक्रमर्दकमूलस्यकल्कंकृत्वाविपाचयेत् ।
केशराजरसेतैलंकटुकंमृदुनाग्निना ॥
पाकशेषेविनिक्षिप्यासिंदूरमवतारयेत् ।
एतत्तैलंनिहन्त्याशुगंडमालांसुदारुणाम् ॥

इति सिन्दूरादितैलम् ।

अर्थ-सरसोंका तेल एकसेर, भांगरका रस चारसेर, कल्कके लिये चकवड़की जड़ पावसेर और सिंदूर पावसेर इन सबको मिलाकर तेलको सिद्ध करे। यह तेल दारुणगण्डमाला रोगको दूर करैहै ॥

विडंगक्षारसिन्धूग्रावासाग्निव्योषदारुभिः ।
कटुतुंबीफलरसैःकटुतैलंविपाचयेत् ॥
चिरोत्थमपिनस्येनगलगंडंविनाशयेत् ॥

उग्रावचा ।

इति तुम्बीतैलम् ।

अर्थ-कड़वा तेल एकसेर, कड़वी तोबींका रस चारसेर, और कल्कके लिये वायविडंग, जवाखार, सैंधानोन, वच, अडूसा, चीता, सोंठ, पीपल,

कालीमिरच, और देवदारू प्रत्येक दोदो तोले, सबको मिलाकर तेलको सिद्धकरे । इसतेलके द्वारा नासदेनेसैं गलगंडरोग दूर होताहै ॥

प्रियंगुयष्टीमधुकंसकुष्ठंसपिप्पलीचन्दनमुस्तनिम्बम् ।
कल्कंविनिक्षिप्यविपाच्यतैलंचतुर्गुणेनस्यविधिप्रयुक्तम् ॥
शाखोटवल्कस्वरसेचसिद्धंहन्यात्प्रवृद्धान्गलगण्डरोगान् ॥

इतिशाखोटतैलम् ।

अर्थ-कड़वा तेल एकसेर, सिहोडेकी छालका रस चारसेर, और कल्कके लिये फूलप्रियंगु, मुलैठी, कूठ पीपल, लालचन्दन, नागरमोथा और नीमकी छाल प्रत्येक दो दो तोले । सबको मिलाकर यथाविधिसै तेलको पकावै । इस तेलको नासके द्वारा व्यवहार करनेसै गलगण्ड रोग दूर होताहै ॥ १ ॥

निर्गुण्डीस्वरसेवापिलांगलीमूलकल्कितम् ।
तैलंनस्यान्निहन्त्याशुगंडमालांसुदारुणाम् ॥ २ ॥

इतिनिर्गुण्डीतैलम् ।

अर्थ-तेलएकसेर, सम्हालूका रस चार सेर, कल्कके लिये कलिहारीकी जड़ पावसेर, और जल चारसेर, यथाविधिसै तेलको सिद्धकर नास लेनेसै घोरगंडमालारोग दूरहोताहै ॥ २ ॥

त्रिफलायास्त्रयोभागाव्योषाच्चद्विगुणोमतः ।
तस्माच्चद्विगुणंज्ञेयंकांचनालस्यवल्कलम् ॥
एकीकृत्यतुचूर्णेऽस्मिन्समेदेयोऽथगुग्गुलुः ।
क्षौद्रंदशगुणान्दद्यात्त्रिफलाचूर्णतोभिषक् ॥
सर्वासुगण्डमालासुगलगण्डेतथैवच ।
नाडीव्रणेषुगंडेषुगुटिकेयंप्रशस्यते ॥

अर्थ-हरड़, बहेड़ा, आमला, प्रत्येक एकएक भाग, सोंठ, पीपल और कालीमिरच, प्रत्येक दो भाग, लालकचनार चारभाग, और गूगल सबकी बराबर, इनसब द्रव्योंको एकत्र पीस दशभाग सहत मिलाकर गोली बनालेवे । इनगोलियोंको सेवन करनेसै गण्डमाला, गलगण्ड, नाडीव्रण और गंडरोग दूरहोताहै ॥

वचाशठीहरिद्रेद्वेदार्वीन्द्रयवमुस्तकम्।
पथ्याचातिविषाशुण्ठीसर्वेदशपलंपृथक्॥
चतुर्द्रोणेम्भसःपक्त्वापादशेषेविपाचयेत्।
सर्पिःप्रस्थंपलोन्मानैःक्वाथ्यद्रव्यैःसुपेषितैः॥
प्रक्षिप्यत्रिगुणंक्षौद्रंव्योषचूर्णात्पलानिषट्।
यथाबलंपिबेत्कालंयथेष्टाहारमेवच॥
गंडमालांनिहन्त्याशुबहुवर्षसमुद्भवाम्।
कासंश्वासंप्रतिश्यायंगलगंडंमुखामयम्॥

इतिवचाद्यंघृतम्।

अर्थ-गायका घी एक सेर, क्वाथके लिये वच, कचूर, हलदी दारुहलदी, देवदारू, इन्द्रजव, नागरमोथा, हरड, अतीस और सोंठ, प्रत्येक दश दश पल, पाकके लिये जल चारद्रोण, शेष एक द्रोण, कल्कके लिये पूर्वोक्त क्वाथद्रव्य प्रत्येक एक एक पल यथाविधिसैं घृतको सिद्ध करै जब सिद्ध होजाय तब छानकर तिगुना सहत और छैपल त्रिकुटे-का चूर्ण मिलादेवै । इसको बलाबलका विचारकर और समयको देख पानकरैं और इसपर यथेष्ट भोजन करै। यह बहुत वर्षोंसे उत्पन्न हुए गंडमाला रोगको तथा खाँसी, श्वास, प्रतिश्याय गलगंड और मुखरोगको दूर करै है॥

प्रयोज्योगंडमालायांपंचतिक्तकगुग्गुलुः।
वनकार्पासिकामूलंतण्डुलैःसहयोजितम्॥
पक्त्वातुपोलिकांखादेदपचीनाशनायतु॥

अर्थ-पंचतिक्त गूगलको सेवन करनेसै गंडमालारोग आराम होता है। वनकपासकी जड और चावल दोनोंको एकत्र पीस पोलिका बना-कर खानेसै अपचीरोग दूर होताहै॥

द्विभागगन्धेनरसेनभागंदिनंचकुर्यात्स्वरसेनघृष्टम्॥
निक्षिप्यताम्रस्यपुटेरसेनतुल्यंमृदातत्रपुटंददीत॥
पुटेघृताक्तंमधुनासमेतंफलत्रयेणमधुनाघृतेन।

भगन्दरघ्नोहिरसोऽयमुक्तोददीतपथ्यंमधुरंहितञ्च ॥
स्त्रियंदिवास्वापञ्चवर्जयेत् ।

इति त्रिगुणाख्यंताम्रम् ।

अर्थ-दो भाग गंधक और एक भाग पारा दोनोंको एकत्र कुरीधानोंके रसमें खरल करै, पश्चात् पारेकी समान ताम्रपुट बनाकर उसमें इनको रख मृत्तिकासै लेपकर पुटपाक करै । यह औषधि घृत और सहतके साथ अथवा त्रिफलेका चूर्ण और सहतके साथ सेवन करनेसै भगन्दर रोग दूर होताहै । पथ्य-मधुर और हितकारक पदार्थ भोजन करै । स्त्रीसंभोग और दिवा निद्रा त्याग देवै ॥

व्योषंविडंगंमधुकंसैन्धवंदेवदारुच ।
तैलमेभिःसमंनस्यात्सकृच्छ्रामपचींजयेत् ॥

इति व्योषादितैलम् ।

अर्थ-तिलका तेल एक सेर, जल चार सेर, और कल्कके लिये सोंठ, पीपल, काली मिरच, वायविडंग, मुलैठी, सैंधानोन, और देवदारु प्रत्येक दो दो तोले । यथाविधिसे तेलको सिद्धकर नास लेनेसै अत्यन्त कष्टयुक्त अपची रोग दूर होताहै ।

चन्दनंसाभयालाक्षावचाचकटुरोहिणी ।
एभिस्तैलंशृतंपीतंसमूलामपचींजयेत् ॥

इति चंदनाद्यंतैलम्

अर्थ-तेल एकसेर, जल चारसेर, और कल्कके लिये लाल चंदन, हरड, लाख, वच और कुटकी, प्रत्येक दो दो तोले, सबको मिलाकर तेलको सिद्धकर पान करनेसै मूलसहित अपचीरोग दूर होताहै ॥

गुंजाभयारिइयामार्कसर्षपैर्मूत्रसाधितम् ।
तैलन्तुदशधापश्चात्कणालवणपंचकम् ॥
मारिचैश्चूर्णितैर्युक्तंसर्वावस्थागतंजयेत् ।
अभ्यंगादपचींनाडींवल्मीकाशोर्बुदव्रणान् ॥

इति गुंजाद्यं तैलम् ।

इति गलगंडगण्डमालाध्यायः ।

अर्थ-तिलका तेल एक सेर, गोमूत्र चारसेर और कल्कके लिये गुंजाकी जड, आककी जड़, हरड़ करियावासाऊ, खैर और सर्सों प्रत्येक दो दो तोले सबको मिलाकर दशवार पकावै, पश्चात् पीपल, पांचोंनोन और कालीमिरचका चूर्ण मिलादेवै। इसतेलको शरीरादिसे मर्दन करनेसै अपचीरोग, नाड़ीव्रण, वल्मीकरोग बवासीर,अर्बुद रोग और सर्वप्रकारके व्रण दूर होते हैं॥

इति गलगंडगंडमालाऽधिकारःसमाप्तः।

अथ श्लीपदचिकित्सामाह।

लंघनालेपनस्वेदरेचनैरक्तमोक्षणैः।
प्रायःश्लेष्महरैरुष्णैःश्लीपदंसमुपाचरेत्।
युंज्याल्लघूनिचान्नानियवान्नश्चहितंतथा।
कटुतैलंकूर्म्ममांसमशान्तौदाहमग्निना॥

अर्थ-लंघन, प्रलेप, स्वेद, विरेचन, रक्तमोक्षण, श्लेष्मनाशक क्रिया, उष्ण क्रिया, लघु अन्न, यवान्न, सरसोंका तेल, कछवेका मांस, और अग्निदाह इन सब योगोंसे श्लीपद रोग शान्त होता है

शाम्यतिपिच्छिलगुटिकासर्षपकल्कोपनाहतःसपदि।
सैवलतात्वंगच्छतिकरचरणशोथतामपिच॥
धत्तूरैरण्डनिर्गुण्डीवर्षाभूशिग्रुसर्षपैः।
प्रलेपःश्लीपदंहन्तिचिरोत्थमपिदारुणम्॥
निष्पिष्टमारनालेनरूपिकामूलवल्कलम्।
प्रलेपःश्लीपदंहन्तिबद्धमूलमपिध्रुवम्॥
हिताश्चालेपनेनित्यंचित्रकोदेवदारुच।
सिद्धार्थशिग्रुकल्कोवासुखोष्णोमूत्रपेषितः॥

गोमूत्रेणत्रयोयोगाः।

रजनींगुडसंयुक्तांगोमूत्रेणपिबेन्नरः।
वर्षोत्थंश्लीपदंहन्तिदद्रुकुष्ठंविशेषतः॥

अर्थ-सरसोंको पीसकरगोली बना उनगोलियोंसै लेप करनेसै हस्त-

पदगत श्लीपदजनित शोथ दूर होताहै । धतूरा, अण्ड, सह्मालु, पुनर्नवा, सैजिना और रससों, इनसबको गोमूत्रमें पीसकर लेपकरनेसे बहुत पुराना घोर श्लीपदरोग दूर होताहै । लाल आकके वृक्षकी जड़की छाल-को कांजीमें पीसकर लेप करनेसै श्लीपदकी सूजन दूर होतीहै । लाल चीता और देवदारु दोनोंको गोमूत्रमें पीसकर अथवा सफेद सरसौं और सैजिनेकी जड़की छालको गोमूत्रमें पीस कुछ कुछ गरम लेप करनेसे निश्चय शोथसंयुक्त श्लीपद रोग नष्ट होताहै । हलदीके चूर्णको गुड़में मिलाकर गोमूत्रके साथ पीनेसे एक वर्षका श्लीपदरोग और दद्रुकुष्ठरोग दूर होताहै ।

कृष्णाचित्रकदन्तीनांकर्षमर्द्धपलंपलम् ।
विंशतिश्चहरीतक्यागुडस्यचपलद्वयम् ॥
मधुनामोदकंखादेच्छ्लीपदंहन्तिदुस्तरम् ॥

इति कृष्णाद्यो मोदकः ।

अर्थ-पीपलका चूर्ण एकतोला, चीतेकी जड़का चूर्ण दोतोले, और दन्तीकी जड़का चूर्ण चार तोले, हरड़ वीस और गुड़ आठ तोले लेवै, सबको गुड़में मिलाकर मोदक बनालेवै । यह मोदक सहतके साथ खानेसै दुस्तर श्लीपदरोग दूर होताहै ॥

जिङ्गिन्यारुतुदलैःपिष्टैःकांजिकेनोष्णतांगतैः ।
स्वेदःश्लीपदनाशायकर्त्तव्यःसंप्रजानता ॥
स्वेदःस्नेहोपनाहांश्चश्लीपदेऽनिलजेभिषक् ।
मंजिष्ठामधुकंरास्नासहिंस्नासपुनर्नवा ॥
पिष्ट्वारनालैर्लेपोऽयंपित्तश्लीपदनाशनः ॥
पूतीकस्वरसंकोष्णंक्षारसैन्धवसंयुतम् ॥
पिबेत्कटुकतैलेनश्लीपदानांनिवृत्तये ।
गंधर्वतैलभृष्टांहरीतकींगोजलेनयःपिबति ॥
श्लीपदबंधनमुक्तोभवत्यसौसप्तरात्रेण ।
वर्षाभूत्रिफलाचूर्णंपैप्पल्यासहयोजितम् ॥

सक्षौद्रंविलिहँल्लेहंचिरोत्थंश्लीपदंजयेत् ॥

अर्थ-जिंगिनीके पत्तोंको काँजीमें पीस गरमकर स्वेद देनेसे श्लीपद रोग दूर होताहै । वैद्य वातज श्लीपदरोगमें स्वेद, स्नेह और प्रलेपप्रयोग करै । मजीठ, मुलेठी, रास्ना, कटेरी, और पुनर्नवा यह सब द्रव्य समान भाग लेकर काँजीमें पीस लेप करनेसै श्लीपदरोग दूर होताहै। करंजकीछालका रस गरम करकै जवाखार और सैंधानोनका चूर्ण तथा सरसोंका तेल मिलाकर पान करनेसै-श्लीपदरोग आराम होताहै । अंडके तेलमें भुनी हुई हरड़ गोमूत्रके साथ पान करनेसे सात दिनमें श्लीपदरोग दूर होताहै । पुनर्नवा, हरीतकी, आमला, बहेडा, और पीपल, इन सबका समानभाग चूर्ण सहतके साथ सेवन करनेसै श्लीपदरोग दूरहोताहै ॥

त्रिकटुत्रिफलाचव्यंदार्वीवरुणगोक्षुरम् ।
अलम्बुषांगुडूचीञ्चसमभागानिचूर्णयेत् ॥
सर्वेषांचूर्णमाहृत्यवृद्धदारस्यतत्समम् ।
कांजिकेनचतत्पेयमक्षमात्रंप्रमाणतः ॥
जीर्णेचापरिहारंस्याद्भोजनंसार्वकालिकम् ।
नाशयेत्श्लीपदंस्थौल्यमामवातंचदारुणम् ॥
गुल्मकुष्ठानिलहरंवातश्लेष्मज्वरापहम् ॥

इति वृद्धदारचूर्णम् ।

अर्थ-सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आमला,चव्य, दारुहलदी, वरना, गोखुरू, गोरखमुण्डी और गिलोय, इनसबको समानभाग लेकर चूर्ण करले और सर्वचूर्णबराबर विधारेका चूर्ण मिलादेवै; इसको काँजिके साथ दो तोलेभर पान करनेसै श्लीपदरोग, स्थूलता, दारुण आमवात, गुल्म, कुष्ठ, वातरोग और वातकफज्वर दूर होताहै ।

पिप्पलीत्रिफलादारुनागरंसपुनर्नवम् ।
भागैर्द्विपलिकैरेषांतत्समंवृद्धदारकम् ॥
कांजिकेनापिबेचूर्णकर्षमात्रंप्रमाणतः ।
जीर्णेचापरिहारंस्याद्भोजनंसार्वकालिकम् ॥

श्लीपदंवातरोगांश्चहन्यात्प्लीहानमेवच ।
अग्निश्चकुरुतेघोरंभस्मकंचानियच्छति ॥

इति पिप्पल्याद्यंचूर्णम् ।

अर्थ-पीपल, हरड, बहेडा, आमला, देवदारु, सोंठ, पुनर्नवा, प्रत्येक दो दो पल, और सबकी बराबर विधारा लेवै सबका बारीक चूर्ण-कर दो तोलेभर काँजीके साथ पान करनेसे श्लीपदरोग वातरोग और प्लीहारोग दूर होता है।और जठराग्निको भस्माग्निकी समान दीपन करैहै ॥

निर्गुंडीतिन्तिडिकाशिखिमन्थदलंपुनर्नवामूलम् ।
भेत्तापाषाणानांगोक्षुरकःपारिभद्रत्वक् ॥
एतैःपलार्द्धैर्योराशिस्ततःस्याद्द्विगुणःखलिः ।
तैलेनसर्षपाणाश्चतदेकीकृत्ययत्नतः ॥
शालेर्मण्डेनसंदध्यात्सप्तरात्रंनवेघटे ।
ततःसर्षपतैलेनापिबेत्कर्षप्रमाणतः ॥
जीर्णेभुञ्जीतशाल्यन्नंमुद्गानांपक्षिणांरसैः ।
पंचाशद्वर्षजातश्चजातांकुरमपिध्रुवम् ॥
त्रिसप्ताहाज्जयत्याशुश्लीपदंनात्रसंशयः ॥

शिखिमन्थोगणिकारिकानिर्गुण्ड्यादित्रयस्यपत्रंसर्वेषां चूर्णसर्षपखलिश्चवस्त्रच्छाननादधःपतितोरौद्रेणशोषितो ग्राह्यः। मिश्रयित्वायोज्यःकटुतैलंमण्डस्त्वालोडनयोग्यः ॥

इति निर्गुण्ड्यादिसंधानम् ।

अर्थ-सम्हालूके पत्ते, इमलीके पत्ते, अरणी, पुनर्नवेकी जड़, पाखानभेद, गोखरू और फरहदकीछाल, प्रत्येक दो दो तोले और इनसे दुगुनीसरसोंकी खल एकत्र कूटकर सरसोंके तेलमें खूब चलाकर मिलादेवे, पश्चात् इसमें चावलोंका माड मिलाकर एक नवीन मट्टीकें घड़ेमें भरकै सातदिनतक रक्खा रहनेदे। फिर इसमें सरसोंका तेल मिलाकर दोतोले प्रमाण पिये तो निश्चय श्लीपदरोग दूर होवै । इस औषधिके जीर्ण होनेपर मूंगमसूरादि दालका यूष और कपोत लावादि पक्षियोंके मांसका यूष शालिधानके चावलोंके भातके साथ भोजन करै ॥

दन्तीमूलंपलंदद्यात्त्रिवृन्मूलपलंतथा।
त्रिफलातिविषाचित्रविडंगार्द्धपलंपृथक्॥
स्नुहीक्षिरसमंतोयेघृतस्यकुडवंपचेत्।
बिन्दुमात्रप्रयोगेणवेगःसमुपजायते॥
दुर्वारश्लीपदंहन्तिवृक्षमिन्द्राशनिर्यथा॥
तोयेचतुर्गुणे।

इति दन्त्यादिघृतम्।

अर्थ–गायकाघी आधासेर, जल दोसेर, थूहरका दूध आधासेर, और कल्कके लिये दन्तीकीजड़ एकपल, निशोतकी जड़ एकपल, तथा हरड़, बहेडा, आमला, अतीस, लालचीता, और वायविडंग, प्रत्येक दो दो तोले। सबको मिलाकर यथाविधिसे घृतको सिद्ध करै, इस घृतको एक बिंदुभर खानेसे जुल्लाबहोताहै, और दुर्वार श्लीपदरोग आराम होताहै॥

सुरसादेवकाष्ठञ्चत्रिकटुत्रिफलातथा।
लवणानिचसर्वाणिविडंगान्यथचित्रकम्॥
चविकापिप्पलीमूलंगुग्गुलुर्हपुषावचा।
यवाग्रञ्चैवपाठाचवचैलावृद्धदारकम्॥
कल्कैश्चकार्षिकैरेतैर्घृतप्रस्थंविपाचयेत्।
दशमूलीकषायेणधान्ययूषद्रवेणच॥
दधिमण्डसमायुक्तंप्रस्थंप्रस्थंपृथक्पृथक्।
पक्कंस्यादुद्धृतंकल्कात्पिबेत्कर्षत्रयंहविः॥
श्लीपदंकफवातोत्थंमांसरक्ताश्रितंजयेत्।
मेदःश्रितंचवातोत्थंहन्यादेतन्नसंशयः॥
अपचींगंडमालांचअंत्रवृद्धिन्तथार्बुदम्।
नाशयेद्ग्रहणीदोषंश्वयथुंगुदजानिच॥
परमग्निकरंहृद्यंकोष्ठक्रिमिविनाशनम्।

घृतंसौरेश्वरंनामश्लीपदंहन्तिसेवितम् ॥
जीवकेनकृतंह्येतद्रोगानीकविनाशनम् ॥
इति सौरेश्वरघृतम् ।

अर्थ–गायका घी दोसेर, दशमूलका क्वाथ दोसेर, धानोंका यूष दो सेर, काँजी दोसेर, दहीका मंड दोसेर, और कल्कके लिये तुलसी, देव-दारु, सोंठ, मारिच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आमला, सैंधानोन, विड नोन, कालानोन, समुद्रनोन, औद्भिदनोन, वायविडंग, चीता, चव्य पीपरामूल, गूगल, हाऊबेर, वच, जवाखार, पाढ़, बडी इलायची, और विधारा प्रत्येक दो दो तोले लेवें। सबको मिलाकर यथाविधिसें घृतको सिद्धकरै। प्रतिदिन तीनकर्ष प्रमाण इस घृतको पीवै, इससै कफवातोद्भव श्लीपदरोग, मांसरक्ताश्रित श्लीपदरोग, मेदाश्रित श्लीपदरोग, वातोत्पन्न श्लीपदरोग, अपची, गंडमाला, अन्त्रवृद्धि, अर्बुद, संग्रहणी रोग, सूजन, बवा-सीर, यह सब रोग दूर होतेहैं। अत्यन्त जठराग्निको दीपन करनेवाला हृदयको हितकारी, कोष्ठरोगको दूर करताहै। यह सौरेश्वर घृत निश्चय श्लीपदरोगको दूर करैहै ॥

सुरसानांपलशतंपंचमूलीद्वयस्यच ।
शतंसंगृह्यसंक्षुद्यजलद्रोणेविपाचयेत् ॥
तेनपादावशेषेणघृतप्रस्थंविपाचयेत् ।
धान्ययूषश्चमण्डश्चदध्नःप्रस्थचतुष्टयम् ॥
कल्कान्येतानिदेयानि त्रिकटुत्रिफलानिच ।
निर्गुण्डीचित्रकश्चैवदेवदारुचयष्टिका ॥
पंचानांलवणानांचयवक्षारश्चपिप्पली ।
चविकाहपुषादार्वीगुग्गुलुर्वृद्धदारकम् ॥
शठीवचाविडंगैलापाठापालाशकंतथा ।
पिचुभागःप्रदातव्यःपक्तव्यंसुसमाहितैः ॥
विरेकान्तरितेकुर्याद्विडालपदमात्रकम् ।

इदंहिविविधान्रोगान्कफवातोद्भवानपि ।
श्लीपदान्विविधान्घोरान्करकर्णाश्रितानपि ॥
विद्रधिंचार्बुदश्चापिविविधानुदरास्थितान् ।
अन्त्रवृद्धिगदांश्चापिमेदोमांसाश्रितानपि ॥
रक्ताश्रितान्गदान्हन्तिवृक्षमिंद्राशनिर्यथा ।
घोरनाडीव्रणाञ्छोथान्गंडमालांश्चदारुणान् ॥
नातःपरतरंश्रेष्ठंविद्यतेश्लीपदेगदे ।
सज्वरंविज्वरञ्चैवचिरजंकुलजन्तथा ॥
प्रोक्तंहारीतमुनिनामहासौरेश्वरंघृतम् ॥

इतिबृहत्सौरेश्वरंघृतम् ।

अर्थ–गायका घी दो सेर, क्वाथके लिये तुलसी १०० सौ पल, दशमूल १०० पल, जल ३२ बत्तीस सेर, शेष आठसेर, धान्ययूष आठसेर, दहीका मण्ड आठसेर, और कल्कके लिये सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेडा, आमला, सम्हालु, चीता, देवदारु, मुलेठी, पांचोंनोन, जवाखार, पीपल, चव्य, हाऊबेर, दारुहलदी, गूगल, विधारा, कचूर, वच, वायविडंग, बड़ी इलायची, पाढ़, और ढ़ाकके बीज प्रत्येक दो दो तोले लेवै । सबको मिलाकर यथाविधिसै घृतको सिद्ध करै । इसको दो तोलेभर नित्य खाय, इससै नानाप्रकारके कफवातसै उत्पन्न हुए रोग, विविध प्रकारके श्लीपदरोग, हाथके रोग, कानके रोग, विद्रधि, अर्बुद, अनेकप्रकारके उदररोग, अन्त्रवृद्धिरोग, मेद, मांस और रुधिरके रोग दूर होतेहैं । तथा घोर नाड़ीव्रण, सूजन, गंडमाला, इन सबको यह घृत दूर करैहै । इससै परे और कोई दूसरी औषधि श्लीपदरोगकी नहीं है। यह ज्वरयुक्त, ज्वररहित, पुराना और कुलज श्लीपद रोगको दूर करैहै । यह महासौरेश्वर घृत हारीतमुनिने कहा है ।

द्विपलंवृद्धदारस्यतदर्द्धञ्चमहौषधम् ।
पिप्पलीत्रिफलादार्वीचित्रकंसपुनर्नवम् ॥
एभिश्चार्द्धपलैर्भागैर्घृतप्रस्थंविपाचयेत् ।

श्लीपदंनाशयत्याशुगृध्रसीशोथशूलनुत् ॥
पाण्डुरोगामवातघ्नंबलवर्णाग्निवर्द्धनम् ॥

इति वृद्धदारकाद्यंघृतम् ।

अर्थ-गायका घी दोसेर, जल आठसेर, और कल्ककेलिये विधारा दोपल, सोंठ एकपल, पीपल, त्रिफला, दारुहलदी, चीता, और पुनर्नवा, प्रत्येक दोदो तोले । विधिपूर्वक घृतको सिद्धकरै । यहघृत-श्लीपद रोग, गृध्रसीवात, सूजन, शूल, पाण्डुरोग, और आमवातको दूर करैहै, तथा बल, वर्ण और अग्निको बढ़ावे है ॥

घृतप्रस्थंविपक्तव्यंसव्योषंवृद्धदारकैः ।
कल्कैःसौवीरसिद्धंस्याच्छ्लीपदानांनिवृत्तये ॥
अग्निंचकुरुतेदीप्तमामवातंचशस्यते ।
एतैःकटुपचेत्तैलंपानाच्छ्लीपदनाशनम् ॥
सौवीरंसंधानाविशेषः तदभावेकांजिकम् ॥

इतिवृद्धदारकघृतंतैलंच ।

अर्थ-गायका घी अथवा सरसोंका तेल दोसेर, सौवीर नामवाली काँजी आठसेर, और कल्कके लिये त्रिकुटा और विधारा दोनों मिलेहुए आधसेर, तथा जल आठसेर, सबको मिलाकर यथाविधिसै घृतको अथवा तेलको सिद्धकरै।इसघृत अथवा तेलको पानकरनेसै श्लीपदरोग दूरहोताहै.

विडंगमरिचार्केषुनागरेचित्रकेतथा ।
भद्रदार्वेलकाख्येचसर्वेषुलवणेषुच ॥
तैलंपक्वंपिबेद्वापिश्लीपदानांनिवृत्तये ॥

इति विडंगाद्यंतैलम् ।

अर्थ-कड़वातेल दोसेर, जल आठसेर, और कल्ककेलिये वायविडंग, कालीमिरच, आककी जड़, सोंठ, चीता, देवदारु, इलायची और पाँचों नोन, प्रत्येक डेढ़ डेढ़ तोले । सबको मिलाकर विधिपूर्वक तेलको सिद्धकरै । यह तेल-श्लीपदादि रोगोंको दूरकरैहै ।

धात्रीशिवामृतादन्तीवह्निगोक्षुररोहिणी ।
कणादार्वीङ्गुदीपूतिशुण्ठीनांपलपंचकम् ॥
प्रत्येकंक्काथयेत्सर्वंजलद्रोणेभिषग्वरः ।

घृतप्रस्थोविपक्तव्योदत्त्वापुरपलाष्टकम् ॥
धान्ययूषस्यचप्रस्थेशनैर्मृद्वग्निनाततः ।
कर्षमात्रन्तुकर्त्तव्यंघृतमेतदनुत्तमम् ॥
कठोरंश्लीपदंहन्तिगंडमालांत्रिदोषजाम् ।
चिरोत्थमपिशोथञ्च आमवातंसुदारुणम् ॥
स्थौल्यंपाण्डुंकामलाञ्चवातश्लेष्मभवांरुजम् ।
जीर्णज्वरंतथाशूलंनाडीव्रणमथार्बुदम् ।
अपचींगंडमालाञ्चसर्वमेतद्व्यपोहति ॥

इति धान्यादिघृतगुग्गुलः ।

अर्थ–गायका घी दो सेर, धान्ययूष दो सेर, गूगल एकसेर, काथके लिये आमला, हरड़, गिलोय, दन्ती, चीता, गोखरू, कुटकी, पीपल, दारुहलदी, हिंगोट, पूतिकरंज, और सोंठ प्रत्येक पांचपांच पल, जल बत्तीससेर, शेष आठसेर, इस विधिसे इसघृतगुग्गुलको सिद्धकर एककर्ष प्रमाण सेवनकरै। यह–कठोर श्लीपद रोग, त्रिदोषज गंडमाला, बहुतपुराना शोथ, दारुण आमवात, स्थूलता, पाण्डुरोग, कामला, वातकफोद्भवरोग, जीर्णज्वर, शूल, नाड़ीव्रण, अर्बुद, अपची, गण्डमाला इनसबको दूर करै है ॥

ताम्रंगंधंसमंसूतंशुद्धंमर्द्यदिनत्रयम् ।
मेघनादोनागवल्लीपाठापुनर्नवाद्रवैः ॥
गोमूत्रैर्मर्दयेद्गाढंचक्रयन्त्रेदिनंपचेत् ।
माषैकंभक्षयेदेतच्छ्लीपदंहन्तिदुस्तरम् ॥
खदिरंपद्मकाष्ठञ्चमधुकञ्चाष्टमाषकम् ।
गवांमूत्रैःसमंपेष्ट्वापिबेच्छ्लीपदशान्तये ॥
गर्त्तादधोभवेद्वाह्निर्मध्यगर्त्ताद्रसंकुरु ।
चक्रयन्त्रमिदंसिद्धंवाह्यगर्त्ताद्बृहत्पुटम् ॥

इति चक्रेश्वरो रसः ।

अर्थ–शुद्धतांबा एकभाग, शुद्ध गंधक एकभाग, शुद्धपारा एकभाग,

इन तीनोंको चौलाई, पाढ़, और पुनर्नवेके रसमें तथा गोमूत्रमें तीन दिन खरलकर एकदिन चक्रयंत्रमें पकावै । इसको एकमासेभर खावैतो निश्चय श्लीपद रोग दूर होवै । इसके ऊपर खैर, पद्माख,सहत, इनको गोमूत्रमें मिलाकर आठमासेभर पीवै । गड्ढेके अधोभागमें अग्नि, मध्यभागमें रस, और बाहर बृहत्पुट दीजावै इसको चक्रयंत्र कहते हैं ॥

हिंगूलसंभवंसूतंगंधकंमृतताम्रकम् ।
कांस्यंवंगंहरीतालंतुत्थंशंखंवराटम् ॥
त्रिकटुत्रिफलालोहंविडंगंपटुपंचकम् ।
चविकापिप्पलीमूलंहपुषाचवचातथा ॥
शठीपाठादेवदारुएलाचवृद्धदारकम् ।
एतानिसमभागानिसंचूर्ण्यवटिकांकुरु ॥
त्रिवृच्चित्रकदन्तीनांभावयित्वारसैःपृथक् ।
हरीतकीरसंदत्त्वापंचगुंजानिभांशुभाम् ॥
एकैकांभक्षयेद्रोगीशीतंचानुपयःपिबेत् ।
श्लीपदंकफवातोत्थंरक्तमांसाश्रितश्चयत् ॥
मेदोगतंधातुगतंहंत्यवश्यंनसंशयः ।
अर्बुदंगंडमालांचअंत्रवृद्धिंचिरन्तनीम् ॥
वातपित्तेश्लेष्मवातेगुदरोगेक्रिमौतथा ।
अग्निवृद्धिंकरोत्येवबलवर्णश्चसुस्थताम् ॥
श्रीमद्गहननाथेननिर्मितोविश्वसंपदे ।
नित्यानन्दरसोनाम्नाश्लीपदव्याधिनाशकः ॥
आनन्दयतिलोकेशःशिवोबाणासुरंयथा ।
तथैवरोगिणांनित्यंब्रध्नवृद्धौचसर्वजे ॥
रक्तजेपित्तजेचापिपथ्यंयोज्यंसदाबुधैः ।

अभावेवृद्धदारस्यत्रिवृताञ्चनियोजयेत् ॥

इति नित्यानन्दरसः ।

अर्थ–सिंग्रफसै निकाला हुआ पारा, गंधक, ताँबेकी भस्म, कांसी, वंग, हरिताल, नीलाथोथा, शंख, कौड़ी, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेडा, आमला, लोहा, वायविडंग, पांचोंनोन, चव्य, पीपरामूल, हाऊबेर, बच, कचूर, पाढ़, देवदारु, इलायची, और विधारा, इनसबको समान भागले चूर्णकर निसोत, चीता, दन्ती और हरड़ प्रत्येकके रसमें अलगभावनादेकर पाँचपाँच रत्तीकी गोली बनालेवै । एकगोली प्रतिदिन खाय, और ऊपरसै शीतल जलका अनुपानकरै । यह–कफवातोद्भव श्लीपदरोग, रक्तमांसाश्रित श्लीपदरोग, मेदोगत श्लीपदरोग, धातुगत श्लीपदरोग, अर्बुद, गण्डमाला, बहुतपुराना अन्त्रवृद्धिरोग, वातपित्त, श्लेष्मवात, गुदरोग, क्रिमिरोग इनसबको दूर करैहै । अग्निको दीपनकरै, बल, वर्ण और सुस्थताको बढ़ावैहै । यह श्लीपदरोगनाशक नित्यानन्द रस श्रीमद्गहननाथ वैद्यने संसारके उपकारके लिये निर्माण कियाहै । तथाब्रध्न, वृद्धि, त्रिदोषज, रक्तज और पित्तज इनसबको हरैहै । इसके ऊपर सदा पथ्यदेवै । इसयोगमें जो विधारा नहीं मिलैतौ निसोत अथवा (समुद्रशोष) लेवै ॥

रसगंधकताम्राणिकाचंसीसंसमंसमम् ।
पिप्पलीत्रिवृताशुण्ठीधन्याकंचहरीतकी ॥
रसतास्त्रिगुणोग्राह्यःप्रत्येकंचूर्णमेवच ।
रसपादंप्रदातव्यंहिंगुचैवयवानिका ॥
अर्द्धमाषावटीकार्याखादेदेकांयथाबलम् ।
निहन्तिश्लीपदंरोगंदोषत्रयसमुद्भवम् ॥
पैत्तिकेभक्षयेद्यूषंश्लैष्मिकेशुण्ठसैंधवम् ।
वातिकेतक्रभक्तानिविष्टम्भंपरिवर्जयेत् ॥
कामदेवरसश्चायंतद्वद्देहंकरोत्यलम् ।
श्रीमद्गहननाथेनरचितोविश्वसंपादि ॥

इतिकामदेवरसः ।

अर्थ-पारा, गंधक, ताँबा, काँच, और सीसा प्रत्येक एकभाग, पीपल, निसोत, सोंठ, धनिया, और हरड़ प्रत्येक तीनभाग, तथा हींग और अजवायन प्रत्येक चौथाईभाग, सबको बारीक पीसकर आधे आधे मासेकीगोली बना लेवै। प्रतिदिन एक गोली बलको विचारकर खावै। यह त्रिदोषज-श्लीपदरोगको दूर करैहै। यह औषधि सेवन करके मनुष्योंको चाहिये जो पित्तका श्लीपद होयतो मूंग माषादिके यूषके साथ भोजनकरै। कफज श्लीपद होयतौ सैंधेनोनका चूर्ण और सोंठका चूर्ण भक्षणकरै। और वातज श्लीपद होयतौ तक्रके साथ भातभोजन करै, इसपर विष्टम्भि पदार्थ कभीभी नखाय। यह कामदेव रस देहको कामदेवकी समान करताहै, यह श्रीमद्गहननाथने संसारके उपकारके लिये निर्माण कियाहै॥

शालश्चिकापलद्वन्द्वंपलद्वंद्वंपुनर्नवा।
इन्द्रसुरंपलद्वन्द्वंपलैकंचमरीफलम्॥
गुंजादलंपलैकन्तुक्काथयेत्प्रास्थिकेऽम्भसि।
पादावशेषेविपचेद्वोघृतंप्रास्थिकंसुधीः॥
अभयाचित्रकंक्षारंसैन्धवंविश्वभेषजम्।
एतेषांकर्षमानेनवस्त्रपूतंविचूर्णितम्।
घृतेसिद्धेप्रदातव्यंतच्चमाषन्तुखादयेत्।
पंचाननघृतंनामश्लीपदेगदकुम्भिनि॥
प्लीहगुल्मोदरानाहज्वरशोथविनाशनम्।
श्रीमद्गहननाथेन निर्मितंविश्वसम्पदि
गोमूत्रंश्लैष्मिकेदेयंदुग्धंवातेचपैत्तिके।
सामान्यभोजनंदेयमनुपानंप्रकीर्तितम्॥
एतत्तैलंप्रकर्त्तव्यंकल्केनवस्तुनाविना।
घृतेनवाकृतंतैलंघृततुल्योगुणोभवेत्॥

इतिपंचाननघृतंतैलञ्च।

अर्थ-शालिच दोपल, पुनर्नवा दोपल, इन्द्रायण दोपल, सुपारी एक

पल, और चोंटलीके पत्ते एकपल, जल दोसेर, शेष आधसेर, गायका घी दोसेर, और कल्कके लिये हरड़, चीता, जवाखार, सैंधानोन और सोंठ, यह प्रत्येक दोदो तोले। सबको मिलाकर यथाविधिसे घृतको सिद्ध करैं। यहपंचाननघृत श्लीपदरोग, प्लीहा, गुल्म, उदररोर, आनाह, ज्वर और शोथरोगको दूर करैहै। यह श्रीमद्गहननाथने संसारके उपकारके लिये निर्माण कियाहै। श्लेष्मज श्लीपद होयतो गोमूत्रका अनुपान करै, जो तेल बनाना होयतो कल्ककी औषधी नगेरे।अथवा घृतहीमें तेलको डालकर पकावे तो घृतकी समान गुण करै॥

पुनर्नवादारुशिग्रुदशमूलमहौषधैः।
कफवातकृतेशोथेलेपःकोष्णोविधीयते॥

अर्थ–पुनर्नवा, देवदारू, सैंजिनेकी जड़, दशमूल और सोंठ यह सब समान भागले जलमें पीस लेपकरनेसे कफवातकृत शोथ दूरहोताहै॥

हरीतक्याविभीतस्यधात्र्याश्चूर्णंसुचूर्णितम्।
षट्तोलकप्रमाणेनग्राह्यमेतद्गुणैषिणा।
तोलद्वयंलौहचूर्णकान्तलोहस्यजारितम्।
तोलद्वयंततोदेयंविशुद्धंचशिलाजतु॥
कृत्वैकत्रसमस्तेषुत्रिफलाक्काथभावना।
आशुश्लीपदविध्वंसीसर्वव्याधिविनाशनः॥
श्लीपदारिरितिख्यातोलोहोमुनिभिरर्चितः।

इतिश्लीपदारिलोहः।

अर्थ–हरड़,बहेड़ा,आमला प्रत्येक छै छै तोले,जारित लोहेका चूर्ण दो तोले,शुद्ध शिलाजीत दोतोले इनसबको एकत्रकर त्रिफलेके काढेमें भावना देकर चूर्णकरले। यह श्लीपदरोगको शीघ्रही दूर करताहै इसको श्लीपदारि लोह कहते हैं.

गंधकंपारदंलौहंघनतालंमनःशिला।
शिलाजतुपुरंशुद्धंसमभागंविचूर्णयेत्॥
विडंगंत्रिफलाव्योषमाब्धिफेनंपुनर्नवा।

देवदारुंचित्रकंचदार्वीश्वेतापराजिता ॥
चूर्णमेषांपृथक्तुल्यंसर्वमेकत्रकारयेत् ।
त्रिफलाभृंगराजस्यरसेनैवत्रिधात्रिधा ॥
भावनाखलुदातव्याततःसंचूर्ण्यभक्षयेत् ।
मधुनामाषमात्रञ्चप्रातःकालेदिनेदिने ॥
कृत्वानुपानंनिम्बस्यपत्रंपुष्पंत्वचंसमम् ।
शाणमात्रंघृतैःकुर्यात्सर्ववातविकारनुत् ॥
वातरक्तंमहाघोरंगम्भीरंसर्वजंजयेत् ।
सर्वोपद्रवसंयुक्तंसाध्यासाध्यंनिहन्त्यलम् ॥

इति वातरक्तान्तकोरसः ।

इति श्लीपदाध्यायः ।

अर्थ-पारा, गंधक, लोहा, अभ्रक, हरिताल, मैनशिल, शिलाजीत, गूगल, वायबिडंग, त्रिकुटा, त्रिफला, समुद्रफेन, पुनर्नवा, देवदारु, चीता, दारुहलदी, और सफेद कोयला, इनसब द्रव्योंको समान भागले एकत्र चूर्णकर, त्रिफला, और भांगरेके रसकी तीन तीन भावना देकर चूर्ण करले । सहत साथ इसको एक मासेभर प्रतिदिन प्रातःकाल खावै, अनुपान-नीमके पत्ते, पुष्प और छालका चूर्णकर चारमासे घृतके साथ खाय । इससे-सर्वप्रकारके वातविकार, वातरक्त और महाघोर, गंभीर तथा सर्वोपद्रवसंयुक्त वातरक्त रोग दूर होताहै ॥

इति श्लीपदरोगाधिकारःसमाप्तः ।

अथ विद्रधिचिकित्सामाह ।

विद्रधिंसर्वमेवात्रत्वरयाव्रणशोथवत् ।
उपाचरेद्यथादोषंशोणितंचहरेच्छनैः ॥
जलौकःपातनंशस्तंसर्वस्मिन्नेवविद्रधौ ।
मृदुर्विरेकोलघ्वन्नंस्वेदःपित्तोत्तरंविना ॥

अर्थ-सर्वप्रकारके विद्रधिरोगकी चिकित्सा व्रणशोथकी समान करै, तथा दोषानुसार रक्तमोक्षण करावै । सर्वप्रकारके विद्रधिरोगमें जौंकोंको लगवाना अत्युत्तमहै । पित्तज विद्रधिको छोड़कर बाकी सर्वप्रकारके विद्रधिरोगोंमें मृदु विरेचन, हलका भोजन, और स्वेद देवै ॥

वातघ्नमूलकल्कैश्चवसातैलघृताप्लुतैः ।
सुखोष्णोबहुलोलेपःप्रयोज्योवातविद्रधौ ॥
रास्नाहिंस्रादेवदारुबिल्वमूलाग्निमन्थकैः ।
मातुलुंगाम्लसंपिष्टैःसाज्यैर्लेपोत्रवातिके ॥
स्वेदोपनाहाःकर्त्तव्याःशिग्रुमूलसमन्विताः ।
स्वेदःपयोवेशवारकृशरापायसैर्मतः ॥
उपनाहश्चवातोक्तःप्रयोज्यःशाल्वनादिकः ।
यवगोधूममुद्गैश्चस्विन्नपिष्टैःप्रलेपयेत् ॥
विलीयतेक्षणेनैवअपक्वश्चैवविद्रधिः ।
दशमूल्यमृतापथ्यावर्षाभूदारुनागरैः ॥
सशिग्रुक्वथितंपेयंज्वरेवातजविद्रधौ ।
पुनर्नवादारुविश्वदशमूलाभयाम्भसा ॥
गुग्गुलुंरुबुतैलंवापिबेन्मारुतविद्रधौ ॥
कफानुबन्धे गुग्गुलुम् ।

इति वाते ।

अर्थ-वातज विद्रधिरोगमें वातघ्न औषधि जड़को पीसकर घृत, तेल और वसामें मिलाकर कुछ कुछ गरम लेपकरै । रास्ना, कटेरी, देवदारु, बेलकी जड़, अरणी, बिजोरानीबू, और अमलवैंत, इन सबको एकत्र पीसकर घीके साथ मिलाकर लेप करनेसे वातज विद्रधि रोग दूर होताहै. विद्रधि रोगमें स्वेद और प्रलेपदेना होयतो सैंजिनकीजडके साथ देवै, तथा दूध, वेशवार, कृशरा और पायसके द्वारा स्वेद प्रदान करै। वातमें कहे हुए शाल्वनादि प्रलेपभी विद्रधिरोगमें करने चाहिये । जौ, गेहूँ, और मूँगको उबालकर पीसके लेपकरनेसे अपक्वविद्रधि क्षणभरमेंही

दूर होजावैगी। दशमूल, गिलोय, हरड़, पुनर्नवा, देवदारु, सोंठ, और सैंजिनेकी जड़, इनका एकत्र क्वाथ बनाकर पीनेसै वातज विद्रधिरोग नष्ट होताहै । पुनर्नवा, देवदारु, सोंठ, दशमूल, और हरड़, इनके काढ़ेके साथ गूगल अथवा अंडीके तेलको सेवन करनेसै वातज विद्रधिरोग दूर होताहै पुनर्नवादि क्वाथके साथ गूगल कफानुबन्ध वातजविद्रधि रोगमें प्रयोग करै ॥

पैत्तिकेशर्करालाजामधुकैःशारिवायुतैः ।
प्रदिह्यात्क्षीरपिष्टैर्वापयस्योशीरचन्दनैः ॥
योगद्वयोऽपिक्षारेणलेपनंपित्तविद्रधौ ।
पयस्या क्षीरकाकोली ।
पंचवल्कलकल्केनघृतमिश्रेणलेपयेत् ॥
सर्पिषाशतधौतेननवनीतेनवागवाम् ।
त्रिवृद्धरीतकीनाञ्चचूर्णंमधुयुतंपिबेत् ॥
पिबेद्वात्रिफलाक्काथंत्रिवृत्कल्काक्षसंयुतम् ॥
इतिपित्ते ।

अर्थ-मिश्री, खीलै, मुलैठी और अनन्तमूल इनको दूधमें पीसकर, अथवा-क्षीरकाकोली, खस, और लालचन्दन इनको दूधमें पीसकर प्रलेप करनेसै पित्तज विद्रधिरोग दूर होताहै । वड़, गूलर, पीपल, पाखर, और वेत इन पाँचवृक्षोंकी छालको पीसकर घीमें मिलाकर लेप करनेसै पित्तजविद्रधिरोग दूर होताहै । सौवार धुलेहुए घीका अथवा नौनीका लेप करनेसै पित्तजविद्रधिरोग दूर होताहै । निशोतका चूर्ण और हरडोंका चूर्ण समानभाग ले सहतके साथ सेवन करनेसै अथवा त्रिफलेके क्वाथमें निसोतका चूर्ण मिलाकर पान करनेसै पित्तजन्य विद्रधिरोग दूर होताहै ॥

इष्टकासिकतालौहगोशकृत्तुषपांशुभिः ।
मूत्रपिष्टैश्चसततंस्वेदयेच्छ्लेष्मविद्रधौ ॥
कषायपानैर्वमनैरालेपैरुपनाहकैः ।
हरेद्दोषमभीक्ष्णञ्चतथैवासृगलाम्बुना ॥

दशमूलीकषायेणसस्नेहेनरसेनवा।
शोथंव्रणंवाकोष्णेनसशूलंपरिसेचयेत् ॥
त्रिफलाशिग्रुवरुणदशमूलाम्भसापिबेत्।
गुग्गुलुंमूत्रसंयुक्तंविद्रधौकफसंभवे ॥

इति कफे।

अर्थ—ईट, वालू, लौहा, गोवर और गोवरकी मांदको गोमूत्रमें पीसकर लेप करनेसे कफजविद्रधिरोग दूरहोताहै । कफज विद्रधिरोगमें कषाय, वमन, प्रलेप और स्वेद देकर दोषोंको दूरकरै, तथा अलाबुप्रयोगके द्वारा रक्तमोक्षण कार्य्यकरै। ईषत् उष्ण दशमूलके क्वाथ अथवा स्नेह-संयुक्त मांसादिरसके द्वारा परिसेक करनेंसै शूलकी समान पीडायुक्त व्रणशोथ दूर होताहै। त्रिफला, सैंजिनेकी जड़, वरनेकी छाल, और दशमूल इनका क्वाथ गोमूत्र और गूगलके साथ पानकरनेसै—कफजन्य विद्रधिरोग दूरहोताहै ॥

भूनिम्बार्द्धपलंशिलापलयुतंदार्वीपलेद्वेतथा
दार्व्यर्द्धेनपुनर्नवांकुरुसमांदार्वीसमःप्रग्रहः।
वासादर्द्धयुतंपलन्तुकटुकायोज्यातदर्द्धेनवै
विन्ध्याह्वंचनिशासमानममृताकर्षास्तुपंचैवतु।
सर्ववत्सकसप्तकर्षसहितंसुश्लक्ष्णचूर्णीकृतम्।
वासायाःस्वरसेनभावितामिदंत्रीन्पंचवारांस्तथा ॥
भूयस्तद्गुडवारिणाप्रतिदिनंपीतंपुरस्तेरवौ।
पुंसांविद्रधिनाशनन्तुकथितंपथ्यंस्वयंब्रह्मणा ॥

प्रग्रहःशोणालुफलम्।
विन्ध्याह्वस्थानेऽश्वामितिपाठेऽश्वगंधा।

इति भूनिम्बाद्यं चूर्णम्।

अर्थ—चिरायता दोतोले, हलदी चारतोले, दारुहलदी आठतोले, पुनर्नवा चारतोले, अमलतास आठतोले, अडूसा डेढ़तोला, कुटकी पौनतोला, छोटी इलायची चारतोले, गिलोय पाँचतोले, और कुडेकी

छाल साततोले लेवै। इन सब औषधियोंका उत्तमरीतिसे चूर्णकर अडूसे-केरसकी तीन तथा पाँच भावना देवै। इसको प्रतिदिन प्रातःकाल गुडके सरबतके साथ सेवन करै। यह मनुष्योंके विद्रधिरोगको नाश करनेके लिये स्वयं ब्रह्माजीने कहाहै ॥

मधुशिग्रुशृतंतोयंशिलाजतुसमन्वितम्।
पिबेदभ्यंतरोत्थेचविद्रधावाशुशान्तये ॥
वरुणादिगणक्काथमपक्केभ्यन्तरोत्थिते।
उषकादिप्रतीवापंपिबेत्संशमनायवै ॥

इति उषकादिर्गणः।

अर्थ-लालसैंजिनेका क्काथ शिलाजीतके साथ पान करनेसै आभ्यन्तरिक विद्रधिरोग दूर होताहै। वरुणादिके क्काथमें उषकादि औषधियोंका चूर्ण डालकर पान करनेसै आभ्यंतरिक अपक्कविद्रधिरोग दूर होताहै ॥

प्रियंगूधातकीलोध्रकट्फलंतिलसैन्धवम्।
एतैस्तैलंविपक्तव्यंविद्रधौरोपणंपरम् ॥
तिलोवत्सकः।
तिलशत्वचमित्यपपाठःसुश्रुतादावदर्शनात् ॥
एषांकल्कः। जलंचतुर्गुणम्।

अर्थ-तेल दोसेर, जल आठसेर, और कल्कके लिये फूलप्रियंगू, धायकेफूल, लोध, कायफल, कुडा, और सैंधानोन प्रत्येक दो दो तोले। इस तेलको प्रयोग करनेसै विद्रधिका घाव भर जाताहै ॥

द्विपंचमूलीत्रिफलाकुलत्थेत्रिवृद्घनैर्मूलकशिग्रुयुक्तैः।
तैलंतिलैरण्डजमेतदेभिःसिद्धंहितंविद्रधिगुल्मशूले ॥
दशमूलादिकल्कः जलंचतुर्गुणम्।

इति दशमूलाद्यं तैलम्।

इति प्रियंग्वाद्यं तैलम्।

अर्थ-अंडका तेल दोसेर, जल आठसेर, कल्कके लिये दशमूल, त्रिफला, कुलथी, निसोत, नागरमोथा, मूली, सैंजिनेकी जड़ और तिल, प्रत्येक

दोदो तोले। यथाविधिसै तैलको सिद्धकरै। यह तेल विद्रधि और गुल्मशूलको नष्ट करैहै।

वरुणवल्कलक्काथेपिबेद्रासैन्धवंतथा।
शिलाजतुसमंहिंगुमसाध्यंविद्रधिंजयेत्॥
क्काथंशिग्रुवचावाथहिंगुसैन्धवचूर्णितम्।
संयुक्तंपाययेच्छान्त्यैविद्रधिरोगपीडितम्॥

इति विद्रध्यध्यायः।

अर्थ-वरनाकी छालके काढ़ेमें सैंधानोन, शिलाजीत और हींग डालकर पीनेसै अथवा सैंजिनेकी जड़ और वचके क्काथमें सैंधेनोन और हींगका चूर्ण डालकर पान करनेसै सर्वप्रकारके विद्रधिरोग नष्ट होतेहैं॥

इति विद्रध्यध्यायः समाप्तः।

अथ व्रणशोथचिकित्सामाह।

आदौविम्लापनंकुर्याद्द्वितीयमवसेचनम्।
तृतीयमुपनाहंचचतुर्थींपाटनक्रियाम्॥
पंचमंशोधनंचैवषष्ठंरोपणमिष्यते।
एतेक्रमाद्व्रणस्योक्ताःसप्तमोवैकृतापहः॥
मातुलुंगाग्निमन्थौचभद्रदारुमहौषधम्।
अहिंस्राचैवरास्नाचप्रलेपोवातशोथहा॥
कल्कःकांजिकसंपिष्टःस्निग्धःशाखोटकत्वचः।
सुपर्णइवनागानांवातशोथविनाशनः॥

इति वाते।

अर्थ-प्रथम विम्लापन (मर्दन), द्वितीय अवसेचन, तृतीय प्रलेप, चतुर्थ छेदन, पंचम शोधन, षष्ठ रोपण, और सप्तम वैकृतविनाश, यह व्रणकी चिकित्सा करनेकी क्रिया क्रमसै कही है। बिजोरानीबू, अरणी, देवदारु, सोंठ, रास्ना, और अहिंस्रा इन सबको समानभागले एकत्र पीसकर लेप करनेसै वातात्मक व्रणशोथरोग दूर होताहै। सिहोड़ेकी छालको काँजीमें पीस घी मिलाकर लेपकरनेसै वातजनित व्रणशोथ दूर होताहै।

दूर्वाचनलमूलश्चमधुकंचंदनस्तथा ।
शीतलाश्चगणाःसर्वेप्रलेपःपित्तशोथहा ॥
शीतलागणाउत्पलादिकाःकोलादिकाः ।
न्यग्रोधोदुम्बराश्वत्थप्लक्षवेतसवल्कलैः ॥
ससर्पिष्कःप्रलेपःस्याच्छोथनिर्वापणःस्मृतः ।
सर्पिःशतधौतंपंचवल्कलम् ।
न्यग्रधोदुम्बराश्वत्थप्लक्षवेतसशेलुभिः ॥
चंदनद्वयमंजिष्ठायष्टीपूरणगैरिकैः ॥
शतधौत घृतोन्मिश्रोलेपोरक्तप्रसादनः ।
दाहपाकरुजास्रावशोथनिर्वापणःपरः ॥
शेलुर्बहुवारकःपूरणंमातुलुंगमूलमिति ।
कंचटंतिलभृष्टंचपिष्ट्वालेपंप्रदापयेत् ॥
दाहक्लेदरुजास्रावशोथवैवर्ण्यनाशनम् ।
इति पित्ते ।

अर्थ–दूब, नीलकीजड़, मुलेठी, लालचन्दन और उत्पलादि शीतल गणकी औषधियोंके द्वारा प्रलेप करनेसै पित्तज व्रणशोथ दूरहोताहै. बड, गूलर, पीपल, पाखर, और वेत, इनकी छालको पीसकर सोवारधुलेहुए पुराने घीमें मिलाकर लेपकरनेसै पित्तज व्रणशोथ दूरहोताहै बडकी छाल, गूलरकी छाल, पीपलकी छाल, पाखरकी छाल, मुलेठी बिजोरे नीबूकी जड़,वेतकी छाल, लिसोडेकी छाल, लालचन्दन, सफेद चंदन,मजीठ और गेरू इन सब औषधियोंको समानभागलेकर सौवार धुले पुराने घीमें मिलाकर लेप करनेसै पित्तजव्रणशोथजन्य दूषित रक्त शुद्ध होवै, तथा व्रणकी दाह, पाक, वेदना, राध आदिका गिरना और सूजन दूर होतीहै । जलचौलाई और भुनेहुए तिलोंको एकत्र पीसकर लेपकरनेसै व्रणकी दाह, क्लेद, पीडा, स्राव, शोथ और विवर्णता दूरहोतीहै ॥

अजगंधाश्वगंधाचकालासरलयासह ।
एकोपिचाजशृंग्याश्चप्रलेपःश्लेष्मशोथहा ॥

अजगंधाक्षेत्रयवानी अजश्रृंगीकाकडाश्रृंगी ॥

इति कफे ।

अर्थ-तिलवन, असगंध, कलम्बक और धूप सरल इनको एकत्र पीसकर अथवा केवल कांकडासिंगीको पीसकर लेपकरनेसे कफजन्य व्रणशोथ दूर होताहै ॥

तिलकल्कःसलवणोद्वेहरिद्रेत्रिवृद्घृतम् ।
मधुकंनिम्बपत्राणिप्रलेपःशोथशोधनः ॥

इति त्रिफलाष्टकम् ।

अर्थ-तिलोंका चूर्ण, सैंधानोन, हलदी, दारुहलदी, निसोत, मुलेठी, और नीमके पत्तोंको एकत्र पीसकर घीमें मिलाके लेपकरनेसे व्रणशोथ दूर होताहै ॥

निम्बपत्रंतिलादन्तीत्रिवृत्सैन्धवमाक्षिकम् ।
दुष्टव्रणप्रशमनोलेपःशोधनकेसरी ॥
सुषवीपत्रपत्तुरकर्णामोटकुठेरकाः ।
पृथगेतेप्रलेपेनगंभीरव्रणरोपणाः ॥
येक्लेदपाकाःस्रुतिगंधवन्तोव्रणामहान्तःसरुजःसशोथाः ।
प्रयान्तितेगुग्गुलुमिश्रितेनपीतेनशान्तित्रिफलारसेन ॥

अर्थ-नीमकेपत्ते, तिल, दन्ती, निसोत, और सैंधानोन, इनसबको समानभाग लेकर जलके संग पीस सहत मिलाकर लेपकरनेसे दुष्टव्रण शुद्धहोकर आराम होताहै । करेलेके पत्ते, शालिंचशाक, कर्णमोरटलता, और तुलसीके पत्ते, इनमेंसे एक किसीके पत्तोंको पीसकर प्रलेप करनेसे गंभीर व्रण भरजाताहै । त्रिफलेके काथको गूगलके साथ सेवन करनेसे क्लेद, पाक, स्राव, वेदना और सूजनसहित व्रण नष्ट होजाताहै ॥

विडंगत्रिफलाव्योषचूर्णगुग्गुलुनाशनम् ।
सर्पिषावटिकांकृत्वाखादेद्वाहितभोजनः ॥
दुष्टव्रणापचीमेहकुष्ठशोथनाडीव्रणापहः ॥

इति वटिकागुग्गुलुः ।

अर्थ-वायविडंग, त्रिफला, त्रिकुटा, और गूगल, इनको एकत्र कर घीमें मिला गोली बनालेवै । इन गोलियोंको सेवन करनेसै-दुष्टव्रण, अपची, प्रमेह, कोढ़, और नाड़ीव्रण दूर होताहै ॥

अमृतायाःपलशतंदशमूलशतन्तथा ।
पाठामूर्वाबलेद्वेचदार्वीगन्धर्वहस्तकः ॥
पृथग्दशपलान्भागाच्छतंचापिहरीतकी ।
विभीतकशतेद्वेचचत्वार्यामलकानिच ॥
गुग्गुलुप्रस्थसंयुक्तोद्रोणेऽपामुषितंनिशि ।
पूर्वाह्णेक्वाथयेद्धीमांश्चतुर्भागावशेषितम् ॥
उद्धृत्यस्राव्यविपचेद्यावल्लेहक्रमाद्धनम् ।
शीतेत्वेतानिसंचूर्ण्यप्रक्षिपेत्पलिकानिच ॥
त्रिफलात्रिवृताव्योषदन्तीच्छिन्नाश्वगंधकाः ।
क्रिमिशत्रुदलंचोचंसूक्ष्मैलानागकेशरम् ॥
स्वच्छन्दहारचेष्टस्यशीताम्भोवृष्यभोजनम् ॥
अमृतागुग्गुलुर्नाम्नासर्वव्रणविशोधनम् ॥
दुष्टकुष्ठविसर्पांश्चहिक्कामेहगरोदरम् ॥
प्लीहामयक्ष्मह्द्रोगंपाण्डुशोषमसृग्दरम् ॥
गुल्मार्शोविद्रधीन्भस्मनाडीव्रणभगंदरान् ।
अशीतिवातजान्रोगान्निहन्तिश्वासजित्परान् ॥
कण्डूकोठाङ्गमर्द्दामवातशोणितवातहा ।
आत्रेयानुमतोह्येषगुग्गुलुःपरिकीर्त्तितः ॥

इति अमृतागुग्गुलुः ।

अर्थ-गिलोय सौपल, दशमूल १०० सौ पल, पाढ़, मूर्वा, खिरेटी, गंगेरन, दारुहलदी, और अण्ड, प्रत्येक दशदशपल, हरड़ सौ, बहेडे सौ, आमले चारसौ, और चौसठतोले गूगल पोटलीमें बांधकर सबको एक द्रोण जलमें रातको भिजो देवै और सवेरेको क्वाथ बनावै, जब चौथा

भाग जल शेषरहै तब उतारकर छान लेवै, पश्चात् इसमें हरड़, बहेड़े और आमलेकी गुठली निकालकर और गूगलको पीसकर मिलादेवैं, फिर इसको पकावै, जब पकते २ गाढ़ा होकर शीतल होजाय तब त्रिफला, निसोत, त्रिकुटा, दन्ती, गिलोय, असगंध, वायविडंग, दालचीनि, तेजपात, छोटी इलायची और नागकेशर प्रत्येकका चूर्ण चार चार तोले मिलादेवै। इसपै यथेष्ट और वृष्य भोजनकरै और शीतल जलपान करै। यह अमृतागूगल–सर्वप्रकारके व्रणोंको शुद्धकरै है, तथा दुष्ट कुष्ठ, विसर्प, हिक्कारोग, प्रमेह, विषविकार, उदररोग, प्लीहा, आम, राजयक्ष्मा, हृदयरोग, पाण्डु, शोष, रुधिरविकार, गुल्म, बवासीर, विद्रधि, भ्रम, नाडीव्रण, भगंदर, अस्सीप्रकारके वातरोग, श्वाँसरोग, कण्डू, कोढ, अंगमर्द, आमवात, और रक्तवात तथा अन्यान्य रोगोंको दूर करै है।

तुल्यंसर्जरसंलोध्रंसिन्दूरातिविषानिशा।
अक्षकम्पिल्लश्रीवासगुग्गुलुर्घृततैलकैः॥
तुल्यांशंपेषयेत्पिण्डंतत्तुल्यंसिक्थकंभवेत्।
मृद्वग्निनापचेत्पात्रेमिश्रितंतंसमुद्धरेत्॥
वर्त्तिर्गुणवतीनामयोज्याशीतजलान्विता।
दुःसाध्यव्रणगण्डेषुहितानाडीव्रणेषुच॥
शोधनेरोपणेचैवस्वास्थ्यमुत्पादयत्यलम्॥

इति गुणवतीवर्त्तिः।

अर्थ–राल, लोध, सिंदूर, अतीस, हलदी, बहेड़ा, कवीला, सरलका गोंद, गूगल, घृत और तैल, यह सब समानभाग और सबकी बराबर मोम लेवै, इनको मंद अग्निसे पकाकर बत्ती बनालेवै, यह बत्ती शीतल जलके साथ व्रणपर लगावै। इससे असाध्य व्रण, गण्डव्रण, और नाड़ीव्रण शुद्ध होकर भरजाते हैं॥

धत्तूरपत्रमूलंसलवणमुष्णंव्रणोत्थितारम्भे।
दत्तंलेपान्नियतंव्रणशोथंहरातिबहुदुष्टम्॥

अर्थ–धतूरेके पत्ते और जड़को पीस लवण मिलाके गरमकर व्रणके उत्पन्न होनेके पहिलेही लेप करनेसै व्रणशोथ आराम होताहै ॥

दरदःपार्वतीपुष्पंकुनटीपुरुषोरसः ।
शोणितंगंधकोदैत्यःसैंधवातिविषाचवी ॥
शरपुंखाविडंगश्चयवानीगजापिप्पली ।
मरिचार्कश्चवरुणाधूनकंचहरीतकी ॥
मर्दितंकटुतैलेनगुटिकांकारयेदिह ।
नाडीव्रणप्रवाहश्चगंडमालांविचर्चिकाम् ॥
चिरव्रणंदद्रुकुष्ठंपूतिकन्तुशिरोगदम् ।
पादस्फोटंतथाहस्तंविचर्चीबहुकीटजम् ॥

अत्रदरदोहिंगुलः । पार्वतीवेङ्गामाटी । पुष्पकंरसांजनं । मणिविशेषोवा । कुनटीमनःशिला । पुरुषोगुग्गुलुः । शोणितंताम्रं । दैत्योलोहः । स्पष्टमपरम् ।

इतिव्रणगजांकुशः ।

अर्थ–सिंगरफ, वेंगामट्टी, रसौत, मैनशिल, गूगल, पारा, ताँबा, गंधक, लोहा, सैंधानोन, अतीस, चव्य, शरफोंका, अजवायन, गजपीपल, वायविडंग, वरना, आक, कालीमिरच, हरड, और राल, इन सबको समानभाग ले कड़वे तेलमें खरलकर गोली बनालेवै। इन गोलियोंको सेवन करनेसै नाड़ीव्रण, प्रवाह, गण्डमाला, विचर्चिका बहुत दिनोंका व्रण, दाद, कोढ़, दुर्गन्धित व्रण, शिरोरोग, पादस्फोट, हस्तस्फोट, विचर्ची और कृमिरोग दूर होतेहैं ॥

वन्ध्याककोंटकीपाठाव्याघ्रीकुष्ठपटोलिका ।
अंकोटहस्तिपर्णीचतालगंधकसैन्धवम् ॥
मंजिष्ठाकरवीरंचनिशाहिंगुसुवर्चला ।
वचासिन्दूरतुल्यांशंजलेनसहपेषयेत् ॥
कल्काच्चतुर्गुणंतैलंतैलात्तोयंचतुर्गुणम् ।

पचेत्तैलावशेषञ्चलेपाद्दुष्टव्रणापहम् ॥

इतिकर्कोटाद्यंतैलम् ।

इति व्रणरोगाध्यायः ।

अर्थ-कड़वातेल दोसेर, जल आठसेर, और कल्कके लिये वाँझककोड़ा, पाढ़, कटेरी, कूट, कडवीतोरई, अंकोल, हस्तपर्णी, हरिताल, सैंधानोन, गंधक, मजीठ, कनेरकी जड, हलदी, हींग, तुलसी, वच और सिंदूर प्रत्येक दोदो तोले यथाविधिसै तेलको सिद्धकरै इस तेलका लेप करनेसै दुष्टव्रण दूर होताहै ।

इति व्रणरोगाध्यायः समाप्तः।

अथ शारीरव्रणसद्योव्रणमाह ।

परिपक्कंव्रणंवैद्योदारयेदवधानतः ।
नच्छिन्द्यादाममज्ञानान्नतुपक्कमुपेक्षते ॥ १ ॥
गवांदन्तंजलेघृष्टंबिन्दुमात्रंप्रलेपतः ।
अत्यन्तकठिनेचापिव्रणेपाचनभेदनम् ॥ २ ॥
कण्टुतैलान्वितैलैंपात्सर्वानिर्मोकभस्माभिः ।
चयःशाम्यतिगण्डस्यप्रकोपःस्फुटातिद्रुतम् ॥ ३ ॥
चिरबिल्वाग्निकोदन्तीचित्रकोहयमारकः ।
कपोतकंकगृध्राणांपुरीषाणिचदारुणम् ॥ ४ ॥

चिरबिल्वःकरंजः । अग्निकोलांगलीअजमोदावा।हयमारः करवीरः।सर्वेषांमूलंएषांसमस्तानांव्यस्तानांचदारुणत्वं५॥

क्षारद्रव्याणिवायानिक्षारोवादारुणःपरः ।
द्रव्याणांपिच्छिलानान्तुत्वङ्मूलानिप्रलेपनम् ॥ ६ ॥
यवगोधूममाषाणांविचूर्णानिसमासतः ।
पटोलीतिल्वष्टयाह्वात्रिवृद्दन्तीनिशाद्वयम् ॥ ७ ॥
निम्बपत्रान्वितोलेपःसपटुर्व्रणशोधनः ॥

इति पटुसैन्धवम् ।

अर्थ-वैद्यको चाहिये कि अत्यन्त चतुरताके साथ पक्केव्रणको चीरै और कच्चा व्रण कदापि न चीरै, तथा पक्केव्रणको तर्क करकै चीरनेमें देर नकरै । गायके दाँतको जलमें घीसकर एक बिन्दुमात्र लेप करनेसै अत्यन्त शक्तव्रणभी पक करकै अपने आपही फट जाताहै। साँपकी कैंचलीकी भस्मको सरसोंके तेलमें मिलाकर लेप करनेसै गलगण्ड मतव्रण शीघ्रही फटकर नष्ट होताहै । करंजुवा, कलिहारी, दन्तीकी जड़, चीतेकी जड, कनेरकी जड, और कबूतर, कंक तथा गृध्र इन तीनों पक्षियोंकी विष्ठा, इन सबको एकत्र अथवा अलग अलग तथा क्षारद्रव्य और जवाखार इन औषधियोंके द्वारा अथवा पिच्छिल द्रव्योंकी छाल या मूलके द्वारा लेप करनेसै व्रण विदीर्ण होकर आराम होजाताहै । जौ, गेहू, और उडदोंका चूर्ण तथा पटोल, तिल, मुलेठी, निसोत, दन्ती, हलदी, दारुहलदी, नीमके पत्ते, और सैंधानोन सबको एकत्र पीसकर लेप करनेसै व्रण शुद्ध होताहै ॥ १ । २ । ३ । ४ । ५ । ६ । ७ ॥

विडंगत्रिफलाव्योषचूर्णगुग्गुलुनासह ॥ ८ ॥
सर्पिषावटिकांकृत्वाखादेद्वाहितभोजनः ।
दुष्टव्रणापचीमेहदुष्टनाडीविशोधनः ॥ ९ ॥

इति विडंगादिवटिकागुग्गुलुः

अर्थ-वायविडंग, त्रिफला, त्रिकुटेका चूर्ण और गूगल इनको एकत्र घीमें पीसकर गोली बना लेवै; एक गोली प्रतिदिन खावै और इसपर हितकारक भोजन करै । यह गोली-दुष्टव्रण, अपची, प्रमेह और दुष्टनाडीव्रणको दूर करैहै ॥ ८ ॥ ९ ॥

अमृतापटोलमूलत्रिफलात्रिकटुक्रिमिघ्नानाम् ।
समभागानांचूर्णसर्वसमोगुग्गुलोर्भागः ॥ १० ॥
प्रतिवासरमेकैकांगुडिकांखादेदक्षपरिमाणाम् ।
जेतुंव्रणवातासृग्गुल्मोदरश्वयथुपाण्डुरोगान् ॥ ११ ॥

इति अमृतावटिकागुग्गुलुः ।

अर्थ-गिलोय, परवलकी जड, त्रिकटु, त्रिफला, और वायविडंग, प्रत्येकका चूर्ण एकभाग और सबकी समान गूगल लेवै, इन सबको एक.

त्र पीसकर दो दो तोलेकी गोली बनालेवै, फिर एक गोली प्रतिदिन खाय; इससे व्रण, वातरक्त, गुल्म, उदररोग, सूजन और पाण्डु-रोग दूर होताहै ॥ १० । ११ ॥

जातीनिम्बपटोलपत्रकटुकादार्वीनिशाशारिवा।
मंजिष्ठाभयसिक्थतुत्थमधुकैर्मुक्ताह्वबीजैःसमैः ॥
सर्पिःसिद्धमनेनसूक्ष्मवदनामर्माश्रितास्राविणो।
गंभीराःसरुजोव्रणाःसगतिकाःशुध्यन्तिरोहन्तिच ॥ १२ ॥
जात्यादेस्त्रयस्यपत्रम्। एषांकल्कः।
जलं चतुर्गुणम्। गतिंनाडीम् ॥ १३ ॥

इति जात्याद्यं घृतम्।

अर्थ-गायका घी दोसेर, जल आठ सेर, कल्कके लिये चमेलीके पत्ते, नीमके पत्ते, पटोलपत्र, कुटकी, हलदी, दारुहलदी, अनन्तमूल, मजीठ, हरड़, मोम, तूतिया, मुलेठी और मुक्ताबीज प्रत्येक दो दो तोले। सब-को मिलाकर यथाविधिसै घृतको सिद्ध करै, इस घृतको सेवन करनेसै सूक्ष्म मुखवाले, मर्माश्रित, स्रावयुक्त, गंभीर, वेदनायुक्त नाडीव्रण समस्त शुद्धहोकर आराम होजाताहै ॥ १२ । १३ ॥

गौरहरिद्रामंजिष्ठामांसीमधुकमेवच।
प्रपौण्डरीकंह्रीबेरंभद्रमुस्तंसचन्दनम् ॥ १४ ॥
जातीनिम्बपटोलञ्चकरंजंकटुरोहिणी।
मधूच्छिष्टंसमधुकंमहामेदातथैवच ॥ १५ ॥
पंचवल्कलतोयेनघृतप्रस्थंविपाचयेत्।
एषगौरोमहावीर्यःसर्वव्रणविशोधनः ॥ १६ ॥
आगन्तुसहजाश्चैवसुचिरोत्थाश्चयेव्रणाः।
विषमामपिनाडींतुरोहयेच्छीघ्रमेवच ॥ १७ ॥
गौरहरिद्रा दारुहरिद्रा।
जातीनिंबपटोलानांपत्रं करंजस्यफलं मधुकस्यपुष्पम्।

इति गौराद्यं घृतम्।

अर्थ–गायका घी दो सेर, वटादि पंचवल्कलोंका क्काथ आठ सेर, जल आठ सेर, तथा कल्कके लिये दारुहलदी, मजीठ, बालछड, मुलेठी, पुण्डेरिया, सुगंधवाला, नगरमोथा, लालचंदन, चमेलीके पत्ते निम्बकेपत्र, पटोल, करंजके फल, कुटकी, मोम, महुवेके फूल और महामेदा प्रत्येक दोदो तोले । सबको मिलाकर यथाविधिसे घृतको सिद्ध करै यह घृत नाडीव्रणको शुद्ध करके भरदेताहै॥ १४॥ १५॥ १६ ॥ १७ ॥

नक्तमालस्यपत्राणितरुणानिफलानिच ॥ १८ ॥
मालत्याश्चैवपत्राणिपटोलारिष्टयोस्तथा ॥
द्वेहरिद्रेमधूच्छिष्टंमधुकंतिक्तरोहिणी ॥ १९ ॥
मंजिष्ठाचंदनोशीरमुत्पलंशारिवात्रिवृत् ॥
एतेषांकार्षिकैर्भागैर्घृतप्रस्थंविपाचयेत् ॥ २० ॥
दुष्टव्रणप्रशमनंनाडीव्रणविशोधनम् ॥
सद्यश्छिन्नव्रणानांचकरंजाद्यमिदंशुभम् ॥ २१ ॥
पत्राणितरुणानि ।

इतिकरंजाद्यं घृतम् ।

अर्थ–उत्तम गायका घी दोसेर जल आठसेर तथा कल्कके लिये करंजके पत्ते और फल मालतीके पत्ते, पटोलपत्र, नीमके पत्ते, हलदी, दारुहलदी, मोम, महुएके फूल,कुटकी,मजीठ, लालचंदन, खस, उत्पल, अनन्तमूल और निसोत प्रत्येक दोदो तोले । विधिपूर्वक घृतको सिद्धकरै यह घृत दुष्टव्रणको शान्त करै है नाडीव्रणको शुद्धकरैहै, तथा सद्य और छिन्नव्रणको यह घृत हितकारीहै ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥

सिंदूरहिंगुविषकुष्ठरसोनचित्रवालांघ्रिलांगलिककल्कविपक्वतैलं
प्रासादमंत्रयुतहुंकृतमाध्विकेनक्लिन्नव्रणप्रशमनोविपरीतमल्लः ॥
खड्गाभिघातगुरुगण्डमहोपदंश
नाडीव्रणव्रणविचर्चिककुष्ठपामाः ॥ २३ ॥
एतान्निहन्तिविपरीतकमल्लनाम
तैलंयथेष्टशयनाशनभोजनस्य ॥ २४ ॥

चित्रकोरक्तचित्रकः । वालांघ्रिःशरपुंखामूलम् ।
जलंचतुर्गणम् । केचित्कटुतैलमिच्छन्ति ।
तिलतैलेनव्यवहारःप्रासादमंत्रोमाहेश्वरोमंत्रः ॥ २५ ॥
ओंहाँहींहैंहौंशिवायस्वाहेतिपठित्वाफेनमपनोद्यम् ॥

इतिविपरीतमल्लतैलम् ।

अर्थ-तिलका तेल दोसेर, जल आठसेर, तथा कल्कके लिये सिंदूर हींग, विष, कूठ, लहसुन, लालचीता, सरफोंकेकी जड़, और कलिहारीकी जड़, प्रत्येक दोदो तोले । सबको मिलाकर यथाविधिसे तेलको सिद्ध करै । 'ओं हाँ हीं हैं हौं शिवाय स्वाहा' इस मंत्रको पढ़के झाँगोंको हटाकर तेलको पानकरै यह विपरीतमल्लतैल छिन्नव्रण, खड्गाभिघातव्रण, महागण्ड, महाउपदंश, नाडीव्रण, व्रण, विचर्चिका, कुष्ठ और पामादि रोगोंको दूरकरैहै । इसके ऊपर यथेष्ट भोजन और शयनकरै ॥ २३ ॥ २४॥२५॥

कुठारकात्पलशंतक्राथयेद्दुल्वनेऽम्भसि ॥ २६ ॥
तेनपादावशेषेणतैलप्रस्थंविपाचयेत् ॥
कल्कैःकुठारापामार्गप्रोष्ठीकामक्षिकासुच ॥ २७ ॥
एतत्कुठारकंनामव्रणशोधनरोपणम् ॥
नाडीषुपरमोऽभ्यंगोनिजगागन्तुकीषुच ॥ २८ ॥
प्रोष्ठीकाशफरीमत्स्यः ।

इतिकुठारकंतैलम् ।

अर्थ-तेल एक सेर, काथके लिये कुठारक (क्षुद्रलताविशेष) ३ सेर जल सोलह सेर, शेष चारसेर और कल्कके लिये कुठारक, चिरचिटा, प्रोष्ठीमछली और चिंगिडी मछली प्रत्येक चार चार तोले । विधिपूर्वक तेलको सिद्ध करै, इस तेलको मर्दन करनेसे सर्वप्रकारके व्रण तथा व्रणको शुद्ध करकै भरदेवैहै ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥

दूर्वास्वरससंसिद्धंतैलंकम्पिल्लकेनच ।
दार्वीत्वचश्चकल्केनप्रधानंव्रणरोपणम् ॥

दूर्वास्वरसकल्काभ्यामेकंतैलंतथागतम् ॥ २९ ॥
कम्पिल्लदार्वीकल्केनजलंचतुर्गुणंदत्वापरमेकंतैलम् ।

अर्थ-तेल दो सेर, दूबका रस आठ सेर, जल आठ सेर, और कल्कके लिये कुटीहुई दूब आधा सेर। विधिपूर्वक तेलको सिद्धकरै। इस तेलको मर्द्दन करनेसै सर्वप्रकारके नाडीव्रण दूरहोतेहैं। तेल दो सेर, जल आठ सेर और कल्कके लिये कवीला और दारुहलदी दोनों मिलेहुए आधसेर इस तेलसैभी व्रण भरजाताहै॥ २९ ॥

मंजिष्ठाचंदनंमूर्वांपिष्ट्वासर्पिर्विपाचयेत् ।
सर्वेषामग्निदग्धानामेतद्रोपणमिष्यते ॥ ३० ॥
जलं चतुर्गुणम् ।

इति मंजिष्ठाद्यं घृतम् ।

अर्थ-गायका घी दोसेर, जल आठ सेर, और कल्कके लिये मजीठ, लालचन्दन, और मूर्वा यह सब आधसेर, सबको मिलाकर यथाविधिसै घृतको सिद्धकरै। यह घृत अग्निदग्ध व्रणोंको दूर करै है ॥ ३० ॥

लांगलीलोध्रमंजिष्ठाकृष्णामधुककट्फलम् ॥ ३१ ॥
कम्पिल्लंद्वेनिशेमेदेनिम्बपत्रंफलत्रयम् ॥
घृतेसिक्थंद्विपलिकंदेयंतद्व्रुन्धरोपणम् ॥ ३२ ॥
लांगलीकंघृतंनामनाडीदुष्टव्रणापहम् ॥

इति लांगलीघृतम् ।

अर्थ-गायका घी दोसेर, जल आठसेर, दूध चार सेर, तथा कल्कके लिये मोम आधपाव, और कलिहारीकी जड़, मजीठ, लोध, पीपल, मुलेठी, कायफल, कवीला, मेदा, महामेदा, हलदी, दारुहलदी, नीमके पत्ते और त्रिफला प्रत्येक दोदो मासे लेवै। सबको मिलाकर यथाविधिसै घृतको सिद्धकरै। यह घृत दुष्टव्रणको नष्ट करै है ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

सिद्धंकल्ककषायाभ्यांपाटल्याःकटुतैलकम् ।
दग्धव्रणरुजास्रावदाहविस्फोटनाशनम् ॥ ३३ ॥

इति पाटलीतैलम् ।

अर्थ-पाढ़लके कल्कमें तथा क्वाथमें कड़वे तेलको सिद्धकर लगानेसै अग्निदग्धजन्यव्रणकी वेदना, दाह और विस्फोट दूर होजातेहैं ॥ ३३ ॥

चन्दनवटशृंगाश्चमंजिष्ठामधुकंतथा ॥ ३४ ॥
प्रपौण्डरीकंदूर्वाचधातकीरक्तचंदनम् ॥
एभिस्तैलंविपक्तव्यंसर्पिःक्षीरसमायुतम् ॥ ३५ ॥
अग्निदग्धेव्रणेश्रेष्ठंम्रक्षणाद्रोपणंपरम् ॥

इति चन्दनाद्यं यमकम्।

अर्थ-तिलका तेल और घी दोसेर, जल आठसेर, दूध आठसेर, तथा कल्कके लिये सफेद चन्दन, वड़के अंकुर, मजीठ, मुलेठी, पुण्डेरिया, दूब, धायके फूल, और लालचन्दन, यह सब आधसेर, यथाविधिसै इस चंदनाद्य यमकको सिद्धकर मर्दन करनेसै अग्निदग्ध व्रण नष्ट होजाते हैं ३४।३५

मनःशिलालेमंजिष्ठासलाक्षारजनीद्वयम् ॥ ३६ ॥
प्रलेपःसघृतःक्षौद्रस्त्वग्निशुद्धिकरःपरः ।
अयोरजःसकाशीशंत्रिफलाकुसुमानिच ॥ ३७ ॥
प्रलेपःकुरुतेसात्म्यंसद्यएवनवत्वचि ।
त्रिफलायाःकुसुमाभावेफलंग्राह्यम् ॥ ३८ ॥
कालीयकलतामास्थिहेमकालारसोत्तमैः ।
प्रलेपोगोमयरसःसवर्णकरःपरः ॥ ३९ ॥
कालीयकंकालियाकाष्ठं लताप्रियंगुर्दूर्वावा
हेमनागकेशरं कालामंजिष्ठा रसोत्तमंघृतम् ॥ ४० ॥
चतुष्पदांग्नित्वग्लोमखुरशृंगास्थिभस्मना ।
तैलाक्ताचूर्णिताभूमिर्भवेद्रोमवतीपुनः ॥ ४१ ॥

अर्थ-मैनशिल, हरिताल, मजीठ, लाख, हलदी, और दारुहलदी, इन सब औषधियोंको पीस घृत, और सहतमें मिलाके लेपकरनेसै त्वचा शुद्ध होतीहै। लोहा कसीस और त्रिफलेके फूल एकत्र पीसकर प्रलेप करनेसै तत्काल व्रणपै नवीन खाल जम आतीहै। कलम्बक, फूलप्रियंगू

आमकी गूठली, नागकेशर, मजीठ और घृत इन सब द्रव्योंको एकत्र पीस-कै गोबरके रसमें मिलाके प्रलेप करनेसे व्रणकी जगह उत्तमवर्णवाली होजाती है। चतुष्पद जन्तुओंके पाँव, चमड़ा, रोम, खुर, सींग, और हड्डियोंकी भस्मको तेलमें मिलाके लेप करनेसे व्रण क्षतकी जगह रोम जम आतेहैं ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥

लवणाल्मकटूनिचविदाहीनिगुरूणिच ।
वर्जयेदनुपानानिव्रणीमैथुनमेवच ॥ ४२ ॥
नवंधान्यंमाषागुडातिलकुलत्थाम्बुकृशराः ।
कलायानिष्पावाहरितकिजलानूपपिशितम् ॥
हिमापोवन्धूकंलवणकटुकंपिष्टविकृति ।
दधिक्षीरंतक्रंव्रणिषुसकलंदोषजनकम् ॥ ४३ ॥

अर्थ-निमक, खटाई, मिरच, गरमपदार्थ, दाहजनक द्रव्य, और भारी भोजन, तथा पानद्रव्य, मैथुन, नवीनधान्य, उडद, गुड, तिल, कुलथी, यूष, खिचड़ी, मटर, निष्पाव, हरडोंका काथ, अनूपदेशके जीवोंका मांस, शीतल जल, दुपहरियोंके फूल, लवण-रसवाले द्रव्य, चरपरे द्रव्य, पिष्टकविकार, दही, दूध और तक्र, यह सब पदार्थ व्रणरोगवाले मनुष्यको अहितकारीहैं ॥ ४२ ॥ ४३ ॥

नाडीव्रणचिकित्सामाह।

गुग्गुलुस्त्रिफलाव्योषैःसमांशैराज्ययोजितैः ।
नाडीदुष्टव्रणशूलभगंदरविनाशनः ॥ ४४ ॥

इति समसमो गुग्गुलुः ।

अर्थ-गूगल, त्रिफला, और त्रिकुटा यह समानभाग लेकर चूर्ण बना घीमें मिलाके सेवन करनेसै नाड़ीव्रण, दुष्टव्रण, और भगंदर रोग दूर होताहै ॥ ४४ ॥

कुष्ठोदितःपंचतिक्तःगुग्गुलुश्चात्रशस्यते ॥ ४५ ॥

कार्पासमूलरजनीकल्कंदत्वाजलेशृतंतैलम् ॥
पूरणमात्राच्चिरजंनाडीव्रणमाशुनाशयति ॥ ४६ ॥
इति कार्पासतैलम् ।

अर्थ-कुष्ठरोगमें कहा हुआ पंचतिक्त गूगलभी व्रणरोगमें हितकारी है । तेल दोसेर, जल आठसेर, तथा कल्कके लिये कपासकी जड़, और हलदी आधसेर, यथाविधिसे तेलको सिद्धकर भरनेसै नाड़ीव्रण (नासूर) आराम होताहै ॥ ४५ ॥ ४६ ॥

कुम्भीकखर्ज्जूरकपित्थबिल्ववनस्पतीनांतुशलाटुवर्गे ।
कृत्वाकषायंविपचेच्चतैलमवाप्यमुस्तासरलाप्रियंगू ॥ ४७॥
सौगन्धिकामोचरसाहिपुष्पंलोध्राणिदत्वाखलुधातकीञ्च ।
एतेनशल्यप्रभवाहिनाडीरोहेद्व्रणोवैसुखमाशुचैव ॥ ४८ ॥
इति कुम्भीकाद्यंतैलम् ।

अर्थ-तेल दोसेर, जलकुम्भी, खिजूर, कैथ, वेल, तथा वटादि पंच वृक्षोंके कच्चेफल इनका क्वाथ आठसेर, और कल्कके लिये नागरमोथा, धूपसरल, फूलप्रियंगू, अनन्तमूल, नागकेशर, लोध और धायके फूल प्रत्येक दो दो तोले । यथाविधिसे इस तेलको सिद्धकर सेवन करनेसै शल्याघातादिजन्य नाड़ीव्रण भरजातेहैं ॥ ४७ ॥ ४८ ॥

समूलपत्रनिर्गुण्ड्यारसैस्तैलंसमैःशृतम् ।
हन्तिनाडीव्रणस्फोटान्नस्याभ्यङ्गादिनापचीम् ॥ ४९ ॥
अकल्कमेव ।
इति निर्गुण्डीतैलम् ।

अर्थ-तेल दोसेर, जल आठसेर, और पत्तोंसहित सम्हालूका रस आठसेर, इस तेलका नास लेनेसै तथा अभ्यंग करनेसै नाड़ीव्रण और अपचीरोग दूर होताहै ॥ ४९ ॥

हंसपद्यारिष्टपत्रंजातीपत्रंततोरसैः ।
तत्कल्कैश्चपचेत्तैलंनाडीव्रणनिरोहणम् ॥ ५० ॥
इति हंसपदीतैलम् ।
इति नाड़ीव्रणाऽध्यायः ।

अर्थ-तेल दोसेर, जल आठसेर, हंसपदी, नीमके पत्ते, और चमेलीके पत्तोंका स्वरस आठसेर, तथा कल्कके लिये हंसपदी, नीमके पत्ते, और चमेलीके पत्ते आधसेर, यथाविधिसै इस तेलको सिद्धकर लगानेसै नाड़ीव्रण भरजाताहै ॥ ५० ॥

इति नाडीव्रणचिकित्सा समाप्ता ।

अथ भगंदरचिकित्सामाह ।

लंघनस्वेदनालेपविम्लापनविरेचनैः ।
रक्तमोक्षादिभिःशीघ्रंगुदजांपिडकांजयेत् ॥ १ ॥
तथायत्नंभिषक्कुर्याद्यथापाकंनगच्छति ।
वटपत्रेष्टकाशुण्ठीगुडूच्यःसपुनर्नवाः ॥ २ ॥
सुपिष्टापिडकारम्भेलेपःशस्तोभगन्दरे ।
त्रिफलारससंयुक्तंबिडालास्थिप्रलेपनम् ॥ ३ ॥
भगन्दरंनिहन्त्याशुदुष्टव्रणहरंपरम् ।
स्विन्नंवचाकुष्ठंहिङ्गुयवानीपटुपञ्चकम् ॥ ४ ॥
सर्पिषापाययेच्चूर्णमम्लेनसुरयापिवा ।
स्नुह्यर्कदुग्धदार्वीभिर्वर्त्तिंकृत्वाभगन्दरे ॥ ५ ॥
दद्यात्सर्वशरीरस्थांनाडींहन्यात्प्रयोगराट् ।
त्रिवृत्तिलानागदन्तीमञ्जिष्ठासहसर्पिषा ॥ ६ ॥
उत्सादनम्भवेदेतत्सैन्धवंक्षौद्रसंयुतम् ॥ ७ ॥

उत्सादनमुद्वर्त्तनम् ।

रसांजनंहरिद्रेद्वेमंजिष्ठानिम्बपल्लवाः ।
त्रिवृज्ज्योतिष्मतीदन्तीलेपोहान्तिभगन्दरम् ॥ ८ ॥
कुष्ठंत्रिवृत्तिलादन्तीमागध्यःसैन्धवंमधु ।
रजनीत्रिफलातुत्थंहितंव्रणविशोधनम् ॥ ९ ॥
तिलाभयालोध्रमरिष्टपत्रंनिशेवचालोध्रमगारधूमः ।

भगन्दरेचाप्युपदंशनेचदुष्टव्रणेशोधनरोपणीयम् ॥१०॥
पयःपिष्टतिलैरण्डयष्टीलेपःसशोणिते।
खरास्रपक्वंभूरोमचूर्णंलेपोभगन्दरम् ॥ ११ ॥
हन्तिदन्त्यग्न्यतिविषालेपस्तद्वच्छुनोऽस्थिवा।
नश्येद्भगन्दरःक्षिप्रंक्षालितेत्रिफलाम्भसा ॥ १२ ॥

अर्थ-लंघन, स्वेद, प्रलेप, विम्लापन (मर्द्दनादि), विरेचन और रक्तमोक्षणादिके द्वारा शीघ्र गुदज पिड़काओंको दूरकरै, वैद्य इस प्रकार इसरोगकी चिकित्साकरै कि जिससे यह पके नहीं। बड़के पत्ते ईंट, सोंठ, गिलोय और पुनर्नवा इनको एकत्र पीसकर भगन्दररोगके पिड़काओं उत्पन्न होतेही लेपकरनेसै आराम होताहै।बिलावकी हड्डियोंको त्रिफलेके रसमें पीसकर लेपकरनेसै भगन्दर और दुष्टव्रण नष्ट होजाताहै। वच, कूठ, हींग, अजवायन और पाँचोंनोन घृतमें भून चूर्ण करकै काँजी अथवा सुराके साथ सेवन करनेसे भगंदररोग नष्ट होताहै। थूहरके दूध और आकके दूधमें दारुहलदीके चूर्णको मिलाकर वत्तीवना लगानेसै भगन्दररोग और नासूर दूर होताहै। निसोत, दन्ती, नागकेशर, तिल और मजीठ इनको घीमें पीसकर सहत और सैंधानोन मिलाकर उबटन करनेसै भगन्दर दूर होताहै। रसौत, हलदी, दारुहलदी, मजीठ, नीमकेपत्ते, निसोत मालकांगनी और दन्तीकी जड़ इनको एकत्र पीसकर लेपकरनेसै भगन्दररोग दूर होताहै। कूठ, निसोत, दन्तीकी जड़ तिल, पीपल, सैंधानोन, सहत, हलदी, हरड़, बहेड़ा, आमला, और तूतिया, इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर प्रलेप करनेसै भगन्दरका व्रण शुद्ध होजाताहै। तिल, हरड, लोध, नीमके पत्ते, हलदी, दारुहलदी, वच, लोध, और घरका धुआं यह सब औषधि समानभाग लेकर प्रलेप करनेसै भगन्दर, उपदंश, और दुष्टव्रण शुद्ध होताहै। दूध, पिट्ठी, तिल, अण्ड और मुलेठी इनका प्रलेप करनेसै रक्तदोषजन्य भगन्दररोग दूर होताहै। गधेके रुधिरमें पकाया हुआ भूरोमका चूर्ण तिसका लेपकरनेसै अथवा कुत्तेकी हड्डियोंका लेपकरनेसै किम्वा त्रिफलेके जलसै धोनेसै भगन्दररोग दूर होताहै ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥

त्रिफलापुरकृष्णाभिस्त्रिपञ्चैकांशयोजिता ।
गुडिकाशोथगुल्मोर्शोभगन्दरवतांहिता ॥ १३ ॥

इति नवकार्षिको गुग्गुलुः ।

अर्थ-हरड़, बहेडा, आमला, प्रत्येक एकएक कर्ष, गूगल पाँचकर्ष और पीपल एककर्ष इन सब औषधियोंको एकत्र मिलाकर गोली बनालेवै। यह गोली-सूजन,गुल्म,बवासीर,और भगन्दररोगको नष्ट करैहै ॥

त्रिकटुत्रिफलामुस्ताविडंगामृतचित्रकम् ।
शस्येलेपिप्पलीमूलंहपुषासुरदारुच ॥ १४ ॥
तुम्बुरंपुष्करंचव्यंविशालारजनीद्वयम् ।
विडसौवर्चलंक्षारःसैन्धवंगजपिप्पली ॥ १५ ॥
यावन्त्येतानिचूर्णानितावद्विगुणगुग्गुलुः ।
कोलप्रमाणांगुटिकांखादेत्तुमधुनासह ॥ १६ ॥
भगन्दरंश्वासकासक्षयजीर्णज्वरोदरम् ।
नाडीदुष्टव्रणनाहकुष्ठपामाश्मरीक्रिमीन् ॥ १७ ॥
मेहान्त्रवृद्धिहृत्पार्श्वशूलंप्लीहानमेवच ।
पंचतिक्तघृतंशस्तम् ।
सप्तविंशतिकोहन्तिगुग्गुलुःसर्वरोगहा ॥ १८ ॥

इति सप्तविंशति गुग्गुलुः ।

अर्थ-सोंठ, मरिच, पीपल, हरड, बहेडा, आमला, नागरमोथा, वायविडंग, गिलोय, चीता, कचूर, इलायची, पीपरामूल, हाऊबेर, देवदारु, धनिया, पोहकरमूल, चव्य, इन्द्रायनकी जड,हलदी,दारुहलदी, विरियासंचरनोन, कालानोन, जवाखार, सैंधानोन, और गजपीपल, इन सबका चूर्ण एकभाग, और सबसै दूना गूगल, एकत्र मिलालेवै । प्रतिदिन इसको वेरकी बराबर सहतमें मिलाकर खाय, इससै-भगन्दर श्वाँस, खाँसी, क्षय, जीर्णज्वर, उदररोग, नाडीव्रण, दुष्टव्रण, अफारा, कोढ़, पामा, पथरी, कृमिरोग, प्रमेह, अंत्रवृद्धि, हृदयरोग, पार्श्वशूल, प्लीहा, तथा अन्यान्यरोग, दूर होतेहैं । अथवा, पंचातिक्त गूगल तथा

सप्तविंशति गूगलको सेवन करनेसै भगन्दरादि नाना प्रकारके रोग दूर होतेहैं ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥

जम्बुकमांसंभक्षयेत्प्रकारव्यंजनादिभिः।
अजीर्णवर्जीमासेनमुच्येततुभगन्दरात् ॥ १९ ॥
पंचतिक्तघृतंशस्तंपंचतिक्तश्चगुग्गुलुः।
न्यग्रोधादिर्गणोयस्तुहितःशोधनरोपणः ॥ २० ॥

अर्थ-शृगालके मांसके विविधप्रकारके व्यंजन बनाकर सेवनकरै, और अजीर्णमें भोजन नकरै तौ भगन्दर रोगसै रोगी छूट जातेहैं। पंचतिक्तघृत और पंचतिक्त गूगलको सेवन करनेसे तथा न्यग्रोधादिगणकी सर्व औषधियोंका क्वाथबनाकर सेवन करनेसे भगंदर रोगके सम्पूर्ण व्रण शुद्ध और भरकर रोग दूर होजाता है ॥ १९ ॥ २० ॥

चित्रकार्कौत्रिवृत्पाठेमलपूहयमारकौ।
स्नुहींवचांलांगलकीं हरितालंसुवर्च्चिकाम् ॥ २१ ॥
ज्योतिष्मतीञ्चसंहृत्यतैलंधीरोविपाचयेत्।
एतद्विस्यन्दनंनामतैलंदद्याद्भगन्दरे ॥
शोधनंरोपणंचैवसवर्णकरणंपरम् ॥ २२ ॥

मलपूःकृष्णोदुम्बरः।

इति विस्यन्दनतैलम्।

अर्थ-तेल २ दोसेर, जल ८ आठसेर, कल्ककेलिये चीता, आक, निसोत, पाढ़, कटूमर, कनेर, मालकाँगनी, थूहर, वच, कलिहारी, हरिताल, और सज्जी यह सब औषधी आधसेर, यथाविधिसे इस तेलको सिद्धकरै, यह तेल-भगन्दर रोगके व्रण शुद्धकरकै भरदेताहै, और घावके स्थानको उत्तम वर्णवाला करदेताहै ॥ २१ ॥ २२ ॥

करवीरनिशादन्तीलांगलीलवणाग्निभिः।
मातुलुंगार्कवत्साह्वैःपचेत्तैलंभगन्दरे ॥ २३ ॥

कुटजस्यफलंदग्ध्वा।

इति करवीराद्यं तैलम्।

अर्थ-तेल २ दोसेर, जल ८ आठसेर, तथा कल्ककेलिये कनेरकी जड़, हलदी, दन्तीकी जड़, कलिहारी, सेंधानोन, चीता, विजोरेकी जड़, आककी जड़ और भुनेहुए इन्द्रजौ ॥ आधसेर यथाविधिसे इसतेलको सिद्धकरै, यह तेल भगन्दर रोगको दूर करैहै ॥ २३ ॥

निशार्कक्षीरसिन्ध्वग्निपुराश्वहनवत्सकैः
सिद्धमभ्यंजनेतैलंभगन्दरविनाशनम् ॥ २४ ॥

इति निशाद्यं तैलम्।

अर्थ-तेल २ दोसेर, जल ८ आठसेर, तथा कल्कके लिये हलदी, आकका दूध, सेंधानोन, चीता, और गूगल तथा कनेरकी जड़, और इन्द्रजौ यह सब आध ॥ सेर, इस तेलकी मालिस करनेसे भगन्दर रोग आराम होता है ॥ २४ ॥

शुद्धसूतंसमंगंधंमृतनागंसतुत्थकम्।
जीरकंसैन्धवंतुल्यंतिक्ताकोषातकीद्रवैः ॥ २५ ॥
पिष्टंतल्लेपनाद्धन्तिभक्षणाच्चभगन्दरम्।
रसःकालाग्निनामोऽयंद्विगुंजंमृत्युजिद्भवेत् ॥ २६ ॥

इति कालाग्निरसः।

अर्थ-शुद्धपारा, गंधक, मृतसीसा, तूतिया, जीरा और सैंधानोन यह सब औषधि समान भागले कुटकी और कड़वी तोरइयोंके रसमें पीसकर लेपकरनेसे अथवा दोरतीकी गोली बनाकर प्रतिदिन एक गोली खानेसे भगन्दर रोग दूर होता है ॥ २५ ॥ २६ ॥

पूयश्चहरतेपक्वंकष्टसाध्योभगन्दरः।
त्रिदोषोत्थमसाध्यंस्यात्क्रिमिजश्चभगन्दरः ॥
आदौसर्वप्रयत्नेनपाकंरक्षेद्भगन्दरे ॥ २७ ॥

अर्थ-भगन्दर पकजायतौ राध निकालदेवै, यह पक्व भगन्दर कष्ट-साध्य है। त्रिदोषोत्पन्नभगन्दर तथा क्रिमिजभगन्दर असाध्यहै। सबसे पहिले वैद्यको चाहिये कि जिससे भगन्दर पके नहीं ऐसे यत्नोंसे भगन्दरकी रक्षा करै ॥ २७ ॥

शुद्धसूतंद्विधागन्धंकुमारीरसमर्दितम्।

त्र्यहान्तेगोलकंकृत्वाहण्डिकान्तेनिरोधयेत् ॥ २८ ॥
तयोःसमेताम्रपात्रेशुद्धेचताम्रलेपिते ।
तद्भाण्डंभस्मनापूर्यचुल्ल्यांतीव्राग्निनापचेत् ॥ २९ ॥
त्रियामान्तेसमुद्धृत्यचूर्णयेत्स्वाङ्गशीतलम् ।
जम्बीरस्यद्रवैःपिष्ट्वारुध्वासप्तपुटेपचेत् ॥ ३० ॥
गुंजैकंमधुनाज्येनलिह्याद्धन्तिभगन्दरम् ।
मुशलीलशुनंचानुआरनालयुतांपिबेत् ॥ ३१ ॥
कर्त्तव्यंमधुनाहारंदिवास्वप्नश्चमैथुनम् ।
वर्जयेच्छीतमाहाररसेऽस्मिन्रतिताण्डवे ॥ ३२ ॥

इति रतिताण्डवरसः ।

अर्थ-पारा १ एकभाग, गंधक २ दोभाग, दोनोंको एकत्र घीकारके रसमें तीनदिन खरलकर गोलाबनालेवै, इसपर कपरौटीकरै, फिर दोनों-की बराबर तांबेके पत्रोंकोले, उनको एक हाँडीमें बिछाकर उनके बीचमें गोलेको रख ऊपरसे खूब दाबकर राखभरदेवै, पश्चात् चूल्हेपै चढ़ाकर तीनप्रहरतक प्रचण्ड अग्निदेवै, पश्चात् चूल्हेपरसे उतार स्वांगशीतल-होनेपर चूर्ण करले, फिर जम्भीरी नीबूके रसमें खरलकर सम्पुटमें रख फूँक देवै, इसप्रकार सातपुटदेवै, इसरसको एक रत्तीभर सहत और घीकेसाथ सेवनकरै तौ भगन्दररोग दूर होवै । ऊपरसे मूसली और लहसनके चूर्णको काँजीके साथ पानकरै, यह अनुपानहै । इसरसको सेवन करनेवाला मनुष्य मधुरभोजन करै, तथा दिनमें सोना, मैथुन और शीतल आहार यह सब इसपै त्यागदेवै, इसको रतिताण्डवरस कहतेहैं ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

भूनिम्बत्रिफलाकुष्ठवानरीबीजगन्धकम् ।
लशुनञ्चशिलायुक्तंतुल्यंचूर्णप्रकल्पयेत् ॥ ३३ ॥
उदुम्बरस्यचूर्णन्तुगवांक्षीरेणपाययेत् ।
तत्कषाययुतंचूर्णरात्रौलेपञ्चशान्तये ॥ ३४ ॥

गुग्गुलुश्चपलान्पश्चपलैकापिप्पलीतथा ।
त्रिफलापलमेकञ्चत्वगेलाप्रतिकार्षिकम् ॥ ३५ ॥
चूर्णयेन्मधुनाज्येनमुक्ताहन्तिभगन्दरम् ॥ ३६ ॥

अर्थ-चिरायता, कूठ, हरड़, बहेड़ा, आमला, कौंछकेबीज, गंधक, लहसुन और मैनशिलके चूर्णको गायके दूधके साथ अथवा गूलरके चूर्णको गायके दूधके साथ पीनेसे तथा उपरोक्त द्रव्योंके क्वाथमें उपरोक्त औषधियोंका चूर्ण डालकर रात्रिमें लेपकरनेसे-भगन्दररोग शान्त होताहै । गूगल ५ पाँचपल, पीपलका चूर्ण १ एक पल, त्रिफलेका चूर्ण ४ चारतोले, दालचीनी २ दोतोले, और छोटी इलायची २ दोतोले सबको एकत्र मिलाकर सहत और घृतके साथ सेवन करनेसे भगन्दर-रोग दूर होताहै ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥

नशस्त्रैश्छेदयेत्प्राज्ञःस्फोटयेल्लेपनादिभिः ।
हरिद्रानिम्बसिन्धूत्थंपिष्ट्वालिम्पेत्स्फुटत्यलम् ॥ ३७ ॥
नरास्थितैललेपेनस्फुटितःशुध्यतिव्रणः ।
ताम्रचूर्णसमंचूर्णसुतमेकंविमर्दयेत् ॥ ३८ ॥
सैन्धवंसप्तभागश्चगंधकंनवभागकम् ।
भृंगीद्रवैःसजम्बीरैःसप्ताहंघर्म्मर्दितम् ॥ ३९ ॥
तैललिप्तंस्फुटत्याशुयदपक्कंभगन्दरम् ।
ताम्रभस्मद्रवैर्मर्द्यंमधुपर्णीपुनर्नवा ॥ ४० ॥
मेषशृंगीदिनैकेनव्रणशोधनरोपणम् ।
कांचनीद्विनिशामुण्डीमंजिष्ठाचशतावरी ॥ ४१ ॥
गंधकंधातकीपुष्पं तुल्यं लवणपंचकम् ।
कन्याद्रवयुतोलेपःकफोत्थेचभगन्दरे ॥ ४२ ॥

अर्थ-भगन्दरके व्रणोंको कदापि शस्त्रसे न चीरे, किन्तु लेपादिसे तोड़े । हलदी, नीम, और सैंधेनोनको एकत्र पीसकर प्रलेप करनेसे, अथवा मनुष्यकी हड्डियोंके चूर्णको तेलमें मिलाकर लेप करनेसे भगन्दर-

के सब व्रण फूटकर सूख जाते हैं । ताँबेके चूर्णको और पारेको एक एक भागलेकर दोनोंको एकत्र खरल करै, पश्चात् इसमें सैंधानोन ७ सात भाग और गंधक ९ नौ भाग मिलाकर भांगरेके रसमें और जम्भीरी नीबूके रसमें सात दिनतक धूपमें खरल करै, फिर इसमें तेल मिलाकर लेप करनेसे अपक्व भगन्दरभी फूट जाताहै । ताँबेकी भस्मको मधुपर्णी पुनर्नवा और मेढ़ासिंगीके रसमें एक दिन खरलकर लेप करनेसे व्रण शुद्ध होजाते हैं, और भरजाते हैं । सत्यानाशी कटेरी, हलदी, दारुहलदी, गोरखमुण्डी, मजीठ, सतावर, गंधक, धायके फूल और पाँचों नोन इन सब औषधियोंको समान भागले घीकारके रसमें खरलकर कफज भगन्दर पै लेप करै ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥

सैन्धवंचित्रकंदन्तींपलाशञ्चेन्द्रवारुणीम् ।
गोमूत्रेऽष्टगुणेपच्याद्ग्राह्यमष्टावशेषकम् ॥ ४३ ॥
क्वाथपादंक्षिपेत्तैलंकृष्णायसस्त्वयोमृतम् ।
पचेत्तैलावशेषञ्चतेनलेप्यंभगन्दरम् ॥ ४४ ॥
असाध्यंसाधयत्याशुपक्वंकृमिकुलान्वितम् ॥ ४५ ॥

इति सैन्धवादि तैलम् ।

अर्थ-तिलका तेल १ एक सेर क्वाथके लिये सैंधानोन, चीता, दन्ती, पलाश और इन्द्रायणकी जड़, यह सब कूटेहुए द्रव्य प्रत्येक ३ तीन पल २ दो तोले, पाकके लिये गोमूत्र १२८ एक सौ अठाईस पल, शेष ३२ बत्तीसपल, तथा कल्कके लिये पुटपाकसे मारा हुआ और जारण किया हुवा लोहा २ दोपल, सबको यथाविधिसे मिलाकर तेलको सिद्ध करै । इस तेलका लेप करनेसे पक्व और कृमिसंयुक्त, असाध्य भगन्दरभी दूर होता है ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥

निशासैन्धवसिद्धार्थक्षौद्रगुग्गुलुसंयुता ।
वर्त्तिर्भगन्दरेयोज्यातथानाडीव्रणापहा ॥ ४६ ॥

अर्थ-हलदी, सैन्धवलवण, सफेद सरसों, सहत और गूगल, इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर बत्तीबना योजनेसे भगन्दर और नाडीव्रण दूर होता है ॥ ४६ ॥

व्यायामंमैथुनंयुद्धंपृष्ठायानंगुरूणिच।
संवत्सरंपरिहरेदपिरूढव्रणोनरः॥ ४७॥

इति भगंदराध्यायः।

अर्थ–व्रणोंके मरजानेपर अर्थात् भगन्दररोगके आरामहोजानेपरभीए कवर्षतक व्यायाम, मैथुन, युद्ध, हाथीघोडेआदि सवारियोंपै चढ़ना और भारीद्रव्य, इन सबको वर्जदेवै॥ ४७॥

इति भगन्दराध्यायःसमाप्तः।

अथोपदंशचिकित्सामाह।

स्निग्धस्विन्नशरीरस्यध्वजमध्येसिराव्यधः।
जलौकःपातनंवास्यादूर्ध्वाधःशोधनंतथा॥ १॥
सद्योहितदोषस्यरुक्शोथावुपशाम्यतः।
पाकोरक्ष्यःप्रयत्नेनशिश्नक्षयकरोहिसः॥ २॥

अर्थ–उपदंशरोगमें प्रथम स्नेह और स्वेददेकर लिंगकी फस्त खोले, अथवा जोंक लगवावे तथा वमन और विरेचन दोनों कराकर शुद्ध करै, इस प्रकार करनेसे सम्पूर्ण दोष दूर होकर तत्काल पीडा और सूजन दूर होजाती है। परन्तु जिससे उपदंश पकेनहीं, ऐसे यत्नोंसे रक्षा करै इसका विशेष ख्याल रक्खै, कारण यह है कि उपदंशके पकनेसे लिंगका अग्रभाग पक अर्थात् सडकर गिरपडता है, इससे लिंग छोटा और असमर्थ हो जाता है। तथा कोई कोई रोगी परलोकनिवासीभी होजाते हैं॥ १॥ २॥

पटोलनिम्बत्रिफलागुडूचीक्वाथंपिबेद्वाखदिराशनाभ्याम्।
सगुग्गुलुंवात्रिफलायुतंवासर्वोपदंशापहरःप्रयोगः॥ ३॥
प्रपौण्डरीकंमधुकंरास्नाकुष्ठपुनर्नवाः।
सारलागुरुभद्राख्यैर्वातिकेलेपसेचने॥ ४॥

भद्रोदेवदारुः।

अर्थ-परवल, नीम, त्रिफला, और गिलोयके काथमें अथवा खैर और असनके काथमें गूगल अथवा त्रिफलेका चूर्ण डालकर पीनेसे सर्व प्रकारके उपदंश नष्ट हो जाते हैं, पुण्डेरिया, मुलेठी, रास्ना, कूठ, पुनर्नवा, सरल, अगर, और देवदारु, इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर लेप करनेसे अथवा इन औषधियोंका काथ बनाकर सेवन करनेसे उपदंश रोग शान्त होता है ॥ ३ ॥ ४ ॥

गैरिकांजनमंजिष्ठामधुकोशीरपद्मकैः।
सचन्दनोत्पलैःस्निग्धैःपैत्तिकंसप्रलेपयेत्॥५॥

अर्थ-गेरू, रसौत, मजीठ मुलेठी, खस, पद्माख, लालचंदन और उत्पल, इन सब औषधियोंको एकत्र पीस घी मिलाके लेप करनेसे पित्तज उपदंश दूर होताहै ॥ ५ ॥

निम्बार्ज्जुनाश्वत्थकदम्बशालजम्बूवटोदुम्बरवेतसेषु।
प्रक्षालनालेपघृतानिकुर्याच्चूर्णञ्चपित्तास्रभवोपदंशैः॥६॥

अर्थ-नीम, अर्ज्जुन, पीपल, कदम, शाल, जामुन, वड, गूलर और वेत, इन सब वृक्षोंकी छालका काथ बनाकर परिषेक करनेसे अथवा इन सब छालोंको पीसकर लेप करनेसे, किम्वा इन सब छालोंके योगसे घृतको सिद्धकर सेवन करनेसे या उक्त, छालोंका चूर्ण बनाकर योजनेसे पित्त और रक्तजन्य उपदंश दूर होताहै ॥ ६ ॥

त्रिफलायाःकषायेणभृंगराजरसेनवा।
व्रणप्रक्षालनंकुर्यादुपदंशप्रशान्तये॥ ७ ॥

अर्थ-त्रिफलेके काढ़ेसे अथवा भांगरेके रससे उपदंशको धोनेसे आराम होताहै ॥ ७ ॥

दार्वीरसांजनंद्राक्षाशंखनाभिपयोमधु ।
तैलाज्यगोमयरसोलेपस्तैःसमभागकैः ॥
सुपिष्टैरुपदंशेस्याद्व्रणश्वयथुदाहता ॥ ८ ॥

अर्थ-दारुहलदी, रसौत, लाख, शंखनाभि, दूध, सहत, तेल, घृत और गोबरका रस, इन सबको समान भागले एकत्रपीसकर लेप करनेसे उपदंशके घाव, सूजन और दाह दूर होजाती है ॥ ८ ॥

वटप्ररोहार्ज्जुनजम्बुपथ्यालोध्रोहरिद्राचहितःप्रलेपः ।
सर्वोपदंशेषुचरोहणार्थंचूर्णश्च तज्जंविमलांजनेन ॥९॥

अर्थ-वड़के अंकुर, अर्जुनकी छाल, जामुनकी छाल, हरड़, लोध, और हलदी, इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर लेप करनेसे अथवा उक्त औषधियोंका चूर्ण, फिटकरी और रसौत मिलाकर योजनेसे-उपदंश रोगके घाव भरजाते हैं ॥ ९ ॥

भूनिम्बनिम्बत्रिफलापटोलकरञ्जजातीखादिराशनाभ्याम् ।
सतोयकल्कैर्घृतमाशुपक्कंसर्वोपदंशापहरःप्रविष्टम् ॥ १० ॥
करञ्जस्यफलं । एतद्भक्षणंम्रक्षणञ्च ।

इति भूनिम्बाद्यं घृतम् ।

अर्थ-घृत ४ चारसेर, क्काथके लिये चिरायता, नीमकीछाल, पटोलपत्र, करंजकेफल, चमेलीके पत्ते, खैर और विजयसार प्रत्येक एक एकसेर, पाकके लिये जल ६४ चौंसठसेर, शेष १६ सोलहसेर और कल्कके लिये भी येही औषधि एकसेर लेवे, यथाविधिसे घृतको सिद्धकरै। इस घृतके खानेसे-तथा लगानेसे-सर्व प्रकारके उपदंश दूर होतेहैं॥ १०॥

घृतानियानिचोक्तानिकुष्ठेनाड़ीव्रणेव्रणे ।
उपदंशेप्रयोज्यानिसेकाभ्यंजनभोजनैः ॥ ११ ॥

अर्थ-जोघृत कुष्ठरोग, नाडीव्रण और व्रणरोगमें कहेहैं, यह सबघृत

उपदंश रोगमें सेक, अभ्यंग और भोजनरूपसे व्यवहार करने चाहिये ॥ ११ ॥

गृहधूमनिशाकिण्वैरेकद्वित्र्यंशकैःक्रमात्।
तैलंसिद्धंसकण्डूश्चशोथंचौवोपदंशनुत् ॥ १२ ॥
किण्वंसुराबीजम्।

इति गृहधूमाद्यं तैलम्।

अर्थ-तेल ४ चारसेर, जल १६ सोलहसेर, तथा कल्कके लिये घरका धुआँ १ एक पल-४ चारतोले-पाँच ५ मासे-३ तीन रत्ती, हलदी २ दो पल-५ पाँच तोले-२ मासे- ३ तीनरत्ती, और सुराबीज ३ तीन-पल- ७ सात तोले- ७ सात मासे ८ आठ रत्ती लेवै। यथा विधिसे तैलको सिद्धकरै, यह तेल-कण्डू और सूजन संयुक्त उपदंश रोगको दूर करैहै ॥ १२ ॥

यस्यलिंगस्यमांसन्तुशीर्य्यतेकृमिभक्षितम्।
तस्यकोषातकीलम्बाबीजनागरसाधितम् ॥
तैलंहन्त्यचिराद्घोरंदुष्टव्रणभगन्दरम् ॥ १३ ॥
इति कोषातकाद्यं तैलम्।

अर्थ-तेल ४ चारसेर, जल १६ सोलह सेर, तथा कल्कके लिये कड़वी तोरइयों के बीज और सोंठ, यह सब १ एक सेर, यथा विधिसे तैलको सिद्धकर लगानेसे शीर्णमांस और कृमि भक्षित उपदंश रोग, दुष्ट व्रण तथा भगन्दर रोग दूर होताहै ॥ १३ ॥

महाशंखंजलैःपिष्टातेनलिङ्गंप्रलेपयेत्।
लिङ्गरोगंनिहन्त्याशुलेपोऽयंव्याधिनाशकः ॥ १४ ॥

अर्थ-मनुष्यकी खोपडीको जलमें पीसकर लेपकरनेसे उपदंश रोग दूर होताहै ॥ १४ ॥

कुष्टंपूगंवचातोयैःसारंवाखादिरोत्थितम्।
जलैर्घृष्टंप्रलेपोऽयंलिंगरोगहरं परम् ॥ १५ ॥

अर्थ-कूठ, सुपारी और वचको जलमें पीसकर लेपकरनेसे अथवा खैरसारको जलमें पीसकर लेपकरनेसे उपदंश रोग दूर होताहै ॥ १५॥

क्षालयेत्रिफलाक्काथैःपक्कंलिंगंपुनःपुनः ।
तच्चूर्णदेयमात्रेणअङ्कुरश्चजयेद्ध्रुवम् ॥ १६ ॥

अर्थ-पकेहुए लिंगको त्रिफलेके काथसे वारंवार धोवै,पश्चात् त्रिफलेकाचूर्ण लिंगपै बुरकादेवै, इससे लिंगपै अंकुर आजातेहैं ॥ १६ ॥

सगन्धकघृतैर्लेप्यंपक्कंलिंगंसुखावहम् ॥ १७ ॥

अर्थ-गन्धकके चूर्णको घृतमें पीसकर लेपकरनेसे-उपदंश नाशको प्राप्त होताहै ॥ १७ ॥

मृणालंपद्मबीजानिनालंपद्मश्चकेशरम् ॥
सर्वंसप्तदलंकुर्यात्रिंशत्पलश्चगोघृतम् ॥ १८ ॥
घृताच्चतुर्गुणंक्षीरंघृतशेषंविपाचयेत् ।
पाकान्तेचूर्णमेषाञ्चक्षिप्त्वातदवतारयेत् ॥
भक्षयेल्लिंगरोगघ्नंघृतंपंचारविन्दकम् ॥ १९ ॥

इति पंचारविन्दघृतम् ।

अर्थ-मृणाल, कमलगट्टे, कमलकी डंडी, कमल, और कमलकेशर इन सबका चूर्ण ७ सात पल बनारक्खै, पश्चात् ३० तीसपलघृत १२० एक सौवीसपल दूध, इन दोनोंको एकत्र पकावै, जब पकते पकते घृत शेषरहजाय तब पूर्वोक्त मृणालादिका चूर्ण ७ सात पल मिलादेवै, इस पंचारविन्दघृतको खानेसे लिंगरोग दूर होताहै ॥ १८ ॥ १९ ॥

तुत्थटंकणकाशीशंशिलातालंरसांजनम् ।
सौराष्ट्रीसैन्धवश्चैलांसिन्दूरंरेणुभूषणम् ॥
पिष्ट्वातुक्षौद्रसंयुक्तंलेपंलिंगरुजापहम् ॥ २० ॥

अर्थ-तूतिया, सुहागा, कसीस, मैनाशिल, हरिताल, रसौत, सोरठकी मट्टी, सैंधानोन, इलायची, सिन्दूर और कपूर यह सब औषधि समान भागले सहतके साथ पीसकर लेपकरनेसे लिङ्गरोग नष्ट होताहै ॥ २०॥

कुमारीरससंपिष्टंजीरकंलेपनाद्रुजम् ।
तेनदाहश्चपाकश्चशान्तिमाप्नोतिनिश्चितम् ॥ २१ ॥

अर्थ-घीकारके रसमें जीरेको पीसकर लेप करनेसे उपदंशका दाह और पाक निवारण होता है ॥ २१ ॥

अयोरजस्ताम्ररजस्त्रिफलागैरिकस्तथा ।
उपदंशंनिहन्त्येतद्वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥ २२ ॥

अर्थ-लोहा, तांबेका चूर्ण, त्रिफला और गेरू, इन सब औषधियोंको जलमें पीसकर लगानेसे उपदंश रोग दूर होता है ॥ २२ ॥

मार्कवस्त्रिफलादन्तीताम्रचूर्णमयोरजः ।
उपदंशंनिहन्त्येतद्वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥ २३ ॥

इत्युपदंशाऽध्यायः ॥

अर्थ-भांगरा, त्रिफला, दन्ती, तांबेका चूर्ण और लोहेका चूर्ण जलमें पीसकर लेप करनेसे उपदंश रोग दूर होता है ॥ २३ ॥

इति उपदंशाऽधिकारः समाप्तः ।

अथ शूकदोष चिकित्सामाह ।

शूकदोषेषुसर्वेषुविषघ्नींकारयेत्क्रियाम् ।
हितंचसर्पिषःपानंपथ्यञ्चापिविरेचनम् ॥ १ ॥
हितंशोणितमोक्षश्चयच्चापिलघुभोजनम् ।
ज्वलतग्रथिताष्ठीलासर्षपीणांविशेषतः ॥ २ ॥
उपनाशनमांसानांकल्कानांव्रणवद्विधिः ।
पित्तरक्तोल्बणानाञ्चपित्तश्वयथुवत्क्रिया ॥ ३ ॥
सुखोष्णैरुपनाहैश्चसुस्निग्धैरुपनाहयेत् ।
कुम्भिकायांहरेद्रक्तंपक्वायांशोधितेव्रणे ॥ ४ ॥
तिन्दुकात्रिफलालोध्रैर्लेपस्तैलञ्चरोपणे ।
अलज्यांहृतरक्तायामयमेवाक्रियाक्रमः ॥ ५ ॥

स्वेदयेद्ग्रथितंशिश्नंनाडीस्वेदेनबुद्धिमान् ।
रक्तविद्रधिवच्चापिक्रियाशोणितजार्बुदे ॥ ६ ॥
कषायकल्कसर्पींषितैलंचूर्णंरसक्रियाम् ।
शोधनेरोपणेचैववीक्ष्यावस्थांविचारयेत् ॥ ७ ॥
अर्बुदंमांसपाकञ्चविद्रधिंतिलतालकम् ।
प्रत्याख्यायप्रकुर्वीतभिषक्तेषांप्रतिक्रियाम् ॥ ८ ॥

इतिशूकदोषाधिकारःसमाप्तः ।

अर्थ-सर्व प्रकारके शूकदोषोंमें विषघ्न क्रिया करै । घृतपान, विरेचन, रक्तमोक्षण और लघुभोजन, यह सब शूकदोषमें विशेष हितकारी हैं । ज्वलिता, ग्रथिता, अष्ठीला, और सर्षपी इन चार प्रकारके अधिक मांसयुक्त शूकदोष रोगमें व्रणवत् विधि प्रयोग करनी चाहिये । पित्त और रक्तजन्य शूकदोषरोगमें पित्तज शोथकी समान क्रिया करै, तथा किंचित् गरम, सुस्निग्ध प्रलेप देवै । कुम्भिकानामक शूक दोषमें फस्त खुलवावै और जो वह पकजाय तौ व्रणको शुद्धकर पश्चात् तेंदू, त्रिफला और लोधको एकत्र पीस तेलमें मिलाकर लेप करै, इससे घाव भरजाते हैं । अलजी शूकदोषमेंभी फस्त खुलवाकर, पश्चात् इसी प्रकार क्रिया करै । ग्रथितशूकदोषमें नाडीस्वेदप्रदान करै । रक्तार्बुदशूकदोषमें रक्तज विद्रधिकी समान चिकित्सा करै । कषाय, कल्क, घृत, तेल, चूर्ण और रसक्रिया यह सब शूकदोषकी अवस्थाके अनुसार वारंवार विचार कर प्रयोग करै । अर्बुद, मांसपाक, विद्रधि और तिलकालक इनको त्यागकै चिकित्सा करै, अर्थात् इनकी चिकित्सा न करै यह असाध्य हैं ॥ १ ॥ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥

इति शूकदोषाधिकारः समाप्तः ।

अथ भग्नचिकित्सामाह ।

आदौभग्नंविदित्वातुसेचयेच्छीतलांबुना ।
पंकेनालेपनंकार्यंबन्धनञ्चकुशान्वितम् ॥ १ ॥

कुशाबन्धनद्रव्यं ।

पलाशोदुम्बराश्वत्थकदम्बनिचुलत्वचः ।

वंशसर्जार्जुनंवाथकुशार्थमुपकल्पयेत् ॥ २ ॥
सघृतेनास्थिसंहारंलाक्षागोधूममर्ज्जुनम् ।
सन्धियुक्तेऽस्थिभग्नेतुपिबेत्क्षीरेणमानवः ॥ ३ ॥
रसोनमधुलाक्षाज्यंसिताकल्कंसमश्नताम् ।
छिन्नाभिन्नच्युतोऽस्थीनांसन्धानमचिराद्भवेत् ॥ ४ ॥
पीतंवराटिकाचूर्णंद्विगुंजंवात्रिगुञ्जकम् ।
अपक्कक्षीरपीतंस्यादस्थिभग्नप्ररोहणम् ॥ ५ ॥
लाक्षास्थिसंहृत्ककुभाश्वगन्धाचूर्णीकृतानागबलापुरश्च ।
संभग्नयुक्तास्थिरुजंनिहन्यादङ्गानिकुर्यात्कुलिशोपमानि ६॥

अर्थ--प्रथम भग्नरोगमें अर्थात् जिसकी हड्डी टूटगई हो उसको शीतल जलसे छिड़कै, पश्चात् कींचकालेप करै, तथा ढाक, गूलर, पीपल, कदम जलवैंत, बाँस, शाल और अर्जुनादिकी छालको पीसकर कुशाके संग बाँधे, संधियुक्त हड्डी टूट जावे तौ हडसंघारी, लाख, गेहुं, और अर्जुन इन सबको घृत और दूधके साथ पीवै, लशुन, सहत, घी, लाख और खाँड, इन सबको एकत्र पीसकर सेवन करनेसे छिन्न, भिन्न, और च्युत हड्डी जुड जाती है। २ दोरत्ती अथवा ३ तीन रत्ती पीली कौडीके चूर्णको कच्चे दूधके साथ सेवन करनेसे टूटी हड्डी जुड जाती है, लाख, हड़संघारी, अर्जुन, असगंध और गंगेरन इन सब औषधियोंको समान भागले चूर्णकर सबकी बराबर गूगल मिलाकर सेवन करनेसे अस्थि भग्न नष्ट होता है॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥

आभाफलत्रिकाव्योषैःसर्वैरेभिःसमीकृतैः ।
तुल्योगुग्गुलुर्वायोज्योभग्नसंधिप्रसाधकः ॥ ७ ॥

इति आभागुग्गुलुः ।

अर्थ–आभा (वणिक्द्रव्य विशेष), त्रिफला और त्रिकुटा, यह समान भाग और सबकी बराबर गूगल मिलाकर सेवन करनेसे अस्थिभग्न दूर होताहै ॥ ७ ॥

सद्योऽभिघातजनितरोगरुजाश्वयथवःप्रशाम्यन्ति ।
पिष्टकलवणालेपादम्लीकाफलरसाभ्यांवा ॥ ८ ॥
कांजिकेनैवसंपिष्टंशाल्मलीवल्कलंहितम् ।
छागविट्सहितंकोष्णमास्थिभग्नेप्रलेपनम् ॥ ९ ॥

अर्थ–पिष्टक और लवण को इमलीके रसमें पीसकर लेपकरनेसे तत्काल अभिघातजनित पीड़ा और सूजन दूर होतीहै । सेमलकी छालको काँजीमें पीसकर लेपकरना हितकारकहै । अथवा बकरीकी मैंगनको काँजीमें पीस गरमकरके लेपकरना हितकारकहै ॥ ८ ॥ ९ ॥

लवणंकटुकंक्षारमम्लमैथुनमातपम् ।
व्यायामञ्चनसेवेतभग्नोरूक्षान्नमेवच ॥ १० ॥

अर्थ–निमकीन, चरपरे, खारी, खट्टे, मैथुन, धूप, कसरत और रूखे अन्न, यह सब भग्नरोगमें विशेष अहितकारीहै ॥ १० ॥

वज्रवल्ल्यर्जुनोवासाविशालालोहटंकणौ ।
रसगन्धकसिन्धूत्थाःसमभागेनचूर्णयेत् ॥ ११ ॥
चूर्णाद्गुणत्रयंग्राह्यंगुग्गुलुंघृतपिट्टितम् ।
वज्रवल्ल्यादिकोनामगुग्गुलुःपरिनिर्मितः ॥ १२ ॥
गहनानन्दनाथेनभग्नरोगविनाशनः ।
नानाभग्नंनिहन्त्याशुबलवर्णाग्निवर्द्धनः ॥ १३ ॥
कृमिकुष्ठाक्षिरोगाणांहन्ताग्रन्थिव्यथापहः ॥
कटिहृद्रोगशमनआमवातनिषूदनः ॥ १४ ॥

वज्रवल्लीहाड़ाच ।

इति वज्रवल्ल्यादि गुग्गुलुः।

अर्थ–वज्रवल्ली (हड़संघारी), अर्जुनवृक्षकी छाल, अडूसा, इन्द्रायन, लोहा, सुहागा, पारा, गंधक और सैंधानोन, यह सब औषधि समान भागले चूर्णकरै और सब चूर्णसे तिगुने घीमें पिसेहुए गूगल मिलादेवै । यह वज्रवल्ल्यादि गूगल श्रीमद्गहनानन्द वैद्यने भग्नरोगको

नष्ट करनेके लिये निर्म्माण कियाहै। यह–नानाप्रकारके भग्नरोग, कृमिरोग, कुष्ठरोग, नेत्ररोग, ग्रन्थिरोग, कटिरोग, हृदयरोग और आमवात रोगको दूर करैहै। तथा बल, वर्ण, और अग्निको बढ़ावैहै ॥ ११ ॥ १२॥ १३ ॥ १४ ॥

मासत्रयंप्रकर्त्तव्यंवज्रवल्लीरसैःसह।
शुद्ध्यर्थिनेप्रदातव्यंतैलमेरण्डजंशुभम् ॥ १५ ॥

इति भग्नाधिकारः।

अर्थ–कोठेको साफ रखनेके लिये भग्नरोगीको हड़संघारीके रसके साथ अण्डीका तेल पीनेको देवै ॥ १५ ॥

इति भग्नाधिकारः समाप्तः।

अथ कुष्ठचिकित्सामाह।

पुण्डरीकंसविस्फोटंपामाणंगजचर्म्मकम्।
काकणंकच्छुकंदद्रुजिह्वकंचाष्टमंस्मृतम् ॥ १ ॥
गलितश्चमहाकुष्ठंकापालश्चउदुम्बरम्।
मण्डलश्चविचर्चाख्यंवैपादिकिट्टिमन्तथा ॥ २ ॥
चर्म्मदद्रुतथासिध्मशतारुःस्याद्दशस्मृतम्।
श्वित्रकाख्यंविसर्पश्चविंशभेदाःप्रकीर्त्तिताः ॥ ३ ॥

अर्थ–पुण्डरीक, विस्फोट, पामा, गजचर्म्मक, काकण, कच्छू, दद्रु जिह्वक, गलित, कापाल, उदुम्बर, मण्डल, विचर्चिका, किट्टिम, वैपादिका, चर्म्मदद्रु, सिध्म, शतारु, श्वित्र और विसर्प इन भेदोंसे कुष्ठ २० बीस प्रकारहै। अथवा यह कुष्ठके २० बीसभेदहैं ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥

पक्षेपक्षेचवमनंमासेमासेविरेचनम्।
षण्मासेचशिरामोक्षंनस्यंसप्तदिनान्तरे ॥ ४ ॥
वातोद्भवेतुसर्पिर्वमनंश्लेष्मोत्तरेषुकुष्ठेषु।
पित्तोत्तरेषुमोक्षोरक्तस्याविरेचनंचाग्रम् ॥ ५ ॥
प्रच्छलमल्पेकुष्ठेमहतिचशस्ताशिराव्यधनम्।
बहुदोषःसंशोध्यःकुष्ठीबहुशोनुरक्षताप्राणान् ॥ ६ ॥

वचावासापटोलानांनिम्बस्यफलिनीत्वचः ।
कषायोमधुनापीतोवान्तिकृन्मदनान्वितैः ॥ ७ ॥
विरेचनञ्चकर्त्तव्यंत्रिवृद्दन्तीफलत्रिकैः ।
नस्यधूमौविधातव्योबुध्वावास्तिश्चजानता ॥ ८ ॥
पुराणाःशालिगोधूममुद्गाद्याःकुष्ठिनेहिताः ।
तिक्तशाकंजांगलञ्चपानादौखादिरोदकम् ॥ ९ ॥

अर्थ-कुष्ठरोगी पक्ष पक्ष अर्थात् पन्द्रह पन्द्रह दिनमें वमन, एक एक महीनेमें विरेचन, छै महीनेमें रक्तमोक्षण, और सात सात दिनके बाद नास लेवै। वातकुष्ठरोगमें घृत पान, कफजकुष्ठमें वमन, पित्तजकुष्ठरोगमें रक्तमोक्षण और तीक्ष्णविरेचन, क्षुद्रकुष्ठ रोगमें अस्त्रकर्म्म और महाकुष्ठरोगमें शिरावेध करै। और बहुत दोषवाले कुष्ठरोगीको इस प्रकार वमन और विरेचनके द्वारा वारंवार शोधन करै, जिससे बलका नाश न होवै। वच, अडूसा, पटोल, नीमकी छाल, प्रियंगूकी छाल और मैनफल, इनका क्काथ बनाकर सहत मिला वमनके लिये कुष्ठ रोगीको पीनेको देवै। नस्य, धूमपान, बस्तिक्रिया, पुराने शालिधानके चावलोंका भात, गेहूँ, मूंग, आदिका यूष, तिक्तशाक, जंगल देशके जीवोंका मांस और खदिरका जल, यह सब कुष्ठरोगीके लिये विशेष हितकारी हैं॥ ४॥ ५॥ ६॥ ७॥ ८॥ ९॥

मनःशिलालेमरिचानितैलमार्कपयःकुष्ठहरःप्रदेहः ।
करञ्जबीजैडगजंसकुष्ठंगोमूत्रपिष्टञ्चपरःप्रदेहः ॥ १० ॥
पत्राणिपिष्ट्वाचतुरङ्गुलस्यतक्रेणपत्राण्यनुकाकमाच्याः ।
तैलाक्तगात्रस्यनरस्यकुष्ठान्युद्वर्त्तयेदश्वहनच्छदैश्च॥ ११॥

अश्वहनः करवीरः ।

अर्थ-मैनशिल, हरिताल, कालीमिरच, सरसोंका तेल, और आकका दूध, इन सबको एकत्र पीसकर लेप करनेसे कुष्ठरोग नष्टहोता है। करंजके बीज, चकवड़, और कूठ, इन तीनों औषधियोंको एकत्र गोमूत्रके संग पीसकर लेप करनेसे कुष्ठरोग नष्ट होता है। कुष्ठरोगीके शरीरपै तैल मलकर अमलतासके पत्ते घोलके साथ पीसकर मर्दन करनेसे

अथवा मकोयको पीसकर मर्दन करनेसे-किम्वा कनेरके पत्तोंको पीसकर मर्दन करनेसे कुष्ठरोग दूर होता है ॥ १० ॥ ११ ॥

आरग्वधःसेडगजःकरञ्जोवासागुडूचीमदनंहरिद्रे ।
श्याह्वःसुराह्वःखदिरोधवश्चनिम्बंविडंगंकरवीरकश्च ॥१२॥
ग्रन्थिश्चभौर्ज्जोलशुनःशिरीषःसालोमथोगुग्गुलकृष्णगन्धे ।
फणिज्जकोवत्सकसप्तपर्णौपिचूनिकुष्ठंसुमनःप्रवालाः ॥१३॥
वचाहरेणुस्त्रिवृतानिकुम्भो भल्लातकंगैरिकमंजनञ्च ।
मनःशिलालेगृहधूमएलाकासीसलोध्राज्जुनमुस्तसर्ज्जा १४
आयर्द्धरूपैर्विहिताःषडेतेगोपित्तपीताःपुनरेवपिष्टाः ।
सिद्धाःपरंसर्षपतैलयुक्ताश्चूर्णप्रदेहाभिषजाप्रयोज्याः ॥१५॥
कुष्ठानिकृच्छ्राणिनवींकंचनासंसुरेन्द्रलुप्तंकिटिभंसदद्रुः ।
भगन्दरार्शांस्यपचींसपामांहन्युःप्रयुक्तानचिरान्नराणाम् १६

अर्थ-अमलतास, चकवड़, करञ्ज, अडूसा, मैनफल हलदी, और दारुहलदी १ गंधविजोरा, देवदारु, खैर, धववृक्षकी छाल, नीमकी छाल, वायविडंग और कनेर २ गठिवन, भोजपत्र, लशुन, सिरकी छाल गूलर और सैंजिनेकी छाल ३ तुलसी, कुडेके बीज, कपास, सतोनेकी छाल, कूठ और चमेलीके पत्ते ४ वच, रेणुका, निसोत, गूगल, भिलावे के बीज, गेरु और रसौत ५ मैनशिल, हरिताल, घरका धुआँ, इलायची, कसीस, लोध, अर्जुन, नागरमोथा और राल ६ इन छै योगोंमेंसे एक किसी योगका काथकर गोलोचनके संग पीनेसे अथवा पीसकर लेपकरनेसे, या इनका चूर्ण सहतमें मिलाकर लेपकरनेसे, सर्वप्रकारके कुष्ठ और भगन्दर, बवासीर, तथा अपची आदि रोग दूर होतेहैं ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥

हरिद्रेपथ्याकुष्ठञ्चघनंसहरितालकम् ।
बिभीतकंमुस्तकञ्चकटुतैलंमनःशिला ॥ १७ ॥
एतद्विचूर्ण्यसंमिश्रचरौद्रेतुपरिपाचयेत् ।
विचर्चिकापामादद्रुखजकुष्ठहरंपरम् ॥ १८ ॥

इति हरिद्राद्यं तैलम् ।

अर्थ–हलदी, दारुहलदी, कूठ, अभ्रक, हरिताल, बहेड़ा, नागरमोथा और मैनशिल, इन सब औषधियोंको समानभागले सरसोंके तेलमें मिलाय धूपमें पकाकर परिषेक करनेसे विचर्चिका, पामा, दद्रु, खञ्ज आदि कुष्ठ नष्ट होतेहैं ॥ १७ ॥ १८ ॥

पल्लवैरर्कपूतीकस्नुहारग्वधजातिजैः ।
उद्धर्त्तनंसगोमूत्रैःसर्वत्वग्दोषनाशनम् ॥ १९ ॥
विडंगैडगजाकुष्ठंनिशासिन्धूत्थसर्षपैः ।
धान्याम्लपिष्टोलेपनदद्रुकुष्ठविनाशनः ॥ २० ॥
तुल्योरसःशालतरोस्तुषेणसचक्रमर्दोऽप्यभयाविमिश्रः ।
पानीयभक्तेनतदम्बुपिष्टोलेपःकृतोदद्रुगजेन्द्रसिंहः २१॥
प्रपुन्नाडस्यबीजानिधात्रीसर्ज्जरसःस्नुही ।
सौवीरपिष्टंदद्रूणामेतदुद्वर्त्तनेहितम् ॥ २२ ॥
चक्रमर्दसमापथ्यालेपाद्दद्रुविनाशिनी ।
लेपनाद्भक्षणाद्वापितृणकंदद्रुनाशनम् ॥ २३ ॥
सक्षारंगंधकंलेपात्कटुतैलेनसिध्मजित् ।
सगन्धकंकासमर्दबीजकंमूलकंतथा ॥ २४ ॥
कदलीक्षारसंयुक्तारजनीसिध्मनाशिनी ।
तक्रमूलकबीजाभ्यांप्रलेपःसिध्मनाशनः ॥ २५ ॥
चक्राह्वयंस्नुहीक्षीरंभावितंमूत्रसंयुतम् ।
रवितप्तंहिकिंचिच्चलेपनंकिट्टिभापहम् ॥ २६ ॥
आरग्वधस्यपत्राणिचारनालेनपेषयेत् ।
दद्रुकिट्टिमकुष्ठानिहन्तिसिध्मानमेवच ॥ २७ ॥
एडगजकुष्ठसैन्धवसौवीरकसर्षपैश्चाक्रमिघ्नैः ।
क्रिमिसिध्मदद्रुमण्डलकुष्ठानांनाशनोलेपःपरमः ॥ २८॥

एडगजातिलसर्षपकुष्ठंमागधिकालवणद्वयमस्तु।
वर्षशतोपचितामपिकण्डूंनाशयतीहविचर्चिकदद्रुः२९॥
जलेनापिष्ठ्वातद्देशेलेपः।
नारिकेलोदकेन्यस्तस्तण्डुलःपूतिकांगतः।
लेपाद्विपादिकांहन्तिचिरकालानुबन्धिनीम् ॥ ३० ॥
शुक्तिकाभस्मसिन्धूत्थसर्पिःसर्जरसंपयः।
पादस्फोटनहालेपःतिक्तालावुव्यवस्थितः ॥ ३१ ॥

अर्थ-आक, पूतिकरञ्ज, थूहर, अमलतास और चमेलीके पत्तोंको गोमूत्रमें पीसकर मर्द्दनकरनेसे सर्वप्रकारके चर्म्मरोग दूर होतेहैं। वायविडंग, चकवड़, कूठ, हलदी, सैंधानोन और सरसों इन सबको समान भागले काँजीमें पीसकर लेपकरनेसे दद्रु कुष्ठ नष्ट होताहै। राल, तुष, चकवड़, और हरड़ इन सबको भातकी काँजीमें पीसकर लेपकरनेसे दद्रुकुष्ठरोग दूर होताहै। चकवड़के बीज, आमला, राल और थूहर इन सबको काँजीमें पीसकर लेपकरनेसे अथवा चकवड़ और हरड़को जलमें पीसकर लेपकरनेसे या चीनाधानको पीसकर लेपकरनेसे वा भक्षणकरनेसे दद्रुकुष्ठ नष्ट होताहै। गंधकका चूर्ण और जवाखार सरसोंके तेलमें मिलाकर लेपकरनेसे अथवा गंधक, कसोंदीके बीज, मूलीके बीज केलेकाखार और हलदी एकत्र पीसकर लेपकरनेसे या तक्रके साथ मूलीके बीजोंको पीसकर लेपकरनेसे सिध्मकुष्ठ नष्ट होताहै। चकवड़के बीजोंको थूहरके दूधमें और गोमूत्रमें भावनादेकर धूपमें गरमकर लेपकरनेसे किट्टिम कुष्ठ नष्ट होताहै। अमलतासके पत्तोंको काँजीमें पीसकर लेपकरनेसे दद्रु, किट्टिम और सिध्मकुष्ठ नष्ट होताहै। चकवड़, कूठ, सैंधानोन, काँजी, सरसों, और वायविडंग, इन सबको एकत्र पीसकर लेपकरनेसे कृमि, सिध्म, दद्रु और मण्डल कुष्ठ नष्ट होताहै। चकवड़, तिल, सरसों, कूठ, पीपल, सेंधानोन, कालानोन, और दहीका तोड़, इन सबको एकत्र जलके साथ पीसकर लेपकरनेसे कण्डू, विचर्चिका और दद्रुकुष्ठ विनष्ट होताहै। नारियलके जलमें चावलोंको भिजो देवै, जब उसमें बास आनेलगै तब

पीसकर लेपकरनेसे विपादिका कुष्ठ रोग विनष्ट होता है। सीपकी भस्म, सैंधानोन, घृत, राल और दूध, इन सबको समान भाग लेकर एक दिन कडवे कद्दूके बीचमें रक्खै, पश्चात् लेप करनेसे-पादस्फोट दूर होता है ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥

त्रिफलापटोलरजनीमंजिष्ठारोहिणीवचानिम्बैः ।
एषकषायोऽभ्यस्तोनिहन्तिकफपित्तजंकुष्ठम् ॥ ३२ ॥

इतिनवकषायः ।

अर्थ-हरड़, बहेड़ा, आमला, पटोल, हलदी, मजीठ, कुटकी, बच और नीमकी छाल, इन सबको समान भागले क्वाथकर पीनेसे कफ पित्तज कुष्ठ नष्ट होता है ॥ ३२ ॥

पटोलखदिरारिष्टत्रिफलाकृष्णवेत्रजम् ।
तिक्तासिनःपिबेत्क्वाथंसर्वकुष्ठंव्यपोहति ॥ ३३ ॥
कोष्ठोडुम्बरिकारिष्टविडंगव्योषयासकम् ।
कल्कंलिप्त्वाजयेत्कुष्ठंकुटजत्वक्कृताम्बुना ॥ ३४ ॥

अर्थ-पटोल, खैर, नीमकी छाल, हरड़, बहेड़ा, आमला, कृष्णवेंत, कुटकी और विजयसारकी छाल, इनका क्वाथ पीनेसे सर्वप्रकारके कुष्ठ रोग नष्ट होते हैं। कठूमर, वायविडंग, सोंठ, मिरच, पीपल और जवासा यह सब समान भाग लेकर कुडेकी छालके क्वाथमें पीसकर, लेप करनेसे सर्व प्रकारके कुष्ठ नष्ट होते हैं ॥ ३३ ॥ ३४ ॥

निम्बंपटोलंव्याघ्रीञ्चगुडूचींवासकन्तथा ।
कुर्याद्दशपलान्भागानेकैकस्यसुकुट्टितान् ॥ ३५ ॥
जलद्रोणेविपक्तव्यंयावत्पादावशेषितम् ।
घृतप्रस्थंपचेत्तेनत्रिफलागर्भसंयुतम् ॥ ३६ ॥
पंचतिक्तमितिख्यातंसर्पिःकुष्ठविनाशनम् ।
अशीतिंवातजान्रोगांश्चत्वारिंशच्चपैत्तिकान् ॥ ३७ ॥

विंशतिंश्लैष्मिकांश्चैवपानादेवापकर्षति।
दुष्टव्रणक्रिमीनर्शःपंचकासांश्चनाशयेत् ॥ ३८ ॥

इति पंचतिक्तघृतम्।

अर्थ–गायका घी २ दो सेर, काथके लिये नीमकी छाल, कटेरी, गिलोय और अडूसा प्रत्येक दश दश पल, पाकके लिये जल ३२ बत्ती, ससेर, शेष ८ आठ सेर, तथा कल्कके लिये हरड, बहेडा और आमला ॥ आधसेर। यथाविधिसे घृतको सिद्ध करै, यह पंचातिक्त घृत कुष्ठरोग, अस्सी प्रकारके वातरोग, चालीस प्रकारके पित्तरोग, बीस प्रकारके कफके रोग, दुष्टव्रण, कृमिरोग, बवासीर और पाँच प्रकारकी खाँसीको दूर करै है ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥

सपिप्पलीकासहतालमूलासवेल्ववासासशशाङ्कलेखा।
सायोमलासामलकासतैलासर्वाणिकुष्ठान्यपहन्तिलीढा ३९
शशाङ्कलेखाहाकुचीबीजम्। सायोमलासमण्डूरा।

विडंगत्रिफलाकृष्णाचूर्णंलीढ्वासमाक्षिकम्।
हन्तिकुष्ठंकृमीन्मेहान्नाडीव्रणभगन्दरान् ॥ ४० ॥
शक्राशनंसमादायप्रशस्तेऽहनिचोद्धृतम्।
तच्चूर्णंमधुसर्पिर्भ्यांलिह्यात्क्षीरघृताशनः ॥ ४१ ॥
हत्वाचसर्वकुष्ठानिजीवेद्वर्षशतद्वयम्।
बाकुचीबीजसंजातदधिसारंसमाक्षिकम् ॥
लीढ्वाचानुपिबेत्तक्रमेतत्स्यात्सर्वकुष्ठनुत् ॥ ४२ ॥

इति दधिसारं नवनीतम्।

अर्थ–पीपल, मुसली, वायविडंग, अडूसा, बापचीके बीज, मण्डूर, और आमला, इन सब औषधियोंको समान भागले तिलके तेलमें मिलाकर सेवन करनेसे सर्व प्रकारके कुष्ठ नष्ट होते हैं। वायविड़ंग, हरड, बहेड़ा, आमला, और पीपल, इन सब औषधियोंको समानभाग ले सहतमें मिलाकर चाटनेसे–कोढ़, कृमि, प्रमेह, नाड़ीव्रण और

भगन्दर रोग दूर होते है। शुभ दिनमें भाँगको उखाड़ लावै, पश्चात् उत्तम रीतिसे बारीक चूर्णकर सहतमें मिलाकर चाटै और दूध तथा घृतके साथ भोजन करै तौ सर्व प्रकारके कुष्ठरोग दूर होजाते हैं, तथा २०० दो सौ वर्षपर्यन्त जीता रहता है। बापचीके बीजोंके योगसे निकाला हुवा नौनीघी सहतमें मिलाकर चाटै और ऊपरसे तक्र पीवै, इससे सर्व प्रकारके कुष्ठरोग नष्ट होते हैं॥ ३९ ॥ ॥ ४० ४१ ॥ ४२ ॥

पिबतिसकटुतैलंगन्धपाषाणचूर्णं
रविकिरणसुतप्तंपामनोयःपलार्द्धम्।
त्रिदिनंतदनुसिक्तंक्षीरभोजीतुशीघ्रं
भवतिकनकदीप्तिःकामचारीमनुष्यः॥ ४३ ॥
त्रिभिर्दिनैःपलार्द्धंभक्ष्यम्।
गन्धकचूर्णमिश्रितकटुतैलेनगात्रम्रक्षणेन।
दुग्धेनभोक्तव्यंवातातपंवर्जयित्वातिष्ठेत् ॥ ४४ ॥
एकस्तिलस्यभागौद्वौसोमराज्यास्तथैवच।
भक्ष्यमाणमिदंप्रातर्गुह्यदद्रुविनाशनम् ॥ ४५ ॥

अर्थ–कड़वे तेलमें दो तोले गंधकको मिलाकर तीन दिनतक सेवन करै, तथा इसीको धूपमें गरमकर कुष्ठरोगीके शरीरपै मले और केवल दुग्धान्न पथ्यहै। इससे निश्चय कुष्ठरोग दूर होता है, और शरीर सुवर्ण-की समान दीप्तिमान् होताहै। गंधकके चूर्णको कड़वे तेलमें मिलाकर शरीरपै मलै, इसपै वायु सेवन और धूप सेवन करना त्यागदेवै, केवल दूधके साथ अन्न भक्षणकरै। एकभाग तिल और दोभाग बापचीके बीज, दोनोंको एकत्र पीसकर सेवन करनेसै–गुह्य देशके दाद दूर होतेहैं॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥

चित्रकत्रिफलाव्योषमजाजीकारवीवचाम्।
सैन्धवातिविषेकुष्ठंचव्येलायावशूकजम् ॥ ४६ ॥
विडंगान्यजमोदाचमुस्तान्यमरदारुच।
यावन्त्येतानिचूर्णानितावन्मात्रन्तुगुग्गुलुम् ॥ ४७ ॥

संमर्द्यसर्पिषासार्द्धंगुटिकांकारयेद्भिषक् ।
प्रातर्भोजनकालेवाभक्षयेच्चयथाबलम् ॥ ४८ ॥
हन्त्यष्टादशकुष्ठानिकृमिदुष्टव्रणानिच ।
ग्रहण्यर्शोविकारांश्चमुखामयगलग्रहान् ॥ ४९ ॥
गृध्रसीमथगुल्मञ्चभग्नंचापिनियच्छति ।
व्याधीन्कोष्ठगताश्चान्याञ्जयेद्विष्णुरिवासुरान् ॥ ५० ॥

इति एकविंशति गुग्गुलुः ।

अर्थ–चीता, हरड़, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल जीरा, सौंफ, वच, सैंधानोन, अतीस, कूठ, चव्य, इलायची, जवाखार, वायविडंग, अजमोदा, नागरमोथा और देवदारु, इन सब औषधियोंका चूर्ण समान भाग और सबकी बराबर गूगल ले, सबको घृतमें मिलाकर गोली बनालेवै, इसको प्रातःकाल और भोजनके समय सेवन करनेसे अठारह प्रकारके कुष्ठ, कृमि, दुष्टव्रण, संग्रहणी, बवासीर मुखरोग, गलग्रह, गृध्रसी, गुल्म, भग्न, कोठगतरोग और अन्यान्यरोग दूर होतेहैं ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥

निम्बामृतावृषपटोलनिदिग्धिकानां
भागान्पृथक्दशपलान्विपचेद्घटेऽपाम् ।
अष्टांशशेषितरसेनसुनिश्चितेन
प्रस्थंघृतस्यविपचेत्पिचुभागकल्कैः ॥ ५१ ॥
पाठाविडंगसुरदारुगजोपकुल्या
द्विक्षारनागरनिशामिषिचव्यकुष्ठैः ।
तेजोवतीमिरचवत्सकदीप्यकाग्नि
रोहिण्यरुष्करवचाकणमूलयुक्तैः ॥ ५२ ॥
मंजिष्ठयातिविषयावरयायवान्या
संशुद्धगुग्गुलुपलैरपिपंचसंख्यैः ।
तत्सेवितंविधमातिप्रबलंसमीरं

सन्ध्यस्थिमज्जगतमप्यथकुष्ठमीदृक् ॥ ५३ ॥
जत्रूर्द्ध्वसर्वगदगुल्मगुदोत्थमेहान्
यक्ष्मारुचिश्वसनपीनसकासशोषम्।
हृत्पाण्डुरोगगलविद्रधिवातरक्तम् ॥ ५४ ॥

इति गुग्गुलुपंचतिक्तघृतम्।

अर्थ-गायका घी २ दोसेर, क्वाथके लिये नीमकी छाल, गिलोय, अडूसेकी छाल, पटोल, और कटेरी प्रत्येक दशपल, पाकके लिये जल ३२ सेर, शेष ८ सेर, तथा कल्कके लिये पाढ़, वायविडंग, देवदारु, जवाखार, गजपीपल, सज्जी, सोंठ, हलदी, सोया, कूठ, तेजपल, कालीमिरच, इन्द्रजौ, अजमोद, चीता, कुटकी, भिलावा, वच, पीपरामूल, मजीठ, अतीस, त्रिफला, और, अजवायन, प्रत्येक २ दो दो तोले तथा शुद्धगूगल दश १० तोले। यथा विधिसै इस पंचतिक्त घृत गूगलको सिद्ध-करै। यह पंचतिक्त घृतगूगल अत्यन्त प्रबलवात, सन्धि, अस्थि और मज्जागत वायु कुष्ठ, ऊर्ध्वजत्रुरोग, गुल्म, गुदजरोग, प्रमेहरोग, राजयक्ष्मा, अरुचि, श्वास, पीनस, खाँसी, शोष, हृदयरोग, पाण्डुरोग गलरोग, विद्रधिरोग, वातरक्त और विशेष करकै कुष्ठरोगको नष्ट करै है ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥

निम्बंगोपारुणाकट्वीत्रायन्तीत्रिफलाघनम्।
पर्पटीवल्गुजानन्तावचाखदिरचन्दनम् ॥ ५५ ॥
पाठाशुण्ठीशटीभार्ङ्गीवासाभूनिम्बवत्सकम्।
श्यामेन्द्रवारुणीमूर्वाविडंगन्तुविसानलम् ॥ ५६ ॥
हस्तिकर्णमृतात्रेकापटोलंरजनीद्वयम्।
कणारग्वधसप्ताश्वकृष्णवेत्रोच्चटाफलम् ॥ ५७ ॥
भूकन्दंतिलपर्णश्चाजिङ्गीपद्माचमूषली।
विष्वक्सेनाचकैटर्य्यःशरपुंखाचकञ्चुकी ॥ ५८ ॥
एतेषांद्विपलान्भागाञ्जलद्रोणेविपाचयेत्।
अष्टभागावशेषेणकषायमवतारयेत् ॥ ५९ ॥

भल्लातकसहस्राणिछित्वात्रीण्यर्म्मणेऽम्भसि ।
चतुर्भागावशिष्टंतुकषायंपरिकल्पयेत् ॥ ६० ॥
तौकषायौसमादायवस्त्रपूतौसमाचरेत् ।
भल्लातकसहस्राणांमज्जानंतत्रदापयेत् ॥ ६१ ॥
गुडस्यचतुलांदत्वालेहवत्साधुसाधयेत् ।
त्रिकटुत्रिफलामुस्तसैन्धवानांपलंपलम् ॥ ६२ ॥
दीप्यकस्यपलंचैवचातुर्जातपलन्तथा ।
संचूर्ण्यप्रक्षिपेत्सिद्धेघृतभाण्डेनिधापयेत् ॥ ६३ ॥
महाभल्लातकोह्येषमहादेवेननिर्म्मितः ।
प्राणिनान्तुहितार्थायजयेच्छीघ्रंनिषेवितः ॥ ६४ ॥
श्वित्रमौदुम्बरंदद्रुऋष्याजिह्वंसकाकणम् ।
पुण्डरीकंचचर्म्माख्यंविस्फोटंमण्डलंतथा ॥ ६५ ॥
कण्डूंकपालकुष्ठञ्चविसर्पंसविपादिकम् ।
वातरक्तमुदावर्तंपाण्डुरोगंव्रणक्रुमीन् ॥ ६६ ॥
अर्शांसिषट्प्रकाराणिकासंश्वासंभगन्दरम् ।
सदाभ्यासेनपलितमामवातंसुदारुणम् ॥ ६७ ॥
निर्यंत्रणंचकथितंसर्वत्रापिचशस्यते ।
अग्निंचकुरुतेदीप्तंदीपनंपरमुत्तमम् ॥ ६८ ॥
अनुपानंप्रयोक्तव्यंछिन्नाक्वाथंपयोऽथवा ।
अम्लञ्चसर्वथात्याज्यंशाकमेवविशेषतः ॥ ६९ ॥

इतिमहाभल्लातकम् ।

अर्थ–नीमकी छाल, अनन्तमूल, अतीस, कुटकी, त्रायमान, हरड़, बहेड़ा, आमला, नागरमोथा, पित्तपापड़ा, बापचीके बीज, करिया, वासाऊ, वच, खैर, लालचंदन, पाढ़, सोंठ कचूर, भारंगी, अडूसा चिरायता, कुडेके बीज, कालानिसोत, इन्द्रायन, मूर्वा, वायविडंग, कमल-

केशर, पीपल, चीतेकीजड़, हस्तिकर्णपलाश, गिलोय, गोरखमुण्डी, परवल, हलदी, दारुहलदी, अमलतासकी छाल, आककी जड़, कृष्ण-बेत, उच्चटाफल, जंगलीजमीकन्द. लालचन्दन, मंजीठ, स्थलकमल, मुसली, फूलप्रियंगू, शरफोंका, कायफल, और कञ्चुकी (क्षीरीशवृक्षकी छाल) प्रत्येक आठ आठ तोले लेकर एकद्रोण जलमें पकावै, जब आठमाभाग जल शेष रहै तब उतारले। पश्चात् १००० एकहजार भिलावोंको लेकर टुकड़े करकै ३२ बत्तीससेर जलमें पकावै, जब आठ-सेर जल शेषरहै तब उतार लेवै, पश्चात् कपडेमें छानकर दोनों काथोंको मिलालेवै, फिर इसमें उपरोक्त भिलावोंकी गिरि और ६। सवा छैसेर गुड़मिलाके पकावै जब पकते पकते लेहकीसमान होजाय तब सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेड़ा, आमला, नागरमोथा, और सैंधेनों-नका चूर्ण प्रत्येक चार चार तोले, अजवायनका चूर्ण ४ चार तोले, और चातुर्जातकका चूर्ण ४ चार तोले डालदेवै, सिद्धहोजानेपर इसको एक उत्तम चिकने घीके बासनमें भरके रखदेवै।यहमहाभल्लातक श्रीगिरि-जापतिने संसारके प्राणियोंके हितके लिये निर्म्माण कियाहै। इसको सेवन करनेसे श्वित्रकुष्ठ, औदुम्बरकुष्ठ, दद्रु, ऋक्ष्यजिह्व, काकण, पुण्ड-रीक, चर्म्माख्य, विस्फोट, मण्डल, कण्डू, कपालकुष्ठ, विसर्प, विपादिका, वातरक्त, उदावर्त्त, पाण्डुरोग, व्रण, कृमि, छैप्रकारकी बवासीर, खाँसी, श्वास, भगन्दर और सदाअभ्यासकर सेवन करनेसे पलितरोग, दारुण आमवात, यह सब रोग दूरहोतेहैं। इसको नियन्त्रणकहाहै सर्वत्र प्रशस्त है। अग्निको दीपनकरै, और दीप्ताग्निवाले मनुष्योंको परमोत्तमहै। अनुपान–गिलोयका क्वाथ या दूध। सर्वप्रकारकी खटाई और विशेष करकै सम्पूर्ण शाकखाने वर्जितहैं॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥

अमृतभल्लातकीकुष्ठेऽपिकार्या ॥ ७० ॥

अर्थ–अमृतभल्लातकीभी कुष्ठरोगमें प्रयोग करना चाहिये ॥ ७० ॥

निम्बंपटोलंव्याघ्रीञ्चगुडूचीवासकंतथा।
कुर्य्याद्दशपलान्भागानेकैकस्यसुकुट्टितान् ॥ ७१ ॥
जलद्रोणेविपक्तव्यंयावत्पादावशेषितम्।

घृतप्रस्थंपचेत्तेनत्रिफलागर्भसंयुतम् ॥ ७२ ॥
पंचतिक्तमितिख्यातंसर्पिःकुष्ठविनाशनम् ।
अशीतिंवातजान्रोगांश्चत्वारिंशच्चपैत्तिकान् ॥ ७३ ॥
विंशतिंश्लैष्मिकांश्चैवपानादेवापकर्षति ।
दुष्टव्रणकृमीनर्शःपंचकासांश्चनाशयेत् ॥ ७४ ॥

इति पंचतिक्तघृतम् ।

अर्थ-गायका घी २ दोसेर, क्वाथके लिये नीमकीछाल,पटोल, कटेरी, गिलोय और अडूसेकी छाल,प्रत्येक कुटी हुई दशदशपल, पाकके लिये जल ३२ बत्तीससेर, शेष आठ ८ सेर कल्कके लिये त्रिफलेका चूर्ण ॥ आधसेर, यथाविधिसे इसको सिद्धकरै। यह पंचतिक्तघृत-सर्वप्रकारके कुष्ठोंको नष्टकरैहै, तथा ८०अस्सी प्रकारके वातरोग, ४० चालीसप्रकारके पित्तरोग, २० बिसप्रकारके कफ रोग, दुष्टव्रण, कृमि, बवासीर और पाँचप्रकारकी खाँसीको दूरकरैहै ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥

खदिरारग्वधव्योषत्रिवृच्चित्रकदन्तिका ।
पटोलत्रिफलारिष्टहरिद्राबाकुचीफलम् ॥ ७५ ॥
कटुकातिविषापाठात्रायन्तीधन्वयासकम् ।
कुष्ठंकरञ्जबीजानिशारिवेंद्रसवत्सकैः ॥ ७६ ॥
भल्लातकंविडंगानिगुग्गुलुश्चेतिकल्कितैः ।
पंचतिक्तकषायेणसर्पिःसिद्धंपिबेन्नरः ॥ ७७ ॥
हन्त्यष्टकुष्ठानिग्रंथिंगलगण्डंतथैवच ।
विषविस्फोटवीसर्पकण्डूदुष्टव्रणानपि ॥
रोगानन्यांश्चविविधान्वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥ ७८ ॥

इति खदिरादिपंचतिक्तकंघृतम् ।

अर्थ-गायका घी २ दोसेर, क्वाथके लिये नीमकीछाल, पटोल, कटेरी, गिलोय और अडूसा प्रत्येक दश दश पल, पाकके लिये जल ३२ बत्तीससेर, शेष ८ सेर, तथा कल्कके लिये खैर, अमलतास, त्रिकुटा, नीम,

की छाल, निसोत, चीता, दन्ती, पटोल, त्रिफला, हलदी, वापचीके बीज, कुटकी, अतीस, पाढ़, धमासा, त्रायमान, कूठ, करंजकेबीज, अनन्तमूल, गौरीसर, कुडेकेबीज, भिलावे, वायविडंग और गूगल ॥ आधसेर, सबको मिलाकर यथाविधिसे घृतको सिद्धकरै, अठारह प्रकारके कोढ़, ग्रन्थिरोग, गलगण्डरोग, विषविकार, विस्फोट, वीसर्प, कण्डू, दुष्टव्रण तथा अन्यान्यरोगोंको यह घृतदूरकरै है ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८

त्रिफलाद्विनिशावासायासपर्पटभूणकान् ।
त्रायन्तीकटुकानिम्बान्प्रत्येकंद्विपलोन्मितान् ॥ ७९ ॥
क्वाथयित्वाजलद्रोणेपादशेषेणतेनतु ।
घृतप्रस्थंपचेद्दक्षैःपिप्पलीघनचंदनैः ॥ ८० ॥
त्रायन्तीशक्रभूनिम्बैस्तत्पीतंतिक्तकंघृतम् ।
निहन्तिकुष्ठान्यर्शांसिश्वयथुंग्रहणीगदम् ॥ ८१ ॥
पाण्डुरोगंविसर्पञ्चजीवानामपिशस्यते ॥ ८२ ॥

इति तिक्तकंघृतम् ।

अर्थ—गायका घी२ दोसेर, क्वाथके लिये हरड, बहेडा, आमला, हलदी दारुहलदी, अडूसा, जवासा, पित्तपापडा, सुगंधवाला, त्रायमान, कुटकी और नीमकीछाल, प्रत्येक ८ आठतोले, जल३२ बत्तीससेर, शेष आठ ८ आठसेर, तथा कल्कके लिये बहेड़ा, पीपल, नागरमोथा, लालचंदन, त्रायमान, कुडेकेबीज और चिरायता आधसेर, यथाविधिसे घृतको सिद्ध करै, यह घृत—कुष्ठरोग, बवासीर, सूजन, संग्रहणी, पाण्डुरोग और विसर्परोगको नष्ट करैहै ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥

सप्तच्छदंप्रतिविषांशम्याकंतिक्तरोहिणींपाठाम् ।
मुस्तमुशीरंत्रिफलांपटोलपिचुमर्दपर्पटकम् ॥ ८३ ॥
धन्वयवासंचन्दनमुपकुल्येपद्मकरजन्यौच ।
षडग्रन्थांसविशालांशतावरींशारिवेचोभे ॥ ८४ ॥
वत्सकबीजंवासांमूर्वाममृतांकिराततिक्तञ्च ।

कल्कान्कुर्यान्मतिमान्यष्ट्याह्वत्रायमाणाञ्च ॥ ८५ ॥
कल्कस्तुचतुर्भागोजलमष्टगुणंरसोऽमृतफलानाम् ।
द्विगुणोघृतात्प्रदेयस्तत्सर्पिःपाययेत्सिद्धम् ॥ ८६ ॥
कुष्ठानिरक्तपित्तंप्रबलान्यर्शांसिरक्तवाहीनि ।
विसर्पमम्लपित्तंवातामृक्पाण्डुरोगांश्च ॥ ८७ ॥
विस्फोटकान्सपामानुन्मादकान्कामलांज्वरंकण्डूम् ।
हृद्रोगगुल्मपिडकानम्लपित्तमसृग्दरंगंडमालांच॥८८॥
हन्यादेतत्सद्यःपीतंकालेयथाबलंसर्पिः ।
योगशतैरप्यजितान्महाविकारान्महातिक्तम् ॥ ८९ ॥
अमृतफलानां आमलकीफलानाम् ।

इति महातिक्तकं घृतम् ।

अर्थ–उत्तम गायका घी २ दोसेर, जल ८ आठसेर,आमलोंका रस४ चारसेर, तथा कल्कके लिये सतवनकी छाल, अतीस अमलतासकी मज्जा, कुटकी, पाढ़, नागरमोथा, खस, हरड़, बहेडा आमला, नीमकी छाल, पित्तपापडा, धमासा, लालचंदन, पीपल, गजपीपल,पद्माख, हलदी, दारुहलदी, वच, इन्द्रायन, सतावर, गौरिया वासाऊ, करियावासाऊ, इन्द्रजौ, अडूसा, मूर्वा, गिलोय, चिरायता, मुलेठी, और त्रायमान यह सब ॥ आधसेर, यथाविधिसै यह घृत सिद्धकरै । यह घृत सर्वप्रकारके कुष्ठ, रक्तपित्त, प्रबल और रुधिरकी बहनेवाली बवासीर, विसर्प, अम्लपित्त, वातरक्त, पाण्डुरोग, विस्फोटक, पामारोग, उन्माद कामला, ज्वर, कण्डू, हृदयरोग, गुल्म, पिड़का, अम्लपित्त, प्रदर और गण्डमालादि रोगोंको दूर करै है । सैंकडों योगोंसे जिन रोगोंको आराम नहीं हुआहै, उन सबको यह महातिक्त घृत दूर करताहै ॥८३॥ ॥८४॥ ॥८५॥ ॥८६॥ ॥८७॥ ८८ ॥८९॥

वासागुडूचीत्रिफलापटोलं करञ्जनिम्बासनकृष्णवेत्रम् ।
तत्क्वाथकल्केनघृतंविपक्वं तद्वज्रकंकुष्ठहरंप्रदिष्टम् ॥९० ॥

विशीर्णकर्णाङ्गुलिहस्तपादः कृम्यर्दितोभिन्नमलोऽपिमर्दः।
पौराणिकंकान्तिमवाप्यजीवे दव्याहतोवर्षशतञ्चकुष्ठी॥९१

इति वज्रकंघृतम्।

अर्थ-उत्तम गायका घी२ दो सेर, जल ८ आठसेर, तथा कल्कके लिये अडूसा, गिलोय, हरड़, बहेडा आमला, पटोल, करंजके बीज, नीमकी छाल, असन वृक्षकी छाल, और कृष्णवेंत प्रत्येक दो दो तोले। और क्काथके लिये उपरोक्त क्काथकी औषधि प्रत्येक चार चार पल, पाकके लिये जल ८ आठसेर, शेष २ दोसेर रक्खै। सबको यथाविधिसे मिलाकर विधिपूर्वक घृतको सिद्धकरै, यह वज्रक घृत कुष्ठको नष्ट करैहै। इस घृतको सेवन करनेसे गलगईहै हाथपाँवोंकी ऊंगली जिनकी, तथा जिनके कीड़े पड़ गयेहैं और वारंबार दस्त आतेहैं, उन कुष्ठरोगियोंको रोगसै छुटाकर पौराणिक कान्तिको प्राप्त कर १०० सौवर्षतक जिवाताहै॥ ९० ॥ ९१ ॥

पटोलवासकारिष्टकरञ्जव्याघ्रिकामृता।
प्रत्येकंविंशतिपलाञ्जलद्रोणेविपाचयेत्॥ ९२ ॥
पादशेषेरसेतस्मिन्घृतप्रस्थंविपाचयेत्।
कल्कैरक्षरसैदारुत्रिफलात्र्यूषणाग्निभिः॥ ९३ ॥
पृथ्वीकातिविषापाठाचव्येन्द्रयवदीप्यकैः।
मूर्वाक्षारद्वयाजाजीवचाकृमिहरैर्युतैः॥ ९४ ॥
कटुकासप्तपर्णाभ्यंपुरस्याष्टपलेनतु।
सर्वकुष्ठान्यसृक्पित्तंविसर्पपूतिकोष्ठताम्॥ ९५ ॥
वातपित्तकफोद्भूतान्गदांस्तांस्तान्पृथग्विधान्।
पानात्प्रशमयत्येतद्गुग्गुलोःपंचतिक्तकम्॥ ९६ ॥
सिद्धश्चैतेनविधिनातैलप्रस्थःसगुग्गुलुः।
पानाभ्यंजननस्येषुयुक्तःपूर्वगुणावहः॥ ९७ ॥

इति बृहद्गुग्गुलोःपंचतिक्तकंघृतंतैलञ्च।

अर्थ-गायका घी या तिलका तेल २ दो सेर, क्काथके लिये पटोल

अडूसा, नीमकी छाल, करंजकेबीज, कटेरी और गिलोय प्रत्येक २० वीसपल, पाकके लिये जल ३२ बत्तीससेर, शेष ८ आठसेर, तथा कल्कके लिये देवदारु, त्रिफला, कालाजीरा, त्रिकुटा, चीता, अतीस, पाढ़ इन्द्रजौ, अजवायन, मूर्वा, चव्य, जवाखार, सज्जी, जीरा, वच, वायविडंग, कुटकी और सतवनकी छाल प्रत्येक २ दो दो तोले, गूगल ८ आठपल, यथाविधिसे घृत या तेलको सिद्धकर सेवन करनेसे सर्वप्रकारके कुष्ठ, और रक्तपित्तादि नानाप्रकारके रोग दूर होतेहैं ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ॥ ९४ ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ ९७ ॥

महौषधंमहामेदानिम्बपत्रंचसर्षपाः ।
मनःशिलाचसिन्दूरंपद्मचारिण्यवल्गुजम् ॥ ९८ ॥
हरिद्रेहरितालंचत्रिफलापीतगंधकम् ।
एतानिसमभागानिकर्षार्द्धंश्चप्रयोजयेत् ॥ ९९ ॥
सर्पिषश्चपलान्यष्टौदेवदारुरसंशुभम् ।
द्विगुणंत्रिगुणंक्षीरंगोमूत्रंचचतुर्गुणम् ॥ १०० ॥
ताम्रभाण्डेतुसंस्थाप्यशनैर्मृद्वग्निनापचेत् ।
चतुर्भागावशेषन्तुसकल्कमवतारयेत् ॥ १०१ ॥
अग्नौक्षिप्तन्तुनिःशब्दंजलयुक्तंविचक्षणः ।
अभ्यंगपानयोगाच्चतदासर्वगदाञ्जयेत् ॥ १०२ ॥
अष्टादशानांकुष्ठानांदद्रूणांश्वित्रिणांतथा ।
कुष्ठनाडीषुमर्त्यानांदुष्टानांकीटिनांतथा ॥ १०३ ॥
असृक्स्रावपरीतायेयेचत्यक्तभिषक्क्रियाः ।
विसर्पग्रहग्रस्तानांशीर्णाङ्गानांविशेषतः ॥ १०४ ॥
सर्वधातुगतेकुष्ठेपतितभ्रूशिरोग्रहे ।
घर्घराव्यक्तघोषाणांतथासर्वाङ्गपीडिनाम् ॥ १०५ ॥
पानेऽभ्यंगेतथानस्येबस्तिकर्म्मणिनित्यशः ।
सप्तरात्रप्रयोगेणसर्वकुष्ठानिनाशयेत् ॥ १०६ ॥
द्विसप्ताहप्रयोगेणपूर्णचन्द्रनिभाननः ।

जातकेशनखश्मश्रुर्भातिषोडशवर्षवत् ॥ १०७ ॥
अनङ्गसदृशःसाक्षात्सर्वामयविवर्ज्जितः ।
एतद्घृतंमहाश्रेष्ठंभार्गवेणविनिर्मितम् ॥ १०८ ॥
प्रजानाञ्चहितार्थायसर्वव्याधिहरंशुभम् ।
महामार्क्करनामेदंघृतंसर्वापराजितम् ॥ १०९ ॥

इति महामार्क्करघृतम् ।

अर्थ–गायका घी १ एक सेर, देवदारुका रस या क्काथ २ दो सेर, गायका दूध ३ तीन सेर, गोमूत्र ४ चारसेर, तथा कल्कके लिये सोंठ, महामेदा, नीमके पत्ते, सरसों, मैनाशिल, सिन्दूर, स्थलकमल, वापचीके बीज, हलदी दारुहलदी, हरिताल, आमला, बहेडा, हरड़, और पीलाचंदन, प्रत्येक एक एक तोले, यथाविधिसे इस घृतको ताँबेके पात्रमें मृदु अग्नि से शनैः शनैः पकावै, जब चौथा भाग शेष रहै तब उतार लेवै । जल समेत इस घीको अग्निमें गेरे, जो यह घी शब्द न करै तौ जानों कि सिद्ध होगया । इसघीको पीनेसे–अथवा इसके मालिस करनेसे–सर्व प्रकारके रोग, अठारह प्रकारके कोढ़, दाद, श्वित्रकुष्ठ, दुष्टनाडीव्रण, दुष्टकीटि रोग, रक्तस्रावयुक्तकुष्ठरोग, असाध्यकुष्ठ, विसर्परोग, शीर्णांग, सर्वप्रकारके धातुगत कुष्ठ, पतितभृकुटीरोग, शिरोग्रह, घर्घरशब्द, अव्यक्तशब्द, सर्वाङ्ग पीडितरोग, यह सब रोग दूर होजाते हैं । इस घीको पीनेसे, मलनेसे, और निरंतर सात रोजतक बस्तिकर्म्ममें प्रयोग करनेसे सर्वप्रकारके कुष्ठरोग नष्ट होते हैं । इसको दो सप्ताहतक सेवन करनेसे पूर्णचन्द्रमाकी समान मुख होजाताहै, तथा बाल, नख, और डाढ़ी, यह सब उत्पन्न होजाते हैं, तथा सोलह वर्षके पुरुषकी समान छबिवाला होजाताहै, और सर्वप्रकारके रोगोंसे रहित होकर साक्षात् कामदेव की समान होजाता है । यह महाश्रेष्ठ महामार्क्कर नामवाला घृत संसारके उपकारके लिये श्रीमान् भृगुजीने निर्म्माण किया है, सर्व रोग नाशक और उत्तम है ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ १०० ॥ १०१ ॥ १०२ ॥ १०३ ॥ १०४ ॥ ॥ १०५ ॥ १०६ ॥ १०७ ॥ १०८ ॥ १०९ ॥

शतंछिन्नरुहायाश्चजलद्रोणेविपाचयेत् ।
तेनपादावशेषेणतैलप्रस्थंविपाचयेत् ॥ ११० ॥

क्षीरंचतुर्गुणन्तस्यकल्कान्येतानियत्नतः ।
अश्वगन्धाविधारीचकाकोलीहरिचंदनम् ॥ १११ ॥
शतावरीचातिबलाश्वद्रंष्ट्राबृहतीद्वयम् ॥ ।
क्रिमिघ्नंत्रिफलारास्नात्रायमाणाचशारिवा ॥ ११२ ॥
जीवन्तीग्रन्थिकंव्योषंबाकुचीभेकपर्णिका ।
विशालामुद्गपर्णींचमंजिष्ठावन्दनीनिशा ॥ ११३ ॥
शताह्वासप्तपर्णीभिःकार्षिकाणिप्रकल्पयेत् ।
पानाभ्यंजननस्येषुदातव्यन्तुभिषग्वरैः ॥ ११४ ॥
वातरक्तमुदर्दञ्चकुष्ठान्यष्टादशैवतु ।
हनुस्तम्भंप्रमेहञ्चकामलांपाण्डुतांतथा ॥ ११५ ॥
विस्फोटञ्चविषञ्चापिव्रणनाडीभगन्दरम् ।
विचर्चिकांगात्रगण्डूँहन्तिसर्वान्विशेषतः ॥ ११६ ॥
एतत्तैलरसश्चैववलीपलितनाशनः ।
आत्रेयनिर्मितंचैवबलवर्णकरंस्मृतम् ॥ ११७ ॥

इति बृहद्गुडूचा..लम् ।

अर्थ–तिलका तेल २ दो सेर, दूध ८ आठ सेर, काथके लिये गिलोय ६। सवा छह सेर, जल ३२ बत्तीससेर, शेष ८ आठसेर, और कल्कके लिये असगंध, बिदारीकन्द, काकोली, हरिचन्दन, सतावर, गंगेरन, कंघी, गोखुरू, कटेरी, बडी कटेरी, बायविडंग, हरड बहेडा, आमला, रायसन, त्रायमान, अनन्तमूल, जीवन्ती, गठिवन, त्रिकुटा, बापची, मण्डूकपर्णी, इन्द्रायन, मुगवन, मजीठ, काली शारिवा, हलदी, सोया, और लज्जावन्ती ये प्रत्येक २ दो दो तोले, यथाविधिसे इसतेलको सिद्ध करै, इसको पान, अभ्यंजन, और नस्यकर्म्ममें प्रयोग करनेसे वातरक्त, उदर्द, अठारह प्रकारके कोढ़, हनुस्तम्भ, प्रमेह, कामला, पाण्डुरोग, विस्फोट, विषदोष, नाडीव्रण, भगन्दर, विचर्चिका, गात्रकण्डु, और वलीपलित रोगोंको दूर करैहै । बलकारक और वर्णको उत्तम

करैहै । यह तेलोंमें उत्तमतेल श्रीमान् आत्रेय जीने निर्माण किया है ॥ ११० ॥ १११ ॥ ११२ ॥ ११३ ॥ ११४ ॥ ११५ ॥ ११६ ॥ ११७ ॥

सर्षपकरञ्जकोषातकीतैलोनान्यथेङ्गुदीनाञ्च ।
कुष्ठेषुहितानाञ्चतैलंश्रेष्ठञ्चखादिरस्य ॥ ११८ ॥
मंजिष्ठारुग्निशाचक्रमर्दारग्वधपल्लवैः ।
तृणकस्वरसेसिद्धंतैलंकुष्ठहरंकटु ॥ ११९ ॥

इति तृणकतैलम् ।

अर्थ–सरसों, करञ्ज,, कडवी तोरई, हिंगोट और खैरका तेल अथवा कुष्ठको हितकारक किसी अन्य औषधीका तेल २ दो सेर, जल ८ आठ सेर, तथा कल्कके लिये मजीठ, कूठ, हलदी, चकवड, और अमलतास के पत्ते॥आधसेर और चीनाधानोंका स्वरस८आठसेर, सबको विधिपूर्वक मिलाकर तेलको सिद्ध करै,यह तेल कुष्ठरोगको नष्ट करैहै ।११८॥११९।

हरिद्रात्रिफलादारुहयमारकाचित्रकम् ।
सप्तच्छदश्चनिम्बत्वक्करञ्जौवालकंनखी ॥ १२० ॥
कुष्ठमेढ्गजाविजंलांगलीगणिकारिका ।
जातीपत्रञ्चदार्वीत्वक्हरितालंमनःशिला ॥ १२१ ॥
कलिङ्गंतिलपाकंचक्षीरञ्चगुग्गुलुन्तथा ।
गुडत्वक्मरिचंचोचंकुंकुमंग्रन्थिपर्णकम् ॥ १२२ ॥
सर्ज्जपर्णासखदिरविडंगंपिप्पलीवचा ।
घनरेणवमृतायष्टीकेशरंध्यामकंविषम् ॥ १२३ ॥
विश्वकट्फलमंजिष्ठाबोलंतुम्बीफलन्तथा ।
स्नुहीसम्याकयोःपत्रंवागुजीबीजमासिके ॥ १२४ ॥
एलाज्योतिष्मतीमूलंशिरीषोगोमयाद्रसः ।
चन्दनेकुष्ठनिर्गुण्डीविशालामल्लिकाद्वयदम् ॥ १२५ ॥
वासाश्वगन्धेब्राह्मीचश्याह्वश्चम्पककुड्मलम् ।

एतैःकल्कैः पचेत्तैलंतृणकस्वरसद्रवम् ॥ १२६ ॥
सर्वत्वग्रोगहरणंमहातृणकसंज्ञितम् ॥ १२७ ॥

इति महातृणकतैलम् ।

अर्थ-कड़वातेल २ दोसेर, जल ८ आठसेर, चीनाधानोंका स्वरस ८ आठसेर, तथा कल्कके लिये हलदी, हरड़, बहेड़ा, आमला, देवदारु कनेरकीजड, चीतेकीजड, सतवनकी छाल, नीमकीछाल, दोनोंकरञ्ज सुगंधवाला, नखद्रव्य, कूठ, पमाडकेबीज, अरणी, कलिहारी, चमेलीके पत्ते, दारुहलदी, दारुचीनी, हरिताल, मैनशिल, इन्द्रजौ, लालचंदन, आककादूध, गूगल, कालीमिरच, तेजपात, केसर, गठिवन, राल, तुलसी, खैर, वायविडंग, पीपल, वच, नागरमोथा, रेणुका, गिलोय, मुलेठी, नागकेशर, सुगंधतृण, मीठाविष, सोंठ, कायफल, मजीठ, बोल, तौंवी, थूहरकेपत्ते, अमलतासकेपत्र, वापचीकेबीज, बालछड़, इलायची, मालकांगनकी जड, सिरसकीछाल, गोबरकारस, लालचंदन, सफेदचन्दन कूठ, सम्हालू, इन्द्रायण, बेला, वनवेला, अडूसा, असगंध, ब्राह्मी, श्रीवास, और चम्पेकीकली, यह सब औषधि १ एकसेर, सबको मिलाकर यथाविधिसे तेलको सिद्धकरै, इसतेलसे सर्वप्रकारके चर्म्मदोष दूर होते हैं ॥ १२० ॥ १२१ ॥१२२॥१२३॥१२४॥१२५॥१२६॥१२७॥

सप्तपर्णकरंजार्कमालतीकरवीरकम् ।
मूलंस्नुहीशिरीषाभ्यांचित्रकास्फोतयोरपि ॥ १२८ ॥
करंजबीजंत्रिकटुत्रिफलारजनीद्वयम् ।
सिद्धार्थकं विडंगंचप्रपुन्नाडंचसंहरेत् ॥ १२९ ॥
मूत्रपिष्टैःपचेत्तैलमेभिःकुष्ठविनाशनम् ।
अभ्यंगाद्वज्रकंनामनाडीदुष्टव्रणापहम् ॥ १३० ॥
केचित्कुष्ठहरन्तैलमितिकुष्ठविनाशनम् ।
सर्षपकरंजादितैलंपक्तव्यंनतुतिलतैलम् ॥ १३१ ॥

इति वज्रतैलम् ।

अर्थ-कड़वातेल २ दोसेर; गोमूत्र ८ आठसेर, जल ८ आठसेर,

तथा कल्कके लिये सतोनेकी छाल, आककीजड, करंजकीछाल, मालती के पत्र, कनेरकीजड, थूहरकीजड, सिरसकीजड, चीतेकीजड. अपराजिताकीजड, करंजके बीज, सोंठ, मिर्च, पीपल, हरड, बहेडा, आमला, हलदी, दारुहलदी, सफेद सरसों, वायविडंग, और पमाड, यह सब द्रव्य ऽ॥ आधसेर, यथा विधिसे इसतेलको पकाकर मर्दन करने से-सब प्रकारके कोढ़ दुष्टव्रण और नाडीव्रण दूर होते हैं ॥ १२८ ॥ १२९ ॥ १३० ॥ १३१ ॥

मरिचंत्रिवृतादन्तीक्षीरमार्कंशकृद्रसः ।
देवदारुहरिद्रेद्वेमांसीकुष्ठंकुचन्दनम् ॥ १३२ ॥
विशालाकरवीरंचहारितालंमनःशिला ।
चित्रकोलांगलाख्याचविडंगंचक्रमर्दकम् ॥ १३३ ॥
शिरीषःकुटजोनिम्बःसप्तपर्णस्नुहामृता ।
शम्याकोनक्तमालोऽब्दःखदिरंपिप्पलीवचा ॥ १३४ ॥
ज्योतिष्मतीचपलिकाविषस्याद्विपलंभवेत् ।
आढकंकटुतैलस्यगोमूत्रन्तुचतुर्गुणम् ॥ १३५ ॥
मृतपात्रेलोहपात्रेवाशनैर्मृद्वग्निनापचेत् ।
पक्त्वातैलपरंह्येतत्म्रक्षयेत्कोष्ठिकान्व्रणान् ॥१३६ ॥
पामाविचर्चिकादद्रूकण्डूविस्फोटकानिच ।
विलयःपलितच्छायानीलीव्यंगंतथैवच ॥ १३७ ॥
अभ्यंगेनप्रणश्यन्तिसौकुमार्यंञ्चजायते ।
प्रथमेवयसिस्त्रीणांयासांनस्यञ्चदीयते ॥ १३८ ॥
परामपिजरांप्राप्यनस्तनायान्तिनम्रताम् ।
वलीवर्दस्तुरंगोवागजोवावायुपीडितः ।
त्रिभिरभ्यङ्गनैर्गाढंभवेन्मारुतविक्रमः ॥ १३९ ॥

इति बृहन्मारिचाद्यंतैलम् ।

अर्थ-सरसोंका तेल ८ आठसेर, गोमूत्र ३२ बत्तीससेर, जल बत्तीस

३२ सेर, तथा कल्ककेलिये कालीमिरच, निसोतकी जड, दन्तीकीजड, चीता, वायविडंग, शिरस, सतोना, आककादूध, गोवरकारस, देवदारु, हलदी, दारुहलदी, बालछड, कूट, लालचंदन, इन्द्रायणकी जड़, कनेरकी जड़, हरिताल, मैनशिल, कलिहारीकी जड़, कुड़ेकी छाल, नीमकी छाल, थूहरका दूध, गिलोय, अमलतासके पत्र, करंजकीछाल, नागरमोथा खैर, पीपल, वच और मालकांगनी, यह सब औषधि कुटीहुई प्रत्येक चार चार तोले, तथा मीठा विष ८ आठ तोले लेवै। सबको मिलाकर यथाविधिसे तेलको सिद्धकर मर्दन करनेसे कुष्ठ, व्रण, पामा, विचर्चिका, दाद, कण्डू, विस्फोट, वलीपलितरोग, छाया, नीलता और व्यंग (झाँई) यह सब दूरहोजातेहैं, तथा सुकुमारता उत्पन्नहोतीहै। स्त्रियोंको बाल्यावस्थामें इसतेलका नासदेनेसे वृद्धावस्थामें स्त्रियोंके स्तन नहीं नवतेहैं अर्थात् वृद्धावस्थामेंभी स्तन पुष्टरहतेहैं। वायुसे पीड़ितबैल, घोडा और हाथीके इसतेलको तीन दिन मलनेंसे वातविकारसे मुक्त होकर पवनकी समान पराक्रमी होजातेहैं ॥ १३२ ॥ १३३ ॥ १३४ ॥ ॥ १३५ ॥ १३६ ॥ १३७ ॥ १३८ ॥ १३९ ॥

सोमराजीतुलाक्काथेतथादद्रुघ्नकस्यच ।
विपचेत्कार्षिकैरेतैःकटुतैलाढकंभिषक् ॥ १४० ॥
चित्रकंलाङ्गलाख्यञ्चनागरंकुष्ठमेवच ।
हरिद्रानक्तमालश्चहरितालंमनःशिला ॥ १४१ ॥
स्थौणेयंकरवीरञ्चसप्तपर्णार्कगोमयम् ।
खादिरोनिम्बपत्रञ्चमरिचंकासमर्दकम् ॥ १४२ ॥
सुपिष्टंनिक्षिपेत्सर्वंगोमूत्राढकमेवच ।
सिद्धमभ्यंगतोहन्तिकुष्ठान्यष्टादशाद्रुतम् ॥ १४३ ॥
रोगांस्त्वसृग्भवान्सर्वान्कृमिवर्णविवर्णताम् ।
पाण्डुकण्डूविसर्पांश्चशीर्णचर्मादिदार्व्यकृत् ॥ १४४ ॥

बृहत्सोमराजी तैलम्।

अर्थ-कड़वातेल ८ आठसेर, गोमूत्र३२ बत्तीससेर, काथकेलिये बापचीकेबीज सवाछै ६। सेर, जल ३२ बत्तीससेर, शेष ८ आठसेर, चकवड़ ६। सवाछैसेर, जल३२ बत्तीससेर, शेष ८ आठसेर, तथा काथकेलिये

चीतेकीजड़, कलिहारीकीजड, सोंठ, कूठ, हलदी, बडीकरंज, हरिताल, मैनाशिल, गठिवन, कनेरकीजड, सतोनेकीछाल, गोबरकारस, आकका दूध, खैर, नीमकेपत्ते, मिरच और कसौंदी प्रत्येक कुटेहुए दो दो तोले सबको मिलाकर यथाविधिसे तेलको सिद्धकरै। इस तेलको शरीरादिपै मर्दनकरनेसे १८ अठारह प्रकारके कोढ़, रजोदोषजन्य वातरक्तादिरोग कृमि, व्रण और विवर्णता दूरहोतीहै॥ १४०॥ १४१॥ १४२॥॥ १४३॥ १४४॥

नक्तमालंहरिद्रेद्वेअर्कंतगरमेवच ।
करवीरंवचाकुष्ठमास्फोतारक्तचंदनम् ॥ १४५ ॥
मालतीसप्तपर्णश्चमंजिष्ठासिन्धुवारिका
एषामर्द्धपलान्भागान्विषस्यापिपलंभवेत् ॥ १४६ ॥
चतुर्गुणेगवांमूत्रेतैलपात्रेविपाचयेत् ।
श्वित्रविस्फोटकिटिमकीटलूताविचर्चिका ॥ १४७ ॥
कण्डूकच्छूविकारांश्चयेव्रणाविषदूषिताः ।
विषतैलमिदंनाम्नासर्वव्रणविशोधनम् ॥ १४८ ॥

इति विषतैलम्।

अर्थ-कडवातैल ८ आठसेर, जल ८ आठसेर, गोमूत्र ३२ बत्तीससेर तथा कल्कके लिये करंजकी छाल, हलदी, दारुहलदी, आकका दूध, तगर कनेरकी जड, वच, कूठ, सफेदकोयलकीजड, लालचंदन, मालतीके पत्ते सतोनेकी छाल, मजीठ, और सह्मालूके पत्ते यह सब कुटेहुए प्रत्येक २ दो दोतोले, और मीठाविष४ चार तोले, यथाविधिसे इस तेलको सिद्धकरै। इस तेलको शरीरादिसे मलनेसे श्वित्रकुष्ठ, विस्फोट, किटिम, कीट, लूता विचर्चिका, कण्डू, कच्छू, और विषदूषित व्रण, दूरहोजातेहैं। यह विष, तेल-सर्वप्रकारके व्रणोंको शुद्धकरैहै ॥ १४५ ॥ १४६ ॥ १४७ ॥ १४८॥

पुण्डरीकदलंताम्रंश्वेतरक्तंघनंगुरुम् ।
गलगण्डसरागञ्चपुण्डरीकंकफाधिके ॥ १४९ ॥

अर्थ-पुण्डरीक (कमल)के पत्तेकी समान आकृतिवाला, ताँबेकी समान छविवाला, सफेद और लालरंगका, घन और भारी, तथा गल,

गण्डकी समान वर्णवाला पुण्डरीक कुष्ठ होताहै, यह पुण्डरीक कुष्ठ कफकी अधिकतासे होता है ॥ १४९ ॥

तालंताप्यंशिलासूतंशुद्धसैन्धवटंकणम् ।
समांसंचूर्णयेत्खल्वेसूताद्विगुणगंधकम् ॥ १५० ॥
गंधतुल्यंमृतंताम्रंजम्बीरैर्दिनपंचच ।
मर्द्यंषड्भिःपुटेपाच्यंभूधरेसंपुटोदरे ॥ १५१ ॥
पुटेपुटेद्रवैर्मर्द्यंसर्वमेतच्चषट्पलम् ।
द्विपलंमारितंताम्रंलोहभस्मचतुःपलम् ॥ १५२ ॥
जम्बीराम्लेनतत्सर्वंदिनंमर्द्यंपुटेल्लघु ।
त्रिंशदंशंविषंचास्यक्षिप्यंसर्वंविचूर्णयेत् ॥ १५३ ॥
महिषाज्येनसंमिश्र्यनिष्कार्द्धंपुण्डरीकनुत् ।
मध्वाज्यैर्बाकुचीचूर्णंकर्षमात्रंलिहेदनु ॥ १५४ ॥
सर्वान्कुष्ठान्निहन्त्याशुमहातालेश्वरोरसः ॥ १५५ ॥

इति महातालेश्वरोरसः ।

अर्थ-हरिताल, सोनामाखी, मैनशिल, पारा, सैंधानोन और सुहागा, प्रत्येक १ एक भाग, गन्धक २ दो भाग और ताँबेकी भस्म २ दो भाग सबको एकत्र पीसकर जम्भीरी नीबूके रसमें ५ पाँचदिनतक खरलकरै, पश्चात् गोलाबनाकर सम्पुटमें रख भूधरयंत्रमें छै पुटदेवै, और प्रत्येक पुटपर जम्भीरीनीबूके रसमें खरलकरै, पश्चात् भूधरयंत्रमें पकाई हुई औषधि ६ छैपल, ताँबेकी भस्म २ दो पल, और लोहेकी भस्म ४ चारपल, इन तीनोंको जम्भीरी नीबूके रसमें एकदिन खरलकर लघुपुटमें पकावै, फिर इसमें ३० तीस भाग मीठा विष मिलाकर चूर्णकरले, इसको भैंसके घीमें मिलाकर दोमासेभर खानेसे पुण्डरीक कुष्ठ नष्ट होताहै, ऊपरसे बापचीके चूर्णको सहत और घृतमें मिलाकर दो तोलेभर खावै, यह अनुपानहै । यह महातालेश्वर रस-सर्व प्रकारके कुष्ठोंको दूर करैहै ॥ १५० ॥ १५१ ॥ १५२ ॥ १५३ ॥ १५४ ॥ १५५ ॥

अर्कक्षीरंस्नुहीक्षीरंभृङ्गधत्तूरयोर्द्रवम् ।
द्रवंजम्बीरगोमूत्रंप्रत्येकंपलविंशतिम् ॥ १५६
तिलतैलंपलांस्त्रिंशत्सर्वमेकत्रपाचयेत् ।
तैलावशेषमुत्तार्यतत्रचूर्णंविनिक्षिपेत् ॥ १५७ ॥
कांचनीधातकीपुष्पंमंजिष्ठाचशतावरी ।
गंधकंपंचलवणंद्विनिशावत्सनाभकम् ॥ १५८ ॥
प्रतिचार्द्धपलंयोज्यंएकीकृत्यविमर्दयेत् ।
घर्म्मस्थःसर्वकुष्ठानिभानुतैलंनिहन्त्यलम् ॥ १५९ ॥

इति भानुतैलम् ।

अर्थ-तिलकातेल ३० तीसपल, तथा आककादूध, थूहरका दूध, भांगरेका रस, धतूरेका रस, जम्भीरी नीबूका रस और गोमूत्र प्रत्येक २० वीस पल, सबको एकत्र मिलाकर विधिपूर्वक पकावै, जबकेवल तेलही शेष रहै तब उतारलेवै, पश्चात् इस तेलमें सत्यानासी कटेरी, धायकेफूल, मजीठ, सतावर, गंधक, सैंधानोन, कालानोन, विरियासंचरनोन, सांभरनोन समुद्रलवण, हलदी,दारुहलदी,और वत्सनाभ विष, प्रत्येकका दो दो तोले चूर्ण डालकर एकत्र करै, फिर इसको मर्दनकर धूपमें धरदेवै, इस तेलको शरीरादिसे मलनेसे-निश्चय सर्व प्रकारके कुष्ठ नष्ट होतेहैं ॥ १५६ ॥ १५७ ॥ १५८ ॥ १५९ ॥

हिंगूलसम्भवंसूतंगंधकंमृतताम्रकम् ।
सम्यक्शुद्धंतथाकान्तंवंगंचापिशिलाजतुम् ॥ १६० ॥
तुत्थंरसांजनंचैवतालकंशंखमेवच ।
वराटकंचापितुल्यंजैपालीद्विगुणीकृतम् ॥ ६६१ ॥
हवुषांपंचलवणंपंचैवकटुकानिच ।
विडंगंपिप्पलीमूलंप्रियंगूरजमोदकम् ॥ १६२ ॥
द्राक्षारीकुष्ठमेलाचलवङ्गंजीरकद्वयम् ।
शटीदन्तीत्रिवृच्चैवत्रिफलागजपिप्पली ॥ १६३ ॥

सर्वमेकत्रसंचूर्ण्यभावयेत्रिफलाजलैः।
सप्तधाखलुपाषाणेप्रचण्डातपशोषितम्॥ १६४॥
हरीतकीरसेनाथपुनःसंचूर्ण्ययत्नतः।
पंचरक्तीप्रमाणन्तुवटिकांकारयेद्भिषक्॥ १६५॥
एकैकांखादयेत्प्रातःशृङ्गवेररसाप्लुताम्।
हन्तिकुष्ठंतथामेदआममारुतमेवच॥ १६६॥
श्लीपदंगण्डमालाञ्चगलगण्डंभगन्दरम्।
नाडीदुष्टव्रणञ्चैवअन्त्रवृद्धिश्चदारुणाम्॥ १६७॥
अम्लपित्तंरक्तपित्तंपक्तिशूलंहलीमकम्।
वातरक्तंवातकफमुपदंशंसपीनसम्॥ १६८॥
पंचगुल्मांस्तथानाहंप्लीहशोथज्वरानपि।
उदराणितथाकासान्रसोऽयंवाडवानलः॥ १६९॥

इति वाडवानलरसः।

अर्थ-सिंग्रफसे निकालाहुआ पारा, शुद्धगंधक, ताँबेकी भस्म, शुद्धकान्तलोह, शुद्धवंग, शुद्धशिलाजीत, नीलाथोथा, रसौत, हरिताल, शंखकी भस्म, कौडीकी भस्म, हाऊबेर, सेंधानोन, कालानोन, विरियासंचरनोन, समुद्रनोन, सामरनोन, सोंठ, मिरच, पीपल, जवाखार, कूठ, छोटी इलायची, लोंग, फूलप्रियंगू, अजमोद, वायविडंग, पीपरामूल, जीरा, काला जीरा, कचूर, दन्ती, निसोतकीजड हरड, बहेडा आमला और गजपीपल प्रत्येक एकभाग तथा जमालगोटेके बीज २ भागलेवै, सबको एकत्र पीसकर सातबार त्रिफलेके क्राथमें भावना देकर धूपमें खरलकरै, फिर इसी प्रकार हरडके क्राथमें भावना देकर पाँच पाँच रत्तीकी गोली बनालेवै, प्रतिदिन, प्रातःकाल एक गोली अदरखके रसमें मिलाकर खावै, इससे-कुष्ठरोग, मेदरोग, आमवात, श्लीपद, गण्डमाला, गलगण्ड, भगन्दर, नाडीव्रण, दुष्टव्रण, दारुण अंत्रवृद्धि, अम्लपित्त, रक्तपित्त, परिणामशूल, हलीमक, वातरक्त, बातकफ, उपदंश, पीनसरोग, पंचगुल्म, आनाह, प्लीहा, सूजन, ज्वर, उदररोग और खांसी दूर होती है। इसको वाड़वानल रस कहते हैं॥ १६०॥ १६१॥ ॥ १६२॥ १६३॥ १६४॥ १६५॥ १६६॥ १६७॥ १६८॥ १६९॥

वृद्धदारकमूलानामाढकंतर्ज्जनीकृतम्।
जलद्रोणेपचेद्धीमानाढकेचावशेषितम्॥ १७० ॥
घृतप्रस्थंपचेत्तेनदत्वामूलंपलाष्टकम्।
सर्पिरेतन्महावीर्यंरसायनमनुत्तमम्॥ १६७१ ॥
वातपित्तकफोत्थश्चद्वन्द्वजंसान्निपातिकम्।
नानावर्णंजयेत्पुंसांश्लीपदंशीघ्रमेवच॥ १७२ ॥

इति वृद्धदारकघृतम्।

अर्थ–गायका घी दोसेर, कल्कके लिये विधारेकी जड ऽ॥ आधसेर जल ८ आठसेर, क्वाथके लिये विधारेकी जड ४ चारसेर, पाकके लिये जल ३२ बत्तीस सेर, शेष ८ आठसेर, यथाविधिसे घृतको सिद्धकरै,यह घृत महावीर्यवान्, उत्तम रसायन, वात पित्त और कफसे उत्पन्न हुआ, द्वन्द्वज, सान्निपातिक और नाना वर्णके श्लीपद रोगोंको दूर करै है ॥ ॥ १७० ॥ १७१ ॥ १७२ ॥

स्फोटंकण्डूंतीव्रदाहंमण्डलंस्निग्धपाण्डुता।
पाणौकच्छूस्फिचौक्लेदंकुष्ठविस्फोटलक्षणम्॥ १७३ ॥

अर्थ–स्फोटक, खुजली, और तीव्रदाह, हो मण्डलाकार चिह्न होवै, चर्म्म स्निग्ध और पाण्डु वर्णहो, हाथमें खुजली और नितम्बोंमें क्लेदहो, उसको विस्फोटक कुष्ठ कहतेहैं ॥ १७३ ॥

मृतस्वर्णाभ्रकंशुण्ठींशुद्धसूतंत्रिभिःसमम्।
अम्लैर्मर्द्यन्तुतद्गोलंपिष्ट्वातुल्यंचगन्धकम्॥ १७४ ॥
कटुतैलयुतंपाच्यंलौहेचमृदुनाग्निना।
द्रवैर्जीर्णैविचूर्ण्याथवह्निमूलकटुत्रिकैः॥ १७५ ॥
त्वग्विडङ्गविषैस्तुल्यैःत्रिगुणंत्रिफलाविषात्।
अजामूत्रेदिनंपिष्ट्वागुञ्जैकांभक्षयेद्वटीम्॥ १७६ ॥
निष्कैकंबाकुचीतैलंपिबेद्विस्फोटकुष्ठजित्।
रसःकनकसंकोचोद्विगुंजंयाजयेत्क्रमात्॥ १७७ ॥

इति कनकसंकोचरसः।

अर्थ-सोनेकी भस्म १ एक भाग,अभ्रककी भस्म १ एक भाग,सोंठ १ एक भाग पारेकी भस्म ३ तीन भाग, सबको एकत्र नीबूके रसमें खरलकर गोला बनालेवै, फिर इसमें छै भाग गंधक मिलाकर पीसलेवै, पश्चात् इसको कड़वे तेलमें मिलाकर लोहेके पात्रमें मन्द मन्द अग्निसे पकावै, जब पकजावै तब चीतेकी जड़, त्रिकुटा, दालचीनी, वायविडंग और विषका चूर्ण प्रत्येक एक भाग और त्रिफलेका चूर्ण प्रत्येक तीन भाग मिलाकर बकरीके मूत्रमें एकदिन खरलकर एक एक रत्ती भरकी गोली बनालेवै, एक गोली प्रतिदिन खाय और ऊपरसे चारमासे वापचीका तेलपीवै तौ विस्फोट कुष्ठ नष्टहोवै। यह कनकसंकोच रस क्रमसे एक रत्तीसे लेकर दो रत्तीतक खाय ॥ १७४ ॥ १७५ ॥ १७६ ॥ १७७ ॥

शुद्धसूतंद्विधागन्धंनिर्गुण्डीबाकुचीरसैः।
दिनैकंमर्दयेत्पाच्यंयामंलवणयंत्रके ॥ १७८ ॥
उद्धृत्यचूर्णयेत्तुल्यैस्त्रिफलाबाकुचीफलैः।
तुल्यांशंभृंगचूर्णञ्चसर्वमेकत्रपाचयेत् ॥ १७९ ॥
पलाशखदिरक्काथंगोमूत्रैर्लोहभाजने।
दिनैकान्तेवटींकुर्यान्निष्कैकंभक्षयेत्सदा ॥ १८० ॥
कुष्ठंविस्फोटकंहन्तिनाम्नाकुष्ठान्तकोरसः।
मर्दनंभानुतैलेनआतपेकारयेत्सदा ॥ १८१ ॥

इति कुष्ठान्तकोरसः।

अर्थ-शुद्धपारा १ एक भाग.शुद्धगंधक२ दोभाग,इनको एकत्र सम्हालू और वापचीके रसमें एकदिन खरलकर एक प्रहरतक लवणयंत्रमें पकावै, स्वांगशीतल होनेपर निकालकर चूर्णकर बराबर का त्रिफला वापचीकेबीज और दालचीनीका चूर्ण मिलाकर पालाश और खैरके क्वाथ और गोमूत्रमें एकदिनतक पकावै परन्तु लोहेके बासनमें पकावै, पश्चात् चार चार मासेकी गोली बनालेवै, प्रतिदिन एक गोली खाय तौ निश्चय विस्फोटक कुष्ठ नष्ट होजाय। विस्फोटक कुष्ठपै भानु तेलको धूपमें सदैव मर्दन करै ॥ १७८ ॥ १७९ ॥ १८० ॥ १८१ ॥

पारदंगंधकंताम्रंशिलाजतुशिलामृता।

मेघनादाश्वगंधाख्यंतुल्यंक्षौद्रेविमर्दयेत् ॥
उद्धृतंलेपयेन्मासाद्गजचर्म्मविनश्यति ॥ १८२ ॥

अर्थ-पारा, गन्धक, ताँबा, शिलाजीत, मैनाशिल, गिलोय, चौलाईकी जड और असगंध, इन सब औषधियोंको समानभागले उत्तम रीतिसे चूर्णकर सहतमें मिलाके खरलकर एकमही नेतक शरीरपै लेप करनेसे गजचर्म्म कुष्ठ नष्ट होताहै ॥ १८२ ॥

लोहभस्मामिषंवह्निकटुकात्रिकटुत्रयम् ।
तुल्यांशंचूर्णितंभाव्यंक्काथेनानेनतद्दिनम् ॥ १८३ ॥
पथ्यानिम्बविडंगानिखदिरंवासकामृता ।
जलैरष्टावशेषन्तुकषायंभावनेहितम् ॥ १८४ ॥
मासमात्रंलिहेत्क्षौद्रैःकाकणंहन्तितद्वटी ।
इन्द्रवारुणिकामूलंवागुचीत्रिफलाग्निभिः ॥ १८५ ॥
निम्बस्यवह्निशुण्ठीश्चमरिचंचूर्णयेत्समम् ।
गोमूत्रैःपाययेत्कर्षमनुपानेनभक्षयेत् ॥ १८६ ॥

इति काकणघ्नवटी ।

अर्थ-लोहेकीभस्म, विष, चीता, कुटकी सोंठ, मिरच और पीपल, इन सबको समानभाग लेकर हरड, नीमकीछाल वायविडंग, खैर, अडूसा और गिलोय इनको अष्टावशेष क्काथमें भावनादेकर एक एक मासेभरकी गोली बना सहतके साथ खानेसे काकण कुष्ठ नष्ट होताहै। इसके ऊपर इन्द्रायणकीजड़, बापचीकेबीज, हरड़, बहेड़ा, आमला, चीतेकीजड़, नीमकीछाल, भिलावेकेबीज, सोंठ और कालीमिरच इन सब औषधियोंको समानभागले चूर्णकर २ दो तोलेभर गोमूत्रके साथ पानकरै ॥ १८३ ॥ १८४ ॥ १८५ ॥ १८६ ॥

वज्रीक्षीरंरविक्षीरंधुस्तूरंचित्रकद्रवम् ।
सर्वांशंतिलतैलंचगोमूत्रेणसमंपचेत् ॥ १८७ ॥
तत्तैलंपाचयेद्यत्नाद्द्रव्याण्येतान्यतःपचेत् ।

गन्धकाग्निशिलातालंविडंगातिविषाविषम् ॥ १८८ ॥
तिक्ताकोषातकीकुष्ठंवचामांसीकटुत्रयम् ।
हरिद्रादारुयष्ट्याह्वसर्जक्षारञ्जजीरकम् ॥ १८९ ॥
कर्षांशंदेवकाष्ठञ्चचूर्णन्तैलेविमिश्रयेत् ।
वज्रतैलमिदंख्यातंमर्दनात्सर्वकुष्ठजित् ॥ १९० ॥

इति वज्रतैलम् ।

अर्थ-थूहरकादूध, आककादूध, धतूरेकारस, और चीतेकी जड़कारस प्रत्येक १ एकसेर, तिलकातेल ४ चारसेर, और गोमूत्र ४ चारसेर, इनसबद्रव्योंको एकत्रपकावै, जब केवल तैल शेषरहै तव उतारलेवै, पश्चात् इस तेलमें गंधक, चीतेकीजड़, मैनशिल, हरिताल, वायविडंग, अतीस, विष, चिरायता, कडवी तोरई, कूट बच वालछड़, त्रिकुटा हलदी, दारुहलदी सज्जी, जीरा और देवदारु प्रत्येकका चूर्ण २ दोतोले मिलादेवै, तौ वज्रतेल सिद्धहो, इसतेलको मर्दनकरनेसे-सर्वप्रकारके कुष्ठ नष्ट होतेहैं ॥ १८७ ॥ १८८ ॥ १८९ ॥ १९० ॥

तार्क्ष्यंगन्धंशुद्धसूतंशिलाजत्वम्लवेतसम् ।
मृतताम्राभ्रकंतुल्यंमध्वाज्यगुडमिश्रितम् ॥ १९१ ॥
मासैकंजिह्मगंहन्तिसूर्यकान्तोमहारसः ।
मुण्डीपंचाङ्गचूर्णञ्चवाकुचीतुल्यचूर्णकम् ।
मध्वाज्यसंयुतंकर्षंलेहयेदनुपानकम् ॥ १९२ ॥

इति सूर्यकान्तरसः ।

अर्थ-सोनामाखी, गंधक, पारा, शिलाजीत, अमलवेंत, ताँबा और अभ्रक, इन सबको समानभागले सहत, घी और गुड़में मिलाकर एकमासेभर खायतौ, यह सूर्यकान्तनामवाला रस-जिह्मग कुष्ठको दूर करैहै, ऊपरसे गोरखमुण्डीके पत्ते, मूल, पुष्पफल और छालका चूर्ण और वापचीका चूर्ण सहत या घृतमें मिलाकर दोतोलेभर खावै, यह अनुपानहै ॥ ११९ ॥ १९२ ॥

भस्मसूतसमोगन्धोमृतायस्ताम्रगुग्गुलुः ।

त्रिफलाविषमुष्टिश्चचित्रकंचशिलाजतु ॥ १९३ ॥
इत्येवंचूर्णितंकुर्यात्प्रत्येकंनिष्कषोडश ।
चतुःषष्टिकरंजस्यबीजचूर्णंप्रकल्पयेत् ॥ १९४ ॥
चतुःषष्टिवटीचक्रेमध्वाज्याभ्यांविलोडयेत् ।
स्निग्धभाण्डगतंखादेद्द्विनिष्कंगलितंचयत् ॥ १९५ ॥
रसःकुष्ठकुठारोऽयंगलत्कुष्ठनिकृन्तनम् ।
पथ्यंत्रिमधुरैर्देयंदत्तभोजनलेपनम् ॥ १९६ ॥
पंचांगतण्डुलीमूलंमधुपुष्पाचधान्यकम् ।
सितयाभक्षयेत्कर्षमतितापप्रशान्तये ॥ १९७ ॥
लिह्यान्नागबलामूलंमध्वाज्यैर्वातितापनुत् ॥ १९८ ॥

इति कुष्ठकुठाररसः ।

अर्थ-रससिन्दूर, गन्धक, लोहा, ताँबा, गूगल, हरड़, बहेड़ा, आमला, कलिहारीकिजड़, चीतेकीजड़, और शिलाजीत प्रत्येक आठ तोले ले बारीक चूर्ण करै, पश्चात् इस चूर्ण में ३२ बत्तीस तोले करंजके बीजों का चूर्ण मिलाकर उत्तम प्रकार से सहत और घृतकेसाथ खरलकर ६४ चौंसठ वटी बनालेवै, उन गोलियोंको एक उत्तम चिकने बासनमें भरके रख देवै, इस औषधिको चार मासे भर खाने से-गलित कुष्ठ नष्ट होता है, इसके ऊपरसे पंचांगयुक्त चौलाईकिजड, दन्तीकी जड, और धनियेके चूर्णमें बूरा मिलाकर २ दोतोलेभर अथवा गंगेरनकी जडका चूर्ण २ दोतोलेभर सहत और घृतके साथ सेवन करनेसे-कुष्ठरोगीकी रोग जनित अत्यन्तज्वाला निवारण होतीहै । इससे रोगीको घृत, बूरा और सहत सेवन करना और लेप करना पथ्यहैं ॥ १९३ ॥ १९४ ॥ ॥ १९५ ॥ १९६ ॥ १९७ ॥ १९८ ॥

भस्मसूतार्कलोहानांकृष्णागंधकटंकणम् ।
कुष्ठतुल्यकतुल्यांशंमर्द्यंधुस्तूरजैर्द्रवैः ॥ १९९ ॥
दिनैकंतद्वटींकुर्यान्माषमात्रञ्चभक्षयेत् ।
रसोलंकेश्वरोनाम्नाप्रसूतमण्डलप्रणुत् ॥ २०० ॥

गन्धकंत्रिफलाचूर्णंनिर्विषींगुग्गुलुंसमम् ।
लिहेदेरण्डतैलेनकर्षैकमनुपानकम् ॥ २०१ ॥

इति लंकेश्वररसः ।

अर्थ-रससिन्दूर, ताँबा, लोहा, पीपल, गन्धक, सुहागा और कूठ, इन सब औषधियोंको समानभागलेकर धतूरेके रसमें एकदिनखरलकर एक एक मासेकी गोली बनालेवै, प्रतिदिन एक गोली खावै तौ यह लंकेश्वरनामक रस मण्डल कुष्ठको नष्टकरैहै । इसके पश्चात् गन्धक, त्रिफला, निर्विषीतृण, और गूगलका चूर्ण करके अण्डीके तेलके साथ पानकरै ॥ ॥ १९९ ॥ २०० ॥ २०१ ॥

शुद्धसूतंविषंगन्धंतुल्यंताप्यंशिलाजतु ।
शुद्धतीक्ष्णंमृतंलौहंसर्वंमर्द्यंदिनत्रयम् ॥ २०२ ॥
काकमाचीदेवदाल्योःकर्कोटैश्चद्रवैर्दृढम् ।
मर्दयेद्भूधरेपच्यात्रिदिनन्तुतुषाग्निना ॥ २०३ ॥
निष्कार्द्धंलेहयेत्क्षौद्रैःरसःकुष्ठनिकृन्तनः ।
भल्लातबाकुचीपथ्याविडंगंचित्रकंतथा ॥ २०४ ॥
जीरकंबदरीमूलंकटुतैलेङ्गुदेनतु ।
भक्षयेदनुपानोऽयंहन्तिकुष्ठंविचर्चिकाम् ॥ २०५ ॥

इति कुष्ठान्तकोरसः ।

अर्थ-पारा, विष, गन्धक, सोनामाखी, शिलाजीत, तीक्ष्णलोह और काललोह, इन सब औषधियोंको समानले उत्तमप्रकार से चूर्णकर मकोयके रसमें एकदिन, देवदालीके रसमें एकदिन और ककोडेके रसमें एकदिन खरलकर भुसकी अग्निसे तीनदिन तक भूधरयंत्रमें पकावै, स्वांग शीतल होनेपर चूर्णकरले, इसको दोमासेभर सहतके साथ चाटै तौ कुष्ठरोग दूरहोवै । इस औषधिके सेवनके पश्चात् भिलावा, वापचीकेबीज, हरड, वायविडंग, चीतेकीजड, जीरा और बेरकी जड़ यह सब समान भागले चूर्णकर कडवेतेल अथवा हिंगोटकेतेलके साथ पानकरै, यह अनुपानहै । इससे निश्चय विचर्चिका कुष्ठ नष्ट होताहै॥२०२॥२०३॥ ॥ २०४ ॥ २०५ ॥

वालकंमाक्षिकंलोहंनागकेशरपत्रकम् ।

चंदनश्चमृणालानिभार्ङ्गींचतुर्गुणानिच ॥ २०६ ॥
घृतंकुष्ठेविलेपोऽयंअतिदाहहरः परः।

इति लेपः।

अर्थ-सुगन्धवाला, सोनामाखी, लोहेकीभस्म, नागकेशर, तेजपात, लालचंदन और खस, प्रत्येक एक २ भाग, और सबसे चौगुनी भारंगी, सबको एकत्र घृतके साथ पीसकर लेप करनेसे कुष्ठजन्य शरीरकी दाह दूर होतीहै ॥ २०६ ॥

रसंटंकणगंधार्कक्षीरंस्नुक्पयसापिच ॥ २०७ ॥
पिप्पलीचंदनंकुष्ठघृततुल्येनपाचयेत्।
लेपोऽयंमातुलुंगाम्लैश्चर्म्मकुष्ठकुलान्तकः ॥ २०८ ॥

इति लेपः।

अर्थ-पारा, सुहागा, गंधक, आकका दूध, थूहरका दूध, पीपल, लालचंदन, और कूठ, इन सब औषधियोंको समानभागले घृतमें पकाकर बिजौरे नींबूके रसमें मिलाकर लेपकरनेसे चर्म्मगत सम्पूर्ण कुष्ठ नष्टहोतेहैं ॥ २०७ ॥ २०८ ॥

कूष्माण्डचक्रमर्दाभ्यांबीजंपथ्याचसैन्धवम्।
क्षीरैस्तक्रैःकांजिकैर्वापिष्ट्वालेपंचदद्रुजित् ॥ २०९ ॥

इति लेपः।

अर्थ-पेठेकेबीज, चकवडकेबीज, हरड और सैन्धव लवण, इनको एकत्र दूध और तक्र अथवा काँजीके साथ पीसकर लेपकरनेसे-दाद दूरहोतेहैं ॥ २०९ ॥

पारदंटंकणंगंधंमूषलीचार्द्रकद्रवैः।
दिनंमर्द्यंव्रणेलेपःसिध्महन्तिमहद्भुतम् ॥ २१० ॥

इति लेपः।

अर्थ-पारा, सुहागा और गंधक, इनको एकत्र मुसली और अदरखके रसमें एकदिन खरलकर लेपकरनेसे सिध्म कुष्ठ नष्ट होताहै। २१० ॥

अभ्रकंमृतलौहश्चशुद्धसूतंशिलाजतु।
ताप्यंबाकुचिबीजानित्रिफलामुसलीसमम् ॥ २११ ॥

सव्योषंचूर्णितंलेह्यंमधुनानिष्कमात्रकम् ।
मासकंनाशयेत्सिध्मवेतालोऽयंमहारसः ॥ २१२ ॥

इति वेतालरसः ।

अर्थ–अभ्रक, लोहेकी भस्म, पारा, शिलाजीत, सोनामाखी, बापचीकेबीज, हरड़, बहेड़ा, आमला, मुसली, सोंठ, मिरच और पीपल, इन सब औषधियोंको समानभागले सहतमें मिलाकर चार चार मासेकी गोली बनालेवै, एकमासे प्रतिदिन सेवनकरनेसे सिध्मकुष्ठ नष्ट होताहै॥ २११ ॥ २१२ ॥

सूताभ्रंशुण्ठिभस्मानिगन्धंतालंशिलाजतु ।
अम्लवेतसतुल्यांशंचाम्लेनमर्दयेत्ततः ॥ २१३ ॥
मध्वाज्याभ्यांवटींकुर्याद्द्विगुंजंभक्षयेत्सदा ।
कुष्ठंहन्तिनसन्देहोरसोलंकाधिपेश्वरः ॥ २१४ ॥
त्रिफलानिम्बमंजिष्ठावचापटोलमूलकम् ।
कटुकीरजनीतुल्यंक्वाथोऽयमनुपानतः ॥ २१५ ॥

इति लंकाधिपेश्वरोरसः ।

अर्थ–पारेकी भस्म, अभ्रककी भस्म, सोंठ, गन्धक, हरिताल, शिलाजीत, अमलवेंत, इन सब औषधियोंको समानभागलेकर चूर्णकर काँजीके साथ खरलकर २ दोरत्ती सहत और घृतमें मिलाकर सेवन करनेसे कुष्ठरोग नष्ट होताहै। इस औषधिके सेवन करनेके पश्चात् त्रिफला, नीमकीछाल, मजीठ, वच, पटोल, मूली, कुटकी और हलदीका क्वाथ पानकरै ॥ २१३ ॥ २१४ ॥ २१५ ॥

चक्रमर्दस्यबीजानिकणाश्वेताश्चसर्षपाः ।
कुष्ठंद्वेरजनीतुल्यंतक्रैःपिष्ट्वाप्रलेपयेत् ॥ २१६ ॥
सर्वकुष्ठहरोलेपोनात्रकार्याविचारणा ।

अर्थ–पमाड़केबीज, पीपल, सफेदसरसों, कूठ, हलदी, और दारुहलदी, इन सब औषधियोंको समानभाग ले तक्रमें पीसकर लेप करनेसे सर्व प्रकारके कुष्ठरोग नष्टहोतेहैं ॥ २१६ ॥

तालकंमरिचंकुष्ठंकाचटङ्कनिशावचा ।
निर्गुण्डीनिम्बकरलाबीजंवादलमेववा ॥ २१७ ॥
प्रत्येकंतोलकंचूर्णंचूर्णतुल्यन्तुगुग्गुलुः ।
बाकुच्याःपलिकंग्राह्यंपलंसूतंचगंधकम् ॥ २१८ ॥
लोहस्यद्विपलंचात्रत्रिफलाजलशोधितम् ।
षण्मासावटिकाकार्यागोमूत्रेणनिषेविता ॥ २१९ ॥
कुष्ठशैलेन्द्रवज्राख्योलेहोऽयममृतोपमः ।
अष्टादशानिकुष्ठानिकण्डूदद्रुसकुष्ठकम् ॥ २२० ॥
विद्रधिंगण्डमालाञ्चगर्दभामुपगर्दभाम् ।
प्लीहगुल्मोदरान्हन्तिकासंश्वासंहलीमकम् ॥ २२१ ॥
कामलापाण्डुरोगांश्चश्वयथुंश्चामवातजम् ।
चन्द्रनाथमुखाच्छ्रुत्वागहनानन्दभाषितः ॥ २२२ ॥
एषलोहरसोदिव्योमेधायुर्बलदायकः ।
कालदेशवयोवह्नीन्दृष्ट्वावात्रुटिवर्द्धनम् ॥ २२३ ॥
अनुपानंप्रकर्त्तव्यंवातिकेविश्वकुण्डली ।
पटोलमुद्गैःपित्तेचपर्पटेनापिवारिणा ॥ २२४ ॥
अंकोठदलनीरेणचक्रमर्द्दरसैःकफे ।
केवलेवातिकेपैत्तेगोमूत्रंपरिवर्ज्जयेत् ॥ २२५ ॥
मूत्रस्थानेप्रकर्त्तव्यंछागीदुग्धंनसंशयः ॥ २२६ ॥

इति कुष्ठशैलेन्द्र रसः ।

अर्थ–हरिताल, मरिच, कूठ, कांच, सुहागा, हलदी, वच, सह्मालूके पत्ते, नीमकीछाल, करेलेके बीज या पत्ते, प्रत्येक एकएक तोले लेकर सबका चूर्ण करले और सबचूर्णकी बराबर बापचीकेबीज ४ चारतोले, पारा चार ४ तोले, गंधक ४ चारतोले और त्रिफलेके क्वाथसे शुद्ध किया हुआ लोहेका चूर्ण ८ आठतोले, इन सब द्रव्योंको एकत्र गोमूत्रमें खरलकर छैछै मासेकी गोली बनालेवै, इसको कुष्ठशैलेन्द्रवज्राख्यरस

कहतेहैं। यह रस-अमृतके समानहै, तथा अठारह प्रकारके कोढ़ कण्डू, दद्दु, कुष्ठ, विद्रधि, गण्डमाला, गर्दभा, उपगर्दभा, प्लीहा, गुल्म, उदररोग, खाँसी, श्वास, हलीमक, कामला, पाण्डुरोग और आमवातसे उत्पन्न हुई सूजनको दूरकरैहै। यह श्रीगुरुचन्द्रनाथके मुखसे सुनकर महाराज गहनानन्दने भाषणकियाहै। यह लोहरस दिव्य, मेधा, आयु और बलको बढ़ानेवालाहै। इसको समय, देश, उमर, और अग्निको देखकर कमबढ़तीकरै। अनुपान-वाताधिक्यमें सोंठ और गिलोय, पित्ताधिक्यमें पटोल, पूग और पित्तपापडेका क्वाथ, तथा कफाधिक्यमें अंकोलके पत्तोंका रस और चकवड़के पत्तोंका रस और केवल वात और पित्तरोगमें गोमूत्रको छोड़कर बकरीके दूधकेसाथ गोलियें बनावै ॥ ॥ २१७॥ २१८॥२१९॥२२०॥२२१॥२२२॥२२३॥२२४॥२२५॥२२६॥

करंजैडगजानिम्बंगुडावाकुचिकुष्ठके।
तालकंमरिचंमुस्तंगोमूत्रकर्दमैःसह ॥ २२७ ॥
सर्वकुष्ठहरोलेपोगहनानन्दनिर्म्मितः।
दहेद्दावानलेयद्वन्निदाघतृणसंकुलम् ॥ २२८ ॥
पूर्णचन्द्रकनामायंकुष्ठनाशोभवेत्तथा।
यथाचन्द्रोनिशांमन्दांतमसःपरिवर्जयेत् ॥ २२९ ॥

इति पूर्णचन्द्रलेपः।

अर्थ-करंज, चकवड़, नीम, थूहरकादूध, बापचीकेबीज, कूठ, हरिताल, कालीमिरच और नागरमोथा, इन सबको समानभाग लेकर गोमूत्र और कर्दमके साथ पीसकर लेपकरनेसे कुष्ठरोग नष्ट होताहै ॥ ॥ २२७ ॥ २२८ ॥ २२९ ॥

शतमूलीरसश्चैवकृष्णामूल्यामृताकुची।
चक्रंचैडगजावज्रीसमभागेनलेपयेत् ॥ २३० ॥
वातरक्तंनिहन्त्याशुकुष्ठमन्यंविनाशनम्।
सप्तामृतोभवेल्लेपोगदापन्नोनिशाकरः ॥
श्रीमद्गहननाथेनानिर्मितोविश्वसम्पादे ॥ २३१ ॥

इति सप्तामृतालेपः।

अर्थ-सतावरकारस, श्यामालता, गिलोय, वाकुची, अमलतासके पत्र, चकवड़, और थूहरकादूध, यह सब समानभागले पीसकर लेपकरनेसे-वातरक्त और सर्वप्रकारके कुष्ठ नष्ट होतेहैं ॥ २३० ॥ २३१ ॥

राजवृक्षदलस्याष्टपलंशुद्धंसमुद्धरेत् ।
तथासप्तच्छदस्याष्टपलंशुद्धंविचक्षणः ॥ २३२ ॥
एतत्क्काथेपचेत्तैलंपलान्पंचभिषग्वरः ।
स्नुक्पयोगंधकंपथ्याकरलाबीजमेवच ॥ २३३ ॥
तोलैकमानंतैलेषुदद्यात्पाचनकालतः ।
तैलमूर्च्छनहेत्वर्थंकृष्णवल्लीविषाकुची ॥ २३४ ॥
एषांतोलाचतुर्दद्यात्तैलपाकार्थसिद्धये ।
श्रीमद्गहननाथेनमित्रतैलविनिर्मितम् ।
हन्तिवज्रंतथाकुष्ठंकृमिदोषंविशेषतः ॥ २३५ ॥

इति मित्रतैलम् ।

अर्थ-तेल ५ पांच पल, क्काथके लिये अमलतासके पत्र ऽ॥ आधसेर और सतवनकीछाल ऽ॥ आधसेर, जल ८ आठसेर, शेष २ दोसेर, तथा कल्कके लिये थूहरकादूध, गन्धक, हरड़ और करेलेके बीज प्रत्येक एक एक तोला लेवै, सबको यथाविधिसे मिलाकर तेलको सिद्धकरै, इसतेलको मूर्च्छितकरनेके लिये कालीतुलसी, अतीस और बापची प्रदान करै । यह तेल-कुष्ठ और कृमिदोषको विशेष करकै नष्टकरैहै ॥ २३२ ॥ ॥ २३३ ॥ २३४ ॥ २३५ ॥

धात्र्यक्षपथ्याकृमिशत्रुवह्नि भल्लातकावल्गुजलोहभृंगैः ।
भागाभिवृद्धैस्तिलतैलमिश्रैःसर्वाणिकुष्ठानिनिहन्तिलेहः२३६
जारितपुटितचूर्णंभृंगराजमूलंमिलितचूर्णादनुरूपम् ।
तिलतैलेनसम्मर्द्यलेह्यंक्रमेणवृद्धिस्तदन्तरेअवश्यानिवृणत्वम् ।

इतिधात्र्यादिलेपः ।

अर्थ-आमला १ एकभाग, बहेड़ा २ दोभाग, हरड ३ तीनभाग, वायविडंग ४ चारभाग, चीता ५ पाँचभाग, भिलावा ६ छैभाग, वापचीके

बीज ७ सातभाग, लोहा ८ आठभाग और भांगरेकीजड़ ९ नौभाग, सबको एकत्र चूर्णकरके तिलके तेलमें मिलाकर चाटनेसे-सर्वकुष्ठ रोग नष्टहोताहै ॥ २३६ ॥ २३७ ॥

बृहतीशर्करानागतिलसारसमन्वितः।
लोहंकुष्ठंनिहन्त्याशुसर्वरोगहरोऽपिसः॥
नागोनागकेशरचूर्णं तिलसारोनिस्तुषातिलः॥ २३८॥

इति बृहत्यादिलोहम्।

अर्थ-बृहती, शर्करा, नागकेशर और निस्तुषतिल प्रत्येकका चूर्ण १ एकभाग तथा लोहेका चूर्ण सबको समानले मिलाकर सहत और घृतको साथ चाटनेसे-सर्वप्रकारके कुष्ठरोग नष्टहोतेहैं ॥ २३८ ॥

त्रिफलावाकुचीबीजंभृंगराजकटुत्रिकम्।
गुडूच्यैडगजाबीजंकेशराजसमुस्तकम् ॥ २३९ ॥
धात्रीखादिरसिन्धूत्थंयमानीजीकरद्वयम्।
कान्तक्रामविडंगानिसर्वचूर्णानिकारयेत् ॥ २४० ॥
लोहंसर्वसमंह्येषयोगराजइतिस्मृतः।
सर्वकुष्ठविकारेषुविहितोलोहकोविदैः॥ २४१ ॥

इति योगराजलोहः।

अर्थ-त्रिफला, वापचीके बीज, भांगरा, सोंठ, मिरच, पीपल गिलोय पमाड़केबीज, कुकुरभांगरा, नागरमोथा, आमला, खैर, सैंधानोन, अजवायन, जीरा, कालाजीरा, भद्रमोथा और वायविडंग प्रत्येकका चूर्ण १ एक भाग, तथा सबकी बराबर लोहेका चूर्ण एकत्र मिलाकर सेवन करनेसे-सर्व कुष्ठ रोग नष्ट होते हैं ॥ २३९ ॥ २४० ॥ २४१ ॥

पुष्पकालेतुपुष्पाणिफलकालेफलानिच।
संगृह्यपिचुमर्दस्यत्वग्मूलानिदलानिच ॥ २४२ ॥
द्विरंशानिसमाहृत्यभागिकानिप्रकल्पयेत्।
त्रिफलात्र्यूषणंब्रह्मीश्वदंष्ट्रारुष्कराग्निका ॥ २४३ ॥
विडंगसारवाराहीलोहचूर्णामृताःसमाः।

हरिद्राद्वयावल्गुजव्याधिघाताःसशर्कराः ॥ २४४ ॥
कुष्ठेन्द्रयवपाठाश्चकृत्वाचूर्णंसुसंयुतम् ।
खदिरासननिम्बानांघनक्काथेनभावयेत् ॥ २४५ ॥
सप्तधापंचनिम्बन्तुमार्कवस्वरसेनतु ।
स्निग्धशुद्धतनुर्धीमान्योजयेच्चशुभेदिने ॥ २४६ ॥
मधुनातिक्तहबुषाखदिराशनवारिणा ।
लेह्यमुष्णांबुनावापिकोलवृद्ध्यापलम्भवेत् ॥ २४७ ॥
जीर्णेचभोजनंकार्यंस्निग्धंलघुहितंचयत् ॥ २४८ ॥
विचर्चिकाडुम्बरपुण्डरीककपालदद्रूकिटिमालसादि ।
शतारुविस्फोटविसर्पमालांकफप्रकोपंत्रिविधंकिलासं २४९
भगन्दरश्लीपदवातरक्तंजाड्यान्ध्यनाडीव्रणशीर्षरोगान् ।
सर्वप्रमेहान्प्रदरांश्चसर्वान्दंष्ट्राविषंमूलविषंनिहन्ति ॥२५०॥
स्थूलोदरःसिंहकृशोदरश्चसुश्लिष्टसन्धिर्मधुनोपयोगात् ५१
समोपयोगादपियेदशन्तिसर्पादयोयान्तिविनाशमाशु ।
जीवेच्चिरंव्याधिजराविमुक्तःशुभेरतश्चन्द्रसमानकान्तिः२५२

इति बृहत्पंचनिम्बचूर्णम् ।

अर्थ–नीमकेफूल, नीमकेफल, नीमकीछाल, नीमकीजड़ और नीमकेपत्ते प्रत्येक २ दो भाग लेकर उत्तम प्रकारसे चूर्णकर भांगरेके रसमें सातवार भावना देकर चुर्णकरकै रखदेवै, तथा हरड़, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल, ब्राह्मी, गोखुरु, भिलावा, चीता, विडंग सार, वाराहीकन्द, लोहा, गिलोय, हलदी, दारुहलदी, वापचीकेवीज, अमलतास, कूठ, इन्द्रजौ और पाढ़ प्रत्येकका चूर्ण १ एक भाग लेवै, पश्चात् उस चूर्णको खैर, असनवृक्षकी छाल, और नीमकी छाल, इनके अष्टावशेष गाढ़े क्काथमें सातवार भावना देकर भले प्रकारसे चूर्ण करले फिर इस चूर्णमें पूर्वोक्त भावित पंच निम्बका चूर्ण और शर्करा एक भाग मिलादेवै । इस चूर्णको बुद्धिमानवैद्य रोगीको वमन विरेचनादिसे शुद्ध

कराकर शुभ दिनमें देवै। यह चूर्ण कफपित्तोत्पन्न रोगोंमें सहतके साथ वातपित्तोद्भवरोगोंमें पंच तिक्त घृतकेसाथ, कफोत्पन्न रोगोंमें खैर और असनके क्काथकेसाथ अथवा गरमजलके साथ सेवन करै, प्रथम इस चूर्णको एक तोले खावै पश्चात् क्रम वृद्धिसे चार तोलेतक सेवन करै, जब यह चूर्ण जीर्ण होजावै तव स्निग्ध और हलका भोजन करै। यह चूर्ण–विचर्चिका, उडुम्बर, पुण्डरीक, कपाल, दद्रु, किटिभ, आलस, शतारु, विस्फोट, बिसर्पमाला, कफप्रकोप, तीन प्रकारके किलासकुष्ठ, भगन्दर, श्लीपद, वातरक्त, जाडयान्ध्य, नाड़ीव्रण, शीर्षरोग, सर्वप्रकार के प्रमेह सर्व प्रकारके प्रदर सर्वप्रकारके दंष्ट्र विष, मूलविष, स्थूलोदर, सिंहकृशोदररोग और सुश्लिष्टसन्धिरोगों को सहतके साथ सेवन कराहुआ निश्चय नष्ट करताहै इसचूर्णको सेवन करनेवाले मनुष्यके सर्पादिकाविष नहीं चढ़ता है, तथा साँप काटकर अपने आपही मरजातेहैं। और वह मनुष्य बहुत दिनों तक जीता रहता है और जरा व्याधिसे विमुक्त होजाताहैं; तथा चन्द्रमाके समान कान्तिवाला होजाता है॥२४२॥ ॥२४३॥ २४४ ॥२४५॥२४६॥२४७॥२४८॥२४९॥२५०॥२५१॥२५२॥

हुताशमुखसंशुद्धंपलमेकंरसस्यवै।
पलंलोहस्यताम्रस्यपलंभल्लातकस्यच ॥ २५३ ॥
गन्धकस्यपलंचैकमभ्रकस्यचगुग्गुलोः।
हरीतकीविभीतक्योश्चूर्णंकर्षद्वयंद्वयोः॥ २५४ ॥
अष्टमासाधिकंतत्रधात्र्याःपाणितलानिषट्।
घृतंद्व्यष्टगुणंलोहाद्वात्रिंशात्रिफलाजलम् ॥ २५५ ॥
एवंकृत्वापचेत्ताम्रेशैलेचविधिपूर्वकम्।
पाकमेतस्यजानीयात्पाकज्ञोलोहपाकवित् ॥ २५६ ॥
विबुद्धःप्रातरुत्थायगुरुदेवद्विजार्चकः।
रक्तिकादिक्रमेणैवसूतभ्रामरमर्दितम् ॥ २५७ ॥
लोहेलौहस्यदण्डेनकुर्यादेतद्रसायनम्।
अनुपानंचकुर्वीतनारिकेलोदकंपयः ॥ २५८ ॥

सर्वकुष्ठहरंश्रेष्ठंवलीपलितनाशनम् ।
पाण्डुमेहामवातघ्नंवातरक्तरुजापहम् ॥ २५९ ॥
कृमिशोथाश्मरीशूलदुर्नामवातकोपनुत् ।
क्षयंहन्तिमहाश्वासमत्यर्थंशुक्रवर्द्धनम् ॥ २६० ॥
अग्निसंदीपनंहृद्यंकान्त्यायुर्बलवर्द्धनम् ॥ २६१ ॥
विवर्ज्यशाकाम्लमपिस्त्रियश्च
सेव्योरसोजांगललावकादेः ।
शाल्योदनंषष्ठिकसाज्यमुद्गं
क्षौद्रंशुभक्षीरमिहक्रियायाम् ॥ २६२ ॥
सात्म्यञ्चगुर्वादिबृहत्करञ्ज
शिलाजतुक्षौद्रयुतंपयश्च ।
सर्पिर्युतोभक्षयतोविहंगात्
प्रपूर्यतेदुर्बलदेहधातुः ॥ २६३ ॥
कृष्णस्यपक्षस्यसितेतुपक्षे
त्रिपंचरात्रेणयथाशशांकः ॥ २६४ ॥

इति अमृतांकुरलौहम् ।

अर्थ–अग्निमें पुटपाकसे शुद्धाकियाहुवा पारा १ एकपल, लोहा १ एकपल, तांबा १ एकपल, भिलावा १ एकपल, गन्धक १ एकपल, अभ्रक १ एकपल, गूगल १ एकपल, हरड़ २ दो कर्ष, बहेड़ा २ दो कर्ष, आमला २ दो तोले ८ आठमासे, गायकाघी ८ आठपल, और त्रिफलेका काथ ३२ बत्तीसपललेवै, यथाविधिसे तांबेके पात्रमें अथवा लोहेके पात्रमें पाकको जानने वाला वैद्य लोहपाकके समान पकावै। बुद्धिमान् वैद्य प्रातःकाल उठकर गुरु, देव और ब्राह्मणोंका पूजन करकै लोहेके बासनमें करकै लोहेके दण्डेसे इस रसायनको मर्दनकरै, इसको एकरत्तीके क्रमसे बढ़ाकरखावै । अनुपान–नारियलका जल । यह सर्वप्रकारके कुष्ठोंको नष्टकरैहै, वलीपलित नाशक, पाण्डुरोग, प्रमेह, आम-

वात, वातरक्त, कृमि, सूजन, पथरी, शूल, बवासीर, वातकोप, क्षय, और महाश्वास रोगको दूरकरैहै। शुक्रवर्द्धक, अग्निप्रदीपक, हृदयको हितकारी, कान्ति, आयु और बलको बढ़ावैहै। इसपै शाक, खटाई और स्त्रीप्रसंग त्यागदेवै। जांगल और लावकादि पक्षियोंका मांस, शालिधानोंका भात, साठीधान, घी, मूग, सहत, और दूध सेवन करना हितकारीहै; और स्वभावके माफिक भारी पदार्थ, बृहत्करंज, शिलाजीत, दूधयुक्त सहत, दूधसहितघी सेवनकरै। इससे दुर्बल और धातुक्षीणवाले मनुष्य धातु पूरण होजातेहैं। जिसप्रकार कृष्णपक्षमें तीनदिनतक और शुक्लपक्षमें पाँचदिनतक चन्द्रमा पूर्णरहताहै, इसीप्रकार इसको सेवन करने वाला मनुष्य पूर्णवीर्य होताहै ॥ २५३ ॥ २५४ ॥ २५५ ॥ ॥ २५६ ॥ २५७ ॥ २५८ ॥ २५९॥२६० ॥२६१॥ २६२॥२६३॥२६४॥

त्रिकटुत्रिफलालौहंसमभागंविचूर्णितम्।
सर्वेषामपिचूर्णानामर्द्धंभागंशिलाजतु ॥ २६५ ॥
गुडूचीस्वरसैर्देयाभावनारविरश्मिभिः।
वारत्रयंततःशुष्कंघृतेनसहमर्दयेत् ॥ २६६ ॥
मासमात्रंचमधुनामर्दितंभक्षयेन्नरः।
हन्त्यष्टादशकुष्ठानिवातरक्तंसुदुस्तरम् ॥
जयेदर्शांसिसर्वाणिप्रमेहमुदराणिच ॥ २६७ ॥

इति अमृतार्णवलौहम्।

अर्थ-सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेडा, आमला और लोहा प्रत्येक १ एकभाग, और सबसे आधाभाग शिलाजीत एकत्र मिलाकर चूर्णकरै, पश्चात् इसचूर्णको गिलोयके रसकी धूपमें तीनवार भावनादेकर सुखादेवै, फिर इसमें घी मिलाकर घीके साथ खरलकर एकमासे सहतमें मिलाकर खावै। यह-अठारह प्रकारके कोढ़, दुस्तरवातरक्त सर्वप्रकारकी बवासीर, प्रमेह और उदररोगोंको दूर करैहै ॥ २६५ ॥ ॥ २६६ ॥ २६७ ॥

यावशूकसुरदारुसैन्धवंमुस्तकत्रुटिवचायमानिका।
व्योषदीप्यकनिशाफलत्रिकं जीरकद्वयविडङ्गचित्रकम् २६८

कार्षिकंसुमसृणंप्रयोजितंसंयुतंपुरपलैश्चपञ्चभिः ।
पेषितंदृषदिशर्करासमंतप्तसर्पिषिविनिक्षिपेत्ततः ॥२६९॥
वातरक्तमुदरंभगन्दरप्लीहयक्ष्माविषमज्वरंगरम् ।
श्वित्रकुष्ठमखिलंव्रणामयंविद्रधिभ्रमगदांश्चदारुणान् २७०॥
गृध्रसीश्चगुजाग्निमन्दतांहन्तिकुष्ठजनितानियानिच ।
वज्रमिन्द्रकरविच्युतंयथाहन्तिशैलकुलमुद्धतंद्रुतम्॥२७१॥
अनुपानपरीहारवर्ज्जितंसर्वकालसुखदांनिरत्ययम् ।
सेव्यमानमिदमश्विनिर्म्मितंगुग्गुलोर्हिवटकंरसायनम् २७२

इति समशर्करागुग्गुलुः ।

अर्थ-जवाखार, देवदारु, सैंधानोन, नागरमोथा, छोटीइलायची, वच, अजवायन, सोंठ, मिरच, पीपल, अजमोद, हलदी, दारुहलदी, हरड़, बहेड़ा, आमला, जीरा, कालाजीरा, वायविडंग और चीता, प्रत्येक दो दोतोले, गूगल ५ पांचपल, बूरापांच ५ पल, इन सबको एकत्र पीसकै तप्तघृतमें डालकर पकावै, इसको सेवनकरनेसे वातरक्त, उदररोग, भगन्दर, प्लीहा, राजयक्ष्मा, विषमज्वर, विषविकार, श्वित्रकुष्ठ, व्रणरोग, विद्रधि, भ्रमरोग, गृध्रसीवात, गुदजरोग. मंदाग्नि और कुष्ठसे उत्पन्न हुए रोग दूर होजातेहैं। जैसे इन्द्रके हाथसे छूटाहुआ वज्र पर्वतोंको तोड़ता है, इसीप्रकार यह रोगोंके समूहको नष्टकरैहै । इसपै अनुपान तथा परहेज करनेकी कोई आवश्यकता नहींहै और निरन्तर सेवन किया हुआ सबकालमें सुखदेनेवालाहै । यह गुग्गुलुरसायन-श्रीमान् अश्विनीकुमारोंने रचीहै ॥ २६८ ॥ २६९ ॥ २७० ॥ २७१ ॥ २७२ ॥

श्वित्रिणोभूतदोषस्यहृतरक्तस्यचासकृत् ।
खदिराम्बुयवान्नश्चभोजनेहितमिष्यते ॥ २७३ ॥
वायस्येडगजाकुष्ठकृष्णाभिर्गुडिकाकृता ।
बस्तमूत्रेणसंपिष्टाप्रलेपाच्छ्वित्रनाशिनी ॥ २७४ ॥

वायसीकाकमाची ।

स्नुहार्कजातीपूतीकसुवर्णाहलिपल्लवैः ।

गोमूत्रपिष्टैर्लेपोऽयंश्वित्राशोंव्रणकुष्ठहा ॥ २७५ ॥
कुडवोवाग्गुजीबीजाहरितालपलान्विताः।
गवांमूत्रेणसंपिष्यलेपःश्वित्रहरःपरः ॥ २७६ ॥
धात्रीखदिरयोःक्काथंपिवावल्गुजजंयुतम्।
कुन्देन्दुधवलंश्वित्रंसद्योहन्तिनसंशयः ॥ २७७ ॥

अर्थ-श्वित्रकुष्ठरोगीको वारंवार रक्तस्राव कराकर खैरका क्काथ और यवान्न भोजन करावै। मकोय, पमारकेबीज, कूठ और पीपल, इन सबका चूर्ण कर गोलीबना बकरीकेमूत्रमें पीसकर लेप करनेसे श्वित्र-रोग दूरहोताहै। थूहरके पत्र, आककेपत्र, चमेलीकेपत्र, करंजकेपत्र और अमलतासकेपत्र, एकत्र गोमूत्रके साथ पीसकर लेपकरनेसे श्वित्रकुष्ठ नष्टहोताहै ॥ २७३ ॥ २७४ ॥ २७५ ॥ २७६ ॥ २७७ ॥

आरग्वधंधवंकुष्ठंहरितालंमनःशिला।
द्वेरजन्यौपचेत्तैलंचतुर्गुणजलेभिषक् ॥
एतेनाभ्यज्यश्वित्रीचक्षिप्रंश्वित्रंविनश्यति ॥ २७८ ॥

इतिआरग्वधाद्यंतैलम्।

इति कुष्ठरोगाऽध्यायः।

अर्थ-तिलकातेल २ दोसेर, जल ८ आठसेर, तथा कल्कके लिये अमलतासकेपत्र धवबृक्षकीछाल, हरिताल, मैनशिल, हलदी और दारुहलदी ऽ॥ आधसेर, यथाविधिसे तैलको सिद्धकर शरीरादिसे मर्द-नकरनेसे श्वित्रकुष्ठ नष्टहोताहै ॥ २७८ ॥

इति कुष्ठरोगाधिकारःसमाप्तः।

अथ शीतपित्तादिचिकित्सामाह।

अभ्यंगंकटुतैलेनसेकःष्णोष्णाम्बुभिस्ततः।
उदर्द्धेवमनंकार्यंपटोलारिष्टवारिणा ॥ १ ॥
त्रिफलापुरकृष्णाभिर्विरेकश्चात्रशस्यते।
सिद्धार्थरजनीकल्कैःप्रपुन्नाडतिलैःसह ॥ २ ॥
कटुतैलेनसंमिश्र्यमेतदुद्वर्तनंहितम्।

दूर्वानिशायुतोलेपःकच्छुपामाविनाशनः ॥ ३ ॥
कृमिदद्रुहरश्चैवशीतपित्तापहःस्मृतः ।
निशारग्वधसिन्धूत्थविडंगैडगजेष्टका ॥ ४ ॥
दूर्वापर्णीसकाकघ्नैरुदर्द्धेलेपनंहितम् ।
कासघ्नःकासमर्दकः ।
शुष्कमूलकस्वरसेनकौलत्थेनरसेनवा ॥ ५ ॥
भोजनंसर्वदाकार्यंलावतित्तिरजेनवा ।
पटोलत्रिफलानिम्बगुडूचीमुस्तचंदनैः ॥ ६ ॥
समूर्वारोहिणापाठारजनीसदुरालभा ।
काषयंपाययेदेतत्पित्तश्लेष्मज्वरापहः ॥ ७ ॥
कण्डूत्वग्दोषविस्फोटाविषविसर्पनाशकः ।
अग्निमन्थभवंमूलंपिष्टंपीतंचसर्पिषा ॥ ८ ॥
शीतपित्तोदर्द्दकोठान्सप्ताहादेवनाशयेत् ॥ ९ ॥

इति शीतपित्तादिरोगाध्यायः ।

अर्थ–शीतपित्त रोगमें कड़वे तेलकेद्वारा अभ्यंग और गरम जलके द्वारा सेककरना हितकारीहै । ऊदर्द्धरोगमें परवल और नीमकी छाल क्राथकेद्वारा वमन और त्रिफला, गूगल और पीपलके क्राथके द्वारा विरेचन करावै । सफेदसरसों, हलदी, चकवड़केबीज और तिल, इनको कड़वे तेलमें पीसकर लेपकरनेसे शीतपित्त और उदर्दरोग दूर होताहै। दूब और हलदी एकत्र पीसकर लेपकरनेसे कच्छु पामा, कृमि, दद्रु और शीतपित्तरोग नष्टहोताहै । हलदी; सह्नालूकेपत्ते, सैंधानोन, वायविडंग, चकवड़केबीज, ईंट दूब, शालिपर्णी और कसौंदी, इन सबको एकत्र पीसकर लेपकरनेसे उदर्दरोग दूर होताहै। सूखीमूलीकेयूष, कुलथीकेयूष, तथा लवा और तित्तिरपक्षीकेमांसके यूषकेसाथ भोजनकरना शीतपित्त रोगमें हितकारकहै । परवल, त्रिफला नीमकीछाल, गिलोय, नागरमोथा, लालचंदन, मूर्वा, कुटकी, पाढ़, हलदी और जवास इन सबका क्राथ बनाकर पानकरनेसे–पित्तश्लेष्मज्वर- कण्डू चर्म्मदोष विस्फोट, विष-

विकार और विसर्परोग नष्टहोताहै। अरणीकीजडको पीसकर घृतके साथ पीनेसे शीतपित्त, उदर्द, और कोढ़रोग एकसप्ताहमेंही दूर होजाताहै ॥ ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥

इति शीतपित्तादिरोगचिकित्सासमाप्ता।

अथाम्लपित्तचिकित्सामाह।

अम्लपित्तेचवमनंपटोलारिष्टवारिभिः।
कारयेन्मदनक्षौद्रसैन्धवेनसमन्वितैः॥ १ ॥
वामयेदम्लपित्तार्त्तंहिलमोचीरसेनवा।
विरेचनंत्रिवृच्चूर्णंमधुधात्रीद्रवान्वितम्॥ २ ॥
प्रयोज्यमथवाखण्डात्रिवृताचूर्णमाक्षिकैः।
ज्वलन्तमिवचात्मानंमन्यमानंसुशोधयेत्॥ ३ ॥
ऊर्द्धगंवमनैर्धीमानधोगंरेचनैर्हरेत्।
सम्यग्वान्तविरिक्तस्यसुस्निग्धस्यानुवासनम्॥ ४ ॥
आस्थापनंचिरोद्भूतेदेयंदोषाद्यपेक्षया।
पानार्थंतिक्तभूयिष्ठमभीक्ष्णमिहयोजयेत्॥
यवगोधूमशालीनिलाजारससितामधु॥ ५ ॥

अर्थ–अम्लपित्तरोगमें परवल और नीमकीछालकी काथके साथ मैनफल, सहत और सैंधानोन मिलाकर वमनकरानेके लिये देवै और विरेचन करानेके लिये निसोतका चूर्ण, सहत और आमलोंकारस एकत्र मिलाकर या बूरा, निसोतका चूर्ण और सहत एकत्र मिलाकरदेवै। ऊर्द्धग अम्लपित्त रोगीको वमनद्वारा और अधोग अम्लपित्त रोगीको विरेचनद्वारा शुद्धकरै। और सम्यक्प्रकारसे वमन और विरेचनके द्वारा शुद्ध होजाय तौ रोगीको स्निग्धकरकै अनुवासन बस्तिकरावै और जो रोग बहुत दिनोंका होजाय तौ आस्थापन (निरूहबस्ति) प्रयोगकरै। अम्लपित्त रोगीको पीनेके लिये कड़वे पानीय द्रव्य और पथ्यके लिये

जौ, गेहूँ, शालिधान, खीलैं, मांसरस और मूगादिकायूष तथा सहतदेवै ॥ ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥

धात्रीरसोघृतैर्भृष्टोमधुयुक्तोऽम्लपित्तहा ॥ ६ ॥
धात्रीरसोयवक्काथसंपीतोमधुनातथा।
यवकृष्णापटोलानांक्काथंक्षौद्रयुतंपिबेत् ॥ ७ ॥
तेषांवाविश्वयुक्तानांशूलारुच्यम्लपित्तहा।
किराताब्दामृताशुण्ठीकाथःसद्योऽम्लपित्तजित् ॥ ८ ॥

अर्थ-घीमें भुनाहुआ आमलोंकारस सहतके साथ पीनेसे-अम्लपित्त रोग नाशहोजाताहै। आमलोंका रस सहतके साथ, जौंका काथ सहतके साथ, जौं, पीपल, और परवल इनका मिलाहुआ काथ सहतके साथ अथवा जौ, पीपल पटोल और सोंठ, इन चार औषधियोंका मिश्रित काथ सहतके साथ पीनेसे-अम्लपित्त रोग नष्टहोताहै ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥

वासामृतापर्पटकनिम्बभूनिम्बमार्कवैः।
त्रिफलाकुलकैःक्काथःसक्षौद्रश्चाम्लपित्तहा ॥ ९ ॥

इति दशाङ्गः।

अर्थ-अडूसा, गिलोय, पित्तपापड़ा, नीमकीछाल, चिरायता, भांगरा, हरड़, बहेड़ा, आमला और पटोलका काथ सहत डालकर पान करनेसे-अम्लपित्तरोग दूर होताहै ॥ ९ ॥

सिंहास्यामृतभण्टाकीक्काथंपीत्वासमाक्षिकम्।
अम्लपित्तंजयेज्जन्तुःकासंश्वासंज्वरंवमिम् ॥ १० ॥
फलत्रयंपटोलंचतिक्ताक्काथःसितायुतः।
पीतःक्रीतकमध्वक्तोज्वरच्छर्द्यम्लपित्तजित् ॥ ११ ॥

अर्थ-अडूसा, गिलोय, और कटेरी इनके काथमें सहत डालकर पीनेसे-अम्लपित्त, खाँसी, श्वास, ज्वर और वमन दूर होतीहै ॥ हरड़, बहेड़ा, आमला, परवल और कुटकी, इनका काथ बूरा, सहत और मुलेठीके चूर्णके साथ पीनेसे ज्वर और वमन संयुक्त अम्लपित्तादि रोग दूरहोतेहैं ॥ १० ॥ ११ ॥

जुङ्गामृताश्वेतपुनर्नवानांशक्राशनस्यापिचमार्कवस्य।
चूर्णंसिताक्षौद्रयुतंघृतेनलीढापयःपेयमतन्द्रितेन ॥ १२ ॥
सामञ्चवायुंग्रहणींप्रदुष्टांकासावसादंज्वरमम्लपित्तम्।
शोथंतथापाण्डुमरोचकञ्चप्रमेहमुग्रंपरिणामशूलम् ॥ १३ ॥
स्निग्धान्नभोक्तुःपुरुषस्यशीघ्रंनिहन्तिसर्वंकफपित्तरोगम्।
रसायनोवह्निबलप्रदश्चदुर्णामहन्तासमसप्तकोयम् ॥ १४ ॥

इति समसप्तकंचूर्णम्।

अर्थ-विधारा, गिलोय, सफेद पुनर्नवा, भांग और भांगरा, इनका चूर्ण समान भागलेकर बूरा, सहत और घृतके साथ चाटै, पश्चात् दूध पीवै और स्निग्धभोजन करै तौ सामवायु, संग्रहणी, खाँसी, अम्लपित्त, ज्वर और सूजन आदि रोग दूर होतेहैं ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥

सुपक्वजम्बीररसः सायंपीतोऽम्लपित्तजित्।
धन्याकंचंदनंमुस्तंयवश्चेतिसमांशिकम् ॥ १५ ॥
लेहःक्षौद्रयुतोहन्यादम्लपित्तारुचिज्वरान् ॥ १६ ॥

अर्थ-उत्तम पकेहुएजम्भीरी नीबूकारस सायंकाल पानकरनेकेलिये अम्लपित्तरोग दूरहोताहै। धनिया, लालचंदन, नागरमोथा, और जौ यह चारों औषधि समान भागलेकर भलेप्रकारसे पीसकर सहतके साथ चाटनेसे-अम्लपित्त, अरुचि और ज्वर दूरहोताहै ॥ १५ ॥ १६ ॥

एलापटोलघनचंदनधान्यधात्री
वांशीवराङ्गदलनागकणाभयाभिः।
लेहःसिताज्यमधुभिःसितयाथपित्तं
हंत्यम्लपित्तमरुचिज्वरदाहशोषान् ॥ १७ ॥

इति एलादिमन्थः।

अर्थ-छोटीइलायची, पटोल, नागरमोथा, लालचंदन, धनियां, आमला, वंशलोचन, दालचीनी, तेजपात, गजपीपल और हरड़, इन-

सब औषधियोंको बारीक पीसकर बूरा, घी और सहत मिलालेवै, इसको बूराके साथ खावे तौ पित्त, अम्लपित्त, अरुचि, ज्वर, दाह और शोषदूर होताहै ॥ १७ ॥

गुडाभयाभृंगराजचूर्णन्तद्भववान्तिनुत् ॥ १८ ॥

अर्थ-गुड़, हरड़ और भांगरेका चूर्ण एकत्र सेवन करनेसे अम्लपित्तोद्भव वमन दूरहोतीहै ॥ १८ ॥

द्राक्षामृतोशीरकिरातपद्मत्रायन्तिधात्र्यब्दपटोलधान्यैः ।
सचन्दनेन्द्रैःशृतमम्लपित्तकासाग्निसादज्वरजिद्घृतंस्यात् १९

इति द्राक्षाघृतम् ।

अर्थ-उत्तम गायका घी २ दोसेर, जल ८ आठसेर तथा कल्कके लिये दाख गिलोय, खस, चिरायता, पद्माख, त्रायमाण, आमला, नागरमोथा, पटोल, धनियां, लालचंदन और इन्द्रजौ, यह सब औषधि ऽ॥ आधसेर, यथाविधिसे घृतको सिद्ध करै, इस घृतको पान करनेसे अम्लपित्त, खाँसी मन्दाग्नि और ज्वर दूर होताहै ॥ १९ ॥

कणाचूर्णस्यकुडवंषट्पलंहविषन्तथा ।
वरीरसात्पलान्यष्टौक्षीरप्रस्थद्वयन्तथा ॥ २० ॥
खण्डप्रस्थंपचेत्तत्रसिद्धेसंचूर्ण्यधान्यकम् ।
शुण्ठीद्विजीरपथ्याब्दमांसीधात्रीत्रिजातकम् ॥ २१ ॥
पृथक्द्वादशमासंहिषण्मासंनागकेशरम् ।
खदिरंमरिचंशीतिक्षिपेत्क्षौद्रपलत्रयम् ॥
शूलाम्लपित्तवान्त्यग्निमान्द्यजित्खण्डपिप्पली ॥ २२ ॥

इति खण्डपिप्पली ।

अर्थ-पीपलकाचूर्ण ऽ॥ आधशेर, गायका घी ६ छैपल, सतावरका रस ८ आठपल, गायका दूध ४ चारसेर, और खाँड २ दो सेर, इन सबद्रव्योंको एकत्र मिलाकर पकावै, जब पाक पूर्ण होजाय तौ धनिया, सोंठ, जीरा, कालाजीरा, हरड़, नागरमोथा, बालछड़, आमला, दाल-

चीनी, तेजपात, छोटीइलायची, प्रत्येकका चूर्ण १२ बारह मासे, नागकेशर, खैर और कालीमिरच, प्रत्येकका चूर्ण ६ छै मासे और सहत ३ तीन पल मिलादेवै । यह गण्डपिप्पली-शूल, अल्मपित्त, वमन और मंदाग्निको नष्ट करै है ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥

पिप्पल्याःकुडवंचूर्णपलषोडशकंघृतम् ।
वरीरसात्पलान्यष्टौषोडशामलकीरसात् ॥ २३ ॥
खण्डप्रस्थंपयःप्रस्थद्वयेपक्त्वाकिकंक्षिपेत् ।
धात्रीधान्याभयाजाजीत्रिजाताम्बुसुचूर्णितम् ॥ २४ ॥
कर्षार्द्धंजीरकंकुष्ठंनागरंनागकेशरम् ।
जातीफलंमरीचंचशीतेमधुपलत्रयम् ॥ २५ ॥
अम्लपित्तरुचिश्छर्दिश्वासकासज्वरापहम् ।
अग्निसन्दीपनंहृद्यंखण्डापिप्पलिनामकम् ॥ २६ ॥
अक्षिकंकार्षिकंपृथक् ॥

इति द्वितीयखण्डपिप्पली ।

अर्थ-पीपलकाचूर्ण १ एककुड़व, गायकाघी १६ सोलहपल, सतावरकारस ८ आठ पल, आमलोंका रस १६ सोलहपल, खाण्ड २ दो सेर गायका दूध २ दो सेर, यथाविधिसे पकावै, जब पाक समाप्त हो जाय तौ आमला, धनियां, हरड़ कालाजीरा, दालचीनी, छोटी इलाची, तेजपात और सुगंधवाला, प्रत्येकका चूर्ण २ दो तोले, सफेद जीरा, कूठ, सोंठ, नागकेशर जायफल, और कालीमिरच प्रत्येक १ एक तोले और सहत ३ तीनपल मिलालेवै । यह द्वितीयखण्ड पिप्पली अम्लपित्त, अरुचि, श्वास, खाँसी और ज्वरको नष्ट करती है । अग्निको दीपनकरती है और हृदयको हितकारी है ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥

शुण्ठीचूर्णस्यकुडवंखण्डप्रस्थंसमावपेत् ।
दत्वाद्विकुडवंसर्पिःक्षीरप्रस्थत्रयेपचेत् ॥ २७ ॥

पाकसिद्धेक्षिपेच्चूर्णंकणाधात्रीत्रिजातकम्।
वांशीद्विजीरकंपथ्याऽब्दधान्यंत्रिशाणिकम् ॥ २८ ॥
पृथक्‌षण्मासमरिचंनागंशांतितुत्रिफलंमधु।
शूलाम्लपित्तहृद्रोगवांत्यामानिलनाशनम् ॥ २९ ॥
बलवर्णदमायुष्यंखण्डशुण्ठीरसायनम् ॥ ३० ॥

इति खण्डशुण्ठी।

अर्थ-सोंठकाचूर्ण ऽ॥ आधसेर, खाँड २ दोसेर, गायकाघी १ एकसेर और गायका दूध छैसेर, यथाविधिसे घृतको सिद्धकरै, जब पाक पूर्ण होजाय तौ-पीपल, आमला, छोटीइलायची, तेजपात दालचीनी, वंशलोचन, जीरा, कालाजीरा, हरड़, नागरमोथा और धनियां, प्रत्येकका चूर्ण १॥ डेढ़ तोले, कालीमिरच और नागकेशर प्रत्येकका चूर्ण ६ छै मासे तथा सहत ३ तीनपल मिलालेवै। इसखण्डशुण्ठीको सेवनकरनेसे शूल, अम्लपित्त, हृदयरोग, वमन और आमवातरोग नष्ट होताहै तथा बलकी वृद्धि होतीहै, वर्णको उज्वल करैहै, आयुको बढावै है और रसायन है ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३०

गन्धकेनाक्षमात्रेणसूततुल्येननिर्म्मिता।
कज्जलीयातयालेप्यंताम्रपात्रन्तुतत्समम् ॥ ३१ ॥
अर्जुनत्वग्रसैः सार्द्धपक्वोदुम्बरपल्लवे।
आच्छाद्यपंचलवणैश्चूर्णैश्चापिचमृण्मये ॥ ३२ ॥
अन्धमूषागतंध्मातंतात्सिद्धंभक्षयेन्नरः।
शाणकंरक्तिकावृद्धयामासमात्रंप्रयोगतः ॥ ३३ ॥
अम्लपित्तंक्षयंशूलंजरापित्तंसुदारुणम्।
सप्तरात्रप्रयोगेणशरीरंनिर्म्मलंभवेत् ॥ ३४ ॥

इति अग्निमुखताम्रम्।

अर्थ-२ दोतोले पारा और २ दोतोले गंधक दोनोंको एकत्र खरल कर कज्जलीबना उस कज्जलीसे ताँबेके पत्रोंको लेपकरकै अर्जुनकी

छालके रसमें पका गूलरके पके पत्तोंसे आच्छादितकर पंच लवणके चूर्णके साथ मट्टीके अन्धमूषामें पकावै । इसको एक रत्तीके क्रमसे चार-मासे तक खावै, इससे-अम्लपित्त, क्षय, शूल, दारुणजरक्तपित्त, यह सब सात रोजमें दूर होजाते हैं, और शरीर निर्म्मल होजाता है ॥ ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥

मृतसूताभ्रमुण्डार्कतीक्ष्णमाक्षिकतालकम् ।
गंधकंमर्दयेत्तुल्यंयष्टीद्राक्षामृताद्रवैः ॥ ३५ ॥
धात्रीशतावरीद्रावैर्द्रवैःक्षीरविदारिजैः ।
दिनैकंमर्दयेत्खल्वेसिताक्षौद्रयुतावटी ॥ ३६ ॥
निष्कमात्रंनिहंत्याशुपित्तंपित्तज्वरंक्षयम् ।
दाहंतृष्णांभ्रमंशोषंवातपित्तान्तकोरसः ॥ ३७ ॥
सिताक्षीरंपिबेच्चानुयष्टिकाथंसितायुतम् ।
पिबेद्वापितुशान्त्यर्थंशीततोयेनचन्दनम् ॥ ३८ ॥

इति वातपित्तान्तकोरसः ।

अर्थ-पारेकी भस्म, अभ्रककी भस्म, मुण्डलोह, ताँबा, तीक्ष्णलोह, सोनामाखी,हरिताल, और गंधक,यह सब द्रव्य समान भागलेकर मुलेठी, दाख और गिलोयके क्राथमें एकदिन आमले और सतावरके रसमें एकदिन एवं विदारीकन्दके रसमें एकदिन खरलकर गोली बना लेवै इन गोलियोंको खांड और सहतके साथ सेवन करनेसे पित्त, पित्तज्वर, क्षय, दाह, तृषा, भ्रम और शोष दूर होताहै । इस औषधिके सेवन करनेके पश्चात् बूरा और दूध अथवा मुलेठीका क्राथ और बूरा या लालचन्दन और शीतल जल पान करै ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥

शुद्धसूतंपलार्द्धञ्चशुद्धगन्धकंतत्समम् ।
द्वयोस्तुल्यंताम्रपलंलित्वामूषान्तरेक्षिपेत् ॥ ३९ ॥
तंसिद्धंताम्रमादायपलमेकंसमाहरेत् ।
पारदस्यपलंचैकंगन्धकस्यपलन्तथा ॥ ४० ॥
पुटशुद्धस्यलौहस्यगगनस्यपलंपलम् ।

यमानीशतपुष्पाचटङ्कणक्षारमेवच ॥ ४१ ॥
प्रत्येकमेषाञ्चपलंतदन्यस्यपलार्द्धकम् ।
घण्टकर्णभृंगराजमण्डूराणांतथैवच ॥ ४२ ॥
प्रत्येकंचसमादायसर्वमेकत्रकारयेत् ।
त्रिकटुत्रिफलादन्तीचविकाशुक्लजीरकम् ॥ ४३ ॥
चित्रकश्चनिशापाठात्रिवृतामाणकस्यच ।
पिप्पलीमूलकस्याथप्रत्येकेनरसेनच ॥ ४४ ॥
आर्द्रकस्यरसैःपिष्ट्वागुटिकांसंप्रकल्पयेत् ।
पंचाननावटीख्यातासर्वरोगविनाशिनी ॥ ४५ ॥
अम्लपित्तगजेन्द्रस्यप्रशमीचरसायनी ।
महाग्निकारिणीचैषापरिणामहरापरा ॥ ४६ ॥
शोथपाण्ड्वामयंहन्तिप्लीहगुल्मोदरापहा ।
गुरुवृष्यान्नपानानिपयोमांसरसाहिताः ॥ ४७ ॥
पक्वाम्रंनारिकेलञ्चद्राक्षातालफलानिच ।
यथेष्टंभक्षयेद्रोगीनिःशङ्कोचितमेवतत् ॥ ४८ ॥

इति पंचाननावटिका ।

अर्थ–दो२ तोले शुद्ध पारा, २ तोले शुद्ध गंधक, दोनोंकी कज्जलीकर चार तोले ताँबेके पत्रोंपै प्रलेप करैं, पश्चात् ताँबेके पत्रोंको मूषामें रख पुट देवै । इसप्रकार शुद्ध किया हुआ ताँबा ४ चार तोले, पारा ४ चार तोले, सोया ४ चार तोले, और सुहागा ४ चार तोले, एवं घण्टकर्ण, भांगरा, कुकुर भांगरा और मण्डूर,प्रत्येक दो दो तोले लेकर भले प्रकारसे सबका बारीक चूर्ण करले, पश्चात् इस चूर्णको त्रिकुटा, त्रिफला, चव्य, दन्ती, सफेदजीरा, चीता, हलदी, चिरचिटा, निसोत मानकन्द, पीपरामूल और अदरख प्रत्येकके रसमें एकवार खरलकर गोली बना लेवै । इनको पंचानना वटिका कहते हैं । यह सब रोग नाशक हैं । यह अम्लपित्त रूपी गजेन्द्रको शान्त करने वाली है रसायन है । अत्यन्त

जठराग्निको दीपन करने वाली, परिणाम शूलको नष्ट करनेवाली, तथा सूजन, पाण्डुरोग, प्लीहा, गुल्म और उदर रोगको दूर करै है । इसपै भारी और वीर्य्यवर्द्धक अन्नपान, दूध, और मांसरस हितकारी है। पके-हुए आम, नारियल, दाख, ताड़के फल, इन सबका भक्षण करना हित-कारी है । और इसपै यथेष्ट भोजन करै, तथा सदैव निःशंक चित्त रहै ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६॥४७॥४८॥

त्रिकटुत्रिफलामुस्ताविडंगामृतचित्रकम् ।
यमानीहवुषाहिङ्गुतुम्बुरंलवणत्रयम् ॥ ४९ ॥
भल्लातंशतपुष्पाचधन्याकंजीरकद्वयम् ।
अजमोदावचाशृंगीरोहिषंबृहतीद्वयम् ॥ ५० ॥
बालोवृद्धिबलौबाणात्तथामुण्डतिकाद्वयम् ।
कुठाराच्छिन्नकर्णौचलक्षःपीतःशुभाञ्जनः ॥५१॥
सूर्यावर्त्तात्रिवृद्दन्तीभद्रोत्कटपुनर्नवा ।
भार्गीपर्णासमूलश्चमेधावीन्द्राशनःशटी ॥ ५२ ॥
तेजोवतीगवाक्षीचनीलिन्यौशरपुङ्खकम् ।
करिकर्णपलाशश्चगृध्रनाख्यौशतावरी ॥ ५३ ॥
गोधावत्यलम्बुषकोबृहत्पत्रकुलाहलौ ।
सर्पदंष्ट्राकणामूलंराजानौभृंगकेशयोः ॥ ५४ ॥
वृद्धदारकशम्याकवलेन्द्रस्वरसन्तथा ।
दण्डोत्पलंरुबुकश्चसुदर्शःखरमञ्जरी ॥ ५५ ॥
तालमूल्यस्थिसंहारःघण्टकर्णोरुदन्तिका ।
कर्षमात्रश्चसंग्राह्यमेषाञ्चैवपृथक्पृथक् ॥ ५६ ॥
एकपत्रीकृतंव्योमकृष्णकञ्चपलाष्टकम् ।
आम्लभक्ताम्लपानीयस्थापयेच्चादिनत्रयम् ॥ ५७ ॥
शुष्कंचूर्णीकृतंपश्चात्पुटयेद्गोमयाग्निना ।

प्राणास्थिसंहृत्कन्दानांभृंगार्द्रत्रिफलारसैः ॥ ५८ ॥
एवंहतस्यलौहस्यषट्फलस्ययथाक्रमम् ।
पश्चादेकीकृतंसर्वंपुटयेदार्द्रमालयोः ॥ ५९ ॥
पारदार्द्धंफलंशुद्धंगन्धकस्यपलन्तथा।
सर्वमेकीकृतंश्लक्ष्णंपेषयेदार्द्रकाम्बुना ॥ ६० ॥
षण्मासकमिताश्चैवगुटिकांपाययेत्सदा।
गुटीत्रयंभक्षयित्वाअम्लंचानुपयःपिबेत् ॥ ६१ ॥
नागार्ज्जुनेनमुनिनानिर्मिताहितकारिणा।
सर्वरोगहरीचैषागुटिकाचामृतोपमा ॥ ६२ ॥
अनेनवर्द्धतेपुष्टिरग्निवृद्धिश्चजायते ।
सर्वरोगाविनश्यन्तिचामाजीर्णज्वरादयः ॥ ६३ ॥
अम्लपित्तश्चगुदजंग्रहाणान्नाशयेदपि ।
कामलांपांडुरोगश्चवलीपलितनाशनम् ॥ ६४ ॥
कांजिकाम्लश्चमाषश्चमूलकंचैवभक्षयेत्
सकलाशकुनाभक्ष्यामांसश्चसकलन्तथा ॥ ६५ ॥
वार्य्यन्नंदधिशाकश्चतक्रश्चापियथेच्छया ।
सर्वान्नंतिन्तिडीवर्ज्यामम्लमात्रंचभक्षयेत् ॥ ६६ ॥
नभक्षयेच्छुष्कशाकश्चक्षीरंचैवविवर्जयेत् ।
मधुकंनारिकेलंचवर्ज्जनीयंविशेषतः ॥ ६७ ॥

अथ पानीयभक्तवटिका।

अर्थ-सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेडा, आमला, नागरमोथा, वायविडंग, गिलोय, चीता, अजवायन हाऊबेर, हींग, तुम्बुरु, तीनों लवण, भिलावा, सोया, धनिया, सफेदजीरा, कालाजीरा, अजमोद, वच, काकड़ाशिंगी, रोहिषतृण, कटेरी, कटाई, सुगंधवाला, वृद्धि, खिरैटी, कटसरैया, मुण्डी, बडीमुण्डी, कुठारक, छिन्नकर्ण, सफेदसैंजिना, पीला

सैंजिना, हुलहुल, निसोत, दन्तीकी जड़, प्रसारन, पुनर्नवा, भारंगी, तुलसीकी जड़ ब्राह्मी, भंग, कचूर, चव्य, गंगेरन, नील, कालानिसोत, शरफोंका, हस्तिकर्ण पलाश, काकादनी, मकोय, सतावरी, गोधापदी, बड़ी गोरखमुण्डी, पठानी लोध, कुलाहल, विछाटी, पीपरा मूल, भांगरा, कुकुरभांगरा, विधारा, अमलतास, वीजबंद, सह्मालु, दण्डोत्पल अण्ड, जामुन, चिरचिटा, मुसली, हड संवारी, घंटाकर्ण और रुदन्ती, प्रत्येक औषधिका चूर्ण दो दो तोले लेवै, पश्चात् एकपत्री किया हुआ कृष्णाभ्रक लेकर भातकी काँजीमें तीन दिनतक स्थापन करै, फिर सुखाके चूर्णकर आरने उपलोंकी अग्निके द्वारा पुट देवै, ऐसा अभ्रक ८ पल लेवै, मानकन्द, अस्थि संहार, भांगरा, अदरख और त्रिफलेके रससे मारा हुआ लोहा ६ पल लेवै, फिर सबको एकत्र करकै अदरख और मालाकन्दके रसकी पुट देवै, पश्चात् २ दो तोले शुद्धपारा और ४ चार तोले शुद्ध गंधक दोनोंकी कज्जली बना मिला देवै, सबको अदरखके रसमें बारीक पीसकर छै छै मासेकी गोली बना लेवै। प्रतिदिन तीन गोली खावै। अनुपान कांजी और जल है । यह पानीयभक्तवटिका रोगी मनुष्योंके हितके लिये श्रीमान् नागार्ज्जुन ऋषिने निर्म्माणकी है। सर्व रोगोंको हरनेवाली, अमृतकी समान, पुष्टिकारक, अग्निजनक, सर्व रोग नाशक, आम और जीर्णज्वरादिको दूर करै है । तथा अम्लपित्त, गुदज रोग, संग्रहणी, कामला, पाण्डुरोग और वली पलित रोगको दूर करै है । इसपै कांजी, उडद और मूली भक्षण करना हितकारी है। तथा सर्व प्रकारके मत्स्य, मांस, जल, अन्न, दधि, शाक और तक्र यह यथेच्छ भोजन करै। सर्व प्रकारके अन्न, केवल इमलीको छोड़कर सर्व प्रकारकी खटाई भक्षण करै। सूखाशाक, दूध, मधु और नारियल, इनको त्याग देवै ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥

नारिकेलफलप्रस्थंसुपिष्टंघृतभर्ज्जितम् ।
प्रस्थंप्रस्थंसमादायशुण्ठ्याश्चूर्णस्यतद्युतम् ॥ ६८ ॥
द्विपात्रंनारिकेलाम्बुतत्समंक्षीरमेवच ।
धात्र्याश्चस्वरसःप्रस्थंखण्डस्यापितुलांन्यसेत् ॥ ६९ ॥

एकीकृत्यपचेत्सर्वंशनैर्मृद्वग्निनाभिषक् ।
सिद्धशीतेप्रदातव्यंचूर्णंतत्रसुशुण्डितम् ॥ ७० ॥
त्रिकटोःसचतुर्ज्जातप्रत्येकन्तुपलोन्मितम् ।
धात्रीजीरकयुग्मञ्चधन्याकंग्रन्थिपर्णकम् ॥ ७१ ॥
तुगापयोदचूर्णानित्रिकर्षञ्चपृथक्पृथक् ।
मधुनःपलानिचत्वारिस्निग्धेभांडेनिधापयेत् ॥ ७२ ॥
कर्षप्रमाणंकर्त्तव्यंरसंयूषंपिबेदनु ।
अम्लपित्तंनिहन्त्याशुशूलंचैवसुदुस्तरम् ॥ ७३ ॥
परिणामभवंशूलंपृष्ठशूलञ्चनाशयेत् ।
अन्नोपरिहृतंशूलंहृच्छूलञ्चसुदुस्तरम् ॥ ७४ ॥
सर्वशूलहरंश्रेष्ठंवायोर्वेगंयथागिरिः ।
कण्ठदाहञ्चहृद्दाहंछर्दिंतृष्णांसुदारुणम् ॥ ७५ ॥
कासंपंचविधंचैवरक्तपित्तंसुदारुणम् ।
पीनसंचप्रतिश्यायंयक्ष्माणंविनिहन्तिच ॥ ७६ ॥
परंवाजीकरंश्रेष्ठंबलपुष्टिविवर्धनम् ॥
अग्निसन्दीपनकरंरसायनमिदंशुभम् ॥ ७७ ॥
मूत्ररोगेषुसर्वेषुवातरोगेषुशस्यते ॥
गुदजानिचसर्वाणितांस्तान्रोगान्निहन्तिच ॥ ७८ ॥
रोगनीकविनाशायलोकानुग्रहहेतुना ।
अश्विभ्यांनिर्मितंश्रेष्ठममृताख्यंरसायनम् ॥७९॥

इति नारिकेलामृतम् ।

अर्थ-पिसी हुई और घीमें भुनी हुई नारियलकी गिरी २ दो सेर सोंठ का चूर्ण २ दोसेर, नारियलका जल १६ सोलह सेर, गायका दूध १६ सोलह सेर, आमलोंका रस २ दो सेर, और खांड १२॥ सेर लेवै सबको मिलाकर मन्द मन्द अग्निसे पकावै, जब पक कर सिद्ध होकर

शीतल हो जाय तब सोंठ, मिरच, पीपल, दालचीनी, नागकेशर, छोटीइलायची, और तेजपात, प्रत्येक का चूर्ण ४ चार तोले, आमला, सफेदजीरा, कालाजीरा, धनिया, गठिवन, वंशलोचन और नागरमोथा, प्रत्येक का चूर्ण तीन ३ तोले और सहत आध सेर मिलाकर एक चिकने बासनमें भरकै रख देवै। इसमें से प्रतिदिन २ दो तोले खाय और मांसरस या मूगादिके यूषका अनुपान करै। अम्लपित्त, दुस्तरशूल, परिणाम शूल, पृष्ठशूल, अन्न भक्षण करनेके पश्चात् उत्पन्न हुआ शूल, दारुण हृदयशूल और सर्व प्रकारके शूलोंको दूर करैहै। कण्ठदाह हृदयदाह, वमन, तृषा, पाँच प्रकारकी खाँसी, दारुण रक्तपित्त, पीनस, प्रतिश्याय, राजयक्ष्मा, सर्व प्रकारके मूत्ररोग, वातरोग, सर्व प्रकारके गुदाके रोग, इन सबको यह निश्चय नष्ट करैहै। परंवाजीकरण, श्रेष्ठ, बलकारक, पुष्टिजनक, अग्निप्रदीपक और उत्तम रसायन है। रोगोंको नाश करने के लिये और संसारके उपकारके लिये श्रीमान् अश्विनीकुमारों ने यह उत्तम नारिकेलामृत रचाहै ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥

आमलापिप्पलीचूर्णंतुल्यया सितयासह ।
रक्तपित्तहरोलौहोयोगराजइतिस्मृतः ॥ ८० ॥
बल्योऽग्निर्द्दीपनोवृष्योमहाम्लपित्तनाशनः ।
पित्तोत्थान्वातपित्तोत्थान्निहन्तिविविधान्गदान् ॥ ८१ ॥

इति आमलक्यादिलौहम् ।

अर्थ-आमलों का चूर्ण १ एक भाग, पीपलका चूर्ण एक भाग, बूरा दो भाग और लोहा ४ चार भाग सबको एकत्र मिला लेवै। यह बलकारक, अग्निप्रदीपक, वीर्यजनक, तथा रक्तपित्त, अम्लपित्त, पित्तोद्भवरोग, वातपित्तोद्भव रोग और नाना प्रकारके रोगोंको दूर करै है ॥ ॥ ८० ॥ ८१ ॥

चित्रकंत्रिफलादन्तींविदारींमार्कवंबलाम् ॥
पीवरींतालमूलंचपृथगष्टपलोन्मिताम् ॥ ८२ ॥
अक्षधात्रीशिवानाञ्चप्रस्थंप्रस्थंसुकुट्टितम् ।

विपाच्यसलिलद्रोणेसुपूतेऽष्टांशशोषिते ॥ ८३ ॥
प्रस्थंचायोरजःशुद्धंगन्धकंचतदर्द्धकम् ॥
खण्डस्यकुडवंदत्वानारिकेलपयन्तथा ॥ ८४ ॥
एकीकृत्यपचेल्लौहंरसेनसर्पिषासह ॥
अवतार्य्यततःशीतेमधुनोऽष्टपलंक्षिपेत् ॥८५॥
त्रिकटुंत्रिफलांदन्तींविडंगंनागकेशरम् ॥
पलाशबीजंत्रिवृतांहवुषांजीरकद्वयम् ॥ ८६ ॥
तालीशपत्रधन्याकंवराङ्गंवंशलोचनम् ॥
भागतःपलिकंचूर्णमाक्षिकञ्चपलद्वयम् ॥ ८७ ॥
शिलाजतुरजन्तद्वत्क्षिप्त्वाभाण्डेनिधापयेत् ॥
लौहेलौहेनसंघृष्यमधुदत्वाघृतार्द्धकम् ॥ ८८ ॥
कृत्वाचानुपिबेत्क्षीरंजलंवानारिकेलजम् ॥
त्र्यहंमाषमितंकृत्वावर्द्धयेद्रक्तिकाक्रमात् ॥ ८९ ॥
गुरुवृष्यान्नपानानिपयोमांसरसाःशुभाः ॥
सेवनीयाःप्रयत्नेनपावकःवर्द्धयचात्मनः ॥ ९०॥
उत्थिताग्निंचभुञ्जीतकर्तव्यापेक्षयाबलात् ॥
एवङ्कुर्वन्नवंकान्तंप्राप्नुयाद्देहमात्मनः ॥ ९१ ॥
तेजस्वीबलवान्वाग्मीनिर्व्याधिर्भातिदेववत् ॥
अस्योपयोगात्सततंसुरेवपारिद्दष्याति ॥ ९२ ॥
अम्लपित्तंतथाशूलमग्निमान्द्यंक्षयंज्वरम् ॥
ग्रहणीपाण्डुरोगञ्चपरिणामभवंरुजम् ॥ ९३ ॥
येचकुक्षिगतारोगामंदानलभवाश्चये ॥
तान्सर्वान्नाशयेद्रोगान्लौहामृतरसायनम् ॥ ९४ ॥

इति लौहामृतलौहम्।

इति अम्लपित्ताऽध्यायः।

अर्थ-चीता, हरड़, बहेड़ा, आमला, दन्तीकीजड़, विदारीकंद, भांगरा, खिरैटी, सतावर, और मुसली प्रत्येक आठ आठ पल, हरड़, बहेड़ा, और आमला प्रत्येक २ दोसेर, पाकके लिये जल ३२ सेर, शेष ४ चार सेर, लोहेकाचूर्ण २ दोसेर, शुद्धगंधक १ एकसेर, खांड आधसेर, नारियलका जल आधसेर, और गायकाघी २ सेर, सबको मिलाकर यथा विधिसे पकावै, जब पाकपूर्ण हो जाय तौ ८ आठपल सहत, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आमला, दन्ती, वायबिडंग, नागकेशर, ढाककेबीज, निसोत, हाऊबेर, जीरा, कालाजीरा, तालीशपत्र, धनिया, दालचीनी, और वंशलोचन प्रत्येकका चूर्ण चारतोले, सोनामाखी ८ आठतोले, और शिलाजीतका चूर्ण ८ आठतोले, मिलाकर लोहेके पात्रमें करके लोहेके डंडेसे चलावै। पश्चात् इसमें घृतसे आधा सहत मिलाकर इसको सेवनकरै और ऊपरसे दूध, अथवा नारियलका जलपानकरै। तीनदिनतक एकमासे पर्यन्त खावै पश्चात् एक एक रत्ती रोज बढाताजाय। इसपै भारी, वृष्य अन्न, और पान, दूध और मांसरस हितकारीहै। जठराग्निको विचारकर क्षुधाके समय इसको सेवनकरै। इससे मनुष्य-नवीन और कांतिवान् होतेहैं। तेजस्वी, बलवान्, सुन्दर वाणी युक्त और निरोगी, देवोंके स्वरूपकी समान शरीर वाले होते हैं। इसको सेवन करनेवाला मनुष्य मदिरा पीनेवाले मनुष्यकी समान निरन्तर आनन्दमें मग्न रहता है। यह लोहामृतरसायन-अम्लपित्त-शूल, मंदाग्नि, क्षय, ज्वर, संग्रहणी, पाण्डुरोग, परिणाम भवरोग, कुक्षिगतरोग, और मंदाग्निसे उत्पन्न हुए रोगोंको दूरकरैहै ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ ९० ॥ ९१ ॥ ९२ ॥ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥

इति अम्लपित्तचिकित्सासमाप्ता।

अथविसर्पचिकित्सामाह।

विरेकवमनालेपसेचनासृग्विमोक्षणैः।
उपाचरेद्यथादोषंविसर्पानुविदाहिभिः॥ १॥
पूर्वंविसर्पेऽसृङ्मोक्षंकुर्य्याल्लंघनरूक्षणम्।

पटोलपिचुमर्द्दाभ्यांपिप्पल्यामदनेनच ॥ २ ॥
विसर्पवमनंशस्तंतथाचेन्द्रयवैःसह ।
मदनंमधुकंनिम्बंवत्सकस्यफलानिच ॥ ३ ॥
मदनश्चविधातव्यंविसर्पेकफपित्तजे ॥ ४ ॥

अर्थ–विसर्परोगमें विरेचन, वमन, प्रलेप, सेक और रक्तमोक्षण, यह सब उपचार करने चाहिये, तथा विदाही क्रियाके द्वारा दोषानुसार विसर्प रोगकी चिकित्साकरै। विसर्परोगमें सबसे प्रथम रक्तमोक्षण, लंघन और रूक्षक्रिया प्रयोगकरै । पटोल, नीम, पीपल, मैनफल और इन्द्रजोके द्वारा विसर्प रोगीको वमन करावै । मैनफल, मुलेठी, नीम और इन्द्रजौ इनकेद्वारा कफपित्तज विसर्परोगमें वमन करावै ॥ १ ॥ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥

त्रिवृच्चूर्णसमालोडयसर्पिषापयसापिवा ।
उष्णाम्बुनाचपातव्यंविसर्पेचविरेचनम् ॥ ५ ॥
द्राक्षारग्वधकाश्मर्य्यत्रिफलामण्डबीजकैः ।
त्रिवृद्धरीतकीभिश्चविसर्पेशोधनंहितम् ॥ ६ ॥
पुराणाजांगलरसैःशस्ताःशालियवादयः ।
वातेस्निग्धंहिमंपित्तेरूक्षंश्लेष्मणियोजयेत् ॥ ७ ॥

अर्थ–निसोतकाचूर्ण घृतके साथ अथवा दूधके साथ या गरम जलके साथ विरेचन करानेकेलिये विसर्प रोगीको देवै । दाख, अमलतास, कुम्भेर, हरड़, बहेड़ा, आमला, और अण्डके बीजोंका क्काथ तथा निसोत और हरड़का क्काथ विसर्प रोगमें विरेचन करानेके लिये देवै । पुराने शालिधानोंके चावल, यव आदि अन्न और जांगलदेशके पशु पक्षियोंके मांसकारस विसर्प रोगमें हितकारीहै । वातज विसर्प रोगमें स्निग्ध क्रिया, पित्तज विसर्प रोगमें शीतल क्रिया और कफज विसर्परोगमें रूक्ष क्रिया करनी चाहिये ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥

कुष्ठंशताह्वासुरदारुमुस्तावाराहिकुस्तुम्बुरुकृष्णगन्धाः
वातेऽर्कवंशार्त्तगलाश्चयोज्याःसेकेषुलेपेषुतथाघृतेषु ८॥

रास्नानीलोत्पलंदारुचन्दनंमधुकंबला।
क्षीरसर्पिर्युतोलेपोवातवीसर्पनाशनः॥ ९॥

अर्थ-कूठ, सोया, देवदारु, नागरमोथा, वाराहीकंद, धनिया, सौंजिना, आक, बाँस, और नीलीकटसरैया इनके क्वाथसे परिषेक अथवा इन सबको पीसकर घृतकेसाथ मिलाकर प्रलेप करनेसे वातज विसर्प रोग नष्ट होताहै। रास्ना, नीलोत्पल, देवदारु, चन्दन, मुलेठी, और खिरैटीको दूधमें पीसकर घृत मिलाकर लेपकरनेसे वातज विसर्प रोग दूर होताहै॥ ८॥ ९॥

प्रपौण्डरीकमंजिष्ठापद्मकोशीरचन्दनैः।
सयष्टीन्दीवरैः पित्तेक्षीरपिष्टैः प्रलेपनम्॥ १०॥
कशेरु शृङ्गाटकपद्मगुन्द्रा सशैवलासोत्पल कर्दमाश्च।
वस्त्रान्तराःपित्तकृतेविसर्पेलेपाविधेयाःसघृताःसुशीताः॥

अर्थ-पुण्डेरिया, मजीठ, कमल, खस, लालचंदन, मुलेठी, और नीलेकमल इन सबको दूधमें पीसकर प्रलेपकरनेसे पित्तजन्य विसर्पनष्ट होताहै, कशेरू, सिंघाड़े, कमल, गुन्द्रतृण, सिवार, उत्पल और कर्दम इन सबको घृतके साथ पीसकर वस्त्रपै लपेटकर लेपकरनेसे पित्तज विसर्प रोग दूर होताहै॥ १०॥ ११॥

सघृतंलेपनंश्रेष्ठंजम्बूत्वक्पंचवल्कलम्।
प्रदेहःपरिसेकश्चशस्यतेपंचवल्कलैः॥ १२॥
पद्मकोशीरमधुकैश्चन्दनैर्वाप्रशस्यते।
सेकोमधूदकैर्दुग्धैःशर्करेक्षुरसैः सह॥ १३॥
यवचूर्णसमधुकंसघृतंस्यात्प्रलेपनम्।
मृणालंचन्दनंलोध्रमुशीरंकमलोत्पलम्॥ १४॥
शारिवामलकीपथ्यालेपःपित्तविसर्पहा॥ १५॥

अर्थ-जामुनकीछाल और पंचवल्कलको एकत्र पीस घीमें मिलाकर लेपकरनेसे, अथवा केवल पंचवल्कलोंको पीसकर लेपकरनेसे, या पंचवल्कलोंका काढ़ाबनाकर सींचनेसे विसर्परोग नष्ट होताहै। पद्माख,

खस, मुलेटी, लालचंदन, इनका काढ़ा बनाकर परिषेक करनेसे अथवा इन सबको पीसकर लेप करनेसे विसर्प नष्ट होताहै । महुएके जलसे या खाँड और ईखके रसको मिलाकर दूधसे सींचनेसे अथवा जौका चून और मुलहटीको घीमें पीसकर प्रलेप करनेसे विसर्प रोग नष्ट होताहै । कमलकी नाल, चन्दन, लोध, खस, कमल, कुमुद, सारिवा, आमला, और हरड़, इनको पीसकर लेप करनेसे पित्तज विसर्प रोग नष्ट होताहै ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥

गायत्रीसप्तवर्णाब्दधवारग्वधदारुभिः ।
कुरुण्टकैर्भवेल्लेपोविसर्पेश्लेष्मसम्भवैः ॥ १६ ॥
धवेत्यत्रवासेतिकुरुण्टकैरित्यत्रकुटन्नकै-
रितिचनपाठश्चरकादावदर्शनात् ॥ १७ ॥
त्रिफला पद्मकोशीरसमंगाकरवीरकम् ॥
दशमूलसमन्ताचलेपःश्लेष्मविसर्पहा ॥ १८ ॥

अर्थ-खैर, सतौनेकीछाल, नागरमोथा, धववृक्षकीछाल, अमलतासके पत्ते, देवदारु, और पियाबाँसा इन सब औषधियोंको जलमें पीसकर लेपकरनेसे कफ जन्य विसर्परोग आराम होताहै । हरड़, बहेड़ा, आमला, पद्माख, खस, मजीठ, कनेरकी जड़, नलकीजड़ और थूहरकेपत्र इन सबको पीसकर लेप करनेसे श्लेष्मजन्य विसर्प रोग दूर होता है ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥

पटोलचंदनारिष्टगुडूचीवृषपद्मका ।
क्काथोल्पपंचमूलाद्वासघृतोवातिकेहितः ॥ १९ ॥
मुस्तारिष्टपटोलानांक्काथःसर्वविसर्पहा ।
धात्रीपटोलमुद्गानामथवापिघृतान्वितः ॥ २० ॥
पटोलारिष्टदार्वीत्वक्तिक्तात्रायन्तिकासमा ।
सयष्टीमधुकाःसर्वान्विसर्पान्घ्नन्तिपानतः ॥ २१ ॥

अर्थ-परवल, लालचंदन, नीमकीछाल, गिलोय, अडूसा और पद्माख, इन काक्काथ अथवा पंचमूलका क्काथ घृतके साथ पानकरनेसे वातज-

न्य विसर्परोग दूर होताहै। नागरमोथा, नीमकी छाल, और पटोल इन तीन औषधियोंका काढ़ा बनाकर पीनेसे सर्वप्रकारके विसर्परोग नष्ट होतेहैं। आमला, पटोल, और मूगका क्वाथ घृतके साथ पान करनेसे सर्व प्रकारके विसर्परोग दूर होतेहैं। पटोल, नीमकी छाल दारुहलदी कुटकी, त्रायमाण और मुलेठीका क्वाथ पीनेसे सर्व प्रकारके विसर्प रोग नष्ट होतेहैं ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥

अमृतविषपटोलंनिम्बपत्रैरुपेतं
त्रिफलखदिरसारव्याधिघातंचतुल्यम्।
क्वथितमिदमशेषंगुग्गुलोर्भागयुक्तं
जयतिविषविसर्पकुष्ठमष्टादशाख्यम् ॥ २२ ॥

इतिबृहदमृतादिः।

अर्थ-गिलोय, अडूसा, पटोल, नीमकेपत्ते, हरड़, बहेड़ा, आमला, खैरसार, और अमलतासका गूदा इनके क्वाथमें गूगल डालकर पीनेसे विषविकार, विसर्परोग और अठारह प्रकारके कोढ़ दूर होते हैं ॥

अमृतवृषपटोलंमुस्तकंसप्तपर्णं
खदिरमसितवेत्रंनिम्बपत्रंहरिद्रे।
विविधविषविसर्पान्कुष्ठविस्फोटकण्डूः
अपनयतिमसूरींशीतपित्तज्वरञ्च ॥ २३ ॥
अत्राविरेकार्थंगुग्गुलुंकेचित्क्षिपन्ति।

इति अमृतादिः।

अर्थ-गिलोय, पटोल, नागरमोथा, सतवनकी छाल, खैर, कृष्णबेंत, नीमके पत्ते, हलदी और दारुहलदी, इन सब औषधियोंका क्वाथ बनाकर पीनेसे नाना प्रकारके विष विकार, अनेक प्रकारके विसर्परोग, कुष्ठ, विस्फोट, कण्डू, मसूरिका, शीतपित्त और ज्वर दूर होताहै। इस क्वाथसे दस्त कराने होय तौ गूगल डालकर पान करै ॥ २३ ॥

कुष्ठेषुयानिसर्पीषिव्रणविस्फोटकेषुच।

विसर्पेतानियुञ्जीतपानालेपनसेचनैः ॥ २४ ॥
विशेषेणमहातिक्तंकुष्ठोक्तंयोजयेद्भिषक् ॥ २५ ॥

अर्थ-कुष्ठरोगमें, व्रण रोगमें और विस्फोट रोगमें जो जो घृत कहे-हैं वह सब विसर्परोगमें पान, प्रलेप और सेचनके लिये देवै। विशेष करकै कुष्ठरोगमें कहाहुआ महातिक्त घृत विसर्प रोगमें विशेष हित-कारीहै ॥ २४ ॥ २५ ॥

मृतंताम्राभ्रतीक्ष्णानांभस्ममाक्षिकगन्धकम् ।
वन्ध्याकर्कोटकद्रावैस्तुल्यंमर्द्यंदिनावधि ॥ २६ ॥
वन्ध्याकर्कोटिकांपिष्ट्वास्थाप्यंलेप्यंमृदावहिः ।
भूधराख्येपुटेपच्यादिनैकंतंविचूर्णयेत् ॥ २७ ॥
रसःकालाग्निरुद्रोऽयंदशाहेनविसर्पनुत् ।
पिप्पलीमधुसंयुक्तमनुपानंप्रकल्पयेत् ॥ २८ ॥

इतिकालाग्निरुद्ररसः ।

अर्थ-ताँबेकी भस्म, अभ्रककीभस्म, तीक्ष्णलोहेकी भस्म, सोनामा-खी और गंधक यह सब औषधि समान भागलेकर बाँझककोड़के रस में एकदिन खरलकरै, फिर बाँझककोड़िको पीस उसमें पूर्वोक्त खरल किये हुए द्रव्यको रख कपरमिट्टीकर एकादिन भूधरयंत्रमें पकावै, जब स्वांग शीतल होजाय तब चूर्ण करले, यह कालाग्निरुद्ररस-दशरोजमें विसर्प रोगको दूर करैहै, अनुपान-पीपल और सहत ॥२६॥२७॥२८॥

त्यजेद्विदाहिपानान्नंविरुद्धंस्वपनंदिवा ।
क्रोधप्रवातव्यायामसन्तापंचाग्निसूर्ययोः ॥ २९ ॥

इति विसर्पाऽध्यायः ।

अर्थ-विदाहि अन्नपान, दुग्धमत्स्यादि विरुद्ध द्रव्य, दिवानिद्रा, क्रोध, प्रवाल वायु, व्यायाम, अग्निका ताप और धूप यह सब विसर्परोगीके अवश्य २ त्यागकरदेवै ॥ २९ ॥

इतिविसर्प रोगाऽध्यायः ।

अथ विस्फोटचिकित्सामाह ।

तत्रादौलंघनंकार्यंवमनंलघुभोजनम् ।
तथादोषबलंवीक्ष्ययुक्तियुक्तंविरेचनम् ॥ १ ॥
पटोलेन्द्रयवारिष्टवचामदनसाधितम् ।
प्रदद्याद्वमनेक्काथंविस्फोटेकफपित्तजे ॥ २ ॥

अर्थ-विस्फोटकरोगमें प्रथम लंघन, वमन, हलका भोजन और दोषानुसार युक्तिके साथ विरेचन करावै। पटोल, इन्द्रजो, नीमकी छाल वच, और मैनफल इनका क्वाथ बनाकर पीनेसे कफपित्तज विसर्प रोग आराम होताहै ॥ १ ॥ २ ॥

यूषैःसनिम्बैर्मुद्गाद्यैःपटोलाद्यैश्चतिक्तकैः ।
लंघितंभोजयेद्वैद्योजीर्णशालियवादिकम् ॥ ३ ॥
शिरीषोशीरनागाह्वहिंस्राभिर्लेपनाद्द्रुतम् ।
विषवीसर्पविस्फोटाःप्रशाम्यन्तिनसंशयः ॥ ४ ॥
चंदनंनागपुष्पंचतण्डुलीयकशारिवे ।
शिरीषवल्कलंजातीलेपःस्याद्दाहनाशनः ॥ ५ ॥
शिरीषयष्टीनतचन्दनैलामांसीहरिद्राद्वयकुष्ठबाणैः ॥
लेपोदशाङ्गःसघृतःप्रदिष्टोविसर्पकण्डूज्वरशोथहारी ॥६
शिरीषोदुम्बरौजम्बूसेकलेपनयोर्हिताः ॥ ७ ॥

अर्थ-लंघन कराये हुए विस्फोट रोगीको नीम मूंगादि या पटोलादि कड़वे द्रव्योंके यूषके साथ पुराने चावल अथवा यवादि अन्न भोजन करनेके लिये देवै। सिरसकी छाल, खस, नागकेशर, और कटेरी, यह सब समान भागले जलके साथ पीसकर प्रलेप करनेसे शीघ्रही विष विकार, विस्फोट, और विसर्परोग शान्तहोताहै। लाल चन्दन, नागकेशर चौंलाई, अनन्तमूल, सिरसकी छाल और चमेलीके पत्ते समान भाग लेकर लेप करनेसे विस्फोटजन्य दाह दूर होतीहै। सिरसकी छाल, मुलेठी, तगर, लालचंदन, इलायची, वालछड, हलदी, दारुहलदी, कूठ और रामसर यह सब समान भागले घृतके साथ पीसकर लेपकरनेसे विसर्प, कण्डू, ज्वर और सूजन दूर

होतीहै । सिरसकी छाल, गूलरकी छाल, और जामुनकी छाल पीसकर लेप करनेसेअथवा इनका क्काथ बनाकर सींचनेसे विस्फोट और विसर्पादि रोग दूर होतेहैं ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥

द्विपंचमूलीरास्नातुदार्व्युशीरदुरालभाः ।
धान्यमुस्तामृताक्काथोवातविस्फोटनाशनम् ॥ ८ ॥
द्राक्षाकाश्मर्य्यखर्ज्जूर पटोलारिष्ट पर्पटैः ।
लाजाकुलत्थदुरपर्शैःक्काथःपित्तेसितायुतः ॥ ९ ॥
भूनिम्बनिम्बत्रिफलायासेन्द्रयववालकैः ।
सपटोलाम्बुदैःक्काथःसक्षौद्रः कफजे हितः ॥ १० ॥
पटोलामृतभूनिम्बवासकारिष्टपर्पटैः ।
खदिराब्दयुतैःक्काथःविस्फोटार्त्तिज्वरापहः ॥ ११ ॥

अर्थ-दशमूल, रास्ना, दारुहलदी, खस, धमासा, धनिया, नागरमोथा और गिलोय, इनका क्काथ पान करनेसे वातजन्य विस्फोट दूर होतेहैं । दाख, कुम्भेर, खजूर, पटोल, नीमकी छाल, पित्तपापड़ा, खीलैं, कुलथी और धमासा इनका क्काथ बना बूरामिलाके पानकरनेसे पित्तजनित विसर्प रोग दूर होताहै। चिरायता, नीमकी, छाल हरड़, बहेड़ा आमला, धमासा, इन्द्रजौ, सुगंधवाला, पटोल और नागरमोथा इनके क्काथमें सहत डालकर पान करनेसे कफजन्य विस्फोट दूरहोते हैं । परवल, गिलोय, चिरायता, अडूसा, नीमकी छाल, पित्तपापडा, खैर और नागरमोथा, इनका काढ़ा पीनेसे विस्फोट और ज्वर दूर होता है ॥ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥

पटोलत्रिफलारिष्टगुडूचीमुस्तचन्दनैः ।
समूर्वारोहिणीपाठारजनीसदुरालभा ॥ १२ ॥
कषायंपाययेदेतत्पित्तश्लेष्मरुजापहम् ।
कण्डूत्वग्दोषविस्फोटविषवीसर्पनाशनम् ॥ १३ ॥
भूनिम्बवासाकटुकापटोलफलत्रिकंचन्दननिम्बसिद्धः ।
विसर्पदाहज्वरवक्त्रशोषविस्फोटतृष्णावमिनुत्कषायः॥१४॥

अर्थ–पटोल, हरड़, बहेड़ा, आमला, नीमकी छाल, गिलोय, नागरमोथा, लालचंदन, मूर्वा, कुटकी, पाढ़, हलदी और धमासा, इन सबका काथ बनाकर पीनेसे पित्तश्लेष्मकी पीड़ा, कण्डू, चर्मदोष, विस्फोट विषदोष और विसर्परोग नष्ट होजाताहै । चिरायता, अडूसा कुटकी, पटोल, हरड़, बहेडा, आमला, लालचंदन और नीमकी छाल, इन औषधियोंका काथ बनाकर पीनेसे विसर्प, दाह, ज्वर, मुखशोष, विस्फोट, तृषा और वमन दूर होतीहै ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥

पटोलसप्तच्छदनिम्बवासाफलात्रिकाच्छिन्नरुहाविपक्कम् ।
तत्पंचतिक्तं घृतमाशुहन्तित्रिदोषविस्फोटविसर्पकण्डून् १५

इति पञ्चतिक्तघृतम् ।

अर्थ–गायकाघी दोसेर, त्रिफलेका काथ आठसेर, जल आठसेर, और कल्ककेलिये पटोल, सतवनकी छाल, नीमकी छाल, अडूसेकी छाल, डरड़, बहेड़ा आमला और गिलोय यह सब आधसेर । यथाविधिसे घृतको सिद्धकरै । यह घृत–त्रिदोषज विस्फोट, विसर्प और कण्डू को नष्ट करैहै ॥ १५ ॥

पद्मकंद्विनिशायष्टित्रुटिशेलूनतामयाः ।
शिरीषक्रिमिजिद्द्राक्षासिक्थतुत्थकपित्थकैः ॥ १६ ॥
पत्रनागाह्वलोध्रैश्चकल्कैःसिद्धंजलेघृतम् ।
विस्फोटान्ज्वरविसर्पान्दोषकीटक्षताधिकान् ॥ १७ ॥
हन्तिनाडीमगस्त्योक्तंमहापद्मकसंज्ञितम् ॥ १८ ॥

इति महापद्मकघृतम् ।

अर्थ–गायकाघी २ दोसेर, जल आठसेर, तथा कल्कके लिये पद्माख, हलदी, दारुहलदी, मुलेठी, छोटी इलायची, लिसोंडे, तगर, कूंट, सिरसकी छाल, वायविडंग, दाख, मोम, तूतिया, कैथ, तेजपात, नागकेशर, और लोध, यह सब आधसेर, सबको मिलाकर यथाविधिसे घृतको सिद्धकरै । इस घृतको सेवन करनेसे विस्फोट, ज्वर, विसर्पादि रोग दूर होतेहैं ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥

कम्पिल्लधातकीमूर्वाविडंगागुरुचन्दनैः ।
पटोलत्रिफलारिष्टबलालोध्रप्रियंगुभिः ॥
कलिंगेनाथखादिरैस्तैलंपक्वन्तुरोपणम् ॥ १९ ॥

इति विस्फोटाऽध्यायः ।

अर्थ-तेल दो सेर, जल आठसेर, कबीला, धायके फूल, मूर्वा वायविडंग, अगर, चंदन, पटोल, त्रिफला, नीमकी छाल, खिरैटी, लोध, खैर, फूलप्रियंगू और इन्द्रजो इनका क्वाथ ८ आठसेर और कल्कके लिये येही औषधि आध सेर । यथाविधिसे तेलको सिद्ध करै । इस तेलको प्रयोग करनेसे विस्फोटक के घाव भरजाते हैं ॥ १९ ॥

इति विस्फोटाऽध्यायः ।

अथ स्नायुकचिकित्सामाह ।

विसर्पभेषजंसर्वंस्नायुकेऽपिप्रयोजयेत् ।
स्नेहस्वेदप्रलेपादिकर्म्मकुर्य्याद्यथाक्रमम् ॥ १ ॥
स्वेदात्स्नायुकमत्युग्रंभेककांजिकसाधितम् ।
हन्तिहिज्जलकंबीजंपिष्टंतद्वत्प्रलेपनात् ॥ २ ॥
शोभाञ्जनमूलदलैःकाञ्जिकापिष्टैश्चसलवणैर्लेपः ।
हन्तिस्नायुकरोगंयद्वामोचत्वचोलेपः ॥ ३ ॥

अर्थ-जो औषधी विसर्प रोगमें कही है वही औषधी स्नायु रोगमें भी देनी चाहिये, यथा क्रमसे स्नायुक रोगमें स्नेह, स्वेद और प्रलेपादि क्रिया प्रयोग करे । मैडकको काँजीमें औटा कर बफारा देनेसे स्नायुक रोग आराम होता है । अथवा हिज्जलके बीजोंको पीसके प्रलेप करनेसे स्नायुक रोग दूर होता है । सैंजिनेकी जड और पत्तोंको काँजीमें पीस लवण मिलाकर लेप करनेसे अथवा केलेकी छालको पीसकर लेप करनेसे स्नायुक रोग दूर होताहै ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥

सप्तपर्णशिफाकल्कःपानालेपःप्रयोगतः ।
त्र्यहात्स्नायुकरोगोघ्नोदृष्टोवारसहस्रशः ॥ ४ ॥

गव्यंसर्पिरुपयहंपीत्वानिर्गुण्डीस्वरसंत्र्यहम् ।
पिबेत्स्नायुकमत्युग्रंहन्त्यवश्यंनसंशयः ॥ ५ ॥
हिंगुवांशीजतोयेनमूलंवाकारवेलजम् ।
घृतेनैरण्डमूलंवापिबेत्स्नायुकशान्तये ॥ ६ ॥
इति स्नायुकरोगाऽध्यायः ।

अर्थ-सतोनेकी जडको पीसकर पान करनेसे अथवा लेप करनेसे तीन दिनमें स्नायु रोग दूर होता है । प्रथम गायके घीको पीकर पश्चात् सम्हालूके पत्तोंका रस पीवै तौ तीन दिनमेंही स्नायुक रोग दूर होवै । वंशलोचनके क्वाथमें हींग अथवा करेलेकी जड्को पीसकर सेवन करनेसे या अंडकी जडको घृतके साथ पीसकर सेवन करनेसे स्नायुकरोग दूर होता है ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥

इति स्नायुरोगाऽध्यायः ।

अथ मसूरीचिकित्सामाह ।

तत्रादौवमनंयुंज्यात्तथालंघनपाचनम् ॥
सर्वेषांवमनंपूर्वंपटोलारिष्टबालकैः ॥ १ ॥
कषायैश्ववचावत्सयष्ट्याह्वफलकल्कितैः ।
सक्षौद्रंपाययेद्ब्रह्म्यारसंवाहैलमोचिकम् ॥ २ ॥
श्वेतचंदनकल्काक्षंहिलमोचीभवंरसम् ।
पिबेन्मसूरिकारम्भेनैम्बंवाकेवलंरसम् ॥ ३ ॥

अर्थ-मसूरिका रोगमें प्रथम वमन, लंघन और पाचन करावै । मसूरिका रोगमें सबसे प्रथम पटोल, नीम और सुगंधवाला, इनके रसके द्वारा अथवा वच, इन्द्रजौ, मुलेठी और मैनफल, इनके क्वाथ के द्वारा वमन करावै । मसूरिका के उत्पन्न होनेके पहिले ही ब्राह्मीका रस सहत डालकर या हिलमोचिकाके रसमें सहत डालकर अथवा सफेद चंदनको हिलमोचिका के रसमें पीसकर पीनेको देवै ॥ १ ॥ ॥ २ ॥ ३ ॥

असवीपत्रनिर्यासंहरिद्राचूर्णसंयुतम् ।
रोमान्तीज्वरविस्फोटमसूरीशान्तयेपिबेत् ॥ ४ ॥
वान्तस्यरेचनंदद्यंवमनंचावलेनवै ।
उभाभ्यांहृतदोषस्यविशुद्धचंन्तिमसूरिकाः ॥ ५ ॥
निर्विकारालपपूयाश्चपच्यन्तेचाल्पवेदनाः ।
रुद्राक्षंमरिचैर्युक्तंपीतंपर्युषिताम्बुना ॥ ६ ॥
त्र्यहात्पापरुजंहन्तिदृष्टंवारसहस्रशः ॥ ७ ॥

अर्थ-करेलेकारस अथवा करेले को पीसकर हलदीका चूर्ण मिलाकर पीनेसे रोमान्ती ज्वर, विस्फोट और मसूरिका रोग दूर होता है। छर्दिवाले मनुष्यको विरेचन और जो दुर्बल होय तौ फिरभी वमन करावै। इन दोनों विधिसे मसूरिका दोषहीन होकर शुद्ध हो जाती हैं, निर्विकार, अल्पराधवाली, शीघ्र पकजाती है और थोडी पीडा होती है। रुद्राक्ष और कालीमिरच दोनों को एकत्र बासी जलमें पीस कर तीन दिनतक सेवन करनेसे मसूरिका रोग दूर होता है ॥ ४ ॥ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥

बिल्वस्यकण्टकाःसप्तसंयुक्तामरिचेनच ।
पिष्ट्वाव्युषिततोयेनपीताःपापरुजापहाः ॥ ८ ॥
यावत्संख्यामसूर्य्यङ्गेतावाद्भिःशेलुजैर्दलैः ।
छिन्नैरातुरनाम्नातुगुडूचीचेतिनवर्द्धते ॥ ९ ॥
चैत्रासितभूतदिनेरक्तपताकान्वितास्नुहीभवान् ।
धवलितकलसन्यस्तापापरुजंदूरतोधत्ते ॥१०॥
वाणीरबिल्वजनितक्काथंपर्युषितमुत्तमेदिवसे ।
चैत्रस्यपापरोगःपिबतांनभवेद्ध्रुवंचेत् ॥ ११ ॥

अर्थ-बेलके सातकाँटे और कालीमिरचोंको एकत्र बासी जलमें पीसकर सेवन करनेसे मसूरिका रोग दूरहोताहै। शरीरमें जितनी मसूरिका की फुंसी होवैं, उतनेही लिसोड़ेके पत्तोंको रोगीका नाम लेलेकर छेदता

जावै, इससे मसूरिकाकी फुंसी नहीं बढ़तीहै। चैत्रके महीनेके कृष्णपक्षके प्रथम दिन थूहरके पत्तोंपै लाल पताका बना सफेद कलशमें रखनेसे वसन्त रोग दूरहोताहै। वेंत और बेलका क्काथ बनाकर बासी जलके साथ चैत्रके महीनेके उत्तम दिनमें पीनेसे निश्चय पापरोग नाशहोताहै॥ ८॥ ९॥ १०॥ ११॥

वेणुत्वक्स्वरसोलाक्षाकार्पासास्थिमयूरकः।
यवपिष्टंविषंसर्पिर्वचाब्राह्मीसुवर्च्चला॥ १२॥
आदौधूपाद्यथालाभमेतैर्वाशुमसूरिका।
नश्यन्त्यल्परुजापूयानिर्विकाराभवन्तिच॥ १३॥

अर्थ-बाँसकी छालकारस, लाख, बिनौले, तूतिया, जौकाचून, विष, घी, वच, ब्राह्मी, और ब्रह्मसुवर्चला, इनमेंसे जितनी औषधि मिले उनकी धूपदेवै। इससे निश्चय मसूरिका रोग नष्टहोताहै तथा मसूरिका रोगकी पीडा दूरहोतीहै, राधरहित होजातीहै, और दोषरहित होजातीहै॥ १२॥ १३॥

द्विपंचमूलीरास्नाचदार्व्युशीरंदुरालभाः।
सामृतंधान्यकंमुस्तंजयेद्वातसमुत्थिताम्॥ १४॥
गुडूचीमधुकंरास्नापंचमूलंकनिष्ठकम्।
चंदनंकाश्मर्यफलंबलामूलंविकंकतम्॥
पाककालेमसूर्य्यास्तुवातजायांप्रयोजयेत्॥ १५॥

अर्थ- दशमूल, रास्ना, दारुहलदी, खस, गिलोय, धनिया, और नागरमोथा इनका क्काथ पीनेसे वातजनित मसूरिका रोग नष्टहोताहै। गिलोय, मुलेठी, रास्ना, स्वल्पपंचमूल, लालचंदन, कुम्भेरकाफल, खिरैटीकीजड़, और विकंकत, इनका क्काथ वातजनित मसूरिकाकी फुंसियोंके पकनेके समय पीनेको देवै॥ १४॥ १५॥

श्यामापर्पटकारिष्टचंदनद्वयरेणुकैः।
धात्रीतिक्तवृषोशीरयासैश्चक्काथितंजलम्॥ १६॥

पीतंमसूरिकांहन्तिपित्तजांदाहसंयुताम् ।
द्राक्षाकाश्मर्यखर्जूरपटोलारिष्टवासकैः ॥ १७ ॥
लाजामलकदुस्पर्शैःसितायुक्तन्तुपैत्तिके ॥ १८ ॥

शर्कराप्रक्षेपः ।

अर्थ–श्यामलता,पित्तपापड़ा, नीमकीछाल, सफेद चन्दन, लालचंदन, रेणुका, आमला, कुटकी, अडूसा, खस, और धमासा, यह सब समान भागलेकर काथ बनाकर पीनेसे दाह संयुक्त पित्तजन्य मसूरिका रोग दूरहोताहै। दाख, कुम्भेर, खजूर, पटोल, नीमकी छाल, अडूसेकीछाल, खीलैं, आमला और धमासा इनका काथ बना बूरा डालकर पीनेसे पित्तजन्य मसूरिका रोग दूरहोताहै ॥ १६ ॥ १७॥ १८ ॥

शिरीषोदुम्बराश्वत्थशेलुन्यग्रोधवल्कलैः ।
प्रलेपःसघृतःशीघ्रंव्रणवीसर्पदाहहा ॥ १९ ॥
शेलूकक्कतशीताम्भःसेकेवाकायशोधने ।
दुरालभांपर्पटकंभूनिम्बंकटुरोहिणीम् ॥ २० ॥
श्लैष्मिक्यांपित्तजायान्तुपानेनिःक्वाथ्यदापयेत् ।
अमृतादिकषायन्तुजयेत्पित्तकफान्विताम् ॥ २१ ॥

अर्थ–सिरसकीछाल, गूलरकी छाल, पीपलकी छाल, लिसोड़ेकीछाल, और वड़की छाल, इन सबको घृतकेसाथ पीसकर प्रलेप करनेसे माता-रोगके घाव, विसर्प और दाह दूरहोतीहै। लिसोड़ेकी छालके शीतल क्वाथसे सींचनेसे मसूरिका रोग आराम होताहै। धमासा, पित्तपापड़ा, चिरायता,और कुटकी,इनके काथके पीनेसे श्लैष्मिक और पित्तज मसूरिकारोग दूरहोताहै । अमृतादि काथको पीनेसे पित्तश्लैष्मिक मसूरिका रोग दूरहोताहै ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥

निम्बंपर्पटकांपाठांपटोलंकटुरोहिणीम् ।
वासांदुरालभांधात्रीमुशीरंचंदनद्वयम् ॥ २२ ॥
एषनिम्बादिकःख्यातःसितयाचसमन्विताः ।

हन्तित्रिदोषमसूरींज्वरवीसर्पसम्भवाम् ॥ २३ ॥
उत्थितांप्रविशेद्यातुपुनस्तावाह्यतोनयेत् ॥ २४ ॥

इति निम्बादिः ।

अर्थ-नीमकीछाल, पित्तपापड़ा, पाढ़, पटोल कुटकी, अडूसेकीछाल धमासा, आमला, खस, सफेद चंदन और लालचंदन इनका क्वाथ बना मिश्री मिलाके पीनेसे त्रिदोषजमसूरिका, ज्वर, और विसर्प रोग नष्ट होताहै ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥

कांचनालत्वचःक्वाथःस्वर्णमाक्षिकचूर्णितः ।
निहत्यान्तंप्रविष्टान्तुमसूरींवाह्यतोनयेत् ॥ २५ ॥
बिल्वपत्ररसेनैवमूर्च्छितःपारदोरसः ।
हिलमोचीरसोहन्तिपीतोमधुसमायुतः ॥ २६ ॥
मसूरींसर्वजांशीघ्रमास्थिजांसर्वदेहजाम् ॥ २७ ॥

अर्थ-कचनारकी छालके क्वाथमें सोनामाखीका चूर्ण डालकर पीनेसे अन्तःप्रविष्ट मसूरिका शरीरके बाहर निकल आतीहै । वेलके पत्तोंके रससे मूर्च्छित कियेहुए पारेको हुलहुल शाकके रसके और सहतके साथ सेवन करनेसे अस्थिजात और सर्वदेह जात सर्व प्रकारका मसूरिका रोग नष्ट होताहै ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥

पटोलकुण्डलीमुस्तवृषधन्वयवासकैः ।
भूनिम्बनिम्बकटुकांपर्पटैश्चशृतंजलम् ॥ २८ ॥
मसूरींशमयेदामंपक्वाञ्चैवविशोधयेत् ।
नातःपरतरंकिंचिद्विस्फोटज्वरशान्तये ॥ २९ ॥

इतिपटोलादिः ।

अर्थ-पटोल, नीमकी छाल, कुटकी, गिलोय, नागरमोथा, अडूसेकी छाल, धमासा, चिरायता और पित्तपापड़ा, इनका क्वाथ बनाकर पीनेसे अपक्वमसूरिका शमन होतीहै, पक्वमसूरिका शुद्ध होतीहै, तथा विस्फोट और ज्वर निश्चय नष्ट होताहै ॥ २८ ॥ २९ ॥

पटोलमूलारुणतण्डुलीयकंपिबेद्धरिद्रामलकल्कसंयुतम् ।
मसूरीविस्फोटविदाहशान्तयेतदेवरोमान्तिवमिज्वरापहः३०
पटोलमूलारुणतण्डुलीयकंतथैवधात्रीखदिरेणसंयुतम् ।
पिबेज्जलंसुक्कथितंसुशीतलंमसूरिकारोगविनाशनंपरम्३१॥

अर्थ-पटोलकीजड़, लालचौंलाई, हलदी और आमला, एकत्र पीसकर सेवनकरनेसे मसूरिका और विस्फोट जन्य दाह तथा रोमान्तिकज्वर और वमन दूर होतीहै । पटोलकी जड़, लाल चौंलाई, आमला और खैर इनका क्काथ शीतलकर पीनेसे निश्चय मसूरिकारोग नष्ट होताहै ॥ ३० ॥ ३१ ॥

खदिरात्रिफलारिष्टपटोलामृतवासकैः ।
क्काथोऽष्टकांगोजयतिरोमान्तिकमसूरिकाः ॥ ३२ ॥
कुष्ठविस्फोटवीसर्पकण्ड्वादीनपिपानतः ॥ ३३ ॥

इतिखदिराष्टकः ।

अर्थ-खैर, हरड़, आमला, बहेड़ा, पटोल, गिलोय, अडूसेकीछाल और नीमकी छाल, इनका क्काथ पीनेसे रोमान्तिक मसूरिका रोग, कुष्ठ, विस्फोट, वीसर्प और कण्ड्वादि रोग दूर होतेहैं ॥ ३२ ॥ ३३ ॥

पाककालेतुसर्वास्ताविशोषयतिमारुतः ।
तस्मात्संबृंहणंकार्य्यंनतुपथ्यंविशोषणम् ॥ ३४ ॥
गुडूचीमधुकंद्राक्षामोरटंदाड़िमैःसह ।
पाककालेतुदातव्यंभेषजंगुडसंयुतम् ॥
तेनपाकंव्रजत्याशुनचवायुःप्रकुप्यति ॥ ३५ ॥

गुड़प्रक्षेपः ।

अर्थ-पकनेके समय मसूरिका पवन सुखादेतीहै, इसकारण इसपै विशोषक पथ्य नहीं देवै, पुष्टिकारक पथ्य देवै । गिलोय, मुलेठी, दाख, मोरटलता और अनारकी छाल, इनका क्काथ बना गुड़ डालके मसूरिकाके पकनेके समय पीवै, इससे मसूरिका शीघ्रही पकजातीहै और वात कुपित नहीं होती ॥ ३४ ॥ ३५ ॥

लिह्याद्वावादरंचूर्णंपाचनार्थंगुडेनतु ।
अनेनाशुत्रिपच्यन्तेवातपित्तकफात्मिका ॥ ३६ ॥
शूलाध्मानपरीतस्यकाम्यमानस्यवायुना ।
धन्वमांसरसाःशस्ताईषत्सैन्धवसंयुताः ॥ ३७ ॥
पंचमुष्टिकयूषस्तुदोषत्रयहरंपरम् ।
साधितो दशमूलार्द्धंशृतेनधन्वजोरसः ॥ ३८ ॥
हन्तिकाम्यंप्रलापंचेत्यनुभूतमनेकधा ॥ ३९ ॥

अर्थ–बेरोंका चूर्ण गुड़में मिलाकर सेवन करनेसेभी मसूरिका पकजातीहै । शूल और आध्मानसे पीड़ित तथा वायुसे कम्पायमान मनुष्यको जंगलदेशके जीवोंके मांसका रस सैंधेनोनके साथ सेवन करनेसे विशेष लाभ होताहै । बेर, कुलथी, मूँग, मूली और सोंठ, इनका यूष पीनेसे त्रिदोषज मसूरिका रोग दूर होजाताहै । दशमूलके साथ, जांगलमांसका रस बनाकर पीनेसे कम्प और प्रलाप दूर होताहै ॥ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥

जातीपत्रंसमंजिष्ठादार्वीपूगफलंशमी ।
धात्रीफलंसमधुकंक्कथितंमधुसंयुतम् ॥ ४० ॥
मुखरोगेकण्ठरोगेगण्डूषान्नंप्रशस्यते ।
कुष्ठाभयारजोलिह्यान्मधुनाकण्ठशुद्धये ॥ ४१ ॥

अर्थ–चमेलीके पत्ते, मजीठ, दारुहलदी, सुपारी, छोकरा, आमला और मुलेठी, इनके क्काथमें सहत डालकर गण्डूष धारण करनेसे मुखरोग और कण्ठरोग दूर होताहै । कूट और हरडका चूर्ण सहतके साथ चाटनेसे कण्ठ शुद्ध होताहै ॥ ४० ॥ ४१ ॥

अष्टांगकावलेहोवाकवडश्चार्द्रकादिभिः ।
शेलुत्वक्त्रिफलादार्वीक्काथोरोचनयायुतः ॥ ४२ ॥
अक्ष्णोःसेकंप्रशंसन्तिगवेधुमधुकाम्बुना ।

मधुकंत्रिफलामूर्वीदार्वीत्वङ्नीलमुत्पलम् ॥ ४३ ॥
उशीरंलोध्रमंजिष्ठाप्रलेपाश्चोतनेहिताः ।
गवेधुमधुसिन्धूत्थघृतंवैकंकतंसमम् ॥ ४४ ॥
नेत्रयोरंजनाद्धन्तिशोषंविस्फोटदुर्ज्जयम् ॥ ४५ ॥

अर्थ—अष्टांगावलेह सेवनकरनेसे, अथवा अदरखके रसादिका कवल धारण करनेसे या लिसोडेकी छाल, हरड़ बहेड़ा, आमला, और दारुहलदी, इनका क्वाथ गोलोचनके साथ पीनेसे, या गरहेडुआ और मुलेठीके क्वाथसे आँखोंको सींचनेसे विशेष लाभ होताहै । मुलैठी, हरड़, आमला, बहेड़ा, मूर्वा, दारुहलदीकी छाल, नीलोत्पल, खस, लोध, और मजीठ इनके प्रलेपके द्वारा नेत्रोंमें आश्चोतन प्रयोग करनेसे अथवा गरहेडुआ, सहत, सैंधानोन, घृत और विकंकत इनको पीस नेत्रोंमें अंजनलगानेसे शीघ्रही विस्फोट रोग दूर होताहै ॥ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥

अथशुद्धस्यंसूतस्यमूर्छितस्यमृतस्यच ।
धवलापिप्पलीधात्रीरुद्राक्षघृतमाक्षिकैः ॥ ४६ ॥
पापरोगान्तकोयोगःपृथिव्यामेवदुर्लभः ॥ ४७ ॥

अर्थ—शुद्ध और मूर्छित पारेकी भस्म, सफेद कोयल, पीपल, आमला और रुद्राक्ष इन सब औषधियोंको समान भागलेकर सहत और घृतके साथ सेवन करनेसे सर्व प्रकार केमसूरिका रोग दूर होतेहैं॥ ४६॥ ४७॥

इति मसूरिकारोगाध्यायः ।

अथक्षुद्ररोगचिकित्सामाह ।

तत्राजगल्लिकामामांजलौकाभिरुपाचरेत् ।
शुद्धिसौराष्ट्रिकाक्षारकल्कैश्चालेपयेन्मुहुः ॥ १ ॥
इन्द्रलुप्तेसिराविद्धाशिलाकाशीशतुत्थकैः ।
लेपयेत्परितःकल्कैस्तैलंवाऽभ्यञ्जनेहितम् ॥ २ ॥

कुटन्नटंशिखीजातीकरञ्जकरवीरजैः ।
अवगाढपदश्चैवप्रच्छयित्वापुनःपुनः ॥ ३ ॥
गुञ्जाफलैश्चिरैलिम्पेत्केशभूमिंसमन्ततः ॥ ४ ॥

अर्थ-अथ क्षुद्ररोगोंकी चिकित्साका वर्णन करतेहैं-सीप, सोरठकी मट्टी, और जवाखार इन तीनोंको एकत्र पीसकर लेपकरनेसे अजगल्लिका रोग दूर होताहै । इन्द्रलुप्तरोगमें शिरावेध करावे, हरिताल, कसीस, और तूतिया इनको एकत्रपीसकर प्रलेप करनेसे अथवा सिरसे तेल मर्दन करनेसे इन्द्रलुप्त रोग नष्ट होताहै । श्योनाक, चीता, चमेली, करंज और कनेर सबको एकत्र पीसकर, वारंवार मस्तकपै गाढा प्रलेपकर ढक देवे अथवा चौटलीयोंको पीसकर मस्तक पै सर्वत्र प्रलेप करनेसे इन्द्रलुप्त रोग आराम होताहै ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥

हस्तिदंतमसीलेपःसतैलमिन्द्रलुप्तजित् ।
हस्तिदंतंमसीकृत्वासुखाश्चैवरसाञ्जनम् ॥ ५ ॥
लोमान्ययेनजायन्तेनृणांपाणितलेष्वपि ।
भल्लातकबृहतीफलगुञ्जामूलफलेभ्यः ॥ ६ ॥
एकेनमधुसहितैर्विलिप्तंसुरपतिलुप्तंशमंयाति ॥ ७ ॥

अर्थ-हाथीके दांतकी स्याहीको तेलमें मिलाकर लेप करनेसे इन्द्रलुप्त नष्ट होताहै । हाथीके दाँतकी स्याहीमें रसौत मिलाकर लेप करनेसे इन्द्रलुप्त रोग दूर होताहै इसको हथेलीमें भी लगानेसे रुयें जमआते हैं । भिलावेकी गुठली बृहतीके फल, चौटली और चौटलीकी जड़ इन चारोंमेंसे किसी एकको सहतके साथ पीसकर प्रलेप करनेसे निश्चय इन्द्रलुप्त रोग आराम होता है ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥

बृहतीफलसंपिष्टंगुञ्जाफलश्चेन्द्रलुप्तस्य ।
कनकनिघृष्टस्यसतोदातव्यंप्रच्छितस्यसदा ॥ ८ ॥
मधुकेन्द्रीवरमूर्वातिलाज्यगोक्षीरभृंगलेपेन ।
अचिराद्भवन्तिकेशाघनदृढमूलायतानृजवः ॥ ९ ॥

अर्थ–बृहतीके फल और गुंजा दोनोंको एकत्र पीसकर लेपकरनेसे अथवा कनक धतूरेको पीसकर मस्तकपै प्रलेप करके मस्तकको ढकलेवे, इससै इन्द्रलुप्तरोग दूर होताहै ॥ ८ ॥ ९ ॥

मालतीकरवीराग्निनक्तमालविपाचितम् ।
तैलमभ्यञ्जनेशस्तमिन्द्रलुप्तविनाशनम् ॥ १० ॥
इदंहित्वरितंहन्तिदारुणंनियतंनृणाम् ॥ ११ ॥
(अग्निश्चित्रकः गोमूत्रेणपाकः)

अर्थ–मालतीके पत्र कनेर, चीता, और करंजकी छाल यह सब ऽ॥ सेर । यथाविधिसे तेलको पकावे । यह तेल बहुत शीघ्र इन्द्रलुप्त और दारुणकरोगको दूर करेहै ॥ १० ॥ ११ ॥

इति मालत्यादितैलम् ।

स्नुहीपयःपयोर्कस्यमार्कवोलांगलीविषम् ।
मूत्रमाजंसगोमूत्रंरक्तिकासेन्द्रदारुणी ॥ १२ ॥
सिद्धार्थतीक्ष्णतैलंचगर्भंदत्वाविपाश्चिता ।
वह्निनामृदुनापक्वंतैलंखालित्यनाशनम् ॥ १३ ॥
कूर्म्मपृष्ठसमानापिरूक्षायारोमत्रक्षरी ॥
दिग्धामानेनजायेतऋक्षणानीरलोमसा ॥ १४ ॥
(लांगलिविषंलांगलीमूलं । रतिकागुंजामूलम् ।
तीक्ष्णज्योतिष्मतीमूलं । केचिच्चसिद्धार्थतीक्ष्णतैल
मितिश्वेतसर्षपतैलंवदन्ति)

अर्थ–तिलकातेल २ सेर. गोमूत्र ४ सेर, बकरीका मूत्र ४ सेर, तथा कल्कके लिये थूहरकादूध, आककादूध, भांगरा, कलिहारीकी जड़, चोटली इन्द्रायणकीजड़, सफेद सरसों और मालकांगुनीकी जड यह

सब ऽ॥सेर। यथाविधिसे तेलको सिद्धकरे। इस तेलको सिरसे मलनेसे खालित्यरोग दूर होताहै ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥

इतिस्नुह्यादितैलम्।

वटावरोहकेशिन्योचूर्णेनादित्यपाचितम्।
गुडूचीस्वरसेतैलमभ्यङ्गात्केशरोपणम् ॥ १५ ॥
(केशिनीभूकेशी।एवंचतुर्गुणम्)

इति आदित्यपाकतैलम्।

अर्थ–वड़के अंकुर, भूकेशीकाचूर्ण और गिलोयके रसमें तेलको मिलाकर धूपमें पकाकर सिरसे मलनेसे सिरपै बाल जम आतेहैं ॥१५॥

तैलंसयष्टीमधुकैःक्षीरेधात्रीफलैःस्मृतम् ॥
नश्यदत्तंजनयतिकेशान्श्मश्रूणिचाप्यथ ॥१६॥
श्वेतसर्षपकल्केनस्नानंदारुणकापहम्।
कार्य्योदारुणकेमूर्ध्निप्रलेपोमधुसंयुतः ॥ १७ ॥
पियालबीजमधुकैःकुष्ठमिश्रैःससैन्धवैः।
काञ्जिकस्थास्त्रिसप्ताहंमासाद्दारुणकापहाः ॥ १८ ॥

अर्थ–तेल २ सेर, दूध ८ सेर, और कल्कके लिये मुलेठीऔर आमला दोनों ऽ॥ सेर। यथाविधिसे तेलको सिद्ध करे। इस तेलका नास लेनेसे केश और श्मश्रू उत्पन्न होजाते हैं। सफेद सरसों को पीसकर शरीर से मलकर स्नान करने से या मस्तकपर प्रलेप करनेसे दारुणक रोग दूर होता है। चिरौंजीकी जड, मुलैठी, कूठ और सैंधानोन यह चारों औषधी समान भाग ले कर २१ दिनतक काँजीमें स्थापन करे, पश्चात् इससे लेप करने से एक महीनेमें दारुणकरोग दूरता है ॥ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥

नागरंगफलत्वग्भिःस्नानंलेपनकन्तथा।
सहनीलोत्पलकेशवयष्टीमधुतिलैःसदृशामलकम्।
चिरजातमपिशीर्षेदारुणरोगंसमंनयाति ॥ १९ ॥

अर्थ-नारंगीके छुलके को पीसकर स्नान करनेसे अथवा मस्तक पै प्रलेप करने से शीघ्रही दारुणक रोग नष्ट होता है । नीलोत्पल, पुन्नागपुष्प, मुलेठी, और तिल प्रत्येक एक १ भाग, और आमला ४ चारभाग, सबको एकत्र पीसकर मस्तकपै प्रलेप करनेसे बहुत दिनोंका दारुणक रोग दूर होताहै ॥ १९ ॥

चित्रकंदन्तिमूलंचकोषातकीसमन्वितम् ।
कल्कंपिष्ट्वापचेत्तैलंकेशशत्रुविनाशनम् ॥ २० ॥

इति चित्रकादितैलम् ।

अर्थ-तेल २ सेर, जल ८ सेर, और चीता, दंतीकी जड, तथा कडवी तोरई यह सब आधऽ॥सेर । यथाविधिसे तेलको सिद्धकरे । इस तेलको सिरसे मर्दनकरनेसे दारुणकरोग दूर होताहै ॥ २० ॥

गुञ्जाफलैःशृतंतैलंभृङ्गराजरसेनतु ।
कण्डूदारुणहृत्कुष्ठकपालव्याधिनाशनम् ॥ २१ ॥

इति गुञ्जातैलम् ।

अर्थ-तेल२ सेर, भांगरेकारस८ सेर,तथा कल्ककेलिये चौंटलीकी जड ऽ॥ सेर, यथाविधिसे तेलको सिद्ध करे । यह तेल कण्डू, दारुणक, और कपाल कुष्ठको नष्टकरैहै ॥ २१ ॥

भृंगराजस्त्रिफलोत्पलशारिवलोहपुरीषसमन्वितकारि ।
तैलमिदंपचदारुणहारिकुञ्चितकेशघनस्थिरकारि २२॥

इति भृंगराजतैलम् ।

अर्थ-तिलकातेल दो सेर, भांगरेका रस आठसेर, और कल्ककेलिये हरड़, बहेड़ा, आमला, नीलिकमल, अनन्तमूल, लोहेकामल और आमकीगुठली यह सब आध ऽ॥ सेर, यथाविधिसे तेलको सिद्धकर शरीर पै मर्दन करनेसे केश सघन, कुञ्चित और दृढ़होजातेहैं ॥ २२ ॥

हरिद्राद्वयभूनिम्बत्रिफलारिष्टचन्दनैः ।
एतत्तैलमरुंषीणांसिद्धमभ्यंजनेहितम् ॥ २३ ॥

इति हरिद्राद्यंतैलम् ।

अर्थ-तेल दोसेर, जल ८ सेर, और कल्कके लिये हलदी, दारुहलदी,

चीता, हरड़, बहेड़ा, आमला, नीमकी छाल, और लालचंदन, यह सब ऽ॥ आधसेर, यथाविधिसे तैलको सिद्धकरे। यह तेल-निश्चय अरुंषिका रोगको नष्टकरैहै ॥ २३ ॥

कटुतैलमरूंषीघ्नंमूत्रेवंशफलैःस्मृतम् ॥ २४ ॥

इति वंशतैलम्।

अर्थ-कड़वातेल २ दोसेर, गोमूत्र ८ आठसेर, और कल्कके लिये बांसके फल कुटेहुए चावल ऽ॥ आधसेर, यथाविधिसे तैलको सिद्धकर मस्तकपै मलनेसे अरुंषिका रोग दूरहोताहै ॥ २४ ॥

काकमाचीरसेसिद्धंकटुतैलंचतुःपलम्।
मनःशिलासोमराजीबीजसिन्दूरगंधकैः ॥ २५ ॥
शाणमात्रैस्तदभ्यंगाद्धंन्त्यवश्यमरुंषिकाम्।
पामांविचर्चिकाञ्चैवतथान्याञ्छिरसोव्रणान् ॥ २६ ॥

इति काकमाचीतैलम्।

अर्थ-कड़वातेल १ एकसेर, मकोयका रस ४ चार सेर, और कल्ककेलिये मैनशिल, वापचीकेबीज, सिन्दूर और गंधक प्रत्येक ६ छैमासे, यथा विधिसे तेलको सिद्धकरै, इसतेलको मस्तकादिसे मर्दन करनेसे अरुंषिका, पामा, विचर्चिका और शिरोव्रण नष्ट होतेहैं ॥ २५ ॥ २६ ॥

लोहमलामलकल्कैःसजवाकुसुमैर्नरःसदास्नायी।
पलितानीहनपश्यतिगंगास्नायीवपातकानि ॥ २७ ॥
शिरसिलेपंकृत्वाचिरंस्थातव्यः।
नवदग्धशंखचूर्णकांजिकसहितंहिसीसकंघृष्ट्वा।
लेपात्कचानर्कदलानवद्धानशुभ्रान्करोतिनीलभवान् २८

अर्थ-लोहेका मैल, आमला और गुड़हरकेफूल, एकत्र पीसकर मस्तकपै प्रलेप कर पश्चात् स्नान करनेसे पलित रोग दूर होताहै। तत्काल जलाया हुवा शंखका चूना और सीसा इनको काँजीमें पीसकर मस्तक पर प्रलेप करै, और सिरसै आकके पत्ते बांधले तौ धवलबाल नीले होजाते हैं ॥ २७ ॥ २८ ॥

धात्रीफलंद्वयंपथ्येद्वेतथैकंविभीतकम् ।
लोहचूर्णस्यकर्षन्तुकर्षार्द्धंचूतमज्जतः ॥ २९ ॥
पिष्ट्वालोहमयेभाण्डेस्थापयेदुषितंनिशाम् ।
लेपोनिहन्यादचिरादकालपलितंमहत् ॥ ३० ॥

अर्थ-आमले २, हरड २, बहेडा १, लोहेकाचूर्ण दो तोले, और आमकी मज्जा १ एक तोला, इन सब द्रव्योंको एकत्रपीस एकलोहेके बासनमें भरके रखदेवै, दूसरे दिन प्रातःकाल मस्तकपै लेप करनेसे अकालमें केशोंका पकना दूर होजाताहै ॥ २९ ॥ ३० ॥

त्रिफलाचूर्णसंयुक्तंलोहचूर्णविनिःक्षिपेत् ।
ईषत्पक्वेनारिकेलेभृंगराजरसान्विते ॥ ३१ ॥
मासकेन्तुविनिःक्षिप्यसम्यग्दत्वासमुद्धरेत् ।
ततःशिरोमुण्डयित्वालेपंदत्वाभिषग्वरः ॥ ३२ ॥
संवेष्टयकदलीपत्रैर्मोचयेत्सप्तमेदिने ।
क्षालयेत्रिफलाक्वाथैःक्षीरमांसरसाशिनः ॥ ३३ ॥
कपालरंजनंचैतत्कृशीकरणमुत्तमम् ॥ ३४ ॥

इति गर्त्तान्नारिकेलोदकात् ।

अर्थ-त्रिफलेका चूर्ण और लोहेकाचूर्ण, दोनोंको एकत्र भांगरेके रसमें मिलाकर एक नारियलके भीतर भरके एक महीनेतक रक्खारहने देवै, पश्चात् शिरको मुंडवाकर लेपकरै और केलेके पत्तोंको सिरपै बाँध देवै, फिर सातदिनमें खोलै, और त्रिफलेके क्वाथसे सिरको धोवै। दूध और मांसके साथ अन्नका भोजन करै तौ अकालमें बालोंका सफेद होजाना दूर होजाताहै ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥

ओड्रकुसुमस्वरसोमधुतुल्योनश्यतःपलितम् ।
योगशतैरप्यजितंमासाज्जयतिनाश्चर्य्यम् ॥ ३५ ॥

अर्थ-गुड़हरके फूलोंका स्वरस, सहतमें मिलाकर नासलेनेसे १ एक महीनेमेंही अकालमें बालोंका पकजाना दूरहोकर केश कृष्णवर्ण हो जातेहै ॥ ३५ ॥

चन्दनंमधुकंमूर्वात्रिफलानीलमुत्पलम्।
कान्तावटावरोहश्चगुडूचींविषमेवच ॥ ३६ ॥
लौहचूर्णतथाकेशीशारिवेद्वेतथैवच।
मार्कवस्वरसेनैवतैलंमृद्वग्निनापचेत् ॥ ३७ ॥
शिरस्युत्पतिताःकेशाजायन्तेयेनकुंचिताः।
दृढमूलामूलाढ्याश्चतथाभ्रमरसन्निभाः ॥
नस्येनाकालपलितंनिहन्त्यात्तैलमुत्तमम् ॥ ३८ ॥

इति चन्दनादितैलम्।

अर्थ-तिलका तेल २ दो सेर, भांगरेका स्वरस ८ आठसेर, तथा कल्कके लिये लालचंदन, मुलैठी, मूर्वा, आमला, हरड, बहेड़ा, नीलेकमल, फूलप्रियंगू, वटांकुर, गिलोय, मृणाल, जारण करकै पुटसे पकाया हुवा लोहा, भूकेशी, अनन्तमूल, और करिया वासाऊ, यह सब औषधी ऽ॥ आधसेर, यथाविधिसे तेलको सिद्धकरै, इस तेलको सिरसे मलनेसे बाल कुंचित, दृढ़मूल, और भौंरेकी समान कृष्णवर्ण होजातेहैं, इस तेलसे नाशलेनेसे, अकालमें उत्पन्न हुवा पलित रोग दूर होजाताहै ॥ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥

अंजनंमधुकंकृष्णंतार्क्षजंशारिवोत्पलम्।
त्रिफलानीलिकापत्रंकाशीशंमुस्तकंतिलाः ॥ ३९ ॥
आम्रास्थितालपत्रंचफलंपिण्डीतकस्यच।
जम्ब्वाम्राजुनपत्राणिकूर्म्मपित्तंसतुत्थकम् ॥ ४० ॥
भूकेशःशिंशपाश्चैवमार्कवंसत्रिकण्टकम्।
पृथक्कर्षसमान्भागान्तथालौहरजःसमम् ॥ ४१ ॥
तैलप्रस्थमजाक्षीरंधात्रीभृंगरसाढकम्।
पक्कन्तुलौहभाण्डस्थंशिरसोऽभ्यङ्गनस्ययोः ॥ ४२ ॥
यत्नेनयोजयेत्तैलंवराङ्गेविनिपातयेत्।
पतन्तिबिन्दवोयत्रकृष्णत्वमुपजायते ॥ ४३ ॥

भवन्तिकुटिलाःशीघ्रंकेशाःषट्पदकोपमाः ।
खालित्यंपलितंचैवइन्द्रलुप्तञ्चनाशयेत् ॥ ४४ ॥
मेध्यंमंगल्यमायुष्यंबलवर्णकरंशिवम् ।
नीलबिन्दुरितिख्यातंविश्वामित्रेणपूजितम् ॥ ४५ ॥

इति नीलबिन्दुतैलम् ।

अर्थ–तेल २ दोसेर, बकरीका दूध, आमलोंका रस और भांगरेका रस यह तीनों मिले हुए ४ चारसेर, और कल्कके लिये कालासुर्म्मा, मुलैठी, सफेद सुर्म्मा, अनन्तमूल, कमल, हरड़, बहेडा, आमला, नीलेके पत्ते, हीराकसीस, नागरमोथा, तिल, आमलेकी गुठली, ताड़के पत्र, मैनफल, जामुनकेपत्ते, आमकेपत्ते अर्जुनकेपत्ते, कछुएकापित्त, तूतिया, भूकेशी, सीसमकी छाल, भांगरा और गोखरू, प्रत्येक दोदो तोले तथा लोहेका चूर्ण २ दो तोले और अर्जुनकी छालका क्वाथ ४ चारसेर, यथा विधिसे लोहेके बासनमें तेलको सिद्धकरै । इस तेलका नासदेवै या सिरसे मर्दनकरै । इस तेलके बिन्दु सिरपै डालनेसे शीघ्रही कुटिलकेश भौंरेके समान कृष्णवर्ण होजातेहैं । तथा खालित्यरोग, पलितरोग, और इन्द्रलुप्तरोग, दूर होताहै । यह तेल– मेधाको बढावैहै, मंगलदायकहै अवस्थाको स्थापन करैहै, बल और वर्णको बढ़ावैहै । इसको नील बिन्दु तेल कहतेहैं ॥३९॥४०॥४१॥४२॥४३॥४४॥४५॥

भृंगराजरसेकंसेकेशराजरसेतथा ।
त्रिफलायारसेकंसेक्षीरकंसेसुसाधितम् ॥ ४६ ॥
कंसंचातिलतैलस्यलौहपात्रेतुपाकवित् ।
कल्कंमृणालशालूकमंजिष्ठापीतशालकम् ॥ ४७ ॥
नीलिकापद्मबीजञ्चशटीमुस्तंपुनर्नवा ।
वरावात्यालकंकेशीकेशराजंसकेशरम् ॥ ४८ ॥
मण्डूरंचाम्रबीजञ्चश्यामानन्ताप्रियंगुका ।
पाकलंमधुकंझिण्टादेवदारुसपद्मकम् ॥ ४९ ॥
ह्रीवेरंचन्दनंपत्रंमेथीमधुरिकावरी ।

न्यग्रोधोरोचनातुत्थंमाहेन्द्रींकेतकीकेशी ॥ ५० ॥
उत्पलंचौण्ड्रपुष्पंचनीलीलताक्षबीजकम्।
रास्नाचगैरिकंदार्वीपुण्डरीकंरसाञ्जनम् ॥ ५१ ॥
जीवनीयगणोलाक्षाश्रीखंडंभद्रमुस्तकम्।
त्वक्पत्रंवावुषामूलंकृष्णागुरुचलोध्रकम् ॥ ५२ ॥
दत्वापलोन्मितैर्भागैःशनैर्मृद्वग्निनापचेत्।
शिरोमध्यगतान्रोगान्नेत्ररोगांश्चसर्वशः ॥ ५३ ॥
हन्तिवातश्चपित्तंचपलितंकालसंभवम्।
खालित्यमिन्द्रलुप्तञ्चहन्यादेतन्नसंशयः ॥ ५४ ॥
कचान्नीलतरान्कुर्यात्सुस्निग्धान्कुटिलांस्तथा।
नस्याभ्यंजनपानेचतैलमेतत्प्रयोजयेत् ॥ ५५ ॥
यत्रतैलरसस्यास्यपतन्तिबिन्दवःशुभाः।
तत्रकेशाःप्रजायंतेनृणांपाणितलेष्वपि ॥ ५६ ॥
अजातेकेशमस्तेचजातेनष्टेचवापुनः।
तत्रोपजायतेकेशंहन्तिदारुणकंतथा ॥ ५७ ॥

इति बृहद्भृङ्गराजतैलम्। वा५३५८१३१

अर्थ-तिलकातेल आठ सेर, भांगरेका रस ८ आठ सेर, कुकुरभांगरेका रस ८ आठ सेर, त्रिफलेका क्वाथ ८ आठ सेर, गायका दूध ८ आठ सेर, और कल्कके लिये कमलकी नाल, कमलकी जड, मजीठ, पियासाल, नील, कमलगट्टा, कचूर, नागरमोथा, पुनर्नवा, हरड, बहेडा, आमला, भूतकेशी, खिरेटी, कुकुरभांगरा, नागकेशर, मण्डूर, आमके बीज, करियावासाऊ, गौरियावासाऊ, फूलप्रियंगू, कूठ, मुलैठी, पियावासा, देवदारु, पद्माख, सुगंधवाला, लालचंदन, तेजपात, मेथी, सौंफ, सतावर, वडके अंकुर, गोरोचन, तूतिया, बड़ीइन्द्रायन, केतकी, मांसरोहिणी, उत्पल, जवाकेफूल, नीली, बहेडेके बीज, रास्ना, गेरू, दारुहलदी, पुण्डेरिया, रसौत, जीवक, ऋषभक, ऋद्धि, वृद्धि,

मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, जीवन्ती, मुलहठी, मुगवन, मषवन, लाख, लालचंदन, नागरमोथा, दालचीनी, तेजपात, पीले केलेकी जड, कालीअगर, और लोध, प्रत्येक औषधि चार चार तोले यथाविधिसे सबको मिलाकर मन्द मन्द अग्निसे तेलको पकावै। यह तेल–कुटिल केशोंको नील और चिकने करै है। इसको नस्य, अभ्यंजन और पान, इनमें प्रयोग करै। यह तेल–शिरोरोग, नेत्ररोग, वातरोग, पित्तरोग, अकालोत्पन्न पलित रोग, खालित्यरोग, और इन्द्रलुप्त रोगको दूर करै है। इस तेल रूपी रसके जिस जिस स्थलमें बिन्दु गिरते हैं। वहीं केश उत्पन्न हो जाते हैं, यहाँतक कि हथेलीमें भी बाल जम आते हैं। जिस स्थानमें केश नहीं उत्पन्न हुए हैं और जिन स्थानोंमें उत्पन्न होकर नष्ट होगये हैं, उन सब स्थानोंमें इस तेलको लगानेसे शीघ्रही केश उत्पन्न होजाते हैं, यह तेल दारुणक को भी दूर करै है ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ॥५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥

लोध्रनागवलालेपस्तारुण्यपिडकापहः ।
तद्वद्गोरोचनायुक्तंमरिचंमुखलेपनात् ॥ ५८ ॥
सिद्धार्थकवचालोध्रसैन्धवैश्चप्रलेपनम् ।
वरण्डश्चनिहन्त्याशुपिडकांयौवनोद्भवाम् ॥ ५९ ॥
व्यंगेषुचार्जुनत्वचामंजिष्ठावासमाक्षिका ।
लेपःसनवनीतावाश्वेताश्वखुरजामसी ॥ ६० ॥
(श्वेताश्वखुरदग्धनवनीतेनसमलेपः ।)

अर्थ–लोध और गंगेरनको पीसकर प्रलेप करनेसे मुखके मुहासे दूर होजाते हैं। गोरोचन और काली मिरच, दोनोंको एकत्र पीसकर अथवा सफेद सरसों, वच, लोध और सैंधानोन, इनको एकत्र पीसके लेप करनेसे मुखके मुहासे दूर होजाते हैं। अर्जुनकी छालको अथवा मजीठको सहतमें पीसके, या सफेद रंगके घोडेके खुरको अग्निमें जला स्याही बना नौनीमें मिलाकर लेप करनेसे व्यंग रोग दूर होता है ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥

रक्तचंदनमंजिष्ठाकुष्ठलोध्रप्रियंगवः ।
वटाङ्कुरामसूराश्चव्यंगघ्नामुखकान्तिदाः ॥ ६१ ॥
(व्यस्तसमस्तेन)
मधुनादाड़िमार्द्रत्वग्लेपोव्यंगविनाशनः ।
व्यंगजिद्वरुणत्वग्वाछागदुग्धप्रपेषिता ॥ ६२ ॥

अर्थ-लालचंदन, मजीठ, कूठ, लोध, फूलप्रियंगू, वड़के अंकुर, और मसूर, इन सबको एकत्र पीसकर अथवा प्रत्येकको अलग अलग पीसकर प्रलेपकरनेसे व्यंगरोग नष्ट होकर मुखकी कांति बढतीहै । सहत, अनारकीछाल, अदरख और दालचीनी, इनको एकत्र पीसकर लेप करनेसै व्यंगरोग दूर होताहै। बरनेकी छालको बकरीके दूधमें पीसकर प्रलेप करनेसे भी व्यंगरोग दूर होताहै ॥ ६१ ॥ ६२ ॥

केवलान्पयसापिष्टातीक्ष्णान्शाल्मलिकंटकान् ।
आलिप्तंत्र्यहमेतेनभवेत्पद्मोपमोमुखम् ॥ ६३ ॥
श्वेतंपुनर्नवामूलंसर्पाक्षीमूलसंयुतम् ।
उद्वर्त्तनंहरेत्स्त्रीणांअक्षिच्छायाश्चदुःसहाः ॥ ६४ ॥
महिषीक्षीरसंपिष्टमंजनंरक्तचंदनम् ।
कृतोलेपोनिहन्त्याशुमक्षिकांगण्डयोःस्थिताम् ॥ ६५ ॥

अर्थ-केवल तीक्ष्ण सेमलके कांटोंको दूधमें पीसकर प्रलेप करनेसे तीन दिनमें ही व्यंग (झाई) रोग नष्ट होकर मुख कमलके समान सुंदर हो जाता है। सफेद पुनर्नवे की जड और सर्पाक्षी की जडको एकत्र पीसकर उद्वर्त्तन करनेसे स्त्रियोंकी अक्षिच्छाया दूरहोजातीहै । रसौत और लालचंदन भैंसके दूधमें पीसकर प्रलेप करनेसे गण्डस्थितमक्षिकारोग दूर होजाताहै ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥

मनःशिलातथालोध्रंद्विनिशासर्षपाःसमम् ।
वारिपिष्टोहितोलेपोवदनैर्मक्षिकांहरेत् ॥ ६६ ॥
माक्षिकंतालकंतुत्थंराजावर्त्तशिलाजतु ।

महिषाक्षंसर्वतुल्यंपेषयेन्महिषीपयैः ॥ ६७ ॥
सप्ताहंमर्द्दयेद्गाढंव्यंगघ्नंकान्तिवर्द्धनम् ।
महिषीक्षीरमथितमेतदुद्वर्त्तनंहितम् ॥ ६८ ॥
मुखवर्णकरंस्त्रीणांतिलकालंचनाशयेत् ॥ ६९ ॥

अर्थ-मैनशिल, लोध, हलदी, दारुहलदी, और सरसों, इन सबको एकत्रपीसकर मुखपै प्रलेप करनेसे मक्षिकानामक काले रंगके दाग दूर होकर मुख उज्वल कान्तियुक्त होजाताहै । सोनामाखी, हरिताल, तूतिया, राजावर्त्त (रेवटी), शिलाजीत, और भैंसिया गूगल, यह सब औषधि समान भागले एकत्र भैंसके दूधमें पीसके मुखपै प्रलेप करनेसे एक सप्ताहमें व्यंग दूर होकर मुख कांतियुक्त होजाताहै । भैंसकी नौनीको मुखपै मलनेसे स्त्रियोंके मुखकी कान्ति बढ़ती है ॥ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥

चतुर्गुणंगवांक्षीरंक्षीरार्द्धंतिलतैलकम् ।
मंजिष्ठाद्विनिशालोध्रतुवरीतालकंशिला ॥ ७० ॥
लाक्षागोरोचनाकुष्टंतथाचकुंकुमद्वयम् ।
गैरिकंशिखितुत्थञ्चवटवृक्षस्यपत्रकम् ॥ ७१ ॥
नागकेशरकालीयपद्मबीजञ्चकेशरम् ।
पारदंगंधकंपत्रंत्वचञ्चप्रतिकार्षिकम् ॥ ७२ ॥
सर्वपाच्यंतैलशेषंम्रक्षणान्मक्षिकापहम् ।
वदनञ्चेन्दुतुल्यंस्यात्सप्तरात्रान्नसंशयः ॥ ७३ ॥

इति प्रथममंजिष्ठाद्यंतैलम् ।

अर्थ-तिलका तेल २ दो सेर, गायका दूध आठ ८ सेर, और कल्कके लिये मजीठ, हलदी, दारुहलदी, दोनों प्रकारकी केशर, गेरू, तूतिया, बड़के पत्ते, नागकेशर, कलम्बक, कमलगट्टा और कमलकेशर, पारा, गंधक, तेजपात, और दालचीनी प्रत्येक दोतोले यथाविधिसे तेलको तय्यार कर मुखपै मालिस करनेसे ७ सात रात्रिमें ही मुखगत मक्षि-

का रोग नष्ट होकर मुख चंद्रमाके समान शोभायमान होजाताहै ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥

मधुयष्टीपलंतद्वत्द्वात्रिंशच्चापलंनिवै ।
पादशेषोभवेत्क्वाथोक्वाथांशंतिलतैलकम् ॥ ७४ ॥
पुनर्मरिचमंजिष्ठप्रत्येकंचपलार्द्धकम् ।
तैलशेषंपचेत्सर्वलेपोऽयंमुखवर्णकृत् ॥ ७५ ॥

इतिद्वितीयमंजिष्ठाद्यंतैलम् ।

अर्थ-मुलैठी ८ आठ तोले, जल बत्तीस ३२ पल, शेष १ सेर, तिलकातेल ८ आठ तोले, और कल्कके लिये काली मिरच २ दो तोले, और मजीठ २ दो तोले। यथा विधिसे तेलको पकावै, जब तेल शेष रहजाय तब उतारलेवै। इस तेलको मुखपै मलनेसे व्यंगरोगादि नष्ट होकर मुख उज्वल हो जाताहै ॥ ७४ ॥ ७५ ॥

मंजिष्ठामधुकंलाक्षामातुलुंगंसयाष्टिकम् ।
कर्षप्रमाणैरेतैस्तुतैलस्यकुडवं पचेत् ॥ ७६ ॥
अजाक्षीरञ्चद्विगुणंशनैर्मृद्वग्निनापचेत् ॥
नीलिकापिडकाव्यंगानभ्यंगादेवनाशयेत् ॥ ७७ ॥
मुखंप्रसन्नोपचितंवलीपलितवर्ज्जितम् ।
सप्तरात्रप्रयोगेणमुखंस्यात्कांचनप्रभम् ॥ ७८ ॥

इतितृतीयमंजिष्ठाद्यंतैलम् ।

अर्थ-तिलकातेल ॥ आधसेर, बकरीका दूध एकसेर, और मजीठ, मुलेठी, लाख, बिजौरानींबू और महुवा, प्रत्येक दो दो तोले सबको मिलाकर मंद मंद अग्निसे तेलको सिद्धकरै। इस तेलको मुखादिसे मर्दन करनेसे नीलिका, पिड़का, व्यंगादि मुख दूषितरोग सात दिनमें नष्ट होजातेहैं। मुखमंडल उज्वल और कांचनके तुल्य दीप्तिमान् हो जाताहै, और वलीपलितादि रोग दूर होजातेहैं ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥

कुंकुमंकिंशुकंलाक्षामंजिष्ठारक्तचंदनम् ।
कालीयकंपद्मकञ्चमातुलुंगस्यकेशरम् ॥ ७९ ॥

कुसुम्भंमधुयष्टीचफलिनीमदयन्तिका ।
निशिगोरोचनापद्ममुत्पलञ्चमनःशिला ॥ ८० ॥
काकोल्यादिसमायुक्तैरेतैरक्षसमैर्भिषक् ।
लाक्षारसपयोभ्याञ्चतैलप्रस्थंविपाचयेत् ॥ ८१ ॥
कुंकुमाद्यमिदन्तैलमभ्यंगात्कांचनोपमम् ।
करोतिवदनंसद्यःपुष्टिलावण्यकान्तिदम् ॥ ८२ ॥
सौभाग्यलक्ष्मीजननंवशीकरणमुत्तमम् ॥ ८३ ॥

इतिकुंकुमाद्यंतैलम् ।

अर्थ–तिलकातेल २ दो सेर, लाखका क्काथ २ दोसेर, गायका दूध २ दो सेर, जल आठ ८ सेर, और कल्कके लिये सर, ढाककेबीज, लाख, मजीठ, लालचंदन, कलम्बक, पद्माख, बिजोरे नीबूकी केशर, कसूमके बीज, मुलेठी, फूलप्रियंगू, मोतियाकेफूल, हलदी, दारुहलदी, मैनशिल, गोरोचन, कमल, कुमुद, काकोली, क्षीरकाकोली, मेदा, महामेदा, जीवक, ऋषभक, ऋद्धि, और वृद्धि प्रत्येक दो दो तोले, यथा विधिसे तैलको सिद्धकरै । इस तेलको मुखपै मलनेसे तत्कालही मुख कांचन के समान हो जाताहै। यह तेल–पुष्टि, लावण्य, कान्ति, सौभाग्य और लक्ष्मीको देै है तथा उत्तम वशीकरणहै ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥

कोमलंपद्मिनीपत्रंयःखादेच्छर्करान्वितम् ।
एतन्निश्चित्यानिर्दिष्टंनतस्यगुदनिर्गमः ॥ ८४ ॥
वृक्षाम्लकंचचांगेरीशुण्ठीपाठायवाग्रजम् ।
तक्रेणशीलयेत्पायुभ्रंशार्त्तानलदीपनम् ॥ ८५ ॥

अर्थ–कमलके कोमल पत्तोंको बूराके साथ सेवन करनेसे काँच निकलनी बंद होजातीहै। विषांविल, चांगेरी, सोंठ, पाठ और जवाखार, इन सबको तक्रमें पीसके सेवन करनेसे गुदभ्रंश रोगवाले मनुष्य की अग्नि दीपन होजातीहै ॥ ८४ ॥ ८५ ॥

चांगेरीकोलदध्यम्लयवक्षारसमायुतम्।
घृतमुत्कथितंदेयंगुदभ्रंशरुजापहम्॥
बदरस्यक्वाथःदधिचांगेर्य्यास्वरसः॥ ८६॥

इति चांगेरी घृतम्।

अर्थ-गायकाघी २ दो सेर, चांगेरीका रस २ दो सेर, बेरोंका क्वाथ २ दो सेर, खट्टादही २ दो सेर, और जवाखार ऽ॥ आधसेर। यथाविधिसे तेलको पकावै। इस तेलको मर्द्दन करनेसे गुदभ्रंश दूरहोताहै॥ ८६॥

मूषिकामांसकुडवंदशमूलंपलोन्मितम्।
चित्रकंद्विपलंचात्रक्वाथश्चाष्टगुणेऽम्भसि॥ ८७॥
पादावशेषंकर्त्तव्यंतैलंपाच्यंपयःसमम्।
जीवनीयैस्तुतत्पादैःपचेन्मृद्वग्निनाभिषक्॥ ८८॥
अभ्यंगान्नाशयत्याशुगुदभ्रंशंसुदारुणम्।
भगंदरंगुदेशूलंनाडीदुष्टव्रणापहम्॥ ८९॥

अर्थ-तिलकातेल ४ चार सेर, गायकादूध ४ चारसेर, कल्कके लिये चूहेकामांस ऽ॥ आधसेर, दशमूलकी औषधि प्रत्येक एक एक पल, चीता दो २ पल, जल १२८ एकसौ अटाईस पल, और कल्कके लिये जीवनीय गण १ एक सेर, यथा विधिसे तेलको सिद्धकरै। इसतेलको गुह्यदेशपै मर्द्दन करनेसे दारुण गुदभ्रंश, भगन्दर, गुदशूल, नाडीव्रण, और दुष्टव्रण नष्ट हो जातेहैं॥ ८७॥ ८८॥ ८९॥

इतिक्षुद्ररोगाऽध्यायः।

अथ मुखरोगचिकित्सामाह।

मुखदन्तमूलगलजाःप्रायोरोगाःकफास्रभूयिष्ठाः।
तस्मात्तेषामसकृद्रक्तंविस्रापयेद्दुष्टम्॥ १॥
शुद्धिर्नस्यंकवडाःकटुतिक्ताःकफरक्तहरत्कर्म्म।
यवतृणधान्ययुक्तंरूक्षैर्यूषादिकंहितंतेषु॥ २॥

अर्थ-मुखरोग, मसूड़ेकेरोग और गलरोग, यह सब प्रायः कफ और रक्तजन्य होतेहैं, इस कारण इन सब रोगोंमें वारंवार दुष्ट रुधिरको निकलवाना चाहिये, और वमन, विरेचन, नस्य, कटु और तिक्त द्रव्यों का कवल तथा कफ और दूषित रक्त नाशक क्रिया करनी चाहिये। उक्तरोगोंमें यव और तृणधानोंका भोजन रूक्षद्रव्योंके यूषादिके साथ पथ्यहै ॥ १ ॥ २ ॥

ओष्ठप्रकोपेवातोत्थेशाल्वनेनोपनाहयेत् ।
मस्तिष्केचैवनस्येचतैलंवातहरंस्मृतम् ॥ ३ ॥
श्रीवेष्टकंसर्ज्जरसंगुग्गुलुंसुरदारुच ।
यष्टिमधुकचूर्णञ्चविदध्यात्प्रतिसारणम् ॥ ४ ॥
त्रिकटुःसर्ज्जिकाक्षारःक्षारश्चयवशूकजः ।
क्षौद्रयुक्तंविधातव्यंएतच्चप्रतिसारणम् ॥ ५ ॥
प्रियंगुत्रिफलालोध्रंसक्षौद्रंप्रतिसारणम् ।
हितंचात्रिफलाचूर्णमधुयुक्तंप्रलेपनम् ॥ ६ ॥
तैलाक्तंसर्ज्जचूर्णंचजलधौतमनेकधा ।
लेपतःशतशोदृष्टमोष्टस्फुटननाशनम् ॥ ७ ॥

अर्थ-वातजन्य ओष्ठप्रकोपमें शाल्वनस्वेद प्रयोगकरै, और मस्तिष्करोगमें नासके लिये वातनाशक तेल प्रयोग करने चाहिये। श्रीवेष्टक, राल, गूलर, देवदारु और मुलेठी,इन सब औषधोंका चूर्णकर प्रतिसारण करनेसे, अथवा सोंठ, मिरच, पीपल, सज्जी और जवाखार इनको एकत्रपीस सहतमें मिलाके प्रतिसारण करनेसे या फूलप्रियंगू, हरड़, बहेड़ा आमला और लोध इनको भले प्रकारसे पीस सहतमें मिलाकर प्रतिसारण करनेसे अथवा त्रिफलेके चूर्णको सहतमें मिलाकर प्रलेप करनेसे या सज्जी को वारंवार जलमें धोकर तेलमें मिलाके लेपकरनेसे ओष्ठस्फुटन दूर हो जाताहै ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥

काशीशलोध्रकृष्णामनःशिलालप्रियंगूचव्योत्थम् ।
चूर्णमधुसंयुक्तंशीतादेपूतिमांसहरम् ॥ ८ ॥

कुष्ठंदार्वीलोध्रमब्दंसमंगापाठातिक्तातेजनीपीडिकाच।
चूर्णंशस्तंघर्षणंतद्विजानांरक्तस्रावंहन्तिकण्डूरुजश्च॥९॥
प्रपौण्डरीकंमधुकंत्रिफलोत्पलसाधितम्।
तैलंघृतंवानस्येनशीतादंप्रशमंनयेत्॥ १० ॥

अर्थ–कसीस, लोध, पीपल, मैनशिल, हरिताल, फूलप्रियंगु और चव्य, इन सब औषधियोंका चूर्ण सहतमें मिलाकर शीतादरोगमें देनेसे पूतिमांस दूरहोताहै॥ कूठ, दारुहलदी, लोध, नागरमोथा, मजीठ, पाढ़ कुटकी, चव्य, और असबरग, इनके चूर्णसे मसूढोंको घिसनेसे मसूढोंमेंसे रुधिरका निकलना, कण्डू, और पीड़ा दूर हो जातीहै। पुण्डरिया, मुलेठी, त्रिफला, और कमलके साथ सिद्ध किये तेल या घीसे नास देनेसे शीतादरोग दूर होताहै॥ ८॥ ९॥ १०॥

दन्तपुष्पटकेकार्यंतरुणेरक्तमोक्षणम्।
सपंचलवणक्षारंसक्षौद्रंप्रतिसारणम्॥ ११ ॥
विस्राविते दन्तवेष्टव्रणन्तुप्रतिसारयेत्।
शस्त्रेणदन्तवैदर्भेदन्तमूलानिशोधयेत्॥ १२॥
ततःक्षीरंप्रयुंजीतक्रियाःसर्वाश्चशीतलाः।
तैलंमधुककाकोलीशर्करासाधितंहितम्॥ १३ ॥
विद्रधौकटुतिक्तोष्णरूक्षैःकवललेपनम्॥ १४ ॥

अर्थ–नवीनदन्त पुप्पुट रोगमें रक्त मोक्षण (फस्त) कराना हितकारीहै। पांचोंनोन और जवाखारको सहतमें मिलाकर दन्तवेष्ट रोगमें रक्तमोक्षण कराकर पश्चात् प्रतिसारणके द्वारा व्रण नष्ट करे। दन्त वैदर्भ रोगमें दन्तमूलोंको शुद्ध करकै पश्चात् दूध और सर्व प्रकारकी शीतल क्रियाकरै। मुलेठी, काकोली और खाँडके द्वारा सिद्ध किये हुए तेलसेभी दन्तवैदर्भरोग दूर होताहै। कटु, तिक्त, रूक्ष और उष्ण द्रव्योंका कवल और लेपनके द्वारा दन्त विद्रधि रोगकी चिकित्सा करनी चाहिये॥ ११॥ १२॥ १३॥ १४॥

चलद्दन्तास्थिरकरंकार्यंवकुलचर्वणम् ।
दन्तचालेहितंश्रेष्ठंतिलोग्राचर्वणंहितम् ॥ १५ ॥
दन्तकालेतुगण्डूषोबकुलत्वक्कृतोहितः ।
क्काथोवादशमूलस्यसस्नेहःकवलग्रहः ॥ १६ ॥
भद्रमुस्ताभयाव्योषविडंगारिष्टपल्लवैः ।
गोमूत्रपिष्टैर्गुडिकांछायाशुष्कांप्रकल्पयेत् ॥ १७ ॥
तांनिधायमुखेदद्यादन्तचालंजयेद्ध्रुवम् ।

अर्थ–मौलसिरीकी छालको चाबनेसे चलदन्त रोग (दांतोंकाहिलना) स्थिर होजाताहै । तिल, और वच दोनोंको मिलाकर चाबनेसे अथवा मौलसिरीके रसके द्वारा कवल धारण करनेसे या दशमूलके क्काथको घृत या तेलके साथ कुल्ले करनेसे, या नागरमोथा, हरड़, सोंठ, मिरच, पीपल, वायविडंग और नीमके पत्ते इन सब औषधियोंको पीस गोलीबना छायामें सुखाकर मुखमें धारण करनेसे हिलतेहुए दांत स्थिर होजातेहैं ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥

तुलाघृतांनीलसहाचरस्यद्रोणेऽम्भसःसंस्रवणंयथावत् ।
कृत्वाचतुर्भागरसेचतैलंपचेच्छनैरर्द्धपलप्रमाणैः ॥ १८ ॥
कल्कैरनन्ताखदिरेरिमेदाजम्ब्वाम्रयष्टीमधुकोत्पलानाम् ।
तत्तैलमाश्वेवघृतंमुखेनस्थैर्य्यंद्विजानांविदधातिसद्यः ॥ १९

इतिसहाचरतैलम् ।

अर्थ–तिलकातेल २ दो सेर, क्काथके लिये कटसरैया ६। सवाछैसेर, जल ३२ बत्तीस सेर, शेष ८ आठसेर और कल्कके लिये अनन्त मूल, खैर, दुर्गंध खैर, जामुन, आम, मुलैठी और कमल ॥ आधसेर, यथा विधिसे तैलको सिद्धकर मुखमें धारण करनेसै चलदन्त स्थिर हो जातेहैं ॥ १८ ॥ १९ ॥

वकुलस्यफलंलोध्रंवज्रवल्लीकुरुण्टकम् ।
चतुरंगुलबघोलंवाजिकर्णौविनाशनम् ॥ २० ॥

एषांकषायकल्काभ्यांतैलपक्कंमुखेधृतम्।
स्थैर्य्यंकरोतिदन्तानांचलतांपवनेनच ॥ २१ ॥

इतिवकुलाद्यंतैलम्।

अर्थ–तिलका तेल २ दो सेर, जल बत्तीस सेर, काथके लिये मौल सिरीकेफल, लोध, वज्रवल्ली, कटसरैया, अण्ड, बबूर, और पियासाल यह सब ६। सवाछैसेर, शेष ८ आठसेर, और कल्कके लियेभी येही सब औषधि ऽ।। आधसेर यथा विधिसे तैलको सिद्धकरै। इसतेलको मुखमें धारण करनेसे वायु जन्य चलदन्त स्थिर होजातेहैं ॥ २० ॥ २१ ॥

बृहत्यास्तुफलंपिष्ट्वासर्पिषासहदापयेत्।
अस्यधूमोमुखेनैवधार्योदन्तरुजापहः ॥ २२ ॥
नीलीवायसजंघास्तुवज्रीणांमूलमेकैकम्।
संचर्व्यदशनविधृतंदशनकृमिपातनंसद्यः ॥ २३ ॥
दन्तमूलकृमिहरंवासामूलस्यचर्वणम्।
बीजपूरकमूलन्तुवागुजीबीजसंयुतम् ॥ २४ ॥
वर्त्तीकृतंदन्तदत्तंकृमिदन्तकनाशनम्।
स्नूहार्कयोर्वादुग्धेनदन्तच्छिद्रंप्रपूरणम् ॥ २५ ॥
फलान्यम्लानिशीताम्बुरूक्षान्नंदन्तधावनम्।
तथातिकठिनान्भक्षान्दन्तरोगीविवर्जयेत् ॥ २६ ॥

अर्थ–कटाईके फलोंको घृतमें पीसकर उनकाधुआँ मुखमें धारण करनेसे दन्त गतपीडा दूर हो जातीहै। नील, या काकजंघा अथवा थूहरकी जड़को चाबकर दाँतोंमें धारण करनेसे तत्काल दांतोंके कीड़े गिर पड़तेहैं। अडूसेकी जड़को चाबनेसे दन्तमूलगत कृमि नष्ट हो जातेहैं। बिजौरेकी जड़, और बापचीके बीज दोनोंको एकत्र पीस बत्ती बनाके दाँतोंमें रखनेसे कृमिदन्तकरोग दूर होताहै। थूहरका दूध अथवा आकका दूध दाँतोंमें भरनेसेभी कृमिदन्तकरोग नष्ट होताहै। दन्त रोगी अम्लपित्त, शीतलजल, रूखा अन्न, दतौन और अत्यन्त कठिन पदार्थोंका भोजन त्याग देवै ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥

बलाक्काथोमाक्षिकसैन्धवगृहधूममालतीयुक्तः ।
गण्डूषेणनिहन्यादुपजिह्वांकण्ठशालूकञ्च ॥ २७ ॥
वचामतिविषांपाठांरास्नांकटुकरोहिणीम् ।
निक्काथ्यपिचुमर्दश्चकवलंतत्रयोजयेत् ॥ २८ ॥
क्षीरसिद्धेषुमुद्गेषुयूषश्चाप्यशनेहितः ।
मरिचातिविषापाठावचाकुष्ठाम्बुदैस्तथा ॥ २९ ॥
क्षौद्रयुक्तैःससिन्धूत्थैर्गलशुण्डींप्रघर्षयेत् ।
उपजिह्वांतथाहन्तिगलशुण्डीमशेषतः ॥
गलशुण्डीहरंतद्वच्छेफालीमूलचर्वणम् ॥ ३० ॥

अर्थ–खिरेटीके क्वाथमें सहत, सैंधानोन, घरकाधुआँ और मालती केफूलोंका चूर्ण मिलाकर गण्डूष धारण करनेसे उपजिह्विका और कण्ठ शालूक रोग दूर होताहै । बच, अतीस, पाठ, रास्ना, कुटकी और नीमकीछाल, इनका क्वाथ बना कवल धारण करनेसे उपजिह्विका और कंठ शालूक रोग दूर होताहै । दूधके साथ मूंगका यूष बनाकर उपजिह्विका और कंठशालूक रोगपै पथ्य देवै । काली मिरच, अतीस, पाढ़, वच, कूठ, और नागरमोथा, इन सब औषधियोंका चूर्ण कर सहत और सैंधानोन मिलाकर घिसनेसे गलशुण्डी रोग और उपजिह्वा रोग दूर होताहै । हारसिंगारकी जड़को चाबनेसै गल शुण्डीरोग दूर होताहै ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥

साध्यानांरोहिणीनांचहितंशोणितमोक्षणम् ।
छर्दनंधूमपानञ्चगण्डूषोनस्तकर्म्मच ॥ ३१ ॥
वातिकन्तुगतेरक्तेलवणैःप्रतिसारयेत् ।
क्काथोबृहत्पंचमूलाद्गण्डूषश्चात्रशस्यते ॥ ३२ ॥

अर्थ–साध्यकंठरोहिणी रोगमें रक्तमोक्षण,वमन,धूमपान, गंडूष धारण और नस्य कर्म्म प्रयोगकरना चाहिये । वातज कंठरोहिणी रोगमें प्रथम रक्त मोक्षणकराकर पश्चात् सैंधानोनके चूर्णके द्वारा प्रतिसार अथवा बृहत्पंचमूलके काथका गंडूष धारण करनेसे विशेष लाभ होताहै ३१॥३२

गृहधूमयवक्षारःपाठाव्योषरसांजनम्।
तेजोह्वात्रिफलालौहंचित्रकंचेतिचूर्णितम् ॥ ३३ ॥
सक्षौद्रंधारयेदेतद्गलरोगविनाशनम्।
कालकन्नामतच्चूर्णंदन्तस्यगलरोगनुत् ॥
तेजोऽह्वाचक्रीलौहंजारितपुटितम् ॥ ३४ ॥

इतिकालकचूर्णम्।

अर्थ-घरकाधुआँ, जवाखार, पाढ़, सोंठ, मिरच, पीपल, रसौत, चव्य, हरड़, बहेड़ा, आमला, लोहा और चीतेकी जड़, इन सबको एकत्र पीस सहत मिलाके मुखमें धारण करनेसै दन्तरोग और गलरोग दूर होताहै, इसको कालक चूर्ण कहते हैं ॥ ३३ ॥ ३४ ॥

मनःशिलायवक्षारोहरितालंससैन्धवम्।
दार्वीत्वक्चेतितच्चूर्णमाक्षिकेणसमायुतम् ॥ ३५ ॥
मूर्च्छितंघृतमण्डेनकण्ठरोगेषुधारयेत्।
मुखरोगेषुचश्रेष्ठंपीतकन्नामकीर्त्तितम् ॥ ३६ ॥

इतिपीतकचूर्णम्।

अर्थ-मैनशिल, जवाखार, हरिताल, सैंधानोन और दारुहलदीकी छाल, यह सब समान भागले सहतमिला घृतसेमूर्च्छितकर मूखमें धारण करनेसे कण्ठरोग और मुखरोग आरोग्य होताहै ॥ ३५ ॥ ३६ ॥

जातीपत्रपुनर्नवातिलकणाकौरण्टयकुष्ठंवचा।
शुण्ठीदीप्यहरीतकंसमघृतंचूर्णंमुखेधारितम् ॥ ३७ ॥
वातघ्नंक्रिमिकण्डुशूलदलनंसर्वामयघ्नंसकृत्।
दुर्गन्धादिसमस्तदोषविमलंदन्तश्ववज्रायते ॥ ३८ ॥
सप्तच्छदोशीरपटोलमुस्तहरीतकीतिक्तकरोहिणीभिः।
यष्ट्याह्वराजद्रुमचन्दनैश्चक्काथोहरेत्पाकमुखंनरस्य ॥ ३९ ॥
ताम्रपात्रेक्षणंपाच्यंअभयाचूर्णितंमधु।
कठिनागुड़िकाकार्यादन्तैर्धार्याक्रिमिहरेत् ॥ ४० ॥

अर्थ–चमेलीके पत्ते, पुनर्नवा, तिल, पीपल, पियावाँसा, कूठ, वच सोंठ, अजवायन और हरड़ यह सब द्रव्य समान भागलेकर मुखमें धारणरनेसे–वात, कृमि, कण्डू, शूल और दुर्गन्धादि सम्पूर्ण दोष दूर होकर दन्त निर्म्मल और व्रजके समान दृढ़ होजातेहैं । सतोनेकी छाल खस, पटोल, नागरमोथा, हरड कुटकी, अमलतास और लालचन्दनका क्काथ बनाकर पीनेसे मुखपाक रोग दूर होजाताहै । हरड़का चूर्ण और सहत दोनोंको ताँबेके बासनमें मंद अग्निसै पकाकर शक्त गोली बनाकर दाँतोंमें रखनेसे दाँतोंके कीड़े गिरजातेहैं ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥४०॥

कौशिकंहिंगुसौराष्ट्रींपिष्ट्वाचैवसमंजलैः ।
गुड़िकांधारयेद्दन्तेकृमिशूलहरंपरम् ॥ ४१ ॥
यवचिञ्चाजयापुंखामूलंवाचूर्णमाहरेत् ।
चलदन्तादृढकराःप्रत्येकंदन्तघर्षनात् ॥ ४२ ॥
जातीकुरुण्टपत्रंवाचर्वयेत्प्रातरुत्थितः ।
स्थिराश्चचलितादन्तातत्काष्ठेदंतधावनात् ॥ ४३ ॥

अर्थ–गूगल, हींग, और सोरठकी मिट्टी समानभागले जलमें पीस कर गोली बना दाँतोंमें रखनेसे कृमि शूलरोग नष्ट होताहै । शंखिनी, जयन्ती और शरफोंके की जड़ इनमेंसे किसीएकका चूर्णकर दाँतोंको घिसनेसे हिलते हुए दाँत दृढ होजाते हैं । चमेलीके पत्ते, अथवा पियाबाँसेके पत्ते प्रातःकाल उठकर चाबनेसे तथा चमेलीकी लकड़ी या बाँसे की लकड़ीसे दतौन करनेसे चलदन्त स्थिर होजाते हैं ॥४१॥४२॥४३॥

मुण्डीशुण्ठीवचाकुष्ठंपाठाक्षौद्रविनिश्चितम् ।
गुटिकांधारयेद्दन्तेकृमिशूलहरंभवेत् ॥ ४४ ॥
त्रिसूतंरौप्यमेकन्तुजम्बीराणांद्रवैर्युतम् ।
जम्बीरफलमध्यस्थंवस्त्रवद्धात्र्यहंपचेत् ॥ ४५ ॥
क्षारमध्येसमुद्धृत्यगुटिकाभंततःपुनः ।
भावितंभानुदुग्धेनतालकंसूक्ष्ममुण्डितम् ॥ ४६ ॥
तन्मध्येगुटिकांक्षिप्त्वावस्त्रेबध्वादिनत्रयम् ।

मधुभाण्डगतंपच्यादुद्धृत्यचास्यधारितम् ॥ ४७ ॥
चलांश्चगलितान्दन्तान्सप्ताहात्कुरुतेदृढम् ॥४८॥

अर्थ–गोरख सुण्डी, सोंठ, वच, कूठ और पाढ़ यह सब औषधि समान भागले चूर्णकर सहत मिलाकर गोली बना दाँतोंमें रखनेसे दंतगत कृमि शूल नष्ट होजाताहै । पारा ३ तीन भाग, और रूपा एक १ भाग, दोनोंको एकत्र खरल करै, पश्चात् इसमें जम्भीरीनीबूका रस मिलाकर जँभीरी नीबूके भीतर रख वस्त्रसे बाँध तीन दिनतक पकावै, पश्चात् खूब बारीक पिसी हुई हरितालको आकके दूधमें भावनादे जवाखारके साथ पूर्वोक्तमें मिलाकर गोली बना उक्त जम्भीरी नीबूमेंभर वस्त्रसे बाँध सहतसे भरेहुए भाँडेमें डालकर ३ तीन दिनतक पकावै । इस औषधिको मुखमें धारण करनेसे ७ सात दिनमेंही चलदन्त निश्चल होजातेहैं ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥

पारदंविमलाताप्यंत्रिकटुस्ताम्रसैन्धवम् ।
तुल्यंगवांजलैःपिष्टंसुखोष्णंलेपयेन्मुहुः ॥ ४९ ॥
त्रिदिनात्कण्ठशालूकंगलगंडञ्चनाशयेत् ।
तेजोह्वांत्रिफलांलोहंचित्रकंचूर्णयेत्समम् ॥ ५० ॥
सक्षौद्रंलेपयेत्कण्ठंगलरोगप्रशान्तये ।
समंगाधातकीलोध्रश्यामापद्मकरेणुभिः ॥
अवचूर्ण्यंपाचनीयंयुञ्ज्याच्चमुखधावनम् ॥ ५१ ॥

अर्थ–पारा, विमला (सोनामाखीभेद) सोनामाखी, सोंठ, मिरच, पीपल, ताँबा और सैंधानोन, यह सब औषधि समान भाग लेवै, फिर इनको गोमूत्रमें पीस किंचित् गरम करकै वारंवार प्रलेप करनेसे ३ तीन दिनमेंही गलगण्ड और कण्ठशालूक रोग दूर होताहै । चव्य, हरड़, बहेड़ा, आमला, लोहा, चीता, यह सब औषधि समान भागले बारीक चूर्णकरै, पश्चात् इसचूर्णमें सहत मिलाकर कण्ठमें लेपकरनेसे गलरोग दूर होताहै । मजीठ, धायके फूल, लोध, कारियावासाऊ, पद्माख और रेणुका, इनका क्वाथ बनाकर अथवा चूर्णकर तिस क्वाथ

या चूर्णसे मुख धोनेसे सर्व प्रकारके गलरोग दूर होजाते हैं ॥ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥

घनकुष्ठैलाधान्याकयष्टीमध्वेलवालुकैः ।
वदनस्थंपूतिगंधंहरतिमुरालशुनगंधंच ॥ ५२ ॥
(चूर्णैः कवलः)
कोषफलकुष्ठमरुवकभृंगैर्वर्त्तिःकृताघृतावक्त्रे ।
घोरमुखपूतिगंधंहत्वाकुरुतेऽतिकमनीयम् ॥ ५३ ॥

अर्थ–नागरमोथा, कूठ, छोटीइलायची, धनिया, मुलेठी और एलुआ, इन सब औषधियोंका कवल धारण करनेसे अथवा कपूर, कचरी, लशुन और एलुआ इनका चूर्णकर कवल धारण करनेसे मुखकी दुर्गन्ध दूर होती है । जायफल, कूठ, मरुवेके फूल और भांगरा, इन सबद्रव्योंको एकत्रपीस बत्तीबनाकर मुखमें धारणकरनेसे मुख की घोर दुर्गन्ध दूर होजाती है ॥ ५२ ॥ ५३ ॥

इरिमेदत्वक्पलशतमापोथ्यखण्डशःकृत्वा ।
तोयाढकैश्चतुर्भिर्निःक्वाथ्यंचतुर्दशाहेन ॥ ५४ ॥
क्वाथेनतेनमतिमान्तैलस्याद्धाढकंपचेत् ।
कल्कैरक्षमांसैर्मञ्जिष्ठालोध्रमधुकानाम् ॥ ५५ ॥
कट्फललाक्षान्यग्रोधमुस्तसूक्ष्मैला ।
कर्पूरागुरुपद्मकलवंगकंकोलजातीनाम् ॥ ५६ ॥
फलपत्तंगगैरिकवराङ्गगजकुसुमधातकीनाम् ।
सिद्धंभिषग्विदध्यादिदंमुखोत्थेषुरोगेषु ॥ ५७ ॥
परिशीर्णदन्तविद्रधिशौषिरशीताददन्तहर्षेषु ।
कृमिदन्तहरणचालितप्रकृष्टमांसावशीर्णेषु ॥ ५८ ॥
मुखादौकुष्ठेकार्यंप्रागुक्तेष्वामयेषुतैलमिदम् ॥ ५९ ॥

इति इरिमेदाद्यंतैलम् ।

अर्थ–तिलकातेल ८ आठ सेर, क्वाथके लिये खैर ६। सवा छे सेर,

जल ३२ बत्तीस सेर, शेष ८ आठ सेर, इस क्राथको चौदह दिनमें पकावै, तथा कल्कके लिये मजीठ, लोध, मुलेठी, कायफल, लाख, वटांकुर, नागरमोथा, छोटीइलायची, कपूर, अगर, पद्माख, लौंग, कंकोल, जायफल, चमेलीके फूल, लालचंदन, गेरू, दालचीनी, नागकेशर और धायके फूल, प्रत्येक २ दो तोले, यथा विधिसे तेलको सिद्ध करै, यह तेल-सर्व प्रकारके मुखरोग, शीर्णदन्त, दन्तविद्रधि, शौषिर, शीताद, आदि रोगोंको दूर करै है ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥

तैलंलाक्षारसंक्षीरंपृथक्प्रस्थेसमंपचेत्।
चतुर्गुणेरिमेदक्काथेद्रवैश्चपलसम्मितैः ॥ ६० ॥
लोध्रकट्फलमंजिष्ठापद्मकेशरपद्मकैः।
चन्दनोत्पलयष्ट्याह्वैस्तैलंगण्डूषधारणम् ॥ ६१ ॥
दालनंदन्तचालश्चदन्तमोक्षंकपालिकाम्।
शीतादंपूतिवक्रत्वमरुचिंविरसास्यताम् ॥
हन्त्यादाशुगदानेतान्कुर्याद्दन्तानपिस्थिरान् ॥ ६२ ॥

इति लाक्षाद्यंतैलम्।

अर्थ-तिलकातेल २ दो सेर, लाखका काथ २ दो सेर, गायका दूध २ सेर, दुर्गन्ध खैरका काथ ८ आठ सेर, तथा कल्कके लिये-लोध, कायफल, मजीठ, कमलकेशर, पद्माख, लालचंदन, कमल और मुलेठी, प्रत्येक ४ चार तोले, यथा विधिसे तेलको पकाकर गण्डूष धारण करनेसे दालन, दन्तचालन, दन्तमोक्षादि, नाना प्रकारके दंत गत और मुखगत रोग दूर हो जाते है ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥

एलालतालवलिकाफलशीतकोष
कोलद्विकानिखदिरस्यकृतेकषाये।
तुल्यांशकानिदशभागमितेनिधाय
प्रोद्भिन्नकेतकिपुटेपुटद्विपाच्य ॥ ६३ ॥
प्रागंशतुल्यशशिनाभितदेकशस्तं

पिष्टानवेनसहकाररसेनहस्तौ ।
लिप्त्वायथाभिलषितांगुटिकांविदध्या
त्स्त्रीपुंसयोर्वदनसौरभवल्गुभूताम् ॥ ६४ ॥

इति सहकारिवटिका ।

अर्थ-इलायची, लताकस्तूरी, लवंगफल, कपूर, जायफल, कंकोल और अगर यह सब औषधि समान भागले दश गुने खैरके क्काथमें मिलाकर केतकी पुटमें स्थापन कर पकावै, शीतल होनेपर निकाल लेवै, पश्चात् इसमें पूर्व भागकी समान एक भाग कपूर और एक भाग कस्तूरी मिला लेवै, फिर कलमी आमके रसको हथेली लेपकर पूर्वोक्त औषधिकी गोलियें बनालेवै । इन गोलियोंको मुखमें धारण करनेसे स्त्री पुरुष दोनोंका मुखमण्डल सुगंधित और कमनीय हो जाताहै ॥ ६३ ६४॥

खदिरस्यतुलांसम्यक्जलद्रोणेविपाचयेत् ।
अष्टभागावशेषेणदद्यादत्रघनीकृते ॥ ६५ ॥
जातीकर्पूरपूगानिकंकोलकफलानिच ।
इत्येषागुटिकाकार्यासुखसौभाग्यवर्द्धनी ॥ ६६ ॥
दन्तोष्ठमुखरोगेषुजिह्वाताल्वाशयेषुच ॥ ६७ ॥

इति स्वल्पखादिर वटिका ।

अर्थ-६ छैसेर खैरके टुकडोंको ३२ बत्तीस सेर जलमें पकावै, जब आठमा भाग शेष रहजाय तब उतारकर छान लेवै,पश्चात् इस छने हुए क्काथको फिर पकावै, जब गाढ़ा होजाय तब जावित्री, कपूर, शीतलचीनी, सुपारी और जायफल, प्रत्येक ४ चार तोले मिलाकर गोली बनालेवै । यह गोली-सुख और सौभाग्यको बढानेवालीहै, तथा मुखरोग, तालुरोग और दन्तरोगादिको दूर करैहै ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥

मायत्रिसारतुलामिरिमेदवल्कलानां
सार्द्धतुलायुगलमम्लघटैश्चतुर्भिः ।
निःक्काथ्यपादमवशिष्यसुवस्त्रपूतं
भूयःपचेदथशनैर्मृदुनानलेन ॥ ६८ ॥

तस्मिन्घनत्वमुपगच्छतिचूर्णमेषां
क्षिप्रंक्षिपेच्चकवडग्रहभागिकानाम् ॥
एलामृणालसितचंदनचंदनाम्बु ।
श्यामातमालविकषाघनलोहयष्टी ॥ ६९ ॥
लज्जाफलत्रयरसांजनधातकीभिः
श्रीपुष्पगैरिककटंकटकट्फलानाम् ।
पद्माह्वलोध्रवटरोहयवासकानां
मांसीनिशासुरभिवल्कलसंयुतानाम् ॥ ७० ॥
कक्कोलजातिफलकोषलवंगकानि
चूर्णीकृतानिविदधीतपलांशिकानि ।
शीतेऽवताय्यंघनसारचतुष्पलञ्च
क्षिप्त्वाकलायसदृशींगुटिकांप्रकुर्यात् ॥ ७१ ॥
शुष्कामुखेविनिहिताविनिवारयन्ति ।
रोगान्गलौष्ठरसनाद्विजतालुजातान् ।
कुर्यान्मुखेसुरभितांपटुतारुचिञ्च
स्थैर्यस्परंदशनगंरसनालघुत्वम् ॥ ७२ ॥

इति बृहत्खादिरवटिका ।

अर्थ–खैरसार १२॥ साढ़ेबारहसेर, और दुर्गन्धखैरकी छाल ॥ ३१। सवाइकतीस सेर, पाकके लिये काँजी ४ द्रोण, शेष १ एकद्रोण रक्खै इसकाढ़ेको उत्तमरीतिसे छानकर फिर पकावै, जब पकते पकते गाढ़ा होजाय तब छोटी इलायची, खस, सफेदचंदन, लालचंदन, सुगंधवाला करियावासाऊ, श्यामतमालकी छाल, मजीठ, नागरमोथा, अगर, मुलेठी, लज्जावंती, हरड़, बहेड़ा, आमला, रसौत, धायकेफूल पुण्डेरिया गेरू, दारुहलदी, कायफल, पद्माख, लोध, वडके अंकुर, धमासा, बाल छड़, हलदी, कुन्दुरु, दालचीनी, शीतलचीनी जायफल, जावित्री और लोंग, प्रत्येक चारचार तोले, मिलादेवै, जब शीतल होजाय तब १६ सोलह तोले कपूरका चूर्ण मिलाकर मटरकी समान गोलियें बनालेवै ।

इन गोलियोंको सुखाकर मुखमें धारण करनेसे-गलरोग, ओष्ठरोग जिह्वारोग, दन्तरोग और तालुरोग दूर होतेहैं। मुखमें सुगंधि, पटुता, और रुचि उत्पन्न होतीहै ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२ ॥

मृतसूताभ्रकंतुल्यंमृतलोहंशिलाजतु।
गुग्गुलुश्चशिलाताप्यंसमांशमधुनालिहेत् ॥
मासमात्रप्रयोगेणमुखरोगंविनाशयेत् ॥ ७३ ॥

इति सप्तामृतरसः।

इति मुखरोग चिकित्साध्यायः।

अर्थ-पारेकीभस्म, अभ्रककीभस्म, लोहेकीभस्म, शुद्धशिलाजीत, शुद्धगूगल, मैनशिल और सोनामाखी, यह सब समानभागले चूर्णकर सहतमें मिलाकर चाटनेसे एक महीनेमें ही सर्व प्रकारके मूख रोग दूर हो जाते है और दातोंमें दृढ़ता उत्पन्न होतीहै, और जिह्वामें कोमलता उत्पन्न होती है ॥ ७३ ॥

इति मुखरोगचिकित्सासमाप्ता।

अथकर्णरोगचिकित्सामाह।

सामान्यकर्णरोगेषुघृतपानंरसायनम्।
अव्यायामोऽशिरःस्नानंदिवास्वप्नमभाषणम् ॥ १ ॥
कपित्थमातुलुंगाम्बुशृंगवेररसैःशुभैः।
सुखोष्णैःपूरयेत्कर्णंकर्णशूलोपशान्तये ॥ २ ॥

(कपित्थस्यफलम्)

लशुनार्द्रकशिग्रूणांसुरङ्ग्यामूलकस्यच।
कदल्याःस्वरसःश्रेष्ठंकदुष्णःकर्णपूरणे ॥ ३ ॥

(सुरंगीरक्तशोभांजनः)

अर्थ-सामान्यकर्णरोगोंमें घृतपानही रसायनहै। व्यायाम (कसरत) नहीं करना, सिरसे स्नान नहीं करना, दिनमें नहीं सोना, और बहुत कम बोलना, यह सब कर्ण रोगमें विशेष हितकारी है। कैथ, बिजोरेनीबूका रस और अदरखका रस, इनको गरम करके कान में डालनेसे-कर्णशूल नष्ट होता है। लशुन अदरख, सैंजिना, लाल-

सेकाजिना, मूली और केला, इनका किंचित् गरम रस कानमें भरने सैशूल नष्ट होता है ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥

आर्द्रकसूर्यावर्त्तशोभाञ्जनमूलकस्वरसाः।
मधुतैलसैन्धवयुताःपृथग्युक्ताःकर्णशूलहराः ॥ ४ ॥
कोष्णाशिग्रुरसःकर्णेतिलतैलेनशूलनुत्।
कर्कपत्रपुटेदग्धःस्नुहीपत्रभवोरसः ॥
कदुष्णःपूरणादेवकर्णशूलनिवारणः ॥ ५ ॥
अर्कस्यपत्रंपरिणामपीतमाज्येनलिप्तंशिखिनावतप्तम्।
अपीड्यतोयंश्रवणेनिषिक्तंनिहन्तिशूलंबहुवेदनञ्च ॥६॥

अर्थ-अदरख, हुलहुल और सैंजिनेकी जडका रस अलग २ सहत, तेल, सैंधानोन के साथ कानमें डालनेसे कर्णशूल नष्ट होता है। किंचित् गरम सैंजिनेका रस तिलोंके तेलमें मिलाकर कानमें डालनेसे कर्णशूल नष्ट होता है। आकके पत्तोंके पुटमें पकाया हुवा थूहरके पत्तोंका रस किंचित् गरम करकै कानमें डालनेसे निश्चय कर्णशूल नष्ट होता है। आकके पकेहुए पीले पत्तोंपे घृत चिपडके आगसे गरम कर कानमें निचोडने से कर्णशूल और अत्यन्त पीडा दूर हो जाती है ॥ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥

तीव्रशूलार्त्तवेकर्णेसशब्दक्लेदवाहिनि।
बस्तमूत्रंक्षिपेत्कोष्णंसैन्धवेनसमन्वितम् ॥ ७ ॥
अंगारपूर्णात्तैलाक्तादश्वत्थदलखल्लकात्।
च्युतंतैलंजयेत्सद्यःपूरणात्कर्णवेदनाः ॥ ८ ॥

अर्थ-कानमें शूलकी समान तीव्र वेदना, शब्द और क्लेद होय तो बकरेके मूत्रमें सेंधेनोनका चूर्ण डाल गरम करकै कानमें डालै। पीपलके पत्तोंमें तेल या घी मिलाके खरलकर अंगारोंकी आग पै धर देवै, इन अंगारोंमेंसे जो तेलकी बूंदे टपकै, उन बूंदोंको कानमें डालनेसे कानकी पीडा दूर होती है ॥ ७ ॥ ८ ॥

हिंगुतुम्बुरुशुण्ठीभिःसाध्यंतैलन्तुसार्षपम्।
कर्णशूलेप्रधानन्तुपूरणंहितमुच्यते॥ ९॥

इति हिंग्वाद्यंतैलम्।

अर्थ-सरसों का तेल २ दो सेर और कल्कके लिये हींग, कडवी तोंम्बी और सोंठ, यह सब आधसेर, यथाविधिसे तेलको पकावे। इस तेलको कानमें डालनेसे-कर्णशूल नष्ट होताहै॥ ९॥

रास्नाघृतैरण्डसुराह्वविश्वंतुल्यंपुरेणाथविमर्द्यखादेत्।
वातामयीकर्णशिरोगदीचनाडीव्रणंचापिभगन्दरीच॥ १०॥

इति रास्नादि गुग्गुलुः।

अर्थ-रास्ना, घृत, अण्ड, देवदारु, सोंठ, यह सब समान भाग, और सबकी बराबर गूगलले एकत्र खरलकर सेवन करनेसे- वातरोग, कर्ण-रोग, शिरोरोग नाड़ी व्रण और भगंदर रोग नष्ट होजातेहैं॥ १०॥

बालमूलकशुण्ठीनांक्षारोहिंगुसनागरम्।
शतपुष्पावचाकुष्ठंदारुशिग्रुरसांजनम्॥ ११॥
सौवर्चलंयवक्षारःस्वर्जिकोद्भिदसैन्धवम्।
मातुलुंगरसंचैवकदल्यारसएवच॥ १२॥
तैलमेभिर्विपक्तव्यंकर्णशूलहरंपरम्।
बाधिर्य्यंकर्णनादश्चपूयास्रावश्चदारुणः॥ १३॥
पूरणादस्यतैलस्यक्रमयःकर्णसंश्रिताः।
क्षिप्रंविनाशंगच्छन्तिकृष्णात्रेयस्यशासनात्॥ १४॥
क्षारतैलमिदंश्रेष्ठंमुखकर्णामयापहम्।
मधुप्रधानंशुक्तञ्चमधुशुक्तंतथापरम्॥ १५॥
जम्बीरस्यफलरसंपिप्पलीमूलसंयुतम्।
मधुभाण्डेविनिक्षिप्यधान्यराशौनिधापयेत्॥ १६॥
मासेनतज्जातरसंमधुशुक्तमुदाहृतम्॥ १७॥

इति क्षारतैलम्।

तिलकातेल दोसेर, बिजौरे नीबूकारस २ दोसेर, केलेका रस २ सेर, और कल्कके लिये कच्ची सूखी मूलीका खार, हींग, सोंठ, सोया, वच, कूठ, देवदारु, सैंजिनेकी जडकी छाल, रसौत, कालानोन, जवाखार, सज्जी, औद्भिदनोन, और सैंधेनोनका चूर्ण, प्रत्येक ऽ॥ आधसेर, यथा विधिसे तेलको पकावै। यहतेल- कर्णशूल, बधिरता, कर्णनाद, पूयस्राव, और कानके कीडोंको दूर करैहै, तथा मुख और सम्पूर्ण कानके रोगोंको दूर करैहै। यह क्षारतेल कृष्णात्रेयने कहाहै। अनुपान-मधु प्रधान शुक्त तथा मधुशुक्तहै। मधुशुक्त बनानेकी विधि यहहै किजम्भीरी, निम्बूका रस और पीपलामूलके चूर्णको सहतसे भरेहुए बासनमें डालकै धानोंके ढेरमें धरदेवै,पश्चात् १ एक महीनेके बाद निकाललेवै, उसबासनकेही रसको मधुशुक्त कहते हैं ॥११॥१२॥१३॥१४॥१५॥१६॥१७॥

गुडविश्वाम्बुनानस्यंनादबाधिर्ययोर्हितम् ॥ १८ ॥

अर्थ-सोंठके काथमें गुड डालकर नासदेनेसे कर्णनाद और बधिरता दूरहोतीहै ॥ १८ ॥

स्वर्जिकामूलकंशुष्कंहिंगुकृष्णामहौषधम् ।
शतपुष्पाचतैस्तैलंपक्त्वाशुक्तचतुर्गुणम् ॥ १९ ॥
प्रनादशूलबाधिर्यस्रवश्चाशुव्यपोहति ॥ २० ॥

इति स्वर्जिकाद्यं तैलम् ।

अर्थ-तेल दो २ सेर, काँजी ८ आठसेर, और कल्कके लिये सज्जी, सूखीमूली, हींग, पीपल, सोंठ, और सोया, यह सब ऽ॥ आधसेर, यथाविधिसे तेलको सिद्धकरै। इस तेलको कानमें डालनेसे कर्णनाद, कर्णशूल, बधिरता और पूयस्राव दूरहोताहै ॥ १९ ॥ २० ॥

दशमूलीकषायेणतैलप्रस्थंविपाचयेत् ।
एतत्कल्कंप्रदायैवबाधिर्येपरमौषधम् ॥ २१ ॥

इति दशमूलीतैलम् ।

अर्थ-तेल २ दो सेर, दशमूलका काथ ८ आठसेर, तथा कल्कके लियेभी दशमूलका चूर्ण ऽ॥ आधसेर, यथाविधिसे तेलको पकाकर कानमें डालनेसे-बधिरता दूरहोतीहै ॥ २१ ॥

फलंबिल्वस्यमूत्रेणपिष्ट्वातैलंविपाचयेत् ।
साजक्षीरंतद्धिहरेद्बाधिर्येकर्णपूरणम् ॥ २२ ॥

इति बिल्वतैलम् ।

अर्थ-तेल २ दोसेर, बकरीकादूध ८ आठसेर, और कल्कके लिये गोमूत्रमें पिसाहुवा तेल ऽ॥ आधसेर, यथाविधिसे तेलको सिद्धकर कानमें डालनेसे बधिरता दूरहोजातीहै ॥ २२ ॥

जम्ब्वाम्रपत्रंतरुणंसमांशंकापित्थकर्पासफलश्चसार्द्रम् ।
क्षुद्रारसन्तंमधुनाविमिश्रंस्रावापहंसप्रवदन्तितज्ज्ञाः २३
चूर्णाधिकन्तुताम्बूलंसंचर्व्यास्यरसेनतु ।
पूरणान्नियतन्त्याशुमृताःकारण्डकादयः ॥ २४ ॥
नीलबह्वारसस्तैलसिन्धुकांजिकसंयुतम् ।
कदुष्णापूरणात्कर्णेनिःशेषकृमिपातनम् ॥ २५ ॥
घृष्टंरसांजनंनार्याःक्षीरेणक्षौद्रसंयुतः ।
प्रशस्यतेचिरोत्थेचसास्रावेपूतिकर्णके ॥ २६ ॥
निर्गुण्डीस्वरसन्तैलंसिन्धुधूमरजोगुडः ।
पूरणात्पूतिकर्णस्यशमनोमधुसंयुतः ॥
जातीपत्ररसेतैलंविपक्वंपूतिकर्णजित् ॥ २७ ॥

इति जातीतैलम् ।

अर्थ-कच्चे जामुनके पत्ते, कच्चे आमके पत्ते, कच्चा कैथकाफल, कच्चे कपासके फल, और अदरख इनको समान भागले कूटकर रस निकाल लेवै, पश्चात् इस रसमें सहत मिलाकर कानमें डालनेसे पूयादिस्राव दूरहोताहै । पानमें अधिक चूनालगाकर पानको चाबकै तिसकारस कानमें डालनेसे कानके समस्त कीड़े मरजातेहैं । नीलबोनेकारस, तेल, सैंधानोन और कांजी इनको एकत्र किंचित् गरम करके कानमें डालनेसे कानके सब कीड़े गिरजातेहैं । स्त्रीके दूधमें रसौतको घिसकर सहत मिलाके कानमें डालनेसे बहुत दिनोंका स्राव युक्त पूतिकर्ण नष्ट होजाताहै । सह्मालूका रस, तेल, सेंधानोन, घरके धुंएका चूर्ण, गुड़,

और सहत एकत्र मिलाकर कानमें डालनेसे पूतिकर्णरोग दूरहोताहै । चमेलीके पत्तोंके रसमें तेलको पकाकर कानमें डालनेसे पूतिकर्ण रोग दूरहोजाताहै ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥

कुष्ठहिंगुवचादारुशताह्वाविश्वसैन्धवम् ।
पूतिकर्णापहंतैलंवस्तमूत्रेण साधितम् ॥ २८ ॥

इति कुष्ठादि तैलम् ।

अर्थ-तिलकातेल २ दोसेर, बकरीका मूत्र ८ आठसेर तथा कल्कके लिये कूठ, हींग, वच, दारुहलदी, सोया, सोंठ, और सैंधानोन, यह ऽ॥ आधसेर । यथा नियमसे तेलको सिद्धकर कानमें भरने से पूति कर्ण रोग शान्त होताहै ॥ २८ ॥

प्रस्थंशम्बूकमांसस्यकटुतैलञ्चतत्समम् ।
कुष्ठंभृंगोरजोवासाह्यर्कपत्रंस्नुहीघनम् ॥ २९ ॥
बिल्वंशालिञ्चपत्रंचकेशरंनागकेशरम् ।
द्राक्षाचातिविषाचैवयष्टीमधुकमेवच ॥ ३० ॥
शटीचैरण्डकार्पासभृङ्गकेशरजस्यच ।
एतेषांकर्षमादायपचेत्तैलंभिषग्वरः ॥ ३१ ॥
तस्यपूरणमात्रेणकर्णनाडीप्रशाम्यति ।
वाधिर्यंकर्णनादञ्चपूयास्रावंसुदारुणम् ॥ ३२ ॥
चक्षुरोगंशिरोरोगंनाशयेत्तिमिरार्बुदम् ॥ ३३ ॥

इति बृहत्शम्बूकाद्यं तैलम् ।

अर्थ-कड़वातेल २ दो सेर, शम्बूकका मांस २ दो सेर, तथा कूठ, दालचीनी, पित्तपापडा, अडूसा, आकके पत्ते, थूहरके पत्ते, नागरमोथा, वेलशालिंचके पत्र, केशर, नागकेशर, दाख, अतीस, मुलेठी, कचूर, अण्ड, कपास, भांगरा और कुकुरभांगरा यह सब ऽ॥ आधसेर, यथाविधिसे तेलको पकाकर कानमें डालनेसे कर्णनाली, बधिरता, कर्णनाद, नेत्ररोग, शिरोरोग, तिमिररोग और अर्बुदरोग नष्ट होता है ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥

शम्बूकमांसकल्केनकटुतैलंविपाचयेत् ।
अस्यपूरणमात्रेणकर्णनाडीप्रशाम्यति ॥ ३४ ॥

इति शम्बूकाद्यंतैलम् ।

अर्थ-कड़वा तेल २ दोसेर, और शम्बूकका मांस ऽ॥आधसेर दोनोंको मिलाकर यथाविधिसे टपकाकर कानमें डालनेसे कर्ण नाडी रोग नष्ट होताहै ॥ ३४ ॥

निशागन्धपलेपक्कंकटुतैलंपलाष्टकम् ।
धुस्तूरपत्रजरसेकर्णनाड़ीजिदुत्तमम् ॥ ३५ ॥

इति धुस्तूर तैलम् ।

अर्थ-कड़वातेल १ एकसेर, धतूरेके पत्तोंका स्वरस ४ चार सेर, और कल्कके लिये हलदी ४ चार तोले और गंधक चार ४ तोले, यथाविधिसे तेलको पकाकर कानमें डालनेसे कर्ण नाली रोग दूर होताहै ॥ ३५ ॥

केतकीशिग्रुलवणमारनालेनपेषयेत् ।
कर्णमूलस्थितंस्फोटंलेपनाच्चव्यथापहम् ॥ ३६ ॥
पुत्रजीवफलमज्जाज्वलेचैतत्प्रलेपिते ।
शोथोहन्तिगलेकर्णेकर्णस्फोटंविशेषतः ॥ ३७ ॥

अर्थ-केतकी, सैंजिना, सैंधानोन और कांजी इन चारोंको एकत्र पीसके लेपकरनेसे कर्णशूल स्थित पीड़ा और स्फोटक नाश होजातेहैं। पतिजियाके फलोंकी मींगको जलमें पीसके लेप करनेसे कर्णशोथ, गलशोथ, और कर्णस्फोट नष्ट होताहै ॥ ३६ ॥ ३७ ॥

मूषलीकन्दमूलञ्चमाहिषीनवनीतयुक् ।
गोलयित्वाक्षिपेद्भाण्डेधान्यराशौनिवेशयेत् ॥ ३८ ॥
सप्ताहादुद्धृतंलेपंकर्णपालीविवर्द्धनम् ।
चर्म्मचटस्यरक्तेनलेपात्कर्णौविवर्द्धते ॥ ३९ ॥

अश्वगन्धावचाकुष्ठंगजपिप्पलिकासमम् ।
महिषीनवनीतेनलेपात्कर्णोविवर्द्धते ॥ ४० ॥

अर्थ-मुसलीकी जड़को भैंसके माखनमें मिलाके गोला बनालेवै, उस गोलेको एकबासनमें स्थापनकर उस बासनको धानोंके ढेरमें धरदेवै, सात ७ दिनके बाद उसको निकालकर कानपे प्रलेप करनेसे कर्णपाली बढ़ताहै । चर्म्मचटके रुधिरका लेप करनेसे कर्ण बढ़ताहै । असगन्ध, वच, कूठ, और गजपीपल समान भागले भैंसके दूधमें पीसकर लेप करनेसे कर्णपाली बढ़ताहै ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥

कल्केनजीवनीयेनतैलंपयसिसाधितम् ।
अनूपमांसक्काथेनपालिशोषणवर्द्धनम् ॥ ४१ ॥

इति जीवनाद्यंतैलम् ।

अर्थ-तेल २ दोसेर, क्काथके लिये अनूपदेशके जीवोंके मांसका क्काथ ८ आठसेर और कल्कके लिये जीवनीयगणकी औषधि आधसेर यथाविधिसे तेलको पकाकर कानोंको मलनेसे शुष्क कर्णपाली बढ़जातीहै ॥ ४१ ॥

निशागन्धपलेद्वेतुकटुतैलंपलाष्टकम् ।
धूर्त्तपत्ररसेसिद्धंकर्णनाड़ीजिदुत्तमम् ॥ ४२ ॥

इति गन्धकतैलम् ।

अर्थ-कड़वातेल १ एकसेर, गंधक और हलदी प्रत्येक चारतोले धतूरेके पत्तोंका रस २ दोसेर, यथाविधिसे तेलको पकाकर कानमें डालनेसे कर्णनाड़ी रोग नष्ट होताहै ॥ ४२ ॥

निर्गुण्डीस्वरसैस्तैलंसिन्धुधूमरजोगुडः ।
पूरणात्पूतिकर्णस्यशमनोमधुसंयुतः ॥ ४३ ॥

इति निर्गुण्डीतैलम् ।

अर्थ-कड़वातेल २ दो सेर, सह्मालूकारस ८ आठसेर, और कल्कके लिये सैंधानोन, घरका धुआँ और गुड़ ऽ॥ आधसेर । यथाविधिसे तेलको पकाकर सहतके साथ प्रयोग करनेसे पूति कर्ण रोग शांत होताहै ॥ ४३ ॥

शतावरीवाजिगन्धापयस्थैरण्डबीजकैः ।
तैलंपक्वंसमंक्षीरंपालीनांपुष्टिवर्द्धनम् ॥ ४४ ॥

इति शतावरीतैलम् ।

इति कर्णरोगाऽध्यायः ।

अर्थ-तेल २ दो सेर, गायका दूध २ सेर, और कल्कके लिये सतावर असगंध, विदारीकन्द और अंडके बीज ऽ॥ आधसेर, यथाविधिसे तेलको सिद्धकर कानमें मलनेसे कर्णपाली पुष्ट होतीहै ॥ ४४ ॥

इति कर्णरोगाऽध्यायः ।

अथ नासारोगचिकित्सामाह ।

व्योषचित्रकतालीशतिन्तिडीचाम्लवेतसम् ।
सचव्यजाजीतुल्यांशंएलात्वक्पत्रपादिकम् ॥ १ ॥
तच्चव्योषादिकंचूर्णपुराणगुडसंयुतम् ।
पीनसश्वासकासघ्नंरुचिस्वरकरम्परम् ॥ २ ॥

अर्थ-सोंठ, मिरच, पीपल, चीतेकी जड,तालीसपत्र, इमली, अमलवेंत, चव्य, और जीरा, प्रत्येक औषधिका चूर्ण १ एक भाग, और दालचीनी, तेजपात, और छोटी इलायची प्रत्येक चूर्ण चौथाई भाग; सबको एकत्र पीस पुराना गुड़ मिलाकर सेवन करनेसे पीनस, श्वास और कास रोग दूर होताहै, तथा रुचि और स्वरको करैहै ॥ १ ॥ २ ॥

यःपिबतिशयनकालेशयनारूढःसुशीतलंभूवि ।
सलिलंपीनसयुक्तःसोऽपिचमुच्यतेऽत्रयोगेन ॥ ३ ॥
द्वेपलेदाडिमादष्टौखण्डाद्व्योषपलद्वयम् ।
त्रिसुगन्धिपलश्चैकंचूर्णमेकत्रकारयेत् ॥ ४ ॥
दीपनंरुचिरंस्वर्य्यंपीनसज्वरकासनुत् ॥

इति दाड़िमाद्यंचूर्णम् ।

अर्थ-जो मनुष्य रात्रिमें सोतेहुए शय्यापर शीतल जलको पीते उनके पीनसरोग निश्चय दूर होजाताहै । अनारकी छाल २ दोपल

खांड ८ आठपल, सोंठ २ दोपल, पीपल २ दोपल, कालीमिरच २ दो पल, छोटी इलायची १ एक पल, तेजपात १ एक पल, और दालचीनी १ एकपल, सबको एकत्र पीसकर चूर्ण करलेवै। यह चूर्ण-अग्नि प्रदीपक रुचिकारक, स्वरको शुद्ध करनेवाला, पीनस रोगको हरनेवाला ज्वरको नष्ट करनेवाला, और खांसीको दूर करैहै ॥ ३ ॥ ४ ॥

त्रिफलाचपलासैन्धवचूर्णंसक्षौद्रमशितमथसायम्।
पीनसशोषश्वासान्जयतीहकफसंभवान्वितम् ॥ ५ ॥

अर्थ-हरड, बहेडा, आमला, पीपल और सैंधानोन यह सब औषधि समान भागले बारीक चूर्णकर सहतके साथ सायंकालको सेवन करनेसे पीनस, शोष श्वास और कफजनित रोग दूर होतेहैं ॥ ५ ॥

पाठाद्विरजनीमूर्वापिप्पलीजातिपल्लवैः।
दन्त्याचतैलंसंसिद्धंनस्यंसम्पक्वपीनसे ॥ ६ ॥
इति पाठाद्यंतैलम्।

अर्थ-पाढ़, हलदी, दारुहलदी, मूर्वा, पीपल, चमेलीके पत्ते, और दन्तीकी जड़, यह सब औषधि कल्कके लिये ऽ॥ आधसेर, और तेल २ दो सेर, इस तेलको पकाकर नास देनेसे पक्व पीनस रोग शान्त होता है ॥ ६ ॥

कलिङ्गहिङ्गुमरिचलाक्षासुरसकट्फलैः।
कुष्ठोग्राशिग्रुजन्तुघ्नैरवपीडःप्रशस्यते ॥ ७ ॥
तैरेवमूत्रसंयुक्तैःकटुतैलंविपाचयेत्।
अपीनसेपूतिनस्येशमनंकीर्त्तितंपरम् ॥ ८ ॥
इति कलिंगाद्यंतैलम्।

अर्थ-इन्द्रजौ, हींग, मरिच, लाख, तुलसी कायफल, कूठ, बच, सैंजिना, और वायविडंगके द्वारा अवपीड (नस्य विशेष) प्रयोग करनेसे पीनस और पूतिनस्य रोग दूर होते हैं। कडवातेल २ दो सेर, गोमूत्र ८ आठ सेर, तथा कल्कके लिये इन्द्रजो, हींग, कालीमिरच, लाख, तुलसी, कायफल, कठ, कूच, सैंजिना और वायाविडंग यह सब

ऽ॥ आधसेर, यथाविधिसे तेलको पकाकर नास देनेसे पीनस और पूतिनस्य रोग दूर होते हैं ॥ ७ ॥ ८ ॥

चित्रकस्यामलक्याश्चगुडूच्यादशमूलजम् ।
शतंशतंरसंदत्वापथ्याचूर्णाढकंगुडात् ॥ ९ ॥
शतंपचेद्घनीभूतेपलंद्वादशकंक्षिपेत् ।
व्योषत्रिजातयोःक्षारात्पलार्द्धमपरेऽहनि ॥ १० ॥
प्रस्थार्द्धंमधुनोदत्वायथाग्न्यद्यादयस्त्रणः ।
वृद्धयेऽग्नेःक्षयंकासंपीनसंदुस्तरंकृमीन् ॥
गुल्मोदरार्त्तदुर्णामश्वासान्हन्तिरसायनम् ॥ ११ ॥

इति चित्रहरीतकी ।

अर्थ–चीतेकी जडका रस १२॥ साढ़े बारह सेर, आमलों का रस १२॥ साढ़े बारह सेर, गिलोयका रस १२॥ साढ़े बारह सेर दश मूलका क्वाथ १२॥ साढ़े बारह सेर, हरड़का चूर्ण ८ आठ सेर और गुड १२॥ साढ़े बारह सेर, सबको मिलाके पकावै, जब देखै कि खूब गाढ़ा हो गया तब सोंठका चूर्ण, पीपलका चूर्ण, कालीमिरचोंका चूर्ण, छोटी इलायची का चूर्ण, दालचीनी का चूर्ण और तेजपात का चूर्ण, प्रत्येक १२ बारह पल, और जवाखार का चूर्ण २ दो तोले मिलादेवै । फिर एक दिनके बाद १ एक सेर सहत मिलालेवै । इस औषधिको सेवन करनेसे–अग्नि बढ़ती है, तथा क्षय, खाँसी, पीनस, दुस्तरकृमि, गुल्म, उदररोग, बवासीर और श्वासको, यह महारसागन नष्ट करै है ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥

व्याघ्रीदन्तीवचाशिग्रुस्वरसव्योषसैंधवैः ।
पाचितंलवणंतैलंपूतिनासागदंजयेत् ॥ १२ ॥
त्रिकटुविडंगसैन्धवबृहतीफलशिग्रुदन्तीभिः ।
तैलंगोजलसिद्धंनस्येस्यात्पूतिनस्यस्य ॥ १३ ॥
पूयास्रेरक्तपित्तघ्नाकषायलवणानिच ।

चिरोत्थेतत्रयुञ्जीतनाडीव्रणहरंविधिम् ॥ १४ ॥
सोषणंगुडसंयुक्तंशिग्रुर्दध्यम्लभोजनम् ॥ १५ ॥

अर्थ-कटेरी, दन्तीकी जड़, वच, सैंजिना, तुलसी, त्रिकुटा और सैंधानोन, इन सब औषधियोंके साथ तेलको पकाकर नासलेनेसे पूतिनस्यरोग दूरहोताहै । त्रिकुटा, वायविडंग, सैंधानोन, कटाईकेफल, सैंजिना, दन्तीकीजड़, और गोमूत्र, इनकेसाथ तेलको पकाकर नस्यदेनेसे पूतिनस्यरोग दूरहोताहै । नाकमेंसे राध और रुधिर निकलताहोय तौ रक्तपित्त नाशक पाचन और नस्यादि देवै । कालीमिरचोंका चूर्ण, सैंजिनकी जड़का चूर्ण और गुड़, इन तीनोंको मिलाकर सेवन करनेसे प्रतिश्याय रोग दूरहोताहै, इसपै खट्टा दहीखावै ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ १५॥

व्योषंपृथक्समुस्तंवाजम्बीरमथवार्द्रकम् ।
गुडयुक्तंप्रतिश्यायीप्राग्भुक्तमुपयोजयेत् ॥ १६ ॥
अर्शोऽर्बुदन्तुशस्त्रेणच्छेदयेत्कार्त्तितंतथा ।
गृहधूमकणादारुक्षारनक्ताह्वसैन्धवैः ॥
सिद्धंशिखरीबीजैश्चतैलंनासार्शसांहितम् ॥ १७ ॥

नक्ताह्वंकरंजबीजम् ।

इति गृहधूमाद्यंतैलम् ।

अर्थ-सोंठ, पीपल और काली मिरच, इन तीनोंको अलग अलग अथवा एकत्र पीसकर जम्भीरी निम्बूके रसके साथ या अदरखके रसके साथ अथवा गुड़के साथ भोजनके पहिले खानेसे प्रतिश्याय रोग दूर होताहै । नासिकामें अर्शांकुर या अर्बुद होय तो अस्त्रसे छेदन करै । घरका धुआँ, पीपल, देवदारु, जवाखार, करंजके बीज, सैंधानोन, और चिराचिटेके बीज इन सब औषधियोंके साथ तेलको पकाकर नासिकामें डालनेसे नासार्श रोग दूरहोताहै ॥ १६ ॥ १७ ॥

करवीरस्यनक्तस्यमालत्यास्फोतयोरपि ।
पुष्पकल्कैःशृतंतैलंनासार्शोनाशनंपरम् ॥ १८ ॥

इति करवीराद्यंतैलम् ।

अर्थ-कनेर, हलदी, मालती और अपराजिताके फूलोंका कल्क बना

तिस कल्कके तेलको सिद्धकर नासिकामें डालनेसे नासार्श रोग दूर होताहै ॥ १८ ॥

चित्रकंचविकादीप्यकनिदिग्धिकाकरंजबीजलवणार्कैः ।
गोमूत्रयुक्तंसिद्धंतैलंनासार्शसांहितंपरम् ॥ १९ ॥

चित्रकादितैलम् ।

इति नासारोगाऽध्यायः ।

अर्थ-तेल २ दोसेर, गोमूत्र ८ आठसेर, तथा कल्ककेलिये चीता चव्य, अजवायन, कटेरी, करंजके बीज, सैंधानोन, और आक, यथाविधिसे तेलको सिद्धकर नासिकामें डालनेसे नासार्श रोग दूर होताहै ॥ १९ ॥

इति नासारोगाऽध्यायः ।

अथ चक्षूरोगचिकित्सामाह ।

प्राग्रूपएवाभिस्यन्देतीक्ष्णगण्डूषधारणम् ।
कारयेदुपवासञ्चकोपादन्यत्रवातजात् ॥ १ ॥
श्रीवासातिविषालोध्रैश्चूर्णितैरल्पसैन्धवैः ।
अव्यक्तेऽक्षिगदेकार्यंप्रोतस्थैर्गुण्डलंबहिः ॥ २ ॥
श्रीवासोदेवदारुवस्त्रगुग्गुलञ्च ।

अर्थ-नेत्राभिष्यन्दरोगके पूर्वरूपमेंही तीक्ष्ण द्रव्योंका गण्डूष धारण करे और वातजको छोड़कर नेत्राभिष्यन्द रोगमें लंघन करावै। श्रीवास (देवदारु), अतीस, लोध, और थोड़ासा सैंधानोन, सबको एकत्र पीस वस्त्रमें बाँध पोटली बना दोनों आँखोंमें लगावै तौ अव्यक्त नेत्ररोग दूर होतेहैं ॥ १ ॥ २ ॥

लंघनालेपनस्वेदशिरव्यधविरेचनैः ।
उपाचरेदभिष्यन्दावञ्जनाश्च्योतनादिभिः ॥ ३ ॥
अक्षिकुक्षिभवारोगाप्रतिश्यायव्रणंज्वराः ॥
पंचैतेपंचरात्रेणरोगानश्यन्तिलंघनात् ॥ ४ ॥

अर्थ-लंघन, प्रलेप, स्वेद, शिरावेध, विरेचन, अञ्जन और आश्च्यो-

तनादि द्वारा नेत्राभिष्यन्द रोगकी चिकित्सा करै । नेत्ररोग, कुक्षिरोग, प्रतिश्याय, व्रण, और ज्वर, यह पाँचरोग पाँचदिनमें केवल लंघन करानेसेही दूर होजातेहैं ॥ ३ ॥ ४ ॥

स्वेदःप्रलेपस्तिक्तानांसेकस्स्रावचतुष्टयम् ।
लंघनंचाक्षिरोगाणामामानांपाचनानिषट् ॥ ५ ॥
अंजनंपूरणंक्काथपानमामेनशस्यते ।
स्नानंचसर्पिषःपानंतथैवगुरुभोजनम् ॥ ६ ॥
पथ्यंपटोलककोंटतण्डुलीयकवास्तुकैः ॥
घृतसिद्धैःसवार्त्ताकैःमुद्गयूषेणजाङ्गलैः ॥ ७ ॥

अर्थ–स्वेद, प्रलेप, तिक्तद्रव्योंका सेक, स्राव, लंघन, पाचन, अंजन पूरण, क्काथपान, घृतपान, और भारी पदार्थोंका भोजन यह सब अपक्क नेत्ररोगमें प्रयोग करने चाहिये । घृतमें सिद्धकहे हुए पटोल, ककोड़े, चौलाई, वथुआ और बैंगनका शाक, मूँगका यूष और जांगल देशके जीवोंके मांसका यूष यह सब इसमें पथ्य है ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥

धात्रीफलनिर्यासोनवहक्कोपंनिहन्तिपूरणतः ।
शिखरीजमूलंताम्रजेभाजनेस्तोकसैन्धवोन्मिश्रम् ।
मस्तुनिघृष्टंभरणाद्धरतिनवलोचनात्कोपम् ।
पथ्याकल्कोघृतेभृष्टोबहिर्लेपोऽक्षिकोपहा ॥ ८ ॥
सैन्धवदारुहरिद्रागैरिकपथ्यारसांजनैः ।
पिष्टैर्दत्तोवहिःप्रलेपोभवत्यशेषाक्षिरोगहरः ॥ ९ ॥

अर्थ–आमलोंका रस नेत्रोंमें भरनेसे नवीन दृष्टि रोग दूर होताहै । चिरचिटेकी जड़, थोडासा सैंधानोन और दहीका पानी इनको एकत्र ताँबेके बासनमें घिसकर नेत्रोंमें लगानेसे नवीन नेत्ररोग दूर होताहै हरड़को पीस घृतमें भूनकर नेत्रोंके ऊपर लेप करनेसे नेत्र रोग दूर होताहै । सैंधानोन, देवदारु, हलदी, गेरू, हरड और रसौत इन सबको एकत्र पीस नेत्रोंके ऊपर लगानेसे नाना प्रकारके नेत्ररोग दूर होतेहैं ॥ ८ ॥ ९ ॥

गिरिमृच्चन्दननागरखटिकासंयोजितोबहिर्लेपः।
कुरुतेवचयामिश्रोलोचनमगदंनसन्देहः॥ १०॥
भूम्यामलकीघृष्टासैंधवगृहवारियोजिताताम्रे।
जाताघनत्वमक्ष्णोर्जयतिबहिर्लेपतःपीडाम्॥ ११॥
बृहत्येरण्डमूलत्वक्शिग्रोर्मूलंससैन्धवम्।
अजाक्षीरेणपिष्टंस्याद्वर्त्तिर्वाताक्षिशूलनुत्॥ १२॥

अर्थ-गेरू, लालचंदन, सोंठ, सेलखड़ी, और बच इन सबको एकत्र पीस नेत्रोंके ऊपर प्रलेप करनेसे अनेक प्रकारके नेत्ररोग दूर होतेहैं भुईआमला और सैंधेनोनको काँजीके द्वारा ताँबेके बासनमें गाढ़ा घिसकर नेत्रोंपै लेप करनेसे नेत्रोंकी पीडा दूर होतीहै। कटाई, अंडकी जडकी छाल, सैंजिनेकी जड और सैंधानोन, इनको एकत्र बकरीके दूधमें पीस बत्ती बनाके नेत्रोंमें लगानेसे वातजन्य नेत्ररोग दूर होताहै॥ १०॥ ११॥ १२॥

अञ्जनम्।

हरिद्रेमधुकंपथ्यादेवदारुचपेषयेत्।
आजेनपयसाश्रेष्ठमभिस्यन्देतदंजनम्॥ १३॥
(पथ्यास्थानेद्राक्षाइत्यपिपाठः।)
गैरिकंसैंधवंकृष्णानागरंचयथोत्तरम्।
पिष्टद्विरंशतोऽद्भिर्वागुटिकांजनमिष्यते॥ १४॥
मंजिष्ठाचन्दनानन्तालेपःपित्ताक्षिशूलनुत्।
प्रपौण्डरीकयष्ट्याह्वनिशामलकपद्मकैः॥
शीतैःसितासमायुक्तैःसेकःपित्ताक्षिशूलनुत्॥ १५॥

अर्थ-हलदी, दारुहलदी, मुलेठी, हरड, (कोई वैद्य हरड़के स्थानमें दाख डालतेहैं) और देवदारु इन सबको बकरीके दूधमें पीसकर नेत्रोंमें आँजनेसे नेत्रगत अभिष्यन्द रोग दूर होताहै। गेरू १ एकभाग, सैंधा-नोन २ दो भाग, पीपल ३ तीनभाग, सोंठ ४ चारभाग, इन चारोंको

दुगुने जलमें पीसकर गोली बना नेत्रोंमें लगानेसे नेत्ररोग दूर होताहै मजीठ, लालचंदन, और अनन्त मूल इनको एकत्र पीसकर लेप करनेसे पित्तजनित चक्षु शूल दूर होताहै। पुण्डेरिया, मुलेठी, हलदी, आमला, पद्माख, और खांड, इनको एकत्र पीसकर शीतल प्रलेप करनेसे पित्तजनित नेत्रशूल नष्ट होताहै॥ १३॥ १४॥ १५॥

शुण्ठीनिम्बदलैःपिष्टैःसुखोष्णैःस्वल्पसैंधवैः।
धार्यैश्चक्षुषिसंक्षेपाच्छोथकण्डूव्यथापहः॥ १६॥
वल्कलंपारिभद्रस्यतैलकांजिकसैन्धवम्।
कफोद्भूताक्षिरोगघ्नंतरुघ्नंकुलिशंयथा॥ १७॥

इति ताम्रपात्रे घृष्टांजनम्।

अर्थ—सोंठ, नीमके पत्ते, और थोड़ासा सैंधानोन, इनको एकत्र पीस किंचित् गरम करकै नेत्रोंमें लगानेसे थोडेही दिनोंमें नेत्रोंकी सूजन, कंडू और पीडा शान्त होतीहै। फरहदकी छाल, तेल, काँजी और सैंधानोन, इन सबको एकत्र ताँबेके बासनमें घिस अंजन बनाकर नेत्रोंमें लगानेसे- कफजनित नेत्ररोग दूर होताहै॥ १६॥ १७॥

बिल्वपत्ररसःपूतःसैन्धवाज्यलवणान्वितः।
ताम्रेवराटिकाघृष्टोधूपितोगोमयाग्निना॥ १८॥
स्तन्येनालोड़ितश्चाक्ष्णोःपूरणाच्छोथशूलनुत्।
अभिस्यन्देऽधिमन्थेचरक्तस्रावेचशस्यते॥ १९॥
(गोमयंछायाशुष्कम्)

इति बिल्वांजनम्।

अर्थ—बेलके पत्तोंके स्वरस को वस्त्रमें छानकर सेंधानोन और घृत मिलाकर ताँबेके बासनमें कर लेवै, पश्चात् इसमें कौडीको घिसकर सूखे उपलोंकी अग्निसे धूपित कर स्त्रीके दूधमें आलोडन करकै आँखोंमें भरनेसे नेत्रोंकी सूजन, शूल, अभिष्यन्द, अधिमन्थ और रक्तस्राव दूर होता है॥ १८॥ १९॥

सलवणकटुतैलंकांजिकंकांस्यपात्रे
घनितमुपलघृष्टंधूपितंगोमयाग्नौ॥

सपवनकफकोपंछागदुग्धावसिक्तं
जयतिनयनशूलंस्रावशोथंसरागम् ॥ २० ॥

अर्थ-सैंधानोन, कडवातेल और काँजी, इन तीनोको काँसीके पात्रमें पत्थरकी मूंगरीसे घिसै, जब गाढ़ा हो जाय तब उपलोंकी अग्निसे धूपित कर नेत्रोंमें लगावै तो वातश्लैष्मिक नेत्ररोग शांत होताहै । और इस औषधिको बकरीके दूधमें मिलाकर नेत्रोंमें लगानेसे नेत्र-शूल, चक्षुस्राव, चक्षुशोथ और नेत्रोंकी लाली दूर हो जाती है ॥ २० ॥

अटरूषाभयानिम्बधात्रीमुस्ताक्षकूल(कु)कैः ।
रक्तस्रावंकफंहन्तिचक्षुष्यंवासकादिकम् ॥ २१ ॥

इति वासकादिः ।

अर्थ-अडूसा, हरड, नीमकी छाल, आमला, नागरमोथा, बहेडा और पटोल, यह सब औषधि समान भागले क्वाथ बनाकर पीनेसे नेत्रों का रक्तस्राव और कफ दूर होता है ॥ २१ ॥

वासाघनंनिम्बपटोलपत्रंतिक्तामृताचन्दनवत्सकत्वक् ।
कलिंगदार्वीदहनंसनागरंभूनिम्बधात्र्याप्यभयाविभीतम् २२
श्यामायवक्वाथमथाष्टशेषंपिबेदिमंपूर्वदिनेकषायम् ।
तैमिर्यकण्डूपटलार्बुदञ्चशुक्रंसरागंव्रणमव्रणञ्च ॥ २३ ॥
काचञ्चपैल्वञ्चमहारुजञ्चनक्तान्ध्यरोगंश्वयथुंसशूलम् ।
वासादिरेषःप्रथितप्रभावोनिहन्तिसर्वान्नयनामयांश्च ॥ २४ ॥

इति बृहद्वासकादिः ।

अर्थ-अडूसा, नागरमोथा, नीमकी छाल, पटोल, कुटकी, गिलोय, लालचंदन, कुडेकी छाल, इन्द्रजौ, दारुहलदी, चीतेकी जड, सोंठ, चिरायता, आमला, हरड़, बहेडा, करियावासाऊ और जौ, यह सब औषधि समान भागले अष्टावशेष क्वाथ बनाकर दूसरे दिन पीनेसे नेत्रगत तिमिररोग, कण्डू, पटल, अर्बुद, शुक्र, रक्तवर्णता, व्रण, काच, पिल्व, अभ्यंतरपीडा, रात्र्यन्धता और शूल सदृश वेदना युक्त शोथ रोग दूर होता है ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥

गुडूचीत्रिफलाक्काथोमधुनासहयोजितः ।
पीतःसर्वाक्षिरोगघ्नःकृष्णाचूर्णावचूर्णितः ॥ २५ ॥
विभीतकशिवाधात्रीपटोलारिष्टवासकैः ।
क्काथोगुग्गुलुनापेयःशोथशूलाक्षिपाकनुत् ॥ २६ ॥
सपिल्वंसव्रणंशुक्रंरागादींश्चविनाशयेत् ।
एतैश्चापिघृतंपक्कंरोगांस्तांश्चव्यपोहति ॥ २७ ॥

(गुग्गुलुःकल्कः)

अर्थ-गिलोय, हरड, आमला और बहेडा, इनका क्काथ बना पीपल का चूर्ण और सहत मिलाकर पीनेसे सर्व प्रकारके नेत्ररोग दूर हो जाते हैं । हरड, बहेडा, आमला, पटोल, नीमकी छाल और अडूसेकी छालका क्काथ बना शुद्ध गूगल मिलाकर पान करनेसे अक्षिरोग, अक्षिशूल और अक्षिपाक, तथा पिल्वरोग, व्रणरोग, शुक्ररोग और रक्तवर्णतादि नाना प्रकारके नेत्ररोग दूर होते हैं ॥ घी दो सेर, क्काथके लिये हरड बहेडा, आमला, पटोल, नीमकी छाल और अडूसेकी छालका क्काथ ८ आठ सेर, तथा कल्कके लिये गूगल ऽ॥ आधसेर यथा विधिसे घृतको पकाकर सेवन करनेसे-अक्षिशोथ, अक्षिशूलादि सम्पूर्ण पूर्वोक्त रोग दूर होजाते हैं ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥

चन्दनंगैरिकंलाक्षामालतीकणिकाःसमाः ।
व्रणशुक्रहरावर्त्तिःशोणितस्यप्रसादनी ॥ २८ ॥

अर्थ-लालचंदन, गेरू, लाख, मालती और पीपल, यह सब औषधि समान भागले बत्ती बनाकर नेत्रोंमें लगानेसे-नेत्रव्रण और शुक्ररोग दूर होता है, तथा रुधिरकी प्रसन्नता उत्पन्न होतीहै ॥ २८ ॥

हरीतकीवचाकुष्ठंपिप्पलीमरिचानिच ।
विभीतकस्यमज्जाचशंखनाभिर्मनःशिला ॥ २९ ॥
सर्वमेतत्समंकृत्वाछागीक्षीरेणपेषयेत् ।
वर्त्तिश्चन्द्रोदयानामनृणांदृष्टिप्रसादनी ॥ ३० ॥
नाशयेत्तिमिरंकण्डूंपटलान्यर्बुदानिच ।

अधिकानिचमांसानियश्चरात्रौनपश्यति ॥
अपिद्विवार्षिकंपुष्पंमासेनैकेनसाधयेत् ॥ ३१ ॥

इति चन्द्रोदयावर्तिः ।

अर्थ-हरड़, वच, कूठ, पीपल, कालीमिरच, बहेडेकी मींग, शंखनाभि और मैनशिल, यह सब औषधि बकरीके दूधमें पीसकर बत्तीबना नेत्रोंमें लगानेसे दृष्टि प्रसन्न होतीहै, तथा तिमिररोग, कण्डू, पटलरोग अर्बुदरोग, अधिक मांसरोग, रात्र्यन्धता और दोवर्षका फूला दूरहोजाताहै ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥

त्रीणिकटूनिकरञ्जफलानिद्वेरजनीसहसैन्धवकञ्च ।
बिल्वतरोर्वरुणस्यचमूलंवारिचरंदशनंप्रवदन्ति ॥३२॥
हन्तितमस्तिमिरंपटलञ्चपिच्चिटशुक्रमथाऽर्ज्जुनञ्च ।
अंजनकंजनरञ्जनकंचदृगंचनपश्यतिवर्षशतञ्च ॥३३ ॥

इति त्रिकट्वादिवर्तिः ।

अर्थ-सोंठ, मिरच, पीपल, करंजकेफल, हलदी, दारुहलदी, सेंधानोन, वेलकीजड़, वर्नाकी जड़ और शंखनाभि, यह सब औषधि समान भागले एकत्र पीसकर आँखोंमें आँजनेसे-तमोरोग, तिमिररोग, पटलरोग, पिच्चट, शुक्र, अर्जुन और रात्र्यन्धरोग दूर होताहै ॥ ३२ ॥ ३३ ॥

त्रिफलाव्योषसिन्धूत्थंयष्टीतुत्थंरसांजनम् ।
प्रपौण्डरीकंजन्तुघ्नंलोध्रंताम्रंचतुर्दश ॥ ३४ ॥
द्रव्याण्येतानिसंक्षुभ्यवर्तिःकार्यानताम्बुना ।
नागार्जुनेनलिखितास्तम्भेपाटलिपुत्रके ॥ ३५ ॥
नाशिनीतिमिराणाञ्चपटलानांतथैवच ।
सद्यःप्रकोपस्तन्येनस्त्रियोविजयतेध्रुवम् ॥३६॥
किंशुकस्वरसेनाथपैल्वपुष्पकरक्तता ।
अंजनाल्लोध्रतोयेनआसन्नांतिमिरंजयेत् ॥ ३७ ॥

टिरंसञ्छादितेनेत्रेवस्तमूत्रेणसंयुता।
उन्मीलयतिकृच्छ्रेणप्रसादंचाधिगच्छति॥ ३८॥

इति नागार्जुनवटिका।

अर्थ-हरड़, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल, सैंधानोन, मुलेठी, तूतिया, रसौत, पुण्डेरिया, वायविडंग, लोध और ताँबा, यह सब औषधि समान भागलेकर भलेप्रकार से पीस लेवै, फिर अनंत मूलके काढ़ेमें भावनादे बत्ती बनाके नेत्रोंमें लगानेसे तिमिररोग और पटलरोग दूरहोताहै। स्त्रीकेदूधमेंवत्तीबनाकर नेत्रोंमें लगानेसे तत्काल प्रकोप नष्टहोताहै। टेसूके स्वरसमें बत्तीबनाकर नेत्रोंमें लगानेसे बिल्व पुष्पक और रक्तवर्णता रोग दूर होताहै। लोधके क्वाथमें अंजनबनाकर लगानेसे-आसन्नतिमिररोग दूर होताहै। और बकरीके मूत्रमें बत्ती बनाकर दोनों नेत्रोंमें लगानेसे बंदनेत्र खुलजातेहैं॥ ३४॥ ३५॥ ३६॥ ३७॥ ३८॥

अंजनंश्वेतमरिचंपिप्पलीमधुयष्टिका।
विभीतकस्यमज्जाचशंखनाभिर्मनःशिला॥ ३९॥
एतानिसमभागानिछागीक्षीरेणपेषयेत्।
छायाशुष्कीकृतांवर्तिनेत्रेषुचप्रयोजयेत्॥ ४०॥
अर्बुदंपटलंकाचंतिमिरंरक्तराजिकाम्।
अधिमांसंमलश्चैवयश्चरात्रौन पश्यति॥
वर्त्तिश्चन्द्रप्रभानामजात्यन्धमपिसाधयेत्॥ ४१॥
श्वेतमरिचंशोभांजनबीजम्।

इति चन्द्रप्रभावर्तिः।

अर्थ-अंजन, सैंजिनेके बीज, पीपल, मुलेठी, बहेड़ेकी मींग, शंखनाभि और मैनशिल यह सब औषधि समान भागले बकरीके दूधमें पीस बत्तीबनाकर छायामें सुखादेवै इनको नेत्रोंमें लगानेसे अर्बुद, पटल, काच, तिमिर, रक्तराजिका, अधिमांस, मल, रत्र्यन्धता और जन्मांधता दूरहोतीहै॥ ३९॥ ४०॥ ४१॥

चंदनत्रिफलापूगपलाशतरुशोणितैः ।
पिष्टैरियंकृतावर्तिरशेषातिमिरापहा ॥ ४२ ॥
नीलोत्पलंविडंगानिपिप्पलीरक्तचंदनम् ।
रसाञ्जनंसैन्धवञ्चनक्तंतिमिरनाशनम् ॥ ४३ ॥
बिसंधात्रीफलरसैर्दिनैकंपरिभावितम् ।
अंजनंताम्रसहितंप्रगाढतिमिरप्रणुत् ॥ ४४ ॥
द्विनिशासैन्धवंत्र्यूषंबीजंकारञ्जकंसमम् ।
भृंगराजयुतंमर्द्यंतिमिरंपटलंहरेत् ॥ ४५ ॥
मनःशिलाहतंनागंनागाद्द्विगुणरूप्यकम् ॥
किंचित्कर्पूरसंमर्द्यंद्रोणपुष्परसैर्दिनम् ॥ ४६ ॥
वर्त्तिरेषाह्यभिष्यन्दिनाशायगजकेसरी ॥ ४७ ॥

अर्थ–लालचंदन, हरड़, बहेड़ा, आमला, और सुपारी इन सब औषधियोंको ढाकके रसमें पीस बत्ती बनाके नेत्रोंमें लगानेसे तिमिर रोग दूर होताहै। नीले कमल, वाय विडंग, पीपल, लालचंदन, रसौत और सैंधानोन, यह सब औषधि एकत्र पीसकर नेत्रोंमें लगानेसे तत्काल तिमिर रोग दूर होताहै। कमल कन्द (भँसीडे) को आमलोंके रसमें भावनादे पश्चात् अंजन और ताँबा मिला बत्ती बनाके नेत्रोंमें लगानेसे प्रगाढ़ तिमिररोग दूर होताहै। हलदी, दारुहलदी, सैंधानोन, सोंठ, मिरच, पीपल, और करंजके बीज यह सब औषधि समान भागले भांगरेके रसमें खरलकर नेत्रोंमें लगानेसे तिमिररोग और पटलरोग दूर होताहै। मैनशिलसे मारा हुआ सीसा १ एकभाग, रूपा २ दो भाग और कुछ थोडासा कपूर, इन तीनोंको गूमाके रसमें खरल कर बची बनाके नेत्रोंमें लगानेसे नेत्राभिष्यन्द रोग दूर होताहै ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥

तारंताम्रंरसंसीसंकर्पूरंखर्परंतथा ।
रसांजनंकांस्यशंखंहंसपद्याद्रवैर्दिनम् ॥
वर्त्तिंकृत्वाञ्जनाद्धन्तिसमस्तंनेत्रजामयम् ॥ ४८ ॥

इति तारकाद्या वटिका।

अर्थ-चाँदी, ताँबा, पारा, सीसा, कपूर, खपरिया, रसौत, काँसी और शंख, इन सब औषधियोंको एकत्र हंसपदीके रसमें एकदिन खरल कर बत्ती बनालेवै, इन बत्तियोंको आँखोंमें लगानेसे सर्व प्रकारके नेत्र रोग दूर होतेहैं ॥ ४८ ॥

टंकणंरसकंपिष्ट्वाजम्भीरैःकांस्यभाजने ।
पक्ष्मरोगहरंकण्डूंरक्तस्रावञ्चनाशयेत् ॥ ४९ ॥
निशाद्वयाभयामांसीकुष्ठकृष्णाविचूर्णिताः ।
सर्वनेत्रामयंहन्यादेतत्सौगतमंजनम् ॥ ५० ॥

इति चूर्णेनांजनम् ।

अर्थ-खपरिया और सुहागेको काँसीके बासनमें स्थापन कर जम्भीरी नीबूका रस डालके खरल करै, फिर इसको आँखोंमें लगानेसे पक्ष्म रोग, कण्डू और रक्तस्राव दूर होताहै । हलदी, दारुहलदी, हरड़ बालछड, कूठ और पीपल, यह सब समानले अंजन बनाकर नेत्रोंमें लगानेसे-सर्व प्रकारके नेत्ररोग दूर होतेहैं ॥ ४९ ॥ ५० ॥

कण्टकारीकृतंक्वाथंवस्त्रपूतंपुनःपचेत् ।
घनीभूतंसमादायलौहभाण्डेनिधापयेत् ॥ ५१ ॥
मात्रामादायतस्माद्धिमाणिमंथेनयोजयेत् ।
घृष्ट्वानेत्रेऽञ्जितायस्तुसर्वनेत्रगदाञ्जयेत् ॥ ५२ ॥
शुक्रकाचाजकाजातवर्त्मार्बुदमथापिवा ।
अभिष्यन्दंविशेषेणपटलंचापिनाशयेत् ॥ ५३ ॥
अञ्जनानांवरंचैतात्तिमिरान्तकरंपरम् ॥ ५४ ॥

अर्थ-कटेरीका क्वाथ बनाकर वस्त्रमें छान लेवै, फिर आगपै पकावै जब पकते पकते गाढा होजाय तब उतारकर लोहेके बासनमें करकै रखदेवै । पश्चात् इसमेंसे कुछ थोडासा लेकर उसमें सैंधेनोनको घिसकर नेत्रोंमें अंजन लगानेसे सर्वप्रकारके नेत्ररोग दूर होतेहैं । विशेष करकै यह औषधि शुक्र, काच, अजका, वत्मरोग, अर्बुद, अभिष्यन्द, पटल और तिमिर रोगको दूर करैहै । यह सर्वप्रकारके अंजनोंमें श्रेष्ठ अंजनहै ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥

दशमूलाम्बुनापक्वंघृतंदुग्धश्चतुर्गुणम् ।
त्रिफलाकल्कसंयुक्तंतिमिरेराजतेपिबेत् ॥ ५५ ॥

इति दशमूलघृतम् ।

अर्थ-गायकाघी २ दो सेर, दशमूलका क्काथ दो २ सेर, दूध ८ आठ सेर, और कल्कके लिये कूटाहुआ त्रिफला ऽ॥ आधसेर, यथाविधिसे घृतको पकाकर सेवन करनेसे- तिमिररोग दूर होताहै ॥ ५५ ॥

यस्त्रैफलंचूर्णमपथ्यवर्जीसायंसमश्नातिहविर्मधुभ्याम् ।
विमुच्यतेनेत्रगतैर्विकारैर्भृत्यैर्यथाक्षीणधनोमनुष्यः ॥ ५६ ॥

अर्थ-पथ्यको सेवन करनेवाला जो मनुष्य त्रिफलेका चूर्ण सहत और घृतके साथ सन्ध्याके समय सेवन करताहै, उसके सर्व प्रकारके नेत्र रोग दूर होजातेहैं ॥ ५६ ॥

त्रिफलाक्काथकल्काभ्यांसपयस्कशृतंघृतम् ।
तिमिराण्यचिराद्धन्तिपीतमात्रंनिशामुखे ॥ ५७ ॥

इति स्वल्पत्रिफला घृतम् ।

अर्थ-गायकाघी २ दोसेर, त्रिफलेका क्काथ २ दोसेर, गायका दूध दोसेर, और कल्कके लिये कूटाहुआ त्रिफला ॥ आधसेर यथाविधिसे घृतको सिद्धकरै,इस घृतको संध्याके समय पान करनेसे-बहुत दिनोंका तिमिर रोग दूर होताहै ॥ ५७ ॥

त्रिफलात्र्यूषणंद्राक्षामधुकंकटुरोहिणी ।
प्रपौण्डरीकंसूक्ष्मैलांविडंगंनागकेशरम् ॥ ५८ ॥
नीलोत्पलंशारिवेद्वेचंदनंरजनीद्वयम् ।
कार्षिकैःपयसातुल्यंद्विगुणंत्रिफलारसम् ॥ ५९ ॥
घृतप्रस्थंपचेदेतत्सर्वनेत्ररुजापहम् ।
तिमिरंरक्तसंस्रावंपटलंकाचमर्बुदम् ॥ ६० ॥
विसर्पप्रदरंकण्डूंरक्तंश्वयथुमेवच ।
खालित्यंपलितंचैवकेशानांपतनंतथा ॥ ६१ ॥
विषमज्वरमर्शांसिशुक्रमाशुव्यपोहति ।

अन्येचबहवोरोगानेत्रजायेचवर्त्मजाः ॥ ६२ ॥
तान्सर्वान्नाशयत्याशुभास्करस्तिमिरंयथा ।
नचैवास्मात्परंकिंचिद्दृषिभिःकाश्यपादिभिः ॥
दृष्टिप्रसादनंदृष्टंयथास्यात्त्रैफलंघृतम् ॥ ६३ ॥

इति मध्यमात्रिफलाघृतम् ।

अर्थ–गायका घी २ दो सेर, दूध दो सेर त्रिफलेका क्वाथ ४ चारसेर, और कल्कके लिये हरड़, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल, दाख मुलेठी, कुटकी, पुण्डेरिया, छोटी इलाची, वायविडंग, नागकेशर, नीलोत्पल, अनंतमूल, करियावासाऊ, लालचंदन, हलदी और दारुहलदी, प्रत्येक २ दो दो तोले, सबको मिलाकर यथाविधिसे घृतको सिद्धकरै। इस घृतको पान करनेसे–तिमिर, काच, पटलादि सर्वप्रकारके नेत्ररोग, विसर्प, प्रदर, कण्डू, शोथादि नानाप्रकारके नेत्ररोग नाश होतेहैं ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥

त्रिफलायारसप्रस्थंभृंगराजरसस्यच ।
वृषस्यचरसप्रस्थंशतावर्याश्वतत्समम् ॥ ६४ ॥
अजाक्षीरंगुडूच्याश्चआमलक्यारसन्तथा ।
प्रस्थंप्रस्थंसमाहृत्यसर्वैरेभिर्घृतंपचेत् ॥ ६५ ॥
कल्कःकणासिताद्राक्षात्रिफलानीलमुत्पलम् ।
मधुकंक्षीरकाकोलीमधुपर्णीनिदिग्धिका ॥ ६६ ॥
तत्साधुसिद्धंविज्ञायशुभेभाण्डेनिधापयेत् ।
अर्द्धपानमधःपानंमध्येपानंचशस्यते ॥ ६७ ॥
यावन्तोनेत्रजारोगास्तान्पानादपकर्षति ।
सरक्तेचातिरक्तेचदुष्टेचातिस्रुतेऽपिच ॥ ६८ ॥
नक्तान्ध्येतिमिरेकाचेनीलिकापटलार्बुदे ।
अभिष्यन्देऽधिमंथेचपक्ष्मकोपेसुदारुणे ॥ ६९ ॥
नेत्ररोगेषुसर्वेषुवातपित्तकफेषुच ।

अदृष्टिंमंदहष्टिंचकफवातप्रदूषिताम् ॥ ७० ॥
स्रवतीवातपित्तांवासकण्डूासन्नदूरहक् ।
गृध्रदृष्टिफलंसद्योबलवर्णाग्निवर्द्धनः ॥ ७१ ॥
सर्वनेत्रामयंहन्यात्रिफलाद्यंमहद्घृतम् ॥ ७२ ॥

इति बृहत्त्रिफलाघृतम् ।

अर्थ-गायका घी२ दो सेर, त्रिफलेका काथ दो२ सेर, भांगरेका रस२ दो सेर, शतावरका रस २सेर अडूसेका रस२ दोसेर, बकरीका दूध दो २ सेर, गिलोयकारस दो२ सेर, आमलोंकारस २ दोसेर, और कल्कके लिये पीपल, मिश्री, दाख, हरड़, बहेड़ा, आमला, नीलोत्पल, मुलेठी, क्षीरकाकोली, गिलोय और कटेरी, यह सब ॥ आधसेर, सबको मिला कर यथाविधिसे घृतको पकावै, जब पककर तैयार होजाय तब उत्तम बासनमें भरकर रखदेवै, इसको भोजनके पहिले, भोजनके पश्चात्,और भोजनके मध्यमें पीवै, इस घृतको पानकरनेसे-सर्वप्रकारके नेत्ररोग दूर होजातेहैं।यह बृहत् त्रिफला घृत-रक्तयुक्त नेत्ररोग अतिरक्त युक्त, दुष्ट रक्त युक्त अतिस्रुतनेत्ररोग, रात्र्यन्ध रोग, तिमिर रोग, काच, नीलिका, पटल,अर्बुद, अभिष्यन्द, अधिमन्थ, दारुणपक्ष्मकोप,वात पित्त और कफसे उत्पन्न हुए नेत्ररोग अदृष्टि, मंददृष्टि, कफ वातसे दूषित दृष्टि, नेत्रस्राव, वात और पित्तसे उत्पन्न हुई नेत्रोंमें कण्डू, और समीपकी वस्तु दूर दीखै, इन सब रोगोंको दूर करैहै, तथा दृष्टिको गीधकी समान करैहै, बल- वर्ण और अग्निको बढावैहै, और सर्व प्रकारके नेत्र रोगोंको हरैहै ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥६९॥७०॥७१॥७२॥

भृंगराजरसप्रस्थेयष्टीमधुपलेनच ।
तैलस्यकुडवंपक्कंसद्योदृष्टिंप्रसादयेत् ॥
नस्याद्वलीपलीतघ्नंमासेनैतन्नसंशयः ॥ ७३ ॥

इति भृंगराजतैलम् ।

अर्थ-तेल ॥ आधसेर, भांगरेकारस २ दोसेर, और कल्कके लिये मुलेठी चारतोले, यथाविधिसे तेलको पकाकर शरीरादिकसे मलनेसे तत्काल दृष्टि प्रसन्न होतीहै । इसतेलका नास लेनेसे एक महीनेमें वलि और पलित रोग दूर होजातेहैं ॥ ७३ ॥

गवांशकृत्क्काथविपक्कमुत्तमंहितंचतैलंतिमिरेषुनस्यतः।
घृतंहितंकेवलमेवपैत्तिकेह्याजाविकंयन्मधुरैर्विपाचितम् ७४

इति गोमयाद्यंतैलमधुरघृतंच।

अर्थ-गोबरके क्वाथके साथ तेलको पकाकर नासलेनेसे तिमिर रोग दूर होताहै। और मधुर वर्गकी औषधियोंके साथ बकरीके घृत या भेडके घृतको पकाकर सेवन करनेसे पैत्तिक नेत्ररोग दूर होताहै॥ ७४॥

जीवकऋषभकौमेदाद्राक्षांशुमतीनिदिग्धिकाबृहती।
मधुकवलाविडंगंमंजिष्ठाशर्करारास्ना॥ ७५॥
नीलोत्पलंश्वदंष्ट्राप्रपौण्डरीकंपुनर्नवालवणपिप्पल्यः।
सर्वेषांभागैरक्षांशिकैःपिष्टैः॥ ७६॥
तैलंवायादिसर्पिर्दत्वाक्षीरंचतुर्गुणंपक्कम्।
आत्रेयनिर्मितमिदंतैलंनृपवल्लभंनाम॥ ७७॥
तिमिरंपटलंकाचंनक्तान्ध्यंचार्बुदंतथान्ध्यश्च।
श्वेतंचलिंगनाशंनाशयतिनीलिकाव्यंगम्॥ ७८॥
मुखनासादौर्गन्ध्यंपलितंचाकालजंहनुस्तम्भम्।
कासंश्वासंशोषंहिक्कांस्तम्भंतथान्ध्यंनेत्रे॥ ७९॥
मुखजाड्यमर्द्धभेदंरोगंबहुग्रहंशिरःस्तम्भम्।
रोगानथोर्द्धजत्रोःसर्वानचिरेणनाशयाति॥ ८०॥
नस्यालपत्वात्तैलकुडवःसाध्यः।
अतोक्षांशिकैश्चतुर्भागैःमासकचतुष्टयैः॥
यद्वाऽक्षरूपोभागस्तथाप्रस्थःसाध्यः॥ ८१॥

इति नृपवल्लभ तैलम्।

अर्थ-तिलका तेल या गायकाघी २ दोसेर, गायकादूध ८ आठसेर, और कल्कके लिये जीवक, ऋषभक, मेदा, दाख, शालपर्णी, कटेरी, बृहती, मुलेठी, खिरैटी, बायविडंग, मजीठ, चीनी, रास्ना, नीलेकमल, गोखरू, पुण्डेरिया, पुनर्नवा, सैंधानोन और पीपल, यह सब पिसी

हुई औषधि ऽ॥ आधसेर । यथाविधिसे तेलको पकावै । इसको नृपवल्लभतैल कहतेहैं, यह श्रीमान् आत्रेयजीने रचाहै । यह तेल या घी तिमिर, पटल, काच;नक्तान्ध्य, अर्बुद, आन्ध्य, श्वेत,लिंगनाश, नीलिका व्यंग, मुख और नाककी दुर्गन्ध, अकालज पलितरोग, हनुस्तम्भ, कास, श्वास, शोष, हिक्का, स्तम्भ रोग, नेत्रोंमें अँधेरा, मुखकी जड़ता अर्द्धभेद, बहुग्रह, शिरः स्तम्भ, और ऊर्द्ध जत्रूको दूर करैहै, इसका नास लेना चाहिये ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥

अजस्रंयस्यचाप्यश्रुस्वच्छंस्रवतिचक्षुषः ।
तोयस्रावन्तुतंविद्याद्विकरंमारुतात्मकम् ॥ ८२ ॥
पानीयेननिघृष्टंहिफलहिज्जलजंशुभम् ।
अश्रुपातंनिहन्त्याशुवृद्धानामपिचांजनात् ॥ ८३ ॥

अर्थ-जिसके दोनों आंखोंमें सदैव स्वच्छ आँसूपकै, उसके तोयस्राव रोग, जानना, यह तोयस्राव रोग वातजन्यहै । हिज्जलके फलोंको पानीमें घिसकर नेत्रोंमें अंजनलगानेसे तोयस्राव दूर होताहै ॥ ८२ ॥ ८३ ॥

तैलस्यपचेत्कुडवंमधुकस्यपलेनकल्कपिष्टेन ।
आमलकीरसप्रस्थंक्षीरप्रस्थेनसंयुतंकृत्वा ॥ ८४ ॥
अजितंनाम्नातैलंतिमिरंहन्यान्निमिप्रोक्तम् ।
विमलांकुरुतेदृष्टिंनष्टामप्यानयेत्तद्वत् ॥ ८५ ॥

इति अजितं तैलम् ।

अर्थ-तेल ऽ॥ आधसेर, आमलोंका रस २ दोसेर, गायका दूध २ दो सेर, और कल्कके लिये मुलेठी चार ४ तोले । यथा विधिसे तेलको सिद्धकरे इस अजित तैलका नास लेनेसे तिमिर रोग दूर होताहै, और दोनों नेत्रोंकी ज्योति निर्मल होजातीहै ॥ ८४ ॥ ८५ ॥

अमृतवृषपटोलंचंदनंमुस्तातिक्ता
कुटजकुटजबीजंपूतनाकांडातिक्ता ॥ ८६ ॥
दहनपिटपिमूलंदीर्घमूलायवञ्च

कलितरुफलधात्रीसर्वतोभद्राविश्वम् ॥ ८६ ॥
समधरणघृतानांक्काथमादायचैषां
विधिवदितिपचेत्तंसार्पिषःप्रस्थमेकम् ।
भिषगपिविधिपूर्वंशोधयित्वापुरस्य
वसुपलपरिमाणंकल्कमत्रैवदत्वा ॥ ८७ ॥
सुतिथिदिवसचन्द्रेभास्करंपूजयित्वा
नयनगदगदीयःसर्पिरेतच्चकुर्यात् ।
असिअसितसमुत्थानर्बुदान्काचशुक्रान्
पटलतिमिररोगान्पिल्वकण्डूामर्थाश्च ॥ ८८ ॥
विविधनयनदोषानश्रुपातामवातान्
समशनदिनपूर्वोभोजनान्तेनिहन्ति ॥
दहनपिटलांगलीदीर्घमूलाश्यामालता ॥ ८९ ॥

इति अमृताघृतगुग्गुलुः ।

अर्थ–गिलोय, अडूसा, परवल, लालचंदन, नागरमोथा, कुटकी, कुडे-कीछाल, इन्द्रजौ, हरड़, चिरायता, कलिहारीकीजड़, करियावासाऊ, जौ, बहेड़ा, आमला, कुम्भेर और सोंठ, इनका क्काथ, दो २ सेर, गायका घी दो २ सेर शुद्ध गूगल १ एकसेर, शुभदिनमें चंद्रमा और सूर्य देवका पूजन करकै इसको पकावै । यह–सर्व प्रकारके नेत्ररोग, ८० अस्सी प्रकारके अर्बुदरोग, काचरोग, शुक्ररोग, पटलरोग, तिमिररोग, पिल्वरोग, कण्डूरोग, नानाप्रकारके नेत्रविकार, और आम वातोद्भव अश्रुपातरोग, इन सबरोगों को यह घृत गूगल भोजनके अंतमें खायाहुवा हरैहै ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥

वासामृतानिम्बपटोलपत्रंफलत्रयाणांविधिवत्कषाये ।
भिषक्पचेद्गुग्गुलुकल्कमाज्यं
जेतुंनराणांनयनोत्थदोषान् ॥ ९० ॥
नेत्रामयान्सर्वसमुद्भवांश्चनिहन्तिशीघ्रंनयनाश्रुपातम् ।

रागाश्रुशोथंपटलार्बुदश्चमलंसकण्डूंतिमिरंचकाचम् ९१
महद्रुजंचैवतथामवातंसर्वाणिकुष्ठानिचवातरक्तम् ।
रसायनंसर्पिरनुत्तमञ्चयथानुपानंभिषजाप्रयोज्यम् ९२॥

इति वासामृतगुग्गुलुः ।

अर्थ-उत्तम गायका घी २ दो सेर, क्वाथकेलिये अडूसा, गिलोय, नीमकीछाल, पटोलपत्र, हरड़, बहेड़ा, आमला, यह सब औषधि ४ चारसेर, जल ३२ बत्तीससेर, शेष ८ आठसेर, और कल्कके लिये गूगल ऽ॥ आधसेर । सबको मिलाकर यथाविधिसे सिद्धकरै । यह-सर्व प्रकारके नेत्ररोग, तोयस्राव, पटलादि सर्व प्रकारके नेत्ररोग और आमवात, कुष्ठादि अन्यान्य नाना प्रकारके रोग यथानुपानके साथ दूर करैहै ॥ ९० ॥ ९१ ॥ ९२ ॥

त्रिफलात्वचमायसञ्चचूर्णंसहयष्टीमधुकंसमांशयुक्तम् ।
मधुनासहसर्पिषादिनान्तेपुरुषोनिष्परिहारमाददीत ॥९३॥
तिमिराक्षिरक्तराजिकण्डूक्षणदान्ध्यार्बुददाहतोदशूलान् ।
पटलंसशुक्रकाचपिल्वंशमयत्येवनिषेवितःप्रयोगः ॥ ९४ ॥
नचकेवलमेवलोचनानांसुहितोरोगनिबर्हणायपुंसाम् ।
दशनश्रवणोर्द्धकण्ठजानांप्रशमेहेतुरयंतथामयानाम् ॥९५॥
गुदजानिभगन्दरंप्रमेहंप्लीहानंकुष्ठहलीमकंकिलासम् ।
पलितानिविनाशयेत्तथाग्निंचिरंतनञ्चकरोतिसुप्रचण्डम् ९६
दयिताभुजपंजरोपगूढास्फुटचन्द्राभरणासुयामिनीषु ।
सुरतानिमुहुर्निषेवतेऽसौपुरुषोयोगवरंनिषेवमाणः ॥ ९७ ॥
मुखंचनीलोत्पलतुल्यगंधिशिरोरुहाश्चाञ्जनमेचकप्रभाः ।
भवेच्चगृध्रस्यसमानलोचनःश्रुतंधरोवर्षशतंचजीवति ॥९८॥

इति सर्वचूर्णसमंलौहम् ।

अर्थ-हरड़, बहेड़ा, आमला, दालचीनी, और मुलेठी, यह सब समान भाग, और सबकी बराबर लोहेका चूर्ण, सबको मिलाकर सहत और घृतके साथ सन्ध्यासमय सेवन करै, इसपै कुछ परहेज नहीं-

करै। इससे तिमिररोग, रक्तराजिका, क्षणद, अन्धररोग, अर्बुद, दशशूल पटल, शुक्ररोग, काचरोग, और पिल्वादि विविध प्रकारके नेत्ररोग दूर होतेहैं। यह केवल नेत्ररोगोंकोही दूर नहीं करताहै, परन्तु अन्यान्य दन्तरोग, श्रवणरोग, ऊर्द्धरोग, कण्ठरोग, गुदजरोग, भगन्दर, प्रमेह, प्लीहा, कोढ, हलीमक, किलास और पलितादि रोगोंकोभी दूर करैहै। इसयोगके सेवन करनेवाला स्त्रीके भुजारूपी पिंजरेमें आयाहुवा मनुष्य चन्द्रमाके समान प्रफुल्लित होजाताहै और वारंवार मैथुन करनेमें तत्पर रहताहै, मुख नीलोत्पलकी गंधके समान सुगंधित होजाताहै, सिरके बाल अंजनकी समान कृष्णवर्ण होजातेहैं, नेत्र गीधकी समान ज्योतिवाले होजातेहैं। कर्ण अत्यन्त श्रेष्ठहोजातेहैं, और १०० सौ वर्षतक जीतारहैहै ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ ९७ ॥ ९८ ॥

लक्ष्मीहरिहरःकाशीत्रिफलाकटुरोहिणी।
कामिनीगुग्गुलुर्दन्तीघोषागुलश्चबालकम् ॥ ९९ ॥
सर्वमेतत्समाहृत्यवातारितैलमर्दितम्।
पुष्पितंस्फुटितंचक्षुःपटलंवातदूषितम् ॥ १०० ॥
मुखपाकंक्रिमिदन्तंरक्तजंपूतिनासिकाम्।
घ्राणस्तनादिरोगश्चपूतिकर्णप्रशाम्यति ॥ १०१ ॥

इति षडङ्ग रसः।

अर्थ-हलदी, पारा, सोरठकी मिट्टी, हरड़, बहेड़ा, आमला, कुटकी, फूलप्रियंगू, गूगल, दन्ती, कड़वीतोरई, गिलोय और सुगंधवाला, यह सब औषधि एकत्र पीसकर अंडीके तेलमें खरल करै, इस औषधिको सेवन करनेसे आँखोंके फूले, स्फुटरोग, वातदूषित पटल रोग, मुखपाक रक्तजनित क्रमि और दन्तरोग, पूतिनासिका, घ्राणरोग, स्तनादिरोग और पूतिकर्ण रोग दूरहोताहै ॥ ९९ ॥ १०० ॥ १०१ ॥

दध्नानिघृष्टंमरिचंरात्र्यन्धाञ्जनमुत्तमम्।
सफरीमत्स्यकक्षारोनक्तान्ध्यमञ्जनाद्धिनिहन्ति ॥१०२॥
कणाछागशकृन्मध्येपक्कातत्रसुपेषिता ॥
अंजनाद्धन्तिनक्तान्ध्यंतद्वत्सक्षौद्रसर्पिषा ॥ १०३ ॥

नदीजशङ्खत्रिकटून्यथाञ्जनंमनःशिलाद्वेचनिशेगवांशकृत् ।
सचन्दनेयंगुडिकांजनेषुप्रशस्यतेरात्रिदिनेषुपश्यताम् १०४
केशराजास्वितंसिद्धंमत्स्याण्डंहन्तिभक्षितम् ।
नक्तान्ध्यंनियतंनृणांसप्ताहात्पथ्यसेविना ॥ १०५ ॥

अर्थ—काली मिरचको दहीमें घिसकर नेत्रोंमें अञ्जन लगानेसे रतौंधा दूर होताहै । सफरी मछलीके खारका अंजन बनाकर नेत्रोंमें लगानेसे रतौंधा दूरहोताहै । पीपलको बकरीकी मैंगनमें रख आगसे पकाकर पीस लेवै, इसअंजनको नेत्रोंमें लगानेसे, अथवा घृत और सहतको मिलाकर नेत्रोंमें लगानेसे--रतौंधा दूर होताहै । सैंधानोन, शङ्ख, सोंठ, मिरच, पीपल, रसौत, मैनशिल, हलदी, दारुहलदी, गोबर और लालचंदन, इन सबको एकत्र पीसकर गोली बनालेवै, इन गोलियोंको नेत्रोंमें आँजनेसे अन्धता रोग दूर होताहै । मछलीके अंडेको कुकुरभांगरेके रसमें पकाकर भक्षण करनेसे--एकसप्ताहमें नक्तान्ध्य रोग दूर होजाताहै, इसपै पथ्यसे रहै ॥ १०२ ॥ १०३ ॥१०४॥१०५॥

हरिद्रात्रिफलालोध्रमधुकंरक्तचंदनम् ।
भृंगराजरसेपिष्ट्वाघर्षयेल्लौहभाजने ॥ १०६ ॥
तथाताम्रेचसप्ताहंकृत्वावर्त्तिञ्चाञ्जयेत् ।
पिच्चटीधूमदर्शीचतिमिरोपहतेक्षणः ॥ १०७ ॥
प्रातर्न्निश्यञ्जयेन्नित्यंसर्वनेत्रामयापहम् ।
इडामूत्रेणभूधात्रीमूलंपिष्ट्वाचवर्त्तिका ॥
नवनीतेनसंयुक्ताहन्तिपुष्पंचिरंतनम् ॥ १०८ ॥

अर्थ—हलदी, हरड़, बहेड़ा, आमला, लोध, मुलैठी और लालचन्दन, यह सब औषधि समान भागले भाँगरेके रसमें पीसकर सातदिन लोहेके पात्रमें और सातदिन ताँबेके पात्रमें घिसे, फिर इसकी बत्ती बनाकर प्रातःकाल और रात्रिमें आँखोंमें आंजनेसे पिच्चट, धूमदर्शन तिमिरादि सर्वप्रकारके नेत्र रोग दूरहोतेहैं । भुईआमलेको गौके

क मूत्रमें पीसके बत्तीबना नौनीघी मिलाके नेत्रोंमें आँजनेसे बहुत दि-नोंका नेत्रोंका फूफुला दूरहोजाता है ॥ १०६ ॥ १०७ ॥ १०८ ॥

शम्बूकंचवराटंवादग्धंचैतद्विचूर्णयेत् ।
अंजनंनवनीतेनहन्तिपुष्पंचिरन्तनम् ॥ १०९ ॥
अंजनान्नाशयेत्पुष्पंक्षौद्रैर्वास्वर्णमाक्षिकम् ।
अपामार्गस्यबीजानिमरिचंकण्टकारिका ॥ ११० ॥
अर्कक्षीरैस्त्र्यहंतत्तुशुष्कंमृद्वग्निनापचेत् ।
तत्पृष्ठेच्छादनंपात्रंसरन्ध्रंलेपयेद्बहिः ॥ १११ ॥
इत्थंतदुत्थितंधूमंनेत्रेकर्णेमुखेऽथवा ।
नासायांग्राहयेद्धूमंकृमिपातोभवत्यलम् ॥ ११२ ॥

इति चक्षूरोगाऽध्यायः ।

अर्थ-शम्बूक अथवा कौडीकी भस्मको नौनीघीमें मिलाकर नेत्रोंमें अंजन लगानेसे पुष्परोग दूर होताहै । सोना माखीको सहतमें मिलाकर अंजन लगानेसे पुष्परोग दूर होताहै । चिरचिटेके बीज, काली मिरच, और कटेरी, इनको एकत्र आकके दूधमें तीनदिन तक सुखाके मंद मंद आगमें पकावै और ऊपर छेदोंवाला पात्र ढकदेवै, और बाहरसे लीपदेवै, इसमेंसे जो धुआँ निकले उस धुयेंको कान, नेत्र, मुख और नासिकामें ग्रहण करै तौ सब कृमि गिर पडती है ॥ १०९ ॥ ११० ॥ १११ ॥ ११२ ॥

इति चक्षुरोगाधिकारः ।

अथशिरोरोगचिकित्सामाह ।

वातिकेशिरसोरोगेस्नेहस्वेदानुवासनान् ।
पानानिउपनाहांश्चकुर्याद्वातामयापहान् ॥ १ ॥
पयोऽनुपानंसेवेतघृतंतैलमथापिवा ।
स्वेदोपनाहान्कुर्वीतकृशरापयसादिभिः ॥ २ ॥

कुष्ठमेरण्डमूलन्तुलेपात्कांजिकपेषितम् ।
शिरोऽर्त्तिनाशयत्याशुपुष्पंवामुचुकुन्दजम् ॥ ३ ॥
पंचमूलीशृतंक्षीरंनस्येदद्याच्छिरोगदे ॥ ४ ॥

अर्थ-वातिक शिरोरोगमें स्नेह, स्वेद, अनुवासन, पान और अपनाह स्वेद, यह सब वातनाशक करने चाहिये। दूधका अनुपान या घृत और तेल, इसमें विशेष हितकारीहै। दूध और कृशरादिके द्वारा स्वेद प्रलेपादि प्रयोगकरै। कूठ और अंडकी जडको काँजीमें पीसकर प्रलेप करनेसे, अथवा मुचुकुन्दके फूलोंको जलमें पीसकर प्रलेप करनेसे मस्तककी पीडा दूर होतीहै। पंचमूलके साथ औंटाए दूधका नास देनेसे शिरोरोगकी पीडा दूर होतीहै ॥१॥२॥३॥४॥

आशिरोव्यायतञ्चर्म्मकृत्वाष्टांगुलिमुद्रितम् ।
तेनावेष्ट्यशिरोऽधस्तान्माषकल्केनलेपयेत् ॥ ५ ॥
निश्चलस्योपविष्टस्यतैलैरुष्णैःप्रपूरयेत् ।
धारयेदारुजःशान्त्यैयामंयामार्द्धमेववा ॥
एषएवविधिःकार्यःतथाकर्णाक्षिपूरणे ॥ ६ ॥

अर्थ-आठ अंगुल ऊंचा और मस्तकके चारों ओर आजाय ऐसे चमडेसे रोगीके मस्तकको लपेटकर बांधे, और उसके नीचेकी संधियोंको उड़दके चूनसे बंद करदेवै, और रोगीके मस्तकपै भी उड़दोंके चूनकाही लेप करदेवै, पश्चात् रोगीको निश्चल बैठा करकै उसमें गरम गरम तेलको भरदेवै, एक प्रहर या अर्द्ध प्रहर अर्थात् जबतक पीडा रहै तब तक तेल धारण करे रहै, येही विधि कान और आँखोंके भरनेमें भी करनी चाहिये ॥ ५ ॥ ६ ॥

नागरकल्कविमिश्रंक्षीरंनस्येनयोजितंपुंसाम् ।
नानादोषोद्भूतांशिरोरुजांहन्तितीव्रतराम् ॥ ७ ॥
मृणालबिसशालूकचंदनोत्पलकेशरैः ।
स्निग्धशीतैःशिरोदद्यात्तद्वदामलकोत्पलैः ॥ ८ ॥
यष्टयाह्वचन्दनानन्ताक्षीरसिद्धंघृतंहितम् ॥ ९ ॥

अर्थ-सोंठके कल्कको दूधमें मिलाकर नास देनेसे नाना प्रकारक दोषोंसे उत्पन्न हुआ शिरोरोग दूर होताहै। कमलकी नाल, कमलकी जड़ भसींडे, लाल चंदन. कमल और कमल केशर, अथवा आमला और उत्पल, इनका शीतल क्वाथ स्निग्ध करकै शिरपै प्रयोग करनेसे शिरो रोग दूर होताहै । मुलेठी लाल चंदन, और अनन्तमूल तथा दूध,इनके साथ सिद्ध किया हुवा घृत पीनेसे शिरोरोग दूर होता है ॥ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥

कृष्णाह्वशुण्ठीमधुकंशताह्वोत्पलपाकलैः ।
जलपिष्टैःशिरोलेपःसद्यःशूलनिवारणः ॥ १० ॥
देवदारुनतंकुष्ठंनलदंविश्वभेषजम् ।
लेपःकांजिकपिष्टोहितैलयुक्तःशिरोऽर्त्तिनुत् ॥ ११ ॥

अर्थ-सोंठ, पीपल, मुलेठी, सौंफ, कमल और कूठ इनको जलमें पीसके सिरपै लेप करनेसे तत्काल शिरःशूल दूर होजाताहै । देवदारु, तगर, कूठ,खस और सोंठ, यह सब औषधि काँजीमें पीस तेल मिलाकर लेप करनेसे शिरोरोग दूर होताहै ॥ १० ॥ ११ ॥

त्रिकटुपुष्करवीजरजनीरास्नातुरगगन्धानाम् ।
क्वाथःशिरोऽर्त्तिजालंनासापीतोनिवारयति ॥ १२ ॥
नतोत्पलंचन्दनकुष्ठयुक्तंशिरोरुजायांसघृतःप्रलेपः ।
प्रपौण्डरीकंसुरदारुकुष्ठंयष्ट्याह्वमेलाकमलोत्पलेच ॥
शिरोरुजायांसघृतःप्रदेहोलोहैर्वकैपद्मकरोचकैश्च ॥ १३ ॥

इति लोहमण्डूरः ।

अर्थ-सोंठ, मिरच, पीपल पोहकरमूल, विजयसार, हलदी, रास्ना, और असगंध इनका क्वाथ नासिकाके द्वारा पीनेसे सर्व प्रकारकी शिर की पीडा दूर होतीहै । तगर, कमल, लाल चंदन, और कूठ, यह सब औषधि एकत्रपीस घृतमें मिलाकर प्रलेप करनेसे शिरकी पीडा शान्त होती है। पुण्डेरिया, देवदारु, कूठ, मुलेठी, इलायची कमल और कुमुद, मण्डूर, बक, पद्माख, और रोचक (गठिन भेद), यह सब

औषधि समानभागले घृतमें पीसके प्रलेप करनेसे शिरकी पीड़ा दूर होतीहै ॥ १२ ॥ १३ ॥

जीवकर्षभकौद्राक्षामधुकंमधुकाम्बुना ।
नीलोत्पलंचंदनंचाविदारीशर्करातथा ॥ १४ ॥
तैलप्रस्थंपचेदेभिःशनैःपयसिषट्गुणे ।
जांगलस्यतुमांसस्यतुलार्द्धस्यरसेनतु ॥ १५ ॥
सिद्धमेतद्भवेन्नस्यंतैलमर्द्धावभेदकम् ।
वाधिर्यंकर्णशूलञ्चतिमिरंगलशुण्डिकाम् ॥ १६ ॥
वातिकंपैत्तिकंचैवशीर्षरोगंनियच्छति ॥ १७ ॥

इति जीवकाद्यंतैलम् ।

अर्थ-तिलोंकातेल २ दोसेर, दूध १२ बारह सेर, जांगलदेशके जीवोंके मांसकारस ६। सवाछैसेर, मुलेठीकाकाथ २ दोसेर, कल्कके लिये जीवक, ऋषभक, दाख, मुलेठी, नीलकमल, लालचन्दन, विदारी कन्द और खांड, यह सब ऽ॥ आधसेर, यथा विधिसे तेलको पकाकर नासलेनेसे अर्द्धावभेदक, बधिरता, कर्णशूल, तिमिर, गलशुण्डिका और वातज तथा पित्तज शिरोरोग दूरहोताहै ॥ १४ ॥ १५॥१६॥१७॥

एरण्डमूलंतगरंशताह्वाजीवन्तिरास्नासहसैन्धवञ्च ।
भृङ्गंविडङ्गंमधुयष्टिकाचविश्वौषधंकृष्णतिलस्यतैलम् १८
आजंपयस्तैलविमिश्रितञ्चचतुर्गुणेभृंगरसेविपक्वम् ।
षड्विन्दवोनासिकयाविधेयाःशीघ्रंनिहन्तिशिरसोविकारान्।
च्यूतांश्चकेशाश्चलितांश्चदन्तानबद्धमूलान्सुदृढीकरोति ।
सुवर्णदृष्टिप्रतिमञ्चचक्षुर्वलंचवाहोरधिकंददाति ॥ २० ॥

इति षड्बिन्दुतैलम् ।

अर्थ-तिलोंकातेल २ दोसेर, भांगरेका रस आठ ८ सेर, बकरीका दूध आठ ८ सेर, और कल्कके लिये अण्डकीजड़, तगर, सोया, जीवन्ती, रास्ना, सैंधानोन, भाँगरा, वायविडंग, मुलेठी, और सोंठ, यह सब औषधि आध ऽ॥ सेर, यथाविधिसे तेलको पकावै, इसतेलका

नास लेनेसे सर्व प्रकारके नेत्ररोग दूरहोकर केश दृढमूल और नेत्रोंकी ज्योति उज्ज्वल हो जातीहै ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥

दशमूलकषायेणपयसाद्विगुणेनच ।
कल्कतश्चाष्टवर्गेणतैलप्रस्थंविपाचयेत् ॥ २१ ॥
तत्तैलंविहितंश्रेष्ठंसर्वदावातरोगिणे ।
शिरःकर्णाक्षिशूलेषुसर्वत्रैवप्रशस्यते ॥ २२ ॥

इति दशमूलतैलम् ।

अर्थ-तेल २ दोसेर, दूध ४ चारसेर, दशमूलका क्वाथ ८ आठसेर, और कल्ककेलिये अष्टवर्ग ऽ॥ आधसेर, यथाविधिसे तेलको सिद्धकरै। यह तेल-सर्वप्रकारके शिरः शूल, कर्णशूल और चक्षुशूलको दूर करताहै ॥ २१ ॥ २२ ॥

शुण्ठीविडंगयष्टयाह्वैःभृंगतोयशृतंघृतम् ।
षड्बिन्दुनस्यदानेनसर्वानूर्द्धगदाञ्जयेत् ॥ २३ ॥

इति द्वितीयषड्बिन्दुतैलम् ।

अर्थ-तिलकातेल २ दोसेर, भाँगरेका रस ८ आठसेर, और कल्कके लिये सोंठ, वायविडंग और मुलेठी ऽ॥ आधसेर, यथाविधिसे तेलको पकावै। इसतेलको नासलेनेसे-ग्रीवाके ऊर्द्धगत शिरोरोगादि सम्पूर्ण रोग दूरहोतेहैं ॥ २३ ॥

वरुणशतसुतायामेषशृङ्गीकरञ्जौ
वरककुभजयन्तीशिग्रुशोनाग्निमन्थः ।
वसिरवसुगुडूचीबिम्बिशौरीद्वयंच
कुशदहनजटाजशृंगिमालूरविश्वम् ॥ २४ ॥
बृहतियुगलमूलंमोरटानांद्विप्रस्थं
वसुगुणजलदानादष्टभागावशेषम् ।
विपच्यमायूरमथापिमांसप्रस्थंतथाक्षीरसमंवरायाः २५
प्रस्थंचसर्पिर्मधुकंकिरातंरास्नागुडूचीपिचुमर्दरात्रिः ।

प्रत्येकशःसार्द्धपलञ्चकल्कंदत्वातुसर्वंविपचेद्विधिज्ञः ॥२६॥
भ्रूशंखमन्याशिरसांविकारास्त्रिदोषजोद्वन्द्वजएवनातः ।
नानाप्रकारेशिरसोविकारेतथायथादन्तिवधेमृगेन्द्रः ॥ २७ ॥

इति वरुणाद्यंतैलम् ।

अर्थ-गायका घी २ दो सेर, क्वाथके लिये वरनाकी छाल, सतावर, मेढाशिंगी, करंज, बडीकरंज, अर्जुनकीछाल, जयन्ती, सैंजिना, श्योनाक, अरणी, सफेद खिरैटी, आककी जड़, वेल, सोंठ, गिलोय, कन्दूरी, नीली कटसरैया, पीलीकटसरैया, कुशा, चीता, वालछड, काकड़ाशिंगी, बृहती, कटेरी, और अंकोलकी जड़, यह सब औषधि २ दोसेर, पाकके लिये जल १६ सोलहसेर, शेष २ दोसेर, मोरका मांस २ दो सेर, और त्रिफला २ दोसेर, जल १६ सोलहसेर, शेष २ दोसेर, गायकादूध २ दोसेर, और कल्कके लिये मुलेठी, चिरायता, रास्ना, गिलोय, नीमकी छाल, और हलदी, प्रत्येक दोदो तोले, यथाविधिसे घृतको सिद्धकरै। इस घृतको सेवन करनेसे-सर्व प्रकारके शिरो रोगादि अनेक रोग दूर होतेहैं ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥

दशमूलीवलारास्नामधुरैस्त्रिफलैःसह ।
मधुरंपक्षपित्तान्त्रशकृत्पादास्यवर्जितम् ॥ २८ ॥
जलेपक्वाघृतप्रस्थंतस्मिन्क्षीरसमंपचेत् ।
मधुरैःकार्षिकैःकल्कैःशिरोरोगार्दितापहम् ॥ २९ ॥
कर्णनासाक्षिजिह्वास्यगलरोगविनाशनम् ।
मयूराद्यमिदंख्यातमूर्द्धजत्रुगदापहम् ॥ ३० ॥
दशमूलादिनातुल्योमयूरइहगृह्यते ।
अन्येत्वाकृतिमानेनमयूरग्रहणंविदुः ॥ ३१ ॥
आखुभिःकुक्कुटैर्हंसैःशशैश्चापिहिबुद्धिमान् ।
कल्केनानेनविपचेत्सर्पिरूर्द्धगदापहम् ॥ ३२ ॥

इतिमयूराद्यं घृतम् ।

अर्थ-उत्तम गायकाघी २ दोसेर, दशमूल, खिरैटी, रास्ना, त्रिफला

और जीवनीय दशक, इन औषधियोंका क्वाथ ४ सेर, पक्ष, पित्त, अन्त्र, विष्ठा, पाद, और मुखको छोड़कर मोरके शेष अंगोंके मांसका क्वाथ ४ चारसेर, और कल्कके लिये जीवनीय दशक ॥ आधसेर, यथाविधिसे घृतको पकावै। यह-शिरो रोग, कर्णरोग, नासिका रोग, नेत्ररोग, जिह्वा रोग, और गलरोगको दूर करैहै। यह मयूराद्य घृत-विशेष करकै ऊर्द्ध जत्रु रोगको दूर करैहै। यहाँ दशमूलादि औषधियोंके समान मयूरका मांस लिया जाताहै। और अन्यवैद्य आकृतिसेही मोरके मांसको ग्रहण करतेहैं। मूसा, मुरगा, हंस और शशकके मांसके कल्कमेंभी घृतको सिद्धकरना चाहिये, वह सब घृत ऊर्द्ध रोगको दूरकरैहै ॥२८॥२९॥३०॥३१॥३२॥

शतंमयूरमांसस्यदशमूलबलातुलाम्।
द्रोणेम्भसःपचेत्क्षुत्वातस्मिन्पादस्थितेततः ॥ ३३ ॥
निक्षिप्यपयसोद्रोणेपचेत्तत्रघृताढकम्।
प्रपौण्डरीकवर्गोक्तैर्जीवनीयैश्चभेषजैः ॥ ३४ ॥
मेधाबुद्धिस्मृतिकरमूर्द्धजत्रुगदापहम्।
मायूरमेतन्निर्दिष्टंसर्वानिलहरंशुभम् ॥ ३५ ॥
मन्याकर्णशिरोनेत्ररुजापस्मारनाशनम्।
विषवातामयश्वासविषमज्वरकासनुत् ॥ ३६ ॥

इति द्वितीयमयूराद्यंघृतम्।

अर्थ-गायकाघी ८ आठसेर, मोरकामांस १२॥ साढ़ेबारहसेर, दशमूल और खिरैटीका क्वाथ १२॥ साढ़ेबारहसेर, दूधबत्तीस ३२ सेर, और कल्कके लिये प्रपौण्डरीक वर्गकी सम्पूर्ण औषधि और जीवनीयगणकी समस्त औषधि यह सब २ दो सेर, यथाविधिसे घृतको पकावै। यह घृत-मेधा, स्मरणशक्ति और बुद्धिको बढावै है। ऊर्द्धजत्रुरोगको दूर करैहै। तथा सर्वप्रकारके वातरोग, मन्यारोग, कर्णरोग, शिरोरोग, नेत्र रोग, अपस्मार, विषविकार, वातरोग, श्वास, विषमज्वर और खाँसीको दूर करैहै ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥

त्रीणिकटूनितथातिविषाणिक्षारयुतौत्रिफलात्रिवृतानि ।
दन्तिनिवासकलोध्रनतानिचन्दनवारिभकणाभृतकानि ३७
ग्रन्थिकपुष्करमूलघनस्यतिक्तककट्फलकेन्दुयवस्य ।
त्वग्दलमेघनीलोत्पलकस्यवालमूलालसजातिफलस्य ॥३८
द्रव्यमितंपिचुमात्रक्रमेणचाष्टपलानितथायसकस्य ।
अष्टपलन्तुशिलाजतुकस्यशुभयाकृतंचक्षसमम् ॥ ३९ ॥
शुभवासरखादनकालशुभंमुखदारुणरोगशिरोव्यथनम् ४०
हन्तिभ्रमंपटलंतिमिरश्चपिष्टकशुक्रमथार्बुदकञ्च ।
पलितहरंसुखकामकरंयुवतीरमणेपिवदुग्धसमम् ॥४१॥

इति त्र्यूषणादिगुटिका ।

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल, अतीस, जवाखार, सज्जी, हरड़, बहेड़ा, आमला, निसोत, दन्ती, अडूसा, लोध, तगर, लालचंदन, सुगन्धवाला, गजपीपल, गिलोय, गठिवन, पोहकरमूल, नागरमोथा, कुटकी, कायफल, इन्द्रजौ, दालचीनी, तेजपात, मोथा, नीलोत्पल, कच्चीमूली, हरिताल, और जायफल, प्रत्येकका चूर्ण २ तोले, लोहेका चूर्ण आठ ८ पल, शिलाजीत ८ आठ पल, और वंशलोचन ८ आठपल, सब औषधियोंको एकत्र जलमें पीसकर गोली बनालेवै । इन गोलियोंको उत्तम दिन उत्तम समयमें खावै, इससे–मुख दारुणरोग, शिरकीपीड़ा, भ्रम, पटल, तिमिर, पिष्टक, शुक्र, नेत्रार्बुद और पलितादि रोग दूर होतेहैं और सुखपूर्वक कामदेवको बढ़ावैहै, और स्त्री संसर्गमें दूधकेसाथ पीवै ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥

मृतसूताभ्रकंतीक्ष्णंगंधंताम्रंमृतंसमम् ॥
स्नुहीक्षीरैर्दिनंमर्द्यंभक्षयेन्माषमात्रकम् ॥४२ ॥
मधुनामर्दितंभक्षेल्लोहपात्रेदिनेदिने ।
सप्ताहात्सूर्यावर्तादीञ्छिरोरोगान्निवर्त्तयेत् ॥ ४३ ॥
सूर्योदयरसोनाम्नासर्वमूर्द्धगदापहः ॥

इति सूर्योदयरसः ।

अर्थ-मृतपारा, अभ्रक, इस्पात, गंधक और ताँबा, यह सब औषधि समान भागले थूहरके दूधमें एकदिन खरलकर गोली बनालेवै, इसको प्रतिदिन एक मासेभर खावै। इस औषधिको लोहेके पात्रमें सहतके साथ खरलकर सेवन करनेसे- ७ सात दिनमेंही सूर्यवर्त्तादि नाना प्रकारके शिरोरोग दूर होतेहैं। यह सूर्योदय रस सर्व ऊर्द्धरोगोंको दूर करैहै ॥ ४२ ॥ ४३ ॥

लौहमभ्रंविषंमुस्तंत्रिफलात्रिकटुन्तथा।
धुस्तूरंवृद्धदारश्चवीजमिन्द्राशनस्यच ॥ ४४ ॥
गोक्षुरकद्वयश्चैवपिप्पलीमूलमेवच।
एतेषांसमताचूर्णरसैर्धुस्तूरकस्यच ॥ ४५ ॥
निष्पिष्यवटिकाकार्याबदरास्थिप्रमाणतः।
अनुपानंप्रयोक्तव्यशुण्ठीचूर्णद्विमासकम् ॥ ४६ ॥
आर्द्रकस्यरसश्चैवतोलकद्वयमेवच ॥
महालक्ष्मीविलासोऽयंसन्निपातनिवारकः ॥ ४७ ॥

इतिमहालक्ष्मीविलासो रसः।

अर्थ-लोहा, अभ्रक, विष, नागरमोथा, हरड, बहेडा,आमला, सोंठ, मिरच, पीपल, धतूरेके बीज, विधारेके बीज, भाँगकेबीज, गोखरूके बीज, और पीपरामूल, यह सब औषधि समान भागलेकर धतूरेके रसमें खरलकर बेरकी गुठलीकी बराबर गोली बनालेवै, २ दो मासे सोंठके चूर्णके साथ खावै, पश्चात् दो २ तोले अदरखका रसपान करै।यह महालक्ष्मीविलासरस--सन्निपातको दूर करै है ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥

दशमूलीकषायन्तुसर्पिःसैन्धवसंयुतः।
नस्यमर्द्धावभेदघ्नंसूर्यावर्त्तशिरोऽर्त्तिनुत् ॥ ४८ ॥
कृतमालपल्लवरसेखरमंजरीकल्केनसहनवनीतम्।
नस्येनजयतिनियतंसूर्यावर्त्तसुदुर्वारम् ॥ ४९ ॥

सूर्यावर्त्तानिहन्त्याशुनस्येनैवप्रयोगराट् ।
कल्याणकंपिबेत्सर्पिःसूर्यावर्त्तनिपीडितः ॥ ५० ॥

अर्थ-दशमूलकाक्काथ और सैंधेनोनके साथ घृतको पकाकर नास लेनेसे अर्द्धावभेदक और सूर्यावर्त्त नामक शिरोरोग नष्ट होताहै । अमलतासके पत्तोंका रस और चिरचिटेका कल्क, इनके साथ नौनीघी मिलाकर नासलेवै, और पथ्यसे रहै, उससे सूर्यावर्त्त रोग दूरहोताहै । चिरचिटेकेबीजोंका कल्क और भांगरेके रसके साथ बकरीका दूध मिलाकर सूर्यकी तपनमें पकाकर नासलेनेसे सूर्यावर्त्त रोग दूरहोताहै । पूर्वोक्त कल्याणक घृतको पीनेसेभी सूर्या वर्त रोग दूर होताहै ॥ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥

शारिवोत्पलकुष्ठानिमधुकंचाम्लपेषितम् ।
सर्पिस्तैलयुतोलेपःसूर्यावर्त्तार्द्धभेदयोः ॥ ५१ ॥
एषएवप्रयोक्तव्यःशिरोरोगेक्षयात्मके ।
भृंगराजमूलंकांजिकेनपिष्टानस्यंदेयम् ॥ ५२ ॥
मस्तकमूलं हन्ति ।
पटोरिमूलंपिष्ट्वाशिरोल्लेपाच्चशूलंहन्ति ॥ ५३ ॥

इति शिरोरोगाध्यायः ।

अर्थ-करियावासाऊ, कमल, कूठ, और मुलेठी, इनको एकत्र काँजी में पीस घृत और तेलमें मिलाकर मस्तक और ललाटपै प्रलेप करनेसे सूर्यावर्त्त और अर्द्धावभेदक रोग दूर होताहै । भांगरेकी जडको काँजीमें पीसकर नास लेनेसे मस्तक शूल दूर होताहै पेटारीकी जड़को पीसकर माथे पै प्रलेप करनेसे शिर शूल दूर होताहै ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥

इति शिरोरोगाध्यायः समाप्तः ।

अथ प्रदरचिकित्सामाह ।

दध्नासौवर्चलाजाजीमधुकंनीलमुत्पलम् ।
पिबेत्क्षौद्रयुतंनारीवातासृग्गदपीडिता ॥ १ ॥
कुशमूलंसमुद्धृत्यपिबेत्तण्डुलवारिणा ॥

एतत्पीत्वात्र्यहान्नारीप्रदरात्परिमुच्यते ॥ २ ॥
बलामंशुमतींद्राक्षांलाक्षांकटुकरोहिणीम् ।
कारवींकृष्णलवणंशारिवांलोध्रचंदनम् ॥ ३ ॥
वातासृग्गदशान्त्यर्थंपिबेद्दध्नावराङ्गना ॥ ४ ॥

अर्थ-कालानोन, जीरा; मुलेठी और नीलोत्पल, यह सब औषधि समान भागले दहीमें पीसकर सहतमें मिलाकर सेवन करनेसे स्त्रियोंके वातज प्रदर रोग दूर होताहै । कुशाकी जड़को चावलोंके जलमें पीस कर सेवनकरनेसे ३ तीन दिनमेंही स्त्रियोंका प्रदर रोग दूर होताहै । खिरैंटी, शालपर्णी, दाख, लाख, कुटकी, सौंफ, काला नोन, अनंतमूल लोध और लालचंदन, इनको एकत्र दहीमें पीसकर सेवन करनेसे-वात जनित प्रदररोग दूरहोताहै ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥

धात्रीरसंसितायुक्तंयोनिदाहापहंपिबेत् ।
जीवनीयोपसिद्धंचपयःसमधुशर्करम् ॥ ५ ॥
असृग्गदंहान्तिपीतंपित्तजंरक्तजंतथा ।
काकजानुकमूलंवामूलंकार्पासमेववा ॥ ६ ॥
पाण्डुप्रदरशान्त्यर्थंपिबेत्तण्डुलवारिणा ।
रोहित्कान्मूलकल्कंपाण्डवेऽसृग्गदेपिबेत् ॥ ७ ॥
अशोकवल्कलक्काथंशृतदुग्धंसुशीतलम् ।
यथाबलंपिबेत्प्रातस्तीव्रासृग्गदनाशनम् ॥ ८ ॥
समंगाधातुकीपुष्पंमूलंनीलोत्पलस्यच ।
एतत्क्षीरेणपातव्यंस्त्रीणांप्रदरनाशनम् ॥ ९ ॥

अर्थ-आमलोंके रसमें बूरा डालकर पीनेसे-योनिदाह दूर होतीहै । जीवनीयगणकी औषधियोंके साथ दूधको पकाकर सहत और बूरा मिलाके पीनेसे-रक्तज और पित्तज प्रदररोग दूर होताहै । काकजंघाकी जड, अथवा कपासकी जड़को चावलोंके जलमें पीसकर सेवन करनेसे पाण्डुवर्ण प्रदररोग दूर होजाताहै । रोहितककी जडको पीसकर पीनेसेभी पाण्डुवर्ण प्रदररोग दूर होताहै अशोककी छालको दूधमें औटाकर

शीतल करकै बलको देखकर प्रातःकाल पीवै तौ अत्यन्त तीव्र प्रदररोग दूर होताहै । मजीठ, धायके फूल, और नीलोत्पलकी जडको एकत्र दूधके साथ पीसकर सेवन करनेसे–स्त्रियोंका प्रदर रोग दूर होताहै ॥ ५॥ ॥६॥७॥८॥९॥

दार्वीरसांजनवृषाब्दकिरातबिल्व
भल्लातकैरेवकृतोमधुनाकषायः ।
पीतोजयत्यतिबलंप्रदरंसमूलं
पीतासिताऽरुणविलोहितनीलशुक्रम् ॥ १० ॥

इति दार्व्यादिः ।

अर्थ–दारुहलदी, रसौत, अडूसा, नागरमोथा, चिरायता, बेल और भिलावा, इनके काथमें सहत डालकर पीनेसे सर्वप्रकारके प्रदर रोग दूर होतेहैं ॥ १० ॥

गुडेनवादरंचूर्णमोचमामंतथापयः ।
पीतालाक्षाचसघृतापृथक्प्रदरनाशनाः ॥ ११ ॥

अर्थ–सूखे बेरोंके चूर्णमें गुड मिलाकर अथवा कच्चेकेलेको दूधमें पीसकर पीनेसे या लाखको घीके साथ पीनेसे, सर्व प्रकारके प्रदररोग दूर होजातेहैं ॥ ११ ॥

चंदनंवरुणंलोध्रमुशीरंपद्मकेशरम् ।
नागपुष्पश्चबिल्वश्चभद्रमुस्तकशर्करा ॥ १२ ॥
ह्रीवेरंचैवपाठाचकुटजस्यफलंत्वचम् ।
शृंगवेरंसातिविषाधातुकीसरसांजनम् ॥ १३ ॥
आम्रास्थिजम्बूसारास्थितथामोचरसोऽपिच ।
नीलोत्पलंसमंगाचसूक्ष्मैलादाडिमत्वचम् ॥ १४ ॥
चतुर्विंशतिमेतानिसमभागानिकारयेत् ।
तण्डुलोदकसंयुक्तंमधुनासहयोजयेत् ॥ १५ ॥
योगंलोहितपित्तानामर्शसांज्वरिणान्तथा ।
मूर्च्छामदोषसृष्टानांतृषार्त्तानांप्रदापयेत् ॥ १६ ॥
अतीसारेतथाच्छर्द्यांस्त्रीणाञ्चरक्तसंग्रहे ॥

प्रच्युतानांचगर्भाणांस्थापनंपरमुच्यते ।
अश्विभ्यांसम्मतोयोगोरक्तपित्तनिबर्हणः ॥ १७ ॥

इति चंदनादिचूर्णम् ।

अर्थ-चंदन, बरनाकीछाल, लोध, खस, कमलकेशर, नागकेशर, बेल, नागरमोथा, चीता; सुगंधवाला, पाढ, कुडेकीछाल, इन्द्रजौ, अतीस, धायकेफूल, रसौत, आमकीगुठली, जामुनकीगुठली, मोचरस नीलकमल, मजीठ, छोटीइलाची और अनारके फलकीछाल, यह औषधि समान भागले चूर्ण कर चावलोंकेजलके साथ और सहत मिलाकर सेवनकरनेसे--रक्तपित्त, बवासीर, ज्वर, मूर्च्छा, आम दोष, तृषा, अतीसार, बमन, और स्त्रियोंके रुधिरके विकार दूर होतेहैं। यह योग- गिरते हुए गर्भको स्थापित करैहै, और अश्विनी कुमारोंकी सम्मतिसे रचागयाहै और रक्तपित्त नाशक है ॥ १२ ॥ १३ ॥ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥

लौहंताम्रंहरितालंवंगमभ्रंवराटिका ।
त्रिकटुत्रिफलाचित्रंविडंगंपटुपञ्चकम् ॥ १८ ॥
चविकापिप्पलीशंखंवचाहवुषपाकलम् ।
शठीपाठादेवदारुएलाचवृद्धदारकम् ॥ १९ ॥
एतानिसमभागानिसंचूर्यवटिकांकुरु ।
शर्करामधुसंयुक्तंघृतेनभावयेत्पुनः ॥ २० ॥
रक्तंशीतंतथानीलंपीतंप्रदरदुस्तरम् ।
कुक्षिशूलंकटीशूलंयोनिशूलंचसर्वगम् ॥ २१ ॥
मन्दाग्निमरुचिंपाण्डुकृच्छ्रश्वासकासनुत् ।
आयुःपुष्टिकरंवल्यंवलंवर्णप्रसादनम् ॥ २२ ॥

इति प्रदरान्तक लौहः ।

अर्थ-लोहा, ताँबा हरिताल, वंग, अभ्रक, कौडी त्रिकुटा, त्रिफला, चीता, वायविडंग, पाँचोंनोन, चव्य, पीपल, शंख, वच, हाऊबेर, कूठ, कचूर, पाढ, देवदारु, इलायची और विधारा, यह सब औषधि समान

भाग लेकर पीसलेवै, पश्चात् इसमें बूरा और सहत मिलाकर घीमें भावनादेकर गोली बनालेवै। यह प्रदरान्तक लौह-रक्त- शीत- नील और पीत प्रदर, कुक्षि शूल कटिशूल, योनिशूल,सर्वप्रकारके शूल, मंदाग्नि अरुचि, पाण्डुरोग, मूत्रकृच्छ्र, श्वास, खाँसी इन सब को दूर करैहै आयु और पुष्टिको करैहै बलको बढ़ावे है बल और वर्णको प्रसन्नकरैहै ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥

पाठाजम्ब्वाम्रयोर्मध्यंशिलोद्भेदंरसांजनम्।
अम्बष्ठकींमोचरसंसमंगापद्मकेशरम् ॥ २३ ॥
बाह्लीकातिविषामुस्तंबिल्वंलोध्रंसगैरिकम्।
कट्फलंमरिचंशुण्ठीमृद्वीकारक्तचंदनम् ॥ २४ ॥
कट्वङ्गवासकानन्ताधातुकीमधुकार्ज्जुनम्।
पुष्येणोद्धृत्यतुल्यानिश्लक्ष्णचूर्णानिकारयेत् ॥ २५ ॥
तानिक्षौद्रेणसंयोज्यपाययेत्तण्डुलाम्बुना।
अर्शोरक्तातिसारेषुरक्तंयच्चोपवेश्यते ॥ २६ ॥
दोषागन्तुकृतायेचबालानांतांश्चनाशयेत्।
योनिदोषंश्वेतनीलंरक्तश्वेतंसपीतकम् ॥ २७ ॥
स्त्रीणांश्यावारुणंयच्चतत्प्रसह्यनिवर्त्तयेत्।
चूर्णंपुष्यानुगंनामहितमात्रेयपूजितम् ॥
शिलोद्भेदःपाषाणभेदीअम्बष्ठकीदाक्षिणेख्याता ॥ २८ ॥

इति पुष्यानुगंचूर्णम्।

अर्थ-पाढ़, जामुनकी गुठली, आमकी गुठली, पाषाणभेद, रसौत, मोइया, मोचरस, मजीठ, कमलकेशर, केशर, अतीस, नागरमोथा, वेल, लोध, गेरू, कायफल, कालीमिरच, सोंठ, दाख, लाल चन्दन, श्योनाक, अडूसा, अनन्तमूल, धायके फूल मुलेठी, और अर्जुनकी छाल, यह सब औषधि पुष्यनक्षत्रमें उखाडलावै, पश्चात् सबको समान भाग लेकर बारीक पीसलेवै, इसमें सहत मिलाकर चावलोंके जलके साथ पान करै। यह- बवासीर, रक्तातिसार, रुधिरविकार, बालकोंके

आगन्तुक दोष, योनिदोष, श्वेत, नील, रक्तश्वेत, पीत, श्याम और लालरंगके प्रदर रोगको दूर करैहै। यह पुष्यानुयुग चूर्ण आत्रेयका पूजितहै ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥

कुमुदंपद्मकोशीरंगोधूमोरक्तशालयः।
मुद्गपर्णीपयस्याचकाश्मरीमधुयष्टिका ॥ २९ ॥
बलातिबलयोर्मूलमुत्पलंतालमस्तकम्।
विदारीशतपुत्रीचशालपर्णीसजीवका ॥ ३० ॥
फलंत्रपुषबीजानिप्रमद्धंकदलीफलम्।
एषामर्द्धपलान्भागान्गव्यक्षीरश्चतुर्गुणम् ॥ ३१ ॥
पानीयंद्विगुणंदत्वाघृतप्रस्थंविपाचयेत्।
प्रदरेरक्तगुल्मेतुरक्तपित्तेहलीमके ॥ ३२ ॥
बहुरूपंचयत्पित्तंकामलायाश्चशोणिते।
अरोचकेज्वरेजीर्णेपाण्डुरोगेमदेभ्रमे ॥ ३३ ॥
तरुणीचाल्पपुष्पाचयाचगर्भंनाविन्दति।
अहन्यहनिचस्त्रीणांभवतिप्रीतिवर्द्धनम् ॥ ३४ ॥
फलंत्रिफलाप्रत्यग्रमपक्ककदलीफलम् ॥ ३५ ॥

इति शीतकल्याणकघृतम्।

अर्थ-कमोदिनी, कमल, खस गेंहू, लाल शालिधानोंके चावल, मुगवन, काकोली, कुम्भेर, मुलेठी, खिरैटी, कंघी, उत्पल, ताडका मस्तक, विदारी कन्द, शतावर, शालपर्णी, जीवक, त्रिफला, खीरेके बीज, और केलेकी कच्चीफली, प्रत्येक दोदो तोले लेकर कल्कबना लेवैं, गायका दूध ८ आठसेर जल ४ चार सेर, और गायकाघी २ दो सेर लेवै, सबको मिलाकर यथाविधिसे घृतको पकावै। यह घी- प्रदर, रक्तगुल्म, रक्तपित्त, हलीमक, बहुरूप, पित्त कामला, रुधिरविकार, अरुचि, जीर्णज्वर, पाण्डुरोग, मद, भ्रम, इन सबरोगों को दूर करैहै। जिन स्त्रियोंके अल्पपुष्पहै, और जो गर्भको नहीं ग्रहण करतीहैं, उनके- इस

घृतके प्रभावसे गर्भ रहजाताहै। और मनुष्योंकी दिन दिनप्राति स्त्रियोंमें प्रीति बढ़तीहै ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥

अशोकवल्कलप्रस्थंतोयाढकविपाचितम् ।
तेनपादावशेषेणजीरकेनतथैवच ॥ ३६ ॥
घृतप्रस्थंपचेदेतत्प्राक्षिप्यचतथापरम् ।
तण्डुलाम्बुत्वजाक्षीरंप्रस्थंप्रस्थंपृथक्पृथक् ॥ ३७ ॥
केशराजरसस्यापिप्रस्थमेकंभिषग्वरः ।
जीवनीयैःप्रियालैश्चपरुषैःसरसांजनैः ॥ ३८ ॥
यष्ट्याह्वाशोकमूलंचमृद्वीकाचशतावरी ।
तण्डुलीयकमूलंचकल्कैरेभिःपलार्द्धकैः ॥ ३९ ॥
शर्करायाःपलान्यष्टौगर्भेदत्वासुचूर्णितम् ।
पुष्यायोगेनतत्पीतंनिहन्यात्सर्वदोषजम् ॥ ४० ॥
श्वेतंनीलंतथाकृष्णंप्रदरंहन्तिदुस्तरम् ।
कुक्षिशूलंकटीशूलंयोनिशूलंचसर्वगम् ॥ ४१ ॥
मन्दाग्निमरुचिंपाण्डुंकृशतांश्वासकासकम् ।
आयुःपुष्टिकरंधन्यंबलवर्णप्रसादनम् ॥
देयमेतद्वरंसर्पिर्विष्णुनापरिकीर्त्तितम् ॥ ४२ ॥

इति अशोकघृतम् ।

अर्थ–उत्तम गायकाघी २ दो सेर, चावलोंका जल २ दो सेर बकरीका दूध २ दोसेर, कुकुरभांगरेका रस, २ दोसेर, काथके लिये अशोकको छाल १ एकसेर, जल ८ आठसेर, शेष दोसेर, जीरा २ दोसेर, जल ८ आठसेर, शेष २ दोसेर, और कल्कके लिये जीवनीय दशक, चिरौंजी, फालसा, रसौत, मुलेठी, अशोकके जडकी छाल, दाख, शतावर और चौंलाईकी जड दोदो तोले, यथाविधिसे घृतको पकावै, जब सिद्ध होकर शीतल होजाय तब ८ आठपल सफेद बूरा मिला देवै इसको पुष्यनक्षत्रमें पीवै, इससे सर्वदोषज, श्वेत, नील और

कृष्ण इन सर्व प्रकारके दुस्तर प्रदर रोगोंका नाश होताहै । तथा कुक्षि शूल, कटीशूल, योनिशूल, सर्वप्रकारके शूल, मंदाग्नि, अरुचि, पाण्डु-रोग, कृशता, श्वास,खाँसी,यह सब रोग दूर होतेहैं । आयु और पुष्टिको करैहै, धन्य, बल और वर्णको प्रसन्न करैहै । यह घृत श्रीमान् विष्णु भगवान्ने रचाहै ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥

हितश्चात्रविशेषेणलेहोऽयंकुटजाष्टकः ।
शुद्धसूतंसमंगन्धंरक्तोत्पलदलद्रवैः ॥ ४३ ॥
यामंमर्द्यपुनर्मर्द्यपूर्वादर्द्धंविनिक्षिपेत् ।
कौटजंत्रिफलानिम्बंपटोलघननागरैः ॥ ४४ ॥
भावितानिदशाहानिरसेद्वित्रिगुणेनवा ।
शिलाजतुपलान्यष्टौतावतीसितशर्करा ॥ ४५ ॥
त्वक्क्षीरीपिप्पलीधात्रीकर्कटाख्यपलोन्मिता ।
निदिग्धिकाफलमूलाभ्यांपलंयुंजात्रिजातकम् ॥ ४६ ॥
मधुनःपलसंयुक्तंकुर्यादक्षसमान्गुडान् ।
दाडिमाम्बुपयःपाक्षिरसतोयसुवासनान् ॥ ४७ ॥
तांभक्षयित्वात्रापिबेन्निरन्नोभुक्तएववा ।
पाण्डुकुष्ठज्वरप्लीहतमकार्शोभगन्दरान् ॥ ४८ ॥
पूतिकृन्मूत्रशुक्रादिदोषमेहमहोदरम् ।
कासासृक्रक्तपित्तंचप्रदरंरक्तसम्भवम् ॥ ४९ ॥
तान्सर्वान्सुतरान्हन्तिसर्वदोषहराःशिवाः ॥ ५० ॥

इति शिलाजतुवटिका ।

अर्थ–प्रदर रोगमें कुटजाष्टक विशेष हितकारीहै । पारा, और गंधक, दोनोंको समान भाग लेकर लालकमलके पत्तोंके रसमें खरल करै, जब एकपहर होजाय तब आधारस निकालके आधेको खरल करै । पश्चात् कुडेकी छाल, त्रिफला, नीमकी छाल, पटोल, नागर मोथा और सोंठ, इनके दुगुने या तिगुने रसमें १० दिन भावनादेवै । फिर इसमें आठ ८ पल शिलाजीत, मिश्री ८ आठपल, वंशलोचन, पीपल, आमला,

काकडासींगी, खल और जड़ सहित कटेरी और त्रिजातक प्रत्येकका चूर्ण चार चार तोले और सहत चारतोले मिलाकर दो दो तोलेकी गोलियाँ बनालेवै, इस रसको अनारके रसके साथ या दूधके साथ अथवा पक्षियोंके मांसके रसके साथ नित्ये या भोजनके ऊपर खावै। यह रस- पाण्डुरोग, कुष्ठ, ज्वर, प्लीहा, तमकरोग, बवासीर, भगंदर, मूत्र शुक्रादि दोष प्रमेह, महोदर, खाँसी, रक्तपित्त रक्तप्रदर, इन सब रोगोंको दूर करैहै ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥

शुद्धसूतंतथागंधंशुद्धवंगकरूप्यकम् ।
खर्परंचवराटंचशाणमानंपृथक्पृथक् ॥ ५१ ॥
तृतीयतोलकंग्राह्यंलौहचूर्णंददौसुधीः ।
कन्यानीरेणसंमर्द्यदिनमेकंभिषग्वरः ॥
असाध्यप्रदरंहन्तिभक्षणान्नात्रसंशयः ॥ ५२ ॥

इति प्रदरान्तकोरसः।

इति प्रदराध्यायः।

अर्थ–पारा, गंधक, वंग, रूपा, खपरिया और कौडी, प्रत्येकका चूर्ण चार चार मासे, और लोहेका चूर्ण तीन तोले, सबको एकत्र मिलाकर घीकारके रसमें एकदिन खरलकर गोली बनालेवै। यह गोली असाध्य प्रदर रोगको दूर करैहै ॥ ५१ ॥ ५२ ॥

इति प्रदराधिकारः।

अथसोमरोगचिकित्सामाह ।

स्त्रीणामतिप्रसंगाद्वाशोकाद्वाथप्रमादपि ।
अभिचारिकदोषाद्वागरदोषात्तथैवच ॥ १ ॥
आपःसर्वशरीरेषुक्षुभ्यन्तिप्रस्रवन्तिच ।
तासांताःप्रच्युताःस्थानान्मूत्रमार्गंव्रजन्तिहि ॥ २ ॥
प्रसन्नाविमलाःशीताःनिर्गन्धानिरुजःसिता ।
स्रवन्तिचातिमात्रन्तुदौर्बल्यंशक्तिहीनता ॥ ३ ॥
शिरसःशिथिलत्वंचमुखतालूकशोषणम् ।

मूर्च्छाजृम्भाप्रलापंचदग्धंवाचातिमात्रतः ॥ ४ ॥
भक्षभोज्यैश्चपेयैश्चतृप्तिंनलभतेसदा ।
सोमरोगइतिज्ञेयोदेहेसोमक्षयात्स्त्रीणाम् ॥ ५ ॥
शरीरधारणाच्चापिसोमइत्यभिधीयते ।
सोऽतिक्रान्तंक्रमेणैवस्रवेन्मूत्रमभीक्ष्णशः ॥ ६ ॥
मूत्रातिसारमप्येवंतमाहुर्बलनाशनम् ॥ ७ ॥

इति सोमरोगनिदानम् ।

अर्थ-अत्यन्त मैथुन, शोक, परिश्रम, अभिचार, और विषदोष, इन सब कारणोंसे स्त्रियोंके सर्व शरीरगत जल क्षोभित होकर गिरैहै, तब वह अपने स्थानसे हटकर मूत्रके मार्गसे निकलतेहैं। प्रसन्न, विमल, शीतल निर्गन्ध, पीड़ा रहित, सफेद रंगका अधिक जल मूत्र मार्गसे निकलतेहैं। इससे स्त्रियोंके दुर्बलता, शक्तिहीनता, मस्तकमें शिथिलता, मुखशोष, तालुशोष मूर्छा, जम्भाई, प्रलाप, और शरीरमें रूक्षता उत्पन्न होतीहै। तथा भक्ष्य, भोज्य, और पेय पदार्थोंके पीनेसे कदापि तृप्ति नहोवैहै। स्त्रियोंके शरीरमें सोमके नास होनेसे सोमरोग होताहै। शरीरके धारण करनेसे इसको सोमरोग कहतेहैं। जिस सोमरोगमें अति क्रमसे वारंवार योनिके द्वारा अत्यन्त मूत्र निर्गत होवै, उसको मूत्रातिसार कहतेहैं। इससे स्त्रियोंका बल कम होताहै ॥ १ ॥ २ ॥३॥ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥

कदलीनांफलंपक्कंधात्रीफलरसंमधु ।
शर्करापयसापेयंसोमधारणमुत्तमम् ॥ ८ ॥
माषचूर्णञ्चमधुकंविदारीमधुशर्करा ।
पयसापाययेत्प्रातस्त्वपांधारणमुत्तमम् ॥ ९ ॥

अर्थ-केलेकी पकी हुई फली, आमलोंकारस, सहत, बूरा और दूध, इन सब द्रव्योंको एकत्र मिलाकर पीनेसे स्त्रियोंकी सोम धातु निकलनी बंद होजातीहै। उडदोंका चूर्ण, मूलेठी, विदारीकंद सहत और बूरा, इन सब द्रव्योंको एकत्र मिलाकर दूधके साथ पीनेसे-सोमरोग दूर होजाताहै ॥ ८ ॥ ९ ॥

धात्रीफलरसप्रस्थेविदार्याःस्वरसेतथा ।
तृणपंचरसप्रस्थेघृतप्रस्थंविपाचयेत् ॥ १० ॥
क्षीरस्यापिशतावर्याःप्रस्थंप्रस्थंरसस्यच ।
दत्वामृद्वग्निनावैद्यःपचेत्सिद्धंविधानतः ॥ ११ ॥
सुशीतेप्रक्षिपेच्चूर्णमेषाञ्चापिपलंपलम् ।
मधुकंत्रिवृताञ्चैवक्षारंचवृद्धदारकम् ॥ १२ ॥
शर्करायाःपलान्यष्टौमधुनश्चपलाष्टकम् ।
चूर्णंदत्वाप्रमथितंहन्त्याशुतृणदाहकम् ॥ १३ ॥
मूत्रकृच्छ्रञ्चकृच्छ्रञ्चबहुमूत्रंविनाशयेत् ।
पित्तजान्विविधान्व्याधीन्वातजांश्चसुदुस्तरान् ॥ १४ ॥
करोतिशुक्रोपचयंसर्पिरेतदनुत्तमम् ॥

इति धात्रीघृतम् ।

इति सोमरोगाध्यायः ।

अर्थ–उत्तम गायका घी २ दो सेर, आमलोंका रस, २ सेर विदारीकंद का रस दो २ सेर, तृण पंच मूलका रस २ दो सेर, दूध २ दो सेर, और सतावरका रस २ दो सेर, सबको मिलाकर यथाविधिसे घृतको सिद्ध करै । जब पक कर शीतल हो जाय तब मुलेठी, निसोत, जवाखार और विधारा, प्रत्येक का चूर्ण ४ चार चार तोले, बूरा ८ आठ पल और सहत आठ ८ पल मिलादेवे, यह घृत–तृषा, दाह, मूत्रकृच्छ्र कृच्छ्र, बहुमूत्र, नाना प्रकारके पित्तरोग और विविध प्रकारके वातरोगोंको दूर करै है । यह उत्तम घी–शुक्रको संचय करै है ॥ १० ॥ ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥

इति सोमरोगाध्यायः समाप्तः ।

अथयोनिव्याधिचिकित्सामाह ।

योनिव्यापत्सुभूयिष्ठंशस्यतेकर्मवातजित् ।
वस्त्यभ्यङ्गपरीषेकप्रलेपपिचुधारणम् ॥ १ ॥

कदंबमूलवल्कञ्चखदिराङ्गारमिश्रितम् ।
मासंनारीपिबेत्काले योनिशूलनिपीडिताः ॥ २ ॥
रास्नाश्वगन्धावासाभिःशृतंवाशूलनुत्पयः ॥ ३ ॥

अर्थ–योनिव्यापत रोगमें वात नाशक क्रिया, बस्तिकर्म्म, अभ्यंग, सेचन, प्रलेप और पिचु (रुई आदिका फोहा) धारण, यह सब हितकारी हैं। कदमकी जडकी छाल और खैरके अंगारोंका एकत्र चूर्ण करकै जलके साथ एक महीने तक पीवैं तो योनि शूल दूर होवै। रास्ना, असगंध और अडूसा, इन तीनों औषधियों के साथ दूधको पकाकर पीनेसे–योनिशूल दूर होताहै ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥

वासोपकुंचिकाजाजीवचारास्नाचचित्रकम् ।
यमानीसैन्धवंक्षारंपिष्ट्वाभृष्ट्वाघृतेनतु ॥ ४ ॥
योनिजंमर्मशूलघ्नंपेयमुष्णोपकादिभिः ।
शतावरीघृतंशस्तंयोनिपित्तविकारनुत् ॥ ५ ॥
रक्तयोन्यांयथादोषंप्रदरघ्नोहितोविधिः ।
पेटिकामूललेपाच्चयोनिभिन्नाप्रशाम्यति ॥ ६ ॥
मुसलीमूललेपाच्चप्रविष्टाच्चबहिर्नयेत् ।
पिष्ट्वाशम्बूकजंमांसंपक्वांतिन्तिडीसंयुतम् ॥ ७ ॥
लेपमात्रेणनारीणांयोनिकन्दहरंपरम् ।
घोषाख्यपुष्पलेपेनकन्दःशान्तिंव्रजेद्ध्रुवम् ॥ ८ ॥

अर्थ–अडूसा, कालाजीरा, जीरा, वच, रास्ना, चीतेकी जड, अजवायन, सैंधानोन और जवाखार इन सब औषधियोंको जलमें पीसकर घृतमें भूनकर गरम जल आदिके साथ पीनेसे योनि शूल नष्ट होताहै। शतावरी घृत योनिजात पित्तके विकारोंमें विशेष हितकारी है। रक्तस्राव युक्त योनिरोगमें प्रदरनाशक औषधादि देवै। पेटारीकी जडको पीसकर प्रलेप करनेसे योनिभिन्नारोग दूर होता है। मुसलीकी जडको पीसकर प्रलेप करनेसे भी उक्तरोग दूर होता है। पकी इमलीके

साथ शम्बुकके मांसको पीसकर लेप करनेसे अथवा तोरईयोंको पीसकर प्रलेप करनेसे योनिकन्द रोग दूर होता है ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ॥ ७ ॥ ८ ॥

मंजिष्ठामधुकंकुष्ठंत्रिफलाशर्करावला ।
मेदाकाकोलीमूलंमूलंचैवाश्वगन्धजम् ॥ ९ ॥
अजमोदाहरिद्रेद्वेहिंगुककटुरोहिणी ।
उत्पलंकुमुदंद्राक्षाकाकोल्याचंदनद्वयम् ॥ १० ॥
एतेषांकार्षिकैर्भागैर्घृतप्रस्थंविपाचयेत् ।
शतावरीरसंक्षीरंघृताद्देयंचतुर्गुणम् ॥ ११ ॥
सर्पिरेतन्नरःपीत्वास्त्रियंनित्यंवृषायते ।
पुत्रान्संजनयेन्नारीमेधाढ्यान्प्रियदर्शनान् ॥ १२ ॥
याचैवाऽस्थिरगर्भास्यात्याचवाजनयेत्मृतम् ।
स्वल्पायुषंवाजनयेद्याचकन्यांप्रसूयते ॥ १३ ॥
योनिदोषेरजोदोषेपरिस्रावेचशस्यते ।
प्रजावर्द्धनमायुष्यंसर्वग्रहनिवारणम् ॥ १४ ॥
नाम्नाफलघृतंह्येतदश्विभ्यांनिर्मितंपुरा ।
अनुक्तंलक्ष्मणामूलंक्षिपन्त्यत्रचिकित्सकाः ॥ १५ ॥
जीववत्सैकवर्णायाघृतमत्रतुगृह्यते ।
अरण्यगोमयेनात्रवह्निज्वालाप्रदीयते ॥ १६ ॥

इति फलघृतम् ।

अर्थ—उत्तम गायका घी २ दो सेर, सतावरका रस ८ आठ सेर, गायका दूध ८ आठ सेर, तथा कल्कके लिये—मजीठ, मुलेठी, कूठ, हरड, बहेडा, आमला, मिश्री, खिरेटी, मेदा, लक्ष्मणा, काकोली, असगंधकी जड, अजमोद, हलदी, दारुहलदी, हींग, कुटकी, उत्पल, कुमुद, दाख, काकोली, क्षीरकाकोली, लालचंदन और सफेद चंदन, प्रत्येक दो दो तोले लेवै, यथाविधिसे घृतको सिद्ध करै इस घृतको पीनेसे मनुष्य वृषकी समान स्त्रियोंमें आचरण करता है । और जो

स्त्री पीवै तौ उत्तम बुद्धिवाले और सुंदर स्वरूपवाले पुत्रोंको उत्पन्न करती है, जिन स्त्रियोंके गर्भ नहीं रहता है, जिन स्त्रियोंके मरेहुए पुत्र उत्पन्न होतेहैं, जिनके पुत्र उत्पन्न होकर मरजातेहैं, और जिनस्त्रियोंके कन्या उत्पन्न होतीहै, योनिदोषवाली, रजोदोषवाली, और परिस्रावरोगमें यह घृत महाहितकारी है । प्रजावर्द्धक, आयुको बढानेवाला, और सर्वग्रहनाशक है । यह फल घृत-पूर्वकालमें श्रीमान् अश्विनीकुमारोंने रचाहै । जिन गायोंका बछड़ा जीताहै, और जिनका रंग बछड़े के रंगसे मिलताहो, उन गायोंका यहाँ घी लेना चाहिये । आरनेउपलोंकी आगसे इस घृतको पकावे ॥ ९ ॥१०॥ ११॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥

दग्ध्वाशंखंक्षिपेद्रंभास्वरसेतच्चपेषितम् ।
तुल्याललेपनाद्धन्तिरोमगुह्यादिसम्भवम् ॥ १७ ॥

(कदलीपाथुडरसः ।)

(आलंहरितालम्)

रक्तांजनापुच्छचूर्णयुक्तन्तैलन्तुसार्षपम् ।
सप्ताहमुषितंहन्तिमूलाद्रोमाण्यसंशयः ॥ १८ ॥

अर्थ-शंखकी भस्मको केलेके रसमें पीसकर, पश्चात् बराबरकी हरिताल मिलाके लेपकरनेसे गुह्यादि स्थानोंमें उत्पन्नहुए रोम दूरहोजातेहैं। रक्तांजनाके पुच्छके चूर्णको सरसोंके तेलमें मिला सातदिन तक बासीकर पश्चात् लेपकरनेसे मूलसहित रोम गिरजातेहैं ॥ १७ ॥ १८ ॥

आरग्वधमूलपलंकर्षद्वितयन्तुशंखचूर्णस्य ।
हरितालस्यचखरस्यमूत्रप्रस्थेकटुतैलम् ॥ १९ ॥
पक्वंतैलन्तुदत्वासशंखहरितालचूर्णितंलेपात् ।
निर्मूलयतिहिरोमाण्यन्येषांसम्भवोनैव ॥
खरोगर्द्धभःशंखहरितालयोर्मिलित्वापादिकत्वम् ॥२०॥

इति आरग्वधादितैलम् ।

अर्थ-कडवातेल २ दो सेर, गधेकामूत्र ८ आठसेर, अमलतासकी जड़ ४ चारतोले, शंखका चूर्ण ४ चारतोले, हरितालका चूर्ण ४ चार

तोले, यथाविधिसे तेलको पकावे, पश्चात् इसतेलमें चौथाई भाग शंख और हरितालका चूर्ण मिलाकर मलनेसे-मूल सहित बाल गिर जातेहैं ॥ १९ ॥ २० ॥

कर्पूरभल्लातकशंखचूर्णक्षारोयवानांचमनःशिलाच ।
तैलंविपक्वंहरितालमिश्रंरोमाणिनिर्मूलयतिक्षणेन ॥ २१

इति कर्पूरादितैलः ।

अर्थ-कडवातेल २ दोसेर, कल्कके लिये कपूर, भिलावा, शंखकाचूर्ण, जवाखार, और मैनशिल, यथाविधिसे तेलको पकावे, फिर इसतेलमें चौथाई भाग हरितालका चूर्ण मिलाकर मर्दन करनेसे मूलसहित रोम नाशहोतेहैं ॥ २१ ॥

शुक्तिशंबूकशंखानांदीर्घवृन्तात्समुस्ककात् ।
दग्ध्वाक्षारंसमादायखरमूत्रेणगालयेत् ॥ २२ ॥
क्षाराष्टभागंविपचेत्तैलंवैसार्षपंबुधः ।
इदमन्तःपुरेदेयंतैलमात्रेयपूजितम् ॥ २३ ॥
बिन्दुरेकःपतेद्यत्रतत्ररोमनजायते ।
मदनादिव्रणेतैलंअश्विभ्यामेवनिर्मितम् ॥ २४ ॥
अर्शसांकुष्ठरोगाणांपामादद्रुविचर्चिकाम् ।
क्षारतैलमिदंश्रेष्ठंसर्वक्लेदहरंपरम् ॥ २५ ॥

इति लोमशातने ।

अर्थ-सीप, शम्बूक, शंख, श्योनाक, और मोखा, इनको एकत्र जलाकर क्षार ग्रहण करले, पश्चात् इस क्षारको गधेके मूत्रमें मिलाकर छानलेवे, यह क्षार ऽ॥ आधसेर, और सरसोंकातेल ४ चार सेर लेवै, यथाविधिसे तेलको सिद्धकरै । यह तेल आत्रेय करके पूजितहै । इसतेलकी जिसस्थानमें बूंद गिरजातीहै, वहां रोम उत्पन्न नहींहोतेहैं । मदनादिके व्रणमें इस तेलको अश्विनीकुमारोंने कहाहै, बवासीर, कुष्ठरोग, पामा, दद्रु, विचर्चिका, इन रोगोंमें यह तेल श्रेष्ठहै, और सर्व क्लेद नाशक है ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥

यस्यावाताहतंपुष्पंफलंतस्यानविद्यते ।
अतःशुष्कञ्चकुसुमंमेघोदकसमन्वितम् ॥ २६ ॥
कटीशूलंयोनिशूलंबहुरक्तञ्चदृश्यते ।
औषधंतस्यवक्ष्यामियेनचोत्पद्यतेशुभम् ॥ २७ ॥
कदम्बबृहतीमूलंबिल्वञ्चैवचबुद्धिमान् ॥ २८ ॥

अर्थ-जिसस्त्रीके पुष्प वातसे नष्ट होजाताहै,अर्थात् जो स्त्री ऋतुमती नहीं होती, उसके फल अर्थात् सन्तान नहीं होती, जैसे-सूखेफूल मेघके जलके प्राप्त होनेपरभी फलोंको उत्पन्न नहीं करसक्ते । और उससे कटि शूल, योनिशूल, और बहुरक्तस्रावादि नानाप्रकारके रोग स्त्रियोंके उत्पन्न होतेहैं, उन रोगोंकी औषधि कहतेहैं-कदम, बृहतीकीजड़, और बेलकी-जड़, इनको एकत्र जलमें पीसकर सेवन करनेसे-स्त्रियोंके वातज पुष्पदोष दूरहोताहै ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥

यस्याःपित्तहतंपुष्पंफलंतस्यानविद्यते ।
जम्बूफलसमंचोष्णंतस्यावहतिशोणितम् ॥ २९ ॥
कटीशूलंमहच्चैवउदरेशूलमेवच ।
औषधंतस्यवक्ष्यामियेनशीतेनशाम्यते ॥ ३० ॥
उत्पलंचंदनंकुष्ठंशूलंतगरमेवच ।
यष्टीमधुसमायुक्तंसमभागानिकारयेत् ॥ ३१ ॥
अजाक्षीरेणपातव्यंयावद्वहतिशोणितम् ।
ततोयोन्यांविशुद्धायामिमांदद्यान्महौषधीम् ॥
लक्ष्मणांक्षीरसंयुक्तांनस्यंपानंचदीयते ॥ ३२ ॥

अर्थ-जिस स्त्रीके पित्तसे पुष्प दूषित होताहै, उसकेभी सन्तान उत्पन्न नहीं होतीहै । उससे स्त्रियोंके जामुनकी समान गरम रक्त स्राव अत्यन्त कटिशूल और उदर शूल उत्पन्न होताहै । अब उनकी औषधि कहतेहैं उत्पल, चन्दन, कूठ, मूली, तगर और मुलेठी, यह सब औषधि एकत्र पीसकर बकरीके दूधके साथ पीनेसे विशेष लाभ होताहै। योनिके

शुद्ध करनेके लिये यह औषधि देवै, लक्ष्मणाकी जडको दूधमें पीस करपीवै अथवा नास देवै इससे विशेष लाभ होताहै ॥ २९ ॥ ३० ॥ ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

यस्याःश्लेष्महतंपुष्पंफलंतस्यानविद्यते।
लक्षणंतस्यवक्ष्यामिभेषजानिपुनस्तथा ॥ ३३ ॥
बहुलंपिच्छिलंस्निग्धंघनंस्रवतिशोणितम्।
योनौतुशूलंचऋतौपरमंदारुणंतथा ॥ ३४ ॥
दद्यान्महौषधींतस्यैतेनसम्पद्यतेशुभम्।
त्रिफलात्रिकटूचैवचित्रकस्यजटातथा ॥ ३५ ॥
एतानिसमभागानिछागीदुग्धेनदापयेत्।
त्रिरात्रंपंचरात्रंवायावद्वहतिशोणितम् ॥ ३६ ॥
तथायोस्यांविशुद्धायामिमांदद्यान्महौषधीम्।
लक्ष्मणामूलचूर्णन्तुछागीक्षीरेणपाययेत् ॥ ३७ ॥

अर्थ-जिस स्त्रीके कफसे पुष्प दूषित हो, उसके भी सन्तान उत्पन्न नहीं होती, उसके लक्षण कहते हैं-बहुत तर, पिच्छिल, स्निग्ध और घनरक्तस्राव तथा ऋतुके समय योनि शूल और नाभि शूल उत्पन्न होता है, अब उसकी औषधि कहते हैं-हरड़, बहेड़ा, आमला, सोंठ मिरच, पीपल और चीतेकी जड, इन सबको एकत्र पीसके बकरीके दूधके साथ जबतक रक्तस्राव हो तबतक सेवन करै। योनि शुद्ध करने के लिये यह महौषधी देवै, कि-लक्ष्मणाकी जड़के चूर्णको बकरीके दूधके साथ पीवै ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥

अथप्रथमपुष्पवतीवारलक्षणंयथा।

अर्कवारेयदायोषिद्भवेदृतुमतीकिल।
पुत्रमेकंतदासूतेकाकवन्ध्याभवेद्ध्रुवम् ॥ ३८ ॥
सोमेपुष्पवतीनारीबहुकन्याप्रजायते।
कदाचिल्लभतेपुत्रंसानारीयत्नतोऽपिवा ॥ ३९ ॥
आदावृतुंयदाप्नोतिमंगलेह्निकुमारिका।

बहुपुत्रंदुहितरंलभतेप्राप्ययोषिता ॥ ४० ॥
यदापुष्पवतीनारीभवेद्बुधयुतेऽन्ह्यपि ।
बहुपुत्रंतदाप्नोतिसमृद्धंराजपूजितम् ॥ ४१ ॥
यदावलागुरोर्वारेभवेदृतुमतीभुवि ।
लभेद्बहुसुतंसातुभूयिष्ठंयानभोजनैः ॥ ४२ ॥
यदाशुक्रदिनेनारीपुष्पञ्चलभतेतदा ।
मूलवन्ध्याभवेत्सापिनारदेनेतिभाषितम् ॥ ४३ ॥
यदाकर्मवशात्पुष्पमाप्नोतिशनिवासरे ।
यावान्पुत्रश्चदुहितातस्यास्तुम्रियतेध्रुवम् ॥ ४४ ॥
वारलक्षणमेतद्धिनारदेनमहात्मना ।
कथितंप्रथमेनार्याःपुत्रवत्याःसुनिश्चितम् ॥

अर्थ-जो स्त्री प्रथम प्रथम रविवारके दिन ऋतु मती होय, उसके केवल एकही पुत्र उत्पन्न होगा, पश्चात् वह वंध्या होजातीहै। जो स्त्री प्रथम सोमवारके दिन ऋतुमती होय, उसके बहुतसी कन्या उत्पन्न होतीहैं, और पुत्र उत्पन्न नहीं होता, और जो होय तो बडे यत्नोंसे कभी जो स्त्री मंगलवारके दिन रजस्वला होतीहै उसके बहुतसे पुत्र और कन्या उत्पन्न होतीहैं। प्रथम जो स्त्री बुधवारके दिन रजस्वला होय उसके समृद्धिवान् और राजपूजित बहुतसे पुत्र उत्पन्न होते हैं। जो स्त्री प्रथम बृहस्पति वारके दिन रजस्वला होय, उसके पान और भोजनमें पटु बहुतसे पुत्र उत्पन्न होते हैं। जो स्त्री प्रथम शुक्रके दिन रजस्वला होती है। वह निश्चय वंध्या होती है अर्थात् उसके कदापि संतान नहीं होता है उसके जितने पुत्र और कन्या उत्पन्न होवैं सब मरजातेहैं। यह सब स्त्रियोंके प्रथम ऋतुके दिनोंके लक्षण स्वयं नारदमुनिने कहेहैं॥३८॥३९॥ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥

चतुर्थेऽन्हिततःस्नात्वाशुक्लमाल्याम्बराशुचिः ।
इच्छन्तिभर्तृसदृशंपुत्रंपश्येत्पुरःपतिम् ॥ ४५ ॥
पूर्वंपश्येदृतुस्नातायादृशंनरमंगना ।

ताहशंजनयेत्पुत्रंभर्त्तारंदर्शयेदतः ॥ ४६ ॥
मासिमासिरजःस्त्रीणांस्रवतित्र्यहंत्र्यहम् ।
वत्सराद्द्वादशादूर्द्ध्वंयातिपंचाशतःक्षयम् ॥ ४७ ॥
सुतन्तुद्वादशनिशासर्वास्तिस्रोऽतिनिन्दिताः ।
एकादशीचयुग्मासुपुत्रोऽन्यासुतुकन्यकाः ॥ ४८ ॥
शुक्राधिकाच्चपुरुषःप्रमदारजसोऽधिकात् ।
नपुंसकंसमत्वेनशुक्रशोणितयोर्भवेत् ॥ ४९ ॥

अर्थ–ऋतुमती स्त्री चौथे दिन स्नान करकें श्वेतमाला और वस्त्र पहरकै पवित्र होकर पुत्रकी इच्छा करती हुई स्वामीके समीप जावे, प्रथम स्वामीहीके दर्शन करैं, कारण यह है कि–रजस्वला स्त्री स्नानके अंतमें प्रथम जिसके दर्शन करै, उसीकी समान उसके पुत्र उत्पन्न होता है। प्रत्येक महीनेमें स्त्री तीन तीन दिन तक एक वार ऋतुमती होती है। १३ तेरह वर्षसे लेकर ५० पचास बर्षकी उमर तक होती है। १२ बारह रात्रियोंमें पुत्रोत्पादन होता है। ऋतुकालकी तीन रात्रि और ११ ग्यारह रात्रि गर्भाधानमें अत्यन्त निन्दनीय अर्थात् अनिष्ट-दाय हैं। ऋतुकालकी युग्मरात्रियोंमें स्त्रीसे मैथुन करने से पुत्र और अयुग्म रात्रियोंमें मैथुन करनेसे कन्या उत्पन्न होती है। पुरुषके शुक्र अधिक होनेसे पुत्र और स्त्रीके रजके अधिक होनेसे कन्या, तथा शुक्र और आर्त्तव समान होनेसे नपुंसक होता है ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥

पद्मंसंकोचमायातिदिनेऽतीतेयथायथा ।
ऋतावतीतेयोनिःसाशुक्रंनातःप्रतीच्छति ॥ ५० ॥
शुद्धःस्नात्वाव्रजेन्नारीमपत्यार्थीनिरामयः ।
शुक्रशुक्रार्त्तवंसुस्थंसरक्तंमिथुनंमिथः ॥ ५१ ॥
उत्तानाउन्मनायोषित्तिष्ठेदङ्गैःसुसंस्थितैः ।
तथाहिबीजंगृह्णातिदोषैःस्वस्थानमस्थितैः ॥ ५२ ॥
अवन्ध्यएवसंयोगःस्यादपत्यञ्चकामतः ।

एतेनापिविधानेनशुद्धासुखलत्रयोनिषु ॥ ५३ ॥
लभन्तेयोषितोगर्भभेषजैस्तुविशेषतः ॥ ५४ ॥

अर्थ-दिनके अंतमें जिस प्रकार कमल बंद हो जाता है, उसी प्रकार ऋतुकालके बीत जानेपर योनि संकुचित होजाती है, इस कारण ऋतुके पश्चात् पुष्प मुद जाता है, फिर वीर्यको ग्रहण नहीं करता, अतएव स्त्रियोंके ऋतुके समय विधिपूर्वक सन्तानके लिये निरोगी मनुष्य शुद्ध और स्नान करके स्त्रीके पास जावे। इसप्रकार स्त्री पुरुषोंके परस्पर संयोगमें शुद्ध शुक्र और आर्तवके मिलनेसे सन्तान उत्पन्न होती है। स्त्री और पुरुष दोनोंके संयोगके समय स्त्री सुखपूर्वक सीधी पाव फैलाके शयनकर उन्मना हो बीजको ग्रहण करै ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥

कटुतैललवणयुक्तंमूलस्वरसंनिपीयकेशराजस्य।
लभतेगर्भमवश्यंत्रिदिनंनारीतुदृष्टफलम् ॥ ५५ ॥
सितवर्षाभूमूलंमूलंवातुरगगंधायाः।
परिणतकपित्थगुटिकाभक्षयेच्चैकवर्णगोक्षीरे ॥ ५६ ॥
पृथगितिपीतंदृष्टंगर्भदपरिचान्नसन्देहः।
पुष्योद्धृतंलक्ष्मणामूलंपिष्टंचकन्ययातथा ॥ ५७ ॥
ऋत्वन्तेघृतदुग्धाभ्यांपीत्वाप्नोत्यबलासुतम्।
वारिणाशुक्लपक्षेतुपुष्येणतुविशेषतः ॥ ५८ ॥
घृतमंडेनवापीतंनागपुष्परजस्तथा।
क्वाथेनहयगंधायाःसाधितंसघृतंपयः ॥ ५९ ॥
ऋतुस्नातावलापीत्वागर्भंधत्तेनसंशयः ॥ ६० ॥

अर्थ-कुकुर भांगरेका रस, सरसों का तेल और सैंधानोन, तीनोंको एकत्र कर पीनेसे ऋतुमती स्त्री गर्भको धारण करती है। सफेद पुनर्नवेकी जड अथवा असगंधकी जडको एक रंगकी गायके दूधमें पीसकर कैथके फलके समान गोली बनाकर सेवन करनेसे निश्चय ऋतुमती स्त्रियोंके गर्भ रहजाता है। लक्ष्मणाकी जडको पुष्यनक्षत्रमें

उखाड़कर घीकारके रसके साथ पीस घृत और दूध मिलाकर ऋतुके पश्चात् सेवन करनेसे स्त्रियोंके गर्भ रह जाता है । बडके अंकुर पुष्य नक्षत्रमें लाकर जलमें पीसकर सेवन करनेसे वंध्या स्त्री रजस्वला हो जाती है । पुष्यनक्षत्रमें अथवा शुक्लपक्षमें पुन्नागके फूलोंका चूर्ण जलके साथ अथवा घृत मंडके साथ पान करनेसे रजस्वला स्त्रियोंके निश्चय गर्भ रहजाता है । असगंध और घृतको दूधमें सिद्धकर पीनेसे निश्चय ऋतुमती स्त्रियोंके गर्भ रहता है ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥

अश्वगंधाकषायेणसाधितंशीतलंपयः ।
पीत्वाकान्तसमाश्लेषादृतौवंध्याप्रसूयते ॥ ६१ ॥
पिप्पल्यःशृंगवेरंचमरिचंकेशरन्तथा ।
घृतेनसहपातव्यंवन्ध्यागर्भप्रदंपरम् ॥ ६२ ॥
पुत्रजीवकबीजंपीत्वापयसास्यपत्रमूलंवा ।
योषिज्जीवद्वत्साजनयतिदीर्घायुषंपुत्रम् ॥ ६३ ॥

अर्थ–वंध्या स्त्री असगंधको दूधमें औटाके शीतल कर पीवै, पश्चात् पतिके साथ रमण करै तौ निःसंदेह गर्भ रह जाय । पीपल सोंठ,मिरच और नागकेशरकेफूल, इनको एकत्र पीस चूर्णकर घृतके साथ पीनेसे वंध्यास्त्री गर्भको धारण करतीहै । पतिजियाके बीजया पत्र अथवा जड़को दूधमें पीसकर सेवनकरनेसे स्त्रीदीर्घायु पुत्रको जनतीहै ॥ ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥

सिद्धार्थकंवचाब्राह्मीशंखपुष्पीपुनर्नवा ।
पयस्यात्रिफलाकुष्ठंतथाकटुकरोहिणी ॥ ६४ ॥
शारिवाद्वययष्टचाह्वचोरकेसुमनोलता ।
वृषपुष्पंसमंजिष्ठादेवदारुमहौषधम् ॥ ६५ ॥
पिप्पल्यौभृंगराजश्चनिशाश्वामासुवर्चला ।
दशमूलमपामार्गमश्वगन्धाशतावरी ॥ ६६ ॥
जलद्रोणेपचेदेतान्भागैर्द्विपलिकैरिमान् ।

तत्कषायंपरिस्राव्यंघृतंस्यादर्द्धाढकंपचेत् ॥ ६७ ॥
पाचितंतद्घृतंयुक्त्यागायत्र्याचाभिमंत्रितम् ।
द्विमासगर्भिणीनारीषट्मासादुपयोजयेत् ॥ ६८ ॥
सर्वज्ञंजनयेत्पुत्रंसर्वामयविवर्ज्जितम् ।
अस्यप्रभावात्कुक्षिस्थःस्फुटवाग्व्याहरत्यपि ॥ ६९ ॥
योनिदुष्टाश्चयानार्योरेतोदुष्टाश्चयेनराः ।
वंध्यापिलभतेगर्भंशूरंपण्डितमानिनम् ॥ ७० ॥
जडगद्गदमूकत्वंपानादेवापकर्षति ।
सप्तरात्रप्रयोगेणसुस्वरंकुरुतेनरम् ॥ ७१ ॥
मासमात्रप्रयोगेतुभवेच्छ्रुतिधरोनरः ।
नाग्निर्दहतितद्वेश्मनवज्रमपहन्तिच ॥ ७२ ॥
नतत्रम्रियतेबालोयत्रास्तेसोमसंज्ञितम् ।
पयस्याक्षीरकाकोलीसुमनोलतामालती ॥ ७३ ॥

अर्थ–सफेदसरसों, वच, ब्राह्मी, शंखपुष्पी, पुनर्नवा, क्षीरकाकोली, हरड़, बहेड़ा, आमला, कूठ, कुटकी, अनंतमूल, करियावासाऊ, मुलेठी, चोरक, मालतीकेफूल, अडूसेकेफूल, मजीठ, देवदारु, सोंठ, पीपल, गजपीपल, भांगरा, हलदी, कालानिसोत, सुवर्चला, दशमूल, सतावर, चिरचिटा और असगंध, प्रत्येक आठ आठ तोले लेकर ३२ बत्तीससेर जलमें पकावै, जब आठसेर जल शेषरहै तब उतारकर छान लेवै, पश्चात् इसको अग्निपै फिर चढ़ादेवै,इसमें४चारसेर घीमिलाकर पकावै । इस घृतको त्रिपदी गायत्री मंत्रसे अभिमंत्रितकर दोमहीनेकी गर्भवती स्त्री छै महीनेतक सेवन करै, इसके सेवन करनेसे सर्वज्ञ और सर्वरोग रहित पुत्रको उत्पन्न करतीहै । इसके प्रभावसे कोखमें स्थितगर्भ स्फुट शब्दवाला बोलताहै । जो स्त्री योनिदुष्टा है, जिनमनुष्योंका वीर्य दूषितहै उन सबके विकारोंको यह सोमघृत निश्चय दूरकरैहै । इसघृतका सेवन करनेसे वन्ध्या स्त्रीभी शूर, पंडित और मानी पुरुषोंको गर्भमें धारणकरतीहै, तथा जड़ता, गद्गदपना, गूंगापन, यह सब रोग इस

घृतकेपीनेसे निःसंदेह दूरहोजातेहैं । इसको सातरोजतक सेवनकरनेसे मनुष्य उत्तम स्वरवाले होजातेहैं । इस घृतको एकमहीनेतक सेवनकरनेसे बहरे मनुष्य सुन्नेलगतेहैं । जिसघरमें यह सोमघृत रहताहै,उसघरमें कदापि अग्नि नहीं लगती, न बिजली गिरे, और न बालकमरतेहैं ॥ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥

गर्भस्थापनम् ।

गर्भमासत्रयादर्वाक्कुर्यात्पुंसवनंबुधः ।
बलोपुरुषकारोहिदैवमप्यभिवर्त्तते ॥ ७४ ॥
पुंसवनंगर्भस्यपुत्रत्वोत्पादकम् ।
गोष्ठजातवटस्यप्रागुत्तरशाखजेउभेशुङ्गेमाषौ
द्वौतथागौरसर्षपौदध्नियोजितौ ॥
पुष्पपीतौद्रुतापन्नगर्भायाः पुत्रकारकौदुग्धेनपेयः७५॥
क्षीरेणश्वेतबृहतीमूलंनासापुटेस्वयम् ।
पुत्रार्थंदक्षिणेसिञ्चेद्वामेदुहितृवांच्छया ॥ ७६ ॥
भिषक्पुंसवनेयुञ्ज्यात्तथासोमघृतादिकम् ।
लिंगस्तुसद्योगर्भायाःयोन्यांबीजस्यसंग्रहः ॥ ७७ ॥
तृप्तिर्गुरुत्वंस्फुरणंशुक्रस्थानानुवर्त्तनम् ।
हृदयस्पन्दनतन्द्राहृक्हानिर्लोमहर्षणम् ॥ ७८ ॥
ततःपरंगर्भचिह्नंपुष्पाभावोऽक्षिपक्ष्मणम् ।
क्षामतागरिमाकुक्षेर्मूर्च्छाछर्दिररोचकाः ॥ ७९ ॥
जृम्भाप्रसेकसदनंरोमराज्याःप्रकाशनम् ।
अम्लष्टतास्तनौपीनौसस्तन्यौकृष्णचूचुकौ ॥ ८० ॥

अर्थ-स्त्रियोंके तीन महीनेका गर्भ होजाय तो उनको पुंसवन कर्म्मकरै, कारण यह है कि, पुरुषार्थ बलवान् है और दैव निर्बलहै, अर्थात् पीछे रहताहै । पुंसवनकर्म्म गर्भमें पुत्रको उत्पन्न करनेवालाहै । गौके स्थानमें उत्पन्न हुए बड़के उत्तर और पूर्वकी शाखायोंके दो अंकुर, दो उड़द, और दो सफेद सरसोंके दाने, इनको दहीमें मिलाकर पुष्यनक्षत्रमें

दूधके साथ पीनेसे निश्चय गर्भवती स्त्री पुत्रवाली होजातीहै। सफेद कटाईकी जडको दूधमें पीसकर गर्भिणीके दाहिने नाकके छिद्रमें नास देनेसे पुत्र, और बाँए नाकके छिद्रमें नास देनेसे कन्या उत्पन्न होतीहै। और सोम घृतादिकोभी पुंसवन कर्ममें देवै ॥ योनिमें बीजका संग्रह, तृप्तिहोना, भारीपन, स्फुरण होना, शुक्र और आर्त्तव स्थानमें स्थित होजावै, हृदय कम्प, तन्द्रा, दृष्टिलोप, और रोमाञ्च, यह सब लक्षण उस स्त्रीके हैं जिसने तत्काल गर्भ धारण कियाहो। ऋतु धर्मका न होना, नेत्रोंके पलक वारंवार खुले मिचैं, क्षमता, कुक्षिभार, मूर्च्छा, वमन, अरुचि, जम्भाई, वारंवार, मुखमें थूक आय जावै, शरीर टूटे, रोमांचहो आवें, खट्टीचीजें खानेकी इच्छाहो, दोनों स्तनभारी, तथा स्थूल और उनके दोनोंके अग्रभाग काले होजावै, यह सब लक्षण गर्भ रहजानेके पीछेके हैं ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ८० ॥

अव्यक्तंप्रथमेमासिसप्ताहेकललम्भवेत्।
कललंक्केदभूतोऽपिततश्चबुद्बुदाकृतिः ॥ ८१ ॥
द्वितियेमासिकललाद्घनपेष्यथवार्बुदम्।
व्यक्तीभवतिमासेस्यतृतीयेगात्रपंचकम्॥ ८२
मूर्द्धाद्वेशंखिनीबाहुसर्वसूक्ष्मचजन्मच।
समयेबाहुमूर्द्धाद्यैःज्ञानञ्चसुखदुःखयोः ॥ ८३ ॥
तथासापुष्टिमाप्नोतिकेदारइवकुल्यया।
चतुर्थेऽव्यक्तमंगानांचेतनायाश्चपंचमे ॥ ८४ ॥
षष्ठेस्नायुशिरारोमबलवर्णनखत्वचः।
सर्वैःसर्वाङ्गसम्पूर्णैर्भागैःपुष्पतिसप्तमे ॥ ८५ ॥
अतएवहिसंजातस्तत्रजीवतिबालकः।
तेजोऽष्टेसंचरतिमातापुत्रौमुहुःक्रमात् ॥
तेनतौम्लानमुदितौस्यातांजातोनजीवति ॥ ८६ ॥

अर्थ-पहिले महीनेमें गर्भ अव्यक्त अर्थात् गुप्त रहताहै पहिले महीनेमें बीजको ग्रहण करनेके पश्चात् शुक्र और रज मिलकर ७ सातदिनमें कलला

कृति होजाताहै, पश्चात् क्लेदरूप होकर बुद्बुदाकृति होजाताहै । दूसरे महीनेमें बुद्बुदाकृतिसे घनमांस पेषी होजाताहै । तीसरे महीनेमें मांस पेषीका पंचगात्राकार परिणमन होताहै, अर्थात् मांस पेषीसे मस्तकका अर्द्ध भाग, बाहु, शंखिनी, और अन्यान्य सूक्ष्मसूक्ष्म अंग उपजते हैं । और कुछ समयके बाद मस्तकका अपरार्द्ध, और सुख दुःखका ज्ञान उत्पन्न होताहै । और जिस प्रकार तलैयां तथा नहरोंसे खेत परिपुष्ट होताहैं, उसी प्रकार गर्भिणीका गर्भ परिपुष्ट होताहै । चौथे महीनेमें गर्भके सम्पूर्ण अप्रकट अंग प्रकट होजातेहैं, पाँचमें महीनेमें चेतना प्रकट होतीहै । छठे महीनेमें स्नायु, शिरा, रोम, बल, वर्ण, नख और त्वचा उत्पन्न होतीहै सातवें महीनेमें गर्भ सम्पूर्ण अंगयुक्त होजाताहै, इससे इस महीनेका जन्मा हुवा बालक जी जाताहै । आठमें महीनेमें सर्व धातुओंका तेज क्रमसे वारंवार माता और पुत्रमें संचारकरताहै अर्थात् कभी माताका तेज संचार करै, कभी गर्भ गत बालकका तेज संचार करै, इसकारण गर्भिणी और गर्भस्थ बालक दोनों म्लान (मुरझाए हुए) और मुदित (प्रसन्न) होतेहैं । अतएव अष्टम मासकी उत्पन्न हुई सन्तान नहीं जीती है ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥

रसगंधकतुत्थञ्चत्र्यहंजम्बीरमर्दितम् ।
त्रिभावितंत्रिकटुनादेयंगुंजाचतुष्टयम् ॥ ८७ ॥
गर्भिण्याःशूलविष्टम्भज्वराजीर्णेषुकेवलम् ॥ ८८ ॥

इति गर्भविलासरसः ।

अर्थ-पारा, गंधक और नीलाथोथा, यह तीनों द्रव्य समान भाग लेकर जम्भीरी नीबूके रसमें तीन दिनतक खरल करै, पश्चात् त्रिकुटेके काथमें भावना देकर चार रत्तीभर सेवन करै, इससे गर्भिणियोंका शूल, विष्टम्भ, ज्वर और अजीर्ण रोग दूर होताहै ॥८७॥८८॥

तुत्थस्थानेस्वर्णंदेयंचिंतामणिरसःस्मृतः ॥ ८९ ॥

इति गर्भचिंतामणिरसः ।

अर्थ-उपरोक्त गर्भविलास रसमें स्वर्ण मिलानेसे गर्भचिंतामणि रस होजाताहै, इसकी मात्रा गर्भविलास रसकी समानहै और गुणभी गर्भविलासकी तुल्यहै ॥ ८९ ॥

जातीफलंटंकणंच व्योषंदैत्येन्द्ररक्तकम्।
तच्चूर्णंसमभागेनमर्दितंप्रहरद्वयम् ॥ ९० ॥
जम्बीररसयोगेनवटींकुर्याद्विचक्षणः।
गुंजाद्वयंप्रमाणेनकृत्वावैद्यंप्रयत्नतः ॥ ९१ ॥
आर्द्रकस्यरसेनैवभक्षयेदुष्णवारिणा।
निहन्तिसर्वरोगंचभास्करस्तिमिरंयथा ॥ ९२ ॥

इति गर्भचिंतामणिरसः।

अर्थ-जायफल, सुहागा, सोंठ, मिरच, पीपल, गंधक और सिंगरफ, इन सबको एकत्र पीसके जम्भीरी नीबूके रसमें दो प्रहर खरलकर दो दो रत्तीकी गोली बनालेवै प्रतिदिन एक गोली अदरखके रसमें मिला कर गरम जलके साथ सेवन करनेसे गर्भिणियोंके सर्व प्रकारके रोग दूर होजातेहैं ॥ ९० ॥ ९१ ॥ ९२ ॥

रसंतालंतथालौहंप्रत्येकंकर्षमात्रकम्।
कर्षत्रयंतथाचाभ्रंकर्पूरंवंगताम्रकम् ॥ ९३ ॥
जातीफलंतथाकोषंगोक्षुरंचशतावरी।
बलातिबलयोर्मूलंप्रत्येकंतोलकंशुभम् ॥ ९४ ॥
वारिणावटिकाकार्याद्विगुंजफलमानतः।
सन्निपातंनिहन्त्याशुस्त्रीणांचैवविशेषतः ॥ ९५ ॥
गर्भिण्याज्वरदाहंचप्रदरंसूतिकामयम् ॥ ९६ ॥

इति द्वितीयगर्भचिंतामणिरसः।

अर्थ-पारा, हरिताल और लोहा प्रत्येक एक एक कर्ष, अभ्रक, कपूर वंग, ताँबा, जायफल, जावित्री, गोखरू और सतावर प्रत्येक तीन तीन कर्ष, खिरैटीकी जड, प्रत्येक एक एक तोले। इन सबको एकत्र पीसकर जलमें दो दो रत्तीकी गोली बना लेवै, प्रतिदिन एक गोली खावै, इससे गर्भिणी स्त्रियोंके ज्वर, दाह, प्रदर, सूतिका और सन्निपातादि रोग दूर होते हैं ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ ९५ ॥ ९६ ॥

अतिव्यवायव्यायामदिवास्वप्नप्रजागरान् ।
तीक्ष्णोपचारशोकादीन्जलपानोत्कटासनम् ॥ ९७ ॥
दारुणानितथान्यानिगर्भिणीपरिवर्ज्जयेत् ।
संप्राप्तेचाष्टमेमासिमैथुनंपरिवर्ज्जयेत् ॥ ९८ ॥
यदिगच्छतिदुर्मेधाकाममोहादचेतनः ।
विपद्यतेतदागर्भएतत्तेनात्रसंशयः ॥ ९९ ॥
गर्भेमहतियस्यास्तुगर्भिण्याःपुष्पदर्शनम् ।
रक्तस्रवोऽथवातत्रपित्तश्लेष्महितोविधिः ॥ १०० ॥
गर्भोभिघातविषमाशनपीडिताद्यैः
पक्वंद्रुमादिवफलंपततिक्षणेन ।
मूढंकरोतिपवनःखलुमूढगर्भं
शूलंचयोनिजठरादिषुमूत्रसंगः ॥ १०१ ॥

अर्थ–अत्यन्त मैथुन, परिश्रम, दिनमें सोना, रात्रिमें जागरण, तीक्ष्ण उपचार, शोकादि, उत्कटपान, उत्कटभोजन, तथा अन्यान्य दारुण विषयोंको गर्भिणी त्याग देवै । आठमें महीनेमें एकवार भी मैथुन न करै । यदि कोई निर्बुद्धि मनुष्य कामान्ध होकर आठमे महीनेमें गर्भिणी से संगम करै तौ गर्भ निश्चय नष्ट हो जाता है । जो गर्भावस्थामें स्त्रियोंके रजोदर्श अथवा रक्तस्राव होय तौ पित्त श्लेष्म नाशक विधि प्रयोग करै । अभिघात, विषमाशन, और पीडनादिसे तत्काल गर्भ पतित हो जाता है । जैसे वृक्षसे पके हुए फल क्षणमात्रमें पतित हो जाते हैं । वायुसे मूढ गर्भ होता है, तथा योनि, जठरादिकमें शूल और मूत्ररोध होता है ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ १०० ॥ १०१ ॥

गर्भिण्याःप्रथमेमासिगर्भेशूलंप्रजायते ।
चन्दनंमधुकंलोध्रंकेशरंनीलमुत्पलम् ॥ १०२ ॥
शृंगाटकंकशेरुञ्चसमभागानिकारयेत् ।
क्षीरेणपाययेत्प्रातर्गर्भधारणमुत्तमम् ॥ १०३ ॥

द्वितीयेमासिगर्भिण्याःशूलमुत्पद्यतेयदा।
काकोलीक्षीरकाकोलीआमलामधुयाष्टिका ॥ १०४ ॥
घृतेनसमभागानिक्षीरेणालोड्यपाययेत्।
हन्तिशूलंसमुत्पन्नंगर्भधारणमुत्तमम् ॥ १०५॥

अर्थ-गर्भिणी के प्रथम मासमें गर्भशूल उपजे तौ लालचन्दन, मुलेठी, लोध, नीलोत्पल, सिंघाडे और कसेरु, इनका चूर्ण कर दूधके साथ प्रातःकाल पीवै, यह उत्तम गर्भको धारण करने वाला है। गर्भिणीके दूसरे महीनेमें गर्भ शूल उपजे तो काकोली, क्षीरकाकोली, भुईं आमला और मुलेठी, इनका चूर्ण घृत और दूधमें मिलाकर पीनेसे गर्भशूल नष्ट होकर निश्चय गर्भकी रक्षा होती है ॥ १०२ ॥ १०३ ॥ ॥ १०४ ॥ १०५ ॥

तृतीयेमासिगर्भिण्याःशूलमुत्पद्यतेयदा।
अनन्ताशारिवाक्षीरकाकोलीचवृक्षादनी ॥ १०६ ॥
क्षीरेणपाययेत्प्रातःशूलंहन्तिसुनिश्चयः।
चतुर्थेमासिगर्भिण्याःशूलंवाजायतेयदि ॥ १०७ ॥
उत्पलस्यचशालूकंयष्टीमधुकमेवच।
लोध्रेणापिसमंपिष्ट्वापिबेत्क्षीरेणसंयुतम् ॥ १०८ ॥
ततोविजयतेशूलंस्वास्थ्यंचैवोपपद्यते।
पंचमेमासिगर्भिण्याःगर्भशूलंप्रजायते ॥ १०९ ॥
नीलोत्पलस्यशालूकंपद्मबीजंमृणालकम्।
शर्करायाःसमंपिष्ट्वाक्षीरेणालोड्यपाययेत् ॥ ११० ॥
अस्यसेवाप्रसादेनस्वास्थ्यंसम्पद्यतेक्षणात् ॥ १११ ॥

अर्थ-गर्भिणीके तीसरे महीने गर्भ शूल उत्पन्न होय तौ दोनों सारिवा, क्षीरकाकोली, और बाँदा इन सबको समान भागले दूधमें पीसकर सेवन करनेसे गर्भशूल दूर होताहै। चौथे महीनेमें गर्भिणीके गर्भशूल उपजे तौ भँसीडे, मुलेठी, और लोधको पीसकर दूधके साथ पीवै, इससे निःसंदेह गर्भशूल दूर होजाताहै। पाँचमें महीनेमें गर्भ शूल उपजे

तौ– नीलोत्पलका कन्द, कमलगट्टा, मृणाल और शर्करा यह सब समान भागले एकत्र पीस दूधमें मिलाकर पीनेसे निश्चय गर्भ शूल दूर होकर गर्भकी रक्षा होतीहै ॥ १०६ ॥ १०७ ॥ १०८ ॥ १०९ ॥ ॥ ११० ॥ १११ ॥

षष्ठेमासिभवेद्यस्याःशूलपीडासुदारुणा ।
नीलोत्पलस्यशालूकंकदलीमोचरसस्तथा ॥ ११२ ॥
शर्कराक्षीरकाकोलीजीरकेणसमन्वितम् ।
गवांक्षीरेणसप्ताहंपानाच्छूलहरंपरम् ॥ ११३ ॥
सप्तमेमासिगर्भिण्याःशूलंसंजायतेयदि ।
शृंगाटकंविसंद्राक्षाकशेरुमधुकंसिता ॥ ११४ ॥
एतत्सर्वसमंपिष्ट्वाक्षीरशर्करयासह ।
नारीणांपानयोगेनगर्भस्थापनमुत्तमम् ॥ ११५ ॥

अर्थ–छठे महीनेमें गर्भ शूल उत्पन्न होय तौ नीलोत्पलका कन्द, केला, मोचरस, शर्करा, क्षीरकाकोली और जीवक, यह सब समानले दूधके साथ सात दिन पीनेसे दारुण गर्भ शूल नष्ट होताहै । सातवें महीनेमें गर्भशूल उत्पन्न होय तौ सिंघाडे, भसींडे, दाख, कसेरू, मुलेठी और बूरा यह सब समान भागले पीसकर दूध और मिश्री मिलाकर पीनेसे गर्भस्थापन होता है ॥ ११२ ॥ ११३ ॥ ११४ ॥ ११५ ॥

अष्टमेमासिगर्भिण्याःशूलंसंजायतेयदा ।
उत्पलस्यचशालूकंशृंगाटकद्वयन्तथा ॥ ११६ ॥
मंजिष्ठारक्तशालिचलोध्रंक्षीरेणसंयुतम् ।
पातुंदेयंत्र्यहंस्त्रीणांगर्भधारणमुत्तमम् ॥ ११७ ॥
नवमेमासिगर्भिण्यागर्भशूलंसुदारुणम् ।
पिष्ट्वाचक्षीरकाकोलीक्षीरेणसुखमाप्नुयात् ॥ ११८ ॥
दशमेमासिगर्भिण्याःशूलमुत्पद्यतेयदा ।
पद्ममुत्पलबीजानिशालूकंमधुसैन्धवम् ॥
गवांक्षीरेणपातव्यंगर्भस्थापनमुत्तमम् ॥ ११९ ॥

अर्थ-आठमें महीनेमें गर्भशूल उपजे तौ कमलकन्द, दोनों प्रकारके सिंघाडे, मजीठ, लालशालिधान और लोध, इनको दूधमें पीसकर सेवन करनेसे तीन दिनमें ही गर्भशूल दूर हो जाता है। नवमें महीनेमें गर्भशूल जन्मे तौ क्षीरकाकोलीको दूधमें पीनेसे विशेष लाभ होता है। दशमें महीनेमें गर्भशूल उपजे तौ कमल, उत्पलके बीज, शालूक, सहत और सैंधेनोन को एकत्र मिलाकर दूधके साथ पीनेसे निश्चय गर्भकी रक्षा होती है ॥ ११६ ॥ ११७ ॥ ११८ ॥ ११९ ॥

चंदनेनमृणालेनपद्मकेशरपद्मकैः।
गर्भप्रदेहंकुर्वीतमधुकेनोत्पलेनच ॥ १२० ॥
कोष्ठोदुम्बरफलजस्वरसोमोचोत्थगर्भोवा।
मधुनापीतःसद्यःशमयतिगर्भस्रुतिबहुलाम् ॥ १२१ ॥

अर्थ-लालचंदन, खस, कमल केशर, पद्माख, मुलेठी और उत्पल, इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर गर्भिणीके उदर पै प्रलेप करनेसे गर्भशूल नष्ट होताहै। कठूमरके फलोंका स्वरस या केलेका मध्यभाग सहतके साथ पीनेसे तत्काल गर्भस्राव दूर होता है ॥ १२० ॥ १२१ ॥

सूतंगंधंतथास्वर्णलौहंरजतमाक्षिकम्।
हरितालंवंगभस्माप्यभ्रकंसमभागिकम् ॥ १२२ ॥
भावनाखलुदातव्यारसैरेषांपृथक्पृथक्।
ब्रह्मीवासाभृंगराजपर्पटंदशमूलकम् ॥ १२३ ॥
सप्तधाभावयेद्वैद्योगुंजामानांवटींचरेत्।
गर्भचिंतामणिरयंपूर्ववत्कथिताःगुणाः ॥ १२४ ॥

इति बृहद्गर्भचिंतामणिरसः।

अर्थ-पारा, गंधक, सोना, लोहा, रूपा, सोनामाखी, हरिताल, वंग की भस्म और अभ्रक, यह सब समान भागले पीसकर ब्राह्मी, अडूसा भाँगरा, पित्तपापडा और दश मूलके रसमें अलग अलग सात भावना देकर एक एक रत्तीकी गोली बना लेवै, यह गर्भचिंतामणि रस-ज्वर और शूलादि रोगोंको दूर करैहै ॥ १२२ ॥ १२३ ॥ १२४ ॥

त्रिभागंत्रिकटुंदेयंचतुर्भागंचहिंगुलम् ।
जातीकोषंलवङ्गञ्चप्रत्येकञ्चत्रिकार्षिकम् ॥ १२५ ॥
सुवर्णमाक्षिकंचैवपलार्द्धंप्रक्षिपेद्बुधः ।
जलेनमर्दयित्वाथचणमात्रावटीकृता ॥
निहन्तिगर्भिणीरोगंभास्करस्तिमिरंयथा ॥ १२६ ॥

इति गर्भविनोदरसः ।

अर्थ-त्रिकुटा ३ तीन भाग, सिंग्रफ ४ चार भाग, जायफल और लौंग, प्रत्येक ३ तीन भाग, सोनामाखी, ४ चार भाग, इन सबका एकत्र चूर्णकर जलके साथ पीसकर चनेकी बराबर गोली बना लेवै। यह गर्भविनोद रस-यथा अनुपानके साथ खानेसे गर्भिणीके सम्पूर्ण रोग दूर करै है ॥ १२५ ॥ १२६ ॥

घटनप्रवृत्तघटकृतकरयुगसंलग्नकर्दमः ।
पीतःसमधुश्छागीक्षीरैर्नियतंसंस्थापयेद्गर्भम् ॥ १२७॥
कशेरुशृंगाटकजीवनीयैःपद्मोत्पलैरण्डशतावरीभिः ।
सिद्धंपयःशर्करयाविमिश्रंसंस्थापयेद्गर्भमुदीर्णशूलं १२८

अर्थ-घडेके बनाते समय कुम्हारके हाथमें जो मट्टी लगजातीहै, उसमट्टीको सहत और बकरीके दूधमें मिलाकर पीवै तौ गर्भ स्थापन होजाताहै। कसेरु, सिंघाडे, जीवनीयगणकी औषधि, कमल, उत्पल, अंड और सतावर इन सब औषधियोंको दूधमें पकाकर पीनेसे-निश्चय गर्भशूल दूर होजाताहै ॥ १२८ ॥

भुग्नोऽनिलेनविगुणेनततःसगर्भः
संख्यामतीवबहुधासमुपैतियोनिम् ॥
द्वारंनिरोध्यशिरसाजठरेणकश्चि
त्कश्चिच्छरीरपरिवर्त्तितदेहकूजः ॥ १२९ ॥
एकेनकश्चिदपरस्तुभुजद्वयेन
तिर्यग्गतोभवतिकश्चिदपराङ्मुखोऽन्यः ।

पाश्वोंपवृत्तगतिरेवतथैवकाश्चि
दित्यष्टधागतिरियंह्यपराचतुर्धा ॥ १३० ॥

अर्थ-दुष्ट वातसे गर्भ टेढ़ा होकर अनेक प्रकारसे योनिके मुखपर आनकर अडजाताहै, तहाँ कोई गर्भ योनिके मुखको मस्तकसे रोक लेताहै कोई उदरसे योनि द्वारको रोकताहै कोई अपने शरीरको गोलघुमाकर कुबडे पनसे योनिद्वारको रोकताहै, कोई एकहाथसे, कोई दोनों हाथोंसे योनि द्वारको रोकताहै,कोई तिरछा होकर योनि द्वारको रोकताहै, कोई नीचा मुख होकर योनि द्वारको रोकताहै, और कोई पसलियोंको टेढ़ा करकै योनि द्वारको रोकताहै, ऐसे आठ प्रकारसे विकृत गर्भकी गति होतीहै। कोई चार प्रकारसे कहतेहैं॥१२९॥१३०॥

करिदमनदहनमूलंपिष्टंसलिलेनपानतःसद्यः।
चिरमाचिरजंगर्भंमृतममृतंवापातयति ॥ १३१ ॥
ज्वरादिरोगेगर्भिण्यामृदुकुर्याच्चिकित्सिम्।
तीक्ष्णंहिभेषजंतस्यागर्भपातायकल्पते ॥ १३२ ॥
चन्दनंशारिवालोध्रंमृद्वीकाशर्करान्वितम्।
क्वाथंकृत्वाप्रदातव्यंगर्भिण्याज्वरनाशनम् ॥ १३३ ॥

शर्कराप्रक्षेप्या।

अर्थ-नाग दौनकी जड, और लाल चीतेकी जडको जलमें पीसकर पीनेसे तत्काल थोडे दिनोंका बहुत दिनोंका, मराहुआ और विनामरा हुआ गर्भ पतित होजाताहै। गर्भिणी स्त्रियोंके ज्वरादि रोगोंमें मृदु चिकित्साकरै, क्योंकि तीक्ष्णऔषधियोंके द्वारा चिकित्सा करनेसे गर्भ पतित होजाताहै। चन्दन, अनन्तमूल, लोध, इनका क्वाथ बना मिश्री मिलाकर पीनेसे गर्भिणियोंका ज्वर दूर होजाताहै ॥ १३१ ॥ ॥ १३२ ॥ १३३ ॥

सहचरमुस्तगुडूचीभद्रोत्कटबिल्ववालकैःक्वथितम्।
पेयंमिश्रंमधुमिश्रंसद्योज्वरशूलनुत्सद्यः ॥ १३४ ॥

इति सहाचरादिः।

अर्थ-कटसरैया, नागरमोथा, गिलोय, भद्रमोथा, वेल और सुगंध

वाला, इनके काथमें सहत डालकर पीनेसे गर्भिणियोंके तत्काल ज्वर और शूल दूर होताहै ॥ १३४ ॥

एरण्डमूलममृतामंजिष्ठारक्तचन्दनम् ।
दारुपद्मयुतःक्काथोगर्भिण्याज्वरनाशनम् ॥ १३५ ॥
रास्नाछिन्नरुहासकुष्ठसहितैर्मूलैश्वपंचान्वितैः ।
तत्प्रातःक्कथितंसशर्करयुतंक्षौद्रेणसंयोजितम् ॥ १३६ ॥
पीतंहन्तिचगर्भिणीज्वरगदंश्लेष्माभिवृद्धिंपुनः ।
सद्यश्चैवचिकित्सकैश्चकुशलैर्ज्ञात्वापुराणैर्मतम् ॥१३७॥
मुस्तपर्पटदुस्पर्शकण्टकारीमहौषधम् ।
वातश्लेष्मारुचिहरंगर्भिण्याज्वरनाशनम् ॥ १३८ ॥
आम्रजम्बूत्वचक्काथंलेहयेल्लाजशक्तुभिः ।
अनेनलीढमात्रेणगर्भिणीसारकंजयेत् ॥ १३९ ॥

अर्थ-अंडकीजड़, गिलोय, मजीठ, लालचंदन, देवदारु और पद्माख यह सब औषधि समानले काथ बनाकर पीनेसे गर्भिणी स्त्रियोंका ज्वर दूर होताहै । रास्ना, गिलोय, कूठ और पंचमूल, यह सब औषधि समान भागले काथ बना बूरा और सहत डालकर पीनेसे गर्भिणियोंका ज्वर और श्लेष्मा, दूर होताहै । नागरमोथा, पित्तपापडा, धमासा, कटेरी और सोंठ यह सब समान भागले काथ बनाकर पीनेसे गर्भिणियोंके वात श्लेष्म, अरुचि और ज्वर दूर होताहै । आमकी छाल और जामुनकी छालका काथ बना तिसमें खीलोंके सत्तु मिलाकर पीनेसे तत्काल अतीसार रोग दूर होताहै ॥ १३५ ॥ १३६ ॥ १३७ ॥ ॥ १३८ ॥ १३९ ॥

ह्रीवेराऽरलुरक्तचंदनवलाधन्याकवत्सादनी ।
मुस्तोशीरयवासपर्पटविषाक्काथंपिबेद्गर्भिणी ॥ १४० ॥
नानावर्णरुजातिसारकगदेरक्तेस्रुतौवाज्वरे ।
योगोऽयंमुनिभिःपुरानिगदितःसूत्यामयेपूत्तमः॥१४१॥

इति ह्रीवेरादिः ।

अर्थ-सुगन्धवाला, श्योनाक, लालचन्दन, खिरैटी, धनिया, गिलोय नागरमोथा, खस, धमासा, पित्तपापडा और अतीस, यह सब औषधि समान भागले काथ करके पीनेसे स्त्रियोंके नाना प्रकारकी पीडा और रक्तस्राव युक्त अतिसार तथा ज्वर रोग दूर होताहै ॥ १४० ॥ १४१ ॥

इति योनिव्यापच्चिकित्सा समाप्ता ।

अथसुखप्रसूतिकरणमाह ।

पाठालांगलिसिंहास्यमयूरकजटैःपृथक् ।
नाभिवस्तिभगालेपात्सुखंनारीप्रसूयते ॥ १ ॥
परूषकस्थिरामूललेपात्तद्वत्पृथक्पृथक् ।
योनौवासांघ्रिलेपेनमहागर्भाप्रसूयते ॥ २ ॥
गृहाम्बुनागेहधूमपानंगर्भापकर्षणम् ।
गृहाम्बुनाहिंगुसिन्धुचूर्णपानंतथैवच ॥ ३ ॥

अर्थ-पाढ़, कलिहारी, अडूसा, मोरशिखा, फालसा, और शालिपर्णी इनमें किसीएक औषधिको पीसकर नाभि, वस्ति, अथवा योनिपै प्रलेप करनेसे- सुखपूर्वक प्रसव होताहै । अडूसेकी जडको जलमें पीसकर, योनिपै प्रलेप करनेसे- सुखसे स्त्री बालकको जनतीहै कॉंजीके साथ धूम पान करनेसे अथवा काँजीमे हींग और सैंधानोनका चूर्ण डालकर पीनेसे स्त्रियें सुखपूर्वक बालकको जनतीहैं ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥

मातुलुंगस्यमूलानिमधुकंमधुसंयुतम् ।
घृतेनसहपातव्यंसुखंनारीप्रसूयते ॥ ४ ॥
पुटदग्धसर्पकञ्चुकमसृणमसीकुसुमसारसुहिताक्षी ।
झटितिविशल्याभवतिगर्भवतीमूढगर्भापि ॥ ५ ॥
तुषाम्बुपरिपिष्टेनमूलेनपरिलेपयेत् ।
लांगल्यासरणीसूतेक्षिप्रमेतेनगर्भिणी ॥ ६ ॥

अर्थ-बिजोरे नीबूकी जड और मुलेठीको एकत्र पीस सहत मिलाकर घृतके साथ पीनेसे स्त्रियोंके सुखसे प्रसव होताहै साँपकी कैंचलीको पुटके द्वारा जलाकर मसी बनालेवै, फिर उस मसीमें सहत मिलाकर

आँखोंमें लगानेसे मूढ़ गर्भा स्त्रीभी सुख पूर्वक प्रसव करै । कलिहारी जडको काँजीमें पीसकर गर्भिणीके दोनों पाँवोमें प्रलेप करनेसे अत्यन्त शीघ्रप्रसव होताहै ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥

तालतरूत्तरमूलेमुक्तशिखाकच्छमुद्धृतोनियतम् ।
वासामूलेतद्वत्कटिवद्धंतिद्रुतंसूते ॥ ७ ॥
यासौसरस्वतीतीरेजम्भलानामराक्षसी ।
तस्याःस्मरणमात्रेणविशल्यागर्भिणीभवेत् ॥ ८ ॥
अलक्तकेनलिखितागर्भोपरितथाधार्यम् ।
क्षितिर्ज्जलंवियत्तेजोवायुर्विष्णुःप्रजापतिः ॥ ९ ॥
गर्भस्थांत्वांसदोषान्तुविशल्यामादिशन्तुच ।
प्रसूष्वत्वमविक्लिष्टमविक्लिष्टशुभानने ॥ १० ॥
कार्त्तिकेयद्युतिंपुत्रंकार्त्तिकेयाभिरक्षितम् ।
काचिदप्यनुकूलास्त्रीकर्णेवामेजपेच्छनैः ॥ ११ ॥
विशल्यकरणींविद्यांवक्ष्येयज्जलवारिणा ॥
सुखीभवतिशूलार्त्तक्षतोवज्रास्त्रकण्टकैः ॥ १२ ॥
गर्भिण्याविषमोगर्भःसमोभवतिनान्यथा ।
ॐक्षिपनिक्षिपउन्मथनिमथप्रथमप्रथममुञ्चमुञ्चस्वाहा। १३
अनेनचाष्टौपरिलेप्यपानीयंपातुंदेयम् ।
प्राक्चैवनवमान्मासात्सासूतागृहमाश्रयेत् ॥ १४ ॥
देशेप्रशस्तेसम्भारैःसम्पन्नंसाधकेऽहनि ।
तत्रोदीक्षेतसासूतिंसूतिकापरिवारिता ॥ १५ ॥

अर्थ-चोटी और धोतीको खोलकर ताड़वृक्षकी उत्तर दिशाकी जड अथवा अडुसेकी जड़को उखाडलाव, फिर गर्भिणीकी कटिपै बाँधनेसे शीघ्र प्रसव होताहै । " यासौ- गर्भिणीभवेत् ,, इस मंत्रको लाखके रंगसे भोजपत्रपै लिखकर गर्भिणीके गर्भ पैधारणकरै । अथवा- "क्षिति र्जल- शुभानने " इसमंत्रको गर्भिणीके वाए कानमें सुनानेसे स्वामिका-

र्त्तिकेयकी समान पुत्र उत्पन्न होताहै ॥ और " विशल्यकरणी-मुश्च मुश्च स्वाहा " इसमंत्रसे जलको आठवार पढ़कर गर्भिणीको पीनेको देवै । गर्भिणीस्त्री नवे महीनेसे पहिलेही सूतिकागृहमें चली जावै और वह सूतिकागृह उत्तमदेशमें बनाहो, तथा उत्तम तख्ते, कडी और ईंटो से पटाहो और शुभदिनमें उसकी नीमरक्खी गईहो। प्रसवहोनेके पश्चात् मर्यादसे प्रथम कदापि स्त्रीबाहर न निकले ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥

अद्यश्वःप्रसवेग्लानिःकुक्षेशिथिलताक्लमः ।
अधोगुरुत्वमरुचिःप्रसेकोबहुमूत्रता ॥ १६ ॥
वेदनोरूदरकटीपृष्ठहृद्बस्तिवङ्क्षणे ।
योनिभेदरुजातोदस्फुरणस्रवणानिच ॥
आधीनामनुजन्मातस्ततोगर्भोदकस्रुतिः ॥ १७ ॥
जातेचशिथिलेकुक्षौमुक्तेहृदयबंधने ।
सशूलेजघनेनारीज्ञेयासातुप्रजायिनी ॥ १८ ॥

अर्थ-ग्लानि, कोखमें शिथिलता, क्लान्ति, अधोभागमें गुरुता, अरुचि, प्रतिश्याय, बहुमूत्रता, ऊरु, उदर, पृष्ठ, हृदय, बस्ति और छातीमेंपीड़ा, योनिमें भेदीसमानकी पीड़ा, सुइकीसमानपीड़ा, यंत्रणा स्फुरण और स्राव,भगसे जल और कफका गिरना, हृदयबंधनमें शिथिलता, और जाँघोमें शूलकी समान पीड़ा, यह सब प्रसवहोनेके चिह्नहैं ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥

अतोपस्थितगर्भांतांकृतकौतुकमंगलाम् ।
हस्तस्थपुन्नामफलांअभ्यक्तोष्णाम्बुसेविताम् ॥ १९ ॥
पाययेत्सघृतांपेयांततोभूशयनेस्थिताम् ॥
पुनःपुनस्तामभ्यज्यकुर्यात्स्वंकर्मसूतिका ॥ २० ॥
मृदुपूर्वंप्रवाहेचवाढमाप्रसवाच्चसा ॥
हर्षयेत्तांमुहुर्जन्मशब्दैःसंजननायवै ।
प्रत्ययान्तितथाप्राणाःसूतिक्लेशावसादिताः ॥ २१ ॥

अर्थ–स्त्रियोंको गर्भ प्रसवके समय कौतुक और मंगल कार्य्य कराकर पश्चात् प्रसूताके हाथमें पुन्नाम कमल देकर योनि आदिमें तेलको मलकर गरमजलसे स्नानकरावै,और घृत संयुक्त पेया मिलाकर भूमिपर सुलादे । इस प्रकार प्रसवतक सूतिकाको वारंवार तैलादिसे अभ्यक्तकर सर्वदा हृष्टरक्खै, इससे प्रसूतिकाके अनेक प्रकारके क्लेश दूर होतेहैं ॥ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥

इहामृतञ्चसोमश्चचित्रभानुश्चभाविनि ।
उच्चैःश्रवाश्चतुरगोमन्दिरेनिवसन्तुते ॥ २२ ॥
इदममृतमपांसमुद्धृतंवैतवलघुगर्भमिमंचतुस्त्री ।
तदनलपवनार्कवासवास्तेसहलवणाम्बुधरैर्दिशन्तुशान्तिम् ।
मुक्ताःपाशाविपाशाश्चमुक्ताःसूर्येन्दुरश्मयः ।
मुक्तःसर्वभयाद्गर्भःएह्येहिमाचिरमाचिरस्वाहा ॥ २४ ॥
अनेनसप्तधासप्तंपीत्वासुंस्त्रीप्रसूयते ।
ओंचँक्रँगर्भफट्स्वाहाइदंचूर्णप्रक्षयित्वा-
पर्णेनलिखित्वाताम्बूलंखादितुंदेयम् ॥ २५ ॥
एरण्डस्यवनेकाकोगंगातीरमुपागतः ।
भूतःपिबतिपानीयंविशल्यागर्भिणीभवेत् ॥
अनेनसप्ताभिमंत्रितंजलंपातुंदेयम् ॥ २६ ॥

अर्थ–"इहामृतञ्चसोमश्च–गर्भफलस्वाहा" इसमंत्रको पानमें चूनेसे लिखकर गर्भिणीको ताम्बूल खानेको देवै । "एरण्डस्यवने–गर्भिणी-भवेत्" इसमंत्रके द्वारा जलको सातवार अभिमंत्रितकर गर्भिणीको पीनेकोदेवै । इससे सुखसहित प्रसवहोताहै ॥२२॥२३॥२४॥२५॥२६॥

श्वेतापराजितामूलंघ्रातंपीतंजलेनवा ।
नाभिप्रलेपतोवापिसुखंसूतिकरंपरम् ॥ २७ ॥
मातुलुंगस्यमूलानिमधुकंमधुसंयुतम् ।
घृतेनसहपातव्यंसुखंनारीप्रसूयते ॥ २८ ॥

सर्पनिर्मोकसर्पिभ्र्यांधूपोयोनौप्रसूतिकृत् ।
प्रत्येकपुष्पीमूलंनिहितंयोनौगुदेऽथवा ॥ २९ ॥
स्त्रीणांबद्धंवाकटिदेशेप्रसवंकुरुतेसुखेनैव ।
यदिअपामार्गोत्पाटनेमूलंत्रुटचति ॥ ३० ॥
यदादुहितुर्ज्जन्मविजानीयादन्यथासूनोः ॥ ३१ ॥

अर्थ-सफेद अपराजिताकी जड़को जलमें पीसकर सूंघनेसे अथवा पीनेसे या नाभिपै लेपकरनेसे सुखपूर्वक प्रसवहोताहै । विजोरे नींबूकीजड़को और मुलेठीको एकत्रपीसकर सहत और घीके साथ मिलाकर पीनेसे स्त्रियोंके अत्यन्तसुखसे प्रसवहोताहै । साँपकी कैंचली और घृत, दोनोंको मिलाकर योनिमें धुआँदेनेसे सुखपूर्वक प्रसवहोताहै चिरचिटेकी जड़को उखाड़कर गर्भिणीयोंकीयोनिमें, गुह्यदेशमें अथवा कटीमें बांधनेसे सुखपूर्वक प्रसवहोताहै । चिरचिटेको उखाड़तेसमय जो उसकी जड़ टूट जावैतौ कन्या उत्पन्नहोवै और जो न टूटे तौ पुत्र उत्पन्नहो ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥

नाड़ीऋतुवसुभिःसहपक्षदिगष्टादशभिरेवच ।
अर्कभुवनावेदसहितेरुभयंत्रिंसकमाश्चर्य्यंपंचदशकंवा ॥३२

	३०	३०	३०	
३०	१६	६	८	३०
३०	२	१०	१८	३०
३०	१२	१४	४	३०
	३०	३०	३०	

उभयात्रिंशकः ।

	१५	१५	१५	
१५	८	३	५	१५
१५	१	५	९	१५
१५	६	७	२	१५
	१५	१५	१५	

उभयपञ्चदशकः ।

अर्थ-उपरोक्त ३० तीस, या १५ पन्द्रहके यंत्रको लिखकर गर्भिणी को दिखलानेसे शीघ्र प्रसव होताहै ॥ ३२ ॥

कचवेष्टितयाङ्गुल्याघृष्टेकण्ठेमुखेपतत्यमरा ।

मूलेनलांगलक्यासंलिप्तेपाणिपादेच ॥ ३३ ॥
अमरापातनंसद्यःपिप्पल्यादिरजःपिबेत् ।
मूर्ध्निदद्यात्स्नुहीक्षीरंअमरापातनंपरम् ॥ ३४ ॥
वृद्ध्याद्वित्रिचतुर्मासंगंधकंमदिरान्वितम् ।
तीक्ष्णपर्णद्रवेणादौनाड्याःशुद्ध्यैप्रदीयते ॥ ३५ ॥

अर्थ–बालोंको अंगुलीमें बाँधकर कण्ठ या मुखमें घिसनेसे–निश्चय आंवर (जेर आदि) गिर जातीहै। कलिहारीकी जडको पीसकर गर्भिणीके पाँवों और हाथोंमें प्रलेप करनेसे–तथा पिप्पल्यादि चूर्णको जलकेसाथ पीनेसे निश्चय आंवर पतित होजाताहै। थूहरके दूधको मस्तकपै डालनेसे आमर गिरजातीहै । गंधकवृद्धिके अनुसार २। ३। या ४ मासे मदिरामें मिलाकर कमरखके रसके साथ गर्भिणीको पिलानेसे गर्भिणीकी नाड़ी शुद्धहोजातीहै ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥

संस्वेद्यवालुकाद्यैस्तुलंघितायायथाबलम् ।
क्षुधितायाःप्रशंसन्तिपथ्यंलघ्वन्नमेवच ॥ ३६ ॥
पंचकोलकमिश्रन्तुदशमूलमिहेष्यते ।
केवलंदशमूलंवापिप्पलींप्रक्षिपेत्ततः ॥ ३७ ॥
द्वित्रिरात्रंविधिरसौसप्ताहाद्बृंहणंक्रमात् ।
द्वादशाहेनतिक्रान्तेपिपितंनैवयोजयेत् ॥ ३८ ॥

अर्थ–प्रसूतास्त्रीको वालुकादि के द्वारा स्वेद देवै और बलानुसार लंघनकरावै, भूँखलगे तो हलकाभोजन खानेकोदेवै। गर्भिणीस्त्रीको वातश्लेष्म रोगमें आमवात रोगमें और कफरोगमें पंचकोलयुक्त दशमूल का क्वाथ पीनेको देवै। अथवा दशमूलके क्वाथमें पीपलका चूर्ण डालकर पीने को देवै। जिससे वायु कुपित न होवै और दुष्टरक्त शुद्धहोजाय, ऐसीविधि २–३ रात्रिपर्यन्त गर्भिणीके प्रयोग करै । सातरोजकेबाद बृंहण (पुष्टिकारक) क्रिया प्रदान करै। परन्तु १२ बारह दिनसे कम कदापि मांस न देवै ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥

वायुःप्रकुपितंकुर्यात्संरुध्यरुधिरंच्युतम् ।

सूतायाहृच्छिरोबस्तिशूलंमक्कल्लसंज्ञितम् ॥ ३९ ॥
यवक्षारंभवेत्तत्रसर्पिषोष्णोदकेनवा।
पिप्पल्यादिगणक्काथंपिबेद्वालवणान्वितम् ॥ ४० ॥
पिप्पल्यादिकचूर्णंवासुरामण्डेनपाययेत्।
वंशपत्राङ्कुरक्काथःसयवक्षारउत्तमः ॥ ४१ ॥
बिल्वमल्लीमातुलुंगमूललेपःशिरोऽर्त्तिनुत्।
घृतंमक्कल्लजिद्योनौरुबूतैलाक्तशूलकम्।
त्र्यूषणंपिप्पलीमूलंदारुचव्यंसचित्रकम् ॥ ४२ ॥
रजन्यौहवुषाजाजीसक्षारंलवणद्वयम्।
कल्कमुष्णाम्बुनापीतंसुखेनाशुविरिच्यते ॥ ४३ ॥

मक्कल्लशूलम्।

अर्थ–वायुके कुपित होनेसे प्रसूताओंके गिरताहुवारुधिर बंदहोजाताहै, और हृदय, बस्ति तथा मस्तकमें मक्कल्लक नामक शूल उत्पन्न होताहै। जवाखारके चूर्णको घीके साथ या गरम जलके साथ पीनेसे किम्वा पिप्पल्यादि गणका क्वाथ सेंधेनोनके साथ पीनेसे या पिप्पल्यादि गणकी औषधियोंका चूर्ण सुरामण्डके साथ सेवन करनेसे अथवा बाँस के कल्लोकेक्काथमें जवाखार डालकर पीनेसे प्रसूतस्त्रियों के मक्कल्लनामक शूल नष्ट होताहै। हींग, वेलकेफूल और बिजोरेकी जड़को पीसकर प्रलेप करनेसे प्रसूतास्त्रियोंके शिरःशूल नष्ट होताहै। घी और अण्डीका तेल मिलाकर योनिपै प्रलेप करनेसे योनिशूल दूर होताहै। सोंठ, मिरच, पीपल, पीपरामूल, चव्य, देवदारु, चीतेकी जड हलदी, दारुहलदी, जीरा, जवाखार, सेंधानोन और काला नोन, इनका चूर्ण गरमजलके साथ पीनेसे प्रसूतास्त्रियोंके सुखसहित जुल्लाब होजाताहै ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥

मासमध्यर्द्धमासंवायावद्वापुष्पदर्शनम्।
अंगमर्दोज्वरःकंपःपिपासागुरुगात्रता ॥ ४४ ॥

शोथःशूलातिसारौचसूतिकारोगदर्शनम् ।
मिथ्योपसेवात्संक्लेशाद्विषमाजीर्णभोजनात् ॥ ४५ ॥
सूतिकायाश्चयेरोगाजायन्तेदारुणाःस्मृताः ।
ज्वरातीसारशोथश्चशूलानाहवलक्षयाः ॥ ४६ ॥
तंत्रारुचिप्रसेकाद्याःकफवातामयोद्भवाः ।
कृच्छ्रसाध्याहितेरोगाःक्षीणमांसवलाग्नितः ॥ ४७ ॥
तेसर्वेसूतिकानाम्नारोगास्तेचाप्युपद्रवाः ।
यत्नेनोपाचरेत्सूतांदुःसाध्योहिगदामयः ॥ ४८ ॥

अर्थ–प्रसूतास्त्रियोंके एक महीनेके भीतर या आधेमहीनेके भीतर पुनः ऋतुहोतेहुए अंगवेदना, ज्वर, पियास, कम्प, गात्रभार, शोथ, शूल और अतीसार यह सब रोग उत्पन्न होवे तौ उनके सूतिका रोग जानना। मिथ्योपचार, संक्लेश, विषमभोजन और अजीर्णमें भोजन करनेसे सूतिका वाली स्त्रियोंके ज्वर, अतिसार, शोथ, शूल, आनाह, बलक्षय तन्द्रा, अरुचि, प्रसेकादि दारुण कफवातोत्पन्न रोग उत्पन्न होतेहैं। इस रोगके होनेसे प्रसूता स्त्रियोंके मांस, बल और अग्नि क्षय होजातीहै, इस कारण कृच्छ्रसाध्य होताहै। अतएव अत्यन्त यत्नोंसे सूतिकाकी चिकित्सा करै ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥

लंघनाभ्यंजनस्वेदैःकटुतीक्ष्णोष्णपेयया ।
शौष्कमूलककौलत्थैर्यूषैर्मांसरसैःशुभैः ॥ ४९ ॥
दशमूलीकृतःक्वाथःसाज्यःसूतीज्वरापहः ।
आमशूलरुजायान्तुधान्यशुण्ठीसमन्विता ॥ ५० ॥
धान्यपंचकयुक्तावादशमूलीप्रशस्यते ।
क्वाथेनगुर्वीनिर्दिष्टाह्रीवेरादिश्चशस्यते ॥ ५१ ॥

अर्थ–लंघन, अभ्यंग, स्वेद, कटु, तीक्ष्ण, उष्णपेया, सूखीमूलीकायूष, कुलथीका यूष, और मांसरस, इनके द्वारा सूतिका रोगकी चिकित्सा करै। दशमूलका क्वाथ घृतके साथ पीनेसे सूतिका स्त्रियोंका ज्वर दूर

होताहै। धनिया और सोंठके साथ दशमूलका काथ या धान्यपंचक संयुक्त दशमूलका काथ या बृहत्पंच मूलका काथ अथवा ह्रीवेरादिका काथ पीनेसे सूतिका स्त्रियोंके आमशूल दूर होताहै ॥ ४९ ॥ ५०॥५१॥

सहाचरकृतःक्काथःपिप्पलीचूर्णमिश्रितः।
दीपनीज्वरशोथामसूतिकारोगनाशनः ॥ ५२ ॥
पीतझिण्टीकृतःक्काथोनिशापर्युषितोजयेत्।
सूतिरोगहरश्चैवतथातन्मूलचर्व्वणम् ॥ ५३ ॥
ध्मापयित्वानलेलोहंमुद्गयूषेनिषेचयेत्।
पंचमूलस्यवाक्काथेपिप्पलीसलिलेऽथवा ॥ ५४ ॥
पीतंयूषादितच्छीघ्रंसर्वसूतीरुजापहम् ॥ ५५ ॥

अर्थ-सफेद कटसरैयाके काथमें पीपलका चूर्ण पीनेसे सूतिका स्त्रियोंके अग्निदीपन होतीहै और सूजन, ज्वर और आमशूलका नाश होताहै। पीलीकटसरैयाका काथ बासी करके पीनेसे अथवा पीली कटसरैया चाबनेसे सर्वप्रकारके सूतिकारोग दूर होतेहैं। लोहेको अग्नि में गरम करकै मूंगके यूषमें, पंच मूलके काथमें और पीपलके काथमें बुझाकर उन यूषादिको पीनेसे सूतिकादिकके सम्पूर्ण रोग दूरहोजातेहैं ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥

सहाचरपुष्करवेतसमूलंवैकङ्कतदारुकुलत्थसमम्।
शृतशीतससैन्धवहिंगुयुतंसद्योज्वरसूतिकाशूलहरम् ॥५६॥

अर्थ-कटसरैया, पोहकर मूल, वेतकी जड़, विकंकन, देवदारु और कुलथी, यह सब बराबर लेकर काथ बना शीतलकर हींग और सैंधानोन प्रक्षेपदेकर पीनेसे सूतिकावाली स्त्रियोंके तत्काल ज्वर और शूलादि रोग दूर होतेहैं ॥ ५६ ॥

दशमूलीमुद्गमाषयवकोलकुलत्थजम्।
क्काथंतक्रयुतंपक्कायूषःकार्यःसजीवकः ॥
ससैन्धवोघृतेभृष्टःपयोभुंजीततेनच ॥ ५७ ॥

इति दशमूल्यादि यूषः।

अर्थ-दशमूल, मूंग, उड़द, जौ, सूखीमूली, और कुलथी, इनका क्वाथ बनाकर तक्र और जीरेके साथ पकाकर सैंधानोन और घी मिलाकर दूधमें भूनकर पीनेसे सर्वप्रकारके प्रसूतिका रोग दूर होते हैं॥५७॥

सिद्धंद्विपंचमूलाभ्यांपयःशार्करपादधृक् ।
सूतिकोपद्रवंहन्तिपीतमात्रंनसंशयः ॥ ५८ ॥
देवदारुवचाकुष्ठंपिप्पलीविश्वभेषजम् ।
कट्फलंमुस्तकंनिम्बंतिक्ताधानाहरीतकी ॥ ५९ ॥
गजकृष्णांचदुस्पर्शागोक्षुरंधन्वयासकम् ।
बृहत्यतिविषाच्छिन्नाकर्कटंकृष्णजीरकम् ॥ ६० ॥
समभागान्वितैरेतैःसिन्धुरामठसंयुतम् ।
क्वाथमष्टावशेषन्तुप्रसूतांपाययेत्स्त्रियम् ॥ ६१ ॥

अर्थ-दशमूलको दूधमें औटाकर चौथाईभाग बूरा डालकर पीनेसे सर्वप्रकारके सूतिकारोग दूर होतेहैं। देवदारु, वच, कूठ, पीपल, सोंठ, कायफल, नागरमोथा, नीमकी छाल, कुटकी, धनिया, हरड, गजपीपल, कटेरी, गोखरू, धमासा, बृहती, अतीस, गिलोय, काठ आमला और कालाजीरा, यह सब औषधि समान भागले अष्टावशेष काढ़ाकरै, इस काढेमें सैंधानोन और हींग डालकर पीनेसे प्रसूता स्त्रियोंके शूल, मूर्छादि सूतिकारोग दूर होते हैं ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥

पिप्पलीदेवकाष्ठञ्चभद्रमुस्तकएवच ।
अगुरुंपिप्पलीमूलंश्लक्ष्णपिष्टञ्चकारयेत् ॥ ६२ ॥
तक्रेणसहसंयुक्तंपिबेद्यूषैर्विचक्षणा ।
एतेनघृतयुक्तेनपीतमात्रेणनिश्चितम् ॥ ६३ ॥

अर्थ-पीपल, देवदारु, नागरमोथा, अगर और पीपला मूल इन सबको बारीक पीस तक्रके साथ यूष बनाकर पीनेसे प्रसूता स्त्रियोंके सर्व प्रकारके सूतिका रोग दूर होतेहैं ॥ ६२ ॥ ६३ ॥

यवकोलकुलत्थानांशालिमूलंतथैवच ।
क्वाथयेदप्रमत्तश्चसुपूतेसलिलाढके ॥ ६४ ॥

तत्पादावस्थितंक्काथंसर्पिर्युक्तंसजीरकम् ।
पक्कंघृताक्षमात्रेणसैन्धवेनसमायुतम् ॥ ६५ ॥
एतेनैवचयूषेणचाश्नीयाच्छालिषष्टिकम् ॥
सूतिकोपद्रवंहन्तिभुक्तमात्रन्नसंशयः ॥ ६६ ॥

इति यवाद्यं घृतम् ।

अर्थ-जौ, सूखीमूली, कुलथी और शालिधानों की जड, यह सब २दोसेर लेकर ८ आठसेर जलमें पकावै जब २ दोसेर जल शेषरहै तब उतारकर छान लेवै, पश्चात् इसमें घी और जीरा मिलाकर पकावै,फिर सेंधानोन मिलाकर दोतोले प्रमाण सेवन करै, पश्चात् उक्त यूषके साथ शालि और साठी धानोंका भात भोजन करै तौ सर्व प्रकारके सूतिका रोग दूरहोतेहैं ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥

समूलपत्रक्काथन्तुशतंभद्रोत्कटस्यच ।
वारिद्रोणेनसंसाध्यस्थाप्यंपादावशेषकम् ॥ ६७ ॥
घृतप्रस्थंविपक्तव्यंगर्भंदत्वातुकार्षिकम् ।
व्योषंसपिप्पलीमूलंचित्रकंजीरकन्तथा ॥ ६८ ॥
पंचमूलीकनिष्ठश्चरास्नैरण्डसमायुतम् ।
यवासिन्धुयवक्षारंस्वर्जिकाकृष्णजीरकम् ॥ ६९ ॥
सिद्धमेतद्घृतंसद्योनिहन्यात्सूतिकागदान् ॥ ७० ॥

इति भद्रोत्कटाद्यं घृतम् ।

अर्थ-बकरीकामूत्र ४ चारसेर, क्काथके लिये भद्रमोथेकी जड और पत्र १२॥ साढ़ेबारहसेर, जल ६४ चौंसठसेर, शेष १६ सोलहसेर, और कल्कके लिये सोंठ, मिरच, पीपल, पीपरामूल, लालचीते की जड़ जीरा, स्वल्पपंचमूल, रास्ना, अंडकीजड़, जौ, सैंधानोन, जवाखार, सज्जी और कलाजीरा, यह सब १ एकसेर, इस घृतको सेवन करनेसे अग्निमांद्यादि रोग दूर होतेहैं ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७०॥

पिप्पलीपिप्पलीमूलंचित्रकोहस्तिपिप्पली ।
चव्यंनिशावचाकुष्ठंधान्यंभार्ङ्गीयमानिका ॥ ७१ ॥

व्याघ्रीचेन्द्रयवाःपथ्याबृहतीबिल्वपेषिका।
मरिचानिविडंगानिकल्कैरेतैश्चपादिकैः ॥ ७२ ॥
यवकोलकुलत्थानांनिर्यूहेचचतुर्गुणे।
दधिप्रस्थंपयःप्रस्थंदत्वाप्रस्थोन्मितंघृतम् ॥ ७३ ॥

इति पिप्पल्यादि घृतम्।

अर्थ-गायकाघी ४ चारसेर, दहीचार ४ सेर, दूध ४ चारसेर, यव, वेर और कुलथीका काथ १६ सोलहसेर, तथा कल्कके लिये पीपल, पीपलामूल चीतेकीजड, गजपीपल, चव्य, हलदी, वच, कूठ, धनिया भारंगी, अजवायन, कटेरी, इन्द्रजौ, हरड़, बृहती, वेलकागूदा, कालीमिरच और वायविडंग, यह सब १ एकसेर, इस घृतको पानकरनेसे तथा मलनेसे सर्वप्रकारके सूतिकारोग दूरहोतेहैं ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥

शुण्ठ्याभागोभवेदेकोद्वौभागौमरिचस्यच।
पिप्पल्याश्चत्रिभागंस्यादर्द्धभागश्चरोमकम् ॥ ७४ ॥
जातीकोषस्यभागौद्वौद्वौभागौतुत्थकस्यच।
सिन्धुवारजलेनैवमर्द्दयेदेकयामतः ॥
मधुनासहभोक्तव्यंसूतिकातङ्कनाशनम् ॥ ७५ ॥

इति बृहत्सूतिविनोदरसः।

अर्थ-सोंठ १ एकभाग, मरिचकाली २ दोभाग, पीपल तीनभाग, रोमकलवण अर्द्धभाग, जायफल २ दोभाग, और तूतियाकीभस्म २ दोभाग, सबको एकत्र सम्हालू के रसमें एकप्रहर खरलकर गोली बनालेवै, इसको सहतके साथ सेवनकरनेसे-सूतिकारोग दूर होताहै॥ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥

सक्षीरौवाप्यदुग्धौवादोषान्प्राप्यस्तनौस्त्रियः।
प्रदूष्यमांसरुधिरंस्तनरोगायकल्पते ॥ ७६ ॥
मधुरंचाविवर्णञ्चप्रशमंतत्प्रशस्यते।
तत्रवातात्मकेस्तन्येदशमूलीजलंपिबेत् ॥ ७७ ॥

पित्तदुष्टेऽमृताभीरुपटोलारिष्टचन्दनम् ।
धात्रीकुमारश्चपिबेत्क्वाथयित्वाशराविकम् ॥ ७८ ॥
कफदुष्टेपिबेन्मूत्रंत्रिफलाकटुरोहिणी ।
युक्ताकिराततिक्तेनपिबेद्धात्रीशिशुस्तथा ॥ ७९ ॥
धात्रीस्तन्यविंशुद्धयर्थंमुद्गयूषरसाशनः ॥ ८० ॥

अर्थ–प्रसूतास्त्रीके वातादिदोष दूधसंयुक्त अथवा दूधहीन स्तनों में प्राप्तहो मांस और रुधिरको दूषितकरकै स्तनरोगको उत्पन्न करते हैं। जिस प्रसूता स्त्रीका दूध मधुर, सुन्दरवर्ण और निर्मलहो, उसको शुद्ध स्तन्य जानना। वातके द्वारा दूध दूषितहोवे तो प्रसूतिकाको दशमूलका क्वाथ पिलावै। पित्तसे दूध दूषितहोवै तौ गिलोय, सतावर, पटोल, नीमकी छाल, और लालचंदनका क्वाथ धात्री (धाय) और बालकको पीनेको देवै। प्रसूता स्त्रीका दूध कफसे दूषित होवे तौ त्रिफला, कुटकी और चिरायतेके साथ गोमुत्रको पकाकर धात्री और बालकको पीनेको देवै। मूंगका यूष और मांसरसको पीनेसे भी धायका दूध शुद्ध होजाता है ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥

पिप्पलीपिप्पलामूलंचव्यंशुण्ठीयमानिका ।
जीरकेद्वेहरिद्रेद्वेबिडंसौवर्चलंतथा ॥
एतैरेवौषधैःपिष्टैरारनालंविपाचयेत् ॥ ८१ ॥

इतिवज्रकाञ्जिकम् ।

अर्थ–पीपल, पीपलामूल, चव्य, सोंठ, अजवायन, जीरा, कालाजीरा, हलदी, दारुहलदी, विरिया संचरनोन और कालानोन, इन सब को बारीक पीसकर काँजीमें पकावै, इसको पानकरनेसे स्त्रियोंके दूध शुद्ध होजातेहैं ॥ ८१ ॥

रसगंधककृष्णाभ्रंतदर्द्धंमृतताम्रकम् ।
चूर्णितंमर्दयेद्यत्नाद्धेकपर्णीरसेनच ॥ ८२ ॥
छायाशुष्कावटीकार्याद्विगुंजाफलमानतः ।
क्षीरत्रिकटुनायुक्तासूतिकातङ्कनाशिनी ॥ ८३ ॥

इतिसूतिकारिरसः ।

अर्थ-पारा १ एक भाग, गंधक २ दोभाग, अभ्रक १ एक भाग, और तांवा १॥ डेढ़भाग, सबको एकत्र मण्डूकपर्णिके रसमें खरलकर दोदो रत्तीकी गोली बनाकर छायामें सुखालेवै । प्रतिदिन १ एक गोली खावै और ऊपरसे त्रिकुटेको दूधमें औटाकर पीवै ॥ ८२ ॥ ८३ ॥

जीरकंह्वुषाधान्यंशताह्वावदराणिच ।
यमानीराजिकाहिंगुपत्रिकाकासमर्दकम् ॥८४॥
पिप्पलीपिप्पलीमूलमजमोदाथचाष्पिका ।
चित्रकश्चपलांशानितथाधान्यंचतुष्पलम् ॥ ८५ ॥
कशेरुकंनागरश्चकुष्टंदीप्यकमेवच ।
गुडस्यचशतंदद्याद्घृतप्रस्थन्तथैवच ॥ ८६ ॥
क्षीरद्विप्रस्थसंयुक्तंशनैर्मृद्वग्निनापचेत् ।
पंचजीरकइत्येषसूतिकानांप्रशस्यते ॥ ८७ ॥

इति पञ्चजीरकगुड़ः ।

अर्थ-गुड़ १२॥ साढ़ेबारह सेर, गायकाघी ४ चारसेर, दूध ८ आठ सेर, और जीरा, हाऊबेर, धनिया, सोया, सूखेबेर, अजवायन, राई, हिंगुपत्री, कसौंदी, पीपल, पीपलामूल, अजमोदा, नाड़ी हिंगु, और चीतेकी जड, प्रत्येकका चूर्ण ८ आठ तोले और धनिया, कसेरु, सोंठ, कूठ, और अजवायन प्रत्येकका चुर्ण आधसेर, सबको मिलाकर गुड-पाक करै, इसको सेवन करनेसे स्त्रियोंके सर्व प्रकारके सूतिका रोग दूर होतेहैं ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥

वैयाघ्रतैलदीपाद्भद्रोत्कटकाष्ठपीठभजनाच्च ।
अभिभूयतेकदाचिन्नसूतिकातद्रुगातङ्कैः ॥ ८८ ॥

अर्थ-प्रसूतके घरमें व्याघ्रकातेल दीपकमें जलावै और भद्रोत्कट काठ पीढेपै प्रसूता स्त्रीको बिठलावै । इससे सर्व प्रकारके सुतिका रोग दूर होतेहैं ॥ ८८ ॥

लवङ्गरसगन्धौचयवक्षारंयवाभ्रकम् ।
लोहंताम्रंसीसकञ्चपलमानंसमाहरेत् ॥ ८९ ॥

जातीफलंकेशराजवराङ्गलेपमुस्तकम्।
धातकीन्द्रयवापाठाशृंगीबिल्वंचवालकम्॥ ९० ॥
कर्षप्रमाणंसंचूर्ण्यसर्वमेकत्रकारयेत्।
गंधालिकापत्ररसैरनुपानंप्रदापयेत्॥
सर्वातिसारशमनंसर्वशूलनिवारणम्॥ ९१ ॥
सूतिकारोगहरो रसः।

अर्थ-लौंग, पारा, गंधक, जवाखार जौ, अभ्रक, लोहा, ताँबा और सीसा, प्रत्येकका चूर्ण ४ चारतोले, और जायफल, कुकुरभांगरा, दालचीनी, नागरमोथा, धायके फूल, इन्द्रजौ, पाढ़, काकड़ाशिंगी, वेलकागूदा, और सुगंधवाला प्रत्येकका चूर्ण २ दो तोले, इन सबको एकत्र जलके साथ पीसकर गोली बनालेवै। इस औषधिके सेवन करनेके पश्चात् प्रसारिणीके पत्तोंका रस पीवै। इससे-अतीसार, शूलादि सर्व प्रकारके सूतिका रोग दूर होतेहैं॥ ८९ ॥ ९० ॥ ९१ ॥

इति सूतिकाध्यायः।

इति सूतिकारोगचिकित्सा समाप्ता।

अथ स्तनरोगचिकित्सा।

शोथंस्तनोत्थितमवेक्ष्यभिषग्विदध्यात्
द्विधात्रिधाचविहितंबहुधाविधानम्।
आमेविदह्यतितथैवगतेचपाकं
तस्याःस्तनौसततमेवचनिर्गृहीतम्॥ १ ॥
विशालामूललेपेनहन्तिपीडांस्तनोत्थिताम्।
निशाकनकफलाभ्यांलेपश्चातिस्तनार्त्तिहा॥ २ ॥
कुकुन्दरमेचकमूलंचार्वितमास्यविधारितंजयति।
सप्ताहात्स्तनकाशतुल्यतैकान्ततःकुरुते॥ ३ ॥
तन्मूलंधावयित्वाधारयेन्मुखेरसंपिबेच्च।
निर्वाप्यलोहंपिप्पल्याःपीतःक्काथःस्तनार्त्तिजित्॥ ४ ॥

अर्थ–स्त्रियोंके स्तनोंपर सूजन आजावै तौ दोवार या तीनवार अथवा बहुतवार क्रिया प्रयोग करै । स्त्रियोंके स्तनगत अपक्क अथवा पक्क शोथ रोगकी चिकित्सा करनेके समय सदैव स्तनोंसे दूध निकाल देवै, कदापि त्रुटि न करै। इन्द्रायणकी जडको जलमें पीसकर लेप करनेसे सर्व प्रकारके स्तनरोग दूर होतेहैं। हलदी और धतूरेको एकत्र पीसकर प्रलेप करनेसे सर्व प्रकारकी स्तनोंकी पीड़ा दूर होतीहै। ककरोंदकी जड़को या सैंजिनेकी जड़को जलमें धोकर दाँतोंसे चाबकर रसको मुखमें धारण करनेसे, या पीनेसे–७सात दिनमेंही सर्व प्रकारके स्तनरोग दूर होतेहैं। पीपलके क्वाथमें लोहेको बुझाकर पानकरनेसे–सर्व प्रकारके स्तनरोग दूर होजातेहैं ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥

क्रियांशीतांप्रयुंजीतनस्तनावुपनाहयेत् ॥
पक्केचदुग्धहरणीःपरिहृत्यनाडीः ।
कृष्णंचचूचुकयुगंनिदधीतशस्त्रम् ॥ ५ ॥

स्तनविद्रधिः ।

महिषीभवनवनीतव्याधिवलोग्रातथैवनागवला ।
पिष्ट्वामर्दनयोगात्पीनंकठिनंस्तनंकुरुते ॥ ६ ॥

अर्थ–स्तनरोगमें सदैव शीतल क्रिया प्रयोग करै, कदापि उपनाह स्वेदन देवै। स्तन पक जावैं तौ दुग्ध हरणी नाडीको बचाकर कुचोंके कृष्ण मुखपै नस्तर लगावै। भैंसका माखन, कूठ, खिरैटी, वच और गंगेरन इन सब औषधियोंको एकत्र पीसकर स्तनोंपै मलनेसे दोनों कुचाशूल और कठिन होजातेहैं ॥ ५ ॥ ६ ॥

श्रीपर्णीरसकल्काभ्यांतैलंसिद्धंस्तनोपरि ।
दुलकेनघृतंकुर्यात्पतितावुत्थितौस्तनौ ॥ ७ ॥

इति श्रीपर्णीतैलम् ।

अर्थ–तिलकातेल २ दो सेर, जल आठ ८ सेर कुम्भेरकी छालका रस ८ आठसेर, और कल्कके लिये कुटीहुई कुम्भेरकी छालऽ॥ आधसेर, इस तेलको पका कर स्तनोंमें मलनेसे, अथवा दूलकके साथ घृतको पका कर दोनोंके स्तनोंसे मलनेसे–गिरे हुए स्तन उठ आतेहैं॥७

शीतार्त्तिकेस्तनरोगेपीड़ाभवतिदारुणा।
मूलमेरण्डवृक्षस्यशीततोयेनपेषयेत् ॥ ८ ॥
कफेप्रातिविषाकुष्ठंतोयलेपसुखावहः।
यष्टीनिम्बहरिद्राचनिर्गुण्डीधातकीसमम् ॥ ९ ॥
चूर्णस्तनव्रणेदेयंरोपणंकुरुतेभृशम्।
वचोदुम्बरजाश्वत्थच्युतमर्ज्जुनकत्वचः ॥ १० ॥
जलैश्चतुर्गुणैःक्काथंपादशेषंसमुद्धरेत्।
तेनप्रक्षालयेन्नित्यंव्रणंपूयान्वितंस्तने ॥ ११ ॥
स्तनरुजाप्रशाम्यतिशोणिताकर्षावनात् ॥

अर्थ-शीतार्त्त स्तनरोगमें दारुण पीड़ा उत्पन्न होतीहै। अंडके वृक्षकी जड़को शीतल जलमें पीसकर स्तनोंपै प्रलेप करनेसे शीघ्रही उपरोक्त रोग दूर होताहै। फस्त खुलवानेसेभी स्तनरोग शांत होताहै। कफजन्य स्तनरोगमें अतीस और कूठको जलमें पीसकर स्तनोंपै प्रलेप करै। मुलेठी, नीमकीछाल, हलदी, सह्मालू, और धायके फूल यह सब समान भागले चूर्णकर योजनेसे स्तनोंके घाव भर जातेहैं। वच, गूलरकीछालें, पीपलकी छाल, आमकी छाल और अर्जुनकी छाल, यह सब समान भागले चौगुने जलमें पकावै, जब चतुर्थांश शेष रहै तब उतारकर छान लेवै, इससे राधयुक्त स्तनोंके व्रणोंको धोनेसे विशेष लाभ होताहै ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥

आकाशस्तोपलंभृंगीसर्पाक्षीतिलपुष्पकम् ॥ १२ ॥
लांगलीमेघनादश्चजलेनसहलेपयेत् ॥
अपक्केसर्वदोषोत्थेस्तनपीडादूरंभवेत् ॥ १३ ॥
वलाचातिवलाकुष्ठंवचाचूर्णविलेपयेत् ॥
महिषीनवनीतेनस्तनपीडास्थिराभवेत् ॥ १४ ॥

अर्थ-बरफ, अतीस, सर्पाक्षी (खरहटी), तिलकेफूल, कलिहारी और चौलाई, इनको जलमें पीसकर प्रलेप करनेसे सर्व दोष जात अपक्व स्तनरोग दूर होजातेहैं। खिरैटी, कंघी, कूठ, वच, इनको एकत्र पीस-

कर भैंसके माखनमें मिलाकर प्रलेप करनेसे स्तनोंकी पीड़ा शांत होतीहै ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥

मुण्डीमूलंदशपलंजलेपच्याच्चतुर्गुणे।
अर्द्धशेषंहरेत्क्काथंक्काथार्द्धंतिलतैलकम् ॥ १५ ॥
तैलशेषंभवेत्तच्चनस्येपानेचदापयेत्।
पतितंयौवनंस्त्रीणांमासादुत्तिष्ठतेस्वयम् ॥ १६ ॥

इति मुण्डीतैलम्।

अर्थ-गोरखमुण्डी की जड १० दशपल, पाककेलिये जल ४० चालीशपल, शेष २० पल, और तिलकातेल १० दशपल, सबको मिलाकर पकावै, जबतक तेल शेष नरहै तबतक पकातारहै। इसतेलको नस्य और पानमें व्यवहार करनेसे स्त्रियोंके गिरे हुए स्तन फिर एक महीनेमेंही उठ आतेहैं ॥ १५। १६ ॥

श्यामानिशावलालाजालवणंक्काथयेत्समम्।
तोयेचतुर्गुणेपाच्यंपादशेषंसमाहरेत् ॥ १७ ॥
तिलतैलंक्काथपादंतैलार्द्धमाहिषंघृतम्।
स्नेहशेषंपचेत्तैलंनस्यैश्चमासमात्रकैः ॥
वालास्त्रीवृद्धनारीणांयौवनंकुरुतेध्रुवम् ॥ १८ ॥

इति श्यामाद्यं तैलम्।

अर्थ-तिलकातेल ४ चारसेर, भैंसकाघी २ दोसेर. क्काथके लिये श्यामालता, हलदी, सिरैटी, खीलैं और सैंधानोन, यह सब औषधि १२॥ साढ़ेवारहसेर, जल ६४ चौंसठसेर, शेष १६ सोलहसेर, जब केवल स्नेह बाकीरहै तब उतारलेवै, इसतेलका एकमहीनेतक नास लेनेसे वृद्धा स्त्रीभी फिरसे यौवनवती होजातीहै ॥ १७ ॥ १८ ॥

काशीशतुरगगंधासावरगजपिप्पलीविपक्केन।
तैलेनयान्तिवृद्धिंस्तनवर्णवरांगलिंगानि ॥ १९ ॥

सावरोलोध्रः।

अर्थ-हीराकसीस, असगंध, लोध और गजपीपलके साथ तेलको पकाकर नासलेनेसे स्त्रियोंके स्तन, कर्ण और योनि बढ़तीहै ॥ १९ ॥

प्रथमर्त्तौतण्डुलांस्त्रीनस्यंकुर्यात्स्तनौस्थिरौ।
दीपास्यभस्मतास्यानांविष्टान्नबहुलौस्तनौ ॥ २० ॥
घोलेनमाधवीमूलंपीतंस्त्रीमध्यकार्श्यकृत् ॥ २१ ॥

अर्थ-प्रथम ऋतुकालमें स्त्रियें वायविडंगका नास लेनेसे दोनोंस्तन बहुत दिनोंतक दृढ़ रहतेहैं। दीपकके मुखकी भस्मके द्वारा नासलेनेसे स्त्रियोंके दोनों स्तन ऊंचेहोजातेहैं। माधवी लताकी जड़को घोलमें पीसकर पानकरनेसे स्त्रियोंके मध्यदेश क्षीण होजाते हैं और स्तन बढ़जातेहैं ॥ २० ॥ २१ ॥

शववहनास्थितबंधनरज्वासंताडनाद्धिदयितेन।
नश्यत्यबलाद्वेषःपत्यौसहजःकृतोऽथवायोगैः ॥ २२ ॥
दत्त्वैवदुग्धभक्तंविप्रायोत्पाट्यासितबलामूलं।
पुष्पेकन्यापिष्टंदत्तमनिच्छांहन्तिनिश्चितम् ॥
स्वामिपादोदकंपीत्वानारीवशीभूतोभवेत् ॥ २३ ॥

इति स्त्रीरोगाध्यायः।

अर्थ-मुरदेकी अर्थीकी रस्सीसे पति स्त्रीको मारे तौ पतिमें स्त्रीकी अनिच्छा नहीं होतीहै। ब्राह्मणको दुग्धान्न भोजन कराकर पश्चात् पुष्य नक्षत्रमें सफेद खिरैटीकी जड़को उखाड़ घीकारमें पीसकर सेवन करनेसे स्त्रियोंकी पतिमें अनिच्छा नहीं उत्पन्न होतीहै स्वामीके पादोदकको पीनेसेभी स्त्रियोंकी पतिमें अनिच्छा उत्पन्न नहीं होतीहै ॥

इति स्त्रीरोगाऽध्यायः समाप्तः।

अथबालरोगचिकित्सामाह।

त्रिविधःकथितोबालःक्षीरान्नोभयवर्त्तकः ॥ १ ॥
स्वास्थ्यंताभ्यामदुष्टाभ्यांदुष्टाभ्यांरोगसम्भवः ॥
क्षीरपथ्यौषधंधात्र्याःक्षीरान्नादस्यतोभयोः ॥ २ ॥
अन्नादस्यशिशोर्देयमौषधंभिषजासदा ॥
यथादोषंस्तनौलिप्त्वाचौषधंपाययेच्छिशुम् ॥ ३ ॥
मात्रयालंघयेद्धात्रीशिशोर्नोक्तंविशोधनम् ॥

सर्वंनिवार्यतेबालेस्तन्यंनप्रतिवार्य्यते ॥ ४ ॥
स्तन्यभावेपयश्छागंगव्यंवातद्गुणंपिबेत् ॥ ५ ॥

अर्थ-बालक तीन प्रकारके होतेहैं । पहिले दूध पीनेवाले, दूसरे दूध और अन्नको खानेवाले और तीसरे अन्नको खानेवाले होतेहैं । दूध और अन्नके दूषित न होनेसे बालक निरोगी रहतेहैं, दूध, और अन्नके दूषित होनेसे बालक रोगी होजातेहैं । इस कारण बालकोंको सदैव अदूषित दूध और अन्न भोजनार्थ देवै । दूधको पीनेवाले और दुग्ध तथा अन्न दोनोंको खानेवाले बालकोंकी धाय (दूध पिलानेवाली) को दूध और अन्नका पथ्य देवै । अन्नको खाने वाले बालकको औषधि देवै । धाय या माताके स्तनोंपै औषधिको लेपकर बालकोंको पिलावै । बालकके रोग उत्पन्न होय तौ बालककी धात्री (माता या धाय) को लंघन करावै, और बालकको दस्त न करावै, बालकको सर्व वस्तुओंसे वर्ज्यकर करै, परन्तु दूधपीना कदापि वर्जित न करै, कारण यहहै कि-दूध बालकका जीवनहै, और विना दूधके बालकोंके प्राण नष्ट होजातेहैं । जो माता या धायके दूधका अभाव होय तौ बकरीका दूध या गायका दूध पिलावै ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥

योबालोऽचिराज्जातःस्तनंनगृह्णातिनसहसैव ।
धात्रीमधुघृतंपथ्याकल्केनोद्घर्षयेजिह्वां ॥ ६ ॥
मृत्पिण्डेनाग्नितप्तेनक्षीरासिक्तेनसोष्मणा ।
स्वेदयेदुत्थितांनाभिंशोथस्तेनोपशाम्याति ॥ ७ ॥
दुग्धेनच्छागशकृतानाभिपाकेऽवचूर्णयेत् ।
त्वक्चूर्णैःक्षीरिणांवापिकुर्याच्चन्दनरेणुना ॥ ८ ॥
नाभिपाकेनिशालोध्रप्रियंगुमधुकैःशृतम् ।
तैलमभ्यंजनेशस्तमेभिर्वाप्यवचूर्णनम् ॥ ९ ॥
मूर्वाव्योषवचाकोलजम्बूत्वक्दारुसर्षपाः ।
सपाठामधुनालीढास्तन्यदोषानिबर्हणाः ॥ १० ॥

अर्थ-बहुत दिनोंका बालक दूध न पीवै तौ आमला, सहत, घृत

और हरड़का चूर्ण इनको एकत्र करकै बालककी जिह्वाको घिसे। मट्टीके पिंडको अग्निमें गरम करकै दूधमें बुझालेवै, पश्चात् गरमागरम उसको बालककी उत्थित नाभिपै स्वेद देनेसे सूजन दूर होजातीहै। दूधके साथ बकरीकी विष्ठाको या वटादि क्षीर वृक्षोके छालके चूर्णको अथवा लाल चंदनके चूर्णको नाभिपै घिसनेसे नाभिपाक दूर होताहै। हलदी, लोध, फूलप्रियंगु और मुलेठी इनके साथ तेलको पकाकर नाभि पै मलनेसे अथवा उक्त औषधियोंके चूर्णको नाभिसे घिसनेपर निश्चय नाभिपाक दूर होताहै। मूर्वा, सोंठ, पीपल, मिरच वच, वेर, जामुनकी छाल, देवदारु, सरसों, और पाढ, इन सबका चूर्ण सहतमें मिलाकर बालकको चटानेसे स्तन्यरोग दूर होताहै ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥

प्रियंगवश्वसिन्धूत्थंमधुनालेहयेच्छिशुम्।
क्षीरामयंनिहन्त्याशुविडंगेनयुतंक्रिमीन् ॥ ११ ॥
तैलस्यभागमेकंमूत्रस्तुद्वौद्वौचशिम्बिदलरसस्य।
छागंपयश्चतुर्गुणमेवंदत्वापचेत्तैलम् ॥ १२ ॥
तैलाभ्यंगःसततंरोगमनासकाख्यमपहराति।
अर्कजदुग्धकमाविकरोमाण्यादायकेशराजस्य ॥ १३ ॥
स्वरसेनाक्तेवस्त्रेकृत्वावर्त्तिश्चतैलाक्तम्
तज्जातकज्जललांछितलोचनयुगलोऽप्यलंकृतोवालः १४
कष्टमनासकरोगंभूतादिकंचापि।
लाजांजनसिताब्रह्मीमधुश्लक्ष्णकचूर्णितैः॥
बालस्यलेहमधुनादेयःसर्वज्वरापहः ॥ १५ ॥

अर्थ—फूलप्रियंगु और सैंधेनोनका चूर्ण सहतमें मिलाकर बालकको चटानेसे स्तन्यरोग दूर होताहै। तथा वायविडंगका चूर्ण सहतमें मिलाकर बालकको चटानेसे बालकोंका कृमिरोग दूर होताहै। तेल १ एक भाग, गोमूत्र २ दो भाग, सेमके पत्तोंका रस २ दो भाग, और बकरीका दूध ४ चार भाग, इन सबको एकत्र करकै पकावै, इस तेलको मलनेसे—बालकोंका अनासक रोग दूर होताहै। आकका दूध और

भेड़के रोम कुकुरभांगरेके रसमें मिलाकर वस्त्रपै लेपकर देवै, पश्चात् उस वस्त्रकी बत्ती बनाकर तेलमें भिजो लेवै, उन बत्तियोंके काजलको बालककी आखोंमें लगानेसे अनासक रोग और भूतादि जनक सम्पूर्ण दोष दूर होजातेहैं। खीलैं, अंजन, बूरा और ब्रह्मीको एकत्र पीसकर सहतमें मिलाकर बालकको चटानेसे सर्वप्रकारके ज्वर दूर होजातेहैं ॥ ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥

ह्त्वैकदातिशरणंवमनंतथैवध्मानघूर्णनरुजश्चशिशोर्विधाय।
यःश्वासमात्रपरिरक्षितजीवयोगा
रोगावधूभिरुदितःसहिचोरनामा ॥ १६ ॥
शीर्षांघ्रिहस्ततलयोःसितकुक्कुटाण्ड
मज्जाघृतोहरतिचोरकरोगमाशु।
एवंनशाम्यातिशिशुंपरिपालयेत्तं
पूतात्मनाकिलविधेयमिदंजलेन ॥ १७ ॥
भद्रमुस्ताभयानिम्बपटोलामलकैःकृतः।
क्वाथःसोष्णोम्बुबालानामशेषज्वरनाशनः ॥ १८ ॥
कफकोपज्वरेरुच्यांप्रतिश्याश्वासकासके।
चूर्णतिक्तापंचकोलंलिह्यान्मधुघृतप्लुतम् ॥ १९ ॥

अर्थ–एक साथ बालक, अतीसार, वमन, आध्मान और घूर्ण रोगमें जड़ताको प्राप्त होजाय, केवल श्वासही बाकी रहजाय और मृतकसमान दीखै, उसको चोरकरोग कहतेहैं। इस रोगवाले बालकके मस्तकमें, पाँवोंमें और हाथोंमें सफेद मुरगेके अंडेकी मज्जाको मले, इससे निश्चय चोरक रोग दूर होताहै। जो इससे यह रोग दूर न होवै तौ पवित्र साधु बालकको जल प्रदानादि करकै पालन करै। नागरमोथा, या हरड, नीमकी छाल, पटोल और आमला इनका गरमागरम क्वाथ पान करानेसे बालकोंका ज्वर दूर होताहै। कुटकी और पंचकोलका चूर्ण सहत और घृतमें सानकर बालकोंको चटानेसे-ज्वर, अरुचि, प्रतिश्याय, श्वास और खाँसी दूर होतीहै ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥

श्रृंगींसमुस्तातिविषांविचूर्ण्य
लेहंविदध्यान्मधुनाशिशूनाम् ।
कासज्वरच्छर्द्दिभिरर्दितानां
समाक्षिकांचातिविषांमुथैकाम् ॥ २० ॥
हरिद्राद्वययष्टयाह्वासिंहीशक्रयवैःकृतः ।
शिशोर्ज्वरातिसारघ्नःकषायःस्तन्यदोषजित् ॥ २१ ॥

अर्थ-काकड़ाशिंगी, नागरमोथा, और अतीसका चूर्ण सहतके साथ सेवन करनेसे, अथवा अतीसका चूर्ण या नागरमोथेका चूर्ण सहतमें मिलाकर चाटनेसे बालकोंके खाँसी, ज्वर और वमनादि रोग दूर होतेहैं। हलदी, दारुहलदी, मुलेठी, पिठवन और इन्द्रजौका क्वाथ पीनेसे-बालकोंके सर्व प्रकारके ज्वर दूर होतेहैं ॥ २० ॥ २१ ॥

घनकृष्णारुणाश्रृंगीचूर्णंक्षौद्रेणसंयुतम् ।
बालचातुर्भद्रिका ॥ २२ ॥

अर्थ-नागरमोथा, पीपल, अतीस, और काकड़ाशिंगी, इनका चूर्ण कर सहतमें मिलाकर चाटनेसे बालकोंके ज्वरादि रोग दूर होतेहैं ॥२२

पारसीययमानिकाघनकणाश्रृंगीविडंगारुणा ।
चूर्णंश्लक्ष्णतरंविलीढमपितत्क्षौद्रेणसंयोजितम् ॥ २३ ॥
सर्पत्वक्शिशपारिष्टपल्लवैरजनीवचा ।
रसोनहिंग्वजालोमश्रृंगीमरिचमाक्षिकैः ॥ २४ ॥
धूपःसर्वज्वरघ्नोऽयंकुमाराणांग्रहापहः ।
पत्रैर्बदरचांगेरीकाकमाचीकपित्थजैः ॥ २५ ॥
शिशोरुग्राण्यतीसारनाशनंमूर्द्धलेपनम् ।
सुवर्णगैरिकस्यापिचूर्णानिमधुनासह ॥
लीढ्वासुखमवाप्नोतिक्षिप्रंहिक्कार्दितःशिशुः ॥ २६ ॥

अर्थ-खुरासानी अजवायन, नागरमोथा, पीपल, काकड़ाशिंगी, वायविडंग, और अतीस, इनका चूर्णकर सहतमें मिलाकर चाटनेसे

कासादिरोग दूर होतेहैं । साँपकी कैंचली, सीसम, नीमके पत्ते, बच, हलदी, लसुन हींग, बकरीके रोम, काकडासिंगी, कालीमिरच, और सहत इनकी धूप देनेसे बालकोंके सर्व प्रकारके ज्वरादि रोग दूर होतेहैं। बेरी, चांगेरी, मकोप, और कैथ इनके पत्तोंको पीसकर मस्तकपै प्रलेप करनेसे बालकोंका अतीसार दूर होताहै।पीले गेरूका चूर्ण सहतमें मिलाकर चाटनेसे बालकोंकी वमन दूर होतीहै ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥

धातुकीबिल्वधान्याकलोध्रेन्द्रयवबालकः ।
लेहःक्षौद्रेणबालानांज्वरातिसारवान्तिनुत् ॥ २७ ॥
रजनीदारुसरलश्रेयसीबृहतीद्वयम् ।
पृश्निपर्णीशताह्वाचलीढंमाक्षिकसर्पिषा ॥ २८ ॥
मधुसर्पिर्युतंचूर्णंत्रिफलाव्योषलवणम् ।
लीढ्वानिवारयत्याशुगात्रशोथज्वरंशिशोः ॥ २९ ॥
जीर्णज्वरंशिशूनांलीढ़ातैलेनकेशराजजटा ।
हरतितथातिसारंपटुदशनाढ्चोरसःपीतः ॥ ३० ॥

अर्थ—धायकेफूल, बेलकीगिरी, धनिया, लोध, इन्द्रजौ और सुगंधवाला, इनको एकत्र पीसकर सहतमें मिलाकर सेवन करनेसे बालकोंके ज्वरादि रोग दूर होतेहैं । हलदी, देवदारु, धूपसरल, गजपीपल, कटाई, कटेरी, पिठवन और सोया, इनको एकत्र पीसकर सहत और घृतमें मिलाकर चाटनेसे बालकोंके संग्रहणी आदि रोग दूर होतेहैं । हरड़, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल और सैंधानोन, समान लेकर सहत और घृतमें मिलाकर चाटनेसे बालकोंके शरीरकी सूजन और ज्वर दूर होताहै ॥ कुकुरभांगरेकी जड़को तेलके साथ सेवन करनेसे बालकोंका पुराना ज्वर दूर होताहै । चूकाके रसमें सैंधानोन डालकर पीनेसे बालकोंके अतीसार दूर होतेहैं ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥

नागरातिविषामुस्तबालकेन्द्रयवैःशृतम् ।
कुमारंपाययेत्प्रातःसर्वातीसारनाशनः ॥ ३१ ॥
कपित्थस्वरसःक्षौद्रलाजचूर्णसमान्वितः ।

पेयःसर्वातिसारघ्नःकुमाराणांविशेषजित् ॥ ३२ ॥
समंगाधातुकीलोध्रशारिवाभिःशृतंजलम् ।
सिन्दूरानलकुष्ठमुस्तमरिचैःशृंगीवटस्याग्रजैः ॥ ३३ ॥
पाठागंधककाचटंगणविषाविश्वौषधीकट्फलैः ।
कुचीसर्ज्जककोलबीजकुनटीबिल्वेन्द्रलोध्रैस्तथा ॥ ३४ ॥
लाजाऽजाजीयुगैःसचंदनयुतैःसश्रेयसीचूर्णितैः ।
लेहःक्षुद्रविनिर्मितोहरातिवैपश्चाद्रुजंदुस्तरम् ॥ ३५ ॥

सिन्दूरादिलेहः ।

अर्थ-सोंठ अतीस नागरमोथा, सुगंधवाला और इन्द्रजौ इनका काथ बालकोंको पिलानेसे अतीसार दूर होताहै । कैथका स्वरस, सहत और खीलोंका चूर्ण एकत्र सेवन करनेसे बालकोंका अतीसार दूर होताहै । मजीठ, धायके फूल, लोध और श्यामालता इनका काथ सहत डालकर पीनेसे बालकोंके सर्व प्रकारके अतीसार दूर होतेहैं । सिंदूर, चीतेकी-जड़, कूठ, नागरमोथा, काली मिरच, काकड़ाशिंगी, बड़के अंकुर, पाढ़, गंधक, काँच, सुहागकी खीलें, अतीस, सोंठ, कायफल, राल, बेलकी-गिरी, गेरू, बेलकागूदा, इन्द्रजौ, लोध, खीलें, जीरा, कालाजीरा, लालचंदन, और गजपीपल, इन सबका चूर्ण करके सहतमें मिलाके चाट-नेसे बालकोंके अतीसारादि रोग दूर होतेहैं ॥३१॥३२ ॥३३॥३४॥३५॥

मूलत्वचंवत्सकस्यपलमेकंसुकुट्टितम् ।
अष्टभागंजलंदत्वाचतुर्भागावशेषितम् ॥ ३६ ॥
अतिविषाचपाठाचजीरकंबिल्वमेवच ।
आम्रास्थिशतपुष्पाचधातुकीमुस्तकंतथा ॥
जातीफलंचसंचूर्ण्यनिक्षिपेत्तत्रयत्नतः ॥ ३७ ॥

बालकुटजावलेहः ।

अर्थ-४ चार तोले कुड़ेकी छालको ३२ बत्तीससेर जलमें पकावै, जब आठतोले जल शेष रहै तब उतारकर छानलेवै । फिर अग्निपै रखके पकावै, जब पकते २ गाढा होजाय तब उसमें अतीस

पाढ़, जीरा, बेलका गूदा, आमकी गुठली, सोया, धायके फूल, नागरमोथा, और जायफलका चूर्ण डालकर खूब मिलादेवै । इस औषधिको सेवन करनेसे बालकोंका आमशूल और रक्तभेद दूर होताहै ॥३७॥३८॥

व्योषाभयावत्सकदीप्यकञ्च
कैटर्य्यमुस्ताविजयासमांसकः ।
घृतेनवाशर्करयासमेतं
सामातिसारंहरतिक्षणेन ॥ ३८ ॥
त्रिकटुवचयमानीगंधपाषाणकुष्ठं
सनिशरजनीपुष्पंजीरकेकाचकञ्च ।
कुलिरकनकबीजंतालसिन्धुंशिलांच
वनजलशुनहिंगुंमूलमैशश्चटंकम् ॥ ३९ ॥
समनृपतिविडंगन्तुल्यभागंगृहीत्वा
द्दषादिमसृणपिष्टंवस्त्रपूतंविधाय ।
ग्रहजनितशिशूनांक्षीरपानांशिशूनां
शमयतिजठरोत्थाजीर्णविष्टम्भकार्यम् ॥ ४० ॥

इति नागार्जुनचूर्णम् ।

अर्थ–सोंठ, पीपल, कालीमिरच, हरड़, कुड़ेकीछाल, अजवायन, कायफल, नागरमोथा, और भांगकाचूर्ण, घृत अथवा बूराके साथ सेवन करनेसे बालकोंके आमातीसार दूर होताहै । सोंठ, मिरच, पीपल, बच, अजवायन, गंधक, कूठ, हलदीके फूलोंसमेत हलदी, कालाजीरा, सफेद जीरा, काच, काकडाशिंगी, कनकधतूरेके बीज, हरिताल, सैंधानोन, मैनशिल, नागरमोथा, लसुन, हींग, ईखकी जड़, सुहागा, सैंजिनेकेबीज, और वायविडंग, इन सबका चूर्णकर मधु आदि अनुपानके साथ सेवन करनेसे बालकोंके सर्व प्रकारके ज्वर अतिसारादि रोग दूर होतेहैं ॥ ॥ ४० ॥ ३९ ॥ ४० ॥

द्राक्षापिप्पलिशुण्ठीनांचूर्णक्षौद्रेणसार्पषा ।
लीढंनिवारयत्याशुकासंपंचविधंशिशोः ॥ ४१ ॥

धान्यंशर्करयायुक्तंतण्डुलोदकसंयुतम् ।
पानमेतत्प्रदातव्यंकासेपंचविधेशिशोः ॥ ४२ ॥
बिल्वमूलकषायेनलाजाचैवसशर्करा ।
आलोड्यपाययेद्बालंछर्द्यतीसारनाशनम् ॥ ४३ ॥

अर्थ-दाख, पीपल, और सोंठका चूर्णकर सहतमें मिलाकर सेवन करनेसे बालकोंके पांच प्रकारकी खाँसी दूर होजातीहै । धनिया और शर्करा चावलोंके जलके साथ पीनेसे बालकोंका कास रोग दूर होताहै । बेलकी जड़के क्काथमें खीलोंका चूर्ण और बूरा मिला आलोडन कर बालकोंको पिलानेसे वमन और अतीसार दूर होताहै ॥४१॥४२॥४३॥

समंगोत्पलकिंजल्कंसंपिष्टंतण्डुलाम्बुना ।
मत्स्यण्डीमधुसंयुक्तंज्वरातीसारनाशनम् ॥ ४४ ॥
ह्रीवेरशर्कराक्षौद्रंपीतंतण्डुलवारिणा ।
शिशोरक्तातिसारघ्नंतृट्छर्दिज्वरनाशनम् ॥ ४५ ॥
मरिचमहौषधकुटजंद्विगुणीकृत्यउत्तरोत्तरतः ।
गुड़तक्रयुतमेतद्ग्रहणीरोगंनिहन्त्याशु ॥ ४६ ॥
लाजासयष्टीमधुकंशर्कराक्षौद्रमेवच ।
तण्डुलोदकसंपीतंक्षिप्रंहन्तिप्रवाहिकाम् ॥ ४७ ॥

अर्थ-वराहक्रान्ता, उत्पल, कमलकेसर, इनको एकत्र चावलोंके जलमें पीसकर मिश्री और सहत मिलाकर बालकोंको पिलानेसे-ज्वरातिसार दूर होताहै । सुगंधवाला, बूरा और सहत एकत्र चावलोंके जलकेसाथ पीनेसे बालकोंके रक्तातिसार, प्यास, वमन और ज्वर नष्ट होजाताहै । मिरच १ एक भाग, सोंठ २ भाग, और कुडेकी छाल ४ चार भाग, इनका एकत्र चूर्णकर गुड़ और तक्रके साथ सेवन करनेसे बालकोंका संग्रहणी रोग दूर होताहै । खीलैं, मुलेठी, बूरा और सहत इनको चावलोंके जलके साथ पीनेसे बालकोंका प्रवाहिका रोग दूर होताहै ॥४४॥ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥

चंदनंशारिवेद्वेचशंखनाभिसमायुतैः ।
पश्चाद्गुजेप्रलेपोऽयमलेहस्तुप्रशस्यते ॥ ४८ ॥
गुदपाकेतुबालानांपित्तघ्नींकारयेत्क्रियाम् ।
रसांजनंविशेषेणपानालेपनयोर्हितम् ॥ ४९ ॥
पीतंपीतंवमेद्यस्तुस्तन्यंतंमधुसर्पिषा ।
द्विवार्त्ताकीफलरसंपंचकोलंचलेहयेत् ॥ ५० ॥

अर्थ-लालचंदन, दोनों प्रकारकी शारिवा और शंखनाभि इनको एकत्र जलमें पीसकर लेपकरनेसे अथवा इनका अवलेह बनाकर सेवन करानेसे बालकोंका पश्चाद्गुज दूर होताहै । बालकोंके गुदपाक रोगमें पित्तघ्नी क्रिया व्यवहार करै। रसौतका पिलानेसे और रसौतका प्रलेप करनेसे बालकोंका गुदपाक रोग दूर होताहै । जो बालक वारंवार दूध पीकर वारंवार वमन करदेतेहैं, उनको बृहतीका रस, कटेरीका रस, पंचकोलका चूर्ण, सहत और घृत, यह सब एकत्र मिलाकर चटावे तौ दूध डालना बंद होताहै ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥

आम्रास्थिलाजासिन्धूत्थैर्लेहःक्षौद्रेणछर्दिनुत् ।
कोलास्थिमध्यंसोदीच्यंचन्दनंमधुशर्करा ॥ ५१ ॥
भृष्टोमूर्त्तिरसंयुक्तंपीतंछर्दिहरंशिशोः ।
ज्वलितवटकाष्ठमम्भासिबहुधानिर्वाप्यकारितंपीतम् ५२
हरतिश्वसनंछर्दिमभयामपिमात्रंयद्दत्तम् ।
सोऽपिसमधुलोध्रसंयुक्तंछर्दिरोगंजयेद्द्रुतम् ॥ ५३ ॥
पुष्करातिविषाशृंगीमागधीधन्ययासकैः ।
चूर्णितैर्मधुनालेहःशिशूनांपंचकासनुत् ॥ ५४ ॥

अर्थ-आमकी गुठली, खीलें और सैंधेनोनका चूर्ण सहतमें मिलाकर चटानेसे बालकोंकी वमन दूर होतीहै । बेरकी गिरी, सुगंधवाला, और लालचंदनका चूर्ण सहत और बूरामें मिलाकर सेवन करनेसे बालकोंकी वमन दूर होतीहै ॥ बडकी जलती हुई लकडियोंको बहुत बार ज-

लमें बुझाकर उस जलको पिलानेसे अथवा हरड़का चूर्ण और लोधका चूर्ण सहतमें मिलाकर चटानेसे बालकोंकी वमन और श्वास दूर होजाती है। पोहकरमूल, अतीस, काकड़ाशिंगी, पीपल और धमासा इनका एकत्र चूर्णकर सहतमें मिलाकर चटावे तौ बालकोकी खाँसी दूर होतीहै ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥

पिप्पलीमरिचानान्तुचूर्णसमधुशर्करम्।
रसेनमातुलुंगस्यहिक्काछर्दिनिवारणम् ॥ ५५ ॥
दाडिमस्यतुबीजानिजीरकंनागकेसरम्।
चूर्णितंशर्कराक्षौद्रंलीढंतृष्णाहरंशिशोः ॥ ५६ ॥
कणोषणसिताक्षौद्रसूक्ष्मैलासैंधवैःकृतः।
मूत्रग्रहेप्रयोक्तव्यंशिशूनांलेहउत्तमः ॥ ५७ ॥
पटोलत्रिफलारिष्टहरिद्राक्कथितंपिबेत्।
क्षतवीसर्पविस्फोटज्वराणांशान्तयेशिशोः ॥ ५८ ॥

अर्थ-पीपल और कालीमिरचोंका चूर्ण, बुरा और विजोरेनींबूके रसमें मिलाकर पीनेसे बालकोंकी वमन और हिचकी दूर होतीहै। अनारदाना, जीरा, और नागकेसर, इनको एकत्र पीसकर बूरा और सहतमें मिलाकर चटानेसे बालकोंकी प्यास दूर होतीहै। पीपल, कालीमिरच, बूरा, सहत, सैंधानोन, और छोटी इलायची इनका लेह बनाकर बालकोंको चटानेसे मूत्रग्रह (पिसाबकाबंद होजाना) दूर होताहै। पटोल, हरड़, बहेड़ा, आमला, नीमकीछाल और हलदी इनका क्काथ बनाकर पिलानेसे बालकोंके क्षत, विस्फोटादिरोग दूर होतेहैं ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥

पथ्याकुष्ठवचाचूर्णमधुतैलयुतंपिबेत्।
ग्रीवादार्व्यकरंश्रेष्ठंतालुकण्टकनाशनम् ॥ ५९ ॥
तालुपाकेयवक्षारंमधुनाप्रतिसारणम्।
सैंधवाङ्गारयोश्चूर्णंमुखविस्रावणेहितम् ॥ ६० ॥
अथवादधिफेनञ्चसैंधवेनसमायुतम्।

मुखपाकेतुबालानांसाम्रसारमयोरजः ॥ ६१ ॥
गैरिकक्षौद्रसंयुक्तंभेषजंसरसांजनम् ।
केवलेनाप्यनेनमधुनालेहइतिवृद्धाः ॥
अश्वत्थवल्कलक्षौद्रैर्मुखपाकेप्रलेपनम् ॥ ६२ ॥

अर्थ-हरड़, कूठ और वचका चूर्ण, सहत और तेलके साथ पिलानेसे बालकोंकी ग्रीवा दृढ होतीहै, तथा तालुकण्टकरोग दूर होता है । जवाखारका चूर्ण सहतमें मिलाकर उससे बालकोंके तालुको घिसनेसे बालकोंका तालुपाक रोग दूर होताहै । सैंधेनोनकाचूर्ण-और अंगारोंका चूर्ण बालकोंको देनेसे मुखविस्रावण (लारका गिरना) दूर होताहै । आमकीमींग, लोहा, गेरू और रसौत, यह सब द्रव्य समान भाग लेकर सहतमें मिलाकर चटानेसे बालकोंका मुखपाक रोग दूर होताहै । पीपलकी छालके चूर्णमें सहत मिलाकर प्रलेप करनेसे बालकोंका मुखपाक रोग दूर होताहै ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥

दार्वीयष्ट्यभयाजातीपत्रक्षौद्रैस्तथापरम् ।
जातीपत्ररसःपूतःक्षौद्रयुक्तःप्रशस्यते ॥ ६३ ॥
शिशोःकर्णव्रणस्रावेमुखपाकेचशस्यते ।
शारिवा तिललोध्राणांकषायोमधुकस्यच ॥ ६४ ॥
विस्राविते मुखेशस्तंधारणार्थंशिशोःसदा ।
हरिद्रानिम्बपत्राणिमधुकंलोध्रमुत्तमम् ॥ ६५ ॥
तैलमेभिर्विपक्तव्यंमुखपाकहरंपरम् ।
सहजम्बीररसेनस्नुग्दलरसघर्षणंसद्यः ॥
द्रुतमुपहन्तिहिपाकंमुखगंबालस्यचाश्वेव ॥ ६६ ॥

अर्थ-दारुहलदी, मुलेठी, हरड़, और चमेलीके पत्ते इनको पीसकर सहतमें मिलाके प्रलेप करनेसे अथवा चमेलीके पत्तोंके रसमें सहत मिलाकर प्रयोग करनेसे बालकोंके कानका बहना और मुख पाकरोग दूर होताहै । अनन्त मूल, तिल, लोध और मुलेठी इनका क्वाथ मुखमें कवल रूपसे धारण करनेसे बालकोंका मुखस्राव दूर होताहै । हलदी-

नीमकेपत्ते, मुलेठी, लोध और उत्पल, इनके साथ तेलको पकाकर प्रयोग करनेसे बालकोंका मुखपाकरोग दूर होताहै। जम्भीरी नींबूका रस और थूहरके पत्तोंका रस दोनोंको मिलाकर मुखमें घिसनेसे–बालकोंका मुखपाकरोग दूर होताहै ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥

द्राक्षासशर्करंशुण्ठीजीवन्तीजीरकंवला।
शठीदुरालभाबिल्वंदाडिमंसुरसःस्थिरा ॥ ६७ ॥
मुस्तंपुष्करमूलंचसूक्ष्मैलागजपिप्पली।
एषांकर्षसमैर्भागैःघृतप्रस्थंविपाचयेत् ॥ ६८ ॥
कषायेकण्टकार्यांतुक्षीरेतस्माच्चतुर्गुणे।
एतत्कुमारकल्याणंघृतरत्नंसुखप्रदम् ॥ ६९ ॥

इति कुमारकल्याणघृतम्।

अर्थ–गायका घी २ दो सेर, कटेरीका स्वरस २ दो सेर, गायका दूध ८ आठसेर, और कल्कके लिये–दाख, बूरा, सोंठ, जीवन्ती, जीरा, खिरैटी, कचूर, धमासा, बेल, अनारकी छाल, तुलसी, शालिपर्णी, नागरमोथा, पोहकर मूल, छोटी इलायची, और गजपीपल, प्रत्येक दोदो तोले, यथाविधिसे घृतको सिद्ध करै। यह कल्याणकुमार घृत बालकोंको सुखदेनेवालाहै। और सर्व रोग शोकोंको हरनेवालाहै ॥ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥

वचाकुष्ठंतथाब्राह्मीसिद्धार्थकमथापिवा।
शारिवासैन्धवंचैवपिप्पलीविल्लमुस्तकम् ॥ ७० ॥
मेध्यंघृतमिदंसिद्धंपातव्यंचदिनेदिने।
दृढस्मृतिःक्षिप्रमेधाःकुमारोबुद्धिमान्भवेत् ॥ ७१ ॥

इति अष्टमंगलं घृतम्।

अर्थ–उत्तम गायका घी २ दो सेर, जल आठ ८ सेर, तथा कल्कके लिये वच, कूठ, ब्रह्मी, सफेदसरसों, अनन्तमूल, सैंधानोन, पीपल, वायविडंग और नागरमोथा, यथाविधिसे घृतको पकावै। यह अष्टमंगल घृत–बालकोंको प्रतिदिन पिलावै, इससे बालकोंकी मेधा बढतीहै, स्मरणशक्ति दृढ़ होतीहै और बुद्धिमान् होतेहैं ॥ ७० ॥ ७१ ॥

लाक्षारससमंसिद्धंतैलमस्तुचतुर्गुणम् ।
रास्नाचन्दनकृष्णाब्दवाजिगंधानिशायुगैः ॥ ७२ ॥
शताह्वादारुयष्ट्याह्वमूर्वातिक्ताहरेणुभिः ।
बालानांज्वररक्षोघ्नमभ्यंगात्बलवर्णकृत् ॥ ७३ ॥

इति लाक्षादितैलम् ।

अर्थ-तिलका तेल २ दो सेर, लाखका काथ २ दो सेर, दहीकातोड़ ८ आठसेर, तथा कल्कके लिये रास्ना, लालचंदन, पीपल, नागरमोथा, असगंध, हलदी, दारुहलदी, सोया, देवदारु, मुलेठी, मूर्वा, कुटकी और रेणुका प्रत्येक दोदो तोले । इस तेलको यथाविधिसे पकाकर मलनेसे बालकोंके ज्वरादि रोग दूर होतेहैं। तथा बल और वर्णकी वृद्धि होतीहै ॥ ७२ ॥ ७३ ॥

महामुण्डीतकोदीच्यक्काथस्नानंग्रहापहम् ।
श्वेतापराजितामूलंनिम्बपत्राणिसर्षपः ॥ ७४ ॥
भूर्ज्जपत्रंवचासर्पिर्धूपःसर्वग्रहापहः ।
तथाग्रहघ्नान्नस्यांश्चमंत्राञ्छृणुशिवोदितान् ॥ ७५ ॥
अंगादंगात्सम्भवसिहृदयादभिजायसे ।
आत्मावैत्रनामासिसंजीवशरदांशतम् ॥ ७६ ॥
शतायुःशतवर्षोऽसिदीर्घमायुरवाप्नुहि ।
नक्षत्राणिदिशोरात्रिरहश्चत्वाभिरक्षतु ॥ ७७ ॥
ओंनमोभगवतेगरुडायत्र्यम्बकायसद्यन्तव ।
स्तवस्तुतस्तुतस्वाहा । ओंकँटँयँशँवैनतेयाय
नमः।ओंह्रींक्लींक्षः ।
तपसांचेतसांचैवयशसांवपुषान्तथा।
निधानंयोऽव्ययोदेवःसतेस्कन्दःप्रसीदतु ॥ ७८ ॥
दुर्द्दशनामहाकायापिंगाक्षीभैरवम्बना ।

लम्बोदरीशंकुपर्णीकुशलीतेप्रसीदतु ॥ ७९ ॥
नागाःपिशाचागंधर्वाःपितरोयक्षराक्षसाः।
अभिद्रवन्तियेयेत्वांब्रह्माद्याघ्नंतुतान्सदा ॥ ८० ॥
पृथिव्यामन्तरिक्षेचयेचरन्तिनिशाचराः।
दिक्सुवास्तुनिवासास्तुपान्तुत्वांतेनसंस्कृताः ॥ ८१ ॥

अर्थ–बडीगोरखमुण्डी और सुगंध वालाके काथसे स्नान करनेसे बालकोंके ग्रह दोष दूर होतेहैं। सफेद कोयलकी जड, नीमकेपत्ते, सरसों, वच, भोजपत्र और घृत, इनकी धूपदेनेसे–बालकोंके सर्व ग्रहदोष दूर होजातेहैं। पूर्वोक्त " अंगादंगात्सम्भवासि– त्वांतेनसंस्कृताः " इसमंत्र का पाठकरनेसे बालकोंके सर्व ग्रहदोष दूरहोजातेहैं ॥ ७४ ॥ ७५ ॥७६॥ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥

सोमग्रहणेविधिवत्केकिशिखामूलमुद्धृतंबध्वा।
जघनेऽथकन्धरायांक्षपयतिबालानामहिंडिकांनियतं ८२
सप्तदलपुष्पंमरिचापिष्टंगोरोचनयासहितम्।
पीतंनिहन्तितदहिण्डिकारोगंशिशोर्नियतम् ॥
उदुम्बरमूलंबालककटीबंधनादहिण्डिकांहन्ति ॥ ८३ ॥
इति बालरोगाध्यायः।

अर्थ–चन्द्रग्रहणमें मोरशिखाकी जड़को उखाड़कर बालकोंकी जाँघो- में और कंधोंमें बांधनेसे ग्रहदोष जनित अहिण्डिका रोग दूर होताहै। सतवनकेफूल और कालीमिरचोंको पीसकर गोलोचनके साथ पीनेसे बालकोंके अहिण्डिका रोग दूर होताहै। गूलरकी जडको बालककी कटि पै बांधनेसे–अहिण्डिका रोग दूर होताहै ॥ ८२ ॥ ८३ ॥

इति बालरोगाध्यायः समाप्तः।

अथ विषचिकित्सामाह।

स्थावरंजंगमंचैवद्विविधंविषमुच्यते।
मूलाद्यात्मकमाद्यंस्यात्परंसर्पादिसंभवम् ॥ १ ॥

मूलंपत्रंफलंपुष्पंत्वक्क्षीरंसारएवच।
निर्यासोधातवश्चैवकन्दश्चदशमंविषम् ॥ २ ॥
निद्रांतंद्रांक्लमंदाहंसपाकंदाहहर्षणम्।
शोथंचैवातिसारञ्चकुरुतेजंगमंविषम् ॥ ३ ॥
स्थावरन्तुज्वरंहिक्कांदन्तहर्षंगलग्रहम्।
फेनच्छर्द्यरुचिश्वासंमूर्च्छांश्चकुरुतेविषम् ॥ ४ ॥
दष्टस्यपेयंप्रागुक्तंहृदयावरुणंघृतम्।
धरणीबंधनेमंत्रःप्रयोगश्चविषापहः ॥ ५ ॥
दशनंदंशकस्याहेःफलस्यमृदुनोऽथवा।
शाखादष्टस्यदंशोर्द्ध्वंविधेयश्चतुरंगुले ॥ ६ ॥
समंत्रंधरणीबंधोवस्त्रचर्मादिभिर्दृढम्।
नदेहेसर्पतिविषंतद्बन्धेनानिवारितम् ॥ ७ ॥
मंत्रश्चगरुडभेरुण्डादिदेवतानाम् ॥ ८ ॥
ओंएहमात्रभेरुण्डेअइऊँबीजंभविअकरण्डेतंत्र
मंत्रअग्दोषईन्हुँकारेविषनाशइस्थावरजंगमकेतिमन्हुकइ ॥
स्पष्टाक्षरैःकर्णेपठनीयोऽयंमन्त्रः।
वृत्तेदंशविधौनभोगिनमसौप्राप्नोतिदष्टोयादि।
वस्त्रंखण्डमृणालकोमलफलंदन्तैर्दशत्याशुयत् ॥
गच्छेत्तत्क्षणमेवतस्यगरलंतद्दष्टवस्त्वरम्।
दंशंनिर्विषतांनयेच्चबहुधासम्पीड्यहस्तेनच ॥ ९ ॥
वाच्यंवाकालकण्ठाहंध्येयावागारुडीतनुः।
शून्यताध्यानमात्रेणशून्यतांयातितद्विषम् ॥

अर्थ—स्थावर और जंगम इनभेदोंसे विष दो प्रकारका है।मूलादिसे उत्पन्न हुए विषको स्थावर विष, और सर्पादिके विषको जंगम विष कहते हैं। मूल, पत्र, पुष्प, त्वक्, क्षीर, सार, निर्यास, धातु और कन्द

यह स्थावर विषके रहनेके दशस्थानहैं । निद्रा, तंद्रा, क्लम, दाह, पाक युक्तदाह, रोमांच शोथ और अतीसार, यह सब कार्य जंगम विषके हैं । ज्वर, हिक्का, दन्तहर्ष, गलेमें पीडा, झागोंकी वमन, अरुचि, श्वास, और मूर्च्छा यह सब स्थावर विषके कार्य्य हैं, अर्थात् इन सब विकारोंको स्थावर विष कहताहै । सर्पके काटे मनुष्यको हृदयावरक घृतपान, धरणीबंधन, मंत्र और औषधि प्रयोग योजना चाहिये । साँपके डसे हुए मनुष्यके काटनेकी जगह चार अंगुल ऊपर गुरुभेरुण्डादि देवताओंके मंत्रको पढ़कर वस्त्र चर्मादिसे खूब खैंचकर बाँध देवै, इसे सर्व शरीरमें विष नहीं फैलताहै । मंत्र " ॐ एहमात्र भेरुण्डे-जंगम केति मन्डुकइ " इस मंत्रको स्पष्ट अक्षरोंमें साँपके काटे हुए मनुष्यके कानोंमें सुनादेवै । जिस समय साँप काटै उसी वक्त काटतेके साथही वस्त्रखण्ड, मृणाल अथवा कोमल फलोंको चाबले तौ उसका विष वस्त्रखण्डादिमें चला जाताहै, अथवा काटनेकी जगह वारंवार हाथसे नोचनेसेभी विष नहीं रहताहै । या काल कंठाह अथवा गारुड़ी तनुका ध्यान करनेसेही विष निजशून्य होजाताहै ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥

छत्रिसर्षपपाणिश्चचरेद्रात्रौदिवातथा ।
तच्छायाशब्दवित्रस्ताप्रणश्यन्तिचपन्नगाः ॥ ११ ॥
मधुमधुककाष्ठदीप्तोयत्रज्वलतिप्रदीपकोरात्रौ ।
कुलिकादयोऽपिनागास्तत्रप्राणान्विमुंचन्ति ॥ १२ ॥
तण्डुलीयकमूलन्तुपीतंतण्डुलवारिणा ।
तक्षकेणापिसदंष्टंनिर्विषंकुरुतेनरम् ॥ १३ ॥
गृहधूमोहरिद्रेद्वेसमूलंतण्डुलीयकम् ।
श्वेतापराजितामूलंदेवदालीयमूलकम् ॥ १४ ॥
वारिणापेषितंनस्येकालदष्टोऽपिजीवति ।
मूषलीटंकणंपानेकालदष्टोऽपिजीवति ॥ १५ ॥
पिण्डीतगरजंमूलंपुष्येणोद्धृत्ययोजितःदंशे ।
मृतमपिदष्टपुरुषंशमयतिसर्वंगात्रंनोचित्रम् ॥ १६ ॥

पुत्रंजीवफलमज्जांगवांक्षीरेणपेषयेत्।
लेपांजननस्येनकालदष्टोपिजीवति ॥ १७ ॥

अथगरुडमंत्रः।

वाँखोंवाँअनेनन्मत्रेणसर्पदंशस्यशिखाबन्धनंकुर्यात्।
दाँखोंदाँअनेनमन्त्रेणदंष्ट्रस्यनिर्विषंनिर्व्वाहयेत् ॥
सर्पदष्टोयदाधीरस्तंसर्पंदंशयेत्स्वयम्।
मुक्तोऽसौम्रियतेसर्पःस्वयंनिर्विषतांव्रजेत् ॥ १८ ॥

अर्थ-सरसोंको हाथमें लेकर छत्रीको लगाकर जो मनुष्य रातदिन विचरण करताहै, उसकी छाया और शब्दसे सम्पूर्ण साँप त्रास-युक्त होकर नष्ट होजातेहैं। रात्रिमें-सहत मिलाकर मुलेठीको दीपककी समान जलानेसे कुलकादि सम्पूर्ण सर्प मर जातेहैं। चौंलाईकी जड़को चावलोंके जलमें पीसकर सेवन करनेसे तक्षक सर्पका काटाहुआभी आराम होताहै। घरका धुआँ,हलदी, दारुहलदी और जड़ समेत चौंलाई एकत्र पीसकर दही और घीमें मिलाकर सेवन करनेसे साँपका विष दूर होताहै। सफेद अपराजिताकी जड़ और देवदालीकी जड़को जलमें पीसकर नास लेनेसे काले साँपका विष दूर होताहै। मुसली और सुहागेको पीसकर सेवन करनेसे काले साँपका विष दूर होताहै। पिण्डीतगरकी जड़को पुष्यनक्षत्रमें उखाड़कर साँपके काटे हुए स्थानमें प्रलेप करनेसे मरा हुआभी जी जाता है। पतिजियाके फलकी मींगको गायके दूधमें पीसकर प्रलेप करनेसे, अंजन लगानेसे और नास लेनेसे काले साँपका काटाहुआभी जी जाता है। वां खों वां इस मंत्रको पढ़कर सांपके काटे हुए मनुष्यकी चोटीको बाँध देवै, दां खों दां इस मंत्रके द्वारा विषको उतारे। सांपका काटा हुआ मनुष्य धीरज धरकर उसी सांपको डसलेवै, तौ सांप मरजावै और उस मनुष्यके प्राण बचजाते हैं ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥

शम्भुनोक्तंसमानेनाविषंस्थावरजंगमम्।
कृत्रिमंयोगजंचैववृश्चिकाखुविषंतथा ॥ १९ ॥
क्रमादौषधमेतेषांमंत्रयुक्तंवदाम्यहम्।

अन्यन्मंत्रौषधीनान्तुक्रमात्सिद्धिःक्वचिद्भवेत् ॥ २० ॥
तस्मात्सर्वप्रयत्नेनविषत्वंसममभ्यसेत् ।
चिकित्सांत्वरितंकृत्वासम्यग्रक्षामुपाचरेत् ॥ २१ ॥
नामरूपंविषाणान्तुशम्भुनाकीर्तितंपुरा ।
बहवोवत्सनाभश्चमुस्तकंपुष्करंविषम् ॥ २२ ॥
क्षौद्रंशटिःशर्करश्चहरिद्रंकालकूटकम् ।
इन्द्रबीजंचैववीरंहरितंगालकंविषम् ॥ २३ ॥
शृंगीकर्कटशृंगीचमेषशृंगीहलाहलम् ।
शक्तुकंरक्तशृंगाचअंजनंपुण्डरीयकम् ॥ २४ ॥
शंकोचंमधुपाकश्चरोहिणंमतुलंतथा ।
पंचविंशतिभिर्भेदैर्ज्ञेयंस्थावरजंविषम् ॥ २५ ॥
एषांमध्येह्यतिक्रूरंशङ्कोचंकालकूटकम् ।
शृंगंमुस्तंवत्सनाभंपंचमन्तुविषाद्विषम् ॥ २६ ॥
एतद्देहगतेकार्यंतेषांलक्षणमुच्यते ।
वान्तिमूर्च्छातिसारश्चशूलंचातिकरंपरम् ॥ २७ ॥
कासश्वासौप्रवाहौचलक्षयेत्कुमुदंविषम् ॥ २८ ॥

अर्थ-स्वयं शंकरने कहा है कि, विषस्थावर, जंगम, कृत्रिम, योगज, वृश्चिक विष और इन्दुर इन भेदोंसे कई प्रकारका है । मंत्र औषधादिकोंमें कौनसे विषसे किस समय सिद्धि होती है ? इस कारण भले प्रकारसे विषतत्त्वको जानना चाहिये और शीघ्र चिकित्सा करे। परंतु सर्पके काटे हुये मनुष्यकी बहुत शीघ्र चिकित्सा करे। पहिले महादेवने विषके अनेक नामरूप कहे हैं, जैसे-वत्सनाभ, मुस्तक, पुष्कर, क्षौद्र, शटि, शर्कर, हारिद्र, कालकूट, इन्द्रबीज, बीर, हारित, गालक, शृंगी, कर्कटशृंगी, मेषशृंगी, हलाहल, शक्तुक, रक्तशृंगी, अंजन, पुण्डरीयक, शंकोच, मधुपाक, रोहिण, विष और मतुल यह पच्चीस भेद स्थावर विषके हैं। इनमें शंकोच, कालकूट, शृंग, मुस्तक और वत्सनाभ, यह ५

पांच विष अत्यन्त क्रूर हैं । यह सब विष देहमें प्राप्त होनेसे-वमन, मूर्च्छा, अतीसार, और अत्यन्त शूलके समान पीडाको उत्पन्न करते हैं । तथा कुछ विष खांसी, श्वास और प्रवाहिका रोगको उत्पन्न करै है ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७॥ २८॥

पुत्रंजीवफलंमज्जांशीततोयेनपेषयेत् ।
भोजनेचांजनेपानेलेपःसर्व्वविषापहः ॥ २९ ॥
स्थावरंजंगमंक्रूरंकृत्रिमंयोगजंतथा ।
निष्कमात्रात्रसंदेहःकालदष्टोहिजीवति ॥ ३० ॥
समूलपत्रंसर्पाक्षीतथैवदेवदालिका ।
गिरिकर्ण्याश्चवामूलंनरमूत्रेणपूर्ववत् ॥ ३१ ॥
स्ववस्त्रास्थापिनिर्वाहंनिर्विषीकरणन्तथा ।
कर्त्तव्यंमंत्रिणाशीघ्रंतत्तथैवप्रदर्श्यते ॥ ३२ ॥
नाधोनानेनमंत्रेणशीतजलघटमभिमंत्र्य ।
विषातुरस्यमस्तकेक्षिपेत् ।
विषंनक्रमतिइतिस्तम्भनमंत्रः ।
पंक्षौअनेनमंत्रेणविषान्बंधयेत् ।
वाँषोवाँअनेनमंत्रेणार्कदण्डमभिमन्त्र्यवि
षातुरस्यसर्वाङ्गेनिर्वाहयेत् ॥ ह्राँदस्त्रीह्रींअ
नेनमंत्रेणानिर्विषीकरणार्थंविषातुरेदण्डेनाप
मार्ज्जयेत् । स्तम्भोभवति ।

इति गरुड मंत्रः ।

अथमंगलाविद्या ।

ॐनमोभगवतिपरमतत्त्वपराण्यक्षरैर्महाविद्योलू
कालानिघोरश्मशानपरिभ्रमणानिअट्टअट्ट

हासिनिउन्मानपटेनिवासिनिएहिएहियोगपी-
ठस्थितेत्रिपुरेत्र्यक्षरेत्रिपथेत्रिकोणवासिनि
वेतालापस्मारयक्षराक्षसप्रेतभूतपिशाचनिवा
रिणिस्थावरजंगमकृत्रिमविषनाशिनिसर्वज्वर
निपातिनिएहिएहिममपुत्रपौत्रपशुबांधव
दुहितृकलत्रपरिजनस्यभीतस्यरक्षांवज्रशरीरं
कुरुकुरुकुशलेस्थितंराजकुलेस्थितम्।
सुप्तास्थितंजाग्रतास्थितंचतुःपथेस्थितंवाह्यस्थि
तंरक्षरक्षसर्वशंकांविनाशयसर्वदुष्टान्भंज-
यभंजय। एकारक्षविद्राक्षित्रिकोणमुद्रानिवा-
रयबंधबंधआक्रामयउद्यानपीठप्रसादेन
जालबंधपीठप्रसादेनचूर्णगिरिपीठाप्रसादेन
एवंचतुःपीठप्रसादेनदेविममप्रसादंकुरुकुरु
एकाहिकंद्व्याहिकंविषमज्वरंसान्निपातज्वरं
सर्वज्वरंनिर्णाशयसर्वाबाधांनिवारयसर्ववि-
षंभक्षभक्षएहिएहिइन्द्रजालांपंचदण्डेन
गरुडपक्षप्रपातेनमहाकालरूपेणसर्वापदान्
विध्वंसयनिर्भयंकुरुकुरुरक्षरक्षमंत्रासिद्धिं
ददातुओंह्रांह्रींक्रूंफट्। एकादिमंगलाविद्या
विषहादृष्टिप्रत्यया। अनयामंत्रितंतोयंदत्तंसर्वविषापहम्॥

अर्थ-पतिजियाके फलकी मींगको शीतल जलमें पीसकर भोजन अंजन, पान और प्रलेपमें प्रयोग करनेसे स्थावर, जंगम, क्रूर, कृत्रिम और योगजादि सर्व प्रकारके विष दूर होते हैं। सर्पाक्षी और देवदाली पत्र और मूल सहित लाकर अथवा सफेद अपराजिताकी जड़ मनुष्यके मूत्रमें पीसकर पानादिमें देनेसे सर्व प्रकारके विष दूर होजातेहैं।

सांपके काटे हुए मनुष्यकी बहुत शीघ्र मंत्रोंके द्वारा चिकित्सा करै । "नधोना" इस मंत्रके द्वारा स्तम्भन करै । "यँक्षौ" इस मंत्रसे विषको बाँध देवै । वाँ धों वाँ इस मंत्रसे एक आककी डालीको पढ़कर विषसे पीडित मनुष्यके सर्व अंगोंमें फेरै । हाँदस्त्रीहीं इस मंत्रको पढ़कर विषातुर मनुष्यके शरीरको पूर्वोक्त आकके दंडेसे मार्ज्जन करै, इससे विषस्तम्भन होताहै । इति गरुड़मंत्रः । "ओं नमो भगवति-क्रूँ फट्" इस मंगल विद्यामंत्रसे जलको पढ़कर विषातुर मनुष्यको पीनेको देवै, इससे सर्व प्रकारके विष दूर होते हैं ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

अभयारोचनाकुष्ठमर्कपुष्पीतथोत्पलम् ।
नलवेतसमूलानिसरलंसुरसंवचाम् ॥ ३३ ॥
सपालिन्ध्रींसमंजिष्ठामनन्तासशतावरीम् ।
शृंगाटकंसमंगाचपद्मकेशरमित्यपि ॥ ३४ ॥
कल्कीकृत्यपचेत्सर्पिःपयोदत्वाचतुर्गुणम् ।
सम्यक्पक्केऽवतीर्णेचशृतशीतेविनिक्षिपेत् ॥ ३५ ॥
सर्पिस्तुल्यंभिषक्क्षौद्रंकृतबंधंनिधापयेत् ।
नाशयत्यंजनाभ्यंगपानवस्तिसुभोजने ॥
सर्पकीठाखुलूताभिर्दष्टानांविषणुत्परम् ॥ ३६ ॥

इतिमृत्युपाशापहं घृतम् ।

अर्थ-गायकाघी २ दोसेर, गायकादूध ८ आठसेर, तथा कल्ककेलिये हरड़, गोलोचन, कूठ, अर्कपुष्पी, उत्पल, नलकीजड़, वेतकी जड़, सरल, तुलसी, वच, करियावासाऊ, मजीठ, अनन्तमूल, शतावर, सिंघाडे, वराहक्रान्ता और कमलकेशरऽ ॥ आधसेर यथाविधिसे घृतको पकावै । जब पककर शीतल होजाय, तब२दोसेर सहतमिलादेवै । इस-घृतको अंजन, अभ्यंग, पान, बस्ति और भोजनमें व्यवहार करनेसे साँप, बीछू, मूसा और लूतादिका विष दूरहोताहै ॥ ३३॥ ३४॥ ३५॥३६॥

तण्डुलीयकमूलेनगृहधूमेनचैकतः ।
क्षीरेणसघृतंसिद्धंसमस्तविषरोगणुत् ॥ ३७ ॥

इति तण्डुलीयकं घृतम् ।

अर्थ-गायकाघी २ दोसेर, दूध ८ आठसेर, और चौंलाईकीजड़ तथा घरकाधुआँ ऽ॥ आधसेर, यथाविधिसे घृतको पकाकर पानकरनेसे-सर्व प्रकारके विष विकार दूरहोतेहैं ॥ ३७ ॥

निशाचटंकश्चसजातिकोषंतुत्थंसमांशंकुरुदेवदाल्याः ।
रसेनपिष्टोविषवज्रपातोरसोभवेत्सर्वविषापहन्ता ॥ ३८ ॥

इति विषवज्रपातरसः ।

अर्थ-हलदी, सुहागा, और जायफल इनको समानभागलेकर देवदालीके रसमें खरलकरै । यहविषवज्रपातरस-सर्वप्रकारके विषविकारोंको हरैहै ॥ ३८ ॥

शिरीषपुष्पकुष्ठैलाशिलासव्योषरेणुका ।
यष्ट्यर्कहिंगुश्वेताग्रासिंधुवारकफञ्जिका ॥ ३९ ॥
सूतराजस्यतोलैकंगंधकस्यतथैवच ।
अभ्रात्कर्षततोदेयंतोलैकंकान्तलोहतः ॥ ४० ॥
परोक्तेनौषधेनैवभावयेच्चपृथक्पृथक् ।
विशालाबृहतीब्रह्मीसौगन्धिकसदाडिमैः ॥ ४१ ॥
मर्कट्याश्चात्मगुप्तायाःस्वरसेनपृथक्ततः ।
एकरक्तिप्रमाणेनवटिकांकारयेद्भिषक् ॥ ४२ ॥
एकांवटींभक्षयित्वापिबेच्छीतजलंततः ।
कुक्कुरस्यशृगालस्याविषंहन्तिसुदुर्जयम् ॥ ४३ ॥

इतिभीमरुद्रो रसः ।

अर्थ-शिरसकेफूल, कूठ, इलायची, मैनशिल, सोंठ पीपल, मरिच, रेणुका, मुलेठी, हींग, आककीजड़, सफेदवच, सह्मालू और भारंगीकाचूर्ण, प्रत्येक १ एकतोला; लोहा, पारा, गंधक और अभ्रक प्रत्येक १ एकतोला, इन सब औषधियोंको एकत्रकरकै इन्द्रायण, बृहती, ब्राह्मी, सफेदकमोदिनी, अनार, चिरचिटा और कौंछ, प्रत्येकके स्वरसमें एक एकवार भावनादेकर एक एकरत्तीकी गोली बनालेवै । प्रतिदिन एक गोली खाय और ऊपरसे शीतल जल पीवै । यह-कुत्ते और गीदड़के विषको हरैहै ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥

नृणांमूत्रेणसंपिष्टोगोपित्तमधुसंयुतः।
शृगालैरथमार्जारैर्मण्डूकैरथवाहिभिः ॥ ४४ ॥
कालेनापिहिदष्टस्यमृतसंजीवनोह्ययम्।
गदितोमुनिभिःसर्वैःसूर्योदयमहागदः ॥ ४५ ॥
लशुनोषणवैदेहीवरागोघृतकल्कितम्।
पाननस्यांजनालेपैःश्वदंष्ट्रस्यौषधंपरम् ॥ ४६ ॥
धूस्तूरकरसोविश्वक्षीराज्यगुडपानतः।
शुनोविषंविनश्येतशशांककृतशेखरः ॥ ४७ ॥

अर्थ–गोलोचनको मनुष्यके मूत्रमें पीस सहत मिलाके सेवनकरने से–गीदड़, बिलाव, मेंड़क और सर्पादिका विष दूरहोताहै। लशुन, कालीमिरच, पीपल, और त्रिफला, इन औषधियोंको कल्कके साथ गायके घीको पकाकर पान, प्रलेप, नस्य और अंजनरूपसे प्रयोगकरनेसे कुत्तेका विष दूरहोताहै। धतूरेकारस, सोंठ, दूध, घी और गुड़, इन सबको एकत्रमिलाकर सेवन करनेसे-कुत्तेका विष दूर होताहै॥४४॥४५॥४६॥४७॥

कनकोदुम्बरफलमिवतण्डुलजलपीतमपहराति।
कनकदलद्रवघृतगुडघृतदग्धपलैकांशुनांगरलं ॥४९॥

अर्थ–कनकधतूरा और गूलरकाफल, दोनोंको चावलोंके जलमें पीसकर, या कनकधतूरेके पत्तोंकारस–घृत, गुड़ और दूध, सबको मिलाकर सेवनकरनेसे–कुत्तेकाविष दूर होताहै ॥ ४८ ॥

इति श्रीरसरत्नाकरे रसचन्द्रिकाटीकायां आयुर्वेदोद्धारकशालिग्रामवैश्यविरचिते विषाधिकारः समाप्तः।

अथरसायनमाह।

यज्जराव्याधिविध्वंसभेषजंतद्रसायनम्।
पूर्वेवयसिमध्येवाशुद्धकायस्समाचरेत् ॥ १ ॥
नाविशुद्धशरीरस्ययुक्तोरसायनोविधिः।
नभातिवाससिक्लिष्टेरंगयोगइवार्पितः ॥ २ ॥

अर्थ-जिसके द्वारा जरा और व्याधि नष्ट होयँ, उस औषधिको रसायन कहतेहैं। यह रसायन प्रथम अवस्थामें अथवा मध्यम अवस्थामें विरेचनादिसे शुद्ध होकर सेवन करै। जैसे काले वस्त्रको रंगनेसे रंग नहीं चढ़ता अर्थात् सुन्दरता नहीं आती, इसीप्रकार अविशुद्धवाले मनुष्यको रसायनविधि कुछभी फलदायक नहीं होती ॥ २ ॥

सिन्धूत्थशर्कराशुण्ठीकणामधुगुडैःक्रमात्।
वर्षादिष्वभयासेव्यारसायनगुणैषिणा ॥
हन्यादेतानवश्यंमधुनिपरिगतापूतनाचाम्लपित्तं ॥ ३ ॥

मधुहरीतकी।

अर्थ-वर्षाऋतुमें हरड़का चूर्ण सेंधेनोनकेसाथ, शरदऋतुमें मिश्रीके साथ, हेमन्तऋतुमें सोंठके चूर्णकेसाथ, शीतऋतुमें पीपलके चूर्णकेसाथ, वसन्तऋतुमें सहतकेसाथ, और ग्रीष्मऋतुमें गुड़केसाथ, सेवन करै, यह उत्तम रसायनहै। हरड़को कुछ कुछ कूटकर बहुत दिनोंतक सहतमें रखकर सेवन करै तौ बवासीर, श्वासादि और अम्लपित्त दूर होवै॥ ३ ॥

हस्तिकर्णरजःखादेत्प्रातरुत्थायसर्पिषा।
यथेष्टाहाराचारोऽपिसहस्रायुर्भवेद्ध्रुवम् ॥ ४ ॥
गुडूच्यपामार्गविडंगशंखिनीवचाभयाशुण्ठिशतावरीसमा।
घृतेनमासमेकंस्वरसंपिबन्तिदिनेदिनेभृंगरजःसमुत्थम्॥५॥
क्षीराशिनस्तेबलवर्णयुक्ताःसमाशतंजीवितमाप्नुवन्ति।
पीताश्वगंधापयसार्द्धमासंघृतेनतैलेनसुखाम्बुनावा ॥ ६ ॥
कृशस्यपुष्टिंवपुषोऽभिधत्तेबालस्यसस्यस्ययथाम्बुवृष्टिः॥ ७ ॥

अर्थ-हस्तिकर्ण पलाशके बीजोंके चूर्णको घृतमें मिलाकर प्रातःकाल उठकर प्रतिदिन सेवन करे तौ अत्यन्त आयुकी वृद्धि होतीहै। गिलोय, चिरचिटा, वायविडंग, शंखाहूली, वच, हरड, सोंठ और शतावरका चूर्ण घृतमें मिलाकर सेवन करनसे सहस्र १००० श्लोकोंको धारण करनेवाली बुद्धि होजातीहै। भांगरेका स्वरस एक महीनेतक सेवन करै और दुग्धान्न भोजन करै तौ बलकी वृद्धि हो, वर्ण सुन्दर होजाय और

सौ १०० वर्षतक जीता रहै । असगंधका चूर्ण दूध, घी, तेल या गरम जलके साथ १५ पंद्रह दिनतक सेवन करै तौ दुर्बल मनुष्य पुष्ट होजाता है ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥

धात्रीतिलान्भृंगरजोविमिश्रान्भक्षयेयुर्वेमनुजाःक्रमेण ।
तेकृष्णकेशाविमलेन्द्रियाश्च
निर्व्याधयोऽयोमचराभवेयुः ॥ ८ ॥
वृद्धदारस्यमूलानिश्लक्ष्णचूर्णानिकारयेत् ।
शतावर्यारसेनैवसप्तवारांस्तुभावयेत् ॥ ९ ॥
अक्षमात्रन्तुतच्चूर्णसर्पिषासहयोजयेत् ।
उपयुञ्जीतदुग्धेनवलीपलितनाशनम् ॥ १० ॥

अर्थ–आमला, तिल, और भांगरा, इन तीनोंको एकत्र पीस चूर्ण कर सेवन करे तौ बाल काले, इन्द्रिय विमल और शरीर निरोग होताहै । विधारेके चूर्णको सतावरके रसमें सात बार भावना देकर, घृतके साथ १ एक महीनेतक सेवन करै तौ–मेधा और स्मरणशक्तिकी वृद्धि होवै, तथा वली पलित रोगका नास होवै परंतु इस औषधिके ऊपरसे दूध अवश्य पीवै ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥

भल्लातकानांपवनोद्धृतानांवृन्ताच्युतानांचयदाढकंस्यात् ।
तच्चेष्टकाचूर्णकणैर्विघृष्यप्रक्षालयित्वाविसृजेत्प्रवाते ॥ ११ ॥
शुष्कंपुनस्तद्विदलीकृतञ्चततःपचेदप्सुचतुर्गुणासु ।
तत्पादशेषंपरिपूतशीतंक्षीरेणतुल्येनपुनःपचेत्तम् ॥ १२ ॥
तत्पादशेषंपुनरेवशीतंघृतेनतुल्येनपुनःपचेत्तम् ।
तदर्द्धयाशर्करयाविमिश्रंततःखजेनोन्मथितंविधाय ॥ १३ ॥
तत्सप्तरात्रादुपजातवीर्य्यंसुधामृतादप्यधिकत्वमेति ।
प्रातर्विशुद्धःकृतदेवकार्योमात्राञ्चखादेत्सुशरीरयोग्याम् १४

अमृतभल्लातकी ।

अर्थ–पवनसे टूटे हुए, वृन्त रहित ऐसे भिलावे ८ आठ सेर लेकर ईंटोंके चूर्णसे घिसकर धोलेवै, पश्चात् धूपमें सुखाकर उनके दो दो

टुकड़े करलेवै, फिर चौगुने जलमें पकावै, जब चौथा भाग जल शेष रहै तब उतारकर छानलेवै, पश्चात् ८ आठ सेर दूध मिलाकर पकावै, जब चौथाई भाग शेष रहै तब उतारले, फिर २ दो सेर घृत मिलाकर पकावै, जब गाढ़ा होजाय तब १ एक सेर शर्करा मिलाके मथकर ७ सात दिनतक रक्खा रहने देवै, इससे पूर्ण वीर्य्यवान् अमृतके समान होजाता है । इसको प्रातःकाल देवादिको पूजकर निज शक्तिके अनुसार खावै, इससे नानाप्रकारके रोग दूर होतेहैं॥ ११॥ १२॥ १३॥ १४॥

द्विपलंगंधकंशुद्धंद्रावयित्वाविनिक्षिपेत् ।
पारदंपलमानेनमृतशुल्वायसीपुनः ॥ १५ ॥
तेनमानेनसंमिश्र्यपंचांगुलदलेक्षिपेत् ।
ततोविचूर्ण्ययत्नेननिक्षिप्यायसपात्रके ॥ १६ ॥
चुल्ल्यांनिवेश्ययत्नेनज्वालयेन्मृदुनानलम् ।
पात्रमात्रंरसंसम्यक्जम्बीरस्यप्रयोजयेत् ॥ १७ ॥
संचूर्ण्यपंचकोलोत्थैःकषायःसाम्लवेतसः ।
भावनाःखलुदातव्याःपंचाशत्प्रमितास्तथा ॥ १८ ॥
भृष्टटंगणचूर्णेनतुल्येनसहमेलयेत् ।
तदर्द्धंकृष्णलवणंसर्वतुल्यंमरीचकम् ॥ १९ ॥
सप्तधाभावयेत्पश्चाच्चणकक्षारवारिणा ।
ततःसंशोष्यकुप्यास्तुजठरेनाविनिःक्षिपेत् ॥ २० ॥

इति क्रव्यादरसः ।

अर्थ-तपायाहुआ शुद्ध गंधक ८ आठ तोले, मृतपारा ४ चार तोले, मृततॉंबा ४ चार तोले, और शुद्ध लोहा ४ तोले, सबको एकत्रकर अंडके पत्तेपै ढालदेवै, शीतल होनेपर चूर्ण करकै लोहेके पात्रमें स्थापन करै,पश्चात् जम्भीरी नीबूका रस मिलाके चूल्हेपै चढाकै मंद मंद अग्निसे पकावै, फिर चूर्ण करकै अम्लवेत और पंचकोलके काथमें ५० वार भावनादेवै, फिर बराबरका भुनाहुआ सुहागा और उससे आधा काला नोन, तथा सबकी बराबर कालीमिरचोंका चूर्ण मिलाकर चनेके खारके

जलकी ७ भावना देवै, पश्चात् सुखाकर काँचकी कुप्पीमें भरके रख देवै ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥

अभ्रकंमारितंयेनपारदश्चवशीकृतम् ।
द्वारमुद्घाटितंतेनयमस्यधनदस्यच ॥ २१ ॥
अभ्रचूर्णपलशतंगृहीत्वालोहभाजने ।
पुनर्नवारसेनैवभाव्यमेकत्रचैकधा ॥ २२ ॥
त्रिफलायाःरसैःपंचनिम्बस्यद्वादशैवतु ।
अथनिश्चन्द्रिकांयावत्तावद्देयःपुटःक्रमात् ॥ २३ ॥
नियोज्यगंधकंचैवपादांशेनतथारसम् ।
विधिनाजारितंलोहंरसतुल्यंप्रदापयेत् ॥ २४ ॥
रसेन्द्रमातृकातोयैर्भाव्यंतस्माच्चमर्दयेत् ।
घृतेनमधुनाचापिपश्चादेतच्चभक्षयेत् ॥ २५ ॥
रोगीवात्रिफलापानेरोगीवाक्षीरपानतः ।
वातहापित्तहाचैवकफहाकान्तिवर्द्धनः ॥ २६ ॥

अर्थ-जिसने अभ्रकको मारलिया और पारेको वशमें करलिया, उस मनुष्यने यमराज और कुबेरका द्वार उखाडदिया। सौ १००पल अभ्रकका चूर्ण लोहेके पात्रमें रखकर पुनर्नवेके रसकी एकभावना देवै, फिरत्रिफलेके रसकी ५ पाँच भावनादेवै, और नीमके रसकी १२बारहभावनादेवै, पश्चात् जबतक निश्चन्द्र न होवै तबतक पुटदेवै, फिर चौथाई भाग गंधक, चौथाई भाग पारा, विधिपूर्वक जारित किया लोहा चौथाई भाग मिलाकर रसेन्द्रमातृकारसमें भावना देवै, पश्चात् घृत और सहतके साथ इसको भक्षणकरै, ऊपरसे त्रिफलेका क्राथ या दुग्धपानकरै। यह औषधि सर्वप्रकारके वातरोग, सर्वप्रकारके पित्तरोग और सर्व प्रकारके कफरोगोंको दूर करै है तथा कान्तिजनकहै ॥ २१ ॥ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥

माक्षिकंरसगंधौचहरितालंमनःशिला ।
गगनंकान्तलोहंचसर्वमेषांसमांशकम् ॥ २७ ॥

त्रिवृद्दन्तीवारिवाहंचित्रकंचमहौषधम् ।
पिप्पलीमरिचंपथ्यायमानीकृष्णजीरकम्॥२८॥
रामठंकटुकापालीसैन्धवंसाजमोदकम् ।
जातीफलंयवक्षारंसमभागंविचूर्णयेत् ॥ २९ ॥
आर्द्रकस्यरसेनैवनिर्गुण्ड्याःस्वरसेनतु ।
सूर्यावर्त्तरसेनैवज्योतिष्मत्तारसेनच ॥ ३० ॥
आतपेभावयेद्द्रव्यःखल्लपात्रेचनिर्म्मले ।
पेषयित्वावटींकुर्याद्गुञ्जाफलसमप्रभाम् ॥
भक्षयेच्छाणमानेनलवंगस्यचयोगतः ॥ ३१ ॥

इतिभक्तपावकगुटिका ।

अर्थ–पारा, हीरा, सोना, चाँदी, ताँबा, तीक्ष्णलोह, अभ्रक, मोती, गंधक, शंख, मूंगा, हरिताल और मैनाशिल, यह सब शुद्धले चूर्णकर लाल चीतेकी जड़के क्वाथमें और आकके दूधमें ३ तीनदिन भावनादेवै, फिर सम्हालूके पत्तोंके, रसमें जमीकंदके रसमें और थूहरके दूधमें ३ तीन दिनभावना देवै, पश्चात् इस औषधीको पीली कोडीमें भरलेवै और सुहागेको आकके दूधमें पीसकर कौड़ीके मुखको बंदकरदेवै, फिर उस-कौड़ीको भांडम रख तिसके मुखको बंदकरकै पकावै, स्वांगशीतल होनेपर चूर्ण करले, पश्चात् इसचूर्णमें बराबरकी पारेकीभस्म और पारेसे चौथाईभाग वैक्रान्तकीभस्म मिलादेवै, इसको सैंजिनेकी जड़के रसमें सातवार भावना देवै,और लालचीतेकीजड़के रसमें २ दोवार भावनादेवै, यहत्रैलोक्यचिंतामणिरस–सर्वरोग नाशकहै ॥२७॥२८॥२९॥३०॥३१॥

अथातःसंप्रवक्ष्यामिरसंपरमदुर्लभम् ।
पंचामृतमिदंख्यातंसर्वरोगहरंपरम् ॥ ३२ ॥
शास्त्रेसौख्यपदंनॄणांभुविरोगनिवारणम् ॥
पथ्यापथ्यविनिर्युक्तंविष्णुनापरिकीर्त्तितम् ॥ ३३ ॥
सूतकान्तरविव्योमशुद्धानांभस्मकंशुभम् ॥

मारितंमाक्षिकंचैवप्रत्येकंचपलंपलम् ॥ ३४ ॥
गंधंपंचपलंदत्वाश्लक्ष्णचूर्णानिकारयेत् ॥
आर्द्रकस्यरसंदत्वात्रिदिनंमर्दयेत्ततः ॥ ३५ ॥
क्काथेचदशमूलस्यवह्निमूलरसेनवा ॥
युक्त्यातुक्कथितेनापिमर्दयेच्चादिनत्रयम् ॥ ३६ ॥
शोषयित्वाततोघर्मेचूर्णयेत्तदनन्तरम् ॥
त्रिवर्गात्रित्रयाम्भोदातिन्दुतुम्बुरुवेणुकम् ॥ ३७ ॥
भार्ङ्गींभूनिम्बतिक्ताचजातीफलकशेरुकम् ॥
पलार्द्धमानेसर्वाणिप्रत्येकैकंभवन्तिहि ॥ ३८ ॥
निधायश्लक्ष्णचूर्णानिरसेनसहमेलयेत् ॥
काकमाच्याश्चनिर्गुंड्यावर्षाभूमुंडिकातथा ॥ ३९ ॥
कषायेणार्द्रकाम्भोभिर्भावनापरिकल्पयेत् ॥
कषायेणगुडूच्याश्चशिग्रुमूलरसेनवा ॥ ४० ॥

इति पंचामृतोरसः ।

अर्थ—अब इसके आगे परम दुर्बल पंचामृत रसको कहतेहैं,यह सर्वरोग नाशकहै, सर्वसुखदायकहै, और संसारके रोगोंको दूरकरैहै, इससे पथ्यापथ्य विधिप्रयोग करनी चाहिये, यह विष्णुभगवान् ने कहाहै। पारा, कान्तलोह, ताँबा, अभ्रक और सोनामाखी, प्रत्येककी भस्म चारचार तोले, और शुद्धगंधक बीस बीस तोले लेकर सबको एकत्रपीसके बारीक चूर्णकरले इस चूर्णको अदरखके रसमें तीनदिन खरलकरै, फिर दशमूलके क्काथमें, अथवा लाल चीतेके रसमें ३ दिन खरलकर धूपमें सुखालेवै, पश्चात् हरड़, बहेडा, आमला, सोंठ मिरच, पीपल, वायविडंग चीता, नागरमोथा, तेंदू, तुम्बुरु, रेणुका, भारंगी, चिरायता, कुटकी, जायफल और कसेरु, प्रत्येकका चूर्ण दो दो तोले मिलादेवै, पश्चात् इसको मकोय, सम्हालू, पुनर्नवा, और गोरखमुण्डीके रसमें, दशमूलके क्काथमें, धनियेके क्काथमें, सोंठके क्काथमें, अदरखके रसमें, गिलोयके क्काथमें, सैंजिनेकी जडके रसमें, तथा फिर अदरखके । में

एक एक वार भावनादेकर, झरवेरकी समान गोली बनालेवै, प्रतिदिन एक गोली वीस २०कालीमिरचोंके साथ खावै । और इसपे तक्रके साथ भोजन करै ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥३८ ॥३९॥४०॥

भस्मीभूतसुवर्णतारदिनकृत्कृष्णाभ्रसूतैःक्रमात्
गंधानांखलुभागवृद्धिरपितत्कृत्वाशुभांकज्जलीम् ।
निर्गुण्डीदशमूलवह्निरजनीव्योषार्द्रकैर्भाविते-
र्गोलीकृत्यविशोष्यतन्निगदितःपंचामृतःस्याद्रसः ॥४१॥

इति शुद्धपंचामृत रसः ।

अर्थ–सोनेकी भस्म, चांदीकी भस्म, तांवेकी भस्म, अभ्रककी भस्म, पारेकी भस्म, और शुद्ध गंधक, यह सब क्रमसे एकसे एक अधिक लेकर कज्जली बनावै, पश्चात् इस कज्जलीको सह्मालु, दशमूल, चीता, हलदी, त्रिकुटा और अदरखके रसकी भावना देकर गोली बना धूपमें सुखा देवै, यहरस–सर्व प्रकारके रोगोंको हरै है ॥ ४१ ॥

गंधकेनशिलावापिसीसकोमाक्षिकेणवा ।
अभ्रोलोहेनवातद्वत्समभागेनपारदः ॥ ४२ ॥
सुभृष्टटंगणेनापिरसपादेनसंयुतः ।
रसेनपारिजातस्यकारवेल्यारसेनवा ॥ ४३ ॥
द्रवन्त्यातण्डुलीयकह्येकाहंमर्दयेद्रसम् ।
अर्धसंचूर्ण्यमण्डूरंदिनान्तंपरिमर्दयेत् ॥ ४४ ॥
तज्जलंभाजनेक्षिप्त्वासूर्यतापेनिधापयेत् ।
जलादुत्सृज्यमृत्स्नाञ्चपथ्ययासहमर्दयेत् ॥ ४५ ॥
पूर्वसूतस्यतंकल्कंलिम्पेन्मृत्स्नयातथा ।
अंगुलोत्सेधमानेनततःसंवेष्टचमृन्मयैः ॥ ४६ ॥
विशोष्यतंधमेद्गाढंसार्धैकघटिकावधि ।
तस्मादुद्धृत्यतंभित्वाशीतलाङ्गेनमूषिकाम् ॥ ४७ ॥

इति धातुबद्धोरसः ।

अर्थ-गंधक, मैनशिल, सीसा, सोनामाखी, अभ्रक और लोहा, प्रत्येक एक एक भाग, पारा छै भाग, भुना हुवा सुहागा १॥ डेढभाग, इन सबको एकत्र पीस पारिजातके रसमें करेलेके रसमें मूषा कर्णीके रसमें, और चौलाईके रसमें एक एक बार खरल करै। पश्चात् पारिजात (फरहद), करेला, मूसाकर्णी, और चौलाईके रसमें एक दिन मण्डूरको खरल करै, फिर मण्डूरको सोरठकी मट्टीमें मिलाकर मूषा बना लेवै, पश्चात् पूर्वोक्त गंधकादि खरल कीहुई औषधि इस मूषामें स्थापनकर एक अंगुल ऊंचा मृत्तिकाका लेपकर मृदु अग्निसे पकावे, स्वयं शीतल होजाय तौ चूर्ण करले। इसको त्रिकुटा और चीतादिके चूर्णके साथ खावै ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥

अभ्रकंमाक्षिकंवज्रंकान्तंहेमसमंसमम्।
सर्वाणिसमभानिसूतयुक्तानिकारयेत् ॥ ४८ ॥
गोलकंचततःकृत्वापक्वंनिचुलवारिणा।
ततस्तंपुटपाकेनस्तम्भयित्वाप्रयत्नतः ॥ ४९ ॥

इति सुरसुन्दरी गुटिका।

अर्थ-अभ्रक, सोनामाखी, हीरा, कान्तलोह और सोना, सब समान भाग लेकर समान भाग पारेके साथ समुद्र फलके फलमें खरलकर गोला बनालेवे, पश्चात् इस गोलेको मूषामें रख मूषाको मृत्तिकासे लेपकर मृदु अग्निसे पकावै, यह औषधि-सर्व प्रकारके विष रोगोंको दूर करै है ॥ ४८ ॥ ४९ ॥

सूतंकान्तंउपलगगनंताप्यकंशुद्धतालं
राजावर्त्तंसुरभिमधुकंमानसीचेतितुल्यम्।
सर्वैस्तुल्यंदृषदिदलितंभृंगतोयेनसर्वं
गोलीभूतंभवतिविमलःसर्वभद्राभिधानः ॥ ५० ॥

इति सर्वतोभद्ररसः।

अर्थ-पारा, कान्तलोह, पत्थर, अभ्रक, सोनामाखी, हरिताल, राजावर्त्त, गूगल, मुलेठी और दुर्गपुष्पी, यह सब समान भाग लेकर सबकी समान भांगरेके रसमें खरलकर गोली बनालेवै। यह औषधि-गुल्मादि रोगोंको दूर करै है ॥ ५० ॥

पारदंसारलौहश्चकान्तलौहसमन्वितम् ।
माक्षिकस्यापिसत्त्वश्चसत्त्वंगगनसंभवम् ॥ ५१ ॥
पूतानिसमभागानिमर्दयेच्चप्रयत्नतः ।
निचुलफलतोयेनगोलकंकारयेत्ततः ॥ ५२ ॥
नवांगुलप्रमाणेनमूषागर्भेऽथपिण्डिका ।
निर्गुण्डीकाकमाचीचगोजिह्वादुग्धिकातथा ॥ ५३ ॥
गृहकन्यांमधुकश्चसैन्धवंपिण्डिकान्ततः ।
स्वेदयेत्पुटयोगेनसापिण्डीदृढतांव्रजेत् ॥ ५४ ॥

इति मृतिजीवनी गुटिका ।

अर्थ-पारा, सारलोह, कान्तलोह, सोनामाखीका सत्व और अभ्रककां सत्वं, यह सब समान भाग लेकर जलवेतके रसमें खरलकर गोला बनालेवै, पश्चात् इस गोलेको नौ अंगुलकी मूषाके गर्भमें स्थापन करै, फिर सह्मालू, मकोय, गोजिया, दूधी, घीकार, मुलेठी और सैंधानोन यह सब एकत्र पीसकर पूर्वोक्त गोलेमें मिलादेवै, मंद अग्निसे पुटपाक करै, इस औषधिको मुखमें धारण करनेसे सर्व प्रकारके रोग दूर होतेहैं ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥

तोलैकंशुद्धसूतस्यगंधकंतच्चतुर्गुणम् ।
कृत्वाकज्जलिकामादौमर्दयेत्तदनंतरम् ॥ ५५ ॥
पक्वंनिचुलतोयेनयथाकल्कोपजायते ।
ततोद्वयस्यताम्रस्यकृत्वापात्राण्यतःपरम् ॥ ५६ ॥
कज्जल्याःसहपत्राणिपक्वंनिचुलवारिणा ।
प्लावयित्वातुबहुधास्थापयेदातपेखरे ॥ ५७ ॥
तत्क्षिप्त्वाचान्धमूषायांपुटपाकंसमाचरेत् ।
चुल्लिकामुद्धृतंमूषांकृत्वात्रीणिप्रदापयेत् ॥ ५८ ॥
पुटानिकुक्कुटाख्यानिसूतसंस्कारसिद्धये ।

सिद्धसूतंसमादायगुंजामानंप्रदापयेत् ॥ ५९ ॥
चित्रकार्द्रकासिन्धूत्थैर्नागवल्लयादलेनवा ।
उपचारन्तुनिर्दिष्टंयथाप्राणेश्वरेरसे ॥ ६० ॥

इतिउदरभास्कररसः ।

अर्थ–शुद्धपारा १ एकतोला, शुद्धगंधक ४ चारतोले, दोनोंकी कज्जलीकर खरलकरै, पश्चात् पके समुद्र फलोंके रसमें इसका कल्क बनाले, फिर दुगुना तांबा लेकर पत्र बनाले, उन पत्रोंको कज्जलीके साथ बहुतवार पके समुद्रफलोंके रसमें भिजोकर प्रचंड धूपमें धरदेवै, फिर अन्धमूषामें रख पुटपाक करै, पश्चात् चूल्हेसे उतारकर कुक्कुटाख्य तीन पुट देवै, प्रतिदिन १ एकरत्तीभर चीते, अदरख, सैंधानोन, या पानके साथ खावै । उपचार प्राणेश्वर रसकी समान है ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥

शुद्धाभ्रकस्यगंधस्यरसस्यचततःपरम् ।
तोलकंकल्पयित्वातुसुगंधस्यचसंख्यया ॥ ६१ ॥
निर्गुण्डीकाकमाचीचधुस्तुरार्द्रकाशिग्रुभिः ।
गिरिकर्णीजयन्तीचभृंगंचातिलपर्णिका ॥ ६२ ॥
दण्डोत्पलीतथाजातीकन्दश्चकेशराजकम् ।
चित्रकश्चमहाराष्ट्रीतथान्यापिप्पलीजटा ॥ ६३ ॥
एतासामौषधीनाञ्चव्योमगंधंतथापरम् ।
रसैःप्रमर्दयेत्खल्लेक्रमेणानेनयत्नतः ॥ ६४ ॥
ततोनिरुन्धयेत्सम्यक्कृत्वासंपुटमध्यगम् ।
आरोप्यसंपुटंचुल्ल्यांकाष्ठाग्निंज्वालयेदधः ॥ ६५ ॥
याममात्रंततोध्मात्वास्वांगशीतलतांगतम् ।
संपुटन्तंसमाकर्षेत्सिद्धसूतंप्रयत्नतः ॥ ६६ ॥
सिद्धसूतात्प्रदातव्याश्चित्रकेणसमन्विताः ।

तिस्रोगुंजाश्चतस्रोवासन्निपातेऽतिदारुणे ॥ ६७ ॥
त्र्यूषणंजीरकेद्वेचयमानीवचयासह ।
आर्द्रकश्चतथापंचलवणानिप्रयोजयेत् ॥ ६८ ॥
क्षारत्रयंतथासर्वंसमभागंप्रकल्पयेत् ।
तत्सर्वमेकतःकृत्वारसमेवविधिःपरम् ॥ ६९ ॥

इति वारिसागररसः ।

अर्थ-अभ्रक, गंधक और पारा प्रत्येक १ एकएक तोला, लेकर सह्यालू, मकोय, धतूरा, अदरख, सैंजिना, कोयल जयंती, भांगरा, तिलवन, सहदेवी, जातीकन्द, कुकुरभांगरा, चीता, जल पीपल और पीपरामूल, प्रत्येकके रसमें क्रमसे एकएक वार खरलकरै, पश्चात् इसको सम्पुटमें रख, सम्पुटको चूल्हेपै स्थापनकर काठकी अग्निसे एक प्रहरतक पकावै, जब स्वांग शीतल होजाय तब सिद्ध पारेको निकाल लेवै, प्रतिदिन १ एकरत्ती खाय, पश्चात् लालचीता, त्रिकुटा, जीरा, अजवायन, वच, अदरख, पंचलवण, जवाखार सज्जी और सुहागेकी खीलोंका चूर्ण सेवन करै, यह वारिसागररस नानाप्रकारके रोगोंको हरै है ॥ ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥

श्वेतापुनर्नवादन्तीवाजिगंधात्रिकत्रयम् ।
दशमूलीवलायुक्तैरेभिर्लौहःप्रसाधितः ॥ ७० ॥
निहन्तिनिहतंकाश्यमपिभृंगविटैरपि ।
नास्त्यनेनसमोलोहःसर्वरोगान्तकारकः ॥
त्रिफलात्रिमदात्रिकटुमिलितसमंलौहम् ॥ ७१ ॥

अर्थ-सफेदकोयल, पुनर्नवा, दन्ती, असगंध, त्रिफला, त्रिकुटा, वायविडंग, चीता, नागरमोथा, दशमूल, खिरेटी, भांगरा और विड़लौन, यह सब एक भाग और सबकी बराबर लोहा लेवै। इस औषधिको यथानुपानके साथ सेवन करै तौ-सर्व प्रकारके रोग दूर होवैं ॥ ७० ॥ ७१ ॥

कासश्वासातिसारज्वरपिटककटीकोठकुष्ठप्रकारान्

मूत्राघातोदरार्शःश्वयथुगलशिरःकर्णशूलाक्षिरोगान् ।
येचान्येवातपित्तक्षयजकफकृताव्याधयःसंतिजन्तो
स्तांस्तानभ्यासयोगादपनमतिपयःपीतमन्तेनिशायाः ७२
विगतघननिशीथेप्रातरुत्थायनित्यं
पिबतिखलुनरोयोनासरन्ध्रेणवारि ।
सभवतिमतिपूर्णश्चक्षुषाताक्ष्यंतुल्यो
वलिपलितविहीनःसर्वरोगैर्विमुक्तः ॥ ७३ ॥
प्रातःपानीयपानेमुनिभिरभिहितंद्रव्यमेतच्चनाद्यात्
मांसंक्षीरंचशाकंसकलविदलकंपिष्टकंचिङ्गटञ्च ।
बिल्वंवेत्राग्रनिम्बंबहुपवनकरंनित्यजातंविदाहि
उष्णान्नंतैलभृष्टंश्रमकुपितवपुःस्वेदनंलंघनंच ॥ ७४ ॥
त्यज्यादभ्यंगमुष्णंबहुपवनवरंतीव्रमादित्यतापं
अग्नेःसेवाविनीतासुरभिजलयुतंलंघनंशीघ्रयानं ॥ ७५ ॥
भक्तंवारियुतंसुपथ्यविहितंतक्रंप्रशस्तंसदा
स्नानंचापिनिरंतरंचशुभदंनिद्राप्रशस्तादिवा ।
कुर्याद्यानिरसायनेचसततंतन्नारिकेलोदकं
दग्धंमीनंमिलित्वापानकरणेझोलञ्चमत्स्यस्यच ॥ ७६ ॥

अर्थ-जो मनुष्य नित्य रात्रिके अंतमें विधिपूर्वक जलपान करतेहैं, उनके खाँसी, श्वास, अतीसार, ज्वर, पिटक, कटिरोग, कोठरोग, कुष्ठरोग, मूत्राघात, उदररोग, बवासीर, सूजन, गलरोग, शिरोरोग, कर्णरोग, शूलरोग, नेत्ररोग, वात, पित्त, क्षय और कफसे, उत्पन्न हुए यह सबरोग नष्ट होजातेहैं । जो मनुष्य मेघरहित रात्रिके अंतमें अर्थात् सूर्योदयसे पहिले नित्य उठकर नासिकाके द्वारा जल पीतेहैं,-वह मति पूर्ण, दृष्टिमें गरुडकीसमान, वलिपलितहीन, और सर्वरोगोंसे छुट जाते हैं । नित्य प्रातःकाल जलपीनेवाले मनुष्यको मांस, दूध, शाक, सर्वप्रकारके विदल अन्न, पिष्टक, चिंगट, वेल, वेतका अग्रभाग, नीम, वातको

करनेवाले पदार्थ, दाहजनक पदार्थ, उष्ण अन्न, तेलमें भुनेहुए पदार्थ, परिश्रम, स्वेद,लंघन,तीक्ष्णद्रव्य, अग्निसेवन, शीघ्रगमन आदि त्यागदेवै। और जलयुक्त भात, तक्र, स्नान, दिनमें सोना, नारियलका जल, भुनी-मछली, और मछलियोंका झोल सदैव सेवनकरै ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४॥ ॥ ७५ ॥ ७६ ॥

त्रिफलायाःपलशतंचूर्णंभृङ्गरसाम्बुना।
भावयेत्सप्तवारास्तुच्छायाशुष्कन्तुकारयेत् ॥ ७७ ॥
पादंगंधकचूर्णस्यतदर्द्धंपारदंक्षिपेत्।
लिह्यान्मधुघृताभ्यांचमात्रयाप्रत्यहंपुमान् ॥ ७८ ॥
जीर्णेभोज्येह्यनाहारेगुणानेतानवाप्नुयात् ॥
प्रसन्नदृष्टिरव्याधिर्जीवेद्वर्षशतत्रयम् ॥ ७९ ॥

इति त्रिफलारसायनम्।

अर्थ-१०० सौ पल त्रिफलेके चूर्णको भांगरेके रसमें ७ सात वार भावना देकर छायामें सुखादेवै, पश्चात् इसमें २५ पचीस पल गंधक और १२॥ साढ़ेबारहपल पारा मिलादेवै। इसको प्रतिदिन सहत घृतमें मिलाकर सेवनकरै, भोजनके जीर्ण होनेमें अथवा भोजनसे पहिले खाय। यह-दृष्टिको प्रसन्न करैहै, सम्पूर्ण रोगोंको हरैहै, और ३०० तीनसौ वर्षकी आयु करैहै ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥

विडंगसारोमेधाख्योरक्तवह्निररुष्करः।
हस्तिकर्णःसितार्कश्चतथाश्वेतपुनर्नवा ॥ ८० ॥
वागुजीमुण्डिकाभृंगराजकोवृद्धदायकः।
गुडूच्यतिवलारास्नातालमूलीशतावरी ॥ ८१ ॥
पिण्डारोच्चटागजाःसमूलःकेशराजकः।
पारदंचपृथक्कर्षंलौहस्यपलपंचकम् ॥ ८२ ॥
पंचपलानिचाभ्रस्यपलमेकन्तुगुग्गुलोः।
द्विपलंगन्धकात्प्रोक्तंषट्कर्षाणिमनःशिला ॥ ८३ ॥

स्वर्णमाक्षिककर्षैकंपलंसार्द्धंशिलाजतोः।
त्रिफलात्रिकटूनाञ्चप्रत्येकंकार्षिकद्वयम् ॥ ८४ ॥
सर्वाण्येतानिसंचूर्ण्यघृतेनमधुनासह।
घृतभाण्डेसमालोड्यभक्षयेत्क्रमयोगतः ॥
संज्ञयासर्वतोभद्रंनिरत्ययमुदाहृतम् ॥ ८५ ॥

इति सर्वतोभद्रलौहम्।

अर्थ-विडंगसार, नागरमोथा, लालचीता, भिलावा, हस्तिकर्ण पलाश, सफेद आक, सफेद पुनर्नवा, वापची, गोरखमुण्डी, भांगरा, विधारा, गिलोय, कंघी, रास्ना, मुसली, सतावर, पिण्डार, निर्विषी-तृण, नागकेशर, मूली, कुकुरभांगरा, और पारा, प्रत्येक एकएक कर्ष, लोहा ५ पाँचपल, अभ्रक १ एकपल, गूगल १ एकपल, गंधक २ दोपल, मैनशिल ६ छैकर्ष, सोनामाखी १ एककर्ष, शिलाजीत ६ तोले त्रिफला २ कर्ष और त्रिकुटा २ कर्ष सबको एकत्रपीस बारीक चूर्णकर घृत और सहतमें मिलाके घीकेबासनमें भरके रखदेवै, इसको सेवनकरनेसे-अम्लपित्तादि नानाप्रकारके रोग दूरहोते हैं ॥८०॥ ८१ ॥ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ ८५ ॥

सहदेवा बलाचैवसूर्यावर्त्तोऽथमारिषः।
अपामार्गोऽमृताचेतिसम्यक्सम्पादयेद्भिषक् ॥८६॥
एषांपलानिचत्वारिप्रत्येकंकुट्टयेत्ततः।
अतऊर्द्ध्वंतदत्वामण्डूरंयत्पुरातनम् ॥ ८७ ॥
गोमूत्रेणपचेत्तावद्यावद्गोमूत्रशोषणम्।
तस्मादुद्धृत्यतच्चूर्णंकुर्यात्पलचतुष्टयम् ॥ ८८ ॥
त्रिकटुत्रिफलामुस्तगुडूचीचित्रकंत्रिवृत्।
दन्तीविडंगमेकैकंकर्षमेयान्तुचूर्णयेत् ॥ ८९ ॥
एकपत्रीकृतस्याथवज्रकाभ्रस्ययत्पलम्।
वार्य्येन्नाम्भस्त्रिरात्रस्थंवारिपर्णीरसाप्लुतम् ॥ ९० ॥

आतपेशोषयेत्तीक्ष्णेदिनमेकंसुरक्षया।
शूरणस्यरसैःपिष्ट्वातत्रटंकणकस्यच ॥ ९१ ॥
दत्वाष्टौमासकांस्तत्रपुटपाकेनपाचयेत्।
मृन्मयेसुदृढेपात्रेमृदुनागोमयाग्निना ॥ ९२ ॥
रसाद्द्वादशमासाश्चकर्षगन्धकतःपृथक्।
रसेमण्डूकपर्ण्याश्चमूर्च्छितौकज्जलीकृतौ ॥ ९३ ॥
घृतस्यमधुनश्चापिपृथक्पलचतुष्टयम्।
तत्सर्वमेकतःकृत्वास्निग्धेभाण्डेनिधापयेत् ॥ ९४ ॥
ततोऽष्टौमासकान्खादेद्दशवाद्वादशैवच।
कर्षवापितथाकुर्याद्बुद्ध्वादोषबलाबलम् ॥ ९५ ॥
दुग्धंचापिपिबेद्रोगीवह्नौमंदभवेततः।
तप्तोदकानुपानंवासेवेच्चग्रहणीगदे ॥
अजाक्षीरानुपानञ्चश्वासकासेप्रयोजयेत् ॥ ९६ ॥

इति रसाभ्रगुटिका।

अर्थ–सहदेई, खिरैटी, डुलडुल मरसा, चिरचिटा और गिलोय, प्रत्येक चारचार पल ले कूटकर आधेको एक हाँडीमें रखदेवै, उसके ऊपर पुराना मण्डुर रस कर फिर ऊपरसे पूर्वोक्त आधा कुटाहुवा द्रव्य रखदेवै, फिर गोमूत्र डालकर पकावै, जब गोमूत्र जलकर सूख जाय तब निकालकर ४ चार पल चूर्ण करले, फिर इस चूर्णमें त्रिकुटा, त्रिफला, नागरमोथा, गिलोय, चीता, निसोत, दन्ती और वायविडंग, प्रत्येकका चूर्ण एक एक कर्ष मिलालेवै, पश्चात् एकपत्री किया हुआ वज्राभ्रक १ एक पल लेकर जलकुम्भीके रसमें तीनदिन भिजोकर एक दिन धूपमें सुखावै, फिर जमीकन्दके रसमें पीस इसमें ८ आठमासे सुहागा मिला दृढ़ मट्टीके पात्रमें मंद मंद उपलोंकी अग्निसे पुटपाक करै पश्चात् इसका चूर्णकर पूर्वोक्त चूर्णके साथ मण्डूकपर्णीके रसमें मूर्च्छित कीहुई कज्जली चार ४ तोले, घृत ४ चारपल, और सहत ४ चारपल, सबको मिलाकर एक घीके बासनमें रखदेवै, इसको दोष और बलानु-

सार सेवन करै। अनुपान–मंदाग्निरोगमें दूत, संग्रहणी रोगमें गरम जल श्वास और खाँसीमें बकरीका दूध, यह अर्शादि रोगोंको दूर करैहै ॥ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ ९० ॥ ९१ ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ ॥ ९५ ॥ ९६ ॥

चित्रकंमाणकश्चैवशूरणंघण्टकर्णकम्।
ग्रान्थिकंत्रिफलाव्योषंकट्फलंसपुनर्नवम् ॥ ९७ ॥
दण्डोत्पलंवृश्चिकालीरुदन्तीकाकमाचिका।
सूर्यावर्त्तत्रिवृद्दन्तीक्रिमिघ्नंकुष्ठमुस्तकम् ॥ ९८ ॥
शतपुष्पावचाचव्यंपत्रंरास्नाचतोलकम्।
माक्षिकाणाश्चताम्राणांपलंगंधकसूतयोः ॥ ९९ ॥
अभ्रकंद्विपलंग्राह्यंपात्रेकृत्वादृढोपमे।
सर्वमेकत्रसंमर्द्यद्विगुणंमृतमायसम् ॥
चूर्णंसर्वेश्वरोनामसर्वामयनिबर्हणम् ॥ १०० ॥

इति सर्वेश्वरोरसः।

अर्थ–चीता, मानकन्द, जमीकन्द, घण्टाकर्ण, पीपलामूल, हरड़ बहेडा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल, कायफल, पुनर्नवा, दण्डोत्पल विछारी, रुदन्ती, काकमाची, वायविडंग, दन्तीकी जड, सूर्यावर्त्त, कूठ, नागरमोथा, निसोत, सोया, वच, चव्य, तेजपात और रास्ना, प्रत्येकका चूर्ण एक एक तोले, सोनामाखी, ताँबा, पारा, और गंधक प्रत्येकका चूर्ण ४ चार चार तोले, अभ्रकका चूर्ण आठ ८ तोले, और दुगुना लोहेका चूर्ण, सबको एकत्र कर उत्तम दृढ़पात्रमें मर्दन करै, यह सर्वेश्वर नामवाला चूर्ण– सर्व प्रकारके रोगोंको दूर करैहै ॥ ९७ ॥ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ १०० ॥

पलंकृष्णाभ्रचूर्णस्यतदर्द्धंरसगंधके।
कर्पूरस्यतदर्द्धन्तुजातीकोषफलेतथा ॥ १०१ ॥
वृद्धदारकबीजश्चबीजमुन्मत्तकस्यच।
त्रैल्योक्यविजयाबीजंविदारीकन्दमेवच ॥ १०२ ॥

नारायणीतथानागबलाचातिबलातथा ।
बीजंगोक्षुरकस्यापिएञ्जलंबीजमेवच ॥ १०३ ॥
एतेषांकार्षिकंचूर्णगृहीत्वावारिणापुनः ।
निष्पिष्यवटिकाकार्यात्रिगुंजाफलमानतः ॥ १०४ ॥
निहन्तिसन्निपातोत्थान्गदान्घोरान्सुदारुणान् ।
वातोत्थान्पैत्तिकांश्चापिनास्त्यत्रनियमःक्वचित् ॥ १०५ ॥
अनुपानमिदंप्रोक्तंमांसंपिष्टंपयोदधि ।
वारितक्रसुधासीधूसेवनात्कामरूपधृक् ॥ १०६ ॥
इतिलक्ष्मीविलासोरसः ।

अर्थ-कृष्णाभ्रक चार ४ तोले, कज्जली ४ चारतोले, कपूर २ दोतोले जायफल, जाविञीकाचूर्ण २ दोतोले, और विधारेकेबीज, धतूरेकेबीज, भांगकेबीज, विदारीकन्द, सतावर, गंगेरन, कंघी, गोखुरुकेबीज और समुद्रफलकेबीज, प्रत्येकका चूर्ण २ दोदोतोले, सबको एकत्र जलमें पीसकर तीन तीनरत्तीकी गोलीबनाले, प्रतिदिन एकगोली खाय तौ नानाप्रकारके रोग दूरहों। अनुपान-दूध, दही, पिष्टक, मांस, जल, तक्र सीधु और सुरा ॥ १०१ ॥ १०२ ॥ १०३ ॥ १०४ ॥ १०५ ॥ १०६ ॥

शुद्धंकृष्णाभ्रचूर्णंद्विपलपरिमितंशाणमानंयदन्यत्
कर्पूरंजातिकोषंसजलमिभकणातेजपत्रंलवंगम् ।
मांसीतालीशचोचंकरिकुसुमगदंधातुकीचेतितुल्यम्
पथ्याधात्रीविभीतंत्रिकटुकपृथकत्वर्द्धशाणंद्विशाणं १०७
एलाजातीफलाख्यंक्षितितलविधिनाशुद्धगंधाश्वकोलं
कोलार्द्धंपारदस्यप्रदिपदनिहितंपिष्टमेकत्रमिश्रम् ।
पानीयेनैवकार्याःपरिमितचणकास्विन्नतुल्याश्ववध्यः ॥
प्रातःखाद्याश्वतस्त्रस्तदनुचाकियत्शृंगवेरंसपटुं
पानीयंपीतमन्तेध्रुवमपहरतिक्षिप्रमादौविकारान् १०८॥

इतिशृङ्गाराभ्रम् ।

अर्थ–शुद्धकृष्णाभ्रककाचूर्ण ८ आठतोले, कपूर, जायफल, सुगंधवाला, गजपीपल, तेजपात, लौंग, बालछड़, तालीशपत्र, दालचीनी, नागकेशर, कूठ और धायकेफूल प्रत्येकका चूर्ण चारचारमासे, हरड़, बहेड़ा, आमला, सौंठ, मिरच और पीपल, प्रत्येकका चूर्ण दोदोमासे इलायची और जावित्री प्रत्येकका चूर्ण ८ आठमासे, शुद्धगंधक और शिलाजीत प्रत्येकएकतोला, तथा पारा (रससिंदूर) ६ मासे, इन सबको एकत्र जलमें पीसकर चनेकी बराबर गोली बनालेवै, प्रतिदिन प्रातःकाल १ एकगोली, अदरख और पानकेरसके साथ सेवनकरै और ऊपरसे जलपीवै, यह औषधि कासादिरोगोंको दूरकरैहै। इस औषधिको सेवन करनेवाला मनुष्य मांस, मूंगादिकायूष, घी और सुपथ्यादिके साथ अन्नभोजनकरै ॥ १०७ ॥ १०८ ॥

विदारीकन्दजंचूर्णंचतुर्दशपलोन्मितम् ।
शाखोटबीजद्विपलंलाजाफलचतुष्टयम् ॥ १०९ ॥
सितापलशतंदेयंक्षीरंदत्त्वाविपाचयेत् ।
जातीफलंत्रिजातश्चसशटीग्रन्थिपर्णिभिः ॥ ११० ॥
यमानिकातथाव्योषंप्रत्येकंचूर्णशुक्तिभिः ।
सिद्धेपाकेक्षिपेत्सर्वंमोदकंशुक्रजीवनम् ॥ १११ ॥
समृद्धयतिवीर्यञ्चतेजोबलकरंपरम् ॥ ११२ ॥

इतिशुक्रसंजीवनीयो मोदकः ।

अर्थ–विदारीकन्दकाचूर्ण १४ चौदहपल, सिहोड़ेके बीज २ दोपल, खीलैं ४ चारपल, मिश्री १०० सौपल, इन सबको १२८ एकसौ अट्ठाईसपलदूधमें डालकर पकावै जब पककर सिद्धहोजाय तब जायफल, त्रिजातक, कचूर, गठिवन, अजवायन और त्रिकुटा प्रत्येककाचूर्ण चार चारतोले मिलाकर शुक्रजीवन नामवाले मोदक बनाले। यह मोदक शुक्र, तेज और बलको बढ़ावैहै ॥ १०९ ॥ ११० ॥ १११॥ ११२॥

फलत्रिकामृतामुस्तवृद्धदारविडंगकम् ।
वचानामेकशंचैवद्विपलंद्विपलंभवेत् ॥ ११३ ॥
कटुत्रिकंकणामूलंजलमूलकचित्रकैः ।

त्वगेलानागचूर्णानांप्रत्येकंचपलंपलम् ॥ ११४ ॥
सर्वंचूर्णमिदंश्लक्ष्णंपलानांपंचविंशतिः ।
द्विगुणेनगुडेनैवमोदकंपरिकल्पयेत् ॥ ११५ ॥
शतत्रयंयष्ट्यधिकंप्रत्यहंभोजनोपरि ।
सुविशुद्धशरीरस्तुशस्तेकालेशुभेदिने ॥ ११६ ॥
एकैकंकृत्वाकालेभक्षयेदामृतोपमम् ।
जलंवाअनुपातव्यंभोजनंसर्वकामिकम् ॥ ११७ ॥
मासेतुप्रथमेसर्वान्व्याधींश्चनाशयेद्ध्रुवम् ।
द्वितीयेपुष्टिजननंतृतीयेकनकप्रभः ॥ ११८ ॥
चतुर्थेशुक्रबहुलःपंचमेतुमहामतिः ।
षष्ठेनागसहस्राणांबलाद्देवातिरिच्यते ॥ ११९ ॥
सप्तमेवाजिवेगःस्यादष्टमेमंत्रसाधकः ।
सर्वज्ञोनवमेमासिदशमेपवनोपमः ॥ १२० ॥
स्त्रीजिदेकादशेमासेनाग्निनाद्वादशेदहेत् ॥
वलीपलितनिर्मुक्तोयुवकादधिकोभवेत् ॥ १२१ ॥
एवंसंवत्सरंयावद्यःकरोतिपुमानिह ।
वत्सराणांसहस्राणिजीवेन्नास्त्यत्रसंशयः ॥ १२२ ॥

इति अमृतसारगुटिका ।

अर्थ-हरड़, बहेड़ा, आमला, गिलोय, नागरमोथा, विधारा और वच, प्रत्येकाचूर्ण आठ आठतोले, सोंठ, मिरच, पीपल, पीपलामूल, सुगंधवाला, चीतेकीजड़, दालचीनी, इलायची और नागकेशर, प्रत्येकका चूर्ण चार चार तोले और सबसे दुगुना गुड़लेवै, सबको मिलाकर ३६० तीनसौ साठ लड्डू बनालेवै । वमन विरेचनादिसे शुद्ध होकर शुभसमय शुभदिनमें रोज रोज एक लड्डू खाय और ऊपरसे जलपीवै । इस औषधिपै इच्छानुसार भोजन पान करै । इसको सेवनकरनेसे पहिले महीनेमें सर्वप्रकारके रोग दूर होतेहैं । दूसरे महीनेमें पुष्टि बढ़ती

है। तीसरे महीनेमें सुवर्णकी समान शरीरकी कान्ति होतीहै। चौथे महीनेमें शुक्रकी अधिकता होतीहै। पाँचमें महीनेमें महाबुद्धिवान् होजाताहै। छठे महीनेमें हाथीकी समान बली होताहै। सातवें महीनेमें घोडेकी समान वेग होताहै। आठमें महीनेमें मंत्रसिद्धि होतीहै। नवमें महीनेमें सर्वज्ञ होताहै। दशमहीनेमें पवनकी समान गति होतीहै। ग्यारहवें महीनेमें मैथुनकेद्वारा स्त्रीको जीतताहै। बारहमें महीनेमें अग्निकी समान तेजकी वृद्धि होतीहै। एकवर्षके पश्चात् वली पलितादि रोगोंसे रहित होकर दीर्घायु होताहै ॥ ११३ ॥ ११४ ॥ ११५ ॥ ११६ ॥ ॥ ११७ ॥ ११८ ॥ ११९ ॥ १२० ॥ १२१ ॥ १२२ ॥

क्काथेमधुरवर्गस्याप्रस्थेप्रस्थेतथैवच।
पंचमूल्यास्तृणाख्यायाःसिताप्रस्थंविपाचयेत् ॥१२३॥
दत्वार्द्धकुडवंसर्पिर्नारिकेलजलस्यच।
प्रस्थत्रयंविनिक्षिप्यदृढेपात्रेशनैःशनैः ॥ १२४ ॥
सिद्धेवतारितेशीतेचूर्णमेषांविनिक्षिपेत्।
मुस्तैलापत्रधन्याकजीरकाणांगुडत्वचः ॥ १२५ ॥
काख्यावंशजायाश्चरोचनायास्तथैवच।
शाणद्वयमिदंकृत्वाप्रत्येकंकेशरस्यच ॥ १२६ ॥
खादेदग्निबलाक्षेपीपथ्यभुक्मात्रयानरः।
सनाशयेत्सर्वरोगान्शर्करालेहउत्तमः ॥ १२७ ॥

इति शर्करावलेहः।

इति रसायनाधिकारः।

अर्थ-मेदा, महामेदा, ऋद्धि, जीवक, ऋषभक, काकोली, क्षीरकाकोली, जीवन्ती और मुलेठी, इस मधुवर्गका क्काथ २ दो सेर, तृणपंचमूलका क्काथ २ दो सेर, मिश्री २ दो सेर, घी ऽ॥ आधसेर, और नारियलका जल ६ छै सेर, सबको एकत्र पकावै, जब सिद्धहोजाय तब उतारले, शीतल होनेपर नागरमोथा, इलायची तेजपात, धनिया, जीरा, दालचीनी, सौंफ, वंशलोचन, गोलोचन, और नागकेशर, प्रत्येकका चूर्ण आठ आठ मासे मिलादेवै, इसको अग्निका बलाबल देखकर

खावै। यह शर्करावलेह-सर्वप्रकारके पित्त वातादि रोगोंको दूर करैहै। इसपै पथ्य भोजन करै॥ १२३॥ १२४॥ १२५॥ १२६॥ १२७॥

इति रसायनाधिकारः समाप्तः।

नाभिमूलेभवेच्छूलंनिद्रालस्यंज्वरोऽरुचिः।
जाड्यंमलग्रहोदाहोरसाजीर्णेभवेन्नृणाम्॥ १॥
रसाजीर्णमितिज्ञात्वाततःकुर्यात्प्रतिक्रियाम्।
दिनत्रयंप्रयत्नेनक्रियमाणेरसायने॥ २॥
कर्कोटीकन्दसद्भूतंकषायंत्रिदिनंपिबेत्।
रसाजीर्णेपिबेद्वापिगोजलंरुचकान्वितम्॥ ३॥
विश्वसैन्धवसंयुक्तंमातुलुंगस्यमूलकम्।
अंगिनाद्रागकल्केनभुक्तोयदिभवेद्रसः॥ ४॥
नागदोषविशुद्ध्यर्थंगोमूत्रेणसमन्वितम्।
पटुयुक्तंपिबेन्मूलंकारवेल्लयाभवन्तथा॥ ५॥
एषांनागभवोदोषोनाशमायातिनिश्चितम्॥
वन्ध्याकर्कोटकंपुष्पंगरुडीचततःपरम्॥ ६॥
असामान्यतमंमूलंक्षिप्त्वागोजलमध्यतः।
अत्यम्लकटुतिक्तैश्चसूतःस्रवतिसेवितैः॥ ७॥
अत्यम्ललवणाहारैर्मन्दवीर्योभवेद्रसः।
सततंवर्जयेदेकाहारञ्चरससेवकः॥ ८॥
नश्यत्यग्निरनाहारात्सूतोनैवक्रमेत्तनौ।
रोगशान्तिंतथाकर्त्तुंनैवशक्नोति पारदः॥ ९॥
विचित्रैर्भोजनैस्तस्माद्रसंसमुपबृंहयेत्।
निषिद्धंवर्जयेत्सर्वंरससेवाविधौनरः॥ १०॥
रसस्रावकरंवर्ज्यंभोजनेचातियत्नतः।
अग्निमान्द्यकरंतद्वद्वर्ज्यंश्चापिप्रयत्नतः॥ ११॥

अर्थ-नाभिशूल, निद्रा, आलस्य, ज्वर, अरुचि, जड़ता, मलबंध, दाह, यह लक्षण होय तौ रसाजीर्ण जानना। रसाजीर्णके उत्पन्न होतेही तत्काल उसका प्रतिकार करना चाहिये। ककोड़ेके कन्दका क्राथ तीन दिन पीनेसे अथवा कालेनोनके साथ गोमूत्रको पीनेसे रसाजीर्ण नष्ट होताहै। सोंठका चूर्ण, सैंधेनोनका चूर्ण और बिजौरेकी केशर, तीनोंको एकत्र सेवन करनेसे-रसाजीर्ण रोग दूर होता है। मनुष्योंके नागदोष युक्त पारेको सेवन करनेसे-रसाजीर्ण होय तौ नागदोषको दूर करनेके लिये सैंधेनोनका चूर्ण और करेलेकी जडके चूर्णके साथ गोमूत्रको सेवन करै, इससे नागदोष दूर होताहै। वन्ध्याककोंडेके फूल और छिलहिंडकी जड़, थोडेसे गोमूत्रमें पीसकर सेवन करनेसे नाग दोष नष्ट होताहै। अत्यंत खट्टी, चरपरी और कडवी वस्तू खानेसे पारा झिरकर निकलजाताहै, तथा अत्यन्त खटाई और लवणके साथ आहार करनेसे-पारा हीनवीर्य होजाताहै। रसको सेवन करनेवाला मनुष्य सदैव एक प्रकारका अहार त्याग देवै। और एकवार ग्रंथमें आहार न करनेसे जठराग्नि नष्ट होती है पारा निजशक्तिको प्रकाशित नहीं करता और रोग नष्ट करनेकोभी समर्थ नहीं होता, इसकारण पारेको सेवन करनेवाला मनुष्य नानाप्रकारके आहारोंको सेवन करै। पारेको सेवन करनेवाला मनुष्य रसविधिमें संपूर्ण निषिद्धविषय सदैव त्यागदे, तथा आहारके द्रव्योंमें रसस्रावक और मंदाग्निजनक पदार्थ समस्त त्यागने चाहिये ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥

वलीपलितनिर्मुक्तोमृत्युहीनोभवेन्नरः।
जायतेमन्मथाकारोनरोऽपिप्रमदारतः ॥ १२ ॥
रसायनेहिनिर्दिष्टंप्रायशोरससेवने।
बुद्धिप्रजाबलंकान्तिप्रभावेणयथाबहिः ॥ १३ ॥
नौषधंपारदादन्यन्नदेवःकेशवात्परः।
नवैद्यादपरोबन्धुर्न्नदानादपरोविधिः ॥ १४ ॥
आरोग्यंलघुतासौष्ठ्यंरुचिगुर्व्वन्नजीर्णता।
रोगनाशश्चवृष्यश्चसततंरससेवनात् ॥ १५ ॥

इतिरसोपद्रवशमनम्।

अर्थ-विधिपूर्वक पारेको सेवन करनेसे वली (शरीरमें बलोंका पडना), पलित (बिना समयके बालोंका धवल होजाना) हीन, मृत्युके भयसे रहित और कामदेवके समान स्त्रियोंमें रमण रहता है। तथा बुद्धि, सन्तान, बल और कान्ति बढती है। जैसे-संसारमें कृष्णकी समान दूसरा देवता नहीं है, वैद्यकी समान भाई नहीं है, दानकी समान अन्य विधि नहीं है, उसीप्रकार पारेकी समान अन्य औषधि नहीं है। सदैव पारेको सेवन करनेसे आरोग्यता, शरीरमें लघुता सुन्दरता, रुचि, गुरुपाकी अन्नोंका जीर्ण होना, रोगोंका नाश और वीर्यकी वृद्धि होती है ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥

इति रसोपद्रवचिकित्सासमाप्ता।

अथ वाजीकरणमाह।

वातादिकुणपंग्रन्थिक्षीणपूयमलाह्वयम्।
प्रजासमत्वंरेतोस्रंस्वलिंगैर्दोषजंवदेत् ॥ १ ॥
रक्तेनकुणपंश्लेष्मवाताद्यग्रन्थिसंभवम्।
पूयाभंरक्तपित्ताभ्यांक्षीणंमारुतपित्ततः ॥ २ ॥
कृच्छ्राण्येतानिसाध्यानित्रिदोषंमूत्रविट्निभम्।
ते स्वान्याञ्छुक्रदोषांस्तान्स्नेहस्वेदादिभिर्भवेत् ॥ ३ ॥

अर्थ-मनुष्योंका वीर्यवातादि दोषोंसे दूषित होकर दुर्गन्धित, क्षीण, ग्रन्थि, राधकी समान, और मलकी सदृश होजाताहै, तहां रुधिरसे दुर्गन्धित, कफवातसे ग्रन्थियुक्त, रक्तपित्तसे क्षीण और त्रिदोषसे मूत्र और मलकी समान होता है। त्रिदोषजको छोडकर अन्यान्य सर्व प्रकारके शुक्र दोष स्नेह स्वेदादिसे आरोग्य होते हैं, परन्तु त्रिदोषजन्य शुक्र कष्ट साध्य है ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥

पिप्पलीलवणोपेतौवस्ताण्डौक्षीरसर्पिषा।
साधितौभक्षयेद्यस्तुसगच्छेत्प्रमदाशतम् ॥ ४ ॥
वस्ताण्डसिद्धेपयसिभावितानसकृत्तिलान्।
यःखादेत्सनरोगच्छेत्स्त्रीणांशतमपूर्ववत् ॥ ५ ॥

चूर्णंविदार्याःसुहृतंस्वरसेनैप्रभावितम् ।
सर्पिःक्षौद्रयुतोलीढ्वादशगच्छेन्नरोऽगनाः ॥ ६ ॥
भूमिकूष्माण्डमूलचूर्णमस्यैवमूलरसेन
भावितंरात्रौलेह्यम् । एवमामलकचूर्णं
स्वरसेनैवभावितम् ॥ ७ ॥
शर्करामधुसर्पिभ्यांयुक्तंलीढ्वापयःपिबेत् ।
एतेनाशीतिवर्षोपियुवेवपरिहृष्यति ॥ ८ ॥
विदारीकन्दकल्कन्तुघृतेनपयसानरः ।
उदुम्बरसमंपीत्वावृद्धोऽपितरुणायते ॥ ९ ॥
गोक्षुरकःक्षुरकःशतमूलीवानरीनागबलाऽतिबलानाम् ।
चूर्णमिदंपयसानिशिपेयंयस्यगृहेप्रमदाशतमस्ति ॥ १० ॥

अर्थ–पीपल और सैंधानोन मिलाकर बकरेके अंडकोषोंको घी और दूधके साथ पकावै, पश्चात् इसको खानेसे–सौ १०० स्त्रियोंसे गमन करनेको समर्थ होताहै । जिस दूधमें बकरेके अंडकोषों को पकायाहै उस दूधमें तिलोंको वारंवार भावनादेकर खानेसे–सौ १०० स्त्रियोंसे गमन करनेकी शक्ति होजातीहै । विदारीकन्दके चूर्णको विदारीकन्दके रसमें भावना देकर घृत और सहतकेसाथ सेवनकरनेसे–दश १० स्त्रियोंसे गमनकरनेकी शक्ति होतीहै । विदारीकन्दकी जड़के चूर्णको विदारीकन्दके जड़के रसमें भावनादेकर रात्रिमें शर्करा, घृत और सहतके साथ चाटै, ऊपरसे दूध पीवै, अथवा आमलोंके चूर्णको आमलोंके रसमें भावना देकर शर्करा, घृत और सहतके साथ चाटै, पश्चात् दूध पीवै तौ ८० अस्सीवर्षका वृद्धभी जवानकी समान होजाताहै । विदारी कन्दकी जड़को पीसकर घृत और दूधकेसाथ सेवनकरै तौ वृद्ध मनुष्यभी तरुणताको प्राप्त होताहै । गोखरू, तालमखाना, सतावर, कौंछ,गंगेरन और खिरैंटी, इनका चूर्ण करकै दूधकेसाथ रात्रिमें पीवै तौ १०० सौ स्त्रियोंमें रमणको समर्थहो ॥ ४ ॥५॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥

शतावर्य्यारजःप्रस्थंप्रस्थंगोक्षुरकस्यच ।
वराह्याविंशतिपलंगुडूच्याःपंचविंशतिम् ॥ ११ ॥
भल्लातकानांद्वात्रिंशच्चित्रकस्यदशैवतु ।
तिलानांशोधितानाञ्चप्रस्थंदद्यात्सुचूर्णितम् ॥ १२ ॥
त्र्यूषणस्यपलान्यष्टौशर्करायास्तुसप्तभिः ।
माक्षिकंशर्कराद्धेंनमाक्षिकाद्धेंनचैघृतम् ॥ १३ ॥
शतावरीसमंदेयंविदारीकन्दजंरजः ।
एतदेकीकृतं चूर्णं स्निग्धे भाण्डे निधापयेत् ॥ १४ ॥
पलार्द्धमुपयुञ्जीतयथेष्टञ्चास्य भोजनम् ।
मासैकमुपयोगेन जरां हन्तिरुजापहम् ॥ १५ ॥

नरसिंहचूर्णम् ।

अर्थ–सतावरकाचूर्ण दो २ सेर, गोखुरूकाचूर्ण २ दो सेर, वाराही-कन्दकाचूर्ण २॥ ढाई सेर गिलोयका चूर्ण ३ तीनसेर, चार ४ तोले, भिलावेकेबीजोंका चूर्ण ४ चारसेर, चीतेका चूर्ण १। सवासेर, शुद्ध किये हुए तिलोंका चूर्ण २ दो सेर, त्रिकुटेका चूर्ण १ एकसेर, शर्करा ७ सात पल, सहत १४ चौदह तोले, घी ७ सात तोले, और विदारीकंदका चूर्ण २ दो सेर, सबको एकत्र करके एक चिकने बासनमें भरके रखदेवै, इसमेंसे प्रतिदिन २ दो तोले खाय, इसके ऊपर यथेष्ट भोजन करै, यह औषधि एकमहीनेमें जरा और ज्वरादिरोगोंको दूर करै है ॥ ११ ॥ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥

घृतंशतावरीगर्भंक्षीरेदशगुणेपचेत् ।
शर्करापिप्पलीक्षौद्रयुक्तंतद्वृष्यमुच्यते ॥ १६ ॥

इति शतावरीघृतम् ।

अर्थ–गायका घी २ दो सेर, दूध २० बीससेर, तथा कल्ककेलिये सतावरका चूर्ण ऽ॥ आधसेर, यथाविधिसे घृतको सिद्धकरै । सिद्धहोनेपर शर्करा, पीपलका चूर्ण, और सहत मिलाके इसको सेवन करै इससे अत्यन्त वीर्यकी वृद्धिहोतीहै ॥ १६ ॥

यत्किञ्चिन्मधुरंस्निग्धंजीवनंबृंहणंगुरु ।
हर्षणंमनसश्चैवसर्वंतद्वृष्यमुच्यते ॥ १७ ॥
यदिमासाद्रसंशुक्रंउग्रंबतानिरर्थकम् ।
प्रायश्च्योतयतेहिशुक्रंशय्यान्यत्रकरोतितत् ॥ १८ ॥
नरोवीर्य्यकरान्रोगान्सम्यक्शुद्धोनिरामयः ।
आसप्ततिंप्रकुर्वीतवर्षादूर्द्ध्वंश्चषोडशात् ॥ १९ ॥
नतुवैषोडशाद्वर्षात्सप्ततेःपरतोनच ।
आयुःकामोनरःस्त्रीभिःसंयोगंकर्त्तुमर्हति ॥ २० ॥
कल्याणोदग्रवयसोवाजीकरणसेवितः ।
सर्वेषुऋतुषुवह्वव्यवायोहिनिवारितः ॥ २१ ॥
आयुष्मन्तोमन्दजरावपुर्वर्णबलान्वितः ।
स्थिरोपचितमांसाश्चभवन्तिस्त्रीषुसंयताः ॥ २२ ॥
त्रिभिस्त्रिभिरहोभिश्चसेवेतप्रमदानरः ।
सर्वेषुऋतुषुग्रीष्मेपश्चात्पश्चाद्व्रजेद्बुधः ॥ २३ ॥
योगान्संसेव्यवृष्यान्सासितमथपयःशीतलंचाम्बुपीत्वा
गच्छेन्नारींसुरूपांस्मरशतवलांकामुकःकाममाद्ये ।
यामेहृष्टप्रहृष्टांव्यपगतसुरतःसंस्वपेन्नित्यनित्यां
कान्तःकान्ताङ्गसंगादपहृतनरोधातुवैषम्यमेति ॥ २४॥
ग्लानिःकम्पोरुदौर्वल्यंधात्विन्द्रियवलक्षयः ।
क्षयवृद्ध्युपदंशाद्यारोगाश्चातिवदुर्ज्जयाः ॥ २५ ॥
अनेनमरणञ्चास्याद्व्रजतःस्त्रियमन्यथा ।
शोषकासज्वरार्शांसिश्वासकासातिपाण्डुता ॥ २६ ॥
अतिव्यवायाज्जायन्तेरोगाश्चाक्षेपकादयः ।
असेवनान्मेहमेदोग्रन्थिरग्नेश्चमार्द्दवम् ॥ २७ ॥

त्यजेत्पूज्येशुचिस्थानेलोकाध्यक्षञ्चमैथुनम् ॥
ग्लानिःकम्पोऽरुचिःसादस्तदनुचकृशताक्षीणताश्चेन्द्रियाणां
श्वासःशोषोपसंगोज्वरगुदजरुजाक्षीणताश्चेन्द्रियाणाम्।
जायन्तेदुर्निवारःपवनपरिभवःक्लीबतालिङ्गभङ्गो।
रम्यारम्याभियोगाद्व्रजतइवसदावाजिकर्मोच्युतस्य ॥ २८ ॥
तोयाङ्गरागशिशिरातपशीतवाताः
ताम्बूलसोमकरशीतरसेक्षुभक्ष्याः।
स्नानञ्चदुग्धमधुपूगफलानिनिद्रा
सेव्यानिकामुकजनैःसुरतावसाने ॥ २९ ॥

अर्थ-जे पदार्थ किंचित् मधुर, तृप्तिकारक, जीवन पुष्टिकारक भारि और मनको हर्षित करनेवाले हैं उनको वृष्य कहते हैं। मनुष्योंके महीनेकी अपेक्षा अधिक अर्थात् जितना एक महीनेमें होय उससे अधिक शुक्रस्राव होय तौ उससे नानाप्रकारके रोग उत्पन्न होते हैं। शुद्ध और रोगरहित मनुष्य १६ षोड़श वर्षसे लेकर ७० सत्तर वर्षकी आयुतक मैथुन करता है, परन्तु षोड़शवर्षसे कम और ७० सत्तर वर्षसे अधिक कदापि स्त्रीसंसर्ग न करै, किसी ऋतुमेंभी अधिक स्त्रीसंसर्ग नहीं करना चाहिये। आयुष्मान्, जरासेरहित, सुन्दर शरीर वाला, बलवान् और हृष्ट पुष्ट मनुष्यको प्रत्येक ऋतुमें तीन तीन दिनके बाद और ग्रीष्मऋतुमें १५ दिनके पश्चात् मैथुन करना चाहिये। वीर्य्य जनक औषधियोंको सेवनकर पश्चात् मिश्रीके साथ दूध और शीतल जलको पीकर, सुन्दर स्वरूपवाली स्त्रियोंके पासजाय। अत्यन्त मैथुन करनेसे-ग्लानि, कम्प, घुटनोंमें दुर्बलता, धातु और इन्द्रियोंके बलका नाश, राजयक्ष्मा, उपदंश, शोष, खाँसी, ज्वर, बवासीर, श्वास, पाण्डु, और आक्षेपादिरोग उत्पन्न होतेहैं। बिलकुल मैथुन नहीं करनेसे-प्रमेह, मेद वृद्धि, ग्रन्थि, और मंदाग्निरोग उत्पन्न होताहैं। पूज्य और पवित्र स्थानमें स्त्रीसंसर्ग करनेसे ग्लानि, कम्प, अरुचि, अवसाद, कृशता, शोष, श्वास, गरमी, बवासीर, धातुक्षीण, नपुंसकता और ध्वज भंग रोग उत्पन्न होताहे। जल, अंगराग, शिशिर, आतप, शीतलवायु,

ताम्बूल, चन्द्रकिरण, शीतलपदार्थ, ईखकारस, ईखके विकार, दूध, सहत, सुपारी और निद्रा यह सब मैथुनके अंतमें अत्यंत हितकारी है॥ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥

त्रैलोक्यविजयापत्रंसबीजंघृतभर्जितम् ।
त्रिकटुत्रिफलाशृंगीकुष्ठसैन्धवधान्यकम् ॥ ३० ॥
शटीतालीशपत्रंचकट्फलंनागकेशरम् ।
यमानिचाजमोदाचयष्टीमधुकमेवच ॥ ३१ ॥
मेथीजीरकयुग्मञ्चगृहीत्वाभर्जितंकियत् ।
यावदेतानिचूर्णानितावदेवतदौषधम् ॥ ३२ ॥
तावदेवसितादेयायावदायातिबन्धनम् ।
घृतेनमधुनामिश्रंमोदकंपरिकल्पयेत् ॥ ३३ ॥
त्रिसुगन्धिसमायुक्तंकर्पूरेणाधिवासयेत् ।
स्थापयेद्घृतभाण्डेतुश्रीमन्मदनमोदकम् ॥ ३४ ॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थायवातश्लेष्मविनाशनम् ॥ ३५ ॥

श्रीमन्मदनमोदकः ।

अर्थ—घीमें भुने हुए भांगके बीज और पत्ते, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आमला, काकडाशिंगी, कूठ, सैंधानोन, धनिया, कचूर, तालीशपत्र, कायफल, नागकेशर, अजवायन, अजमोद, मुलेठी, मेथी, और भुनाहुवा कालाजीरा तथा सफेदजीरा, प्रत्येकका चूर्ण एकएक भाग, सबकी बराबर बूरा, तथा दालचीनी, तेजपात और छोटी इलायची तथा कपूर, प्रत्येक एकभाग, यथानुसार घृत और सहत मिलाकर लड्डू बनाके घीके बासनमें भरके रखदेवै, प्रतिदिन एक मोदक दूधके साथ खाय । यह श्रीमन्मदनमोदक अत्यन्तकामवर्द्धक, तथा वातश्लेष्मादिरोगोंको हरै है ॥ ३० ॥ ३१॥३२॥ ३३ ॥३४॥३५॥

त्रैलोक्यविजयापत्रंसबीजंघृतभर्जितम् ।
समेशीतातपेलेपश्चूर्णयेदतिचिक्कणम् ॥ ३६ ॥

शतावरीरजश्चैवविदारीकन्दजंरजः ।
बलातिबलयोश्चैवमूलवल्कलजंरजः ॥ ३७ ॥
गोक्षुरयोर्बीजाद्रजोवानरीबीजतः ।
एतदेकीकृतंयावच्छतावर्य्यादिकंरजः ॥ ३८ ॥
तस्माच्चतुर्गुणंकार्य्यंत्रैलोक्यविजयारजः ।
पयसाथसमेतस्मिन्गोलयेच्चूर्णसञ्चयः ॥ ३९ ॥
गोलयित्वासिताश्चैवशक्रचूर्णाच्चतुर्गुणाम् ।
पचेदवहितोवैद्योमंदमन्देनवह्निना ॥ ४० ॥
ततःपाकक्रमंदृष्ट्वाभृष्ट्वाचैवाऽसितंतिलम् ।
बुद्ध्वावतारितंदद्यान्मोदकार्थंभिषग्वरः ॥ ४१ ॥
त्रिकटुत्रिसुगंधंचसैन्धवंसधनीयकम् ।
जातीकोषफलंचैवबालकं जीरकद्वयम् ॥ ४२ ॥
शटीकुंदुरुकोटिश्चमुस्तामधुरिकामुरा ।
मांसीतालीशपत्रंचपत्रवारेन्द्रमेवच ॥ ४३ ॥
ग्रन्थिपर्णशिवाचैवतथैवशतपुष्पिका ।
चविकादेवदारुश्चसप्रियंगुलवंगकम् ॥ ४४ ॥
सरलःशैलजश्चैवसर्वमेतद्विचूर्णयेत् ।
अत्रवट्टालनेयुक्तंद्रव्यंतद्गन्धवृद्धये ॥ ४५ ॥
ढालयित्वाकृतंचूर्णशक्रचूर्णस्यपादिकम् ।
सैन्धवंस्वादुतायोग्यंदेयंकटुकमेवच ॥ ४६ ॥
ततःसुमिलितंकुर्यान्मोदकंपरिकल्पयेत् ।
भूयस्त्रिजातकेचूर्णेचूर्णेत्र्यूषणजेतथा ॥ ४७ ॥
लोढयेन्मोदकानेतान्सिद्धार्थानथसिद्धये ।
कांचनेराजतेपात्रेकांस्येसम्पुटकेन्यसेत् ॥ ४८ ॥

रजस्त्रिजातानास्तीर्य्यकर्पूरेणाधिवासयेत् ।
भक्षयेत्प्रातरुत्थायमहामदनमोदकम् ॥ ४९ ॥

इति महाभुदनमोदकम् ।

अर्थ–घृतमें भुनेहुए भाँगके बीज और पत्तोंको पीसकर बारीक चूर्ण बना छायामें और धूपमें सुखालेवै । सतावर, विदारी कंद, खिरैटी, कंघी, गोखरू, तालमखाना और कौंछके बीज, प्रत्येकका चूर्ण एक एक भाग, घीमें भुने हुए भांगके बीज और पत्तोंका चूर्ण २८ अट्ठाईस भाग दूध समान भाग, और बूरा भांगके चूर्णसे चौगुना, सबको मिलाकर मंद मंद अग्निसे पकावै, जब पकते पकते गाढा होजाय तब भुने हुए काले-तिल, त्रिकुटा, त्रिसुगंधि, सैंधानोन, धनिया, जावित्री, जायफल, सुगंध वाला, सफेद जीरा, कालाजीरा, कचूर, कुन्दुरु, सौंफ, नागरमोथा, कपूरकचरी, तालीसपत्र, तेजपात, खिरैटी, हरड़, सोया, चव्य, देव-दारु, फूलप्रियंगु, लौंग, धूप सरल और भूरिछरीलां, इनका चूर्ण करकै मिलादेवै, पश्चात् इसको एक परातमें ढालकर चौथाई भाग भांगका चूर्ण, स्वादके योग्य सैंधव लवणका चूर्ण मिलाकर मोदक बनालेवै, फिर इन लड्डुओंको त्रिजातके चूर्णमें और त्रिकुटेके चूर्णमें लुटाकरकै कपूरकी वासनादेवै, पश्चात् सोने, चांदी, या कांसीके पात्रमें भरकै रखदेवै, इसमेंसे प्रतिदिन एक मोदक खाय और ऊपरसे दूध पीवै तो अत्यन्त कामकी वृद्धिहो, तथा कास श्वासादि सम्पूर्ण रोग नष्ट होय ॥ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥

शतावर्य्यःश्वदंष्ट्राचबलाचातिबलातथा ।
मर्कटीक्षुद्रबीजश्चविदारीकंदजंरजः ॥ ५० ॥
एतानिसमभागानिपलिकानिविचूर्णयेत् ।
चूर्णाच्चतुर्गुणन्देयंत्रैलोक्यविजयारजः ॥ ५१ ॥
सर्वमेकीकृतंयावत्तदर्द्धंमाहिषंपयः ।
तावन्मात्रेणदातव्यंशतावर्यारसन्तथा ॥ ५२ ॥
विदार्य्याःस्वरसप्रस्थंसितापलशतंन्यसेत् ।

गोलयित्वासितान्दत्वापात्रेताम्रमयेदृढे ॥ ५३ ॥
पचेत्पाकविधिज्ञोऽपिमोदकःपरमोहितः ।
त्र्यूषणंत्रिफलाशृंगीत्रिजातंसैन्धवंशठो ॥ ५४ ॥
धान्यकंबालकंमुस्तंद्विजीरंकुन्दुरुर्मुरा ।
काकोलीक्षीरकाकोलीद्राक्षातुगामृगाण्डजम् ॥ ५५ ॥
जातीकोलफलंमांसीतालाङ्कुरकशेरुकम् ।
शतपुष्पाचवीदारुग्रन्थिकंसलवंगकम् ॥ ५६ ॥
कुष्ठंयमानिकाचात्मगुप्ताकट्फलमेथिका ।
मधुरीकाचमधुकंतालीशंवरखर्जुरम् ॥ ५७ ॥
टंकणञ्चविचूर्ण्याथप्रत्येकंकोलसंमितम् ।
चूर्णार्द्धंशोधितंगंधंगंधपादांशपारदम् ॥ ५८ ॥
कज्जलीकृत्यदत्वातंलोडयेत्रिसुगन्धिना ।
यथाशक्त्यामोदकंचकर्पूरेणाधिवासयेत् ॥ ५९ ॥
उद्धृत्यस्निग्धभाण्डेतंप्रस्थाप्यचभिषग्वरैः ।
शिवंसंपूज्यसगणंधन्वन्तरिमुनिन्तथा ॥ ६० ॥
कोलप्रमाणंकर्त्तव्यंक्षीरंचानुपिबेन्नरः ।
प्रातर्भोजनकालेवासायंकालेऽपिभक्षयेत् ॥ ६१ ॥
प्रमदाशतंचभजतेनचशुक्रक्षयोभवेत् ।
नातःपरतरंकिंचित्विद्यतेवाजिकर्म्मसु ॥ ६२ ॥
शतावरीमोदकंचवासुदेवेननिर्मितम् ॥ ६३ ॥

इति शतावरीमोदकम् ।

अर्थ–सतावर, गोखरू, खिरेंटी, कंघी, कौंछ, मंदारकेबीज और विदारीकन्दकाचूर्ण प्रत्येक ४ चारतोले, इन सब औषधियोंसे चौगुना भाँगके बीजोंकाचूर्ण, सबचूर्णसे आधा भैंसकादूध, और सतावरका रस, विदारीकन्दका २ दोसेर, और बूरा१००सौपल, इन सबको एकत्र करकै

ताँबेके बासनमें पकावै, जब पकते पकते गाढ़ाहोजाय तब त्रिकुटा, त्रिफला, काकड़ासिंगी, त्रिजातक, सैंधानोन, कचूर, धनिया, सुगंधवाला, नागरमोथा, सफेदजीरा, कालाजीरा, कुन्दुरु, कपूरकचरी, काकोली, क्षीरकाकोली, दाख, वंशलोचन, कस्तूरी, जायफल, जावित्री, बालछड़, ताड़केअंकुर, कसेरु, सोया, चव्य, देवदारु, गठिवन, लौंग, कूठ, अजवायन, कोंछके बीज, कायफल, मेथी, सौंफ, काच (कालानोन), मुलेटी, तालीशपत्र, पिण्डखजूर और सुहागेकीखीलैं, प्रत्येककाचूर्ण एकएकतोला, सबचूर्णसे आधागंधक, और गंधकसे चौथाई भाग पारेकी बनाई हुई कज्जली सबको मिलाकर एकएक तोलेके लड्डू बनालेवै, पश्चात् इन लड्डुओंको त्रिसुगंधिके चूर्णमें लुटाकर कपूरकी बासनादेवै, फिर एक उत्तम चिकने बासनमें भरके रखदेवै, प्रतिदिन १एकलड्डू खाय और ऊपरसे दूधका अनुपान करै। इसके प्रभावसे सौ १०० स्त्रियोंके पास जासक्ताहै और शुक्रका क्षय नहोवै। तथा कास, श्वास और प्लीहादि रोग दूरहोजातेहैं ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥

शतावरीश्वदंष्ट्राचवलाचातिवलातथा।
मर्कटीक्षुरबीजञ्चविदारीकन्दजंरजः ॥ ६४ ॥
एतानिसमभागानिपलिकानिविचूर्णयेत्।
चूर्णाञ्चतुर्गुणंचैवत्रैलोक्यविजयारजः ॥ ६५ ॥
एतदेकीकृतंयावत्तदर्द्धमाहिषंपयः।
तावन्मात्रेणदातव्यंशतावर्यारसन्तथा ॥ ६६ ॥
विदार्याःस्वरसंप्रस्थंसितापलशतद्वयम् ॥
गोलयित्वासितांचैवपात्रेताम्रमयेदृढे ॥ ६७ ॥
पाचयेत्पाकविद्वैद्योमोदकःपरमोहितः।
त्र्यूषणंत्रिफलाशृंगीत्रिजातंसैन्धवंशटी ॥ ६८ ॥
धन्याकंबालकंमुस्तंद्विजीरंकुन्दुरुमुरा।
काकोलीक्षीरकाकोलीकस्तुरीमृद्विकातुगा ॥ ६९ ॥

जातीकोषफलंमांसीपत्रंवारेन्द्रग्रन्थिकम् ।
शतपुष्पाचवीदारुप्रियंगुसलवंगकम् ॥ ७० ॥
सरलंशैलजंकुष्ठंजातीपुष्पंयमानिकाम् ।
कट्फलंकेशरंमेथीमधुकंदेवताडकम् ॥ ७१ ॥
मिषीतालीशपत्रञ्चखर्ज्जुरंरसगंधकम् ।
त्रिसुगन्धिसमायुक्तंकर्पूरेणाधिवासयेत् ॥ ७२ ॥
शिवंसंपूज्यसगणंधन्वन्तरिमथापरम् ।
कोलप्रमाणंकर्त्तव्यंक्षीरंचापिपिबेन्नरः ॥ ७३ ॥
प्रातर्भोजनकालेवाभक्षयेच्चविचक्षणः ।
प्रमदाशतंरमतेनचशुक्रक्षयोभवेत् ॥ ७४ ॥

शतावरीमोदकः ।

अर्थ—सतावर, गोखरूकेबीज, खिरैटीकीजड़, कंघीकीजड़, कौंछकेबीज, तालमखानेकेबीज, और विदारीकन्द, प्रत्येकका चूर्ण एक १ पल, भाँगकाचूर्ण २८ आट्ठाईसपल, बूरा १०० सौपल, भैंसकादूध, सतावरका रस और विदारीकंदकारस, प्रत्येक३२ बत्तीसपल, इन सबको मिलाकर ताँबेके पात्रमें मंद मंद अग्निसे पकावै, जब पकते पकते गाढ़ा होजाय, तब त्रिकुटा, त्रिफला, काकडासिंगी, त्रिजातक, सैंधानोन, कचूर, धनिया, सुगंधवाला, नागरमोथा, कालाजीरा, सफेदजीरा, कुन्दुरु, कपूरकचरी, काकोली, क्षीरकाकोली, कस्तूरी, दाख, वंशलोचन, जावित्री, जायफल, बालछड़, वारेन्द्रपत्र, गठिवन, सोया, चव्य, देवदारु, फूलप्रियंगू, लौंग, धूपसरल, भूरिछरीला, कूठ, चमेलीके फूल, अजवायन, कायफल नागकेशर, मुलेठी, मेथी, देवताड़, सौंफ, तालीशपत्र, खजूर, पारा, गंधक, तगर, लालचन्दन, और सज्जी प्रत्येकका चूर्ण एकएक तोले, मिलादेवै, पश्चात् एक एक तोलेके मोदक बनाकर त्रिजातक, त्रिकुटा और कपूरके चूर्णमें लुटालेवै । प्रतिदिन एकमोदक प्रातःकाल या भोजनके समय अथवा संध्याके समय खाय और ऊपरसे दूध पीवै । इसके प्रभावसे—सौ १०० स्त्रियों के साथ रमै तौभी शुक्रका क्षय न होवै॥६४॥ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२॥ ७३ ॥ ७४ ॥

शक्राशनस्यबीजानिचूर्णितानिपलाष्टकम् ।
कुडवंहविमश्चैवखण्डप्रस्थंप्रगृह्यच ॥ ७५ ॥
शतपुत्रीरसप्रस्थंप्रस्थंशक्राशनस्यच ।
गव्यमाजंपयःप्रस्थंदत्वाप्रस्थद्वयंपचेत् ॥ ७६ ॥
धात्रीद्विजीरकप्रस्थंत्वगेलापत्रकेशरम् ।
अतिवलाचात्मगुप्तातालांकुरकशेरुकम् ॥ ७७ ॥
शृंगाटकंत्रिकटुकंधन्याकंचित्रकंतथा ।
पथ्याद्राक्षाचकाकोल्यौखर्ज्जूरस्तवकन्तथा ॥ ७८ ॥
कटुकांमधुकंकुष्ठंलवंगंसारसैन्धवम् ।
यमानिकाचाजमोदाजीवन्तीगजापिप्पली ॥ ७९ ॥
प्रत्येकंकर्षमेकञ्चचूर्णितानिशुभानिच ।
मधुनःकुडवार्द्धञ्चपाकशेषेतथाक्षिपेत् ॥ ८० ॥
मृगाण्डजंसकर्पूरंयथानाभंविनिःक्षिपेत् ।
रतिवल्लभनामायंसेव्यमानोरसायनः ॥ ८१ ॥

इति रतिवल्लभमोदकः ।

अर्थ–भांगका चूर्ण १ एक सेर, घी १ एकसेर, बूरा २ दोसेर, सतावरकारस ४ चारसेर, भांगका रस ४ चारसेर, गायका दूध ४ चारसेर, बकरीका दूध ४ चारसेर, आमलोंका रस ४ चारसेर, तथा दोनों जीरोंका क्काथ ४ चारसेर, इन सबको मिलाकर पकावै, जब पकते पकते गाढा होजाय तब दालचीनी, छोटी इलायची, तेजपात, नागकेशर, कंघी, कौंछ, तालकेअंकुर, कसेरु, सिंघाड़े, सोंठ, मिरच, पीपल, धनिया, लालचीता, हरड़, दाख, काकोली, क्षीरकाकोली, पिण्डखजूर, कुटकी, कूठ, मुलेठी, लौंग, वज्रखार, सैंधानोन, अजमोद, जीवन्ती और गजपीपल प्रत्येकका चूर्ण २ दोदो तोले, सहत एक १ सेर और कस्तूरी तथा कपूर कुछ थोडासा सुगंधिके लिये मिलादेवै । पश्चात् लड्डू बनालेवै । यह लड्डू–अत्यन्त कामदेवको बढावै है, और सर्व रोग नाशक है ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥

समूलपत्रशाखायास्तुलांशक्राशनस्यच।
संरुद्योदूखलेछित्वाऽपांद्रोणेहितथाचवै॥ ८२॥
क्काथंपादावशिष्टन्तुवस्त्रपूतंचकारयेत्।
क्षीरप्रस्थंसमादायखण्डस्यार्द्धशतंन्यसेत्॥ ८३॥
शतावरीरसस्याष्टौपिप्पल्याःकुडवन्तथा।
सर्वमेतत्समालोड्यघृतप्रस्थेनमेलयेत्॥ ८४॥
औषधानान्ततश्चूर्णदापयेत्कालिकंपृथक्।
त्रिकटुत्रिफलाचव्यमेलात्वक्पत्रकेशरम्॥ ८५॥
चित्रकंपिप्पलीमूलंधान्यकाजाजिमेथिका।
कुष्ठाब्दरेणुकाव्योषभार्ङ्गीतालीशकेशरम्॥ ८६॥
तालमूलीत्रिवृद्दन्तीश्रेयसीहिंगुपौष्करम्।
लवंगजातिकोषश्चयमानीकारवीतथा॥ ८७॥
शुभाजातीफलंचन्द्रंशृंगीचैवविदारिका।
अष्टवर्गश्चकाकोलंश्लक्ष्णचूर्णश्चकारयेत्॥ ८८॥
कुडवाद्विपचेद्वैद्योमोदकंकारयेत्ततः।
अक्षमात्रञ्चजग्ध्वैषंशीतलंपाययेज्जलम्॥ ८९॥
नाशयेच्छुक्रदोषश्चषण्ढश्चैवातिदारुणम्॥
श्रीकरंलाघवकरंमेधाबुद्धिप्रवर्द्धनम्॥ ९०॥

इतिमहारतिवल्लभोमोदकः।

अर्थ-मूल, पत्र और शाखाओं समेत भांगको लेकर ओखलीमें कूटले, ऐसी कुटी हुई भांग ६। सवाछै सेर लेकर बत्तीस ३२ सेर जलमें पकावै, जब चतुर्थांश शेषरहै तब उतारकर कपड़ेमें छानलेवै, पश्चात् इसमें गायका दूध २ दोसेर, बूरा ६। सवाछै सेर, सतावरका रस १ एकसेर, पीपलका क्वाथ १ एकसेर, और घी २ दोसेर मिलाकर पकावै, फिर पकते समय त्रिकुटा, त्रिफला, चव्य, छोटी इलायची, दालचीनी, तेजपात, नागकेशर, लालचीता, पीपलामूल, धनिया, जीरा, मेथी,

कूठ, नागरमोथा, रेणुका, त्रिकुटा, भारंगी, तालीशपत्र, नागकेशर, मुसली, निसोत, दन्ती, गजपीपल, हींग, पोहकरमूल, लौंग, जावित्री, अजवायन, सौंफ, पीपल, जायफल, कपूर, काकड़ाशिंगी, विदारीकन्द, अष्टवर्ग और शीतलचीनी, प्रत्येकका चूर्ण ४ चार तोले मिलाकर गुड़की समान पाक करै, फिर दो दो तोलेके लड्डू बनालेवै, प्रतिदिन १ एक लड्डू खाय ऊपरसे शीतल जल पीवै । यह महारति वल्लभमोदक शुक्रदोष और अत्यंत दारुण षण्ढत्वदोषको हरे है । लक्ष्मीजनक, लाघवताकारक, मेधा और बुद्धिको बढावै है ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ ९० ॥

धात्रीसैन्धवकुष्ठकट्फलकणाशुण्ठीयमानीद्वयम् ।
यष्टीजीरकयुग्मधान्यकशटीशृंगीयवाःकेशरम् ॥ ९१ ॥
तालीशंत्रिसुगन्धिकंसमरिचंमेथीकाख्यन्वितम् ॥
चूर्णीकृत्यसमःमनाक्फलयुतंभृष्टइवशक्राशनम् ॥९२॥
सर्वैस्तुल्यमतःसितांसुविमलांदत्वासमंसंक्षिपेत् ।
माध्वीकंसघृतंप्रशस्तदिवसेकुर्याच्छुभान्मोदकान् ९३॥
कर्पूरैरवचूर्णितानापिहितान्दत्वाचभृष्टान्तिलान्
गोप्योऽयंक्षितिमंडलेषुसुधियापाषण्डिनामग्रतः ॥९४॥
आधिव्याधिहरंक्षयक्षयकरंकुष्ठापहंबृंहणम्
स्त्रीणांतोयकरंमुखद्युतिकरंशुक्राग्निवृद्धिप्रदम् ॥९५॥

कामेश्वरमोदकः ।

अर्थ—आमला, सैंधानोन, कूठ, कायफल, पीपल, सोंठ, अजवायन, अजमोद, मुलेठी, जीरा, कालाजीरा, धनिया, कचूर, काकडासिंगी, जौ, नागकेशर, तालीशपत्र, छोटीइलायची, दालचीनी, तेजपात, कालीमिरच, मेथी और सौंफ, प्रत्येकाचूर्ण दो दो तोले, भुनीहुई बीजों समेत भाँगकाचूर्ण, सबकीबराबर, तथा, बूरा, सहत और घी, सबकीबराबर, तथा सुगंधिकेलिये कपूर मात्राके अनुसार और काले तिलोंका चूर्ण, सबको एकत्र पकाकर मोदक बनालेवै । इसकामेश्वर मोदकको

सेवन करनेसे अत्यन्त कामकी वृद्धि होतीहै, तथा सर्वप्रकारके रोग शोकादि दूर होतेहैं ॥ ९१ ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ ९५ ॥

चूर्णांशशोधितंचैवगगनंशुद्धमारितम् ।
तदर्द्धंशुद्धलोहञ्चलौहार्द्धंवंगभस्मकम् ॥ ९६ ॥
जातीकोषफलंचैवचूर्णांशंतत्रदापयेत् ।
त्रिकटुत्रिफलामुस्तंचातुर्ज्जातंससैन्धवम् ॥ ९७ ॥
शृंगीजीरकयुग्मञ्चधन्याकंग्रन्थिपर्णकम् ।
मांसीशतावरीकुष्ठंतुगाद्राक्षालवंगकम् ॥ ९८ ॥
शालपर्णीचकण्टीचचित्रकंकुन्दुरुर्मुरा ।
पुनर्नवाश्वगंधांघ्रिपद्मकंक्षुरबीजकम् ॥ ९९ ॥
सितातिलंचधन्याकंमेथिकाहरितालुकम् ।
वलातिवलयोर्मूलंचव्यंचदेवदारुच ॥ १०० ॥
यमानीशतपुष्पाचमर्कटीबीजबिल्वकम् ।
काकोलीक्षीरकाकोलीतालांकुरकशेरुकम् ॥ १०१ ॥
शृंगीलवणकंचैवकर्पूरंदेवताडकम् ।
एतेषांसमभागानांचूर्णंकुर्यात्प्रयत्नतः ॥ १०२ ॥
शोधितंविजयाचूर्णंसर्वचूर्णार्द्धसंयुतम् ।
शर्करांद्विगुणांदत्वामोदकंपरिकल्पयेत् ॥ १०३ ॥
मध्वाज्यमिश्रितंकृत्वाकर्षमेकन्तुमोदकम् ।
खादेत्प्रतिदिनंचैवसर्वव्याधिविवर्जितम् ॥ १०४ ॥
महाकामेश्वरोह्येषमहादेवेननिर्म्मितः ॥

इति महाकामेश्वरोमोदकः ।

अर्थ-त्रिकुटा, त्रिफला, नागरमोथा, चातुर्जातक, सैंधानोन, काकड़ाशिंगी, जीरा, कालाजीरा, धनिया, गठिवन, बालछड़, सतावर, कूठ, वंशलोचन, दाख, लोंग, शालिपर्णी, कटेरी, चीता, कुन्दुरु, पुनर्नवा, कपूरकचरी, असगंधकी जड़, पद्माख, गोखुरुकेबीज, मिश्री,

तिल, धनिया, मेथी, रेणुका, खिरैंटी, कंघी, चव्य, देवदारु, अजवायन, सोया, कौंछ, वेलगिरी, काकोली, क्षीरकाकोली, ताड़के अंकुर, कसेरु, काकडासिंगी, सैंधानोन, कपूर और देवताड, इन सबका चूर्ण समान भाग, सब चूर्णसे चौथाईभाग अभ्रककी भस्म, जायफल, और जावित्रीका चूर्ण अभ्रकसे आधी लोहेकी भस्म, लोहेसे आधी बंगकी भस्म और सब चूर्णसे आधा भाँगका चूर्ण और इससे दुगुना बूरालेवै, इनको एकत्र पकाकर सहत और घृत मिलाके एक एक कर्ष-प्रमाणके मोदक बनालेवै। प्रतिदिन एक १ मोदक खाय, इससे-सर्व-प्रकारके रोग दूर होतेहैं। यह महाकामेश्वर मोदक-महादेवने निर्म्माण करेहैं ॥ ९६ ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ १००॥१०१ ॥ १०२ ॥१०३॥१०४॥

चूर्णांशंगगनंघनार्द्धविमलंकुष्ठञ्चगंधामृता
मेथीमोचरसोविदारिमुषलीगोक्षूरकंक्षूरकम्।
भीरुश्चैवकशेरुकंयमनिकातालांकुरंधान्यकं
यष्टीनागवलावलामधुरिकाजातीफलंसैन्धवम् ॥१०५॥
भृंगीकर्कटशृंगकंत्रिकटुकंजीरद्वयं चित्रकं
चातुर्ज्जातपुनर्नवंगजकणाद्राक्षाशटीकट्फलम्।
शाल्मल्यंघ्रिफलत्रिकंकपिभवंबीजंसमंचूर्णयेत्
चूर्णार्द्धाविजयासिताद्विगुणितामध्वाज्यमिश्रंनयेत् ॥१०६॥
कर्षार्द्धंगुडकंनिधायविधिनाराजासदासेवयेत्
पेयाक्षीरसितावीर्यकरणेस्तम्भोऽप्ययंकामिनाम्।
वामावश्यकरःसुखातिसुखदःसर्वांगनाद्रावकः
क्षीणेपुष्टिकरःक्षयक्षयकरोनानामयध्वंसकः ॥ १०७ ॥
कासश्वासमहातिसारशमनोमंदानलोदीपको
दृष्टःसिद्धिफलोरसायनवरःकामेश्वरोदुर्ल्लभः ॥ १०८ ॥

इति कामेश्वरोमोदकः।

अर्थ-कूठ, गंधक, गिलोय, मेथी, मोचरस, विदारीकंद, मुसली, गोखुरु, तालमखाना, सतावर, कसेरु, अजवायन, ताड़के अंकुर,

धनिया, मुलेठी, गंगेरन, खिरैंटी, सौंफ, जायफल, सैंधानोन, अतीस, काकडाशिंगी, त्रिकुटा, जीरा, कालाजीरा, चीता, चातुर्जातक, गजपीपल, दाख, कचूर, कायफल, सेमलकीजड़, त्रिफला और कौंछकेबीज, प्रत्येकका चूर्ण समानभाग, सबचूर्णसे आधाभाँगका चूर्ण, भाँगसे आधा अभ्रक और अभ्रकसे आधा रूपामाखीकाचूर्ण, सबचूर्णसे दुगुनी खाँड और कुछ थोडासा सहत तथा घृत सबको मिलाकर एक एक तोलेके मोदक बनालेवै । प्रतिदिन १ एकमोदक खाय, और ऊपरसे मिश्रीसंयुक्त दूधका अनुपानकरै, इससे वीर्यस्तम्भन होताहै, स्त्रियें वशीभूत होजातीहैं, अत्यन्त सुखहोताहै, सर्वस्त्रियें द्रवीभूत होजातीहैं, क्षीणमनुष्योंको पुष्टकरैहै, क्षयरोगको क्षय करैहै, नानाप्रकारके रोगोंको नष्टकरैहै, तथा खाँसी, श्वास और अतीसारादि रोगको दूरकरैहै, मन्दाग्निको दीपनकरैहै इस का फलदेखाहुआहै यह उत्तम कामेश्वर रसायन दुर्लभहै ॥ १०५ ॥ ॥ १०६ ॥ १०७ ॥ १०८ ॥

निश्चन्द्रिकाभ्रंपलमात्रभागंलोहस्यवङ्गस्यतदर्द्धभागम् ।
जातीफलंकोषफलञ्चजीरायमानिकाचाथपलप्रमाणम् १०९
कर्षद्विभागंत्रिसुगन्धिकुष्ठंमांसीमुराकुन्दुरुदेवदारुः ।
चाम्पेयसिन्धूद्भववालचव्यंसौभाग्ययष्टिमधुग्रन्थिपर्णम् ११०
तालीशकर्पूरलवंगकान्ताकाकोलिकायुग्मकटुत्रिकञ्च ।
शैलेयपद्मंसरलंसपुष्यंहस्तीकणावत्सकबीजधान्यम् १११॥
शृंगीशताह्वात्रिफलाथमेथीश्यामाब्दकंकृष्णतिलंकशेरु ।
शक्राशनंतत्सदृशंविभागंसिताचशुभ्राद्विगुणाविधेया ११२
तत्पाकवेत्ताविधिवद्विधानंलब्ध्वाधिवासंनयनागरेण ।
मध्वाज्यमिश्रंवटकप्रमाणंखादेन्नरःकौण्डकमंगलेन ॥११३॥
सर्वामयानांशमनंविधेयंविशेषतःसंग्रहकोष्ठदोषम् ॥११४॥

बृहत्कामेश्वरोमोदकः ।

अर्थ-निश्चन्द्र अभ्रक ४ चारतोले, लोहा २ दोतोले, वंग २ दोतोले, जायफल, जावित्री जीरा, और अजवायन प्रत्येकका चूर्ण, ४ चारतोले,

छोटी इलायची, दालचीनी, तेजपात, कूठ, कपूरकचरी, कुन्दुरु, बालछड, देवदारु, सोनेके वरक, सेंधानोन, सुगंधवाला, चव्य, सुहागा, गठिवन, तालीशपत्र, कपूर, लोंग, फूलप्रियंगु, काकोली, क्षीरकाकोली, सोंठ, मिरच, पीपल, भूरिछरीला, पद्माख, धूपसरल, गजपीपल, इन्द्रजौ, धनिया, काकडासिंगी, सोया, हरड़, बहेड़ा, आमला, मेथी, करियावासाऊ, नागरमोथा, कालेतिल और कसेरु, प्रत्येकका चूर्ण दो कर्ष, भांगका चूर्ण सबकी समान और सब चूर्णसे दुगुनी बूरा, सबको मिलाकर पाकको जाननेवाला उत्तम विधिसे पकावै, फिर नागरमोथे और सोंठकी वासना देकर घृत और सहत मिलाकर बडेकी बराबर मोदक बनालेवै । प्रतिदिन १ एक मोदक खाय । इससे सर्व प्रकारके रोग दूर होते हैं और विशेष करकै यह–कोष्ठदोषको हरै है ॥ ॥ १०९ ॥ ११० ॥ १११ ॥ ११२ ॥ ११३ ॥ ११४ ॥

कर्षौरसोगंधकमभ्रकञ्चत्रिक्षारचित्रेलवणानिपञ्च ।
शटीयमानीद्वयकीटहारितालीशपत्राण्यपरंद्विकर्षम् ॥११५
जीरंचतुर्जातलवंगजातीफलञ्चकर्षत्रयमेवचमन्यत् ।
सवृद्धदारंकटुकत्रयंचतथाचतुःकर्षमिदंनिबोध ॥ ११६ ॥
धन्याकयष्टिमधुरीकशेरुकर्षाःपृथक्पंचवरीविदारी ।
वरेभकर्णेभकणात्मगुप्ताफलंतथागोक्षुरबीजयुक्तम् ॥११७॥
सबीजपत्रेन्द्ररजःसमानंसमासिताक्षौद्रघृतंचतुल्यम् ।
कर्षैकमिन्दोरथमोदकन्तत्कामाग्निसन्दीपनमेतदुक्तम् ११८
इतिकामाग्निसंदीपनमोदकः

अर्थ–पारा, गंधक, अभ्रक, सज्जी, सुहागा, जवाखार, चीता, कालानोन, सैंधानोन, विरियासंचरनोन, सांभरनोन सामुद्रलवण, कचूर, अजवायन, अजमोद, वायविडंग, और तालीशपत्र, प्रत्येक १ एक कर्ष, जीरा २ दो कर्ष, चतुर्जातक प्रत्येक २ दो कर्ष, और लोंग २ दो कर्ष,

जायफल २ दो कर्ष, विधारा ३ तीन कर्ष सोंठ ३ तीन कर्ष; मिरच ३ तीन कर्ष, पीपल ३ तीन कर्ष, धनिया, मुलेठी, सौंफ और कसेरु, प्रत्येक ४ चार कर्ष, सतावर, विदारीकन्द, हरड़, बहेड़ा, आमला, हास्तकर्णी पलाश, गजपीपल, कौंछकेबीज, और गोखुरुकेबीज प्रत्येक ५ पाँच कर्ष, बीज और पत्रोंसमेत भाँगका चूर्ण सबकी बराबर, सबकी समान बूरा, तथा घी और सहत प्रत्येक समानभाग कपूर एक कर्ष सबको एकत्र करकै मोदक बनालेवै इनमोदकोंको सेवन करनेसे कास और यक्ष्मादिरोग दूर होतेहैं॥ ११५ ॥ ११६ ॥ ११७॥ ११८ ॥

पक्वचूतरसद्रोणंपात्रंस्याच्छुद्धखण्डतः ।
घृतमर्द्धंततोग्राह्याचतुर्थांशश्चनागरम् ॥ ११९ ॥
तदर्द्धंमरिचस्यापितदर्द्धापिप्पलीस्मृता ।
तोयंखण्डसमंग्राह्यंसर्वमेकत्रसंस्थितम् ॥ १२० ॥
विपचेन्मृन्मयेपात्रेयावद्दर्वीप्रलेपनम् ।
चूर्णान्येषांततोदद्यात्पत्रंपलचतुष्टयम् ॥ १२१ ॥
ग्रन्थिकंचित्रकंमुस्तंधन्याकंजीरकद्वयम् ।
त्र्यूषणंजातितालीशंचूर्णमेषांपृथक्पलम् ॥ १२२ ॥
त्वगेलानागपुष्पाणांप्रत्येकञ्चपलंतथा ।
सिद्धशीतेनमधुनाप्रस्थार्द्धंसर्वमेकतः ॥ १२३ ॥
सन्धायपिष्टवत्कृत्वाशुभेभाण्डेनिधापयेत् ।
भोजनादग्रतःखादेत्पलमेकंप्रमाणतः ॥ १२४ ॥
शतंवापिशतार्द्धंवारमेत्स्त्रीणांपुमानिह ।
गच्छेत्कन्दर्पदर्पान्धोरागवेगाकुलांस्त्रियम् ॥ १२५ ॥
संसेव्यभेषजंह्येतद्वन्ध्यायांजनयेत्सुतम् ।
वीरंसर्वगुणोपेतंशतायुश्चह्यनामयम् ॥ १२६ ॥
कन्याप्रदायिनीचैवददातिसुतमुत्तमम् ।
मृतवत्साचयानारीयाचगर्भोपघातिनी ॥ १२७ ॥

इति आम्रखण्डम् ।

अर्थ-पक्के आमोंका रस ३२ बत्तीससेर, बूरा ४ चारशेर घी १८ अठारहसेर, सोंठकाचूर्ण ९ नौसेर, काली मिरचोंका चूर्ण ४॥ साढ़ेचारसेर, पीपलका चूर्ण २। सवादो सेर, और जल ४ चारसेर, इन सबको एकत्र करकै एक ऊत्तम मट्टीके बासनमें पकावै, जब पकते पकते गाढ़ा होजाय तब तेजपातका चूर्ण ४ चार पल, गठिवन, लाल, चीतेकी जड़, नागरमोथा, धनिया, जीरा, काला जीरा, सोंठ, मिरच, पीपल, चमेलीके पत्ते, तालीशपत्र, दालचीनी, छोटी इलायची और नागकेशर प्रत्येक चार चार तोले ले चूर्णकर मिलादेवै, शीतलहोनेपर १ एक सेर सहत मिलाकर सबको एकजीवकर चिकने बासनमें भरकै रखदेवै। प्रतिदिन भोजनसे प्रथम चार तोले खाय। इसके प्रभावसे मनुष्य १०० सौ, या ५० पचास स्त्रियोंसें रम सक्ताहै, तथा कंदर्पके समान कामान्ध होकर रागके वेगसे आकुल स्त्रियोंपै जाताहै। वन्ध्या स्त्रियेंभी-वीर, सर्वगुण सम्पन्न, रोगरहित और १०० सौ वर्षकी आयुवाले पुत्रको उत्पन्न करती है। जिन स्त्रियोंके कन्या उत्पन्न होतीहै, जिसके बालक नहीं जीतेहैं, और जिसका गर्भ पतित होजाता है, उनके इसके प्रभावसे-उत्तम, सर्व गुणालंकृत और दीर्घायु पुत्र उत्पन्न होताहै ॥ ११९ ॥ १२० ॥ ॥ १२१ ॥ १२२ ॥ १२३ ॥ १२४ ॥ १२५ ॥ १२६ ॥ १२७ ॥

गोक्षुरःक्षुरकोमेघोमर्कटीशतपुत्रिका।
मधुकंक्षीरकाकोलीतालमूल्यमृताम्बुच ॥ १२८ ॥
शाल्मलीलोहगगनेविदारीतालमस्तकम्।
हस्तिकर्णोवलाधात्रीजातीफलकशेरुकम् ॥ १२९ ॥
शृंगाटकोमासपर्णीभृंगराट्कुङ्कुमंवचा।
शिलाजतुशिवाबीजंपारदंधातुमाक्षिकम् ॥ १३० ॥
वटस्यकोमलापादाएलायष्टिकतण्डुला।
रक्तशालिचगोधूममासकोयवकस्तथा ॥ १३१ ॥
एतच्चूर्णीकृतंसर्वंसितशर्करयासमम्।
विडालपदकंखादेत्सर्पिषामधुनासह ॥ १३२ ॥
शीतंपयोऽनुपानञ्चकामिनींकामयेन्नरः।

वीर्यहीनोभवेद्यस्तुजीर्णोव्याधिप्रपीडितः ॥ १३३ ॥
प्रमेहीमूत्रकृच्छ्रीचस्त्रीदोषात्पतितध्वजः ।
साशीतिवार्षिकोवृद्धोयुवेवरमतेऽङ्गनाः ॥ १३४ ॥
पुत्रंजनयतेवीरमरोगंदीर्घजीविनम् ।
भेषजैर्विविधैःकिंस्यादन्यैश्चशतसंख्यकैः ॥ १३५ ॥
फलंनकिंचित्तत्रास्तिकेवलंगौरवंबहु ।
बालसस्यंयथातोयैर्वर्द्धतेचदिनेदिने ॥ १३६ ॥
तथानेननृणांदेहःपुष्टोभवतिनान्यथा ।
योऽस्तिमण्डलमात्रन्तुसगच्छेत्प्रमदाशतम् ॥ १३७ ॥
जगतस्तुहितार्थायचूर्णमदनदीपनम् ॥ १३८ ॥

इति मदनसंदीपनचूर्णम् ।

अर्थ-गोखरू, तालमखानेके बीज, नागरमोथा, कौंछके बीज, सतावर, मुलेठी, क्षीरकाकोली, मुसली, गिलोय, सुगंधवाला, मोचरस, लोहा, अभ्रक, विदारीकन्द, ताडकेअंकुर, हस्तिकर्ण पलाशके बीज, मषवन, भांगरा, केसर, वच, शिलाजीत, गंधक, पारा, सोनामाखी, बड़की, नवीन दाढी, इलायची, वायविडंग, मुलेठी, रक्तशालि, गेहूँ, उडद, और जौ प्रत्येक औषधिका चूर्ण समान भाग, और सबकी बराबर बूरा मिलालेवै, प्रतिदिन २ दो तोले प्रमाण सहत और घीमें मिलाकर खाय, ऊपरसे शीतल दूधका अनुपान करै । यह मदन सन्दीपन चूर्ण, कामिनियोंको प्रसन्न करता है । तथा इससे वीर्यहीन और रोगोंसे पीडित वृद्ध मनुष्यभी तरुण होजाता है । प्रमेही, मूत्र कृच्छ्ररोगी, जिसका अत्यंत स्त्रीप्रसंग करनेसे लिंग शिथिल, होगया हो, वह ८० वर्षका वृद्धभी जवानोंकी तरह स्त्रियोंमें रमता है । और इस चूर्णको सेवन करनेसे वीर, निरोगी और दीर्घायु पुत्र उत्पन्न होता है । नानाप्रकारकी सैंकडों औषधियोंके सेवन करनेसे क्या फल होता है । केवल उनका गौरवही बडा है । जैसे-बालखेती जलसे दिन दिन बढती है, इसीप्रकार इस चूर्णको सेवन करनेसे मनुष्योंके शरीरकी पुष्टि होतीहै । इसको अडतालीस दिन नियमसे सेवन करै तौ १००

सौ स्त्रियोंसे मैथुन करनेकी शक्ति होजाती है। यह संसारके उपकारके लिये अश्विनीकुमारोंने निर्माण किया है ॥ १२८ ॥ १२९ ॥ १३० ॥ ॥ १३१ ॥ १३२ ॥ १३३ ॥ १३४ ॥ १३५ ॥ १३६ ॥ १३७ ॥ १३८ ॥

अश्वगंधापलशतंशुभदेशसमुत्थितम्।
पुण्येहनिसमाहृत्यसाधयेच्छ्लक्ष्णकुट्टितम् ॥ १३९ ॥
द्रोणेऽम्भसिशनैस्तावद्यावत्पादावशेषितम्।
सर्पिःप्रस्थंपचेत्तेनगव्यंक्षीरञ्चतुर्गणम् ॥ १४० ॥
कषायंछागमांसस्यदद्याच्छतद्वयस्यच।
कल्कानिश्लक्ष्णपिष्टानिकर्षमात्राणिदापयेत् ॥ १४१ ॥
काकोलीयुग्मंमृद्धीद्धेमेदेद्वेचजीरकम्।
स्वयंगुप्तामृषभकौएलामधुकमेवच ॥ १४२ ॥
मृद्वीकसूर्पपर्णौचजीवन्तीचपलावला।
नारायणीविदारीचदत्वासम्यक्विपाचयेत् ॥ १४३ ॥
सितामाक्षिकयोःशीतेगृह्णीयात्कुडवेपृथक्।
लिह्यात्पाणितलंभुक्त्वापरिहारविवर्जितम् ॥ १४४ ॥
क्षीणेन्द्रियानष्टशुक्रावृद्धाबालस्तथाऽबलाः।
हीनमांसाश्चयेकेचित्प्राश्येदंमात्रयाघृतम् ॥ १४५ ॥

इतिबृहदश्वगंधाघृतम्।

अर्थ-घी २ सेर, दूध ८ आठसेर, क्वाथके लिये उत्तम देशमें उत्पन्न हुई और शुभ दिनमें उखाडी हुई असगंध १२॥ साढ़ेबारहसेर, जल ३२ बत्तीससेर शेष ८ आठसेर, बकरेके मांसका काथ २५ पचीससेर, तथा कल्कके लिये काकोली, क्षीरकाकोली, ऋद्धि, वृद्धि, मेदा, महा मेदा, जीरा, कालाजीरा, कौंछके बीज, जीवक, ऋषभक, इलायची, मुलैठी, दाख, हस्तिकर्ण पलाशके बीज, जीवन्ती पीपल, खिरैटी, सतावर, और विदारीकन्द, यह सब औषधि कुटी हुई प्रत्येक २ तोले सबको मिलाकर यथाविधिसे घृतको पकावे, शीतल होनेपर १ एक सेर बूरा और १ एकसेर सहत मिलादेवै। इसमेंसे प्रतिदिन २ दो

तोले खाय, और यथेष्ट भोजन करै। यह घृत क्षीण इन्द्रियवाले, नष्ट होगया है वीर्य जिनका, वृद्ध, बालक, निर्बल और हीन मांसवाले प्राणियोंको हितकारी है ॥ १३९ ॥ १४० ॥ १४१ ॥ १४२ ॥ १४३ ॥ ॥ १४४ ॥ १४५ ॥

शुभदिग्देशोद्भवंमूलंशतमश्वगंधयोः ॥ १४६ ॥
पुण्येऽहनिसंक्षुण्णांविपचेद्द्रोणेऽम्भसांविद्वान् ॥
श्रेष्ठंवाजीकरणेनिर्दिष्टंपूर्वमाश्विभ्याम् ॥ १४७ ॥

इतिअश्वगंधाद्यंघृतम्।

अर्थ–घी २ दोसेर, दूध ८ आठसेर, काथके लिये असगंधकी जड़ १२॥ साढ़ेबारहसेर, जल ३२ बत्तीससेर, शेष ८ आठसेर, तथा, बकरेका मांस २५ पचीससेर, जल १२८ एकसौ अट्ठाईससेर, शेष ३२ बत्तीससेर, और कल्कके लिये कालोली, क्षीरकाकोली, ऋद्धि वृद्धि, मेदा, महामेदा, जीवक, ऋषभक, कौंछके बीज, इलायची मुलेठी, दाख, हस्तिकर्ण पलाश, जीवन्ती, पीपल, खिरैंटी, विदारीकन्द और सतावर ये सब कुटेहुए प्रत्येक २ दो तोले, यथाविधिसे घृतको सिद्धकरै, शीतल होनेपर १ एकसेर सहत और एकसेर बूरा मिलादेवै। इसको सेवन करनेसे– नाना प्रकारके वीर्य्य दोष, और विविध प्रकारके कास श्वासादि रोग दूर होतेहैं ॥ १४६ ॥ १४७ ॥

सुरभिचाश्वगंधककृताञ्जलीकटुकीरजनी
समंसिद्धम्। गोमहिषीघृततुल्यंतैलं
संसाधितंविधिना ॥ १४८ ॥
कुरुतेपरिणतवयसांवनितानांसप्तरात्रेण।
स्थिरविपुलतुंगकठिनंस्तनयुगलमस्ययोगेन ॥ १४९ ॥

इति यौवनंघृतम्।

अर्थ–गायकाघी १ एकसेर, भैंसकाघी १ एकसेर, तिलका तेल २ दोसेर, जल १६ सोलहसेर, तथा कल्कके लिये दालचीनी, असगंध, छुई मुई, कुटकी और हलदी सब १ एकसेर, यथाविधिसे सिद्धकरै इस औषधिको सेवन करनेसे अधिक उमर वाली स्त्रियोंके भी स्तन सात दिनमें स्थिर और पुष्ट होजातेहैं ॥ १४८ ॥ १४९ ॥

कुष्माण्डकात्पलशतंसुस्विन्नंनिष्कुलीकृतम् ।
प्रस्थंचतिलतैलस्यतस्मिंस्तत्तेनिधापयेत् ॥ १५० ॥
त्वक्पत्रधान्यकव्योषजीवकैलाद्वयानलम् ।
ग्रन्थिकंचव्यमातङ्गपिप्पलीविश्वभेषजम् ॥ १५१ ॥
शृंगाटकंकशेरुञ्चप्रलम्बंतालमस्तकम् ।
चूर्णीकृतंपलांशंचगुडस्यतुलयापचेत् ॥ १५२ ॥
शीतीभूतेपलान्यष्टौमधुनःसंप्रदापयेत् ॥ १५३ ॥

इति गुड़कुष्माण्डकम् ।

अर्थ–उसीजे हुए और छिले हुए पेठेके टुकड़े १२॥ साढे बारह सेर, घी २ दोसेर, तिलकातेल २ दोसेर, और गुड १२॥ साढेबारह सेर, सबको मिलाकर पकावै, जब पकते पकते गाढा होजाय तब दालचीनी, तेजपात, धनिया, सोंठ, मिरच, पीपल, जीवक छोटी इलायची बडी इलायची, चीता, पीपरामूल, चव्य, गजपीपल, सोंठ, सिघाडे, कसेरु, ताड़का मस्तक और ताडके अंकुर, प्रत्येक चार चार तोले मिलादेवै, शीतल होनेपर एक १ सेर सहत मिलादेवै । इसको सेवन करनेसे कफ, पित्त वातादि दोष नष्ट होतेहैं ॥ १५० ॥ ॥ १५१ ॥ १५२ ॥ १५३ ॥

त्रिकटुत्रिफलामुस्तजीरकद्वयधान्यकम् ।
कट्फलंपौष्करंशृंगीयमानीसैंधवंविडम् ॥ १५४ ॥
तालीशकेशरंपत्रंत्वगेलाचफलंतथा ।
यावन्त्येतानिचूर्णानितावदेवचमेथिका ॥ १५५ ॥
संचूर्ण्यगुडकंकार्यंपुरातनगुडेनतु ।
घृतेनमधुनामिश्रंखादेदग्निवलंप्रति ॥ १५६ ॥
अग्निंचकुरुतेदीप्तंसाममेकंमहौषधम् ।
वलवर्णकरोह्येषस्वरसंधानकारकः ॥ १५७ ॥

इति मेथीमोदकः ।

अर्थ-सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आमला, नागरमोथा, जीरा, कालाजीरा, धनिया, कायफल, पोहकर मूल, काकडाशिंगी, अजवायन, सेंधानोन, विरिया संचरनोन, तालीशपत्र, नागकेशर, तेजपात, दालचीनी, छोटी इलायची, और जायफल प्रत्येक एक भाग और मेथीका चूर्ण सबकी बराबर, इनको पुराने गुडमें मिलाकर मोदक बनालेवै, यह सहत और घीमें मिलाकर अग्निका बलाबल देखकर खावै इससे- एकमहीनेमें अग्निदीपन होतीहै, बल और वर्णकी वृद्धि होतीहै और स्वर उत्तम होताहै ॥ १५४ ॥ १५५ ॥ १५६ ॥ १५७ ॥

कर्पूरागुरुचोचबोलनलिकालाक्षाशटीधातुकी
पुष्पैःसप्तदलैलवालुसरलाशैलेयमांसीप्लवैः ।
एलाकुंकुमरोचनादमनकश्रीवासजातीफलैः
कक्कोलक्रमुकाझटामदमुराकान्तालवंगामयैः ॥ १५८॥
तैलोशीरहरेणुकामलयजस्थौणेयचण्डानखै-
र्जातीकोषकुलीरपद्मकनतैःपृक्कान्वितैःपालिकैः ।
लाक्षायोजनवल्लिलोध्रसलिलैतैलंविपच्याढकं
तेनाभ्यज्यतनुंजरन्नपिपुमान्कान्तःप्रियावल्लभः॥१५९॥

इतिमहासुगंधितैलम् ।

अर्थ-तिलकातेल १६ सोलह सेर, लाखका काथ, मजीठका काथ, और लोधका काथ प्रत्येक १६ सोलहसेर; तथा कल्कके लिये अगर, कपुर, दालनी, बोल, नलिका, लाख, कचूर, धायके फूल, सतवनकी छाल, एलुआ, धूप सरल, भूरिछरीला, बालछड, सुगंध तृण, इलायची केशर, गोलोचन, दौना, राल जायफल शीतलचीनी सुपारी, भुईं-आमला, कसूरी, कपूरकचरी, फूलप्रियंगु, लौंग, कूठ, शिलारस, खस, रेणुका, लालचंदन, गठिवन, चोरक द्रव्य, नखी, जावित्री काकडाशिंगी पद्माख, तगर और असवरग, प्रत्येक कुटीहुई औषधि ४ चार तोले। यथाविधिसे तेलको सिद्ध करै। इस तेलका मालिस करनेसे-वृद्धपुरुषभी स्त्रियोंको वल्लभ होजाताहै ॥ १५८ ॥ १५९ ॥

हरितालोऽश्वगंधाचजलौकाघृष्टीकञ्चुकैः ।

तिलतैलंपचेद्धीरोगोधामांससमन्वितम् ॥ १६० ॥
तैलेनानेनलिंगस्यश्रवणस्यकुचस्यच ।
भगस्यचतथावृद्धिर्मर्दनान्नात्रसंशयः ॥ १६१ ॥

तालकतैलम् ।

अर्थ-हरिताल, असगंध, जोंक, सूकर और सांपकी कैंचली, तथा गोधाका मांस, इन सबके साथ तेलको पकाकर मर्दन करनेसे लिंग, कर्ण, स्तन और योनि बढ़जातीहै ॥ १६० ॥ १६१ ॥

रसांजनंहैमवतीवयस्त्याचूर्णीकृतंशीतजलेनपीतम् ।
रजोविनाशंनियतंकरोतिशंकाद्रंकागर्भसमागमस्य॥१६२॥
क्षिप्तेवराङ्गेसतिदुष्टरण्डास्वप्नेऽपिवन्ध्यानहिगर्भशंकाम् १६३

अर्थ-रसौत, हरड़, और वचका चूर्ण करकै शीतल जलके संग पीवेतौ रजस्राव निवारण होकर गर्भ रहनेकी शंका दूर होवै । ढाकके बीजोंका चूर्ण सहत और गायके घीमें मिलाकर ऋतुस्नानके समय योनिमें घिसनेसे व्यभिचारिणी और रण्डा स्त्रियोंके स्वप्नमेंभी गर्भ नहीं रहता ॥ १६२ ॥ १६३ ॥

शुद्धसूतंसमंग्राह्यंसुवर्णगंधकंद्वयः ।
कज्जलीकृत्ययत्नेनशुल्वपात्रेभिषग्वरः ॥ १६४ ॥
राजिकास्वरसंदत्वाकृष्णोन्मत्तस्यवैरसम् ।
दत्वादत्वाप्रयत्नेनमर्दयेच्चत्रिभिर्दिनैः ॥ १६५ ॥
त्रिभिश्चसार्षपंतैलंदत्वाकल्कंविमर्दयेत् ।
शोषयेद्भानुभिर्भानोर्ज्वालंदद्याच्छनैःशनैः ॥ १६६ ॥
वालुकायंत्रयोगेतुउक्तोभेषजमध्यतः ।
तावज्ज्वालंप्रदातव्यंयावत्स्यादुष्णवालिका ॥ १६७ ॥
स्वाङ्गशीतलतांज्ञात्वाकर्षयेत्तंभिषग्वरः ।
ततोगुंजाप्रमाणेनमासंमासार्द्धकंपुनः ॥ १६८ ॥
ज्ञात्वारोगंशरीरंचयोजनीयंबुधैःसदा ।

घृतेनमधुनासार्द्धंमर्दयित्वातुखल्वके ॥ १६९ ॥
रसंवाभक्षयेत्पश्चादाज्यंगव्यंगवांपयः ।
सामान्येनतुकर्त्तव्यंचित्रकार्द्रकसैन्धवैः ॥ १७० ॥
रोगिणामनुपानीयंरसमाज्येनभोजनम् ।
सुस्निग्धंनातिमधुरंमांसञ्चैवविहायसम् ॥ १७१ ॥
भक्ष्यंछागादिकंमांसंद्दत्वायस्यतुभक्षणम् ।
एतेनापिविधानेनप्रातःप्रातर्निषेवयेत् ॥ १७२ ॥
साध्यासाध्येषुरोगेषुतथाव्याधिचयेषुच ॥ १७३ ॥

इति हेमांग सुन्दररसः ।

अर्थ–शुद्धपारा, सोना, गंधक और लोहा, यह सब समान भाग लेकर ताँबेके पात्रमें खलकर कज्जली करै, इस कज्जलीको राईके रसमें और धतूरेके रसमें ३ तीन दिन खरलकरकै पश्चात् सरसोंके तेलमें ३ तीन दिन खरलकर सूर्यकी तपनमें सुखावे; फिर वालुकायंत्रमें पकावै, जबतक वालू गरम न हो जबतक पकाता रहै, पश्चात् स्वांग शीतल चूर्ण करले । रसको एकरत्तीसे लेकर एकमासा पर्यंत अथवा आधे मासेपर्यन्त रोग और शरीरको जानकर सदैव सेवन करै । अनुपान–घृत, मधु, अदरखका रस, चीतेका रस सेंधानोन और औषधिके सेवनकरनेके पश्चात् बकरीका दूध पीना चाहिये । इस औषधिके ऊपर भोजनकरै । आकाशमें उड़नेवाले जीवोंका मांस, और बकरेके आदि पशुओंका मांस भक्षण करै । इसविधिसे प्रतिदिन प्रातःकाल इसको सेवन करै । इसकेद्वारा वली पलितादि सम्पूर्ण साध्यासाध्यरोग दूर होतेहैं ॥ १६४ ॥ १६५ ॥ १६६ ॥ १६७ ॥ १६८ ॥ १६९ ॥ १७० ॥ ॥ १७१ ॥ १७२ ॥ १७३ ॥

पूर्व्वसिद्धेरसेक्षिप्त्वारसपादेनकाञ्चनम् ।
विमर्द्यापिविधानेनसुपिष्टञ्चविनिक्षिपेत् ॥ १७४ ॥
कान्तवैक्रान्तयोरेवं क्षिप्तेतत्रविधानतः ।
मधुरत्रयसंयुक्तंमासमात्रंदिनेदिने ॥ १७५ ॥
लीढ्वानपानंपातव्यंमन्दतप्तंगवांपयः ।

त्रिसप्तदिवसैःक्षीणोभवेदक्षीणधातुकः ॥ १७६ ॥
उर्द्धलिंगःसदातिष्ठेद्द्रावयेद्वनिताशतम् ॥

इति कनककन्दर्परसः ।

अर्थ-पूर्वोक्त हेमांग सुन्दर रसमें चौथाईभाग सोनेकी भस्म मिलाकर खरल करै, पश्चात् इसमें कान्तलोहेकी भस्म और वैक्रान्तका भस्म मिलाकर घृत, बूरा और सहतके साथ सेवन करै, और ऊपरसे किंचित् गरम दूध पीवैतौ २१ दिनमें सम्पूर्ण ज्वरादिरोग दूर होवैं, क्षीण, क्षीण धातुवाले पुष्ट हो जातेहैं । और कामदेवकी अत्यन्त वृद्धि होती है ॥ १७४ ॥ १७५ ॥ १७६ ॥

रसगंधकताम्राणांचूर्णंकृत्वासमांशिकम् ॥ १७७ ॥
पुटपाकविधौपक्वामधुनालोड्यसंलिहेत् ॥
सर्वरोगहरंचैतत्पर्पटाख्यंरसायनम् ॥ १७८ ॥

ताम्रपर्पटी ।

अर्थ-पारा, गंधक और ताँबा समान भाग लेकर पुटपाकविधिसे पकाकर सहतमें आलोड़न करै । यह पर्पटाख्य रसायन सम्पूर्ण रोग नाशक है ॥ १७७ ॥ १७८ ॥

जीर्णताम्रंरसंचैवगंधकंचसुचूर्णितम् ।
स्वर्णमाक्षिकमादायधूस्तुरकरसेपचेत् ॥ १७९ ॥
यावत्पाकंतथाकृत्वाशास्त्रविन्मृदुवह्निना ।
त्रिफलापिण्डेनावेष्ट्यविधिवत्सर्पिषापचेत् ॥ १८० ॥
विमर्द्यमधुसर्पिर्भ्यांनारिकेलंपिबेदनु ।
पाण्डुरोगंचकासंचज्वरांश्चविषमांस्तथा ॥ १८१ ॥
गुल्मप्लीहामयंचैवविनाशयतितत्क्षणात् ॥

अर्थ-ताँबा, पारा, गंधक, और सोनामाखी इनका चूर्ण करकै धतूरेके रसमें मंद मंद अग्निसे पकावै,पश्चात् त्रिफलेसे वेष्टित कर विधिपूर्वक घृतकेसाथ पकावै।इस औषधिको घृत और सहतमें मिलाकर सेवन करनेसे-और ऊपरसे नारियलका दूध पीवे तौ-पाण्डुरोग, खाँसी, विषम ज्वर, गुल्म और प्लीहादि रोग दूर होवैं ॥ १७९ ॥ १८० ॥ १८१ ॥

हेमाद्याःसूर्यसन्तप्ताःस्रवन्तिगिरिधातवः ॥ १८२ ॥
जत्वाभंमृदुमृत्स्नाभंयन्मलंतच्छिलाजतु ॥
अनम्लंचाकषायञ्चकटुपाकेशिलाजतु ॥ १८३ ॥
नात्युच्चशीतंधातुभ्यश्चतुर्भ्यस्तस्यसम्भवः ॥
हेम्नोऽथरजतात्ताम्रावरंकृष्णायसादपि ॥ १८४ ॥
मधुरश्चसतिक्तंचजवापुष्पनिभंचयत् ॥
विपाकेकटुशीतंचतत्सुवर्णस्यानिःसृतम् ॥ १८५ ॥
राजतंकटुकंश्वेतंशीतंस्वादुविपच्यते ॥
ताम्राद्बर्हिणकण्ठाभंतीक्ष्णोष्णंपच्यतेकटु ॥ १८६ ॥
यच्चगुग्गुलुसंकाशंसतिक्तंलवणान्वितम् ॥
विपाकेकटुशीतंचसर्वश्रेष्ठंतदायसम् ॥ १८७ ॥
गोमूत्रगंधःसर्वेषांसर्वकर्म्मसुयोगिकाः ॥
रसायनप्रयोगेषुपश्चिमस्तुविशिष्यते ॥ १८८ ॥
यथाक्रमंवातपित्तेश्लेष्मपित्तेकफेत्रिषु ॥
विशेषेणप्रशस्यन्तेवलाहेमादिधातुजाः ॥ १८९ ॥

अर्थ–स्वर्ण, रूपादि पर्वतोंकी सम्पूर्ण धातु सूर्यकी धूपमें सन्तप्त होकर लाखकी समान और कोमल मिट्टीके समान मैलको छोडती है उसको शिलाजीत कहतेहैं। यह शिलाजीत–खट्टा और कषेला नहीं हैं, पचनेमें कटु, कुछ शीतल, और गरम है। यह सुवर्ण, रजत, ताँबा और लोह। इन चार प्रकारकी धातुओंसे उत्पन्न होताहै। जो शिलाजीत सुवर्णसे उत्पन्न होताहै। वह मधुर, कडवा, जवाके फूलके समान वर्णवाला, पचनेमें कटु और शीतलहै। जो शिलाजीत चांदीसे उत्पन्न होताहै वह कटु, सफेदरंगका, शीतल और पचनेमें मधुर होताहै। जो शिलाजीत ताँबेसे उत्पन्न होताहै वह–मोरके कंठके समान रंगका, तीक्ष्ण, गरम और कटु रसवाला होताहै। जो शिलाजीत लोहेसे उत्पन्न होताहै वह–गूगलकी समान रंगवाला, कड़वा, और नमकीन पचनेमें चरपरा,

और शीतलहै, यह सर्वमें श्रेष्ठहै । गोमूत्रकी गंधवाले सर्व प्रकारके शिलाजीत सर्व कर्म्मोंमें लाने चाहिये, परन्तु रसायन कर्म्ममें लोहेसे उत्पन्न हुवा शिलाजीत लेना चाहिये। सुवर्णसे उत्पन्न हुवा शिलाजीत–वातपित्तरोगमें, चांदीसे उत्पन्न हुवा शिलाजीत–पित्तकफ रोगमें ताँबेसे उत्पन्न हुवा शिलाजीत कफजरोगोमें और लोहेसे उत्पन्न हुवा शिलाजीत सान्निपातिक रोगमें देना चाहिये ॥ १८२ ॥ १८३ ॥ १८४ ॥ ॥ १८५ ॥ १८६ ॥ १८७ ॥ १८८ ॥ १८९ ॥

कालेरवितापाढ्येकृष्णायसजंशिलाजतुप्रवरम् ।
त्रिफलारससंसक्तंत्र्यहंशुष्कंपुनःशुष्कम् ॥ १९० ॥
दशमूलस्यगुडूच्यारसेवावासायास्तथापटोलस्य ॥
मधुकरसेगोमूत्रेत्र्यहंत्र्यहंभावयेत्क्रमशः ॥ १९१ ॥
एकाहंक्षीरेणतुतत्परंभावयेत्पुनःशुष्कम् ।
सप्ताहंभाव्यंस्यात्क्काथेनैषांयथालाभम् ॥ १९२ ॥
काकोल्यौद्वेमेदेविदारियुग्मंशतावरीद्राक्षा ।
ऋद्धियुगर्षभकवीरामुण्डितिकांशुमत्यौच ॥ १९३ ॥
रास्नापुष्करचित्रकदन्तीभकणाकलिंगचव्याब्दाः
कटुकाशृंगीपाठाएतानिपलांशिकानिकार्याणि ॥१९४॥
आभ्रेणसाधितानांरसेनपादांशिकेनभाव्यानि ।
गिरिजस्यैवंभावितशुद्धस्यपलानिदशषट्द्विपलंच १९५
विश्वाधात्रीमागधिकाकर्कटाख्यमरिचानाम् ।
चूर्णपलंचविदार्यास्तालीशपलानिचत्वारि ॥ १९६ ॥
षोडशसितापलानिचत्वारिघृतस्यमाक्षिकस्याष्टौ ॥
तिलतैलस्यद्विपलंचूर्णार्द्धपलानिपंचानाम् ।
त्वक्क्षीरपत्रत्वग्नागैलाभिःमिश्रयित्वातुतम् ॥ १९७ ॥

इति शैवसिद्धान्तोक्ताशिवागुटिका ।

अर्थ-कृष्ण लोहेसे उत्पन्न हुए शिलाजीतको ग्रीष्म ऋतुमें संग्रहकर रक्खै, फिर उस शिलाजीतको त्रिफलेके क्काथमें ४ चार दिन भावनादेकर धूपमें सुखावै, पश्चात् दशमूल, गिलोय, अडूसा, पटोल, मुलेठी, और गोमूत्र इनके क्काथमें या रसमें ३ तीन दिन भावनादेवै, पश्चात् दूधमें १ एक भावना देकर धूपमें सुखालेवै, पश्चात् काकोली, क्षीरकाकोली, मेदा, महामेदा, विदारीकन्द, क्षीरविदारी, सतावर, दाख, ऋद्धि, वृद्धि ऋषभक, घीकार, गोरखमुंडी, रास्ना, पोहकरमूल, लालचीता, दन्ती, गजपीपल, कुडा, चव्य, नागरमोथा, कुटकी, काकडाशिंगी, और पाढ, प्रत्येक चार चार तोले लेकर ३२ बत्तीससेर जलमें औंटावै, जब चौथाभाग शेषरहै तब उतारकर इसमें ७ सात दिन भावनादेवै, इसप्रकार शुद्ध कियाहुवा और भावना दियाहुवा शिलाजीत १६ सोलहपल, सोंठ, आमला, पीपल, काकडाशिंगी और काली मिरच प्रत्येकका चूर्ण, २ दो पल, विदारीकंदका चूर्ण १ एक पल, तालीशपत्रका चूर्ण ४ चार पल, बूरा १६ सोलहपल, घी ४ चार पल, सहत ८ आठपल, तिलका तेल २ दो पल, और वंशलोचन, तेजपात, दालचीनी, नागकेशर, और इलायची, यह सब दो तोले, इन सबको मिलाकर दो दो तोलेकी गोली बनाकर धूपमें सुखा चमेलीके फूलोंमें वसाकर एक उत्तम बासनमें भरके रखदेवै, प्रतिदिन १ एक गोली खाय और ऊपरसे दूध, उडदादिकोंका यूष, अनारकारस, सुरा, आसव, मधु, शीतल जलादिपान करै। इसके ऊपर यथेष्ट भोजन करै। इससे वात, कृमि, कासादि सर्वप्रकारके रोग नष्ट होतेहैं ॥ १९० ॥ १९१ ॥ ॥ १९२ ॥ १९३ ॥ १९४ ॥ १९५ ॥ १९६ ॥ १९७ ॥

मण्डूकीसजटांसशंखकुसुमांसब्रह्मसौवर्चलां
श्वेतांवागुंजिकांशतावरियुतांब्रह्मींगुडूचीन्तथा ॥
पिष्ट्वांशैःपलिकैरिमानिविधिवद्द्रव्याणिपच्यान्नरः
सर्पिःप्रस्थमथाढकेनपयसायुक्तंपचेद्युक्तितः ॥ १९८ ॥
नाम्नाष्टाङ्गमिदंदिवीवतुवियत्ख्यातंपिबेच्चामृतम्।
साग्रंग्रन्थसहस्रमेकदिवसेनैवाखिलंधारयेत् ॥ १९९ ॥

अष्टाङ्गघृतम्।

अर्थ-उत्तम गायका घी २ दो सेर, गायका दूध आठ ८ सेर, तथा कल्कके लिये डुलडुल, जटामांसी, शंखपुष्पी, ब्रह्मसौवर्चली, सफेद कोयल, वापची केबीज, शतावर, बडीसतावर, ब्रह्मी और गिलोय, प्रत्येक चार चार तोले । यथाविधिसे घृतको पकाकर सेवन करनेसे अत्यन्त धारणा शक्ति, मधुरध्वनि और बृहस्पतिकी समान श्रुति होजातीहै॥१९८॥१९९॥

सितपुनर्नवामूलंशाल्मलीसत्वभावितम् ।
शाल्मलीसत्त्वनिर्यासंदद्यादत्ररसंसमम् ॥ २०० ॥
गंधकंतत्समंदद्याद्भक्षयेत्तुर्यमानकम् ।
अनुपानंप्रकुर्वीतगवांक्षीरपलद्वयम् ॥ २०१ ॥
अयंचाण्डालिकायोगोऽप्यगम्यामपिगम्यते ।
निष्वेधान्निधनंयातिकरणात्कामदेववत् ॥ २०२ ॥

इति कामदीपकरसः ।

अर्थ-सफेद पुनर्नवेकी जडका चूर्ण करकै सेमलके रसमें भावना देवै, पश्चात् इसमें सेमलका सत्त्व और गंधक समान भाग मिलाकर गोली बनाके भक्षण करै, और दूधका अनुपान करै। इससे कामदेवकी समान रूप लावण्यता युक्त और वीर्य्यवान् होताहै॥२००॥२०१॥२०२॥

सूतंगंधंकान्तभस्मापितुल्यंयामंनीरैःशाल्मलीसम्भवोत्थैः ।
गोलंकृत्वावेष्टयित्वान्धमाषैराढ्यंपक्त्वाकाचकुप्यांनिधाय ॥
भूकूष्मांडनागवल्लींचपिष्ट्वातोयंदद्याद्रात्रिमेकान्तयत्नात् ।
सिद्धःसूतःकामदेवस्यवल्लंमध्वाज्याभ्यांयोजयेत्तत्रिसप्तम्२०५
खण्डंदुग्धंचानुपानेचदद्याद्रात्रौदुग्धंशक्यमानेचदेयम् ।
तिक्तंरूक्षंवर्जयित्वातिचाम्लंपेयंनित्यंशाल्मलीरक्षीयुक्तम्२०६
खण्डंधात्रीवानरीमूलदुग्धंपुष्टिंवीर्यंजायतेतत्प्रभूतम् ।
कुर्यान्नित्यंरम्यकान्ताविनोदंकृत्वादिव्यंकामदेवंरसेन्द्रम्२०७॥

इति कामदूतरसः ।

अर्थ-पारा, गंधक और कान्तलोहेकी भस्म समभाग लेकर सेमलके रसमें एकप्रहर खरलकर गोला बना घृतके साथ कांचकी कुप्पीमें भरके विदारीकन्द और पानोंके रसमें डालकर एकदिन पकावै। इस औषधिको घृत और सहतके साथ सेवन करै, पश्चात् दूध और बूराका अनुपान करै। इस पै.तिक्त, रूक्ष और अत्यंत खट्टे पदार्थ त्याग देवै। खांड, आमला, और सेमल, इनको दूधके साथ सेवन करै। इससे अत्यन्तवीर्य्य पुष्टि और रक्तशक्ति बढती है ॥२०४॥२०५॥२०६॥२०७॥

सूतंगंधंचाश्वगंधागुडूचीयष्टिस्तोयैरेकघस्रंनिघृष्य।
क्षुद्रंशंखंमौक्तिकंलौहकिट्टंभस्मीभूतंसूततुल्यंचदद्यात्२०८
भूकुष्माण्डैरेकघस्रंविघृष्यगोलंकृत्वाभूधरेतंपुटेच्च।
चूर्णंकृत्वानागवल्लीरसेनदद्यादेवंमर्दयित्वाचनिष्कम् ॥२०९
मध्वाज्याभ्यांपूर्णचंद्रंपुष्टिवीर्यंदीपनंचैवकुर्यात्।
योज्यंप्रायःपित्तरोगेग्रहिण्यामर्शोरोगेसेवयेद्वालयुक्तम्२१०
स्त्रीणांतापेशाल्मलीनीरयुक्तंमात्रामानंकालदेशंविभज्य२११

इतिपूर्णचन्द्ररसः।

अर्थ-पारा और गन्धकको एकदिन असगंध, गिलोय और मुलेठीके क्वाथमें भावना देवै, पश्चात् इसमें पारेकी समान क्षुद्रशंख, मोती और मण्डूरको मिलाकर एकदिन विदारीकंदके रसमें खरलकर गोला बना भूधरयंत्रमें पुटपाक करके चूर्ण करले। फिर इसको पानोंके रसमें खरलकर सहत और घीके साथ सेवन करै तौ पुष्टि, वीर्यकी वृद्धिहो, अग्निदीपनहो, पित्तरोग, संग्रहणी और बवासीर दूर हो और स्त्रियोंके ताप होय तौ सेमलके रसके साथ सेवन करै॥२०८॥२०९॥२१०॥२११॥

द्विकर्षशुद्धसूतंचगंधकश्चाद्विकार्षिकम्।
लौहभस्मपलश्चाभ्रंजारितश्चपलांशिकम् ॥ २१२ ॥
द्वितोलंरजतंचैववंगभस्मद्विकार्षिकम्।
सुवर्णतोलकंचैवताम्रंकांस्यंचतत्समम् ॥ २१३ ॥
जातीफलंचन्द्रपुष्पमेलाभृंगश्चजीरकम्।

कर्पूरंवनितामुस्तंकर्षंकर्षंपृथक्पृथक् ॥ २१४ ॥
सर्वंखल्वतलेक्षिप्त्वाकन्यारसविमर्दितम् ।
भावयित्वावरातोयेकटुकानांरसैस्तथा ॥ २१५ ॥
एरण्डपत्रैःसंवेष्ट्यधान्येरात्रिन्दिनोषितम् ।
उद्धृत्यमर्दयित्वातुवटिकांचणसंमिताम् ॥ २१६ ॥
खादेच्चपर्णखण्डेनसंयुक्तांव्याधिनाशिनीम् ।
सर्वव्याधिविनाशश्चकाशीनाथेननिर्म्मितः ॥ २१७ ॥

इति बृहत्पूर्णचन्द्रोरसः ।

अर्थ-पारा २ दोकर्ष, गंधक २ दोकर्ष, लोहा ४ चारतोले, अभ्रक ४ चारतोले, चाँदी २ दो तोले, वंग २ दो कर्ष, सोना १ एकतोला, तांबा १ एकतोला, कांसी १ एकतोला, जायफल, नागकेशर, इलायची, दालचीनी, जीरा, कपूर, प्रियंगु और नागरमोथा प्रत्येक एकएक कर्ष, इनको एकत्र पीसकर घीक्कारके रसमें खरलकरै, फिर त्रिफलेके काथमें १ एकदिन भावना देकर १ एकदिन त्रिकुटेके काथमें भावना देवै, पश्चात् इसको अंडके पत्रोंसे वेष्टितकर एकदिन धानोंके ढेरमें गाढ देवै, फिर निकालकर चनेकी बराबर गोली बनालेवै, प्रतिदिन १ एकगोली पानके टुकडेमें रखके खाय, इससे सर्व प्रकारके रोग दूर होते हैं ॥ ॥ २१२ ॥ २१३ ॥ २१४ ॥ २१५ ॥ २१६ ॥ २१७ ॥

तोलकैकंसमादायपृथग्गंधकसूतयोः ।
रक्तोत्पलदलाम्भोभिर्मर्दयेद्दिवसत्रयम् ॥ २१८ ॥
मर्दयित्वापुनर्देयंगंधंमासचतुष्टयम् ।
तस्यैवपत्रतोयेनपुनर्दत्वाचगंधकम् ॥ २१९ ॥
शंखिन्याश्चापितोयेनरुद्धाकाचघटेदृढे ।
ततस्तुवालुकायंत्रेपचेद्यामत्रयंत्ततः ॥ २२० ॥
काचकूप्याःसमाकृष्यसिद्धसूतमतःपरम् ।
खादेत्तुरक्तिकापंचरोगैराक्रान्तमानवः ॥ २२१ ॥

भोजनंपूर्ववद्देयंयत्नतःसततंभिषक् ॥ २२२ ॥
दुर्बलंवपुरत्यर्थंमल्लवज्जायतेनृणाम् ।
मासेनैकेनसूतेन्द्रःपित्तजान्नाशयेद्गदान् ॥ २२३ ॥

इति अभिनवकामदेवरसः ।

अर्थ-१ एक तोले पारा, और १ एकतोले गंधकको एकत्र लाल कमलके पत्तोंके रसमें तीन ३ दिन खरलकरै, पश्चात् ४ चारमासे गंधक मिलाकर फिर लाल कमलके पत्तोंके रसमें खरलकरै, तदनंतर ४ चारमासे गंधक मिलाकर शंखपुष्पीके रसमें खरलकर कांचकी कुप्पीमें भरके वालुकायंत्रमें ३ तीन प्रहर पकावै । मात्रा ५ पांच रत्तीकी है । इससे १ एक महीनेमें सर्व प्रकारके पित्तविकार दूर हो जाते हैं, और दुर्बल मनुष्योंका मल्लकी समान शरीर होजाता है । भोजन पूर्व रसकी समान जानना ॥ २१८ ॥ २१९॥ २२० ॥ २२१ ॥ ॥ २२२ ॥ २२३ ॥

माक्षिकंधातुमाक्षिकंतल्लौहचूर्णंशिलाजतु ।
पारदंचविडंचैवगन्धकश्चसमंसमम् ॥ २२४ ॥
घृतेनभावयित्वातुपात्रेकृत्वातुचायसे ।
विडालपदमात्रन्तुभक्षयेच्चपुनःपुनः ॥ २२५ ॥
मत्स्याण्डंतिलपिष्टंचघृतेनचपरिप्लुतम् ।
क्षीरेणानुपिबेद्रात्रौशर्करामधुमिश्रितम् ॥ २२६ ॥
मासमात्रंपिबेन्नित्यंवीर्यवृद्ध्यैदिनेदिने ।
सपुमान्रमयेन्नारीमजस्रंचटकोयथा ॥ २२७ ॥

इति मदनसुंदररसः ।

अर्थ-सोनामाखी, रूपामाखी, लोहेका चूर्ण, शिलाजीत, पारा, विरिया संचरनोन, और गंधक समान भागलेकर, लोहेके बासनमें घीकी भावना देवै । मात्रा २ दो कर्ष । इसपे मछलीके अण्डे और तिलोंकी पिट्ठीको घृतमें मिलाकर खावै, और रातको दूधमें शर्करा और सहत मिलाकर एक महीने पर्यन्त सेवन करै । इससे प्रतिदिन वीर्य्यकी वृद्धि होती है । इसको सेवन करनेसे वारंवार मैथुन करनेकी इच्छा होती है ॥ २२४ ॥ २२५ ॥ २२६ ॥ २२७ ॥

गंधकस्यतुतोलैकंकृत्वावैतण्डुलाकृतिम् ।
दत्वाभृंगद्रवंरौद्रेभावयेद्दिनसप्तकम् ॥ २२८ ॥
तच्चूर्णंप्रक्षिपेत्तत्रप्रत्येकंमासकद्वयम् ।
जातीफलस्यकोषस्यतथाचंद्रलवंगयोः ॥ २२९ ॥
ततःसगुडकंकृत्वातस्यगुंजाचतुष्टयम् ।
अभ्यर्च्यभास्करंप्रातर्भक्षयेप्रत्यहंततः ॥ २३० ॥
आर्द्रकंसैन्धवोपेतंमरिचस्यचसप्तकम् ॥ २३१ ॥
तच्चानुचर्वणंकृत्वापिबेत्क्षीरपलद्वयम् ।
अनेनैवप्रयोगेणस्थविरोऽपियुवायते ॥ २३२ ॥

इति कामदीपकरसः।

अर्थ—१ एकतोले गंधकको लेकर चावलोंकी समान छोटे छोटे टुकडे करलेवै, पश्चात् भांगरेके रसमें ७ सातदिन भावना देकर चूर्ण करलेवै, फिर इस चूर्णमें जायफल, जावित्री, कपूर और लोंग प्रत्येक दो दो मासे मिलाकर चार चार गुंजाकी गोली बनालेवै । सूर्य्य देवकी पूजा करकै प्रतिदिन १ एकगोली खाय, ऊपरसे अदरख, सेंधानोन, सातकाली मिरचोंका चूर्ण, इनको चाबै और दो पल दूध पीवै इसको सेवन करनेसे वृद्ध मनुष्य स्त्रीसंसर्गकी इच्छा करता है ॥ ॥ २२८ ॥ २२९ ॥ २३० ॥ २३१ ॥ २३२ ॥

प्रथग्द्वौहाटकंचन्द्रंत्रयोवंगाहिकान्तकम् ।
चत्वारिशुद्धमभ्रञ्चप्रवालंमौक्तिकन्तथा ॥ २३३ ॥
भावनागव्यदुग्धेनभावनेक्षुरसेनच ।
वासालाक्षारसोदीच्यरम्भाकन्दप्रसूनकैः ॥ २३४ ॥
शतपत्ररसेनैवमालत्याःकुसुमोदकैः ।
पश्चान्मृगमदैर्भाव्यंसुगान्धिरससम्भवैः ॥ २३५ ॥
गुंजाद्वयमिदंसेव्यंसितामध्वाज्यसंयुतम् ।
मेहघ्नंकान्तिदञ्चैवकामदंपुष्टिदन्तथा ॥ २३६ ॥

इति वसन्तकुसुमाकररसः।

अर्थ—सोना २ दोभाग, चांदी २ दोभाग, वंग ३ तीनभाग, कान्त

लोह ३ तीनभाग, अभ्रक ४ चार भाग, मोती ४ चार भाग, मूंगा, ४ चार भाग, इन सबको एकत्र पीसकर गायका दूध, ईखका रस, अडूसेका रस, लाखका रस, सुगंधवालेका रस, केलेके फूलका रस, मोचा, कमलके पत्तोंका रस, मालतीके फूलोंका रस, और कस्तूरीकारस, इन सबरसोंमें एक एक वार भावना देवै। प्रतिदिन २ दो रत्ती प्रमाण बूरा सहत और घीमें मिलाकर सेवन करै। यह प्रमेह नाशक, कान्तिजनक, कामको देनेवाला और पुष्टिको करने वाला है ॥ २३३ ॥ २३४ ॥ २३५ ॥ २३६ ॥

मृतसूताभ्रकंस्वर्णवाजिगंधामृतारसैः।
मुसलीकदलीकन्दद्रवैस्तंमर्दयेद्दिनम् ॥ २३७ ॥
रुध्वालघ्वग्निनापच्यान्मर्द्यपूर्वोक्तकैर्द्रवैः।
पुटन्देयंपुनर्मर्द्यमेवमष्टपुटैःपचेत् ॥ २३८ ॥
शाल्मलीजातनिर्यासैश्चतुर्मासंचभक्षयेत्।
गोक्षीरैर्मर्कटीबीजैःपलार्द्धंपाययेदनु ॥ २३९ ॥
रसःकामकलाख्योऽयंरमतेस्त्रीसहस्रधा।
सर्वाङ्गोद्वर्त्तनंकुर्यात्सयवैःशाल्मलीरसैः ॥ २४० ॥

इति कामकलाख्योरसः।

अर्थ-पारेकी भस्म, अभ्रककी भस्म, और सोनेकी भस्म समान भाग लेकर असगंध, गिलोय, मुसली और केलेके कन्दके रसमें एकदिन खरलकर मृदु अग्निके द्वारा पुटपाककरै फिर पूर्वोक्त रसोंमें खरलकर पुटपाककरै। इस प्रकार आठ ८ वार पुट पाक करै। इसको प्रतिदिन ४ चारमासेभर सेमलके रसमें मिलाके खाय, ऊपरसे वापचीके बीजोंके चूर्णको गायके दूधमें मिलाकर पीवै। और सेमलके रसमें जौका चूर्ण मिलाकर उबटनकरै। इस रसके प्रभावसे १००० सहस्र वार स्त्रीके पास जानेको समर्थ होजाताहै ॥२३७॥२३८॥२३९॥२४०॥

शाल्मलोत्थैर्द्रवैर्मर्द्यपलैकंमृतगंधकम्।
पृथक्खल्लेत्रिसप्ताहंतद्द्रवैर्मर्द्यगंधकम् ॥ २४१ ॥
एकीकृत्यघृतैश्चार्द्धंमर्दयेत्तच्चगोलकम्।
यामद्वयंपचेदाज्येवस्त्रेवध्वातुपाचयेत् ॥ २४२ ॥

दिनैकंशाल्मलीद्रावैःपिण्डंयामद्वयंपचेत्।
मर्दयित्वापुनःपिण्डंनागवल्याचवेष्टयेत् ॥२४३॥
निक्षिप्यकाचकूप्याञ्चद्रवंदत्वातुशाल्मलम्।
पलैकपरिमाणन्तुपचेद्यामद्वयन्ततः ॥ २४४ ॥
वालुकायन्त्रमध्येतुद्रवेजीर्णेसमुद्धरेत्।
द्विगुंजंभक्षयेत्प्रातर्नागवल्लीदलान्तरे ॥ २४५ ॥
मुसलींससिताक्षीरैःपलैकंपाययेदनु।
रसःपूर्णेन्दुनामायंसम्यग्वीर्यकरोभवेत् ॥ २४६ ॥

इति पूर्णचंद्ररसः।

अर्थ-पारा और गंधक ४ चार तोले लेकर सेमलके रसमें खरल करै, और एक खरलमें अलग गंधकको २१ इक्कीस दिनतक खरल करकै पूर्वोक्तमें मिलादेवै, पश्चात् घीमें मर्दनकर गोला बना दोपहर घीके साथ पकाकर पिण्डकी समान बनादेवैं, फिर उस पिण्डको वस्त्रमें बाँधकर सेमलके रसमें १ एकदिन पकावै। तत्पश्चात् सेमलके रसमें फिर खरलकर फिर पानोंसे वेष्टितकर काँचकी कुप्पीमें भरकै १ एक पल सेमलके रसके साथ २ दोप्रहरतक वालुका यंत्रमें पकालेवै। प्रतिदिन, २ दो रत्ती पानमें रखके खाय और ऊपरसे मुसलीके चूर्णको दूधके साथ बूरा मिलाकर पीवै। इससे-अत्यन्त वीर्यकी वृद्धि होतीहै और अत्यन्त स्त्री संसर्गकी इच्छा होतीहै ॥२३९॥ ॥२४०॥२४१ ॥ २४२ ॥ २४३ ॥ २४४ ॥ २४५ ॥ ३४६ ॥

शुद्धसूतंसमंगंधंरक्तोत्पलपलद्रवैः।
यामंमर्द्यपुनर्गन्धंपूर्वादर्द्धंविनिक्षिपेत् ॥ २४७ ॥
पंचगुंजासितासार्द्धंरसोऽयंमदनोदयः।
समूलंशत्रुबीजञ्चमूसलीशर्करासमम् ॥ २४८ ॥
गवांक्षीरेणतत्पेयंपलार्द्धमनुपानकम्।
तैलपक्कंचचटकंखादेत्भोजनपूर्वतः ॥ २४९ ॥
भोजनान्तेपिबेत्क्षीरमजस्रंरसतेऽबलाम् ॥ २५० ॥

इति मदनोदयरसः।

अर्थ-पारा और गंधक समान भाग लेकर लाल कमलके पत्तोंके

रसमें एकप्रहरतक खरलकरै, पश्चात् पूर्व गंधकसे आधा गंधक और लेकर मिलादेवै, तीन तीन रत्तीकी गोलियां बनालेवै। इसको बूरामें मिलाकर खाय, पश्चात् जड समेत भांग मुसली और बूरा एकत्र दूधके साथ सेवन करै। इस औषधिको खाकर भोजनके पूर्वमें, तैलमें भुना हुवा चिडेका मांस और भोजनके अंतमें दूधको पीवै॥ २४७॥२४८॥ ॥ २४९॥ २५०॥

हेम्नोभस्मकतोलकंद्विगुणितंलोहात्त्रयःपारदा-
श्चत्वारोनियतन्तुवङ्गयुगलंचैकीकृतंमर्दयेत् ॥ २५१ ॥
मुक्ताविद्रुमयोरसेनसमतागोक्षुरवासेक्षूणाम् ।
सर्वंवन्यकरीषकेणसुदृढंतत्तंपचेत्सप्तधा ॥ २५२ ॥
कस्तूरीघनसारमर्दितरसःपश्चात्सुसिद्धोभवेत् ।
कासश्वाससपित्तवातकफजित्पांडुक्षयादीन्हरेत् २५३ ॥

इति वसन्ततिलकोरसः।

अर्थ–सोनेकी भस्म २ दो तोले, लोहेकी भस्म ३ तोले, पारेकी भस्म ४ चार तोले, वंगकीभस्म २ दो तोले, मोतीकीभस्म २ दो तोले, और मूंगेकी भस्म २ दो तोले, इनको एकत्र गोखुरू, अडूसा और ईखके रसमें खरलकर अन्नेउपलोंकी आँचसे ७ सात वार पकाकर पश्चात् कपूर और कस्तूरीके साथ खरल करै। इसको यथायोग्य अनुपानकेसाथ सेवन करनेसे–खाँसी, श्वास, पित्त वात-कफ, पाण्डु और क्षयादि रोगोंको क्षय करै है॥ २५१॥ २५२॥ २५३॥

धात्रीफलस्यचूर्णन्तुभावयेत्रिफलाजले ।
एकविंशतिवाराणिशोधयेच्चपुनःपुनः ॥ २५४ ॥
पलैकंभक्षयेन्नित्यंसिताक्षीरंपिबेदनु ।
कामयेत्स्त्रीशतं नित्यंधात्रीलोहप्रभावतः ॥ २५५ ॥

इति धात्रीलोहम्।

अर्थ–आमलोंके चूर्णको त्रिफलेके क्वाथमें २१ इक्कीसवार भावना देकर पश्चात् चौथाई भाग लोहा मिला लेवै, इसको सहत और घृत तथा बूरामें मिलाकर चार तोले खाय पश्चात् दूधमें बूरा मिलाकर पीवैतौ–नित्य १०० सौ स्त्रियोंसे विषय करनेकी शक्ति उत्पन्न हो जातीहै॥ २५४॥ २५५॥

पलंमृदुस्वर्णदलंरसेन्द्रात्पलाष्टकंषोडशगंधकस्य।
शोणैःसुकार्पासभवप्रसूनैःसर्वंविमर्द्याथकुमारिकाद्भिः २५६
तत्काचकुम्भेनिहितंप्रगाढंमृत्कर्पटैस्ताद्दिवसत्रयञ्च।
पचेत्क्रमाग्नौसिकताख्ययन्त्रेततोरसःपल्लवरागरम्यम् २५७
संगृह्यचैतस्यपलंपलानिचत्वारिकर्पूररजस्तथैव।
जातीफलंसोषणमिन्द्रपुष्पंकस्तूरिकायाइहशाणएकः २५८
चन्द्रोदयोऽयंकथितोऽस्यमाषःभुक्तोहिवल्लीदलमध्यवर्ती।
मदोन्मदानांप्रमदाशतानांगर्भाधिकत्त्वंश्लथयत्यवश्यम्२५९

इति चन्द्रोदयरसः।

अर्थ-नरम सोनेके पत्र ४ चारतोले, शुद्धपारा ८ आठपल, और शुद्धगंधक १६ सोलह पल, तीनोंको एकत्र पीसकर नरमावाडीके रसमें और घीक्वार के रसमें खरल करके सुखा लेवै, फिर आतसी सीसीमें भर ऊपरसे मिट्टी चढ़ाकर धूपमें सुखा लेवै, पश्चात् वालुका यंत्रमें रखकर तीन दिनतक क्रमसे मंद, मध्य और तेज अग्नि देवै, तौ यह रस लाल वर्ण हो जाताहै। यह चंद्रोदय ४ चार तोले, भीमसेनी कपूर ४ चार पल, जायफल, मिरच, लोंग और कस्तूरी प्रत्येक चार चार मासे, इनको एकत्र पीसकर एक मासे पानमें रखके खाय, इसके प्रभावसे मदोन्मत्त सैकडों स्त्रियोंके गर्वको इकला मनुष्य दूर कर देता है। तथा सर्वप्रकारके वली पलितादि रोग दूर होते हैं॥ २५६ ॥ २५७॥२५८॥२५९॥

शुद्धंकृष्णाभ्रचूर्णद्विपलपरिमितंशाणमानंयदन्यत्
कर्पूरंजातिकोषंसजलमिभकणातेजपत्रंलवंगम्।
मांसीतालीशचोचंगजकुसुमगदंधातकीचेतितुल्यं
पथ्याधात्रीविभीतंत्रिकटुचपृथक्त्वर्द्धशाणंद्विशाणम्२६०
एलाजातीफलाख्यंक्षितितलविधिनाशुद्धगन्धाश्मतोलं
तोलार्द्धंपारदंचप्रतिपदनिहितंपिष्टमेकत्रमिश्रम्।
पानीयेनैवकार्यापरिणतचणकास्विन्नतुल्याश्चवट्यः।
प्रातःखादेच्चतस्रस्तदनुचकियच्छृंगबेरंसपर्णम् ॥२६१॥

पानीयंशीतमन्तेध्रुवमपहरतिक्षिप्रमादौविकारान्
दीर्घायुःकाममूर्त्तिर्जितवलीपलितोमानवोऽस्यप्रसादात्
इति शृंगाराभ्रम् ।

अर्थ-शुद्धकृष्णाभ्रकका चूर्ण दो पल, कपूर, जावित्री, सुगंधवाला, गजपीपल, तेजपात, लौंग, बालछड, तालीशपत्र, दालचीनी, नागकेशर, कूठ और धायके फूलोंका प्रत्येक चार ४ मासे, हरड़, बहेडा, आमला सोंठ, मिरच, और पीपल, प्रत्येकका चूर्ण दो मासे, इलायची और जायफल प्रत्येकका चूर्ण आठ ८ मासे, शुद्धगंधक, १ एक तोला और शुद्धपारा आधा तोला, सबको एकत्र पीसकर पानीमें भिजे हुए चनेकी बराबर गोली बना लेवै, प्रतिदिन प्रभातके समय १ एक गोली खाय, पश्चात् अदरख और पानको खावै और जलपीवै । इसके प्रसादसे-कास, यक्ष्मा, शोथादि सर्वप्रकारके रोग नष्ट होकर शरीरकी कान्ति, लावण्य, पुष्टि और बलवीर्यादिकी वृद्धि होतीहै ॥ ॥ १६० ॥ १६१ ॥ २६२ ॥

सिद्धंकुसुम्भतैलंभूमिलताचूर्णमिश्रितंकुरुते ।
चरणाभ्यंगेपुंसांवीजस्तम्भंदृढलिंगम् ॥ २६३ ॥
कर्पूरगोपाङ्गनानीरलेपात्स्त्रीणांपरंस्रावणमेवपुंसाम् ॥
पिष्टास्थितास्तम्भनमेवलिंगेवदन्तिवैद्याइतिचित्रमेतत् २६४
मेदसाक्षौद्रयुक्तेनवराहस्यप्रलेपितम् ।
सम्यक्लिंगंरतान्तेऽपिस्तब्धताञ्चनमुञ्चति ॥ २६५ ॥
नीलोत्पलसितपंकजकेशरमधुशर्करावलिप्तेन ।
सुरतेसुचिरंरमतेदृढलिंगंनाभिविवरेण ॥ २६६ ॥
नीलोत्पलसिरासितसजयोःकेशरम् ।
एभिर्नाभिंलिप्त्वावीजानांधारणाच्चिरंरमते ॥ २६७ ॥
श्वेतकोकिलनेत्रांघ्रिभुजेशिरासिवाधृतः ।
शाखोटबीजंत्वैलंवातिलकाद्बीजधारणम् ॥ २६८ ॥
श्वेतकोकिलकाश्वेतकुलियाख्यास्यमूलकम् ।
श्वेतक्षुद्राजटाविम्बीमार्जारास्थिच्युतास्थिरा ॥२६९॥

करोतिनियतंतद्धिवीजस्तम्भंदृढध्वजम् ।
श्वेतक्षुद्राश्वेतबृहतीस्थिराशालपर्ण्यपि ॥ २७० ॥

अर्थ–पकायेहुए कसूमके तेलमें वनककोडेके चूर्णको मिलाकर दोनों पावोंमें मलनेसे–मनुष्योंका वीर्य्यस्तम्भ और लिंगदृढ़ होजाताहै। कपूर, अनन्तमूलके बीज और शुद्धपारेको एकत्र गोपांगनाके जलमें मिलाकर उससे लिंगको धोवै तौ वीर्यस्तम्भहो, और योनिमें लगावै तौ योनि द्रवीभूत होजातीहै। सूअरकी चरबीको सहतके साथ मिलाकर लेपकरनेसे मैथुनके अंतमेंभी लिंग नहीं बैठताहै। नीलोत्पल और सफेद कमलकी केसरको पीसकर सहत और बूरामें मिलाकर नाभिके छिद्रपै प्रलेप करनेसे–अनेकवार मैथुन करनेकी सामर्थ्य और लिंग दृढ़ होजाताहै। सफेद तालमखानेकी जड़को चरणमें बाहुमें अथवा मस्तकमें बाँधनेसे,या सिहोंडेके बीजोंका तेल,या तिलकके बीजोंको धारण करनेसे वीर्य्यस्तम्भ होताहै। सफेद कटेरीकी जड़, कन्दूरी, बिलावकी हड्डियोंका चूरा और शालिपर्णी इनको एकत्र पीसकर प्रलेप करनेसे–वीर्यस्तम्भ और लिंगदृढ़ होजाताहै ॥ २६३ ॥ २६४ ॥ २६५ ॥ २६६ ॥ ॥ २६७ ॥ २६८ ॥ २६९ ॥ २७० ॥

योगद्वयम्।

एककरञ्जोदरकृतसधवलशरपुंखपारदोनियतम्।
धारयतिबीजवेगंपुंसावदनार्पितोयावत् ॥ २७१ ॥
सप्ताहंछागडरसनिरसांस्थितंकरभवारुणी।
मूलगाढोद्वर्त्तनविधिनालिंगस्तम्भंवातेकुरुते ॥ २७२ ॥
बीजंबृहत्करंजस्यकृतमन्तःसपारदम्।
हेम्नासुवेष्टितंनस्यंवदनेवीजधृङ्मतम् ॥ २७३ ॥
महासुगन्धिकामूलंकटीस्थंबीजधृङ्मतम् ॥
श्वेतार्कमूलवर्त्यावराहमेदःप्रदिग्धयादीपः ॥ २७४ ॥
स्तब्धंपुरुषवरांगंधारयतिबीजंशर्वरींसकलाम्।
डुण्डुभोनामयःसर्पःकृष्णवर्णतमाहरेत् ॥ २७५ ॥
तस्यास्थिचकटौबध्वानरोवीर्यंनमुञ्चति ॥ २७६ ॥
चरणयुगलेपेनस्तम्भयतिपुरुषवीजंयोगो–

ऽयंयामिनींसकलाम्। आजन्मवत्रीक्षीरं
लज्जालुमूलंपिष्ट्वाचरणयुगलेपेनसेतु-
रिवतोयवेगंधारयतिपुरुषबीजम् ॥ २७७ ॥

अर्थ-पारे औ शरफोंकेको करंजुवेके भीतर रखकर जबतक मुखमें धारणकरे रहैगा तबतक वीर्य नहीं छूटेगा। इन्द्रायणकी जड़को बकरेकी छातीके रसमें मिलाकर उबटन करनेसे लिंगस्तम्भ होताहै। बृहत्करंजके फलके भीतर पारेको रख स्वर्णसे वेष्टितकर मुखमें धारणकरनेसे वीर्यस्तम्भ होताहै। नकुल कंदकी जड़को कटिमें बाँधनेसे-अथवा सफेद आककी रुईकी बत्ती बनाकर सूअरकी चरबीमें मिलाकर दीपक जलावै तौ सम्पूर्णरात्रि वीर्यस्तभ रहताहै। डुण्डुभ नामवाले काले साँपकी हड्डीको कटिमें बाँधनेसे वीर्य्य नहीं छूटताहै। बकरीका दूध, थूहरका दूध, और गायका घी, एकत्र मिलाकर दोनों पावोंमें लेपकरनेसे बहुत देरतक वीर्य्यस्तम्भ रहताहै। बकरीका दूध, थूहरका दूध, और लज्जावंती, इन तीनोंको एकत्र पीसकर दोनों पाओंमें लेपकरनेसे-बहुत देरतक वीर्य्य रुकरहाताहै ॥ २७१ ॥ २७२ ॥ २७३ ॥ २७४ ॥ ॥ २७५ ॥ २७६ ॥ २७७ ॥

नागवल्लीदलद्रावैःसप्ताहंशुद्धसूतकम्।
मर्दयेद्रावयेदम्लैश्चतुर्निष्कप्रमाणतः ॥ २७८ ॥
शिषतुण्डगतंसूतंविषेणापिनिरोधयेत्।
ततःसूकरमांसस्यगर्भेक्षिप्त्वातुशोधयेत् ॥ २७९ ॥
सन्ध्याकालेबलिंदत्वाकुक्कुटंबलिसंयुतम्।
ततश्चूल्यामयःपात्रेतैलेधुस्तुरजेपचेत् ॥ २८० ॥
क्षिप्त्वावंशानलेपाच्यंताहशंमांसपिष्टकम्।
सन्ध्यामारभ्यमन्दाग्नौयावत्सूर्योदयोभवेत् ॥ २८१ ॥
हठाज्जागरणंकुर्यादन्यथानैवासिध्यति।
प्रातरुत्थायघुटिकांक्षीरभाण्डेविनिक्षिपेत् ॥ २८२ ॥
क्षीरंसापिबतिक्षिप्रंजायतेप्रत्ययोमहान्।
रतिकालेमुखेधार्याघुटिकावीर्यधारिणी ॥ २८३ ॥
क्षीरंपीत्वारमेन्नारींयथाकामसुखार्थिनः।

मुखस्थागुटिकायावत्तावद्वीर्यस्यरोधिनी ॥ २८४ ॥

इति रतिवल्लभगुटिका ।

अर्थ–४ चार निष्कशुद्धपारेको नागर पानोंके रसमें खरलकर अम्लवर्गमें द्रावित करै, पश्चात् विषतुण्डमें रखकर विषसे बंद करदेवै, पश्चात् सूअरके मांसमें स्थापनकर शुद्धकरै । फिर संध्याके समय मुरगेको मारकर मुरगेके मांसके साथ इसको लोहेके पात्रमें धंतूरेके तेलके द्वारा पकावै, पश्चात् बाँसोंकी मृदु अग्निके द्वारा संध्यासे तडके तक पकावै फिर प्रातःकाल उठकर गोलीबना दूधके रबासनमें गेरदेवै, जब गोली दूधको पीलेवै, तब काममें लावै । मैथुनके समय इसगोलीको मुखमें धारण करै रहैगा तबतक वीर्य नहीं छूटैगा ॥ २७८ ॥ २७९ ॥ ॥ २८० ॥ २८१ ॥ २८२ ॥ २८३ ॥ २८४ ॥

आफिङ्गजातीफलयोःप्रत्येकंरक्तिकात्रयम् ।
कर्पूरस्यचरत्त्येकासप्तच्छदसुमस्यच ॥ २८५ ॥
पंचरक्तिप्रमाणन्तुग्राह्यमिंद्राशनस्यच ।
मासकश्चचतुर्ग्राह्यंमधुनालेहउत्तमः ॥ २८६ ॥
धार्यंकदापिनोवीर्यंरमेत्स्त्रीणांशतानिच ॥

इति स्तम्भनम् ।

अर्थ–अफीम और जायफल, प्रत्येक ३ तीन रत्ती, कपूर १ रत्ती, सतवनके फूल ५ रत्ती, और भाँग चार ४मासे, इन सबको एकत्र पीसकर सहतमें मिलाके गोली बनालेवै जबतक गोलीको मुखमें धारणकरै रहैगा तबतक वीर्य नहीं छूटैगा, चाहै सौ स्त्रियोंसेभी रमण करै॥ २८५॥ २८६॥

भल्लातकबृहतीफलदाडिमफलकल्कसाधितंसाधु ।
कटुतैलमर्दनवशात्कुरुतेलिङ्गंहिवाजिलिंगाभम्॥ २८७॥
अश्वगंधावरीकुष्ठमांसीसिंहीफलान्वितम् ।
चतुर्गुणेनदुग्धेनातिलतैलंविपाचयेत् ॥ २८८ ॥
स्तनलिङ्गकर्णपालीवर्द्धनंम्रक्षणादपि ॥ २८९ ॥
भल्लातकबृहतीफलनलिनीदलसिन्धुजन्मजलशूकैः ।
माहिषनवनीतेनचकरास्मितेसप्तदिनमुषितैः ॥ २९० ॥
मूलेहयगंधायामाहिषीमलमलितपूर्णमवलिप्तम् ।

भवतिलघुकृतमपितत्रासभलिंगंध्रुवंपुंसाम् ॥ २९१ ॥

इति स्थूलीकरणम् ।

अर्थ-सरसोंका तेल ४ चारसेर, जल १६ सोलहसेर, और कल्कके लिये भिलावे, कटाईके फल और अनार, यह सब १ एकसेर, यथाविधिसे तेलको पकाकर लिंगपै मर्दन करनेसे लिंग अश्वकी समान होजाताहै । तिलकीतेल ४ चारसेर, दूध १६ सोलहसेर, तथा कल्कके लिये असगंध, सतावर, कूठ बालछड और बृहतीके फल, यह सब १ एकसेर, यथा विधिसे तेलको सिद्धकर मर्दन करनेसे-स्तन, लिंग, और कर्णपालि बढ़जातीहै । भिलावे, बृहती फल, कमलपत्र, सैंधानोंन और जलशूक, इन सबको समान भाग लेकर भैंसके नवनीतके साथ मिलाकर ७ सातदिन तक रक्खा रहनेदेवै, पहिले असगंधकी जड़ और भैंसका गोवर एकत्र मिलाकर लिंगपै लेपकरै, पश्चात् पूर्वोक्त रक्खा हुवा सातदिन बासी लेपकरै तो लिंगस्थूल होजाताहै ॥ २८७ ॥ ॥ २८८ ॥ २८९ ॥ २९० ॥ २९१ ॥

माहिषंनवनीतञ्चकुष्ठंचमधुयष्टिका ।
सौभाग्यंभगलेपेनदासवच्चभवेत्पतिः ॥ २९२ ॥
निम्बकाष्ठस्यधूपेनधूपयित्वाभगंस्त्रियः ।
सुभगाःस्युःपतिस्तासांदासवद्व्रजतेध्रुवम् ॥ २९३ ॥
सत्यंस्वार्त्तवशोणितभावितगोरोचनारचिततिलकाया ।
नारीयंयंपश्यतिपुरुषंतंतंवशीकुरुते ॥ २९४ ॥
यदिसहदेवामूलंग्रहणेसंगृह्यरोचनापिष्टम् ।
तत्कृततिलकानारीगुरुकुलमपिविकलतांनयति ॥ २९५
चतुर्दशीभूमिजवारयोगेविलुप्तसंपुष्पितसर्षपंयः ।
संपिष्टहस्तौपरिलिप्ययस्याःसन्दर्शयेत्सातद्दतेनजीवेत् २९६
रतिकालेनिजंशुक्रंगृहीत्वावामपाणिना ।
वामंकान्तापदंलिप्त्वाभवेत्तस्याःप्रियोध्रुवम् ॥ २९७ ॥
सैन्धवन्तुमहास्वच्छंवारायतमलंमधु ।
एभिर्लिप्तन्तुलिंगंवैकामिनीवशकृद्भवेत् ॥ २९८ ॥

अर्थ-भैंसकाघी, कूठ और मुलेठी, इनको एकत्रपीसकर भगमें प्रलेप करनेसे-अथवा नीमकी लकड़ियोंकी भगमें धूपदेकर पतिकेसाथ रमण करै, इससे-निश्चय स्त्रीके वशमें पतिहोजाताहै । स्त्री अपने आर्त्तवमें

गोलोचनको भावनादेकर मस्तकपै तिलक लगाकर जिस जिस मनुष्यको देखे, वहीवही मनुष्य निश्चय वशीभूत होजातेहैं। सहदेवीकी जड़को ग्रहणके समय उखाड़ गोलोचनके साथ पीसकर उससे कपालपै तिलक लगानेसे सम्पूर्ण मनुष्य वशमें होजातेहैं। मंगलवारी चौदशकेदिन फूलीहुई सरसोंको पीस लेपकरकै जिसस्त्रीको देखै, (ग्रन्थपातः) वह स्त्री निश्चय मनुष्यके वशमें होजातीहै। पतीअपने शुक्रको बाँयेहाथमें लेकर मैथुनके समय स्त्रीके बाँये पाँवमें लेपकर देवै तो वह स्त्री निश्चय पतिपरायणा होजातीहै। सैंधानोन, परेवाकीबीट और सहत एकत्रमिलाकर लिंगपै लेपकर मैथुनकरनेसे-निश्चय स्त्री वशीभूत होजातीहै ॥ २९२ ॥ २९३ ॥ ॥ २९४ ॥ २९५ ॥ २९६ ॥ २९७ ॥ २९८ ॥

अपराजिताशिखाकट्यांनीलोत्पलसमन्विताम् ।
ताम्बूलंसहभावेनवशीकरणमुत्तमम् ॥ २९९ ॥
यदाब्रह्माहिनाभेकःसशब्दोगिलितोमनाक् ।
तदादण्डेनसन्ताड्यछायाशुष्कन्तुकारयेत् ॥ ३०० ॥
पृथक्नूतनपात्रस्थौदग्धौभस्मत्वमागतौ ।
एषकापालिकोयोगोगच्छन्तमनुगच्छति ॥ ३०१ ॥
अनेननिहतानारीक्रमादायातियातिच ॥ ३०२ ॥

अर्थ-अपराजिताकी जड़को नीलोत्पल और ताम्बूलके साथ कटीमें बाँधनेसे निश्चय स्त्री वशीभूत होजातीहै। ब्रह्मसर्प जिस समय मेंडकको आधा निगल गयाहो और आधा बाहरहो, उस समय उस मेंड़कसमेत सर्पको लाठीसे मार छायामें सुखादेवै, फिर मेंड़कको उसके मुखमेंसे निकालकर दोनोंको अलग अलग पात्रमें रखकै जलादेवै,इस औषधिको सेवनकर जिसस्त्रीका दर्शनकरै, वह स्त्री अवश्य वशीभूत होजातीहै ॥ ॥ २९९ ॥ ३०० ॥ ३०१ ॥ ३०२ ॥

सप्तदलमल्लिकामूलंपुष्योद्धृतंताम्बूलेन ।
भक्षणन्नारीवश्याभवेत् ।
पुष्योद्धृतंदण्डोत्पलमूलंभक्षणात्तथा ॥ ३०३ ॥
शुनोजिह्वांसंगृह्यशंखचूर्णेनतिलकंतेन ।
जगन्नारीवश्यास्यात् ॥ ३०४ ॥
गोरोचनासवीर्यश्चमूलंदण्डोत्पलस्यच ।
ताम्बूलंभक्षितेदेयंप्रमदारसकारकम् ॥ ३०५ ॥

कर्णचक्षुर्मलंचैवतथादन्तंमलंपुनः।
स्वरेतसातुसंपिष्टंभक्षणाद्वनितावशम् ॥ ३०६ ॥
गोरोचनाप्रियंगुश्चकुनटीनागकेशरम्।
पुष्पेचाञ्जनयोगेननरनारीवशंभवेत् ॥ ३०७ ॥
गोरोचनारोहितपित्तकुडवकटुतैलम्।
भावयित्वामुखम्रक्षणाज्जगद्वश्यम् ॥ ३०८ ॥
दण्डोत्पलमूलंपुष्योद्धृतंगोरोचनातिलके
नसर्वजनप्रियःस्यात् ॥ ३०९ ॥
पुष्येनोद्धृतंसुदर्शनामूलंकरेवध्वा।
जगज्जनप्रियःस्यात् ॥ ३१० ॥

इति वशीकरणम्।

अर्थ-पुष्यनक्षत्रमें मलिकाकी जड़को उखाड़लावै, पश्चात् पीसकर पानके साथ खानेसे, अथवा पुष्यनक्षत्रमें उखाडीहुई दण्डोत्पलकी जड पुष्यनक्षत्रमें उखाड़कर खानेसे स्त्री वशमें होतीहै।कुत्तेकी जिह्वाको शंखके चूनेके साथ जलमें पीसै, इसका तिलक लगाकर जिस स्त्रीको देखै वह स्त्री अवश्य वशमें होजातीहै। गोरोचन, अपना वीर्य और दण्डोत्पलकी जड एकत्र पीसकर पानकेसाथ स्त्रीको खानेको देवै तौ निश्चय वशीभूतहो। कानका मैल, नेत्रका मैल, और दाँतोंका मैल वीर्यमें पीसकर जिस स्त्रीको खुलावै, वह तत्काल वशमें होजातीहै। गोलोचन फूलप्रियंगू, मैनशिल और नागकेशर, इन सबको एकत्रपीसकर अंजन लगानेसे नर और नारी दोनों वशीभूत होजातेहैं। आधसेर. कड़वेतेलमें गोरोचन और रोहितके पित्तको भावनादेकर मुखपै मालिसकरनेसे-सब संसार वशमें होजाताहै। पुष्यनक्षत्रमें उखाड़ीहुई दण्डोत्पलकी जड़को गोलोचनके साथ पीसकर तिलक लगावै, जिसको देखै वह अवश्य वशमेंहोय। पुष्यनक्षत्रमें सुदर्शनकी जड़को उखाड़कर हाथमें बाँधनेसे सर्वजगत्को प्रियलगताहै ॥३०३॥३०४॥३०५॥३०६॥३०७॥३०८॥३०९॥३१०॥

मनःशिलावचाकुष्ठंसैन्धवञ्चपुनस्तथा।
मधुनालेपयेल्लिङ्गंद्रावयेत्कामिनीजनम् ॥ ३११ ॥
टंकणंमधुनायुक्तंसुपिष्टंधारयेद्बुधः।
तेनलेपनगुह्यस्यनारीणांद्रावणंध्रुवम् ॥ ३१२ ॥

मूलञ्चकाकमाच्याश्चपुष्पेणोद्धृत्ययततः।
ताम्बूलेनसमंस्त्रीणांद्रावणंभक्षणादपि॥ ३१३॥
शैलजंकटुतैलंचनवनीतंचमाहिषम्।
एतेनमर्दयेल्लिंगंमर्द्दनादश्ववद्भवेत्॥ ३१४॥
तथापुनश्चाश्वगंधाजटामांसीकुष्ठञ्चैव।
माहिषनवनीतंचलेपाद्ध्वजविवर्द्धनम्॥ ३१५॥

इति द्रावणम्।

अर्थ–मैनशिल, वच, कूठ, और सेंधानोन, इनको सहतमें पीस लिंगपै लेपकै मैथुनकरनेसे–शीघ्रही स्त्रीकी योनि द्रावित होती है। सुहागेको सहतमें पीसकर मुखमें रखलेवै और कुछ थोडासा स्त्रियोंके गुह्य देशमें प्रलेप कर देवै तौ– मैथुन करतेही स्त्रियोंकी योनि द्रावित होजातीहै। मकोयकीजड़ पुष्यनक्षत्रमें, उखाड पानके साथ स्त्रियोंको खिलावै तौ निश्चय स्त्रियोंकी योनि द्रावित होजातीहै। भूरिछरीला, कड़वातेल और भैंसके नौनीघीको लिंगपै मलनेसे– अथवा असगंध, बालछड़ कूठ और भैंसका माखन, इसको एकत्र पीसकर लिंगपै प्रलेप करनेसे लिंग घोडेकी समान बडा होजाताहै॥३११॥३१२॥३१३॥ ॥ ३१४ ॥ ३१५ ॥

शृंगाद्वृषस्यपतितापतनक्रमेण
छत्रीसताडकजटावरिताडबीजम्।
पिष्टाप्रलिम्पातिवधूरिहयस्यलिङ्गं
तस्याङ्गनास्तनरतौपतितोध्वजःस्यात्॥ ३१६॥
गोरोचनासहितखञ्जनयुग्मचूर्णं
योनौनिधायमदनोत्सवंया।
तस्याःपतिःकथमिहापरकामिनीषु
ससदास्यात्पतद्ध्वजःक्रान्तमूर्त्तिः॥ ३१७॥
ऊर्द्धाधोमुखगस्त्रीगोशृंगस्यचूर्णयुगलेन।
योनिगतेनचलिंगोत्थानंपतनञ्च॥ ३१८॥
ऊर्द्धाधोगोशृंगयुगलेनयथाक्रमंलिंगोत्था-
नपतनञ्च। ताम्रचूर्णवलीवर्दस्यशृंगाग्रं

विघृष्यतेनलेपात्।ऊर्द्धलिंगस्यध्वजपतनोत्थाने ३१९
कटुतैलभावितयाटंकणकंसैन्धवम् ।
वापितेक्षिपतिरतान्तेसततंतमादितःपथ्यम् ॥ ३२० ॥
धात्र्यंजनाभयाचूर्णतोयपीतंरजोहरेत् ।
शेलुच्छदमिश्रपिष्टभक्षणश्चतदर्थकृत् ॥ ३२१ ॥

अर्थ-वैलके सींगकी पतितजटा और बीजताडकको एकत्र पीसकर लिंगपै प्रलेप करनेसे लिंग उठतानहींहै। गोलोचन और खंजनका चूर्ण करके योनिमें रखके पुरुषकेसाथ मैथुनकरै इससे लिंग उठता नहींहै। गायके सींगको बारीक पीसकर लिंगके ऊपर लेपकरै तौ लिंग खडा होजाय और जो नीचैके भागमें प्रलेप करै तौ लिंग बैठजाय। ताँबेके चूर्ण और वैलके सींगका ऊपरका भाग दोनोंको बारीक पीसकर लेपकरै तौ पतित लिंग खडा होजाय। मैथुनके अन्तमें कडवे तेलमें सुहागे अथवा सैंधेनोन को भिजोकर लेप करै तौ लिंगोत्थापनहो। आमलोंका चूर्ण हरड़का चूर्ण और रसौतका चूर्ण एकत्र जलके साथ पीनेसे, अथवा लिसोडेके पत्तोंमें पिट्ठीमिलाकर भक्षणकरै तौ स्त्रियोंका रज बन्दहोताहै॥ ॥ ३१६ ॥ ३१७ ॥ ३१८ ॥ ३१९ ॥ ३२० ॥ ३२१ ॥

यावन्त्यबलाचम्पकंवारिणापिबति ।
नभवतिकुसुमंतस्यानियतंतावन्तिवर्षाणि ॥ ३२२ ॥
वेणुतरुबीजकल्कंकुरुतेक्षारगुडयुतोगिलितः ।
अपगतकुसुमांकुरुतेघनतुङ्गकुचामपिप्रमदाम् ॥३२३॥
जरयाचिन्तयाशुक्रंव्याधिभिःकर्म्मकर्षणात् ।
क्षयंगच्छत्यनशनात्स्त्रीणामतिनिषेवणात् ॥ ३२४॥
क्षयाद्भयादविश्रान्ताच्छोकात्स्त्रीदोषदर्शनात् ।
नारीणामभिसंगाद्वाअभिघातादसेवनात् ॥ ३२५ ॥
क्षयाद्भयादविश्रान्ताच्छोकात्स्त्रीदोषदर्शनात् ।
नारीनामभिसंगाद्वाअभिघातादसेवनात् ॥ ३२६ ॥
अतिव्यावायशीलोयःनचवाजिक्रियारतः ।
असाध्यंजायतेषण्डक्लैव्यंतदपरंस्थितम् ॥ ३२७ ॥
तोयांगवागशिशिरातपशीतवाता

स्ताम्बूलसोमकरशीतरसेक्षुभक्ष्याः ॥
स्नानञ्चदुग्धमधुमूलफलानिनिद्रा ॥
सेव्यानिकामुकजनैःसुरतावसाने ॥ ३२८ ॥
असेवनान्मेहमेदोग्रन्थिरग्नेश्चमार्दवम् ।
इन्द्रियाणाञ्चजड़ताप्राप्यतेयौवनेजनैः ॥ ३२९ ॥
योगान्संसेव्यवृष्यान्ससितमथपयःशीतलंचाम्बुपीत्वा
गच्छेन्नारींस्मरशततरलांकामुकःकामदेवः
यामेतुर्य्येप्रकृष्टाअपगतसुरतःसंस्वपेन्नित्यनित्यं
कांताःकान्ताङ्गसङ्गादसकृदपिनरोधातुवसास्येति ॥३३०॥

अर्थ-स्त्री जितने चम्पाके फूलोंकी पीसकरपीवै, उतनेवर्ष उसके पुष्प प्रकाशित नहीं होताहै। वेणु वृक्षके बीजोंकी छालके क्षार को गुड़केसाथ भक्षण करैतौ स्त्रियोंका पुष्प प्रकाशित होताहै, और दोनों स्तन पुष्ट होजातेहैं। जरा, चिन्ता, व्याधि, अधिक कार्य्य और भोजन नहीं करनेसे-तथा अत्यन्त स्त्रीप्रसंग करनेसे-शुक्रकाक्षय होताहै। शुक्रक्षय भय परिश्रम शोक स्त्रियोंके दोषदर्शन अधिक स्त्रीप्रसंग अभिघात, बिलकुल मैथुन नहींकरना और वाजी क्रिया नहीं करनी, इन सबकारणोंसे मनुष्यों के नपुंसकता उत्पन्न होतीहै। जल अंगलेपन शिशिर, आतप शीतलपवन ताम्बूल, चन्द्रमाकीचाँदनी, शीतलरसोंकाभोजन, ईखकेरसका भोजन, स्नान, दूध, मधु, मूल और फल तथा निद्रा यह सब कामी पुरुषोंको मैथुनके अंतमें अवश्य सेवनकरना चाहिये, नहींसेवनकरनेसे मेह. मेद ग्रन्थि, मन्दाग्नि और इन्द्रियोंमें जड़ता उत्पन्न होतीहै। कामी पुरुष-बूरा, दूध, शीतलजल और पुष्टिकारक द्रव्यसेवन करकै तीसरे प्रहरमें मैथुनकर्म्म कर चौथे प्रहरमें निद्रालेवै चौथेप्रहरमें कदापि स्त्री प्रसंगन करै। वारंवार स्त्रियोंके शरीरके प्रसंगसे मनुष्यकी धातु विषमभावको प्राप्तहोतीहै ॥

श्रीमुरादाबादनिवास्यायुर्वेदोद्धारक कविकुलकुमुदकलानिधि
भिषक् शालिग्रामवैश्यविरचिते रसरत्नाकरेरसप्रदीपिका
भाषाटीकायां मिश्राधिकारः समाप्तः ।

समाप्तोऽयंग्रंथः ।

पुस्तक मिलनेका ठिकाना-खेमराज् श्रीकृष्णदास,
"श्रीवेंकटेश्वर" छापाखाना-मुंबई.

00062963